द्वितीय पंचवर्षीय योजना

योजना आयोग की ओर से प्रकाशित

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

संक्षिप्त विषय-सूची

दृष्टिकोण और संगठन

पृष्ठ संख्या

विकास के कार्यक्रम

विषय-सूची

दृष्टिकोण और संगठन

पृष्ठ संख्या

विकास के कार्यक्रम

पृष्ठ संख्या

पृष्ठ संख्या

भूमिका

इस विवरण में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए योजना आयोग के सुझाव दिए गए हैं। इस योजना की रूपरेखा पर राष्ट्रीय विकास परिषद ने विचार करके २ मई, १९५६ को निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया था :

राष्ट्रीय विकास परिषद द्वितीय पंचवर्षीय योजना के मसौदे पर विचार करके, योजना के उद्देश्यों, प्राथमिकताओं और कार्यक्रम को सामान्यतः स्वीकृति प्रदान करती है, और

जनता के उत्साह तथा समर्थन पर भरोसा करके,

भारत की केन्द्रीय सरकार और सब राज्य सरकारों के इस निर्णय को पुष्ट करती है कि वे इस योजना को न केवल पूरा करेंगी, अपितु इसके लक्ष्यों से भी आगे बढ़ने का प्रयत्न करेंगी; और

भारत के सब नागरिकों से अनुरोध करती है कि वे द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यों, लक्ष्यों और उद्देश्यों को यथासमय पूरा करने के लिए जी-जान से प्रयत्न करें।

२. राष्ट्र के इतिहास में किसी पंचवर्षीय योजना के आरम्भ और समाप्ति की तारीखें महत्वपूर्ण तारीखें होती हैं। प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में गुजरे हुए जमाने के काम का लेखा-जोखा होता है और आगे क्या करना है इसकी रूपरेखा तैयार की जाती है। इसमें देश की कोटि-कोटि जनता की आकांक्षाओं, अभिलाषाओं और आदर्शों को मूर्त रूप देने का प्रयत्न किया जाता है, और इसके द्वारा हरेक व्यक्ति को देश की दरिद्रता दूर करने और जीवन का स्तर ऊंचा उठाने का महत्वपूर्ण कार्य करने का अवसर मिलता है।

३. प्रथम पंचवर्षीय योजना मार्च १९५६ में समाप्त हो गई। उसके कार्य और दृष्टिकोण हमारे विचारों के अग हैं। इस योजना द्वारा समाजवादी ढंग की सामाजिक व्यवस्था की रचना के लक्ष्य की नींव पड़ चुकी है, अर्थात ऐसी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की जो स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र की मान्यताओं पर आधारित होगी, जिसमें न जात-पांत होगी और न कुछ लोगों के विशेष अधिकार होंगे; जिसमें अधिक रोजगार और अधिक उत्पादन होगा और जिसमें सामाजिक न्याय भी अधिकतम प्राप्त हो सकेगा।

४. द्वितीय पंचवर्षीय योजना को तैयार करने का कार्य लगभग दो वर्ष से हो रहा है। योजना आयोग ने अप्रैल १९५४ में राज्य सरकारों से कहा था कि वे जिलों और ग्रामों की योजनाएं तैयार करें, और वैसा करते हुए खेती की पैदावार, देहाती उद्योग-धंधों और सहकारिता का विशेष ध्यान रखें। इन योजनाओं को तैयार करने का काम इसलिए आरम्भ किया गया था क्योंकि यह अनुभव किया गया कि जिन क्षेत्रों का अधिकतम लोगों की सुख-सुविधाओं से निकटतम सम्बन्ध है उन क्षेत्रों में लोगों का स्वेच्छापूर्वक सहयोग प्राप्त करने के लिए स्थानिक रूप से ऐसी ही योजनाएं बनाना नितान्त आवश्यक है। यद्यपि जिलों, गावों, राष्ट्रीय विस्तार और

सामुदायिक विकास की योजनाओं को इस प्रकार बनाना होता है कि वे राज्यों की योजनाओं में खप सकें, और राज्यों की योजनाएं समूचे देश की अर्थ-व्यवस्था को ध्यान में रखकर बनाई जाती है, तो भी आयोजन के काम का आधार जिला ही होता है। यहीं आकर योजना के विविध अंगों का जनता के जीवन के साथ निकट सम्पर्क होता है।

५. राष्ट्रीय आयोजन के विस्तृत अंगों का अध्ययन भी १९५४ में ही आरम्भ हुआ था। उस वर्ष के अन्त में राष्ट्रीय आयोजन की टेकनीकल और आकड़े सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन करने के लिए भारतीय अंक-संकलन संस्थान की सहायता ली गई, और कुछ कागजात इस संस्थान में ही तैयार किए गए। मार्च १९५५ में इन कागजात और उक्त अध्ययन के आधार पर प्रो० पी० सी० महलानवीस ने 'द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करने के लिए सिफारिशें' नामक पुस्तिका लिखी, (जिसको 'प्लान-फ्रेम' अर्थात 'योजना का ढांचा' कहा गया है), और योजना आयोग और वित्त मंत्रालय के अर्थविभागों ने इन्हीं कागजात के आधार पर 'द्वितीय पंचवर्षीय योजना की प्रस्तावित रूपरेखा' नामक पुस्तिका तैयार की। इन दोनों पर योजना आयोग के अर्थशास्त्रियों ने विचार करके अप्रैल १९५५ में 'योजना के ढांचे के सम्बन्ध में मूलभूत विचारों का स्मरणपत्र, तैयार किया। इन अर्थशास्त्रियों ने योजना के अलग-अलग पहलुओं पर भी स्मरणपत्र तैयार किए।

६. 'योजना के ढांचे' और ऊपर निर्दिष्ट अन्य कागजात पर राष्ट्रीय विकास परिषद ने मई १९५५ में विचार किया। राष्ट्रीय विकास परिषद, 'योजना के ढांचे' और 'प्रस्तावित रूपरेखा' की आधारभूत विचार शैली से और अर्थशास्त्रियों के स्मरणपत्रों में उल्लिखित तत्सम्बन्धी विचारों और नीतियों से साधारणतया सहमत हो गई। परिषद इस विचार से भी सहमत हो गई कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना ऐसी होनी चाहिए कि उससे पांच वर्ष में राष्ट्रीय आय में लगभग २५ प्रतिशत वृद्धि हो जाए और १ करोड़ से १ करोड़ २० लाख तक व्यक्तियों को जीविकोपार्जन का अवसर मिल जाए। परिषद ने यह निदेश भी किया कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना इस प्रकार बनाई जाए कि उससे समाज को समाजवादी आधार पर संगठित करने के नीति सम्बन्धी निर्णयों को मूर्त रूप दिया जा सके।

७. १९५५ में जुलाई से दिसम्बर तक योजना आयोग ने केन्द्रीय मंत्रालयों और राज्य सरकारों के साथ विचार-विनिमय किया। प्रत्येक राज्य के साथ विचार-विनिमय करने से मुख्य मंत्रियों के साथ राज्यों की योजनाओं के पृथक-पृथक अंगों पर विस्तारपूर्वक विचार करने का अवसर मिला। राज्यों के प्रस्तावों की विस्तारपूर्वक जांच कार्यकारी दलों ने की, जिनमें केन्द्रीय मंत्रालयों, राज्य सरकारों और योजना आयोग के उच्च अधिकारियों ने भाग लिया।

८. इस प्रकार जो विचार-विनिमय हुआ था उसके सुझावों के आधार पर तैयार किए गए स्मरणपत्र के मसौदे पर जनवरी १९५६ में राष्ट्रीय विकास परिषद और संसद सदस्यों की सलाहकार समिति ने मिलकर विचार किया। इन सब बहसों और अन्य टिप्पणियों के आधार पर फरवरी १९५६ में योजना की रूपरेखा जनता की जानकारी और आलोचना तथा सुझावों के लिए प्रकाशित की गई। द्वितीय पंचवर्षीय योजना का मसौदा तैयार करते समय जनता द्वारा दिए गए सुझावों का भी ध्यान रखा गया।

९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करने का काम जिन लोगों के सुपुर्द किया गया था उनके मन पर गत वर्ष कुछ बातों का प्रभाव विशेष रूप से पड़ा। एक बात यह थी कि पांच वर्ष

के लिए जो योजना बनाई जाए, वह इस दृष्टि से बनाई जाए कि आगे चलकर हमें कैसी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना है। उस पर अमल ऐसी लचकीली प्रणाली से हो सके कि प्रति वर्ष की आर्थिक तथा वित्तीय प्रवृत्ति, कृषि और उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि और योजना के विभिन्न भागों की प्रगति को देखकर, वार्षिक योजनाओं के द्वारा इसमें समयानुसार परिवर्तन किए जा सकें। उद्योग, परिवहन, खनिजों और शक्ति-उत्पादन के क्षेत्रों में निकट सम्पर्क का प्रबन्ध करना भी आवश्यक है, जिससे परस्पर सम्बद्ध कार्यक्रमों के प्रत्येक समूह खण्ड पर किए हुए व्यय से अधिकतम लाभ हो सके। जैसा कि राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी माना है, द्रुत विकास के सिलसिले में बहुधा उत्पन्न हो जाने वाली मुद्रा-स्फीति के दुष्परिणामों से बचने के लिए योजना में प्रस्तावित कृषि उत्पादन के लक्ष्यों को और भी ऊंचा उठाना अत्यावश्यक है। समय-समय पर यह देखते रहना होगा कि अन्न, वस्त्र और आम जरूरत की दूसरी चीजें पर्याप्त मात्रा में और उचित मूल्य पर मिल रही हैं या नहीं। साथ ही राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के सुचारु संचालन पर भी निगाह रखनी होगी।

१०. हमारी द्वितीय पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य है गांवों की दशा सुधारना, देश में औद्योगिक उन्नति की नींव रखना, जनता के निर्बल और अधिकारच्युत वर्गों को जीवन में यथासंभव अधिक अवसर प्रदान करना और देश के सब भागों का सन्तुलित विकास करना। हमारे देश का आर्थिक विकास बहुत समय तक रुका रहा है। इस कारण ये सब कार्य बहुत कठिन हैं। परन्तु यदि हम त्याग-पूर्वक प्रयत्न करें तो इनमें सफल होना हमारी सामर्थ्य से बाहर की बात नहीं है।

११. जो योजना इस समय सरकार को संसद के सम्मुख प्रस्तुत करने के लिए दी जा रही है, वह केन्द्रीय सरकार व राज्य सरकारों के अनेक कर्मचारियों और देश के सभी भागों के विचारवान नेताओं के परिश्रम का परिणाम है। इसे तैयार करने में सब वर्गों के स्त्री-पुरुषों ने अपने समय, श्रम और अनुभव का योग उदारतापूर्वक दिया है। द्वितीय योजना के तैयार करने में जैसा उत्साह और व्यापक सहयोग पाया गया वह उसकी सफलता के लिए बड़ा शुभ लक्षण है।

अध्याय १

अर्थ-व्यवस्था का विकास : अब तक की सफलताएं और भविष्य का स्वरूप

१

प्रथम पंचवर्षीय योजना

स्वतन्त्र होने के पश्चात भारत मे सरकारी नीति और राष्ट्रीय प्रयत्नों का मूल उद्देश्य देश का आर्थिक विकास द्रुत गति से और सन्तुलित रूप से करने का रहा है। प्रथम पचवर्षीय योजना इसी लक्ष्य की पूर्ति की दिशा मे एक पग था। यह योजना तैयार करने के लिए योजना आयोग ने उस समय की परिस्थितियों मे विद्यमान देश के साधनों और आवश्यकताओं का विस्तारपूर्वक अध्ययन करने का यत्न किया था। योजना मे विकास का जो कार्यक्रम बनाया गया था वह यह सोचकर बनाया गया था कि उससे देश की अर्थ-व्यवस्था का आधार दृढ़ होकर, हमारी समाज-व्यवस्था मे ऐसे परिवर्तन हो जाएगें कि वे भविष्य में अधिक शीघ्रता से उन्नति करने में सहायक होंगे। इसमें ऐसी भी कुछ तात्कालिक समस्याओ को हल करने का प्रयत्न किया गया था जो कि विश्व युद्ध और देश-विभाजन के कारण खड़ी हो गई थी। इन दोनों दिशाओं में प्रथम योजना से उल्लेखनीय प्रगति हुई है। इसके कारण जनता का सहयोग और उत्साह बढा है और लोगों की विचार-प्रणाली और प्रवृत्तिया नई दिशा में मुड़ गई है।

२. प्रथम योजना ने जो प्रक्रिया प्रारम्भ कर दी थी, द्वितीय पंचवर्षीय योजना को उसे ही आगे बढ़ाना है। इसे उत्पादन, पूंजी-विनियोग और जीविकोपार्जन, तीनों मे अधिक प्रगति करनी होगी। साथ ही, इसे समाज मे उन परिवर्तनों की गति को तीव्रतर करना होगा जिनकी सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति की दृष्टि से देश की अर्थ-व्यवस्था को अधिक गतिमान और प्रगतिशील बनाने के लिए आवश्यकता है। विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो कि निरन्तर चलती रहती है। इसका प्रभाव समाज के सभी पहलुओ पर पड़ता है। इसलिए इसे अति व्यापक दृष्टि से देखना चाहिए। यही कारण है कि आर्थिक आयोजन का सम्बन्ध, शिक्षा समाज और संस्कृति आदि आर्थिकेतर क्षेत्रों के साथ भी होता है। प्रत्येक योजना कुछ समय तक उस भावी प्रयत्न का प्रारम्भ मात्र रहती है जो कि भविष्य मे निरन्तर और अधिक समय तक किया जाना होता है और उसके प्रत्येक पग पर नए मार्ग खुल जाते है तथा हल करने के लिए नई समस्याए उपस्थित हो जाती है। इस कारण जब कोई योजना किसी विशेष समय के लिए बनाई जाए अथवा कार्यक्रम तैयार किया जाए तब अधिक दीर्घकाल की सम्भावनाओं को ध्यान मे रख लेना चाहिए और ज्यों-ज्यों उन सम्भावनाओं का रूप स्पष्ट होता जाए, त्यों-त्यो अपने कार्यक्रम को आवश्यकतानुसार बदलने के लिए तैयार रहना चाहिए।

३. प्रथम पंचवर्षीय योजना एक नम्र प्रयत्न के रूप मे तैयार की गई थी और कुछ तात्कालिक समस्याओं को हल करने पर, अनिवार्य रूप से, सबसे पहले ध्यान देना पड़ा था। यह नम्र प्रयत्न करते हुए भी, तब ऐसा लगा था कि समाज के साधनो पर भारी बोझ पड़ जाएगा। प्रथम दो वर्षों तक, अनिवार्य रूप से, विशेष ध्यान मुद्रा-स्फीति की बुराइयो को सुधारने और नियन्त्रण में रखने और अपनी अर्थ-व्यवस्था को पुनः सन्तुलित करने पर लगाना पड़ा था। तीसरे वर्ष से योजना पर होने वाला व्यय बहुत बढा दिया गया था, और योजना के अन्त तक केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारे १९५१-५२ की तुलना में २½ गुना व्यय करने लगी थीं। अब खयाल है कि पाच वर्षों में योजना के सरकारी भाग का व्यय कुल मिलाकर २,००० करोड़ रुपए से कुछ ही कम रहा होगा। यह लगभग उतना ही है जितना कि १९५२ मे योजना बनाते समय सोचा गया था। पहले के वर्षों मे कार्य लक्ष्य से कुछ कम हुआ था, उसे पूरा करने और जीवकोपार्जन के अवसर बढ़ाने के लिए, बाद मे अतिरिक्त कार्यक्रम हाथ में लिए गए। यह भी माना गया है कि ये अतिरिक्त कार्यक्रम कम से कम आंशिक रूप मे उन कार्यक्रमो के स्थान पर अपनाए गए थे जिनकी प्रगति कई कारणों से मन्द थी। योजना की संशोधित समस्त व्यय राशि २,३५० करोड़ रुपए कर दी गई थी, परन्तु उसमें लगभग ३५० करोड़ रुपए कम व्यय हुआ। इस स्थिति का मूल्याकन इसी संदर्भ में करना उचित होगा। फिर भी सब दृष्टियो से वास्तविक महत्व वित्तीय व्यय का उतना नहीं, जितना कि क्रियान्वित किए हुए कार्यक्रमों का, पूरे किए हुए कामों का और प्राप्त की हुई सफलताओ का है।

४. यहां प्रथम योजना के परिणामों की संक्षेप से चर्चा कर देना अप्रासंगिक न होगा। राष्ट्रीय आय पांच वर्षों में कोई १८ प्रतिशत बढ़ गई है। अन्न के उत्पादन मे २० प्रतिशत वृद्धि हुई है। कपास और प्रधान तिलहनों की उत्पत्ति क्रमशः ४५ और ८ प्रतिशत बढ़ी है। ६० लाख से अधिक एकड़ भूमि में तो बड़ी योजनाओ द्वारा सिचाई होने लगी है, और अन्य १ करोड़ एकड़ को छोटी सिचाई योजनाओं से लाभ पहुंचा है। रासायनिक खाद और बीजों की उपलब्धि बढ़ जाने और राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम का क्षेत्र विस्तृत हो जाने के कारण, आशा है कि खेती का उत्पादन निरन्तर अधिकाधिक सुधरता और बढता जाएगा। औद्योगिक उत्पादन लगातार बढ़ता गया है। औद्योगिक उत्पादन के अन्तरिम देशनांक (१९४६ = १००) से पता लगता है कि १९५५ में यह १६१ तक पहुंच चुका था। १९५० में यह केवल १०५ और १९५१ में ११७ था। पीछे, १९५१ को आधार मानकर औद्योगिक उत्पादन का जो नया देशनांक निकाला गया वह भी १९५५ में १९५१ की अपेक्षा २२ प्रतिशत ऊंचा था। बिजली का उत्पादन १९५०-५१ में ६५,७५० लाख किलोवाट आवर था जो बढ़कर १९५५-५६ में १,१०,००० लाख किलो-वाट आवर हो गया था। अर्थ-व्यवस्था में पूंजी-विनियोग की मात्रा का एक महत्वपूर्ण सूचक सीमेंण्ट होता है। १९५०-५१ में २७ लाख टन सीमेण्ट बनाया गया था। १९५५-५६ में इसका उत्पादन बढ़कर ४३ लाख टन हो गया था। हाल में इसकी मांग एकदम बहुत बढ़ गई है। योजना के सरकारी भाग में कई औद्योगिक कार्य पूरे हो चुके है। निजी भाग में भी पूजी बड़ी मात्रा में लगी है—विशेषतः उत्पादक वस्तुओं और पूंजीगत सामान के उद्योगों में। यद्यपि लोहे व इस्पात और बिजली के भारी सामान का निर्माण कार्य प्रथम योजना की अवधि में आरम्भ नहीं किया जा सका, तथापि इस्पात के तीन बड़े कारखाने और बिजली के भारी सामान का एक कारखाना खोलने के लिए प्रारम्भिक काम पूरा हो गया, और द्वितीय योजना काल में जो बड़े काम किए जाएंगे उनकी नींव पड़ गई। कुल मिलाकर प्रथम योजना के परिणाम सन्तोषजनक

रहे। अब विकास की आवश्यकता को अधिकाधिक समझा जाने लगा है, और यह कुछ कम उल्लेखनीय बात नही है कि देश भर में ऐसी योजना की मांग की जाने लगी है जिसके द्वारा उन्नति शीघ्र और चहुंमुखी हो सके।

५. अब हमारा अन्दाजा यह है कि १९५१ से १९५६ तक के पाच वर्षों में अर्थ-व्यवस्था मे लगभग ३,१०० करोड रुपए की पूजी लग गई होगी। १९५०-५१ में देश में पूजी-विनियोग का स्तर लगभग ४५० करोड रुपए का था। १९५५-५६ में वह बढकर ७९० करोड़ रुपए हो गया था। नीचे की तालिका मे दिखलाया गया है कि १९५०-५१ और १९५५-५६ मे राष्ट्रीय आय पूजी-विनियोग और खपत के अनुमानित स्तर क्या थे :—

राष्ट्रीय आय, पूंजी-विनियोग और खपत—१९५०-५१ और १९५५-५६
(१९५२-५३ के मूल्यों पर आधारित)

(करोड रुपए)

मद	१९५०-५१	१९५५-५६
(१)	(२)	(३)
१. राष्ट्रीय आय	९,११०	१०,८००
२. पूजी-विनियोग	४५०	७९०
३. पूजी-विनियोग में राष्ट्रीय आय का प्रतिशत	४·९	७·३
४. राष्ट्रीय आय का देशनाक ..	१००	११८
५. प्रति व्यक्ति आय का देशनांक	१००	१११
६ प्रति व्यक्ति खपत व्यय का देशनाक ..	१००	१०९

यह अन्दाजा लगाना कठिन है कि योजना के वर्षो मे प्रतिवर्ष कितना पूजी-विनियोग हुआ; विनियोग के स्तर मे जो बडे परिवर्तन हुए केवल उनका अनुमान लगाया जा सकता है। १९५१-५२ मे विनियोग का स्तर असाधारण रूप से ऊंचा था, वह शायद राष्ट्रीय आय के ७ प्रतिशत से भी ऊपर पहुंच गया था। परन्तु उसका एक भाग सामान के संग्रह के रूप में था, इस कारण हमारी अर्थ-व्यवस्था पर उसका बहुत बोझ पड़ा, और वह अत्यधिक और फालतू आयात के रूप में प्रकट हुआ। बाद के दो वर्षों में विनियोग का स्तर गिरकर ५ प्रतिशत या इसके आस-पास रह गया। १९५४-५५ मे यह फिर बढा और राष्ट्रीय आय के ६ या ६·५ प्रतिशत तक पहुंच गया। योजना के अन्तिम वर्ष मे यह ७ ३ प्रतिशत था। प्रथम योजना के समस्त काल मे विनियोग का औसत राष्ट्रीय आय का लगभग ६ प्रतिशत बैठता है, जो कि कुछ प्रभावशाली नही जंचता। एक प्रकार से आर्थिक प्रवृत्ति का निश्चित अनुमान लगाने अथवा भविष्य के लिए उसके महत्व की सूचना देने के लिए पाच वर्ष का समय बहुत थोड़ा है, विशेषत: जब कि वर्ष-प्रति-वर्ष विनियोग मे उतार-चढाव अधिक रहा हो। परन्तु इसमे सन्देह नहीं कि अब विनियोग का स्तर योजना आरम्भ होने से पूर्व के समय की अपेक्षा उल्लेखनीय रूप से ऊंचा हो चुका है।

६. यह बात भी उल्लेखनीय है कि विनियोग की दर ऊंची उठ जाने के साथ-साथ मुद्रा-स्फीति की बुराइया प्रकट नही हुई। नीचे की तालिका मे नकद रुपयों के चलन और मूल्य के विषय में मोटी-मोटी बाते दिखाई गई है :—

नकद मुद्रा और मूल्यों की स्थिति

वर्ग	इकाई	१९५०-५१	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)
१. जनता के हाथ में नकद मुद्रा (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	१,९७२	१,८०४	१,७६५	१,७९४	१,९२१	२,१८०
२. भारतीय रिजर्व बैंक के पास सरकारी हुण्डिया रुपयों में (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	५८६	५६७	५४६	४८७	५५३	७२६
३. अनुसूचित बैंकों द्वारा खरीदी हुई सरकारी हुण्डियां रुपयों में (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	३१६	२९६	३०३	३१९	३४४	३६०
४. अनुसूचित बैंकों द्वारा दिया हुआ उधार (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	५४७	५८०	५२९	५३९	५८०	७१३
५. भारतीय रिजर्व बैंक के पास विदेशी परिसंपत (वित्तीय वर्ष के अन्तिम शुक्रवार को)	करोड़ रु०	८८४	७२३	७२४	७५३	७३०	७४६

(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)
६. अदायगी सन्तुलन के चालू खाते में बचत (+) या घाटा (−)	करोड़ रु०	+५८	−१३६	+७७	+५७	×७	+१६*
७. थोक मूल्य (वित्तीय वर्ष के अन्तिम सप्ताह में)	देशनाक (अगस्त १९३९ = १००)	४५०	३७८	३८५	३९७	३४९	३९०
८. रहन-सहन का व्यय	दशनांक (१९४९ = १००)	१०१	१०४	१०४	१०६	९९	९६**
९. कृषि उपज	देशनाक (१९४९-५० = १००)	९६	९८	१०२	११४	११४	
१०. औद्योगिक उत्पादन (१९५० से १९५५ तक के पंचागीय वर्षों की वार्षिक औसत)	(क) अन्तरिम देशनांक (१९४६ = १००)	१०५	११७	१२९	१३५	१४७	१६१
	(ख) संशोधित देशनाक (१९५१ = १००)		१००	१०३ ६	१०५.५	११२.९	१२२.३

प्रथम योजना के अन्त में बाजार-मूल्य योजना आरम्भ होने के समय की अपेक्षा १३ प्रतिशत नीचे थे; वस्तुतः वे कोरिया का युद्ध छिडने से तुरन्त पूर्व के समय से भी कुछ नीचे ही थे। भारत भर में रहन-सहन के व्यय का दशनाक १९५५ मे ९६ और १९४९ में १०० था। १९५१ के आरम्भ मे जनता के हाथ मे व्यय करने के लिए जितना नकद रुपया था उसकी तुलना मे १९५५-५६ में २०८ करोड़ रुपए अधिक था, अर्थात १० प्रतिशत से कुछ अधिक, जबकि राष्ट्रीय आय मे १८ प्रतिशत वृद्धि होने का अनुमान था। विदेशों के साथ देश का अदायगी सन्तुलन १९५२-५३ में सुधरा और ७७ करोड़ रुपए की बचत हुई। १९५३-५४ में ५७ करोड़ रुपए की बचत रही, १९५४-५५ में यह हिसाब लगभग बराबर रहा, और १९५५-५६ में थोड़ी बचत होने की आशा है। रिजर्व बैंक के पास विद्यमान विदेशी मुद्राएं पाच वर्षों में १३८ करोड़ रुपए घट गईं। परन्तु इसकी तुलना मे, योजना में कल्पना की गई थी कि यह कमी २९० करोड़

* यह ३, ६ वर्ष के पहले नौ महीनों का है।

** यह अक अप्रैल १९५५ से जनवरी १९५६ तक का है।

की होगी। यद्यपि हाल के इन महीनों में नकदी चलन के परिमाण और मूल्यों में एकदम हो जाने के लक्षण दिखाई पडे हैं—और इन पर ध्यान रखने की आवश्यकता है—पि सब मिलाकर स्थिर और निरन्तर उन्नति ही सामने आती रही है। अन्य कई देशों में मुद्रा-ति का दबाव भारत की अपेक्षा कही अधिक है। द्वितीय योजना आरम्भ करने के समय हमारी क स्थिति प्रथम योजना आरम्भ करने के समय की अपेक्षा बहुत अच्छी है और सब ओर क प्रयत्न के लिए उत्साह और विश्वास दृष्टिगोचर होता है।

७. इन लाभों के बावजूद भी, सचाई यह है कि भारत मे रहन-सहन का दर्जा संसार नम्नतम दर्जों में से है। यहा खाद्य की औसत खपत, पोषक भोजन के माने हुए स्टैण्डर्ड ी नीची है; १९५५-५६ मे वस्त्र का प्रति व्यक्ति व्यय कोई १६ गज प्रति वर्ष था, के विश्व युद्ध से पहले भी लगभग इतना ही था; मकान बहुत कम हैं; ६ से ११ वर्ष तक आयु के बालकों में से केवल आधे और ११ से १४ वर्ष तक की आयु के बालकों में से तो केवल पांचवा भाग स्कूल जाते हैं। भारत की लगभग आधी आबादी केवल १३ रुपए प्रति मास गेग्य पदार्थों पर व्यय कर सकती है। हमारे यहां बिजली का प्रति-व्यक्ति व्यय, अमेरिका तुलना में १/७३ और इस्पात का १/१२२ है। जापान की तुलना में इन दोनों वस्तुओं का व्यय श: १/९ और १/१४ है। भारत की आबादी में वृद्धि कई उन्नत देशों की अपेक्षा अधिक नही रही, परन्तु फिर भी प्रति वर्ष ४५ से ५० लाख तक आबादी बढ जाने का मतलब, वर्तमान पर भी उपभोग्य पदार्थों की मांग का अति विशाल परिमाण में बढ जाना होता है। इसके कारण द्रुत गति से आर्थिक उन्नति करने के लिए इतने आवश्यक पुर्जों और मशीनों बढ़ाना बहुत कठिन हो जाता है। देश में श्रमिकों की संख्या बढ़ रही है, लेकिन उसके हिसाब जीविकोपार्जन के अवसर नहीं बढ़ रहे। प्रथम योजना के काल में पूंजी-विनियोग में वृद्धि ी नहीं हुई कि नए श्रमिकों की खपत उसमें हो सकती। इसलिए बेरोजगार और अल्प-गार वाले लोगो की बहुत बड़ी संख्या का प्रबन्ध करने का काम पड़ा हुआ है। द्वितीय ना काल मे विनियोग और जीविकोपार्जन के अवसरों को बहुत द्रुत गति से बढाना होगा। म योजना के विवरण में इस विचार पर विशेष बल दिया गया था कि विकास के कार्य एक अति दीर्घ-कालिक प्रक्रिया की दृष्टि से देखना चाहिए। कोई देश इसे छोटा करने लेए कितना ही प्रयत्न क्यों न करे, यह प्रक्रिया छोटी नही हो सकती। द्वितीय योजना को र करते हुए, निकट भविष्य की अनेक आवश्यकताएं सामने आने पर भी, भविष्य को गामी दृष्टि से ही देखना चाहिए।

२

विकास के मूल अंग

८. विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समाज के नों का अधिकाधिक सफलतापूर्वक उपयोग करना होता है। ये साधन कुछ प्रकृति के ा दिए हुए होते है, परन्तु इन्हें नए वैज्ञानिक उपायों और ज्ञान के प्रयोग के द्वारा त किया जा सकता है और कर लिया जाता है। इस दृष्टि से वैज्ञानिक उपायो और ज्ञान मूल्य पूजी निर्माण की अपेक्षा भी अधिक है। किसी भी कम उन्नत अर्थ-व्यवस्था में प्रकृति ा दिए हुए साधनों का पूरा ज्ञान नहीं होता और उनको उन्नत करने के लिए नई ानिक विधियों का प्रयोग करना पड़ता है। इन साधनों की खोज और इनका उपयोग,

आरम्भिक अवस्था में है । आवश्यक वैज्ञानिक विधियों का ज्ञान भी अधूरा है, इस कारण ज्ञात साधनों का उपयोग करने के लिए भी उन पर वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करना सरल नही । रहन-सहन के दर्जे को निरन्तर और अधिक ऊंचा उठाने के लिए न केवल ज्ञात साधनों के अधिक सफल उपयोग को अपितु ज्ञात टेकनीकों के भी अधिक अच्छे प्रयोग की आवश्यकता होती है । इसके लिए नए-नए साधनो की निरन्तर खोज करते रहना, और नवीन उत्पादक विधियो का विकास करते रहना आवश्यक होता है ।

९. यह कहना अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि देश का आर्थिक विकास अधिक शीघ्रता से करने के लिए जिस एक वस्तु का महत्व और सबसे अधिक है, वह उत्पादन की प्रक्रियाओं में आधुनिक टेकनोलौजी की विधियों का प्रयोग करने के लिए समाज की इच्छा और तत्परता है । इस क्षेत्र में नई प्रगति बहुत शीघ्र हो रही है और उसका प्रयोग न केवल उत्पादन, परिवहन और अन्य आर्थिक कार्यों के संगठन के लिए बल्कि आर्थिक और सामाजिक सगठन से सम्बद्ध प्रश्नों का हल करने मे भी महत्वपूर्ण है । विकास में पीछे रह जाने का कारण टेकनोलौजीकल विधियो मे पर्याप्त उन्नति न कर सकना होता है और इस अपर्याप्त उन्नति का कारण विविध राजनीतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां होती हैं । यदि इन परिस्थितियो मे अभीष्ट परिवर्तन हो जाए, तो टेकनीक में उन्नति करने मात्र से विकास की गति तीव्र हो सकती है । जिन देशों मे औद्योगिक जीवन का आ म्भ विलम्ब से होता है वे कुछ लाभ में भी रहते है, क्योकि वे उन वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग कर सकते है जिनकी दूसरे उन्नत देशो मे परीक्षा हो चुकती है । परन्तु इसके लिए आवश्यक है कि विज्ञान और टेकनोलौजी मे अन्यत्र जो प्रगति हो चुकी है, उसके साथ-साथ चलने का भी ध्यान रखा जाए । साराश यह है कि नए-नए साधनो की खोज, नई वैज्ञानिक विधियो का प्रयोग और उपलब्ध जनशक्ति का विकास कार्यों के लिए आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार उपयोग, विकास की नींव का काम देता है ।

१०. प्रथम योजना के विवरण में विकास के निर्णायक प्रधान तत्वो का निदेश करके, इस बात पर बल दिया गया था कि आर्थिक उन्नति के लिए टेकनीकों और मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक परिस्थितियो और अपने सामाजिक सगठन मे आवश्यक परिवर्तन करने के लिए समाज की तत्परता का महत्व तो होता ही है, परन्तु उससे भी अधिक जिन तीन बातों पर आर्थिक विकास निर्भर करता है, वे है (१) जनसख्या मे वृद्धि, (२) समाज ने पूजी-विनियोग के लिए अपनी आय का कितना भाग बचाया, और (३) इस प्रकार जिस पूजी का विनियोग किया उससे अतिरिक्त उत्पादन कितना हुआ । प्रथम योजना मे इन तीनों बातों के आधार पर आगामी कुछ दशकों मे विकास के सभावित क्रम की कल्पना कर ली गई थी । प्रथम योजना के काल मे हमे जो अनुभव हुआ और अन्य देशो मे विकास की प्रगति का निश्चय करने के लिए जो कसौटिया निर्धारित की गई है, उनके आधार पर हम इनकी समीक्षा कर सकते हैं ।

११. जनसख्या की वृद्धि के विषय में कुछ ही बातों की चर्चा करने की आवश्यकता है । जनसंख्या के वृद्धि के क्रम मे परिवर्तन शीघ्र नहीं किया जा सकता और किसी नियत काल के लिए योजना बनाते हुए, जो प्रगतिया पहले आरम्भ हो चुकी हैं उनके आधार पर ही आगे बढा जा सकता है । परन्तु यदि जनसंख्या की वृद्धि के क्रम को उचित दिशा में परिवर्तित कर दिया जाए, तो उस काल में विकास के प्रयत्नो का परिणाम प्रत्यक्ष रूप से भिन्न हो सकता है । हमारे इन प्रयत्नों मे परम्परागत विश्वास और विचार बहुत बाधक हो सकते है । ऐसे देश अधिक नही है जिनकी सरकारो ने जनसंख्या की वृद्धि के विषय में कोई निश्चित नीति अपना रखी हो । परन्तु इस सम्बन्ध में जनता के विचारों और प्रवृत्तियों को

बदला जा सकता है, और वे, जितना हम समझते हैं, उसकी अपेक्षा शीघ्रता से बदल भी रही हैं। वस्तुस्थिति के तर्क का खण्डन कोई भी नहीं कर सकता, और यह एक असंदिग्ध सत्य है कि भारत की वर्तमान परिस्थितियों में जिस गति से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है, उसका आर्थिक विकास और लोगों के रहन-सहन के दर्जे पर अवश्य ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। हमारे देश की जनसंख्या के हिसाब से, हमारे यहां भूमि और पूंजी दोनों की कमी है और इसलिए यदि लोगों के रहन-सहन और आय में उन्नति करनी हो तो जनसंख्या की वृद्धि को रोकना अत्यन्त आवश्यक है। इसका महत्व इस कारण से और भी अधिक है कि जन-स्वास्थ्य में उन्नति और रोगों तथा महामारियों के निरोध में सफलता का स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि लोगों की आयु बढ़ जाएगी। सम्भव है कि अगले २० या २५ वर्षों में जनसंख्या की वृद्धि के क्रम में भी कुछ परिवर्तन हो जाए। परन्तु अभी तो जनसंख्या घटाने के सब प्रयत्न करने पर भी जनसंख्या में वृद्धि का प्रभाव अधिक ही अनुभव होने की सम्भावना है। इस कारण जनसंख्या में वृद्धि रोकने के लिए प्रभावकारी कार्यक्रम अपनाने की आवश्यकता है।

१२. प्रथम पंचवर्षीय योजना (प्रतिवेदन १९५२) के प्रथम अध्याय में एक ग्राफ दिया गया था, जिसमें यह दिखाया गया था कि अगले २५ या ३० वर्षों में जनता की आय और व्यय में वृद्धि किस दिशा में होने की सम्भावना है। इस ग्राफ में देश की आय, पूंजी-विनियोग और खपत का परिमाण दिखाने के लिए जो रेखाएं खींची गई थीं, उनसे ही यह भी प्रकट किया गया था कि विकास के लिए जो प्रयत्न किए जाएंगे उनका फल एक पीढ़ी के पश्चात क्या निकलेगा। उससे प्रकट होता था कि यदि निरन्तर प्रयत्न जारी रखा जा सका तो १९७१-७२ में अर्थात लगभग २१ वर्षों में, हमारी राष्ट्रीय आय १९५०-५१ की तुलना में दुगुनी हो जाएगी। इसी प्रकार यह भी दिखाया गया था कि १९५०-५१ में प्रति व्यक्ति की जो आय थी वह १९७७-७८ तक, अर्थात लगभग २७ वर्षों में, दुगुनी हो जाएगी। इसका अर्थ यह था कि १९५०-५१ की तुलना में, १९७७-७८ तक हमारे जीवन-व्यय का औसत मान लगभग ७० प्रतिशत ऊंचा हो जाएगा।

१३. यह हिसाब लगाते हुए यह मान लिया गया था कि जिस काल के लिए यह ग्राफ बनाया गया था उसमें जनसंख्या में प्रति दस वर्ष पीछे १२·५ प्रतिशत की वृद्धि होगी। परन्तु अब वृद्धि के इस क्रम को कुछ ऊंचा मानकर चलना अधिक उचित जान पड़ता है। १९५१–६० के दशक के लिए तो शायद १२·५ प्रतिशत की कल्पना ठीक है, परन्तु उसके बाद के दशकों में यह कल्पना करते हुए, इस बात को भी ध्यान में रखना पड़ेगा कि जन-स्वास्थ्य में सुधार और रोगों के निरोध के कारण लोगों की आयु बढ़ जाएगी और परिवार-नियोजन के प्रचार के कारण जन्म-संख्या कुछ घट जाएगी। इन बातों के विचार में कुछ मतभेद का भी होना सम्भव है। अब जो नक्शा बनाया जा रहा है उसमें १९६१–७० के दशक के लिए जनसंख्या में वृद्धि का क्रम १३·३ प्रतिशत और १९७१–८० के दशक के लिए १४ प्रतिशत माना गया है। इस आधार पर देश की आबादी १९६०-६१ में ४० करोड़ ८० लाख, १९६५-६६ में ४३ करोड़ ४० लाख, १९७०-७१ में ४६ करोड़ ५० लाख और १९७५-७६ में ४९ करोड़ ९० लाख अथवा प्रायः ५० करोड़ हो जाएगी। ये अन्दाजे, १९५१ की जन-गणना रिपोर्ट में जन-गणना आयुक्त द्वारा लगाए हुए अधिकतम और न्यूनतम अन्दाजों के मध्य में हैं। जन-गणना आयुक्त ने अपने अन्दाजों के विषय में सन्देह प्रकट किया था कि वे शायद कुछ कम होंगे। सम्भव है कि यही बात इन अन्दाजों के विषय में भी ठीक हो।

१४. प्रथम योजना प्रतिवेदन में यह कल्पना की गई थी कि १९५०-५१ मे राष्ट्रीय आय का ५ प्रतिशत विनियोग किया गया था, और वह १९६८-६९ तक बढकर लगभग २० प्रतिशत हो जाएगा, और उसके पश्चात इतना ही रहेगा। पूजी-विनियोग और उत्पादन का अनुपात ३ और १ माना गया था, और यह अन्दाजा लगाया गया था कि इन दोनो के अनुपात में वृद्धि दो वर्ष पश्चात होगी। गत पांच वर्षों में राष्ट्रीय आय मे १८ प्रतिशत वृद्धि हुई है। यह पहले लगाए हुए अन्दाजे से ७ प्रतिशत अधिक है। यह मानने के पश्चात भी कि इन पाच वर्षों में बहुत-सी बातें विशेष रूप से अनुकूल रही थीं, अगले वर्षों के लिए राष्ट्रीय आय मे वृद्धि का अन्दाजा करते हुए विनियोग और उत्पादन के अनुपात को अधिक अच्छा मानकर आगे बढा जा सकता है। जनता द्वारा की गई बचत की राशि में वृद्धि होने के कारण विनियोग में जो वृद्धि होगी, उसका भी अन्दाजा फिर लगाना होगा।

१५. प्रथम योजना की अवधि के लिए विनियोग और उत्पादन का बढा हुआ अनुपात १·८ : १ निकलता है। यह अति अनुकूल परिणाम कुछ तो अच्छी वर्षा के कारण और कुछ इस कारण निकला है कि अब तक अप्रयुक्त सामर्थ्य का उपयोग कर लेने के कारण औद्योगिक उत्पादन मे अच्छी वृद्धि हो गई। आशा है कि द्वितीय योजना काल मे, जैसा कि आगे दिखाया गया है, ६,२०० करोड़ रुपए का विनियोग हो सकेगा, और उससे राष्ट्रीय आय मे २,६८० करोड़ रुपए की वृद्धि हो जाएगी। इस आधार पर विनियोग और उत्पादन का अनुपात २ ३ : १ निकलता है। यह अनुपात योजना के सरकारी और निजी भागो में उत्पादन और विनियोग में वृद्धि होने की जो कल्पना की गई है, उसके आधार पर निकाला गया है। दूसरे शब्दों मे, यह अनुपात ग्राफ तैयार करने वाले अधिकारियों ने जो संख्याएं दी उनके आधार पर निकाला गया है। परन्तु इन अन्दाजों में कुछ अश कल्पना का भी है, क्योंकि हमारी अर्थ-व्यवस्था के कुछ अग ऐसे भी है जिनमे वृद्धि की कल्पना परोक्ष साक्षियो के आधार पर करनी पड़ती है। द्वितीय योजना में औद्योगिक उन्नति पर बहुत बल दिया गया है, इसलिए आशा है कि उसमें पूंजी का विनियोग प्रथम योजना की अपेक्षा अधिक होगा। इसके बाद की योजना अवधियो मे अतिरिक्त उत्पादन की प्रत्येक इकाई के पीछे पूजी का परिमाण इसी हिसाब से बढता जाएगा। इस हिसाब से हमने तीसरी, चौथी और पाचवी योजना अवधियो के लिए विनियोग और उत्पादन के अनुपातो का अन्दाजा क्रमश २·६, ३·४ और ३·७ लगाया है। ये उदाहरण मात्र है। विनियोग और उत्पादन मे अनुपातो का ठीक-ठीक हिसाब तो विकास के निश्चित कार्यक्रम बन जाने और लागत तथा पैदावार का हाल ज्ञात हो जाने पर ही लगाया जा सकता है।

१६. विनियोग और उत्पादन मे अनुपात की चर्चा, वस्तुतः योजना के विविध भागो मे पूजी-विनियोग से उत्पादन का परिमाण प्रकट करने का एक सरल उपाय मात्र है। यह उत्पादन केवल लगी हुई पूजी पर ही नही, अन्य अनेक बातों पर भी निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, लगाई हुई पूजी को प्राविधिक सहयोग कितना मिला, नए यन्त्रो का प्रयोग कितनी कुशलता से किया गया और प्रबन्ध और सगठन कितनी उत्तमता से किए गए, इत्यादि। यह भी देखा गया है कि सुयोजित अर्थ-व्यवस्था मे लगाई गई पूजी की प्रत्येक इकाई के उत्पादन का परिमाण, असुयोजित अर्थ-व्यवस्था की अपेक्षा बढ जाता है। इसका कारण यह है कि योजना के द्वारा विविध कार्यक्रमों में सहयोग अधिक अच्छी प्रकार हो सकता है, और अनियन्त्रित बाजारो मे एकदम जो तेजी और मन्दी आती रहती है, उससे बचाव हो जाता है। विनियोग का उपयोग विभिन्न अंगों में किस प्रकार किया गया है, इस बात पर भी बहुत कुछ निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, कहा जाता है कि रूस में विनियोग और उत्पादन का अनुपात अच्छा होने का कारण यह है कि वहा मकानो पर

अपेक्षाकृत कम व्यय किया जाता है। विनियोग और उत्पादन का अनुपात इस बात पर भी निर्भर करता है कि ऊपरी प्रबन्ध आदि में कितना खर्च किया गया। ऊपरी प्रबन्ध आदि में व्यय की गई पूंजी का पूरा लाभ उठाने में समर्थ होने से पहले तक, हमें कुछ समय कम लाभ से ही सन्तुष्ट रहना पडेगा। इन विविध कारणों का ही यह फल है कि विभिन्न देशों और विभिन्न समयो मे विनियोग और उत्पादन के जो अनुपात निकाले जाते है, उनमें परस्पर इतना अधिक अन्तर रहता है। सब मिलाकर, यदि कई देशो के विनियोग और उत्पादन के अनुपातों को मिलाकर देखा जाए तो वे बहुधा ३ : १ और ४ : १ के बीच में रहते हैं। कुछ देशों और कुछ समयों के अनुपात इससे कम-ज्यादा भी होते हैं। भारत के लिए हमने विनियोग और उत्पादन के जिन अनुपातो की कल्पना की है, उनकी अन्य देशों के अनुपातो से तुलना करते हुए, यह स्मरण रखना चाहिए कि हमने पूंजी-विनियोग की गणना में उस विनियोग को सम्मिलित नही किया जो कि नकद रूप में नही हुआ। देहातो की अर्थ-व्यवस्था में इस प्रकार के विनियोग का परिमाण बहुत बडा होता है। हमारे देश की कम रोजगारी आदि की परिस्थितियों में शारीरिक श्रम और स्थानीय सामान के उपयोग का महत्व बहुत अधिक है और उसे प्रोत्साहन भी दिया जाए।

१७. इतने विचार के पश्चात यह प्रश्न उपस्थित होता है कि सम्भावित विनियोग का स्तर क्या रहेगा और वह पूरा हो सकेगा या नहीं। प्रथम योजना में यह मान लिया गया था कि १९५६-५७ से बचत ५० प्रतिशत होने लगेगी, और इस आधार पर यह हिसाब लगाया गया था कि १९६८-६९ तक विनियोग की दर राष्ट्रीय आय का २० प्रतिशत होकर, उसके बाद उतनी ही रहेगी। अब लगता है कि ये कल्पनाएं बहुत ऊंची कर ली गई थीं। अब जो अन्दाजे लगाए गए हैं उनमें यह माना गया है कि विनियोग का अंक १९५५-५६ मे ७ प्रतिशत से बढ़कर १९६०-६१ तक ११ प्रतिशत, १९६५-६६ तक १४ प्रतिशत और १९७०-७१ तक १६ प्रतिशत हो जाएगा। उसके पश्चात् यह कुछ स्थिर रहकर १९७५-७६ में १७ प्रतिशत तक पहुंचेगा। राष्ट्रीय आय के १६ या १७ प्रतिशत भाग का विनियोग होना ऊचा तो अवश्य है, परन्तु असाध्य नही है। पश्चिम के जो देश बहुत पहले अपना औद्योगिक जीवन आरम्भ कर चुके थे उनमें पूजी निर्माण का क्रम १० से १५ प्रतिशत तक रहा था। जापान में १९१३ और १९३९ के बीच मे विनियोग का औसत राष्ट्रीय आय के १६ से २० प्रतिशत तक था। रूस मे विनियोग की दरों को निरन्तर बहुत ऊचे स्तर पर, १५ और २० प्रतिशत के बीच मे, स्थिर रखा गया है। एशियाई देशों के विषय में जो जानकारी मिली है उसके अनुसार १९५० के पश्चात बर्मा में पूंजी निर्माण का क्रम राष्ट्रीय आय के १० से २० प्रतिशत तक, जापान में २४ से ३० प्रतिशत तक, श्रीलंका में १० से १३ प्रतिशत तक और फिलीपीन द्वीपों में ७ से ८½ प्रतिशत तक रहा है। इनकी तुलना में भारत के ये अंक १० से ११ प्रतिशत तक हैं। दक्षिण अमेरिका के देशों में यह क्रम १५ प्रतिशत के आसपास रहा है। बीच बीच में यह इससे ऊपर भी उठता रहा है। चेकोस्लोवाकिया तथा पोलैंड आदि पूर्वी योरुप के कुछ देशों में पूंजी विनियोग का औसत २० से २५ प्रतिशत के मध्य रहा है। जिन देशों में विकास का कार्य नया आरम्भ हुआ है, उनमें सरकारें चाहें तो विनियोग के लिए उपयुक्त नीतियों और कार्यक्रमों को अपनाकर इन दरों को, निश्चय ही, वर्तमान दरों से ऊंचा उठा सकती है। भारत में भी विनियोग-दर को उससे ऊंचा उठाया जा सकता है जिसका कि अभी उल्लेख हुआ है।

१८. संलग्न ग्राफ में इन कल्पनाओं के आधार पर निकाले हुए परिणाम दिखाए गए है। ग्राफ के अनुसार राष्ट्र की आय १९६७-६८ तक और प्रति व्यक्ति की आय १९७३-७४

तक दुगुनी हो जाएगी। एक बात ध्यान में रखने की यह है कि प्रथम योजना काल में राष्ट्र की आय में वृद्धि क्योंकि आशा से अधिक हो गई थी, इस कारण प्रथम और द्वितीय योजनाओं की समाप्ति पर राष्ट्र की आय में समस्त वृद्धि ४७ प्रतिशत होगी। प्रथम योजना के विवरण में इस वृद्धि का अन्दाजा केवल २५ प्रतिशत लगया गया था। निम्नलिखित तालिका में विचाराधीन योजनाओं में क्रमशः अधिकाधिक बढ़ते हुए विकास को एकत्र दिखाया गया है :

१९५१—७६ में आय और विनियोग में वृद्धि

(१९५२-५३ के मूल्यों के आधार पर)

मद	प्रथम योजना १९५१–५६	द्वितीय योजना १९५६–६१	तृतीय योजना १९६१–६६	चतुर्थ योजना १९६६–७१	पंचम योजना १९७१–७६
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)
१. अवधि के अन्त में राष्ट्रीय आय (करोड़ रुपयों मे) ...	१०,८००	१३,४८०	१७,२६०	२१,६८०	२७,२७०
२. समस्त शुद्ध विनियोग (करोड रुपयो मे)	३,१००	६,२००	९,९००	१४,८००	२०,७००
३. अवधि के अन्त मे राष्ट्रीय आय के कितने प्रतिशत का विनियोग हुआ	७·३	१०·७	१३·७	१६·०	१७·०
४. अवधि के अन्त मे जन-संख्या (करोडों में) .	३८·४	४०·८	४३·४	४६·५	५०·०
५ विनियुक्त पूजी और उत्पादन का अनुपात	१·८ १	२·३:१	२·६ १	३·४:१	३·७:१
६. अवधि के अन्त में प्रति व्यक्ति आय (रुपयों मे) .	२८१	३३१	३९६	४६६	५४६

इस तालिका के अनुसार, द्वितीय और तृतीय योजनाओ की अवधियो मे विनियोग मे वृद्धि उनके पश्चात की आवश्यकताओ की अपेक्षा अधिक होगी। इस कारण इन दस वर्षों को विकास की भावी प्रगति का निश्चय करने की दृष्टि से निर्णायक माना जा सकता है। यह वह समय होगा जब कि लोगो के रहन-सहन का दर्जा और बचत करने की सामर्थ्य अपेक्षाकृत नीची होगी और इसलिए देश के साधनो को विदेशी सहायता द्वारा बढ़ाने की आवश्यकता रहेगी।

३

आर्थिक गठन में परिवर्तन

१९ यह बताने की आवश्यकता नही कि राष्ट्रीय आय, पूजी-विनियोग और खपत में परिवर्तनों की पृष्ठभूमि मे देश की आर्थिक परिस्थितियो में दूर-व्यापी परिवर्तन हो जाते है। विकास के कारण न केवल माल की न्यूनता या अधिकता का, अपितु उसकी पूर्ति

और मांग का रूप भी बदल जाता है। ये परिवर्तन साधनों के प्रयोग में परिवर्तनों के कारण तो होते ही है, ये प्रयोग की शैली को भी बदल देते हैं। इनका वर्णन कोई राष्ट्रीय आय और पूजी-विनियोग की भाषा मे भले ही कर दे, परन्तु कोई भी व्यक्ति उस प्रत्यक्ष हेर-फेर की ओर से अपनी आख नही मींच सकता जो कि इनके कारण देश की अर्थ-व्यवस्था में हो जाते है और जिनका होना आवश्यक भी है। स्पष्ट है कि राष्ट्रीय आय के दुगुना हो जाने का यह अर्थ नही है कि समाज को सब वस्तुए और सेवाएं पहले की अपेक्षा दुगुने परिमाण में मिलने लगती हैं। सम्भव है कि अन्न आदि कुछ वस्तुओं की वृद्धि तो थोड़ी ही हो और अन्य कुछेक वस्तुए कई गुना अधिक मिलने लगें। ज्यो-ज्यों समाज की आवश्यताएं पूरी होने लगती है, त्यों त्यों नई आवश्यकताएं उत्पन्न हो जाती है और उन्हें नई प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन करके पूरा करना पड़ता है। इस प्रकार अर्थ-व्यवस्था का रूप नाना प्रकार का हो जाता है और जीवन की द्वितीय तथा तृतीय श्रेणियो की आवश्यकता के पदार्थ बनने लगते हैं। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ यह है कि राष्ट्रीय आय की धारा का वेग दुगुना हो जाने से उसका रूप और रचना भी बदल जाते हैं; कैसे और कितने बदल जाते है, यह पहले से बतला देना सुगम नही है। इसलिए माग और पूर्ति के परिवर्तनों का अध्ययन निरन्तर करते रहने की आवश्यकता होती है। हमारे साधन जितने लचकीले और गतिशील होंगे उतनी ही हमारी अर्थ-व्यवस्था की उन्नति शीघ्र हो सकेगी। आर्थिक उन्नति का एक स्वाभाविक परिणाम पेशों में परिवर्तन भी होना है।

२०. यद्यपि हमारे देश में गत तीन-चार दशकों मे औद्योगिक उत्पादन में बहुत वृद्धि हुई है, तथापि हमारे यहां पेशों में परिवर्तन बहुत अधिक नही हुआ। मोटे हिसाब से अब भी ७० प्रतिशत लोग खेती और उससे सम्बद्ध पेशों में लगे हुए है, २·६ प्रतिशत खानो और कारखानों में, कोई ८ प्रतिशत भवन-निर्माण समेत छोटे व्यवसायों में, लगभग ७ प्रतिशत परिवहन, संचार और व्यापार से सम्बद्ध पेशो में और १० प्रतिशत से कुछ अधिक सरकारी नौकरियों, वकालत तथा अध्यापन आदि दिमागी कामों और घरेलू नौकरियों में लगे हुए है। इसका मतलब यह है कि हमारे यहा अभी तक द्वितीय और तृतीय अवस्था के पेशों में इतनी वृद्धि नही हुई है कि उसका जीवन की आरम्भिक अवस्था के पेशों पर प्रभाव पड़ता और न आरम्भिक अवस्था के पेशो से ही ऐसी फालतू गुंजाइश पैदा होती है कि अन्य पेशों का विस्तार होने के लिए अनुकूल परिस्थितिया उत्पन्न हो सकती। राष्ट्रीय आय और रोजगार में लगातार उन्नति होने के लिए समस्त अर्थ व्यवस्था में चहुंमुखी विकास की आवश्यकता होती है। इस समय हमारे देश में खानो और कारखानों में काम करने वाले जितना कमाते है, उसकी तुलना में खेती और उससे सम्बद्ध पेशों में काम करने वालों की कमाई केवल पांचवां भाग होती है और व्यापार तथा अन्य नौकरियों की तुलना मे वह कमाई एक-तिहाई बठती है। विकास का परिणाम यह होता है कि श्रमिकों का कुछ भाग खेती छोड़कर जीवन की द्वितीय और तृतीय अवस्था के पेशों में लग जाता है। परन्तु इसके लिए आवश्यक होता है कि जनता की अन्न और अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खेती की पैदावार में भी वृद्धि हो जाए। इस प्रकार जीवन की द्वितीय और तृतीय अवस्था के पेशो के विस्तार का आधार सिंचाई, अच्छे बीज, रासायनिक खाद और वैज्ञानिक टेक्नीक आदि की सहायता से खेती की उन्नति ही होता है। इन पेशों म प्रति व्यक्ति पीछे अधिक पूजी विनियोग आवश्यक होता है। इस प्रकार अन्ततोगत्वा पेशों म फैलाव का आधार यही रहता है कि देश की अर्थ-व्यवस्था पूजी-विनियोग कितना कर सकती है।

२१. अन्य देशों का अनुभव भी यही है कि ज्यों ज्यों आर्थिक विकास होता गया त्यों त्यों प्रारम्भिक पेशों में काम करने वालों की सख्या घटकर उद्योगों और अन्य पेशों में काम करने

वालो की सख्या बढती गई । पेशों के सम्बन्ध मे जो जानकारी उपलब्ध है उसके अनुसार, अमेरिका मे १८७० और १९३० के मध्य खेती मे लगे हुए लोगो का अनुपात ५४ प्रतिशत से घटकर २३ प्रतिशत, फ्रांस मे ४२ प्रतिशत से २५ प्रतिशत और जापान मे ८० प्रतिशत से ४८ प्रतिशत रह गया । जर्मनी मे १८८० मे यह अनुपात ३९ प्रतिशत था, १९३० में यह २२ प्रतिशत रह गया । ब्रिटेन मे यह अनुपात १८७० मे १५ प्रतिशत था, १९२० मे वह घटकर ७ प्रतिशत रह गया । निस्संदेह, राष्ट्रीय आय मे वृद्धि का पेशों की गठन मे परिवर्तन की मात्रा के साथ कोई निश्चित सम्बन्ध नही है; यह परिवर्तन विविध प्रकार के प्राकृतिक साधनो और सुविधाओं की उपलब्धि, विकास के क्रम, विदेशी बाजारो तक पहुच और विभिध सस्थाओ सम्बन्धी अन्य अनेक बातों द्वारा नियन्त्रित होता रहता है । अमेरिका मे १८६९–७८ से १८९४–१९०३ तक के मध्य प्रति दशक पीछे, प्रति व्यक्ति का राष्ट्रीय उत्पादन दुगुना हो जाने का परिणाम यह हुआ है कि खेती मे लगे हुए श्रमिको की सख्या लगभग ५० प्रतिशत से घटकर ३७ प्रतिशत रह गई । इस समय अमेरिका मे जनता का केवल १२ प्रतिशत भाग खेती के पेशो में लगा हुआ है । जापान मे १८७६ मे जनता का ७७ प्रतिशत भाग खेती मे लगा हुआ था, १९२० मे वह घटकर ५२ प्रतिशत रह गया, और इस अवधि मे राष्ट्र का उत्पादन ५ गुना बढ गया । स्कैंडिनेवियन देशो (नार्वे, स्वीडन और डेनमार्क आदि) और स्विटजरलैंड की राष्ट्रीय आय-वृद्धि शीघ्र हुई है, फिर भी इन देशो में ब्रिटेन और अमेरिका की तुलना मे खेती करने वाले लोगों की सख्या अपेक्षाकृत अधिक है । लैटिन अमेरिका के देशो मे द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात बहुत उन्नति हुई है । वहा का अनुभव भी यही बतलाता है कि उस उन्नति के कारण बहुत-से लोग खेती छोड़कर अन्य उद्योगो मे लग गए । ससार के उस भाग मे १९४५ और १९५० के मध्य खेती करने वालो की संख्या ६० प्रतिशत से घटकर ५८ प्रतिशत रह गई । इसी काल मे इस भू-भाग मे विनियुक्त पूजी की मात्रा एक-तिहाई, और प्रति व्यक्ति पीछे उत्पादन की मात्रा ४ प्रतिशत प्रति वर्ष से भी अधिक बढ गई ।

२२. भारत में जनसख्या के पेशेवार विभाजन की जानकारी १९५१ की जनगणना से ही मिलती है । इस जनगणना और इससे पहले की जनगणना के बीच के वर्षों में जो परिवर्तन हुए, उनका केवल कुछ अन्दाजा लगाया जा सकता है । १९५१ के पश्चात के स्वल्प काल मे पेशों मे हुए परिवर्तनो का स्पष्ट रूप से उल्लेख करना प्राय. असम्भव है । फिर भी छोटे-बडे शहरो के विस्तार से प्रकट हो जाता है कि हमारे यहां पेशो की गठन पर नए परिवर्तनों का प्रभाव कैसा पड़ा है, तथापि हमारी दीर्घकालिक नीति का लक्ष्य यह होना चाहिए कि खेती करने वालों की सख्या में वृद्धि न्यूनतम हो । इस दिशा मे हमे अपने प्रयत्नो को इस लक्ष्य पर केन्द्रित कर देना चाहिए कि खेती करने वालो की संख्या के स्थान पर वृद्धि खेती के उत्पादन और आय में हो; इतना ही नही कुछ समय के पश्चात खेती करने वालो की समस्त संख्या में भी कमी होनी चाहिए । हमारे परम्परागत छोटे उद्योगों में भी श्रमिकों की सख्या बढ़ाने की बहुत गुजाइश नही है, प्रत्युत उनकी संख्या अब भी अधिक ही है । इस क्षेत्र में हमारी समस्या कुशल श्रमिकों में बढ़ती हुई बेरोजगारी को रोकने की और यन्त्रों, कार्य-प्रणालियो और संगठन को सुधारकर आमदनी को बढाने की है । इसलिए जीविकोपार्जन के नए अवसर, खानो, छोटे-बड़े नए उद्योगों, भवन-निर्माण के कामो और जीवन की तृतीय अवस्था के पेशों में खोजने का प्रयत्न करना चाहिए । सब प्रयत्न करने पर भी सम्भव है कि कुछ वर्ष तक खेती करने वालों की संख्या में वृद्धि अनिवार्य हो जाए । परन्तु १९७५-७६ तक सब मिलाकर खेती वालों की संख्या सारी आबादी के ६० प्रतिशत या इसके आस-पास से अधिक नहीं रहनी चाहिए । इसके लिए

खानों और कारखानों में काम करने वालो की सख्या को लगभग चौगुना कर देना पड़ेगा। और इसके लिए इस क्षेत्र में पूजी-विनियोग को भी उसी हिसाब से बढाना पड़ेगा। जीविकोपार्जन के नए अवसर पर्याप्त मात्रा में खोजने के काम को इसी दृष्टि से देखना होगा। यह भी ध्यान मे रखना चाहिए कि इस काल मे श्रमिकों की, अर्थात रोजगार की तलाश में रहने वाली जनता की सख्या भी बढ जाने की सम्भावना है—उदाहरणार्थ, अब स्त्रिया भी रोजगार तलाश करने लगी हैं। इस समय व्यापार के क्षेत्र में तथा अन्य नौकरियो मे, बेरोजगारी और कम रोजगारी बहुत है। इससे प्रकट होता है कि उद्योगो, निर्माण, परिवहन और सचार आदि के कामों मे जीविकोपार्जन के अवसर बढ़ाने की कितनी आवश्यकता है। इस दिशा में विकास करने से जीवन की तृतीय अवस्था के पेशों में भी आदमियों की मांग बढ़ जाएगी, और जो बहुत-से काम अब घरो मे कर लिए जाते है उन्हें भी पृथक व्यापारिक कार्य का रूप प्राप्त हो जाएगा। इस प्रकार बहुत-से स्वतन्त्र छोटे व्यापारों और रोजगारो की उत्पत्ति हो जाएगी। स्पष्ट है कि जीविकोपार्जन के अधिकाधिक अवसर तलाश करने और पेशो की सख्या बढ़ाने की समस्याए एक-दूसरे के साथ जुड़ी हुई है।

४

भौतिक और वित्तीय योजना

२३. समाज की जन-शक्ति के पेशो में आरंभिक अवस्था से द्वितीय और तृतीय अवस्थाओ की ओर होने वाला परिवर्तन इस बात का सूचक है कि जब विकास मे प्रगति होने लगती है तब अन्य साधनों के प्रयोग में भी परिवर्तन किस प्रकार हो जाते है। ये सब परिवर्तन परस्पराश्रित होते है। सब साधन सन्तुलित रूप मे आगे बढते और उन्नत होते है। स्वभावतः इन सब परिवर्तनों और हेर-फेर की कल्पना पहले से एक साथ नही की जा सकती। फिर भी विकास की योजना बनाते हुए यह निर्णय—वह कितना ही सीमित और अस्थायी क्यों न हो—करना ही पड़ता है कि समाज के साधनों के प्रयोग में परिवर्तन किस दिशा मे होना चाहिए और अभीष्ट फल की प्राप्ति के लिए उन पर नियन्त्रण किस प्रकार किया जा सकता है। साधनों की समस्या को इस दृष्टि से देखने को कभी-कभी भौतिक योजना का नाम दे दिया जाता है। वस्तुतः साधनों की समस्या पर इस प्रकार विचार करते हुए यह देखा जाता है कि विकास के प्रयत्न का विविध साधनो के विभाजन पर और उत्पादन पर, आमदनी और रोजगार को अधिकतम बढ़ाने की दृष्टि से क्या प्रभाव पड़ेगा। अभिप्राय यह है कि जब कोई कार्यक्रम बनाया जाए, अर्थात उस पर होने वाले व्यय और लाभों का अन्दाजा लगाया जाए, तब वित्तीय और आर्थिक पर्दे के पीछे दृष्टि डालकर उस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए जिन वास्तविक साधनों की आवश्यकता पड़ेगी, उनका और उसके पूरा हो जाने पर अपनी अर्थ व्यवस्था के महत्वपूर्ण भागों में तैयार माल की मांग और पूर्ति पर जो प्रभाव पड़ेगा, उसका भी अन्दाजा लगा लेना चाहिए। उदाहरणार्थ, यदि कोई योजनाधिकारी किसी कार्यक्रम पर १०० करोड़ रुपए व्यय हो जाने का अन्दाजा लगाए, तो उसका अर्थ यह होगा कि उस कार्य के लिए इतने यन्त्रों, इतनी निर्माण-सामग्री और इतने श्रमिकों आदि की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिए प्रश्न केवल यह नहीं होगा कि पूंजी की उतनी राशि एकत्र किस प्रकार की जाएगी—यद्यपि यह प्रश्न भी महत्वपूर्ण है—बल्कि यह होगा कि अभी जिन वास्तविक साधनों की चर्चा की गई, वे प्राप्त किए जाएं या नहीं और यदि किए जाएं तो किस प्रकार। इसी प्रकार जब वह कार्यक्रम पूरा हो जाएगा तब प्रश्न होगा कि उससे होने वाले लाभों का उपयोग किस प्रकार किया

जाएगा और उसके कारण किन नई मांगों की पूर्ति होगी अथवा कौन-सी मागें खड़ी होंगी। यदि इन सब बातों का अन्दाजा पहले से ही भली प्रकार न लगा लिया जाए तो सम्भव है कि उक्त कार्यक्रम में लगाए गए साधन व्यर्थ ही चले जाएं। इसके अतिरिक्त, वास्तविक साधनो प्रयोग को केवल उक्त कार्यक्रम की पूर्ति की दृष्टि से नही, अपितु विकास के सम्पूर्ण कार्यक्रम की दृष्टि से देखना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस बात का भी अध्ययन करना पडेगा कि किसी विशेष कार्यक्रम की पूर्ति हो जाने पर उत्पादन मे जो वृद्धि होगी उसके कारण किन नई वस्तुओं की और कितनी माग उत्पन्न हो जाएगी।

२४. दूसरे शब्दों मे, योजना बनाते हुए वास्तविक साधनो के प्रयोग को निश्चित सन्तुलन में रखने की आवश्यकता होती है। योजना के कारण, पहले तो साधनों का विद्यमान सन्तुलन बिगड़ जाता है और फिर एक उच्चतर स्तर पर नया सन्तुलन स्थापित हो जाता है। योजना बनाते हुए बहुधा इस प्रकार के प्रश्न सामने आते है : क्या जरूरत के लायक यंत्र मिल सकेंगे ? क्या कुशल और अनुभवी कर्मचारी आवश्यक संख्या मे मिल जाएंगे ? कुछ यन्त्र-सामग्री विदेशों से तो नही मगानी पड़ेगी ? और यदि मंगानी पड़ेगी, तो क्या उसका मूल्य चुकाने के लिए आवश्यक मात्रा मे अतिरिक्त निर्यात किया जा सकेगा ? क्या उससे आवश्यक मात्रा में जीविकोपार्जन के नए अवसर उत्पन्न हो सकेंगे ? और क्या उनसे राष्ट्रीय आय में आशानुरूप वृद्धि हो सकेगी ? यदि किसी कार्यक्रम के वास्तविक साधनों का अन्दाजा ठीक-ठीक लगा लिया जाए, तो किसी हद तक उसके लिए आवश्यक पूंजी का भी अन्दाजा लगाया जा सकता है और यदि कही ऐसा न हो सके, तो कम से कम उन कठिनाइयों का ज्ञान तो हो ही जाता है, जिनका सामना आगे चलकर होने की सम्भावना होती है। बड़ी संख्या में कुशल कर्मचारियो और अन्य विशेषज्ञों को प्रशिक्षित करने की समस्या पर विचार, इसके अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार नही किया जा सकता।

२५ यहा इस बात पर जोर देना जरूरी है कि योजना बनाते हुए साधनों के सन्तुलन का ध्यान, वास्तविक साधनों और वित्तीय साधनों, दोनों की दृष्टि से रखा जाना चाहिए। उत्पादन की प्रक्रिया मे नकद द्रव्य की आय तो हो ही जाती है और उत्पन्न पदार्थो का उपयोग नकद द्रव्य के कारण नई होने वाली माग को पूरा करने मे हो जाता है। इसलिए यह बात महत्वपूर्ण है कि नकद रुपए के रूप मे जो नई आय हो, उसका उपयोग और नियन्त्रण इस प्रकार किया जाए कि लोगों की क्रय-शक्ति और उपलब्ध उपभोग्य पदार्थो मे बचत और विनियोग मे और विदेशो के साथ होने वाले आयात और निर्यात मे सन्तुलन बना रहे। इसके अतिरिक्त प्रत्येक महत्वपूर्ण वस्तु की माग और उपलब्धि मे सन्तुलन रखना आवश्यक है। ये सब आवश्यक सन्तुलन रखने के उपाय अनेक है, जैसे कि मूल्यो मे हेर-फेर, अधूरी अदायगी, बजट की नीति मे परिवर्तन और यदि आवश्यक हो तो पदार्थों के वितरण पर नियन्त्रण । परन्तु इस सन्तुलन को बनाए रखने की प्रक्रिया और साधनो की प्रक्रिया पहले से निश्चित करके उनको योजना में सम्मिलित कर लेना पडता है।

२६. वित्तीय योजना का लक्ष्य यह होना चाहिए कि पदार्थो की उपलब्धि और माग में सन्तुलन इस प्रकार बना रहे कि भौतिक साधनों का यथाशक्ति अधिकतम उपयोग हो जाए और मूल्यों म अनियोजित परिवर्तन न होने पाए। वित्त और भौतिक साधनों की सन्तुलित उन्नति के लिए योजना बनाते हुए अनेक नए क्षेत्रो का भी अन्वेषण और अध्ययन करना पड़ता है। जिस देश की अर्थ-व्यवस्था विकास की आरम्भिक अवस्था में होती है, उसमें

योजना को आरम्भ करने के लिए आवश्यक सब जानकारी उपलब्ध नही होती और इस कारण आर्थिक योजनाओं का आरम्भ किन्ही सरल नियमो के अनुसार नहीं किया जा सकता । इसलिए भौतिक और वित्तीय साधनों और विविध विभागों मे उन्नति का समन्वय क्रमशः करके चलना पड़ता है। और क्रमशः प्राप्त अनुभव और विचारित नीति मे मेल रखने के लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहने की आवश्यकता होती है। वित्त अथवा देश के आंतरिक वित्त की समस्या विकास में प्रायः बाधक नही होती, क्योंकि उसे सदा ही घटाया-बढ़ाया जा सकता है। परन्तु आवश्यक साधनों का मूल्य चुकाने का प्रबन्ध हो जाने मात्र से इस बात का निश्चय नही हो जाता कि आवश्यक वास्तविक साधन मिल ही जाएंगे। यदि वे न मिले तो उनका मूल्य चुकाने के साधनों मे वृद्धि अर्थ-व्यवस्था को उलट-पुलट देने का कारण बन सकती है। इस-लिए ठीक-ठीक विश्लेषण करने पर ज्ञात होगा कि वित्तीय सन्तुलन पर बल देने का वास्तविक अर्थ, वास्तविक साधनों के प्रबन्ध और प्रयोग की ठीक-ठीक योजना बनाना ही है। विचार चाहे भौतिक योजना के विषय मे करें, चाहे वित्तीय योजना के—दोनों एक-दूसरे के सहायक होते हैं—लक्ष्य सदा यही होना है कि अर्थ-व्यवस्था के निरन्तर उच्च से उच्चतर होते हुए स्तर पर सब साधनों में सन्तुलन बना रहे।

५

भावी रूप और परिवर्तन क्षमता

२७. आर्थिक विकास के लिए भौतिक साधनों के प्रयोग मे बार-बार और बड़े बड़े परि-वर्तन करने की आवश्यकता होती है। इसलिए कोई भी दीर्घकालीन योजना बनाते हुए इस बात का सदा ध्यान रखना पडता है। कुछ प्रयोजनों के लिए केवल पंचवर्षीय योजना की भाषा मे सोचना पर्याप्त हो सकता है, परन्तु साथ ही उससे बहुत अधिक बड़े काल के विकास के चित्र को अपने विचार-चक्षु के सामने रखना पड़ता है। प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में विकास की मात्रा में पूर्ण सन्तुलन का होना सम्भव नही है, प्रत्युत किसी-किसी योजना में कुछ असन्तुलन जो किसी क्षेत्र में अति विकास और किसी क्षेत्र में कम विकास के रूप में प्रतीत होता है—शीघ्र विकास मे सहायक हो सकता है। यह बात बिजली, परिवहन और आधारभूत उद्योगो जैसे विकास के विभागों में विशेष रूप से लागू होती है, क्योकि इनमें एकदम बहुत बड़ी पूजी का विनियोग करना पड़ता है। इस प्रकार का विनियोग करते हुए वर्तमान अथवा निकट भविष्य की आवश्यकताओं के स्थान पर यह देखना पड़ता है कि अब से १० या १५ वर्ष के पश्चात विकास की स्थिति अथवा आवश्यकताएं क्या होंगी। जिस देश में अर्थ-व्यवस्था का निरन्तर विकास होता रहता है, उसमें मांग एकदम बहुत अधिक भी बढ़ सकती है। उदाह-रणार्थ, यह उल्लेखनीय है कि हमारे देश में गत कुछेक वर्षों में ही विद्युत्-शक्ति की मांग का स्वरूप इतना अधिक बदल गया कि जहां पहले यह भय हो रहा था कि उत्पन्न शक्ति का पूरा उपयोग हो सकेगा या नहीं अथवा वह बची तो नहीं रह जाएगी, वहा अब उसके कम पड़ जाने की चिन्ता होने लगी है। इस्पात, रासायनिक खाद और सीमेंट की माग भी बहुत जल्दी-जल्दी बढ़ते जाने के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। यदि केवल एक पंचवर्षीय योजना को ध्यान मे रखकर विचार करें तो बड़े यन्त्रों और अन्य पूंजीगत सामग्रियों के निर्माण की दिशा में जो कार्य किए जा रहे हैं, उनका महत्व बहुत अधिक नहीं जान पड़ेगा, परन्तु यदि उनको दीर्घकाल के विकास की दृष्टि से देखा जाए तो उनका महत्व बहुत अधिक दिखाई देने

लगेगा। निकट भविष्य का कार्यक्रम दीर्घकाल के पश्चात प्रकट होने वाले भावी रूप को सामने रखकर ही बनाना होता है। इससे स्पष्ट है कि जो योजनाएं बनाई जाएं, उनकी प्राविधिक परीक्षा दूर भविष्य को ध्यान में रखकर ही करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त योजना बनाते हुए वैज्ञानिक प्रगति और प्राकृतिक साधनों का उपयोग करने की नई यांत्रिक प्रणालियो को भी ध्यान में रखना पडता है। परन्तु दीर्घकाल का अर्थ अनेक स्वल्प कालों का योग मात्र है। और इसलिए यह निश्चय करके चलना आवश्यक है कि प्रत्येक पचवर्षीय कार्यक्रम भविष्य में प्रकट होने वाले कार्यक्रमों के भावी रूप के साथ संगत होता चला जाए।

२८. अब तक जो विचार किया गया, उससे सब कार्यक्रमों को दीर्घकाल की दृष्टि से देखने की आवश्यकता प्रकट हुई। परन्तु इसके साथ ही, पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत स्वल्प समयों के कार्यक्रमों पर और भी सूक्ष्मता से ध्यान देने की आवश्यकता है। भविष्य में हम जो छलागे लगाएंगे वे चाहे कितनी ही बडी और महत्वपूर्ण क्यो न हों, इस क्षण तो अधिक महत्व का हमारा अगला कदम ही है। इसलिए पंचवर्षीय योजनाओं को वार्षिक योजनाओं अथवा कार्यक्रमों में विभक्त करके चलना उचित है। और उनके परिणाम को भी इसी दृष्टि से जाचना चाहिए कि वर्ष भर में कितना कार्य किया गया। इसका यह अर्थ नही कि किसी कार्य-क्रम को अपनाते हुए अथवा उस पर विचार करते हुए उसमे कोई परिवर्तन न किया जाए, अपितु यह परिवर्तन सारी योजना की अपेक्षा वार्षिक योजना का ही भाग रहना उचित है। राज्य और केन्द्रो की सरकारे अपना कार्य वार्षिक बजट के आधार पर ही करती हैं। इससे उन्हें स्वभावत यह अवसर मिल जाता है कि पचवर्षीय योजना में कार्यक्रमो का जो वार्षिक विभाजन कर दिया गया है, उसकी परीक्षा करके वे उसमे आवश्यक हेर-फेर कर ले, परन्तु योजनाधि-कारियों को यह परिवर्तन यह सोचकर ही करना चाहिए कि अर्थ-व्यवस्था की समस्त आवश्यक-ताए क्या हैं और जो वर्ष समाप्त हो रहा है, उसके कार्य की पूर्ति में उन्हे क्या अनुभव हुआ। परन्तु आज की परिस्थितियों मे किए हुए कार्य की प्रगति का शीघ्र और ठीक अन्दाजा लगा सकना सुगम नही है, और इस कारण अगले वर्ष के कार्यक्रम का परिमाण भी सुगमता से निश्चित नही किया जा सकता। संघीय गठन मे, यों भी, चालू वर्ष के कार्य का परिणाम जानने मे कुछ विलम्ब लग जाता है और इसलिए उसके आधार पर आगामी वर्ष का कार्यक्रम शीघ्रता से नही बनाया जा सकता और न उसके लिए आवश्यक वित्तीय तथा अन्य साधनो का अन्दाजा लगाया जा सकता है। इन कठिनाइयो का हल सगठन मे सुधार करके ही किया जा सकता ह। योजना को कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि कार्य मे जो सफलता या अस-फलता हो, उसके विषय मे विभिन्न योजना विभागो और सरकारी विभागो में सूचनाओ और अनुभवों का आदान-प्रदान निरन्तर होता रहे। यह भी आवश्यक है कि केन्द्रीय तथा अन्य योजना कार्यालयो मे जो जानकारी प्राप्त हो, उसका विचार और विश्लेषण शीघ्रता से कर लिया जाए। यह प्रक्रिया योजना के सरकारी क्षेत्र के ही नही, गैर-सरकारी क्षेत्र के सम्बन्ध मे भी की जानी चाहिए। दोनों क्षेत्रों को मिलकर काम करना चाहिए। इस प्रसग में हम इस बात पर विशेष बल देना चाहते है कि निजी क्षेत्र अथवा गैर-सरकारी क्षेत्र मे विनियोग और विकास करने के जो कार्यक्रम बनाए जाए, उनकी और उनकी प्रगति की सूचना, निरन्तर और नियमित रूप से मिलती रहनी चाहिए। उन्नत देशो मे व्यापारिक संस्थाओं और संगठनों स यह सूचना पहले से प्राप्त कर ली जाती है कि वे कहां और कितनी पूजी लगाने की सोच रहे हैं, उनके हाथ में कितना माल मौजूद है और कितने की माग है, इत्यादि। इससे

मुद्रा-स्फीति अथवा मुद्रा-सकोच की प्रवृत्तियों पर दृष्टि रखने में भी सहायता मिलती रहती है। अनुन्नत देशों में इस प्रकार की जानकारी का मिलते रहना आगे की योजना बनाने और उसमें समय-समय पर हेर-फेर करते रहने के लिए और भी आवश्यक है।

२९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना की कल्पना एक ऐसे बड़े ढांचे के रूप में की गई है, जिसके भीतर रहकर ही वार्षिक योजनाओं को बनाया जाएगा। पाच वर्ष तक चलने वाली योजना को लचकीला रखना आवश्यक है। इस पुस्तक में जो द्वितीय पचवर्षीय योजना उपस्थित की गई है, उसमें बतलाया गया है कि जो कार्य किए जाएंगे वे कितने बड़े और महत्वपूर्ण होंगे, जो विकास सुझाए गए है, उनसे किस प्रकार के लाभ हो सकेंगे और जो काम किए जाएंगे उनके लिए आवश्यक साधनों का संग्रह किन उपायों और प्रणालियों से किया जाएगा। योजना की सफलता के लिए जो नीति अपनाई जाएगी, उसका भी मोटा रूप प्रकट कर दिया गया है। परन्तु योजना कोई ऐसा व्यायाम नहीं है जिसे पाचों वर्षों के लिए केवल एक बार करके काम चल जाए। इसके लिए चालू अवधि और निकट भविष्य की प्रवृत्तियों पर निरन्तर ध्यान रखना पडना है। देश की टेकनीकल, आर्थिक और सामाजिक अवस्थाओ का नियमपूर्वक अध्ययन करना और नई आवश्यकताओं के अनुसार कार्यक्रमों में हेर-फेर करना पड़ता है। स्वभावतः पाच वर्ष के लिए जो अन्दाजे लगाए जाते हैं, उनमें कुछ अनिश्चितता रहती है। योजना में जो कार्यक्रम निर्धारित किए गए है, उनमें से कई एक की पूर्ति में निर्धारित से अधिक समय भी लग सकता है। जितनी बड़ी योजना की हमने कल्पना की है, उसमें अनुभव से ऐसे क्षेत्र भी प्रकट हो सकते हैं, जिनमें नियत कार्य को निर्धारित समय से पहले कर लेना और अन्य कुछ कार्यों को कुछ विलम्बित कर देना अधिक लाभदायक सिद्ध हो। भारत अपनी योजना किसी अर्थ-व्यवस्था से लग-बधकर नही बना रहा है। सम्भव है कि विदेशों में होने वाले आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों के कारण हमें अपनी योजना में कुछ हेर-फेर करने पड़ जाए। इन सब दृष्टियों से योजना को एक ऐसा ढांचा मात्र मानकर चलना चाहिए, जिसके भीतर रहकर प्रत्येक वर्ष के कार्य विस्तारपूर्वक निर्धारित और कार्यान्वित किए जाएंगे।

३०. अन्त में, हम दीर्घकालिक योजना के विषय में एक विचार प्रस्तुत करना चाहते हैं। हमारा खयाल है कि आगामी वर्षों में इस पर अधिकाधिक ध्यान देने की आवश्यकता पड़ेगी। यह विचार एशिया और अफ्रीका के विस्तृत और अविकसित भू-भाग के विकास की समस्याओं के विषय में है। यह भू-भाग अनेक राजनीतिक और सामाजिक कारणों से अभी तक प्रायः अविकसित रहा है। यहां के कुछ देशों की अर्थ-व्यवस्था या तो शेष संसार से अलग-थलग रही है या योरुप के उन देशों के साथ जुड़ गई है जिनके साथ उनका राजनीतिक सम्बन्ध हो गया था। इसका फल यह हुआ है कि इस भू-भाग में व्यापार के परस्पर आदान-प्रदान का परिमाण अधिक नहीं बढ़ पाया। और इस कारण इन देशों में परस्पर सहायता और व्यापारिक सम्पर्क का क्षेत्र प्रायः अविकसित पडा हुआ है। स्पष्ट है कि ज्यों-ज्यों इस भू-भाग में योजनापूर्वक विकास होता चला जाएगा, त्यों-त्यों उत्पादन की कुछ विशेष दिशाओं में विशेषता प्राप्त कर लेने, परस्पर लाभदायक व्यापार करने और जानकारी तथा अनुभव का आदान-प्रदान करने के अवसर अधिकाधिक मिलते चले जाएगे। इन देशों में योजना की प्रगति विभिन्न स्थितियों में है और स्वभावतः इनमें से प्रत्येक देश की मुख्य दृष्टि यह रहेगी कि वह अपने साधनों का अधिकतम विकास अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए करे और ऐसी दिशा में करे जो कि आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से उसके लिए अधिकतम लाभदायक हो। फिर भी यह आवश्यक है कि इनके

विकास के कार्यक्रम इस प्रकार बनाए जाएगे कि उनमे तैयार पदार्थो और टेकनीकल जानकारी और अनुभव के परस्पर लाभदायक आदान-प्रदान की गुजाइश रहे। जिन देशो मे टेकनीकल जानकारी और कुशल तथा अनुभवी कर्मचारियो की कमी है, वे भी एक हद तक दूसरो की सहायता कर सकते है। कोलम्बो योजना मे परस्पर सहयोग इसी आधार पर हो रहा है। इस भू-भाग के देशो के सामने जो समस्याएं आए, उनका हल इसी दृष्टि से करने के लिए परस्पर विचारो तथा कुशल तथा अनुभवी कर्मचारियो का आदान-प्रदान करना लाभदायक सिद्ध होगा। इसलिए भारत को अपनी योजना का निर्माण इस बड़े भू-भाग की प्रादेशिक दृष्टि से करना चाहिए और यह स्मरण रखना चाहिए कि दरिद्रता, रहन-सहन का निम्न स्तर और आर्थिक अवनति की समस्याओ मे इन सब देशों की रुचि समान रूप से है और इस कारण इनमे से प्रत्येक देश के प्रयत्न और अनुभव, अनिवार्य रूप से, एक-दूसरे के लिए मूल्यवान सिद्ध हो सकते है।

अध्याय २

योजना पर विचार

उद्देश्य और उपाय

प्रथम योजना की सफलताएं उल्लेखनीय तो अवश्य हैं, परन्तु उन्हे केवल आरम्भ मानकर चलना चाहिए। योजना का कार्य रहन-सहन के मान को दुगुना कर देने जैसे किसी निश्चित या स्थिर लक्ष्य तक पहुंच जाने का नहीं, अपितु देश की अर्थ-व्यवस्था को इस प्रकार गतिशील बना देने का है कि भौतिक सुख-सुविधाओं और बौद्धिक सास्कृतिक सफलताओं का स्तर निरन्तर उच्च से उच्चतर होता चला जाए। इस समय भारत में रहन-सहन का स्तर बहुत नीचा है। देश में जितना उत्पादन होता है वह जनता की न्यूनतम आवश्यकताए पूरी करने के लिए भी पर्याप्त नही होता। अधिकतर लोगों को स्वस्थ जीवन बिताने में समर्थ बनाने के लिए अभी बहुत प्रयत्न करना होगा। देश के अनेक बड़े भाग, अन्य भागों की तुलना में कम विकसित हैं और जनता के अनेक वर्ग ऐसे है जो आधुनिक प्रगतिशील विचारों और कार्य-प्रणालियों से अभी तक बिल्कुल अछूते रहे है। इसलिए विकास कार्य द्रुत गति से करने की आवश्यकता है। यह तभी सम्भव है जब कि वित्तीय साधनों के उपयोग और संगठन बड़े पैमाने पर किए जाएं। आगामी कई योजनाओं में हमें अपना ध्यान लाभों और फलों की अपेक्षा अपने प्रयत्नों पर ही केन्द्रित रखना होगा। लाभों और फलों का महत्व कम नहीं, परन्तु एक समुदाय को किसी उत्पादक और समाजोपयोगी कार्य के लिए श्रम और प्रयत्न करने से जो संतोष प्राप्त होता है, उसका मूल्य और भी अधिक होता है। इस दृष्टि से विकास पर किए गए व्यय अपने आप में एक प्राप्ति है। यदि विकास की समस्याओं और उसके साथ ही समाज के गठन में आवश्यक परिवर्तन की समस्याओं पर विचार ठीक दिशा में किया जाए, तो कोई भी समाज अपने भीतर ही ऐसी सुषुप्त शक्तियों को अवश्य जागृत कर सकता है कि उनके द्वारा विकास एक निश्चित दिशा में होने लगे। लागत और लाभ अथवा पूजी और उत्पादन के बारीक हिसाबों की अपेक्षा, समाज की अपनी शक्ति विकास के कार्यों मे कही अधिक सहायक होती है।

समाज का समाजवादी ढांचा

२. रहन-सहन का ऊंचा मान, या जिसको कभी-कभी भौतिक उन्नति कहा जाता है, अपने आप में कोई लक्ष्य नहीं है। वस्तुतः यह बौद्धिक और सांस्कृतिक जीवन को उन्नत करने का एक साधन है। जिस समाज को अपना अधिकतर जन-बल और समय जीवन के निर्वाह-मात्र की आवश्यकताएं पूरी करने पर ही लगाना पड़ेगा, वह जीवन के उच्च लक्ष्यो की ओर उतना ही कम ध्यान दे सकेगा। आर्थिक विकास का उद्देश्य समाज की उत्पादक शक्ति को बढ़ाकर ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करना है कि परस्पर विरोधी प्रतिभाओं और प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति और उपयोग अच्छे ढंग से हो सक। इसलिए विकास और आर्थिक उन्नति की गति आरम्भ से ही ऐसी दिशा में होनी चाहिए कि वह समाज के बुनियादी उद्देश्यों के साथ मेल खाती रहे। किसी अविकसित देश के सामने अपने वर्तमान आर्थिक और सामाजिक ढांचे से अधिक

अच्छे परिणाम प्राप्त कर लेने का ही काम नहीं होता, अपितु उन्हें इस प्रकार ढालने और पुनर्गठित करने का भी होता है कि वे अधिक उच्च और व्यापक सामाजिक मूल्यों के विकास मे सहायक हों।

३. इन गुणों या मूल उद्देश्यों को हाल में 'समाज का समाजवादी ढांचा' शब्दों में बांधा गया है। वास्तव में इसका अभिप्राय यह है कि उन्नति के कार्यों की कसौटी केवल निजी लाभ न होकर समाज का लाभ होनी चाहिए, और विकास के आदर्शों तथा सामाजिक और आर्थिक सम्बन्धों का गठन ऐसा होना चाहिए कि वे केवल राष्ट्रीय आय और नियोजन की वृद्धि में ही नहीं अपितु आय और धन की अधिकाधिक समानता लाने में भी सहायक हों। उत्पादन, वितरण, खपत और पूंजी-विनियोग सम्बन्धी मुख्य निर्णय—और वस्तुतः सभी सामाजिक और आर्थिक प्रश्नों के निर्णय—ऐसी सस्थाओं द्वारा किए जाने चाहिएं जो सामाजिक उद्देश्यों की भावना से अनुप्रेरित हों। आर्थिक विकास के लाभ समाज के उन वर्गो को अधिकाधिक पहुंचने चाहिएं जो कि अपेक्षाकृत कम सम्पन्न है और आय, धन और आर्थिक सत्ता का केन्द्रीकरण क्रमशः कम होता जाए। सब मिलाकर समस्या ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर देने की है कि उसमें वे लोग भी अपने जीवन का मान ऊंचा उठाने और देश की समृद्धि मे अधिक भाग लेने में समर्थ हो जाएं जो कि अब तक संगठित प्रयत्नों के द्वारा की हुई उन्नति में बहुत कम भागीदार बन सके और वैसा करने की कल्पना तक नही कर सके। इस प्रक्रिया में इस वर्ग के लोगों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति ऊची हो जाएगी। इस प्रकार श्रमिकों को ऊंचा उठाने का प्रश्न भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना रोजगार के अवसर अपितु उनमें लाभों का क्षेत्र विस्तृत करने का है, क्योंकि मनुष्य की आशा और उत्साह का नाश जितना इस भावना के कारण होता है कि हीन कुल मे जन्म लेने अथवा जीवन का आरम्भ दरिद्रावस्था में करने वाला मनुष्य आर्थिक और सामाजिक उन्नति कर ही नही सकता, उतना अन्य किसी बात से नहीं होता। इस प्रकार की उपयुक्त परिस्थितियां उत्पन्न करने के लिए सरकार को सारे समाज के प्रतिनिधि का रूप धारण करना होगा और योजना के सरकारी क्षेत्र का शीघ्र विस्तार करना होगा। विकास के जिन कार्यो को योजना का निजी क्षेत्र अपने हाथ में लेना नही चाहता या लेने में असमर्थ है, उनका आरम्भ सरकार को करना होगा। देश की अर्थ-व्यवस्था में पूजी-विनियोग का नेतृत्व सरकार को ही करना होगा, चाहे वह योजना के निजी क्षेत्र मे हो चाहे सरकारी क्षेत्र में। योजना के निजी क्षेत्र को भी योजना के उसी व्यापक क्षेत्र के भीतर रहकर कार्य करना होगा जिसे समाज स्वीकार करेगा। अन्ततः सामाजिक प्रक्रियाओ के फलस्वरूप विनियोग के साधन स्वयमेव प्रकट हो जाएगे। निजी उद्योग, मूल्यो की स्वतन्त्रता और निजी प्रबन्ध आदि सब वस्तुत· उन लक्ष्यो की पूर्ति के साधन मात्र है जिन्हें कि सामाजिक कहा जाता हो, उनके औचित्यानुचित्य का निर्णय सामाजिक परिणामो के अनुसार ही किया जा सकता है।

४. आधुनिक टेकनोलौजी का प्रयोग तभी हो सकता है जब कि उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाए, नियन्त्रण एकसूत्री रहे, और साधनो का उपयोग किन्ही विशिष्ट बडे कार्यो के लिए किया जाए। खनिजों की खुदाई और बुनियादी तथा पूजीगत माल का उत्पादन करने वाले उद्योग इसी प्रकार के है। इनके द्वारा राष्ट्र की आर्थिक प्रगति का पता लगाया जा सकता है। इसलिए इन्हे विकसित करने की जिम्मेदारी मुख्यतया सरकार को ही उठानी चाहिए और इन उद्योगों की वर्तमान इकाइयों को भी नवीन संगठन के अनुरूप ढल जाना चाहिए।

जिन क्षेत्रों मे धन और आर्थिक शक्ति के पुंजीभूत हो जाने की सम्भावना हो, उनमे उद्योगों का पूरा अथवा अधूरा स्वामित्व और प्रबन्ध का नियन्त्रण सरकार के ही हाथ में रहना चाहिए। कुछ क्षेत्र ऐसे है जिनमे आज की परिस्थितियों में निजी उद्योग सरकार के सहयोग और समर्थन के बिना अधिक प्रगति कर ही नहीं सकते। इसलिए इन क्षेत्रो मे जो साधन प्रयुक्त होंगे उनके राष्ट्रीय अथवा अर्ध-राष्ट्रीय रूप को स्वीकार करके ही आगे बढ़ना होगा। अर्थ-व्यवस्था के शेष भागो में ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न कर देनी होंगी कि उनमें निजी प्रयत्नों और उद्योगों को भी निजी रूप में अथवा सहकारिता के आधार पर आगे बढ़ने का अवसर मिल सके। जब किसी अर्थ-व्यवस्था का विकास होने लगता है तब उसका विस्तार इतनी विभिन्न दिशाओं मे हो जाता है कि उसमे निजी और सरकारी दोनों भागों के साथ-साथ कार्य करने की गुंजाइश हो जाती है। परन्तु इस योजना में जिस गति से और जिन व्यापक सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति के लिए कार्य करने की कल्पना की गई है, उनके कारण यह आवश्यक होगा कि योजना का सरकारी भाग स्वतन्त्र रूप मे कार्य करने के साथ-साथ योजना के निजी भाग के विकास का भी ख्याल रखे।

५. समाज के समाजवादी ढाचे को स्थिर या अपरिवर्तनशील मानकर नही चलना चाहिए। यह किसी एक सिद्धान्त या मन्तव्य से जुड़ा हुआ नही है। प्रत्येक देश को अपनी सूझ-बूझ और परम्पराओं के अनुसार बढ़ना होता है। उसे अपनी आर्थिक और सामाजिक नीति का निर्धारण समय-समय पर अपनी ऐतिहासिक परिस्थितियों के अनुसार करना होता है। यह न तो आवश्यक ही है और न अभीष्ट ही कि हम अपनी अर्थ-व्यवस्था को किसी एक नमूने या संगठन की नकल पर ऐसा गढ़ लें कि उसके रूप अथवा अमल के सम्बन्ध मे कोई नए परीक्षण करने की गुंजाइश तक न रहे। योजना के सरकारी क्षेत्र के विस्तार का यह अर्थ भी नहीं होना चाहिए कि निर्णय करने और सत्ता के उपयोग का अधिकार एक स्थान पर केन्द्रित हो जाए। लक्ष्य यह होना चाहिए कि कुछ विस्तृत निदेशों अथवा कार्य-प्रणाली के नियमों के दायरे के अन्दर सरकारी उद्योगो को कार्य करने की और अपने कार्यों का विस्तार करते रहने या उन्हें हस्तांतरण करने की पूरी स्वतन्त्रता रहे। राष्ट्रीय उद्योगों के सगठन और प्रबन्ध में हमें बार-बार परीक्षण करके देखने होंगे। और सच तो यह है कि यह बात सारे ही समाजवादी आदर्श पर लागू होती है। महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारे सामने यह स्पष्ट रहे कि हमें किधर बढ़ना है। हमें मूल उद्देश्यों का निरन्तर ध्यान रहे और हम अपनी संस्थाओं और संगठनों और उनके नियमों को अपने अनुभव के आधार पर सुधारने और बदलने के लिए सदा तैयार रहें। समाजवादी आदर्श में निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति, जीवन के मान को ऊंचा उठाने, सबके लिए सुविधाओं का विस्तार करने, अब तक पिछड़े वर्गों मे उत्साह और समाज के सब वर्गों में परस्पर सहयोग की भावना उत्पन्न करने पर बल दिया जाता है। ये उद्देश्य ही सब बुनियादी निर्णयों की कसौटी होंगे। हमारे संविधान में सरकार के लिए जो निदेशात्मक सिद्धान्त स्थिर किए गए हैं, उनमें दिशा का सकेत मोटे शब्दों में कर दिया गया है। समाज का समाजवादी आदर्श उस दिशा को अधिक निश्चित शब्दों में प्रकट करता है। आर्थिक नीतियों और सामाजिक संगठनों में परिवर्तन का निश्चय इस प्रकार करना चाहिए कि उससे आर्थिक प्रगति लोकतंत्र और समानता के व्यापक आधार पर होने का निश्चय हो जाए। लोकतन्त्र जीवन की एक विशेष प्रणाली है; वह समाज के संगठन की किन्हीं विशिष्ट व्यवस्थाओं का नाम नहीं है। यही बात समाजवादी ढाँचे के विषय में कही जा सकती है।

उद्देश्य

६. इन व्यापक विचारों को ध्यान में रखकर द्वितीय पंचवर्षीय योजना के ये प्रधान उद्देश्य रखे गए हैं :

(क) राष्ट्रीय आय में इतनी वृद्धि करना कि उससे देश में रहन-सहन का स्तर ऊंचा हो जाए;

(ख) द्रुत गति से औद्योगीकरण करना, जिसमें मूल उद्योगों और भारी उद्योगों के विकास पर विशेष बल हो;

(ग) रोजगार के अवसरों का व्यापक विस्तार करना; और

(घ) आय और धन की असमानता कम करके आर्थिक शक्ति का अधिक सामान्य वितरण करना ।

ये उद्देश्य एक-दूसरे के साथ जुडे हुए हैं । राष्ट्रीय आय में वृद्धि और जीवन के मान म पर्याप्त उन्नति तब तक नही हो सकती जब तक कि उत्पादन और पूजी-विनियोग में भी पर्याप्त वृद्धि न हो जाए । इस उद्देश्य के लिए यह आवश्यक है कि आर्थिक और सामाजिक योजनाकार्यों पर व्यय करने के लिए हाथ में पर्याप्त पूजी हो, खनिजों की खोज और विकास किया जाए, और इस्पात, यन्त्र-निर्माण तथा कोयले और भारी रासायनिक द्रव्यों जैसे मूल उद्योगों की उन्नति की जाए । इन सब दिशाओं में एक साथ उन्नति करने के लिए उपलब्ध जन-शक्ति और प्राकृतिक साधनों का अधिकतम उपयोग करना होगा । हमारे जैसे देश मे जहां जन-शक्ति प्रचुर परिमाण मे विद्यमान है, रोजगार के अवसरो का विस्तार स्वय एक महत्वपूर्ण उद्देश्य बन जाता है । इसके अतिरिक्त, विकास की प्रक्रिया और दिशा ऐसी होनी चाहिए कि उससे आधारभूत सामाजिक मूल्यों और प्रयोजनो का भी प्रकाशन हो । विकास का परिणाम यह होना चाहिए कि उससे आर्थिक और सामाजिक विषमताए कम हो जाएं और इसके लिए जिन तरीकों को अपनाया जाए वे लोकतन्त्री हों । आर्थिक उद्देश्यों को सामाजिक उद्देश्यों से पृथक नही किया जा सकता और साधनो तथा उद्देश्यों को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता । जनता की उचित आकाक्षाओ की पूर्ति करने वाली योजना मे ही एक लोकतन्त्री समाज अपना अधिकाधिक सहयोग प्रदान कर सकता है ।

७. इन उद्देश्यो की पूर्ति के लिए सतुलित ढंग से ही आगे बढ़ना होगा, क्योंकि इनमें से किसी एक पर अधिक बल देने का परिणाम यह हो सकता है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाए और उस उद्देश्य की पूर्ति मे ही विलम्ब हो जिस पर इतना बल दिया जा रहा है । जीवन के मान का नीचा और स्थिर रहना, बेरोजगारी व कम रोजगारी और औसत आमदनियो तथा ऊची आमंदनियो में असमानता हमारी अर्थ-व्यवस्था के बुनियादी तौर से अविकसित होने के सूचक हैं जो मुख्यत. कृषि पर आश्रित अर्थ-व्यवस्था की विशिष्टता है । विकास की मूल आवश्यकता यह है कि द्रुत गति से औद्योगीकरण और अर्थ-व्यवस्था का विस्तार नाना दिशाओ में हो । और औद्योगिक उन्नति द्रुत गति से करने के लिए यह आवश्यक है कि देश मूल उद्योगों और ऐसे यन्त्र बनाने के उद्योगो की उन्नति करने पर अधिक ध्यान दे जो कि उत्पादन के लिए आवश्यक यन्त्रो का निर्माण करते है । इसके लिए लोहे व इस्पात, लोहेतर धातुओं, कोयले, सीमट, भारी रासायनिक द्रव्यो और बुनियादी आव-श्यकता के अन्य उद्योगो का विकास पहले करना होगा । इसमें बड़ी बाधा साधनों की कमी और उनकी अनेक आवश्यक मागों की है । यहा मांग से अभिप्राय केवल तात्कालिक मांग नहीं

है, अपितु विकास का कार्य बढ़ने के साथ-साथ माग के निरन्तर बढ़ते रहने में है। भारत के ज्ञात प्राकृतिक साधनों का परिमाण अपेक्षाकृत बहुत बड़ा है और इनमे से कइयो के उत्पादन मे—उदाहरणार्थ इस्पात के अपेक्षाकृत कम व्यय होने की सम्भावना है। इसलिए जो भारी उद्योग और प्राकृतिक साधन इस कसौटी पर खरे उतरते हों, उनका अधिकतम विकास और विस्तार पहले कर लेना चाहिए।

८. मूल उद्योगों में पूंजी लगाने से उपभोग्य वस्तुओं की माग तो बढ़ जाती है, परन्तु न तो उनका उत्पादन शीघ्र होना आरम्भ होता है और न उनमें मजदूरों की बड़ी संख्या में खपत होती है। अत. औद्योगिक विस्तार को सन्तुलित रखने के लिए ऐसा सगठित प्रयत्न करना चाहिए कि उपभोक्ता वस्तुओं की बढ़ी हुई माग पूरी करने के लिए श्रम का उपयोग तो हो, परन्तु पूजी कम से कम लगे। जहां श्रम अधिक और पूजी थोड़ी हो, वहा ऐसी तरकीब और श्रम-प्रधान प्रणाली अपनाने की आवश्यकता होती है जिससे उत्पादन के विभिन्न क्षेत्रों मे श्रम का (समाज के हित में) अधिकाधिक उपयोग हो। बेरोजगारी की वर्तमान परिस्थितियों में अधिकतम श्रमिकों का काम पर लग जाना भी अपने आप में एक उद्देश्य बन जाता है। सम्भव है कि श्रम-प्रधान प्रणाली के अपनाने से ऊंची लागत पर माल तैयार हो। इस प्रणाली के कारण कुछ बलिदान करना पड़ेगा जिसे प्राविधिक और संगठनात्मक सुधार करके कुछ कम किया जा सकता है। फिर भी, जब तक कि अर्थ-व्यवस्था की नीव मजबूत न हो जाए, तब तक उपभोग्य वस्तुओं की खपत में कुछ त्याग से ही काम लेना पड़ेगा। ज्यों-ज्यों उपभोग्य वस्तुएं बनाने वाले उद्योगों को अपना उत्पादन बढ़ाने के लिए अधिकाधिक बिजली, परिवहन के साधन, अच्छे औजार और मशीनें आदि मिलते जाएंगे, त्यों-त्यों त्याग की यह विवशता घटती जाएगी और जनता के लाभ की मात्रा बढ़ती जाएगी। अभी तो बेरोजगार या कम रोजगार वाले मजदूरों को रोजगार में लगा लेने पर ही ज्यादा जोर देने से बेरोजगारी की वर्तमान कठिनाई कम हो ही जाएगी। इसी प्रसंग में एक और बात का भी ध्यान रखने की आवश्यकता है कि जहां श्रम-प्रधान प्रणाली अपनाई जाती है, वहा आमदनिया अपेक्षाकृत कम होने के कारण बहुधा बचत कम होती है और पुनः विनियोग के लिए पूजी थोड़ी मिल पाती है। ऐसे उपाय करने चाहिएं कि यह स्थिति ज्यादा न बढ़ने पाए। यह ध्यान देने योग्य है कि ऊंचे वेतनो पर रोजगार देने के अवसर भी उतने ही बढ़ाए जा सकते हैं जितना कि देश की अर्थ-व्यवस्था मे बचत की सम्भावनाओं को बढ़ाया जा सकता है।

रोजगार के अवसर

९. रोजगार के अवसर बढ़ाने के प्रश्न पर योजना में पूंजी विनियोग के परिकथित कार्यक्रम से पृथक रूप में विचार नहीं किया जा सकता। रोजगार पूजी-विनियोग में निहित है और उसके साथ घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। पूंजी-विनियोग का ढांचा स्थिर करने मे यह एक प्रधान तत्व है। यह एक तथ्य है कि योजना काल में पूजी-विनियोग में काफी वृद्धि होगी और विकास के लिए किए गए व्यय बहुत बढ़ जाएंगे। इसका अर्थ है लोगों की आय में वृद्धि होगी और श्रमिकों की सब तरफ से माग बढ़ेगी। परन्तु यदि योजना का निर्माण रोजगार के अवसर बढ़ाने पर विशेष दृष्टि रखकर किया जाए तो उसमें पूंजी-विनियोग को अधिकतम बढ़ाने की अपेक्षा कुछ अधिक कार्य करना पड़ता है। रोजगार के अवसर बढ़ाने और अर्ध-रोजगारी घटाने के कार्यक्रम को किन्हीं निश्चित शब्दों में तैयार नहीं किया जा सकता। इस समस्या को हल करने के लिए इसे विभागों, प्रदेशों और वर्गों में बांटना पड़ेगा। अपेक्षित परिमाण में नए रोजगार उपलब्ध करने के कार्यक्रम के लिए उद्योगों की विविधता, उनको उपयुक्त स्थान पर स्थापित

करने की नीति, छोटे पैमाने के और कुटीर उद्योगों की सहायता करने के लिए विशेष उपाय, अर्थ-व्यवस्था को निरन्तर उच्च स्तर पर स्थिर रखने, प्रशिक्षण की पर्याप्त सुविधाओं और श्रमिकों के लिए एक पेशा छोड़कर दूसरे को अपनाने और आवश्यकतानुसार स्थान-परिवर्तन कर लेने आदि अनेक प्रश्नों पर विचार करना पड़ेगा। साथ ही, यह भी आवश्यक होगा कि इस बात का अध्ययन बराबर किया जाता रहे कि किस कार्य में पूजी लगाने से कितने और किस प्रकार के लोगो को रोजगार मिल सकता है, और किस कार्य से रोजगार के अवसरों में कितने समय में कितनी वृद्धि होती है।

१०. योजना आयोग ने इस समस्या का जो अध्ययन किया है, उससे प्रकट हुआ है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना से न केवल नए श्रमिकों को रोजगार का अवसर मिलेगा, अपितु ग्रामो मे और कृषि और छोटे उद्योगों मे जो अर्ध-रोजगारी फैली हुई है, उसके कम होने मे भी सहायता मिलेगी। योजना के कारण खानों और कारखानों, निर्माण, व्यापार तथा परिवहन और सेवाओ मे रोजगार के अवसर, कृषि और उससे सम्बद्ध व्यवसायों की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से बढ़ेगे। यह एक अच्छा श्रीगणेश होगा। इस अवधि में यह आवश्यक होगा और इसकी आशा भी की जाती है कि रोजगारो के वर्तमान ढाचे मे पहले क्षेत्र से दूसरे और तीसरे क्षेत्र मे काफी स्थानान्तरण किया जाए। योजना में सिंचाई, भूमि संरक्षण, पशु पालन में सुधार और कृषि की उन्नति आदि के अनेक बड़े-बड़े कार्यक्रम है। इनके और ग्रामीण तथा छोटे पैमाने के उद्योगो के अन्य कार्यक्रमों के द्वारा देहातो में अर्ध-रोजगारी घट सकेगी। परन्तु सम्भव है कि पहले से जो बेरोजगारी चली आ रही है, उस पर योजना मे पर्याप्त प्रभाव न हो। स्मरण रखना चाहिए कि अल्प विकसित अर्थ-व्यवस्था में बेरोजगारी की समस्या विकास की समस्या का ही एक अन्य पहलू होती है। जिन कारणों से किसी समाज के विकास के प्रयत्नो में बाधा उपस्थित होती है, वही कारण रोजगार के अवसरों को नहीं बढने देते। दूसरी योजना मे सरकारी और निजी, दोनों भागों में निर्माण का कार्य बहुत अधिक बढ़ाने का कार्यक्रम है। इस कार्य को रोजगार के अवसरो की स्थिति के अनुसार घटाया-बढाया जा सकेगा। निर्माण के कार्य मे काम अस्थायी ढंग का होता है, इसलिए यह ध्यान रखना चाहिए कि जो कार्य चल रहे है, उनके समाप्त होने पर नए काम अवश्य आरम्भ कर दिए जाएं, और एक काम मे लगे हुए मजदूरों को दूसरे काम में लगाने की व्यवस्था बनी रहे।

११. रोजगार के अवसरों को बढाते रहना, आर्थिक दृष्टि और व्यापक सामाजिक दृष्टि से एक ऐसा उद्देश्य है जिसे उच्च प्राथमिकता देनी चाहिए। परन्तु रोजगार के अवसरों का विस्तार तभी होता है जब कि नियत अवधि के भीतर एक ओर तो आवश्यक औजार और साज-सज्जा उपलब्ध होती रहे और दूसरी ओर काम मे नए लगे हुए लोग जो वस्तुए खरीदना चाहते है, वे भी अधिक मात्रा मे मिलती रहे। यदि विकास का मूल अर्थ उत्पादन के साथ धन बढाने के लिए नए कार्यो का करना समझा जाए, तो इन कार्यों के लिए देश मे उपलब्ध जन-शक्ति का समुचित प्रयोग तभी हो सकता है जब कि भोजन, वस्त्र और निवास जैसी आवश्यक वस्तुओं की उपलब्धि भी जल्दी-जल्दी बढ़ती रहे। इसलिए रोजगार के अवसर बढाने की दृष्टि से इन वस्तुओं के उत्पादन में भी सुधार होना अति आवश्यक है। जिन देशो में उत्पादन बड़ी मात्रा में होता है, उनमे स्थानीय अथवा वर्गीय बेकारी की समस्या तीव्र नही होती, क्योंकि उनमें मशीनों और नए वैज्ञानिक साधनो के प्रयोग के कारण काम की बहुतायत रहती है। परन्तु जिन देशों मे उत्पादन की कमी के कारण आय कम होती है और

भोजन, वस्त्र आदि दैनिक जीवन की आवश्यकता की वस्तुओं का उत्पादन करने के कार्यों में श्रमिकों का उपयोग अधिक नही किया जा सकता और इसी कारण व्यापार मन्दा होता है, उनमे स्थानीय अथवा वर्गीय बेकारी अधिक होती है। यह निश्चित है कि जिस देश में काफी अधिक श्रम उपलब्ध हो, वहा सर्वत्र उत्पादन की श्रम-प्रधान प्रणाली को प्राथमिकता दी जाए। परन्तु यह भी सही है कि सारे ढाचे में रोजगार के अवसर बढाने के लिए विशिष्ट क्षेत्रों मे श्रम की बचत करने वाले उपाय अपनाना भी बहुधा आवश्यक हो जाता है। यह दोहराने की आवश्यकता नही कि इन उपायों का लक्ष्य भी आय के बढ़ते हुए स्तरों पर रोजगार के अवसर बढ़ाना है।

औद्योगिक नीति

१२ द्वितीय पचवर्षीय योजना में औद्योगिक उन्नति को, विशेषत: भारी और मूल उद्योगों के विकास को उच्च प्राथमिकता दी गई है। औद्योगिक और खनिज विकास के क्षेत्र में सरकारी उद्यम को अधिक बढाने की योजना बनाई गई है। उद्देश्य यह है कि भारी उद्योगों, तेल की खोज और कोयला खोदने के कार्यक्रम का तो अधिक विस्तार किया जाए और अणुशक्ति के विकास का कार्य भी आरम्भ कर दिया जाए। इन सब कार्यों का उत्तरदायित्व मुख्यतया केन्द्रीय सरकार पर है। इन नए कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए वित्त-विनियोग के अतिरिक्त यह भी आवश्यक होगा कि इस समय संगठन और प्रशासन का कार्य सरकार जितने व्यक्तियों से चला रही है उनकी संख्या को बढाया जाए। साथ ही शीघ्र निर्णय करने और उन्हें तुरन्त कार्यान्वित करने की आवश्यकता रहेगी। इस बात पर जोर देने की जरूरत नही कि जब तक उत्पादन के साधनों को एकत्र करने और ईंधन तथा शक्ति के साधनों को मजबूत बनाने के लिए, जो विकास के लिए अत्यावश्यक है, कदम नहीं उठाए जाते, तब तक आगामी वर्षों में विकास की गति और परिमाण में बाधा पड़ती रहेगी। ये नए कार्यक्रम एक बड़ी सीमा तक दूसरी योजना की जान है। अत. सब प्रयत्न पहले इनकी ही पूर्ति के लिए करने होंगे। द्वितीय योजना के सम्भावित परिणाम प्रभावशाली तो अवश्य दीखते है, परन्तु उनकी प्राप्ति के लिए उतने ही वास्तविक और वित्तीय साधनों का संग्रह और प्रयोग करना पडेगा।

१३ सरकारी क्षेत्र के इन विकास कार्यों पर निजी क्षेत्र के विकास कार्यों के साथ ही विचार किया जा सकता है। द्वितीय योजना की अवधि मे माल के उत्पादन और सेवाओं में जिस वृद्धि की कल्पना की जा रही है, उसकी पूर्ति दोनों क्षेत्रों के विकास कार्यों में सफलता होने पर ही की जा सकती है। दोनों क्षेत्रों को कार्य सहयोग-पूर्वक करना होगा और उन्हें एक ही मशीन के दो पुर्जे मानकर चलना होगा। सारी योजना सफल तभी हो सकती है जब कि दोनों क्षेत्रों का विकास साथ-साथ और संतुलित रूप में हो। योजना में वित्त-विनियोग के निर्णय सरकारी प्राधिकारी करेंगे और इसलिए उनके फल अथवा परिणाम का अन्दाजा सुगमता से लगाया जा सकेगा। निजी क्षेत्रों के निर्णयों को भी सरकार वित्तीय उपायों, लाइसेंसों और आवश्यकता होने पर प्रत्यक्ष भौतिक नियन्त्रणों के द्वारा भी प्रभावित कर सकेगी। ऐसा करने मे सरकार का यह उद्देश्य रहेगा कि निश्चित लक्ष्य तक पहुंचने में सहूलियत हो। निजी क्षेत्र मे लाखो छोटे-छोटे उत्पादक देश भर में फैले पड़े हैं। इस कारण उन सबके विनियोग के कार्यक्रमो और लक्ष्यों का मोटा अन्दाजा मात्र किया जा सकता है। संगठित उद्योगों और व्यवसायों के विषय में जानकारी यद्यपि अधिक मिल सकती है, और सरकार जिनकी सहायता

अधिक सुगमता से कर सकती हैं, उनके साधनों और परिणामों में स्वभावतः उतना पारस्परिक सम्बन्ध नही हो सकता जितना कि सरकार के अपने कार्यों में हो सकता है। सिचाई, बिजली और परिवहन जैसे अनेक सरकारी कार्यों में जो पूंजी लगाई जाएगी, उनसे निजी क्षेत्र का उत्पादन बढ़ने में भी सहायता मिलेगी और इसलिए आशा है कि सम्बद्ध उद्योग लाभ उठाएंगे। जिन वस्तुओ का मूल्य सरकार नियत कर सकती है या उसे नियन्त्रित करना पडता है, उनका बाजार यदि उचित स्तर पर स्थिर हो जाए तो सरकार निजी क्षेत्र मे भी साधनो के अभीष्ट वितरण को प्रोत्साहन देने में सहायक हो सकती है। सच तो यह है कि योजना के सरकारी और निजी क्षेत्रों को दो पृथक क्षेत्र मानकर चलने की अपेक्षा, उन्हे एक-दूसरे का अधिकाधिक सहायक मानना कही अधिक उपयुक्त है।

१४. द्वितीय योजना की औद्योगिक नीति का निर्धारण करते हुए साधारणत. इन्ही बातों को ध्यान में रखा गया है। देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति का आधार १९४८ के औद्योगिक नीति सम्बन्धी प्रस्ताव को रखा है। उस प्रस्ताव में स्पष्ट शब्दों में बतला दिया गया था कि राष्ट्रीय हित की दृष्टि से उद्योगों की उन्नति, सहायता, नियन्त्रण और उनका विकास करना सरकार का ही उत्तरदायित्व रहना चाहिए। उसमे सरकारी भाग के कार्य के अधिकाधिक बढते जाने की कल्पना की गई थी। यद्यपि उसमें कहा गया था कि सरकार का यह मूल अधिकार है कि वह सार्वजनिक हित के लिए जब कभी आवश्यक समझे तब किसी भी औद्योगिक इकाई पर अधिकार कर ले, तो भी विद्यमान परिस्थितियों को ध्यान में रखकर उसमें सरकारी और निजी क्षेत्रो का विभाजन कर दिया गया था। यह प्रस्ताव १९४८ मे पास किया गया था। उसके पश्चात अनेक दिशाओं मे महत्वपूर्ण प्रगति हो चुकी है। अब यह स्पष्ट हो चुका है कि विकास किस दिशा में होना चाहिए और उसका उद्देश्य क्या रहना चाहिए। योजना का कार्य एक संगठित आधार पर होता रहा है। उसे आगामी वर्षों में और भी दृढ़ करने और बढाने की आवश्यकता है। १९४८ के प्रस्ताव पर पुर्नविचार इन्ही दृष्टियों से किया जाता रहा है। प्रधान मंत्री ने ३० अप्रैल, १९५६ को संसद् में औद्योगिक नीति का नया प्रस्ताव प्रस्तुत किया था।

१५ इस प्रस्ताव के पूरे शब्द इस अध्याय के अन्त मे परिशिष्ट के रूप में दिए गए है। प्रस्ताव मे कहा गया है . "समाज के समाजवादी आदर्श को राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप मे अपना लिये जाने और विकास का कार्य शीघ्रता से तथा सुनियोजित रूप मे करने की आवश्यकता होने के कारण, उचित है कि आधारभूत और सामरिक महत्व के और सार्वजनिक उपयोगिता सेवाओं के सब उद्योगो को सरकारी क्षेत्र में रखा जाए। जो उद्योग आधारभूत है और जिनमें इतनी अधिक पूजी लगानी पडती है कि उसे आज की परिस्थितियो में केवल सरकार ही लगा सकती है, उन्हें भी सरकारी क्षेत्र मे रखना पडेगा। इसलिए उद्योगो के बहुत बडे क्षेत्र मे भावी विकास का उत्तरदायित्व सरकार को सीधे अपने ऊपर लेना पडेगा।" इन उद्योगों मे सरकार को जो कार्य करना पडेगा, उसकी दृष्टि से इन्हें इस प्रस्ताव में ३ वर्गों में बाट दिया गया है। पहले वर्ग के उद्योगो की गणना अनुसूची 'क' मे की गई है। इन सब उद्योगों के भावी विकास का उत्तरदायित्व एक मात्र सरकार पर रहेगा। दूसरा वर्ग अनुसूची 'ख' मे गिनाया गया है। इस वर्ग के उद्योगों पर क्रमशः सरकार का स्वामित्व होता चला जाएगा और इसलिए इस वर्ग के नए कारखानों को साधारणतया सरकार ही शुरू करेगी, परन्तु साथ ही निजी उद्योगपतियो से भी आशा की जाएगी कि वे सरकार के इस प्रयत्न में योग दे।

तीसरे वर्ग मे शेष सब उद्योग सम्मिलित किए गए हैं और उनका विकास साधारणतया निजी क्षेत्र के लिए छोड़ दिया गया है। उद्योगों का यह वर्गीकरण बिल्कुल अपरिवर्तनीय या पत्थर की लकीर नही है। उदाहरणार्थ, जिन उद्योगों की गणना अनुसूची 'क' में की गई है, उनके जिन कारखानों को इस समय निजी उद्योगपति चला रहे हैं, उनके विस्तार को रोका नही गया है और यदि सरकार चाहे और राष्ट्रीय हित के लिए वैसा करना आवश्यक हो तो सरकार नए कारखाने भी निजी उद्योगपतियो की सहायता और सहयोग से खोल सकती है। परन्तु शर्त यह रहेगी कि सरकार इस प्रकार के कारखानो की नीति और सचालन का नियन्त्रण अपने हाथ मे रखने के लिए उनकी पूजी मे बडा भाग अपना रख सकेगी अथवा इसके लिए अन्य किसी उपाय का अवलम्बन कर सकेगी। अनुसूची 'ख' को, चाहे तो मिला-जुला क्षेत्र कह सकते है। इस क्षेत्र मे सरकार क्रमश: प्रवेश करके अपना कार्य-भार बढाती जाएगी। परन्तु इसके साथ ही निजी उद्योगपतियों को अवसर रहेगा कि वे इस क्षेत्र मे स्वतन्त्र रूप मे अथवा सरकार के साथ मिलकर विकास कर सकें। उद्योग के शेष क्षेत्र में विकास का कार्य साधारणत: निजी उद्योगपतियों की सूझ-बूझ और प्रयत्न से होगा। परन्तु सरकार चाहेगी तो वह इस क्षेत्र में भी कोई कार्य शुरू कर सकेगी। सरकारी नीति निर्धारित करते हुए मुख्य विचार यह रहा है कि योजना के जो उद्देश्य निश्चित कर लिए गए हैं, उनके अनुसार औद्योगिक क्षेत्र का विकास द्रुत गति से होता रहे। सरकारी क्षेत्र को अपना विस्तार करना होगा और द्रुत गति से करना होगा तथा निजी क्षेत्र को योजना की आवश्यकताओं के अनुसार चलना होगा। ज्यों-ज्यों कार्य बढ़ता जाएगा, त्यों-त्यों दोनों क्षेत्रो में मिलकर कार्य करने की आवश्यकता बढ़ती जाएगी। यह मान लिया गया है कि जो भाग निजी क्षेत्र के सुपुर्द किया गया है उसे सफलतापूर्वक कार्य करने के अवसर और सुविधाएं दी जाएंगी। औद्योगिक नीति के इस नए प्रस्ताव के अनुसार ही आगामी वर्षों में द्रुत गति से औद्योगीकरण किया जाएगा।

१६. १९४८ के औद्योगिक नीति सम्बन्धी प्रस्ताव मे यह भी बतलाया गया था कि घरेलू और छोटे पैमाने के उद्योगों के प्रति सरकार का दृष्टिकोण क्या रहेगा। नए प्रस्ताव में उसी बात को दोहरा दिया गया है। जिन समस्याओं को तुरन्त हल करने की आवश्यकता है उनमें से कइयो को इन उद्योगो के द्वारा अधिक सुगमतापूर्वक हल किया जा सकता है। इनमें एकदम बहुत-से लोगों को काम मिल सकता है। इनके द्वारा राष्ट्रीय धन का बंटवारा अधिक समानता से हो सकता है। देश की ऐसी बहुत-सी पूजी और ऐसे बहुत-से कारीगर है, जिनका उपयोग शायद अन्य प्रकार न हो सकता, पर उनका उपयोग इन उद्योगों में सुगमतापूर्वक हो सकता है। इसलिए इन उद्योगो को उन्नत करने, आधुनिक बनाने और पुनर्गठित करने की अत्यन्त आवश्यकता है। समस्या इनके लिए एक प्रभावशाली नीति निर्धारित करने की ही नही, अपितु इनका उपयुक्त संगठन करने की भी है। यदि नवीन वैज्ञानिक प्रणालियों का उपयोग अनियन्त्रित और असंगठित रूप में किया जाएगा, तो शायद उससे कुशल कारीगरों मे नई बेकारी उत्पन्न हो जाएगी या और भी बढ़ जाएगी। यहां उनके नियमन की आवश्यकता है। इसका यह अर्थ नही कि हम किसी आर्थिक या सामाजिक नीति के कारण वर्तमान कार्य-प्रणालियो को बन्द कर देने की बात सुझा रहे हैं। हमारा अभिप्राय केवल इतना ही है कि ऐसी अवस्थाएं उत्पन्न की जानी चाहिएं कि इन उद्योगों में भी आधुनिक प्रणालियों का क्रमश: अधिकाधिक उपयोग किया जा सके और यह परिवर्तन बिना किसी गडबड़ के होना चाहिए। साथ ही, यह बात भी महत्वपूर्ण है कि इस क्षेत्र में हमारी नीति यह हो कि विकास कार्य आधुनिकतम प्रणालियों द्वारा हो। राष्ट्रीय आय की वृद्धि के साथ-साथ माल की मांग भी

बढेगी और यह माग विविध प्रकार की होती जाएगी, और ज्यो ज्यो बिजली, परिवहन और सचार की सुविधाएं विकसित होती जाएगी, त्यों-त्यों नई आवश्यकताए पूरी करने के लिए अथवा बडे उद्योगो के सहायक के रूप मे अनेक छोटे उद्योगों का क्षेत्र भी विस्तृत होता चला जाएगा। रोजगार के अवसर और उत्पादन बढाने की दृष्टि से इन उद्योगो मे नई प्रणालियो का विस्तार उत्साहपूर्वक किया जाएगा।

१७. घरेलू और छोटे पैमाने के उद्योगो मे काम करन वालों को कई प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पडता है। इनमे से कई कठिनाइयों का मूल कारण पूजी का अभाव है, जैसे कि ठीक प्रकार के कच्चे माल का ठीक मूल्य पर न मिल सकना और औजारो आदि का अच्छा न होना। इनके अतिरिक्त माल को बेचने की अपर्याप्त व्यवस्था, उत्पादन की नई विधियो और बाजार की बदलती हुई माग का पूरा ज्ञान न होना आदि, कुछ कठिनाइया ऐसी है कि उनके कारण इन उद्योगो मे लगे हुए लोग अपने श्रम और कुशलता का पूरा-पूरा लाभ नही उठा पाते। इन बाधाओं और कठिनाइयो से पार पाने के लिए निरन्तर प्रयत्न करने की आवश्यकता होगी। साधारणतया, देहातो में बिजली पहुंच जाने और जिस मूल्य पर कारीगर खरीद सकें उस पर बिजली के उपलब्ध होने से इन उद्योगों को बहुत प्रोत्साहन मिलेगा। परन्तु अन्य कई प्रकार की सहायता देने की आवश्यकता रहेगी ही। उदाहरणार्थ, देहातों मे इस प्रकार के पचायती या साझे के कारखाने खोलने होंगे जिनमें कि विभिन्न उद्योगों में काम करने वाले मिलकर काम कर सकें और अनुकूल परिस्थितियों में अपने माल का उत्पादन बढ़ा सकें। इसी प्रकार सरकार के द्वारा परिवहन, बिजली और ऐसी ही अन्य सुविधाएं देकर औद्योगिक क्षेत्र सगठित करने और उनमे छोटे और मध्यम श्रेणी के उद्योग स्थापित करने की आवश्यकता है। जहां-कहीं घरेलू, ग्राम या छोटे उद्योगों के द्वारा लोगो को काम में लगाना सम्भव हो और जहां ये उद्योग सुधरी हुई वैज्ञानिक प्रणालियों का अधिकाधिक उपयोग कर सकें, वहां बड़े कारखानों और छोटे उद्योगों को मिलकर उत्पादन का सम्मिलित कार्यक्रम बनाने पर विचार करना चाहिए। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे इस बात पर विशेष बल दिया गया है कि उपभोग्य वस्तुओ का उत्पादन यथाशक्ति वर्तमान कारीगरो और साधनों द्वारा ही बढ़ाया जाए और देहातों तथा छोटे उद्योगो में क्रमशः नई वैज्ञानिक प्रणालियों के प्रयोग को उत्साहित किया जाए। इस क्षेत्र का सगठन अधिकाधिक सहकारिता के आधार पर करना चाहिए, जिससे कि छोटे उत्पादक भी बडे पैमाने पर कच्चा माल खरीदने, तैयार माल बेचने, बैंको से ऋण लेने और नई मशीनो का उपयोग करने आदि के लाभ उठा सके। उत्पादन का संयुक्त कार्यक्रम आरम्भ करने के लिए कही तो कर लगाने मे कुछ छूट देने की और कही उनके तैयार माल को नियत मूल्य पर खरीदकर उसे सरकारी अथवा सहकारी सगठन के द्वारा बेचने आदि के उपायों की आवश्यकता होगी।

१८. इस समस्या पर विचार केवल वर्तमान घरेलू उद्योगों अथवा दस्तकारियों में लगे हुए लोगों के हितों की रक्षा अथवा इन उद्योगों मे तैयार हुए माल की माग को स्थिर रखने की दृष्टि से नही करना चाहिए। इस पर विचार करते हुए यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि नई-नई किस्म का माल तैयार हो और अधिक मात्रा मे हो और साथ ही माल तैयार करने की ऐसी नई प्रणालिया निकल आए जो कि जनता की आय बढने के कारण, बढ़ी हुई मांग को भली प्रकार पूरा कर सकें। अभिप्राय यह है कि इन उद्योगों का पुनर्गठन और नवीकरण करते हुए ध्यान सुरक्षा से अधिक इनकी उन्नति करने की ओर रहना चाहिए। अभी तक छोटे उद्योग अधिक नहीं पनप सके। इसका एक कारण यह है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था गतिहीन

रही है और इस कारण इन उद्योगों मे तैयार हुए माल की मांग नही हुई। विकास योजनाओं मे नई पूजी लगाने से वर्तमान माग बढेगी और नई माग उत्पन्न होगी। भारत बहुत बड़ा देश है, यहा दूरिया बहुत बडी-बड़ी है, और बाजार के विस्तार की गुजाइश भी बहुत है। इसलिए यहा माग की पूर्ति उत्पादन की कुशल और विकेन्द्रित इकाइयो द्वारा की जा सकती है और की जानी चाहिए। इन उद्योगो को विभिन्न स्थानो पर स्थापित करने के पक्ष मे और भी युक्तियां हैं। बडे उद्योगो की उन्नति के साथ-साथ बड़े-बडे नगरों का विस्तार स्वयमेव हो जाता है। बिजली, परिवहन, बैंकों और अन्य सुविधाओ के एक ही स्थान पर एकत्र और सुलभ होने के कारण बडे उद्योग प्राय: बड़े नगरो मे केन्द्रित हो जाते है। परन्तु एक सीमा से आगे चलकर इस केन्द्रीकरण से घनी और गन्दी बस्तियां भी उत्पन्न होने लगती है। ज्यों-ज्यों परिवहन और यातायात का विकास होता जाएगा और छोटे नगरो और देहातो मे भी बिजली मिलने लगेगी, त्यो-त्यों एक ही स्थान पर अर्थ-व्यवस्था को केन्द्रित कर देने के लाभ कम होते चले जाएंगे। इस दृष्टि से और देहातों तथा छोटे नगरों के निवासियो की आय बढ़ाने के उद्देश्य से छोटे उद्योगों की उन्नति पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। हमारे विस्तृत देश में स्थान-स्थान पर जो कुशल और अनुभवी कारीगर मौजूद है, उनका उपयोग केवल इस मार्ग पर चलकर ही किया जा सकता है।

आर्थिक विषमता में कमी

१६. भूतकाल में जिस ढंग से आर्थिक विकास हुआ है, उससे प्राय: आय और सम्पत्ति में विषमता बढ़ती गई है। आरम्भ में विकास के लाभ व्यापारियों और उत्पादकों के एक सीमित वर्ग को ही प्राप्त होते हैं और उसके विपरीत खेती तथा परम्परागत उद्योगों में नई प्रणालियों के अपनाने का प्रारम्भ में यह प्रभाव पड़ता है कि अधिक लोगों में बेरोजगारी और अर्ध-रोजगारी बहुत बढ़ जाती है। धीरे-धीरे इस प्रवृत्ति में सुधार होने लगता है, मजदूरों की यूनियनें बनने लगती हैं और जनतन्त्री विचारो का प्रचार हो जाने पर जनता की मांग पूरी करने के लिए सरकार भी आवश्यक कार्रवाइयां करने लगती है। हमारे देश के समान अविकसित अथवा कम विकसित देश जो विकास के मार्ग का अवलम्बन विलम्ब से करते हैं, उनके सामने समस्या यह होती है कि वे अपने उत्पादक साधनों का प्रयोग और समाज के विविध वर्गों के सम्बन्ध को इस प्रकार नियन्त्रित करें कि विकास के साथ-साथ आर्थिक और सामाजिक विषमताएं भी कम होती जाएं। विकास की यह प्रक्रिया समाजवादी आदर्शों के अनुसार होनी चाहिए। इस समय आय और सम्पत्ति की जो विषमताएं हैं, उन्हें कम करने के साथ-साथ यह ध्यान भी रखना होगा कि विकास के कारण नई विषमताएं उत्पन्न न हों और वर्तमान असमानताओं में वृद्धि न हो। विषमता दूर करने का कार्य दो दिशाओं में करना होगा। एक ओर तो निम्नतम आय को बढ़ाना, और दूसरी ओर ऊंची आय को घटाना होगा। इनमें से प्रथम बात का महत्व अधिक है। परन्तु साथ ही, दूसरी बात के लिए भी सोच-समझ कर और शीघ्र कार्रवाई करने की आवश्यकता है। अब तक इन दिशाओं में जनतन्त्री आधार पर और बड़े पैमाने पर कार्य करने का प्रयत्न नहीं किया गया। इतिहास में कम विकसित देशों के सामने विद्यमान इस विशिष्ट समस्या के समानान्तर कोई समस्या या उसका समाधान नही मिलता। इस समस्या का सामना साहस के साथ करना होगा और जो भी प्रणाली अपनाई जाएगी, उसे काफी लचकीला और परीक्षण के रूप में रखना होगा। यह भी ध्यान रखना होगा कि विषमता दूर करते हुए कोई ऐसा कार्य न हो जाए जिससे कि हमारी

उत्पादन प्रणाली को हानि पहुंचे और विकास में ही बाधा पडे, अथवा जो जनतन्त्री परिवर्तन करना हमारी नीति का लक्ष्य है वही संकट में पड़ जाए। इसके विपरीत जनतन्त्री और व्यवस्थित परिवर्तन का अर्थ यह न बन जाए कि वर्तमान अथवा नई विषमताएं चलती चली जाए।

२०. इस बात पर बल देने की आवश्यकता है कि आय और धन की विषमता में कमी तभी हो सकती है, जब कि जो भी उपाय और सामाजिक परिवर्तन किए जाए, वे सब योजना के अग के रूप में किए जाएं। योजना में पूंजी-विनियोग का प्रस्तावित स्वरूप, आर्थिक गतिविधियों को सरकारी कार्रवाई द्वारा नया मोड़ देने, योजना की पूर्ति के लिए आवश्यक वित्तीय साधन एकत्र करने के लिए वित्तीय उपायों का प्रभाव, सामाजिक सेवाओं का विस्तार, भूमि के स्वामित्व और प्रबन्ध की व्यवस्थाओं में परिवर्तन, ज्वाइन्ट स्टाक कम्पनियों और मैनेजिंग एजेन्सियो के नए नियम बनाने, और सरकार की सरक्षा मे सहकारिता की उन्नति आदि सब कार्रवाइयो का लक्ष्य यह निश्चित करना है कि नई आय कहा और किस प्रकार होगी और उसका वितरण कैसे होगा। योजनाबद्ध प्रयत्नो का उद्देश्य ही यह होता है कि सब उपाय एक सूत्र में गुफित रहे और उनका उपयोग इस प्रकार केन्द्रित हो जाए कि उनके द्वारा निम्न स्तरो पर तो आय और अवसरों मे वृद्धि होती रहे और उच्च स्तरों की सम्पत्ति और अधिकारों मे कमी होती चली जाए।

२१. आय और सम्पत्ति की विषमता कम करने मे वित्तीय साधनों का महत्वपूर्ण योग रहेगा। परन्तु यह मानना पडेगा कि विषमता कम करने के लिए जो उपाय किए जाएगे, उनमे से कुछ का नये कार्यो के लिए प्रोत्साहन पर प्रतिकूल प्रभाव भी हो सकता है। भारतीय आयकर व्यवस्था में बहुत प्रगति हो रही है, परन्तु यह स्पष्ट है कि आयकर की दर बढाकर सरकारी आय को बढाने और विषमता को कम करने की गुजाइश अधिक नही है। कर-जाच आयोग ने इस सम्बन्ध मे कर से बचने की प्रवृत्ति को रोकने के उपाय करने पर विशेष बल दिया था। उसने यह भी कहा था कि "धन और सम्पत्ति पर कर लगाने के क्षेत्र का विस्तार कर देना भी विषमताएं कम करने का एक उपाय हो सकता है।" योजना के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर विकास की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए कर की पद्धति मे परिवर्तन करना एक ऐसी समस्या है जिसका निरन्तर अध्ययन किया जाना चाहिए। इस प्रयोजन से कर-पद्धति मे जो परिवर्तन अथवा सुधार हो सकते है, उनका अध्ययन करने का प्रयत्न अनुसन्धान कार्य करने वाले सभी सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों को करना होगा।

२२. समाज के अधिक सम्पन्न वर्गो को विकास के साधन एकत्र करने मे अधिक योग देने के लिए कहते समय यह भी ध्यान रखना पड़ेगा कि ऐसा करते हुए उनका अधिक श्रम या बचत करने का उत्साह मन्द न हो जाए। सम्भव है कि इसके लिए कर-पद्धति में बहुत अधिक परिवर्तन करने की आवश्यकता हो। हाल मे एक सुझाव यह दिया गया था कि इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए व्यक्तिगत कर लगाने का आधार आय को न रखकर व्यय को रखना चाहिए। साथ ही सम्पत्ति तथा पूजी पर लाभ पर कर लगा देना चाहिए। व्यय पर कर लगाने के सुझाव पर अर्थशास्त्री अनेक बार विचार कर चुके है। इस सुझाव के समर्थक विशेषज्ञों की सख्या बढ़ती जा रही है। परन्तु इस सुझाव को अपनाने से पहले शासन-सम्बन्धी कई समस्याओ को हल करना पड़ेगा। सम्भव है कि आरम्भ मे इस सुझाव को केवल परीक्षण के रूप में एक सीमित क्षेत्र मे अपनाना उचित हो। अधिक उन्नत देशों के अनुभव से यह प्रतीत होता है कि इस समय बढ़ती हुई आमदनियो पर जिस प्रकार

अधिकाधिक आयकर लगाया जाता है, वह अधिक फलदायक सिद्ध नहीं होता। कारण यह है कि एक तो सम्पत्ति विक्रय में जो लाभ होते हैं वे कर से बच जाते हैं और दूसरे कर की चोरी नाना प्रकार और बडी मात्रा में होने लगती है। सम्भव है कि व्यय के आधार पर कर लगाने से लोगो को बचत अधिक करने का उत्साह हो। कम से कम सिद्धान्त के रूप में तो मुद्रा-स्फीति अथवा मुद्रा-सकोच की बुराइयों को कम करने के लिए यह आयकर की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली उपाय सिद्ध हो सकता है।

२३. आय और धन की विषमता का एक सबसे बडा कारण सम्पत्ति का स्वामित्व है। निस्सदेह, श्रम से प्राप्त होने वाली आय भी समान नही होती, परन्तु उसका समर्थन किसी हद तक यह कह कर किया जा सकता है कि वैसा उत्पादन की मात्रा अथवा श्रम की सुलभता या दुलर्भता के अनुसार होता है। कई प्रकार के श्रमो का पारिश्रमिक अन्य प्रकार के श्रमों की अपेक्षा अधिक दिया जाता है, और वैसा करने का उत्पादन के साथ कोई सम्बन्ध नही होता। पारिश्रमिक में इन विभिन्नताओं के कारण पुरानी परम्पराएं, वर्तमान मनोवृत्तिया अथवा सामाजिक रीति-रिवाज आदि हैं। साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि ऊंचे वेतन पर भली प्रकार कार्य करने की क्षमता का सम्बन्ध काम करने वाले के शिक्षण और प्रशिक्षण के साथ भी है, और इन दोनों का सम्बन्ध जन्म और परिस्थितियों के साथ है। यदि इस बात पर विचार किए बिना कि कोई उसका मूल्य चुका सकता है या नही, सब वर्गों के लिए सामान्य और प्राविधिक शिक्षण का द्वार समान रूप से खोल दिया जाएगा तो कुछ समय के पश्चात समाज में समानता लाने का यह एक सफल साधन सिद्ध हो सकेगा। अभिप्राय यह है कि श्रम के द्वारा होने वाली आय में तो असमानता दूर की ही जानी चाहिए, उसके साथ ही धन अथवा सम्पत्ति पर कर लगाने के प्रश्न पर अधिक ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए। किसी व्यक्ति के सम्पत्ति का स्वामी होने का अर्थ यह है कि वह उस सम्पत्ति से होने वाली आय के अतिरिक्त भी कुछ कर दे सकता है। कर तब लगाया जाता है जब कि सम्पत्ति से कुछ आय होती है। इतने मात्र से, सम्पत्ति पर पृथक परन्तु कुछ हलका कर लगा देने के सुझाव का खण्डन नही होता। निस्सदेह, इस में कर देने से बचने के लिए सम्पत्ति के मूल्यांकन की ओर सम्पत्ति के क्रय-विक्रय की सूचना न देने आदि की कार्रवाइया होगी। परन्तु हम अपना लक्ष्य आय और धन की विषमताओं को कम करने और विकास के लिए आवश्यक साधन उन लोगों से एकत्र करने का बना चुके है जिनकी आय अथवा सम्पत्ति औसत से अधिक है। उसकी पूर्ति के लिए प्रशासन की इन समस्याओं को हल करना ही पड़ेगा।

२४. अन्त में इस सचाई की भी चर्चा कर देनी चाहिए कि अभी तक सम्पत्ति-कर से आय मात्रा में नगण्य ही हुई है। स्पष्ट है कि सम्पत्ति-कर के उद्देश्य को विफल न होने देने के लिए उस कर के अतिरिक्त उपहार-कर भी लगाना पड़ेगा। यह कर अनेक प्रकार से लगाया जा सकता है। उपहार कितने मूल्य का दिया गया, देने वाले के साथ पाने वाले का सम्बन्ध क्या है और पाने वाला पहले से कितनी अधिक सम्पत्ति का स्वामी है, इत्यादि बातों के अनुसार भी इस कर की मात्रा निश्चित की जा सकती है। उपहार-कर से धन-विनियोग के उत्साह को मन्द किए बिना पर्याप्त आय हो सकती है और धन तथा व्यय के आधार पर कर लगाने का यह एक महत्वपूर्ण मार्ग हो सकता है।

२५. ऊपर जो विचार प्रकट किए गए, उनका यह अर्थ नहीं है कि इनमें से किसी एक या सब उपायों का तुरन्त ही अवलम्बन कर लेना चाहिए। उनका अर्थ इतना ही है कि जनता के उत्साह

पर इन करों के प्रभाव और प्रशासन पर इनकी प्रतिक्रियाओं का अध्ययन और अधिक किया जाना चाहिए। इनमें से कई उपाय ऐसे है कि उनका पूरा लाभ कुछ समय पश्चात ही प्रकट हो सकेगा। परन्तु यदि विचार तथा परीक्षण के पश्चात इष्ट उद्देश्य की पूर्ति मे कुछ भी सहायता मिलने की आशा हो तो नया परिवर्तन करने मे झिझकना नही चाहिए।

२६. विषमता कम करने का कार्य दोनों दिशाओं से करना पड़ेगा। एक ओर तो उच्च स्तर पर धन और आय के अत्यधिक केन्द्रित हो जाने को रोकने के उपाय करने पड़ेंगे, और दूसरी ओर साधारण जनता की आय, विशेषत' निम्न स्तर की आय को बढ़ाना पड़ेगा। उच्चतम आय की सीमा निर्धारित कर देने का सुझाव बार-बार रखा गया है। उस पर विचार इसी दृष्टि से करना चाहिए। उक्त सुझाव मे उसके रूप का महत्व इतना नही जितना कि उसके भाव का है। स्पष्ट है कि कानून बना देने मात्र से उच्चतम सीमा का निश्चय नही हो सकता। आय अनेक प्रकार होती है, वेतन या पारिश्रमिक से, सम्पत्ति के द्वारा और उद्योग या व्यवसाय से; इन सबका नियन्त्रण एक भारी उलझन-भरी समस्या है। जब तक सम्पत्ति की सीमा निर्धारित नहीं की जाएगी, तब तक आय की सीमा निर्धारित कर देने का कोई विशेष अर्थ नही होगा। सम्पत्ति या व्यापार व्यवसाय से होने वाली आय को नियन्त्रित करना कठिन है। उसका नियत्रण वैयक्तिक आय पर कर लगाने की साधारण पद्धति के द्वारा ही किया जा सकता है। उच्चतम सीमा निर्धारित करने का अर्थ यह है कि एक नियत सीमा के पश्चात आय पर शत-प्रतिशत कर लगा दिया जाए। इसे किसी नियत तिथि के पश्चात अथवा किसी कठोर रूप में लगाने से अनेक कठिनाइया उत्पन्न हो जाने की सम्भावना रहेगी। यह तो अवश्य उचित है कि जिनकी आय बहुत ही अधिक हो, वे सरकारी कोष की पूर्ति मे अधिक योग दे, यह सिद्धान्त सर्वसम्मत है। हाल के वर्षों में ऊंची आमदनियो पर कर की दर को बढ़ा भी दिया गया है। वित्तीय और अन्य साधनो के द्वारा तो विषमताए अवश्य दूर की जानी चाहिए। परन्तु साथ ही ऐसे ठोस उपाय अपनाने पर बल देना चाहिए जिनसे आय का अधिक समान वितरण करने मे सहायता मिले।

२७. दूसरे शब्दो में, समाज के केवल कुछेक लोगों के हाथ मे व्यय करने की सामर्थ्य और आय को केन्द्रित होने से रोकने के उद्देश्य की सिद्धि इसी प्रकार हो सकती है कि कर की पद्धति मे ऊपर बताए गए परिवर्तन क्रमश' कर लिए जाएं और समाज के सगठन को इस प्रकार बदल दिया जाए कि उसकी बचत पर अधिकाधिक मात्रा मे सरकार का अधिकार होता चला जाए। इस प्रयोजन के लिए उत्पादन में सहकारिता की पद्धति को बढावा देना, बिना काम की कमाई खाने वालो की समाप्ति, सूदखोर महाजनों के स्थान पर संगठित ऋण-व्यवस्था की स्थापना, निजी एकाधिकारो का नियन्त्रण और उत्पादन तथा व्यापार के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सरकारी कार्यों का विस्तार आदि उपाय बहुत प्रभावशाली है। दूसरे शब्दो मे, अधिकतम आय की सीमा निर्धारित करना इस प्रक्रिया का अन्तिम छोर हो सकता है, आरम्भिक नहीं। जितना शीघ्र हम समाजवादी आदर्श की ओर प्रगति करेंगे, उतनी ही शीघ्रता से आर्थिक विषमताए लुप्त हो जाएगी। समाजवादी आदर्श का अर्थ है समस्त आर्थिक और सामाजिक सगठनो का पूर्ण नियन्त्रण। इस समस्या का हल उन अवस्थाओं मे परिवर्तन करके ही किया जा सकता है जो कि विषमता को उत्पन्न करती और स्थिर रखती है। कहने की आवश्यकता नही कि इस प्रसग मे निम्नतम आय का निर्धारित करना, अर्थात सभ्य जीवन बिताने के लिए आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति के एक न्यूनतम राष्ट्रीय मान की गारटी कर देना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि उच्चतम आय की सीमा निश्चित कर देना।

२८. अब हमारे सामने प्रादेशिक विषमताओं का प्रश्न उपस्थित होता है। विकास की किसी भी चौमुखी योजना में कम विकसित प्रदेशों की विशेष आवश्यकताओं पर उचित ध्यान देने का सिद्धान्त एक माना हुआ सिद्धान्त है। पूजी-विनियोग इस प्रकार किया जाना चाहिए कि उससे प्रादेशिक विकास सतुलित रूप मे हो। इस समस्या का हल आरम्भिक अवस्थाओं में विशेष रूप से कठिन है, क्योंकि तब सब उपलब्ध साधन आवश्यकताओं की तुलना मे बहुत अपर्याप्त होते हैं। परन्तु ज्यों-ज्यों विकास में प्रगति होती जाए और विनियोग के लिए अधिक साधन उपलब्ध होते जाएं, त्यों-त्यों विकास के कार्यक्रमों में विनियोग का लाभ कम विकसित प्रदेशों को अधिक पहुंचाने का ध्यान रखना चाहिए। अर्थ-व्यवस्था को विस्तृत करने का एकमात्र उपाय यही है। द्वितीय पचवर्षीय योजना को बनाते हुए इन विचारों का ध्यान रखा गया है। परन्तु भविष्य मे जो योजनाएं बनाई जाएंगी, उनमें इनका और भी अधिक ध्यान रखा जाएगा।

२९. हाल में इस प्रश्न पर राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी विचार किया था और यह सिद्धान्त मान लिया गया था कि उपलब्ध साधनों की सीमा में रहकर इस बात का पूरा प्रयत्न किया जाना चाहिए कि देश के विभिन्न भागों का विकास संतुलित रूप में हो। इस समस्या का हल नाना प्रकार से किया जाएगा। राष्ट्रीय विकास परिषद ने पहली सिफारिश यह की है कि औद्योगिक उत्पादन किसी एक स्थान पर केन्द्रित न होने दिया जाए। दूसरा सुझाव यह दिया गया है कि नए सरकारी अथवा निजी उद्योगों की स्थापना करते हुए यह ध्यान रखा जाए कि देश के विविध भागों का आर्थिक विकास संतुलित रूप में हो। कुछ उद्योगों को कुछ विशिष्ट स्थानों पर स्थापित करना पड़ता है, क्योंकि वहां उनके लिए आवश्यक कच्चा माल या अन्य प्राकृतिक साधन सुलभ होते हैं। अन्य अनेक उद्योग ऐसे होते हैं जिनके लिए स्थान का चुनाव आर्थिक दृष्टि से बहुत व्यापक क्षेत्र में से किया जा सकता है। बहुधा देखा गया है कि किसी स्थान के विरुद्ध व्यय अधिक हो जाने की दलील वस्तुतः उस स्थान का आधार-भूत विकास पर्याप्त न होने की सूचना देती है। एक बार उसके आरम्भ हो जाने पर प्रारम्भिक बाधाएं क्रमशः दूर होती जाती हैं। और इस दृष्टि से विकास के केन्द्रों को देश के विभिन्न स्थानों में दूर-दूर स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक है। परिषद ने तीसरी सिफारिश यह की थी कि देश के विभिन्न भागों मे श्रमिकों का परिव्रजन सरल करने के उपाय किए जाएं और ऐसे कार्यक्रम बनाए जाए जिनसे लोग अधिक घनी आबादी के स्थानों से उठकर विरल आबादी के स्थानों में बस सकें। परिषद की सिफारिश है कि प्रादेशिक विषमताओं को कम करने की समस्या का अध्ययन निरन्तर करते रहना चाहिए और प्रादेशिक विकास की सूचक कसौटियों का निश्चय करते रहना चाहिए। नई औद्योगिक नीति के प्रस्तावों में भी इन उद्देश्यों पर विशेष बल दिया गया है और जब योजना के सरकारी क्षेत्र में विकास कार्यक्रम बनाए जाएं अथवा निजी क्षेत्र में नए कारखानों को लाइसेंस देने की नीति निर्धारित की जाए, तब इनका ध्यान रखना चाहिए।

आर्थिक नीति और प्रणालियां

३०. योजना काल में आर्थिक नीति के आधार और उसके संचालन की दिशा का निश्चय उन्हीं उद्देश्यों और विचारों के अनुसार किया जाएगा जो कि ऊपर बतलाए गए हैं। योजना की आर्थिक नीति का लक्ष्य आवश्यक वित्तीय साधनों को एकत्र करना ही नहीं, अपितु देश के वास्तविक साधनों का इस प्रकार उपयोग करना भी है कि उससे योजना की आवश्यकताएं

पूरी हो सकें। महत्वपूर्ण क्षेत्रों में साधनो का आवंटन सरकार द्वारा आरम्भ किए गए कार्यों को देखकर किया जाता है और इसलिए सरकार द्वारा किया गया पूजी-विनियोग नीति निर्धारित करने का एक प्रधान सूत्र होता है। सरकारी पूजी-विनियोग का लक्ष्य निजी पूजी-विनियोग की अपेक्षा अधिक व्यापक होता है। सरकार देश की अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकताओं को अधिक व्यापक और दूर-दृष्टि से देख सकती है और उसे देखना भी चाहिए। योजना के निजी क्षेत्र मे पूजी लगाते हुए प्रधान दृष्टि यह रहती है कि कितनी पूंजी लगाकर कितना लाभ हो सकेगा। इसके विपरीत सरकार को पूजी लगाते हुए यह देखना पडता है कि सब मिलाकर उससे राष्ट्रीय उत्पादन मे कितनी वृद्धि हो सकेगी। इसके अतिरिक्त, व्यापक दृष्टि से मिली-जुली अर्थ-व्यवस्था मे सरकार की आर्थिक नीति का लक्ष्य यह भी रहता है कि मूल्यो और लाभों में उचित हेर-फेर करके निजी पूजी विनियोग की दिशा को भी प्रभावित कर दिया जाए। इसलिए योजना की पूर्ति के लिए जिन उपायों के द्वारा यह कार्य किया जा सके उनका बहुत महत्व हो जाता है।

३१. योजना तैयार करने का अभिप्राय केवल इतना नहीं होता कि जो काम करने है उनकी एक सूची बनाकर रख दी जाए, पर उसे बनाते हुए यह निश्चय भी करना पडता है कि उन्हे किया किस प्रकार जाएगा। जनतन्त्री व्यवस्था में योजना की पूर्ति साधनो पर सीधा अधिकार करके नही की जा सकती, उसे मूल्यो के नियन्त्रण आदि द्वारा पूरा करना पड़ता है। जिन उपायो से योजना के उद्देश्यो की पूर्ति की जा सकती है उनके मोटे रूप दो है। पहला उपाय तो वित्तीय और आर्थिक नीतियो के द्वारा देश की अर्थ-व्यवस्था को नियत्रित करने का है, और दूसरा उपाय आयात और निर्यात का नियमन, उद्योग और व्यवसाय के लिए लाइसेस व्यवस्था, मूल्यो का नियन्त्रण और अर्थ-व्यवस्था के किन्ही विशिष्ट क्षेत्रों मे आवटनों द्वारा उनकी गति को नियमित और प्रभावित करने का है। हाल मे इस प्रश्न पर बहुत विवाद हुआ है कि योजना का कार्य करते हुए केवल प्रथम उपाय का अवलम्बन करना चाहिए या दूसरे का भी—स्पष्ट है कि वित्तीय और आर्थिक नियन्त्रण के द्वारा अर्थ-व्यवस्था के उतार-चढाव को अधिक व्यापक रूप में नियत्रित किया जा सकता है, कर नीति मे आवश्यक परिवर्तन करके दुर्लभ साधनो को किन्ही निश्चित दिशाओ मे मोड़ा जा सकता है। परन्तु इसमे भी सदेह नहीं कि जिस योजना का एक उद्देश्य पूजी-विनियोग को पर्याप्त मात्रा मे बढ़ाना हो और जिसमे कुछ कार्यों के लिए प्राथमिकता का क्रम-निश्चित कर लिया गया हो, उसकी पूर्ति केवल आर्थिक और वित्तीय नियत्रण के द्वारा नही की जा सकती। इसलिए, दूसरे उपाय का भी अवलम्बन करना अनिवार्य हो जाता है।

३२ विकसित होती हुई किसी भी अर्थ-व्यवस्था मे सरकार की वित्तीय और आर्थिक नीतियो का झुकाव, अनिवार्य रूप से अपना क्षेत्र अधिकाधिक विकसित करते जाने का होता है। यदि अकस्मात ही ऐसा दिखाई पडे कि योजना की गति मन्द हो रही है तो व्यय बढा-कर और अधिक आर्थिक सहायता देकर गति को तीव्र किया जा सकता है, परन्तु सम्भावना यह है कि हमारी मुख्य समस्या मुद्रा-स्फीति की बुराइयो को रोकने की रहेगी। विकास के कार्यों का एक अग यह भी है कि माल तैयार होने से पहले ही उसकी माग उत्पन्न कर दी जाए। इसलिए सरकारी व्यय मे कमी करने और आर्थिक प्रवृत्तियो को दबाने के उपाय तभी करने चाहिए जब कि उनकी अत्यन्त आवश्यकता हो। एक युक्ति यह दी जा सकती है कि जिस देश को विदेशी मुद्रा असीम परिमाण मे उपलब्ध हो, वह माल का अधिक आयात करके और

इस प्रकार अपने बाजार में माल की पूर्ति बढ़ाकर, मुद्रा-स्फीति की बुराइयों को रोक सकता है। परन्तु यह बात यथार्थ नही है। विदेशी मुद्रा एक ऐसा साधन है जिसका उपयोग यथा-शक्ति कम किया जाना चाहिए। हमारा विचार योजना की पूर्ति के लिए अपनी चालू आय के अतिरिक्त पहले से एकत्र और सुरक्षित आय के कुछ भाग का और विशेष कार्यों के लिए मिली हुई विदेशी सहायता का उपयोग करने का है। इसलिए विदेशी विनिमय और व्यापार की नीति को ऐसा रखना पडेगा कि उसका हमारे विकास कार्यक्रमो के साथ मेल बैठ जाए। किसी भी कम विकसित अर्थ-व्यवस्था मे साधनों की मांग नानाविध हुआ करती है। सम्भव है कि कृषि का उत्पादन ऐसे कई कारणो से जिनका नियन्त्रण मनुष्य की शक्ति से बाहर है, आवश्यकता से कम हो। अन्य बाधाएं भी उत्पन्न हो सकती है। नई आमदनियों में और जिन वस्तुओं पर उन्हें व्यय किया जाना है उनकी प्राप्ति में सदा कुछ न कुछ अन्तर रह ही जाता है। परन्तु इस प्रकार की कठिनाइयों अथवा कमियों का सामना होने पर विकास के किसी भी कार्यक्रम का परित्याग नही किया जा सकता है। कुछ तो जोखिम उठानी ही पड़ेगी। इसका अर्थ यह है कि आवश्यकता होने पर हमे वस्तुओं के नियन्त्रण और वितरण की पद्धति पर अमल करने के लिए तैयार रहना चाहिए, और अब तक का अनुभव यह है कि नियन्त्रण और वितरण में सफलता तब तक नही होती जब तक कि उनका प्रयोग उन्हें मिलाकर नहीं किया जाता। उनकी सफलता के लिए जनता की मानसिक तैयारी भी आवश्यक होती है, और उसके लिए जनता को समझा-बुझाकर जनमत तैयार करना पड़ता है। यह ठीक है कि नियन्त्रण करते हुए प्रशासन सम्बन्धी कठिनाइयां होती हैं और उनके कारण नया कार्य करने का उत्साह भी मन्द पड़ जाता है, परन्तु साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि उनके बिना विषमताएं और कठिनाइया बढ़ सकती है और उन वर्गों में असंतोष बढ़ सकता है जिनकी सुरक्षा की सबसे अधिक आवश्यकता है।

३३. इसमें संदेह नहीं कि मनोवैज्ञानिक और प्रशासन सम्बन्धी कारणों से जहां तक सम्भव हो वहां तक अन्न जैसी अत्यन्त आवश्यक वस्तुओं का नियन्त्रण और वितरण नहीं करना चाहिए। परन्तु इसके विपरीत यह भी ठीक है कि यदि आवश्यक वस्तुओं के मूल्य बढ़ने लगें या बहुत ऊंचे हो जाए तो भारी कठिनाई हो जाती है। दुर्लभता या कमी का मूल उपाय तो यही है कि उपलब्ध माल की मात्रा बढ़ा दी जाए और इसके लिए जब देश में उत्पन्न माल अपर्याप्त हो तब उसे विदेशो से मंगाकर कमी को दूर कर देना चाहिए। परन्तु आयात का सहारा भी अत्यधिक नहीं लिया जा सकता। कभी-कभी जितने आयात की आवश्यकता होती है उतना उपलब्ध नहीं होता और कभी-कभी उसे करने के लिए अन्य महत्वपूर्ण कार्यों पर व्यय को रोक देना पड़ता है। यही बात देश के साधनों को पूंजी-विनियोग में न लगाकर उनका व्यय दैनिक आवश्यकताएं पूरी करने पर लागू होती है। इसलिए समस्त योजना को विफल न होने देने के प्रयोजन से भौतिक नियन्त्रणों को लागू करना अनिवार्य रूप से आवश्यक हो जाता है और विशेष परिस्थितियों में आवश्यक तथा उपयोगी वस्तुओं के भी नियन्त्रण का विचार सर्वथा नहीं छोड़ा जा सकता। साराश यह है कि केवल नियंत्रणों को पर्याप्त नहीं समझना चाहिए और जब उनका सहारा लेना पड़े तब माल की उपलब्धि बढ़ाने का भी ध्यान रखना चाहिए।

३४. इस प्रसंग में यह बतला देना बहुत आवश्यक है कि सरकार को अन्न और अन्य आवश्यक वस्तुओं का अतिरिक्त संग्रह करके रखना चाहिए, और मूल्यों की घटा-बढ़ी को नियन्त्रण

मे रखने के लिए उनका क्रय-विक्रय करते रहना चाहिए। कम विकसित अर्थ-व्यवस्थाओं में माल की मांग और उपलब्धि मे थोडे-से भी परिवर्तन का मूल्यो पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। माल की थोडी भी कमी होने पर मूल्य बहुत अधिक बढ जाते है और थोड़ी भी अधिकता होने पर वे बहुत अधिक घट जाते है। देश मे उत्पन्न हुए माल का संग्रह करके, मूल्यों को स्थिर रखने के लिए बुद्धिमत्ता से उसका उपयोग करना विदेशी मुद्रा का व्यय करके विदेशी माल का आयात करने से किसी भी तरह कम महत्वपूर्ण नही है। इसलिए सरकार के लिए खाद्य न्नों का सदा पर्याप्त सग्रह रखना और प्रतिकूल परिस्थिति उत्पन्न होने पर मुद्रा-स्फीति की बुराइयों को रोकने के लिए उसका तुरन्त और सफल उपयोग कर लेना विकास के बड़े-बडे कार्यक्रमों का एक अनिवार्य अग होता है। सिद्धान्ततः यह बात केवल खाद्यान्नो पर नहीं, जरूरी कच्चे माल और अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओ पर भी लागू होती है। इस उपाय की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि प्रशासनिक व्यवस्था दृढ हो और माल को एकत्र करने एक स्थान से दूसरे स्थान पर ढोकर ले जाने और उसका वितरण करने की सुविधाए पर्याप्त हों। माल को संग्रह करके रखने और उसके द्वारा मूल्यो के उतार-चढ़ाव को ठीक करने का विचार खाद्यान्नों के सम्बन्ध मे विशेष रूप से अपनाने योग्ये है, और उसे प्राथमिकता देनी चाहिए। योजना मे यह व्यवस्था की गई है कि केन्द्र और राज्य सरकारो क वेयर हाउसिग कार्पोरेशन (गोदाम निगम) २० लाख टन अतिरिक्त खाद्यान्न संग्रह करने का प्रबन्ध रखे। इस कार्यक्रम को शीघ्र पूरा कर लेना अत्यन्त आवश्यक है।

३५. खाद्यान्नो का अतिरिक्त सग्रह रखकर सरकारं मूल्यों के एकदम उतार-चढाव को रोक सकेगी। इसके साथ ही, दूसरी व्यापारिक फसलो के मूल्यों को भी समय-समय पर ठीक करते रहना चाहिए, क्योकि यह उचित ही है कि किसान जो फसलें बोए उनका मूल्य उसे ठीक मिले और उसे यह उत्साह हो कि वह योजना की आवश्यकता के अनुसार अपनी फसलों मे अदला-बदली करता रहे। इस प्रयोजन की कुछ पूर्ति आयात और निर्यात के नियन्त्रण तथा आयात-निर्यात शुल्को के द्वारा भी की जा सकती है। किसान का उत्साह बढाने के लिए यह भी आवश्यक है कि जहा तक हो सके वहां तक आयात और निर्यात के परिमाण की घोषणा ऐसे समय कर दी जाए कि उसका लाभ बिचौलियो की अपेक्षा किसानों को अधिक पहुंचे। कपास के मूल्यो के उतार-चढाव का नियन्त्रण अधिकतम और न्यूनतम मूल्य निर्धारित करके किया जाता है और गन्ने का मूल्य ठीक रखने के लिए सरकार बोने के मौसम से बहुत पहले यह घोषणा कर देती है कि कारखानो को गन्ने का क्या मूल्य देना पडेगा। फिर भी सरकार की मूल्य-नीति को सफल करने के लिए समय-समय पर आयात और निर्यात मे परिवर्तन करना आवश्यक होता है। खेती की पैदावार की कई वस्तुओ के मूल्य पर, उदाहरणार्थ तिलहनों पर, सट्टेबाजी का असर बहुत अधिक होता है; आशा है कि वायदा-बाजारो का नियन्त्रण जब वायदा-बाजार आयोग के द्वारा होने लगेगा तब अनुचित सट्टेबाजी उचित नियन्त्रण में रह सकेगी। प्रसगवश यह भी बता देना आवश्यक है कि अत्यधिक सट्टेबाजी का मेल सुयोजित अर्थ-व्यवस्था के साथ नही बैठता। इसलिए सट्टेबाजी को न केवल सट्टा बाजारो के लिए उपयुक्त नियम बनाकर अपितु बैंकों आदि द्वारा ऋण देने का नियन्त्रण करने के लिए जो कुछ किया जा सकता है वह करके भी नियंत्रित और नियमित करना चाहिए।

३६. अब संक्षेप में यह चर्चा भी कर लेनी चाहिए कि साधारणतया और कुछ विशेष दिशाओं में विकास की प्रगति पर वित्त और ऋण की व्यवस्थाओं का क्या प्रभाव पडता है। इस व्यवस्था को विकास की आवश्यकताओं के अनुसार नई दिशा में मोड़ने के लिए कुछ

महत्वपूर्ण उपाय प्रथम योजना काल में ही किए जा चुके हैं। इम्पीरियल बैंक आफ इंडिया देश का सबसे बडा व्यापारी बैंक था। उसे स्टेट बैंक के नाम से एक सरकारी स्वामित्व और प्रबन्ध के बैंक में परिवर्तित किया जा चुका है ताकि देहातो में भी बैंकों द्वारा ऋण देने की पद्धति का विस्तार हो सके। रिजर्व बैंक आफ इंडिया न केवल मुद्रा, ऋण और विदेशी विनिमय के क्षेत्र में नियन्त्रण और नियमन के कर्तव्यों का पालन करता है, अपितु ऋण देने-लेने वाली सहकारी संस्थाओं के विकास मे भी सहायता और सहयोग देता है। ग्राम ऋण सर्वेक्षण समिति ने देहातों में ऋण-व्यवस्था का पुनर्गठन करने के लिए जो सिफारिशें की थी उन्हे रिजर्व बैंक और सरकार के नेतृत्व में कार्यान्वित किया जा रहा है। देहातो में सर्वत्र उचित दर पर ऋण मिल सकने की व्यवस्था करने का काम बहुत बड़ा है। परन्तु पुनर्गठन के नए सुझावों में यह कार्य सहकारी सस्थाओं और रिजर्व बैंक तथा सरकार के सम्मिलित प्रयत्नो द्वारा करने का एक कार्यक्रम बनाया गया है। उससे शीघ्र उन्नति करना सम्भव हो सकेगा।

३७. औद्योगिक क्षेत्र मे, औद्योगिक वित्त निगम (इंडस्ट्रियल फाइनेंस कार्पोरेशन) और औद्योगिक ऋण और विनियोग निगम (इंडस्ट्रियल क्रेडिट एण्ड इनवेस्टमेंट कार्पोरेशन) का संगठन योजना के निजी क्षेत्र की विशेष आवश्यकताएं पूरी करने के लिए किया गया है। इसके अतिरिक्त सरकार ने राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम का संगठन इसलिए किया है कि वह औद्योगिक विकास और उन्नति का कार्य स्वयं नई दिशाओं में कर सके। छोटे उद्योगों की सहायता करने और उन्हें बढावा देने के लिए विशेष संस्थाओं की आवश्यकता है, और यह कार्य राज्य वित्त निगम (स्टेट फाइनेंस कार्पोरेशन) और केन्द्रीय लघु उद्योग निगम (सेंट्रल स्माल इंडस्ट्रीज़ कार्पोरेशन) का संगठन करके आरम्भ किया जा चुका है। सम्भव है कि आगे चलकर ऋण-व्यवस्था का और अधिक विकास करने के लिए ऐसी संस्थाएं संगठित करने की भी आवश्यकता हो जो कि एक नए व सुगठित पूजी-बाजार के केन्द्र का काम दे सकें, क्योंकि इस समय कम्पनियों मे प्रचलित मैनेजिंग एजेंसी की प्रथा धीरे-धीरे कम होती जाएगी। हाल में, जीवन बीमे का राष्ट्रीयकरण भी इसीलिए किया गया है कि जनता में बचत करने की प्रवृत्ति बढ़ाने और उससे प्राप्त धन का प्रवाह योजना की आवश्यकताओ के अनुसार नई दिशाओं में मोड़ने के लिए सरकार को एक नवीन और प्रबल साधन मिल जाए।

३८. संक्षेप में विकास के कार्यों के लिए योजना के उद्देश्यों और प्राथमिकताओं के अनुसार आवश्यक यह है कि आर्थिक और सामाजिक नीतियों को एक सूत्र में बांधकर रखा जाए। इसके लिए जो उपाय प्रयोग में लाए जाएंगे, उन्हें समय-समय पर आवश्यकतानुसार बदलना होगा। कहीं तो वित्तीय अथवा मूल्य-नियन्त्रण के साधनों का प्रयोग किया जाएगा, कहीं सफलता लाइसेंस देने की पद्धति से मिलेगी और कहीं लाभ की सीमा निश्चित कर देने, दुर्लभ कच्चे माल का राशन कर देने अथवा इसी प्रकार के अन्य नियन्त्रण लागू कर देने की आवश्यकता होगी। नई कम्पनिया खोलने (निजी पूजी लगाने) की अनुमति देना, विदेशी मुद्रा के प्रयोग को नियंत्रित करना, नए कार्यों की आवश्यकतानुसार करों में हेर-फेर करना, जिन्हें पात्र समझा जाए उन्हें वित्तीय सहायता देना, और व्यापारिक, वित्तीय तथा औद्योगिक संस्थाओं का नियन्त्रण तथा मार्गदर्शन करना—ये सब योजना बनाने के माने हुए अंग हैं। 'योजना' नाम ही उस प्रयत्न का है जो लोगों के स्वेच्छा से किए हुए अनियमित और असंगठित प्रयत्नों के फलों को समृद्ध करने के लिए किया जाता है। इसके लिए नियन्त्रण

के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए ऐसे उपाय करने पडते है कि आवश्यक साधन अवश्य उपलब्ध हो जाएं और जनता उन्हें अपनी दैनिक आवश्यकताओ पर व्यय न कर डाले । यह भी आवश्यक होता है कि साधनों के सग्रह के लिए जो स्पष्ट कष्ट उठाया जाए उसका बोझ यथाशक्ति सब पर समान रूप से पड़े । योजना के लिए साधनों के प्रयोग का निश्चय करते हुए और आर्थिक तथा सामाजिक लक्ष्यो की सुगमतापूर्वक संतुलित पूर्ति करने के लिए यह आवश्यक है कि योजना को कार्यान्वित करने वालो के हाथ में ऐसे अधिकार या उपाय रहे कि वे उनका उपयोग विद्यमान संगठन में रहकर कर सकें । परन्तु साथ ही, इस सगठन को भी बदलते रहना चाहिए जिससे कि अभीष्ट सुधारो और नियन्त्रणों को इस सगठन पर विशेष रूप से न लादना पड़े, और वे स्वयमेव इसके अंग बन जाएं ।

परिशिष्ट

भारत सरकार

औद्योगिक नीति का प्रस्ताव

नई दिल्ली, ३० अप्रैल, १९५६

सं० ९१/सी एफ/४८—औद्योगिक क्षेत्र में भारत सरकार जिस नीति पर चलना चाहती है उसका उल्लेख उसने अपने ६ अप्रैल, १९४८ के प्रस्ताव में कर दिया था। उसमें, देश की अर्थ-व्यवस्था के लिए उत्पादन में निरन्तर वृद्धि करते रहने का और धन के समान वितरण का महत्व बतलाकर कहा गया था कि उद्योगों की उन्नति में सरकार को अधिकाधिक और सक्रिय भाग लेते रहना चाहिए। उसमें यह भी कहा गया था कि शस्त्रास्त्र, गोला-बारूद, अणु-शक्ति, और रेल परिवहन के उद्योगों पर तो सरकार का एकाधिकार रहेगा ही, इनके अतिरिक्त भी छः मूल उद्योगों में नए कारखाने खोलने का उत्तरदायित्व केवल सरकार का रहेगा, परन्तु यदि राष्ट्रीय हित की दृष्टि से सरकार उचित समझेगी तो जहा आवश्यक होगा वहा वह निजी उद्योगपतियों की भी सहायता ले सकेगी। शेष सारा औद्योगिक क्षेत्र निजी उद्योगपतियों के लिए खुला छोड़कर यह स्पष्ट कर दिया गया है कि इस क्षेत्र मे भी सरकार क्रमशः अधिकाधिक भाग लेती जाएगी।

२. औद्योगिक नीति के सम्बन्ध मे यह घोषणा किए हुए आठ वर्ष बीत चुके है। तब से अब तक भारत में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन और विकास कार्य हो चुके है। भारत का संविधान बनाकर उसमें अनेक मौलिक अधिकारों की गारण्टी दी जा चुकी है और राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्त निश्चित किए जा चुके है। आयोजन का कार्य संगठित आधार पर आरम्भ करके प्रथम पंचवर्षीय योजना हाल में ही पूरी की जा चुकी है। संसद, समाज के समाजवादी आदर्श को अपनी सामाजिक और आर्थिक नीति के लक्ष्य के रूप में अपना चुकी है। विकास की दिशा में इन महत्वपूर्ण प्रगतियों के कारण आवश्यक हो गया है कि औद्योगिक नीति की पुनः घोषणा कर दी जाए। शीघ्र ही द्वितीय पंचवर्षीय योजना देश के सामने प्रस्तुत की जाने वाली है। इसलिए उक्त घोषणा की आवश्यकता और भी बढ़ गई है। इस नीति का निर्धारण करते हुए संविधान में निश्चित किए गए सिद्धान्तों, समाजवाद के उद्देश्य और गत वर्षों में प्राप्त अनुभवों को ध्यान में रखना चाहिए।

३. भारत के संविधान की प्रस्तावना में घोषणा की गई है कि इसका उद्देश्य अपने सब नागरिकों के लिए—

> "सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय;
> विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
> और उपासना की स्वतन्त्रता;
> प्रतिष्ठा और अवसर की समता;
> प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की
एकता सुनिश्चित करने वाली **बन्धुता"**

प्राप्त करना है ।

सविधान में राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तों में बतलाया गया है कि—

"राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओ को अनुप्राणित करे, भरसक कार्य-साधक रूप मे स्थापना और सरक्षण करके लोक-कल्याण की उन्नति का प्रयास करेगा ।"

इसके साथ ही—

"राज्य अपनी नीति का विशेषतया ऐसा संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से—

(क) समान रूप से नर और नारी सभी नागरिकों को जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो;

(ख) समुदाय की भौतिक सम्पत्ति का स्वामित्व और नियन्त्रण इस प्रकार बटा हो कि जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;

(ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले कि जिससे धन और उत्पादन साधनो का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी केन्द्र न हो;

(घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो,

(ङ) श्रमिक पुरुषो और स्त्रियों के स्वास्थ्य और शक्ति तथा बालको की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो तथा आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों मे न जाना पडे जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों,

(च) शशव और किशोर अवस्था का शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से संरक्षण हो ।"

४. संसद ने दिसम्बर १९५४ में जब अपनी सामाजिक और आर्थिक नीति का लक्ष्य समाज का समाजवादी आदर्श स्वीकृत किया, तब इन आधारभूत और सामान्य सिद्धान्तो को और भी अधिक स्पष्ट कर दिया था । इसलिए, अन्य नीतियों के समान औद्योगिक नीति भी इन्ही सिद्धान्तों और निदेशों के अनुसार निर्धारित की जानी चाहिए ।

५ इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए यह आवश्यक है कि आर्थिक विकास की गति तीव्र करके औद्योगिक उन्नति शीघ्र से शीघ्र की जाए, विशेषत: भारी और मशीनें बनाने वाले उद्योगो का विकास किया जाए, सरकारी क्षेत्रो को शीघ्र बढ़ाया जाए और सहकारिता के क्षेत्र का अधिकाधिक विस्तार किया जाए । इनसे ही जीविकोपार्जन के लाभदायक अवसर बढने और साधारण जनता के जीवन का मान ऊंचा होने तथा रोजगार की परिस्थितियां सुधरने की नीव पड़ती है । साथ ही, यह भी आवश्यक है कि लोगों की आय और सम्पत्ति में आज जो विषमता है वह तत्काल कम की जाए, जिससे कि किसी का निजी एकाधिकार न होने पाए और विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों की प्रभुता कुछ थोड़े-से व्यक्तियो के हाथ मे केन्द्रित न हो जाए । इसलिए, नए औद्योगिक कारखाने खोलने और परिवहन की सुविधाएं बढ़ाने का उत्तरदायित्व सरकार निरन्तर अधिकाधिक मात्रा मे सीधे अपने ऊपर लेती चली जाएगी । व्यापार को भी सरकार

अधिकाधिक परिमाण में अपने हाथ में करती जाएगी। परन्तु देश की अर्थ-व्यवस्था का विस्तार होते जाने के साथ-साथ सुनियोजित राष्ट्रीय विकास के अभिकरण के रूप में निजी क्षेत्र को भी बढ़ने और फलने-फूलने का अवसर दिया जाएगा। जहा भी सम्भव हो वहा सहकारिता के सिद्धान्त पर अमल करना चाहिए और निजी उद्योगों का विकास अधिकाधिक मात्रा में इसी आधार पर करना चाहिए।

६. समाज के समाजवादी आदर्श को राष्ट्रीय लक्ष्य के रूप में अपना लिये जाने और विकास का कार्य शीघ्रता से तथा सुनियोजित रूप में करना आवश्यक होने के कारण यह उचित है कि आधारभूत और सामरिक महत्व के और सार्वजनिक उपयोगिता सेवाओं के सब उद्योगों को सरकारी क्षेत्र में रखा जाए। जो उद्योग आधारभूत हैं और जिनमें इतनी अधिक पूंजी लगानी पड़ती है कि उसे आज की परिस्थितियों में केवल सरकार ही लगा सकती है, उन्हें भी सरकारी क्षेत्र में रखना पड़ेगा। इसलिए, उद्योगों के बहुत बड़े क्षेत्र में भावी विकास का उत्तरदायित्व सरकार को सीधे अपने ऊपर लेना पड़ेगा। फिर भी कुछ कारण ऐसे हैं, जिनसे सरकार को अपना क्षेत्र अभी सीमित करना और यह निश्चय करना पड़ता है कि वह किन उद्योगों के विकास का उत्तरदायित्व तो एकमात्र अपने ऊपर लेगी और किन के विकास में अपना प्रमुख भाग रखेगी। इस समस्या के सब पहलुओं पर योजना आयोग के साथ विचार करने के पश्चात भारत सरकार ने उद्योगों को, उनमें से प्रत्येक में सरकार का क्या भाग रहेगा इस दृष्टि से तीन वर्गों में बांटने का निश्चय किया है। ये तीनों वर्ग अनिवार्य रूप से किसी हद तक एक-दूसरे के साथ सटे होंगे। इनकी सीमा कठोरतापूर्वक निश्चित कर देने से तो अभीष्ट उद्देश्य की ही हानि हो जाएगी। परन्तु फिर भी आधारभूत सिद्धान्तों और लक्ष्यों को सदा ध्यान में रखना और आगे बतलाए गए साधारण निदेशों का पालन करना ही पड़ेगा। इस प्रसंग में यह भी स्मरण रखना चाहिए कि सरकार किसी भी औद्योगिक वस्तु का उत्पादन अपने हाथ में ले लेने के लिए सदा स्वतन्त्र रहेगी।

७. प्रथम वर्ग में वे उद्योग रहेंगे जिनके भावी विकास का उत्तरदायित्व एकमात्र सरकार का रहेगा। द्वितीय वर्ग में वे उद्योग रहेंगे जिन पर क्रमश: और अधिकाधिक मात्रा में सरकार का स्वामित्व होता जाएगा और इसलिए उनके नए कारखाने खोलने में पहल सरकार करेगी, परन्तु उनकी पूर्ति में सरकार निजी उद्योगपतियों से भी सहायता मिलने की आशा रखेगी। तृतीय वर्ग में शेष सब उद्योग रहेंगे और उनका भी विकास साधारणतया निजी उद्योगपतियों के प्रयत्न और पहल के लिए छोड़ दिया जाएगा।

८. प्रथम वर्ग के उद्योगों की गणना इस प्रस्ताव की अनुसूची 'क' में कर दी गई है। इन उद्योगों में निजी उद्योगपतियों के जिन कारखानों की मंजूरी सरकार पहले से दे चुकी है, उनके अतिरिक्त सब नए कारखाने सरकार ही खोलेगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि जो निजी कारखाने पहले से मौजूद हैं उनका विस्तार नहीं होने दिया जाएगा, अथवा नए कारखाने खोलने में राष्ट्रीय लाभ के लिए वैसा करना आवश्यक होने पर भी सरकार निजी उद्योग-पतियों की सहायता नहीं लेगी। परन्तु रेल और हवाई परिवहन, शस्त्रास्त्र तथा गोला-बारूद और अणु-शक्ति का विकास सरकारी एकाधिकार में ही किया जाएगा। जब कभी निजी सहयोग की आवश्यकता होगी तब सरकार पूंजी में अपना बड़ा भाग रखकर अथवा अन्य प्रकार ऐसा प्रबन्ध कर लेगी कि नीति निर्धारित करने और कारखाने के प्रबन्ध को नियंत्रित करने का आवश्यक अधिकार उसके अपने हाथ में रहे।

९. द्वितीय वर्ग के उद्योगो की परिगणना अनुसूची 'ख' में कर दी गई है। इनके भावी विकास की गति को तीव्र करने के लिए सरकार इनके नए कारखाने अधिकाधिक सख्या में खोलेगी। साथ ही, इस क्षेत्र में निजी उद्योगपतियों को भी स्वतन्त्र रूप से अथवा सरकार के सहयोग से आगे बढने का अवसर दिया जाएगा।

१०. शेष सब उद्योग तृतीय वर्ग मे रहेंगे, और आशा है कि उनका विकास साधारणतया निजी प्रयत्न और पहल द्वारा ही हो सकेगा, परन्तु इस वर्ग में भी सरकार को कोई नया कारखाना शुरू कर सकने की स्वतन्त्रता रहेगी। सरकार की नीति यह रहेगी कि वह इन उद्योगो के विकास मे भावी पचवर्षीय योजनाओ में निश्चित कार्यक्रमो के अनुसार परिवहन, बिजली तथा अन्य इसी प्रकार की सुविधाएं देकर और उचित वित्तीय नीतियो तथा अन्य उपायों के द्वारा निजी उद्योगपतियों को सहायता और बढावा देती रहे। सरकार इन उद्योगों को वित्तीय सहायता देने वाली सस्थाएं भी संगठित करती रहेगी और जो संस्थाए औद्योगिक या खेती के काम करने के लिए सहकारिता के आधार पर सगठित की जाएंगी, उन्हें विशेष सहायता दी जाएगी। जहां ठीक समझा जाएगा वहा सरकार निजी उद्योगों को वित्तीय सहायता भी देगी। सरकार पसन्द यह करेगी कि यह सहायता पूजी में भाग लेकर दी जाए, विशेषत' जब देय राशि की मात्रा बड़ी हो। परन्तु यह सहायता अशत डिबेन्चर पूजी के रूप मे भी दी जा सकती है।

११. निजी उद्योगपतियो के कारखानो को सरकार की सामाजिक और आर्थिक नीतियों के दायरे मे रह कर चलना और औद्योगिक (विकास तथा नियमन) अधिनियम तथा इसी प्रकार के अन्य कानूनो के नियमोपनियमो का पालन करना पड़ेगा। परन्तु भारत सरकार मानती है कि इन कारखानो को यथासम्भव अधिकतम स्वतन्त्रता से फलने-फूलने देना चाहिए। हा, इतनी शर्त अवश्य रहनी चाहिए कि वे वैसा करते हुए राष्ट्रीय योजना के लक्ष्यों और उद्देश्यो का उल्लघन न करें। यदि किसी उद्योग मे निजी और सरकारी दोनों प्रकार के कारखाने होगे, तो सरकार की नीति दोनो मे बिना कोई भेदभाव किए न्यायपूर्ण व्यवहार करने की रहेगी।

१२ उद्योगो को तीन वर्गों मे बाट देने का अर्थ यह नहीं है कि उन्हे एक-दूसरे से बिल्कुल पृथक व स्वतन्त्र भागों मे बांट दिया गया हो। तीनो भागों मे, अनिवार्य रूप से एक-दूसरे के कार्यक्षेत्र की कुछ पुनरावृत्ति तो होगी ही, निजी और सरकारी क्षेत्रो में यथाशक्ति सहयोग और संगति रखने का भी यत्न किया जाएगा। जब कभी योजना के किसी प्रयोजन से या अन्य किसी महत्वपूर्ण कारण से आवश्यक होगा तब सरकार को अनुसूची 'क' और 'ख' में नहीं गिनाए गए किसी उद्योग में भी कारखाना खोलने की स्वतन्त्रता रहेगी। उचित होने पर निजी कारखानो को भी अपनी आवश्यकताए पूरी करने के लिए या सम्बद्ध उत्पादन के रूप में ऐसी वस्तु तैयार करने की इजाजत दी जा सकेगी जो कि अनुसूची 'क' मे परिगणित की जा चुकी है। साधारणतया छोटी निजी इकाइयों को छोटे जहाज या हलकी नौकाएं बनाने, स्थानीय आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए बिजली तैयार करने और छोटे पैमाने पर खानों की खुदाई करने आदि से रोका नही जाएगा। इसके अतिरिक्त सम्भव है कि बडे सरकारी कारखाने हलके पुर्जों आदि की अपनी कुछ आवश्यकताएं निजी कारखानो से पूरी करा ले, और निजी कारखाने अपनी बहुत-सी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सरकारी कारखानों के भरोसे रहें। यही सिद्धान्त इससे भी अधिक बल के साथ बड़े और छोटे उद्योगों के परस्पर सम्बन्धो पर लागू होगा।

१३. इस प्रसंग में भारत सरकार, राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विकास में ग्रामोद्योगों, घरेलू और छोटे उद्योगों के भाग पर विशेष बल देना चाहती है। कुछेक ऐसी समस्याओं का हल इन उद्योगों के द्वारा विशेष सुगमतापूर्वक किया जा सकता है जिन्हें हल करने की तुरन्त ही आवश्यकता होती है। इनमें बहुत-से लोगों को तुरन्त काम मिल सकता है। इनमें राष्ट्रीय आय का समान वितरण करने की विधि सुगमता से निकाली जा सकती है और जो पूंजी तथा कौशल अन्य प्रकार बेकार पड़े रह जाते हैं, उनका उपयोग इनमें सुगमता और सफलता-पूर्वक किया जा सकता है। नगरों का विस्तार बिना योजना के होने से जो समस्याएं खड़ी हो जाती है, औद्योगिक उत्पादन के छोटे केन्द्र खोलकर उनसे बचा जा सकता है।

१४ सरकार की नीति ग्रामोद्योगों, घरेलू और छोटे उद्योगों को सहारा देने की है। इसकी सफलता के लिए वह बड़े कारखानों में उत्पादन की मात्रा सीमित करती है, भिन्नक कर लगाती है और प्रत्यक्ष सहायता भी देती हैं। जब आवश्यकता हो, तब ये उपाय करने के साथ-साथ सरकार की नीति का लक्ष्य यह रहेगा कि उद्योगों का विकेन्द्रीकृत भाग इतना समर्थ हो जाए कि वह अपने पावों पर खड़ा हो जाए और उसका विकास बड़े उद्योगों के साथ मिलकर हो। इसलिए सरकार ऐसे उपाय करेगी जिनसे छोटे उत्पादकों का प्रतिस्पर्धा में खड़े होने का बल बढ सके। इसके लिए उत्पादन की विधियों को सुधारना और आधुनिक बनाना नितान्त आवश्यक है। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि जो परिवर्तन किए जाएं उनके कारण कारीगरों में बेकारी न फैले। छोटे पैमाने के उद्योगों के उत्पादकों की बड़ी कठिनाइयों में पूजी और यन्त्रों की कमी, ठीक स्थान का न मिल सकना और मरम्मत की सुविधाओं का न होना मुख्य है। इन कमियों को दूर करने के लिए औद्योगिक केन्द्रों की और देहातों में पंचायती कारखानों की स्थापना की जाने लगी है। देहातों में बिजली पहुचाने और देहाती कारीगर उसका जो मूल्य दे सकें, उस पर उसे देने से भी उन्हें बड़ी सहायता मिलेगी। औद्योगिक सहकारी संस्थाएं संगठित करने से भी छोटे उद्योगों को काफी मदद पहुंचेगी। सरकार को इन सहकारी संस्थाओं की सब प्रकार से सहायता करनी चाहिए और ग्रामोद्योगों, घरेलू तथा छोटे उद्योगों के विकास का निरन्तर ध्यान रखना चाहिए।

१५. औद्योगिक उन्नति का लाभ सारे देश को पहुंचे, इसके लिए आवश्यक है कि विभिन्न प्रदेशों में विकास के स्तर का अन्तर क्रमशः कम किया जाता रहे। देश के विभिन्न भागों में उद्योगों के अभाव के कारण प्रायः कच्चे माल का या अन्य प्राकृतिक साधनों का अभाव आदि रहता है। कुछेक प्रदेशों में उद्योगों के अधिक केन्द्रित हो जाने का कारण भी वहा बिजली और पानी की सुलभता और परिवहन की सुविधाओं का विकास है। राष्ट्रीय आयोजन का एक उद्देश्य यह भी है कि जो स्थान अब तक औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं अथवा जहां रोजगार की अधिक सुविधाएं देने की आवश्यकता है, वे यदि अन्य दृष्टियों से उपयुक्त हों तो वहां ये सब सुविधाएं दी जाएं। सारे देश के रहन-सहन का दर्जा ऊंचा तभी उठाया जा सकता है जब कि उद्योगों और कृषि की अर्थ-व्यवस्थाओं का विकास सब प्रदेशों में संगत और संतुलित रूप में किया जाए।

१६. औद्योगिक विकास के इस कार्यक्रम की पूर्ति के लिए टेकनीकल और प्रबन्ध के कार्य में निपुण व्यक्तियों की देश में बड़ी संख्या में तलाश करनी पड़ेगी। सरकारी उद्योगों के विस्तार और ग्राम तथा छोटे उद्योगों के विकास की शीघ्रता से बढ़ती हुई ये आवश्यकताएं पूरी करने के लिए सरकारी नौकरियों के प्राविधिक तथा प्रबंध संवर्ग बनाए जा रहे हैं। ऐसे उपाय भी

किए जा रहे हैं जिनसे प्रबन्ध के उच्च स्तरो पर नियुक्त व्यक्तियो की कमी दूर हो जाए ताकि सरकारी और निजी उद्योगो मे लोगों को बड़ी सख्या में अप्रेटिस रखकर काम सिखलाया जा सके, और विश्वविद्यालयों तथा सस्थाओ मे भी व्यापारिक प्रबन्ध का शिक्षण दिया जा सके।

१७. जो लोग उद्योगो में लगे हुए है उनको उचित सुख-सुविधाए और प्रोत्साहन देने की भी आवश्यकता है। कार्यकर्ताओं के रहन-सहन और काम करने की अवस्थाओं मे सुधार किया जाना और उनकी कार्य-कुशलता का स्तर ऊंचा उठाया जाना चाहिए। मालिकों और मजदूरों में झगडों का न होना औद्योगिक उन्नति की एक परम आवश्यकता है। समाजवादी जनतन्त्र मे श्रमिक भी विकास कार्यक्रम मे साझीदार होते है; और उन्हे इसमे उत्साहपूर्वक भाग लेना चाहिए। कारखानों के मालिकों और मजदूरो के पारस्परिक प्रबन्ध तय करने के लिए कुछ कानून बनाए जा चुके हैं और दोनों अपने-अपने कर्तव्यों को अधिकाधिक समझकर सब मामलों पर उदार दृष्टि से विचार करने के अभ्यासी होते जा रहे है। दोनों को मिलकर विचार करना, और जहा कही सम्भव हो वहा प्रबन्ध मे श्रमिकों और कुशल कारीगरो को भी हिस्सा देना चाहिए। इस दिशा मे सरकारी कारखानों को आदर्श उपस्थित करना होगा।

१८. अब चूकि उद्योग और व्यापार मे सरकार का भाग बढता चला जाएगा, इसलिए इनका प्रबन्ध कैसे करना चाहिए, इस प्रश्न का महत्व भी बहुत बढ़ जाएगा। इन कार्यों की सफलता के लिए यह आवश्यक होगा कि निर्णय शीघ्र किए जाए और लोग उत्तरदायित्व लेने को तैयार हो। इस कारण जहा कही सम्भव हो, वहा अधिकार को बाट देना और प्रबन्ध को व्यापारिक ढग से करना चाहिए। आशा है कि सरकारी कारोबारो से सरकार की आमदनी बढ जाएगी और नए-नए क्षेत्रो में विकास के लिए साधन उपलब्ध हो सकेंगे। परन्तु कभी-कभी इन कारोबारो मे नुकसान का भी सामना करना पड़ेगा। सरकारी कारोबारो की सफलता उनके समस्त परिणामो से जांचनी चाहिए; और उन्हें चलाने वालों को अधिकतम स्वतन्त्रता रहनी चाहिए।

१९ १९४८ के औद्योगिक नीति के प्रस्ताव मे कई अन्य विषयों पर भी विचार किया गया था। उनमे से कइयों के लिए तो आवश्यक कानून बन चुके है और कइयों पर सरकारी नीति विषयक घोषणाए की जा चुकी है। उद्योगो के विषय में केन्द्र और राज्य सरकारों की जिम्मेदारियों का विभाजन औद्योगिक (विकास तथा नियमन) अधिनियम द्वारा किया जा चुका है। विदेशी पूजी के विषय मे सरकारी नीति का प्रतिपादन स्वय प्रधान मत्री ६ अप्रैल, १९४९ को संसद मे अपने वक्तव्य द्वारा कर चुके है। इस कारण इस प्रस्ताव मे इन विषयों की चर्चा करने की आवश्यकता नही रही।

२० भारत सरकार को आशा है कि उसकी औद्योगिक नीति की इस पुनर्घोषणा का जनता के सब वर्ग समर्थन करेंगे और इससे देश की औद्योगिक उन्नति द्रुत गति से करने में सहायता मिलेगी।

अनुसूची 'क'

१. शस्त्रास्त्र और गोला-बारूद और प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक अन्य सामग्री।
२. अणुशक्ति।
३. लोहा और इस्पात।

४. लोहे और इस्पात की ढली हुई और कूट-पीटकर बनाई हुई भारी वस्तुएं।

५. लोहा और इस्पात तैयार करने, खानों का काम करने, मशीनों के पुर्जे बनाने के और केन्द्रीय सरकार द्वारा विशेष रूप से निर्दिष्ट अन्य भारी उद्योगों के लिए आवश्यक यन्त्र और मशीनें।

६. बिजली के बड़े कारखाने, जिनमें पानी और भाप की ताकत से घूमने वाले बड़े टरबाइन भी शामिल हैं।

७. पत्थर का कोयला और लिगनाइट।

८. खनिज तेल।

९. खनिज लोहा, खनिज मेंगनीज, खनिज क्रोम, जिप्सम, गंधक, सोने और हीरे की खुदाई।

१०. तांबे, सीसे, जस्ते, टिन, मौलिब्डेनम और वौलफ्रेम की खुदाई और विधायन।

११. अणुशक्ति के उत्पादन और नियन्त्रण के लिए जारी की गई १९५३ की सरकारी आज्ञा की अनुसूची में लिखे हुए खनिज पदार्थ।

१२. वायुयान।

१३. वायु परिवहन।

१४. रेल परिवहन।

१५. जहाज निर्माण।

१६. टेलीफोन और टेलीफोन के तार और बेतार के यन्त्र (रेडियो सेटों को छोड़कर)

१७. बिजली का उत्पादन और वितरण।

अनुसूची 'ख'

१. १९४९ के "खनिज रियायत नियम" के अनुच्छेद ३ की परिभाषा में सम्मिलित "छोटे खनिजों" के अतिरिक्त अन्य खनिज वस्तुएं।

२. एल्यूमीनियम और ऐसी अन्य अलौह धातुएं, जो कि अनुसूची में सम्मिलित नहीं की गई।

३. मशीनों के पुर्जे।

४. लोहे के मेल की धातुएं, और पुर्जे बनाने का इस्पात।

५. औषधियां, रंग और प्लास्टिक निर्माण आदि जैसे रासायनिक उद्योगों के लिए आवश्यक बुनियादी और मध्यवर्ती रासायनिक द्रव्य।

६. एंटीबायोटिक्स (रोगाणुनाशक) और अन्य मूल औषधियां।

७. रासायनिक खाद।

८. कृत्रिम रबड़।

९. कोयले का कार्बनीकरण।

१०. रासायनिक लुगदी।

११. सड़क परिवहन।

१२. समुद्र परिवहन।

अध्याय ३

योजना की रूपरेखा

गत अध्याय में द्वितीय पचवर्षीय योजना के विस्तृत उद्देश्यो और उसकी विचारधारा पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय योजना का लक्ष्य है प्रथम योजना के समय आरम्भ की गई विकास की प्रक्रिया को आगे बढ़ाना और तीव्र करना। इस योजना के मुख्य कार्य तीन रहेगे राष्ट्रीय आय मे पांच वर्षों मे लगभग २५ प्रतिशत की वृद्धि कर देना; जीविकोपार्जन के अवसरों को इतना बढा देना कि जनसख्या में वृद्धि के कारण जो नए श्रमिक उत्पन्न हों वे सब काम में लग सके; और इतनी औद्योगिक प्रगति कर लेना कि आगामी योजनाओ के समय द्रुत गति से उन्नति करने के लिए जमीन तैयार हो जाए। एक प्रकार द्वितीय पंचवर्षीय योजना प्रथम योजना के समय में आरम्भ किए गए विकास कार्य को ही आगे बढाने का एक प्रयत्न है, परन्तु इसमे कार्यों की प्राथमिकता मे कुछ परिवर्तन अवश्य कर दिया गया है। दूसरी योजना मे औद्योगिक उन्नति पर, विशेषत भारी उद्योगो के विकास पर और माल की ढुलाई तथा यातायात जैसे उससे सम्बद्ध कार्यों पर विशेष बल दिया गया है। हम अपने सामाजिक सगठन के लिए समाजवादी ढग की समाज रचना के आदर्श को स्वीकार कर चुके है, इसलिए योजना के सार्वजनिक और निजी दोनो क्षेत्रो के लिए पूजी-विनियोग का जो क्रम प्रस्तावित किया गया है उसमे तो यह आदर्श कार्यान्वित होता हुआ दिखाई देगा ही, देहाती और शहरी जीवन मे जो परिवर्तन करने के प्रयत्न किए जाएगे उनमे भी इसका आभास मिलेगा। योजना के कार्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक होगा कि सरकारी और निजी दोनो क्षेत्र मिलकर प्रयत्न करें, परन्तु जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, सरकारी क्षेत्र को अत्यन्त महत्व-पूर्ण कार्य करना है।

योजना का व्यय और उसका विभाजन

२. केन्द्र और राज्य सरकारों के समस्त विकास कार्यों पर योजना के पाच वर्षों मे ४,८०० करोड रुपए व्यय होने का अन्दाजा लगाया गया है। विकास के मुख्य-मुख्य कार्यो मे इस व्यय का विभाजन इस प्रकार होगा :—

विकास के मुख्य-मुख्य कार्यों में योजना के व्यय का विभाजन

	प्रथम योजना		द्वितीय योजना	
	समस्त व्यय (करोड़ रुपयों मे)	प्रतिशत	समस्त व्यय (करोड रुपयों में)	प्रतिशत
१	२	३	४	५
१. कृषि और सामुदायिक विकास	३५७	१५ १	५६८	११ ८
(क) **कृषि**	२४१	१० २	३४१	७ १
कृषि के कार्यक्रम	१९७	८ ३	१७०	३·५

१	२	३	४	५
पशुपालन .	२२	१·०	५६	१·१
जगल . .	१०	०·४	४७	१·०
मछली पालन	४	०·२	१२	०·३
सहकारिता .	७	०·३	४७	१·०
विविध	१	..	६	०·२
(ख) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजनाएं	९०	३·८	२००	४·१
(ग) अन्य कार्य . .	२६	१·१	२७	०·६
ग्राम पंचायतें . ..	११	०·५	१२	०·३
स्थानीय विकास कार्य	१५	०·६	१५	०·३
२. सिंचाई और बिजली	६६१	२८·१	९१३	१९·०
सिंचाई	३८४	१६·३	३८१	७·९
बिजली	२६०	११·१	४२७	८·९
बाढ़-नियन्त्रण और तत्सम्बन्धी अन्वेषण आदि	१७	०·७	१०५	२·२
३. उद्योग और खानें	१७९	७·६	८९०	१८·५
बड़े और मध्यम उद्योग	१४८	६·३	६१७	१२·९
खानों का विकास	१	..	७३	१·५
ग्रामोद्योग और लघु उद्योग	३०	१·३	२००	४·१
४. परिवहन और संचार	५५७	२३·६	१,३८५	२८·९
रेलें	२६८	११·४	९००	१८·८
सड़कें	१३०	५·५	२४६	५·१
सड़क परिवहन	१२	०·५	१७	०·४
बन्दर और बन्दरगाह	३४	१·४	४५	०·९
जहाजरानी	२६	१·१	४८	१·०
नदियों और नहरों द्वारा परिवहन ...	...	...	३	०·१
नागरिक वायु परिवहन	२४	१·०	४३	०·९
अन्य परिवहन	३	०·१	७	०·१
डाक और तार	५०	२·२	६३	१·३
अन्य संचार	५	०·२	४	०·१
प्रसारण	५	०·२	९	०·२
५. सामाजिक सेवाएं	५३३	२२·६	९४५	१९·७
शिक्षा	१६४	७·०	३०७	६·४
स्वास्थ्य	१४०	५·९	२७४	५·७
आवास	४९	२·१	१२०	२·५

१	२	३	४	५
पिछड़े वर्गों के लिए कल्याण कार्य	३२	१·३	९१	१·९
समाज कल्याण	५	०·२	२९	०·६
श्रम और श्रम कल्याण	७	०·३	२९	०·६
पुनर्वास	१३६	५·८	९०	१·९
शिक्षित बेरोजगारों के लिए विशेष योजनाएं			५	०·१
६. विविध	६९	३·०	९९	२·१
योग	२,३५६	१००·०	४,८००	१००·०

ऊपर दिखाए गए समस्त व्यय में स्थानीय संस्थाओं द्वारा विकास कार्यों पर किए जाने वाले सब व्यय सम्मिलित नहीं हैं। उन संस्थाओं के कार्यक्रमों का केवल वह व्यय इस विवरण में सम्मिलित है जो राज्य सरकारों द्वारा किया जाएगा। इस विवरण मे उन कार्यों को भी सम्मिलित नही किया गया है जो स्थानीय जनता अपने-अपने स्थान पर नकद धन देकर या अपने शारीरिक श्रम के द्वारा पूरे करेगी। इन कार्यों के कारण योजना के समस्त व्यय म बहुत अन्तर भले ही न हो, परन्तु इनका महत्व सम्बद्ध स्थानों पर पूजी-विनियोग की दृष्टि से बहुत अधिक है।

३ ऊपर की तालिका मे विकास के मुख्य शीर्षकों पर होने वाले व्यय का जो विवरण दिया गया है, उससे यह प्रकट हो जाता है कि प्रथम और द्वितीय योजनाओं में, कार्यों की प्राथमिकताओं मे कितना अन्तर हो गया है। द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र मे उद्योगों और खानों पर लगभग १९ प्रतिशत व्यय किया जाएगा। इसकी तुलना में प्रथम योजना मे यह व्यय केवल ८ प्रतिशत किया गया था। यदि तुलना को छोड़कर, स्वतन्त्र रूप से देखें तो ज्ञात होगा कि उद्योगों और खानो का व्यय बहुत—लगभग ४०० प्रतिशत—बढा दिया गया है। प्रथम योजना में इन दोनों कार्यों के लिए जितना धन रखा गया था, वस्तुत व्यय उसके ५० प्रतिशत से भी कम किया गया था। इस प्रकार द्वितीय योजना मे इन दोनों कार्यों पर किये जाने वाले व्यय मे वृद्धि उससे भी अधिक होगी जो कि नियोजित व्यय की तुलना से प्रकट होती है। ८९० करोड रुपये के समस्त नियोजित व्यय मे से ६९० करोड रुपए बड़े उद्योगों और खानो पर, और २०० करोड रुपए देहाती और छोटे उद्योगों पर व्यय किए जाएगे। खानो के विकास के लिए जो ७३ करोड़ रुपए का व्यय तालिका मे दिखाया गया है, वह मुख्यत कोयले, कोयला धोने के कारखानो, खनिज तेल की खोज और भूगर्भ सर्वेक्षण और खान कार्यालय पर किया जाएगा। खान से लोहा खोदने का व्यय, लोहे तथा इस्पात कार्यक्रमों के लिए निर्धारित धनराशि में सम्मिलित कर लिया गया है।

४ परिवहन और सचार पर होने वाला व्यय द्वितीय योजना के समस्त व्यय का २९ प्रतिशत है। रेलों पर प्रथम योजना काल में लगभग ११ प्रतिशत व्यय किया गया था। उसकी तुलना मे द्वितीय योजना के काल मे यह व्यय १९ प्रतिशत किया जाएगा। परिवहन और संचार के अन्य कार्यों पर कुल व्यय का जो अनुपात दूसरी योजना मे खर्च होगा, वह प्रथम योजना के अनुपात की तुलना में कुछ कम है, परन्तु स्वतन्त्र रूप से यह व्यय भी पहले की अपेक्षा बढ़ा दिया गया है।

५. केन्द्र और राज्य सरकारों के समस्त व्यय का कोई १९ प्रतिशत सिंचाई और बिजली पर व्यय किया जाएगा। इसके अतिरिक्त १२ प्रतिशत कृषि और सामुदायिक विकास कार्यों पर व्यय होगा। इन दोनों मदों के समस्त व्यय का योग १,४८१ करोड़ रुपए होता है। यद्यपि द्वितीय योजना में खेती की अपेक्षा उद्योग को अधिक प्रधानता दी गई है, तथापि खाद्यान्न और अन्य कच्चे माल का उत्पादन बढ़ाने पर न केवल द्वितीय योजना काल में, अपितु उसके पश्चात भी कई वर्षों तक विशेष ध्यान देना पड़ेगा। उद्योगों में उन्नति और आय में वृद्धि होने के साथ-साथ अन्न और कच्चे माल की माग का बढ़ना निश्चित है। इसलिए खेती की पैदावार बढ़ाने के प्रयत्न में ढील बिल्कुल नहीं दी जा सकती। सिंचाई और बाढ़-नियन्त्रण के लिए ४८६ करोड़ रुपए की जो राशि रखी गई है, उसमें से २०९ करोड़ रुपए तो प्रथम योजना काल में आरम्भ किए हुए कार्यों पर ही व्यय किए जाएंगे और शेष २७७ करोड़ रुपए नये कामों पर व्यय होंगे। बिजली के उत्पादन में वृद्धि कृषि और उद्योग दोनों के लिए विशेष आवश्यक है। इस कार्य के लिए जो ४२७ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, उसमें से मोटे हिसाब से १६० करोड़ रुपए प्रथम योजना के समय आरम्भ किए गए कार्यों पर, और शेष २६७ करोड़ रुपए नए कार्यों पर व्यय किये जाएंगे। सिंचाई और बिजली का जो कार्यक्रम बनाया गया है, उसे आगामी पन्द्रह वर्ष के एक बड़े कार्यक्रम के भाग के रूप में तैयार किया गया है। उक्त अवधि में सरकारी प्रबन्ध के द्वारा सींची जाने वाली भूमि को दुगुना और बिजली के परिमाण को छः गुना कर देने का विचार है।

६. द्वितीय योजना में सामाजिक सेवाओं पर समस्त व्यय का लगभग २० प्रतिशत व्यय किया जाएगा। इसकी तुलना में, इन सेवाओं पर प्रथम योजना में २३ प्रतिशत व्यय हुआ था। सामाजिक सेवाओं पर होने वाले समस्त व्यय के प्रतिशत की दृष्टि से शिक्षण, स्वास्थ्य और आवास पर का व्यय प्रायः उतना ही है, जितना कि प्रथम योजना में था, परन्तु स्वतन्त्र रूप से ये व्यय बहुत काफी बढ़ गए हैं। शिक्षा पर व्यय करने के लिए द्वितीय योजना में ३०७ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है जो प्रथम योजना की राशि के दुगुने से कुछ ही कम है। यही बात स्वास्थ्य के व्यय पर लागू होती है। यह स्मरण रखना चाहिए कि द्वितीय योजना में सामाजिक सेवाओं पर उतना ही व्यय किया जाएगा, जितना कि प्रथम योजना के अन्त तक पहुंचे हुए विकास के स्तर को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक समझा गया है। यदि इसमें उस व्यय को भी सम्मिलित कर लिया जाए, जो द्वितीय योजना में तो नहीं रखा गया, परन्तु इन सेवाओं पर व्यय करने का विचार है, तो सामाजिक सेवाओं के व्यय का परिमाण काफी बढ़ जाएगा।

७. द्वितीय योजना के ४,८०० करोड़ रुपए के समस्त विकास व्यय में से २,५५९ करोड़ रुपए तो केन्द्र करेगा और शेष २,२४१ करोड़ रुपए सब राज्य सरकारें करेंगी। राज्य सरकारें पृथक-पृथक कितना व्यय करेंगी, इसका विवरण इस अध्याय के परिशिष्ट के रूप में दिया गया है; और वहीं उसकी प्रथम योजना के व्यय के साथ तुलना भी दी गई है। विभिन्न राज्य विभिन्न विकास कार्यों पर कितना-कितना व्यय करेंगे, इसका विवरण इस पुस्तक के अन्त में दिया गया है। द्वितीय योजना में केन्द्र और राज्यों में व्यय का विभाजन, प्रथम योजना के विभाजन से कुछ भिन्न है। प्रथम योजना में जिन कार्यों को केन्द्रीय मन्त्रालयों ने पूरा किया था, उनके अतिरिक्त जो कार्य विविध मन्त्रालयों ने केन्द्रीय सरकार की सहायता से पूरे किए थे, वे भी केन्द्र द्वारा ही किए दिखाए गए थे। परन्तु इन कार्यों पर राज्यों ने जो व्यय किया

था, उसे राज्यों की योजनाओं का भाग मानने का विचार था। इस कारण योजना को पेश करने में कुछ कठिनाई का सामना करना पडा। द्वितीय योजना के विवरण में साधारण सिद्धान्त यह रखा गया है कि जिन कार्यक्रमो को राज्य सरकारें अथवा उनके द्वारा नियन्त्रित सरकारी विभाग या स्थानीय बोर्ड या विशेष बोर्ड पूरा करेंगे, उन सबको जहा तक हो सके राज्यों की योजना मे ही सम्मिलित किया जाए। यदि कोई कार्यक्रम राज्यों मे पूरा किया जाए और उसका पूरा या अधूरा व्यय केन्द्रीय सरकार या उसकी कोई शाखा दे, तो इतने मात्र से सिद्धान्ततः इस बात का उल्लंघन नही होता कि उस कार्यक्रम को राज्य की योजना का भाग मानना चाहिए। यद्यपि साधारणतया इसी सिद्धान्त का पालन किया गया है, तथापि इस समय कई काम ऐसे है, जो है तो राज्यों की योजनाओं के अंग, परन्तु उनके व्यय का कुछ भाग अब भी केन्द्र के हिसाब में दिखाया जा रहा है। उदाहरणार्थ, आवास, पिछड़े वर्गो की सहायता और ग्रामोद्योगों तथा लघु उद्योगों के कामो पर व्यय का कुछ भाग इस समय केन्द्र के हिसाब में दिखाया जा रहा है, परन्तु उन कार्यो के सम्बन्ध मे विस्तार की जिन बातो पर विचार किया जा रहा है, उनके पूरा हो जाने पर सम्भावना यह है कि यह व्यय विभिन्न राज्यों द्वारा किया जाएगा।

८. मुख्य विकास शीर्षको के अन्तर्गत केन्द्र और राज्यो द्वारा अलग-अलग किए जाने वाले व्यय का विवरण नीचे की तालिका में दिखाया गया है :

	(करोड़ रुपयों में)				
	केन्द्र	'क' भाग के राज्य	'ख' भाग के राज्य	'ग' भाग† के राज्य	योग
१	२	३	४	५	६
१. कृषि और सामुदायिक विकास	६५	३५६	११२	३१	५६८*
२. सिचाई और बिजली . .	१०५	५६७**	२१७	२४	६१३
३. उद्योग और खानें . .	७४७	६६	३७	७	८६०
४. परिवहन और सचार	१,२०३	१२०	४१	२१	१,३८५
५. सामाजिक सेवाए .	३९६	३९३	११७	३६	९४५
६. विविध	४३	४२	११	३	९९
योग	२,५५९	१,५८०	५३५	१२५	४,८००*

९ केन्द्रीय मन्त्रालयो और राज्य सरकारो दोनो ने अपनी-अपनी योजनाओ में प्रतिवर्ष का कार्यक्रम निश्चित कर लिया है। इनका अध्ययन करने से पता लगता है कि योजना के प्रथम दो या तीन वर्षों में व्यय बहुत रखा गया है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि जो कार्य प्रथम योजना के समय आरम्भ कर दिए गए थे और बहुत आगे बढ़ चुके थे, उन्हें शीघ्र पूरा कर देने के लिए और उनसे यथाशक्ति जल्दी लाभ उठाने के लिए उन पर अधिक

*इन सख्याओ मे राष्ट्रीय विस्तार और राज्यो की सामुदायिक योजनाओ के लिए १ करोड़ रुपए की राशि का अनिर्दिष्ट भाग भी शामिल है।

†इन राज्यों में अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह, उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेंसी और पाडिचेरी भी शामिल है।

**इसमें केन्द्र द्वारा दामोदर घाटी निगम पर किया गया व्यय भी शामिल है।

व्यय करने का विचार किया गया है। इसका अर्थ यह है कि नये कार्यों पर व्यय को इस प्रकार फैला दिया गया है कि केन्द्र और राज्यों का सारा व्यय, योजना के पूरे समय में क्रमशः बढ़ता चला जाए। ऐसा करना एक तो इसलिए आवश्यक है कि साधनों और व्यय में सन्तुलन रहे, दूसरे इसलिए भी आवश्यक है कि योजना की प्रगति के साथ-साथ जीविकोपार्जन के अवसरों में वृद्धि भी होती रहे। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, द्वितीय योजना को एक ऐसा ढांचा मानकर चलना चाहिए, जिसमें कि वार्षिक योजनाओं के विस्तार का निश्चय उपलब्ध वित्तीय और वास्तविक साधनों के अनुसार किया जा सके। प्रति वर्ष का यह विस्तार लचकीला रहना चाहिए, परन्तु साथ ही प्रति वर्ष के कार्यक्रमों का पहले से तैयार रहना भी आवश्यक है, क्योंकि बहुत-से कामों के लिए यन्त्र और सामग्री का आर्डर पहले से देने की आवश्यकता होगी और प्रारम्भिक कार्य करने के लिए आवश्यक कर्मचारियों की भर्ती भी पहले से करनी पड़ेगी।

द्वितीय योजना का पूंजी विनियोग

१०. ४,८०० करोड़ रुपए के समस्त व्यय में से ३,८०० करोड़ रुपए तो मोटे हिसाब से पूंजी-विनियोग के रूप में, अर्थात उत्पादक साधन स्थापित करने पर व्यय होंगे, और शेष १,००० करोड़ रुपए को विकास कार्य का चालू व्यय माना जा सकता है। इन दोनों प्रकार के व्ययों का विवरण मुख्य शीर्षकों के अन्तर्गत नीचे की तालिका में दिया गया है :

	(करोड़ रुपयों में)		
	पूंजी विनियोग का व्यय	चालू व्यय	समस्त व्यय
१	२	३	४
१. कृषि और सामुदायिक विकास	३३८	२३०	५६८
(क) कृषि	१८१	१६०	३४१
(ख) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास†	१५७	७०	२२७
२. सिंचाई और बिजली	८६३	५०	९१३
(क) सिंचाई और बाढ़ नियन्त्रण	४५६	३०	४८६
(ख) बिजली	४०७	२०	४२७
३. उद्योग और खानें	७९०	१००	८९०
(क) बड़े और मध्यम उद्योग और खानें	६७०	२०	६९०
(ख) ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	१२०	८०	२००
४. परिवहन और संचार	१,३३५	५०	१,३८५
५. सामाजिक सेवाएं	४५५	४९०	९४५
६. विविध	१९	८०	९९
योग	३,८००	१,०००	४,८००

†इसमें ग्राम पंचायतों और स्थानीय विकास के कार्यक्रम भी सम्मिलित हैं।

इस विवरण में कार्यक्रमों की केवल मोटी रूपरेखा दिखलाई गई है । इस समय केन्द्र और राज्यों मे जो बजट पेश किए जाते है, उनमें चालू व्यय और पूजी विनियोग के व्यय का अन्तर स्पष्ट करके नही दिखलाया जाता । आय के हिसाब मे कुछ राशिया ऐसी भी होती है जिनका रूप पूजी विनियोग का होता है । पूजी खाते मे यह दिखलाना चाहिए कि कौन-से व्यय प्रत्यक्ष पूजी निर्माण करने के लिए किए जा रहे है और कौन-से ऐसे ऋणों के रूप मे किये जा रहे है जिनका फल पीछे जाकर उत्पादक साधनों की उत्पत्ति के रूप मे प्रकट होगा । इसके अतिरिक्त समय-समय पर कुछ राशियों को राजस्व खाते से पूजी खाते मे और पूजी खाते से राजस्व खाते में भी ले जाया जाता है। इस प्रकार के व्ययो का स्पष्ट अर्थ, राष्ट्रीय हिसाब-किताब की दृष्टि से तुरन्त प्रकट नही होता । सम्बद्ध अधिकारियों ने भी योजना मे सम्मिलित कार्यक्रमो का विभाजन विशुद्ध पूजी-विनियोग और चालू व्ययो की दृष्टि से नही किया है। इस प्रसग में यह लिख देना अनुचित न होगा कि केन्द्र और राज्यों मे, दोनो स्थानो पर, सरकारी हिसाब में खातो मे इस प्रकार सशोधन कर देने की आवश्यकता है कि उनसे यह स्पष्ट हो जाए कि सारे हिसाब-किताब मे राष्ट्रीय आय कितनी और व्यय कितना हुआ, कितना खपत के रूप में खर्च हुआ, और कितना पूजी विनियोग मे । यह कार्य आरम्भ हो चुका है ।

११. योजना के सरकारी क्षेत्र मे, ३,८०० करोड रुपए का विनियोग करने का जो कार्यक्रम बनाया गया है, उस पर योजना के निजी भाग के कार्यक्रम को सामने रखकर विचार करना चाहिए । उत्पादन और विकास के जो लक्ष्य रखे गए है, वे दोनो भागो के सम्मिलित विनियोग कार्यक्रम से ही पूरे हो सकेंगे । इसलिए यह स्पष्ट है कि दोनो क्षेत्रों का विकास कार्यक्रम ऐसी गति से और इस प्रकार चलना चाहिए कि उत्पादन मे वृद्धि सन्तुलित रूप से हो । निजी भाग मे विनियोग का पूरा-पूरा और विश्वसनीय अनुमान उपलब्ध नही है और इस समय आगामी पाच वर्षो मे विनियोग का जो रुख रहेगा उसकी मोटी कल्पना कर लेने से अधिक कुछ नही किया जा सकता । पिछले पाच वर्षो मे विनियोग की जो प्रवृत्ति रही है उसके मोटे हिसाब, और कुछ क्षेत्रों में विनियोग के कार्यक्रम का हमे जो ज्ञान है उसके आधार पर, अगले पाच वर्षो में योजना के निजी भाग में २,४०० करोड रुपए का विनियोग हो सकने की सम्भावना है । उसका कुछ विवरण इस प्रकार है .

	(करोड़ रुपयो म)
१. संगठित उद्योग और खानें ..	५७५
२. बागान, बिजली के काम और रेलो के अतिरिक्त अन्य परिवहन ..	१२५
३. निर्माण . ..	१,०००
४. कृषि और ग्रामोद्योग तथा छोटे उद्योग . ..	३००
५. भडार . . .	४००
योग	२,४००

१२. प्रथम योजना की अवधि में समस्त पूंजी विनियोग बहुत मोटे हिसाब से, लगभग ३,१०० करोड़ रुपए का हुआ था । इसमे से निजी क्षेत्र का पूजी विनियोग आधे से कुछ अधिक था । द्वितीय योजना का लक्ष्य लगभग ६,२०० करोड़ रुपए है और पहले बताए हुए कारणों से, योजना के सरकारी क्षेत्र का पूजी विनियोग बहुत अधिक बढ़ा दिया गया है।

१	२	३	४	५	६
२. सिंचाई और बिजली					
१. सिंचित भूमि	(लाख एकड़)	५१०	६७०	८८०	३१
२. बिजली (कारखानों की सामर्थ्य)	(लाख किलोवाट)	–	३४	६९	१०३
३. खनिज पदार्थ					
१ खनिज लोहा	(लाख टन)	३०	४३**	१२५	१९१
२ कोयला	(लाख टन)	३२३†	३८०†	६००†	५८
४. बड़े उद्योग					
१ तैयार इस्पात	(लाख टन)	११	१३	४३	२३१
२. कच्चा लोहा (ढलाई के कारखानो को बेचने के लिए)	(लाख टन)	–	३ ८	७ ५	९७
३. एल्यूमिनियम	(हजार टन)	३·७	७·५	२५·०	२३३
४. इस्पात के भारी साचे, बेचने के लिए	(हजार टन)	–	–	१२	–
५. भारी इस्पात का साचो में ढला हुआ माल, बेचने के लिए	(हजार टन)	–	–	१५	–
६ मकानों में लगाने के लिए इस्पात का सामान	(हजार टन)	अप्राप्य	१८०	५००	१७८
७. मशीनों के पुर्जे ग्रेडेड	(मूल्य लाख रुपयों में)	३१·८	७५	३००	३००
८ सीमेंट बनाने की मशीने	(मूल्य लाख रुपयों मे)	अप्राप्य	५६**	२००	२५७
९ चीनी बनाने की मशीने	(मूल्य लाख रुपयो में)	अप्राप्य	२८**	२५०	७७९
१०. वस्त्रोद्योग की मशीने (कपास और जूट)	(मूल्य लाख रुपयों में)	अप्राप्य	४१२	१९५०	३७३
११. कागज बनाने की मशीने	(मूल्य लाख रुपयो में)	नाममात्र	नाममात्र	४००	–
१२ बिजली से चलने वाले सेंट्रीफ्यूगल पम्प	(सख्या हजार में)	३४	४०	८६	११५

**ये अक पचागीय वर्ष १९५४ के है ।

†ये अंक सम्बद्ध पंचांगीय वर्ष के है ।

१	२	३	४	५	६
१३. डीज़ल इंजन	(हजार अश्व शक्ति)	अप्राप्य	१००	२०५	१०५
१४. मोटर गाड़ियां	(संख्या)	१६,५००	२५,०००	५७,०००	१२८
१५. रेलों के इंजन	(संख्या)	३	१७५	४००	१२६
१६. ट्रैक्टर (२० से ३० अश्व शक्ति)	(संख्या)	—	—	३,०००	—
१७. सीमेंट	(लाख टन)	२७	४३	१३०	२०२
१८. रासायनिक खाद					
(क) अमोनियम सल्फेट	(हजार टन)	४६	३८०	१,४५०	२८२
(ख) सुपर फास्फेट	(हजार टन)	५५	१२०	७२०	५००
१९. गंधक का तेजाब	(हजार टन)	९९	१७०	४७०	१७६
२०. सोडा ऐश	(हजार टन)	४५	८०	२३०	१८८
२१. कास्टिक सोडा	(हजार टन)	११	३६	१३५	२७५
२२. तेल साफ़ करने के कारखाने (कच्चा तेल साफ किया गया)	(लाख टन)	—	३६	४३	१९
२३. बिजली के ट्रांसफोर्मर (३३ कि० वा० और उनसे नीचे के)	(हजार कि० वी० ए०)	१७९	५४०	१,३६०	१५१
२४. बिजली के तार (ए० सी० एस० आर० कंडक्टर)	(टन)	१,४२०	९,०००	१८,०००	१००
२५. बिजली के मोटर	(हजार अश्व शक्ति)	९९	२४०	६००	१५०
२६. सूती कपड़ा	(लाख गज)	४६,१८०	६८,५००	८५,०००	२४
२७. चीनी	(लाख टन)	११	१७	२३	३५
२८. कागज और गत्ता	(हजार टन)	११४	२००	३५०	७५
२९. बाइसिकिलें (केवल बड़े कारखानों में बनी)	(हजार)	१०१	५५०	१,०००	८२
३०. सिलाई की मशीनें (केवल बड़े कारखानों में बनी)	(हजार)	३३	११०	२२०	१००
३१. बिजली के पंखे	(हजार)	१९४	२७५	६००	११८

१	२	३	४	५	६
५. परिवहन और संचार					
(क) रेलें					
१ सवारी गाड़ियों के मीलों की सख्या	(लाख मील)	९५०	१,०८०	१,२४०	१५
२ माल की ढुलाई	(लाख टन)	९१०	१२००	१८१०	५१
(ख) **सडकें**					
१. राष्ट्र की बड़ी-बड़ी सडकें	(हजार मील)	१२·३	१२·९	१३ ८	७
२. सतही सडके	(हजार मील)	९७·०	१०७ ०	१२५·०	१७
(ग) **जहाजरानी**					
१. तटवर्ती और पास-पडोस जाने वाले जहाज†	(लाख जी० आर० टी०)	२·२	३ २	४·३	३४
२. समुद्र पार जाने वाले जहाज††	(लाख जी० आर० टी०)	१ ७	२·८	४ ७	६८
(घ) **बन्दरगाह जहाजो से माल उतारने लादने की सामर्थ्य**	(लाख टन)	२००	२५०	३२५	३०
(च) **डाक और तार**					
१. डाक घर	(हजार)	३६	५५	७५	३६
२ तार घर	(हजार)	३·६	४·९	६ ३	२८
३. टेलीफोनो की सख्या	(हजार)	१६८	२७०	४५०	६७
६. शिक्षा					
१. विभिन्न आयु के स्कूल जाने वाले बालकों का प्रतिशत					
(क) प्राइमरी कक्षाएं	(६ से ११ वर्ष तक के बच्चे)	४२·०	५१·०	६३·०	—
(ख) मिडिल स्कूल	(११ से १४ वर्ष तक के बच्चे)	१४·०	१९·०	२२·५	—
(ग) हायर सेकेंड्री स्कूल	(१४ से १७ वर्ष तक के बच्चे)	६·४	९ ४	१२·०	—

†इनमे तेल वाही टैंकर भी शामिल है।

††इनमे ट्रेप जहाजो की भारवहन क्षमता भी शामिल है।

१	२	३	४	५	६
२. प्रारम्भिक अथवा बेसिक स्कूल	(लाख)	२·२३	२·६३	३ ५०	१६
३. स्कूल के अध्यापको की संख्या	(लाख)	७.४	१०·३	१३·४	३०
४. अध्यापकों के ट्रेनिंग स्कूल	(संख्या)	८३५	१,१३६	१.४१२	२४
५. अध्यापको के ट्रेनिंग स्कूलों में भर्ती	(हजार)	७५.६	१०३·५	१३४·२	३०
७. स्वास्थ्य					
१. चिकित्सा संस्थाएं	(हजार)	८·६	१०	१२·६	२६
२. चिकित्सालयों में रोगियों के लिए शैयाएं	(हजार)	११३	१२५	१५५	२४
३. डाक्टर	(हजार)	५६	७०	८२·५	१८
४. परिचारिकाएं	(हजार)	१७	२२	३१	४१
५. मिडवाइफें (शिक्षित दाइयां)	(हजार)	१८	२६	३२	२३
६. नर्स-दाइयां और दाइयां	(हजार)	४	६	४१	५८३
७. हेल्थ असिस्टेंट और सेनेटरी इन्सपेक्टर	(हजार)	३·५	४	७	७५

कृषि और सामुदायिक विकास

१४. कृषि का उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न प्रथम योजना के समय ही आरम्भ किए जा चुके थे। गत पांच वर्षों में अन्न का उत्पादन १ करोड १० लाख टन अर्थात २० प्रतिशत और कृषि का समस्त उत्पादन लगभग १५ प्रतिशत बढ़ गया था। द्वितीय योजना के समय में कृषि के उत्पादन में १८ प्रतिशत वृद्धि हो जाने की सम्भावना है। भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए जो प्रयत्न किए जाते हैं वे सुविदित हैं। अभी कई वर्षों तक सिंचाई की सुविधाओं को बढ़ाने, अच्छे बीजों का प्रयोग करने, रासायनिक खाद डालने और खेती के उन्नत उपायों के प्रचार करने की ही दिशा में विकास कार्य करना होगा। द्वितीय योजना में इन कार्यक्रमों के अतिरिक्त, कृषि के उत्पादन में विविधता लाने का भी प्रयत्न किया जाएगा। देश में जीवन का स्तर उन्नत होने और औद्योगिक उन्नति बढ़ने के साथ-साथ, व्यापारिक फसलों को बढ़ाने और सब्जियां-फल, दूध-घी, मछली-मांस और अण्डे आदि खाद्यान्न के अतिरिक्त अन्य भोजन सामग्रियों का उत्पादन अधिकाधिक करने पर ध्यान देने की आवश्यकता होगी। कृषि के विकास का एक और पहलू जिस पर कि द्वितीय योजना में अधिक ध्यान दिया जाएगा यह है कि भूमि का उपयोग और प्रबन्ध अधिक कुशल ढंग से करने के लिए ऐसी संगठित संस्थाओं का प्रबन्ध किया जाएगा जिससे जिन लोगों का जीवन भूमि पर आश्रित है उनमें अधिक आर्थिक समानता हो सके।

१५ द्वितीय योजना मे अनाज के अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य एक करोड़ टन अर्थात लगभग १५ प्रतिशत वृद्धि का रखा गया है। १९५५-५६ में अनाज का उत्पादन ६५० लाख टन हुआ था जिसे १९६०-६१ मे बढाकर ७५० लाख टन तक ले जाने का विचार है। यदि इसमे सफलता हो गई तो अन्न के व्यय का जो परिमाण इस समय १७ २ औस प्रति व्यक्ति प्रति दिन है, वह बढकर लगभग १८ ३ औस प्रति व्यक्ति प्रति दिन हो जाएगा। कपास, गन्ने, तिलहन और पटसन के उत्पादन मे वृद्धि की मात्रा और भी बढ़ाने का विचार है। द्वितीय योजना के समय इनके उत्पादन मे क्रमश. ३१ प्रतिशत, २२ प्रतिशत, २७ प्रतिशत और २५ प्रतिशत की वृद्धि की जाएगी। सिचाई की सुविधाए बढ जाने के कारण गन्ना लगभग दस लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में बोया जाने लगेगा। यदि गन्ने की पैदावार बढाने का लक्ष्य पूरा हो गया तो चीनी का व्यय १ ४ औस प्रति व्यक्ति प्रति दिन से बढ़ाकर १·७ औंस प्रति व्यक्ति प्रति दिन किया जा सकेगा। पटसन और कपास के उत्पादन मे वृद्धि करने के अतिरिक्त पटसन की किस्म सुधारने और लम्बे रेशे की कपास की बुआई बढाने के लिए विशेष प्रयत्न करने होगे।

१६. ऊपर कृषि का उत्पादन बढाने के जिन लक्ष्यों का उल्लेख किया गया है वे केन्द्रीय कृषि मन्त्रालय और राज्य सरकारों में विचार विनिमय के पश्चात निश्चित किये गये है। परन्तु हमारा खयाल है कि उत्पादन बढ़ाने के लिए जितनी गुजाइश है और योजना मे इतना बड़ा पूजी-विनियोग करने के कारण माल की जितनी माग बढ जाएगी, उसका विचार करते हुए, इन लक्ष्यो को और भी ऊचा किया जा सकता है। प्रथम योजना मे कृषि और सामुदायिक विकास के कामो पर व्यय के लिए ३५७ करोड रुपए की राशि रखी गई थी। उसे बढाकर द्वितीय योजना मे ५६८ करोड़ रुपए किया जा रहा है। इस राशि में उन सुविधाओ की गिनती नही की गई है, जो रिजर्व बैंक, स्टेट बैंक और सहकारिता सस्थाएं, छोटी मियाद के ऋणों के रूप में देगी। १९५५ के आरम्भ में योजना आयोग ने राज्य सरकारों को सुझाया था कि कृषि का उत्पादन बढाने के कार्यक्रम बनाते हुए, वे यदि गावों के सामने कोई निश्चित लक्ष्य रख दे तो वह राष्ट्रीय दृष्टि से अच्छा रहेगा। यह लक्ष्य इस प्रकार का हो सकता है कि कुछ समय मे—मान लीजिए लगभग १० वर्ष मे—अनाज, तिलहन, रेश, बागानो की फसलो अथवा पशुओं और उनसे पैदा होने वाली वस्तुओं आदि का उत्पादन दुगुना हो जाना चाहिए। इस सुझाव मे इस बात पर भी जोर दिया गया था कि ऐसा कोई लक्ष्य सामने रखते हुए राज्य सरकारो को भी आवश्यक साधनो, सेवाओ और पूजी आदि की सहायता का उत्तरदायित्व अपने सिर लेना पड़ेगा। इस समय योजना मे जो लक्ष्य रखे गये है उनका आधार यह माना गया है कि विविध विकास कार्यक्रमो के द्वारा उत्पादन सामर्थ्य मे इतनी वृद्धि हो सकेगी। आशा है कि कृषि और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रमो मे अधिक सहयोग करके कृषि उत्पादन के इन लक्ष्यो को और भी ऊचा उठाया जा सकेगा। योजना आयोग और सम्बद्ध सरकारी अधिकारी मिलकर इस समस्या पर विचार कर रहे हैं। अनाज का उत्पादन देश मे ही बढ़ाना इस दृष्टि से और भी आवश्यक है कि विदेशो से अन्न मंगाने पर विदेशी मुद्रा का व्यय करना पडता है। यह एक सचाई है कि भारत मे सभी फसलों की पैदावार बहुत कम होती है। औद्योगिक विकास के कार्यक्रमों की पूर्ति वाछित शीघ्रता से करने के लिए फसलों की पैदावार बहुत जल्दी बढाने की आवश्यकता है। इसलिए राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रमों के अधिकारियो को चाहिए कि वे प्रत्येक ग्राम और प्रत्येक परिवार को, अधिक अच्छे साधनो के प्रयोग और अधिक श्रम आदि के द्वारा, कृषि का उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रेरित करे। हमारा सुझाव है

कि राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के विभिन्न क्षेत्रों में, कृषि का उत्पादन जांचने के लिए, समय-समय पर नियमपूर्वक निरीक्षण करते रहना चाहिए जिससे आवश्यकता होने पर कार्यक्रम में उचित हेर-फेर किया जा सके।

१७. कृषि का उत्पादन बढ़ाने के लिए जो कार्यक्रम अपनाए जाएंगे, उनमें सब से अधिक प्राथमिकता यथापूर्व, सिंचाई की सुविधाएं बढ़ाने को दी जाती रहेगी। द्वितीय योजना में, २१० लाख एकड़ नई भूमि की सिंचाई आरम्भ करने का लक्ष्य रखा गया है। अमोनियम सल्फेट की खाद की खपत १९५५ में ६ लाख १० हजार टन हुई थी, १९६० तक उसे बढ़ाकर १८ लाख टन कर देने का विचार है। अच्छा बीज तैयार करने के लिए लगभग ९३ हजार एकड़ जमीन में ३ हजार फार्म खोले जाएंगे। नई जमीन को खेती के योग्य बनाने और सुधार कार्य करने का काम ३५ लाख एकड़ से अधिक जमीन में किया जाएगा।

१८. फल और सब्जी जैसे सहायक खाद्यों की पैदावार बढ़ाने का भी द्वितीय योजना में प्रयत्न किया जाएगा। इसके लिए ८ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। आशा है कि मछली पालन, दूध उद्योग और जंगलों से उपलब्ध होने वाले खाद्यों की पैदावार में भी पर्याप्त वृद्धि होगी। पशु पालन और मछली पालन के लिए द्वितीय योजना में ६८ करोड़ रुपए रखे गए हैं। प्रथम योजना में यह राशि केवल २६ करोड़ रुपए थी। प्रथम योजना में ६०० केन्द्र ग्राम और १५० केन्द्र कृत्रिम गर्भाधान के स्थापित किए गए थे। इन्हें बढ़ाकर द्वितीय योजना में क्रमशः १,२५८ और २४५ कर दिया जाएगा। पशुचिकित्सालयों की संख्या प्रथम योजना में २,००० से बढ़ाकर २,६५० कर दी गई थी। द्वितीय योजना में उसमें १,९०० की और भी वृद्धि हो जाने की आशा है। यह भी विचार है कि द्वितीय योजना के समय नगरों में दूध वितरण करने वाली ३६ यूनियनें, दूध से मक्खन निकालने वाले १२ सहकारिता केन्द्र और दूध सुखाने के ७ कारखाने खोले जाएंगे। गहरे और दूर-दूर के समुद्र में मछलियां पकड़ने के काम का विस्तार किया जाएगा और इसके लिए पश्चिमी तथा पूर्वी तटों पर और अण्डमान द्वीपसमूह में मछली अन्वेषण केन्द्र खोले जाएंगे।

१९. सहकारिता, माल की बिक्री के संगठन और गोदामों के लिए द्वितीय योजना में ४७ करोड़ रुपए की राशि रखी गयी है। ग्राम ऋण सर्वेक्षण समिति ने सिफारिश की थी कि ऋण देने, कच्चे माल का उत्पादन करने और उसे बाजार में बेचने के कार्यक्रम पर स्टेट बैंक, रिजर्व बैंक और सरकार को मिलकर अमल करना चाहिए। इस सिफारिश पर अमल करने के लिए कार्रवाई आरम्भ की जा चुकी है। विशेषतः देश भर में गोदामों का एक जाल-सा बिछा देने का कार्यक्रम शीघ्रता से आरंभ किया जाएगा। अन्दाजा है कि द्वितीय योजना के अन्त तक बाजार में बेचने योग्य फालतू माल के १० प्रतिशत का क्रय-विक्रय सहकारिता संस्थाएं करने लगेंगी। इस समय भी देश में नियमित मण्डियों को बढ़ाने का विशेष प्रयत्न किया जा रहा है। आशा है कि द्वितीय योजना के अन्त तक ऐसी मण्डियों की संख्या दुगुनी हो जाएगी। कृषि से सम्बद्ध संगठनों को सुधारने का उद्देश्य यह है कि कुछ ही वर्षों में अधिकाधिक व्यवहार सहकारिता के सिद्धान्त के अनुसार होने लगे। अनुभव से ज्ञात हुआ है कि छोटे किसानों या जरूरतमन्द लोगों को, इस प्रयोजन से सहकारिता के आधार पर संगठित करने का कार्य शीघ्रता से नहीं किया जा सकता कि वे मिलकर अपना उत्पादन बढ़ा लें और लाभ का वितरण उनमें अधिक

समानता से होने लगे। इसलिए सहकारिता के कार्य को बढाने और पुनर्गठित करने का कार्य सरकार को अपने ही ऊपर लेना पडेगा। इसके लिए एक बडा कार्यक्रम बनाया जा रहा है।

२० शायद प्रथम योजना का सब से महत्वपूर्ण कार्य यह था कि उसमे सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रमो पर विशेष बल दिया गया था। इस कार्यक्रम का मूल उद्देश्य यह था कि लोगों को खेती के अधिक अच्छे उपायो की जानकारी हो और उनमे अधिक अच्छी तरह रहने-सहने और परस्पर सहायता तथा सहकारिता करने की इच्छा उत्पन्न होकर उनकी आर्थिक अवस्था मे सुधार हो जाए। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कार्यक्रम योजना को लोकप्रिय बनाने के प्रधान साधन है। अब तक ये कार्यक्रम देश के लगभग एक-चौथाई भाग मे आरम्भ किये जा चुके है। लोगो ने भी इनमे उत्साह और रुचि प्रकट की है। इसका प्रमाण यह है कि सामुदायिक योजनाओ पर सरकार ने जितना खर्च किया, उसका लगभग ६० प्रतिशत जनता ने स्वय दिया। इन दोनो कार्यक्रमो को इस प्रकार बढाने का विचार है कि द्वितीय योजना के अन्त तक ये सारे देश मे प्रचलित हो जाए। इसके लिए योजना मे २०० करोड रुपए की राशि रखी गई है। जैसा कि पहले लिखा गया है, हमारा खयाल है कि यदि समय-समय पर इन कार्यक्रमो मे उचित हेरफेर किया जाता रहे तो इनके द्वारा कृषि का उत्पादन उन लक्ष्यो से भी आगे बढाया जा सकता है जो कि योजना मे निर्धारित किए गए है।

२१ देहाती क्षेत्रो मे सामुदायिक जीवन बिताने की रुचि उत्पन्न करने और वहा की जनता मे गावो के विकास कार्यक्रम मे उत्साहपूर्वक भाग लेने का शौक पैदा करने का सब से महत्वपूर्ण साधन ग्राम पचायते है। प्रथम योजना मे ग्राम पचायतो की संख्या ८३ हजार से बढ कर १ लाख १७ हजार हो गई थी। द्वितीय योजना मे उसे और भी बढाकर २ लाख ४५ हजार तक ले जाने का विचार है। इस कार्य के लिए योजना मे १२ करोड रुपए की राशि रखी गई है। इसके अतिरिक्त १५ करोड रु ए स्थानीय विकास कार्य के लिए भी रखे गए है। इस कार्य का उद्देश्य यह है कि देहाती जनता स्थानीय लाभ के कार्य स्वय अपने परिश्रम से करने लगे। द्वितीय योजना के समय इस कार्य को उन क्षेत्रो मे किया जाएगा, जो कि अब तक राष्ट्रीय विस्तार की सेवाओ के लाभो से वचित रह गये है।

सिचाई और बिजली

२२. प्रथम योजना आरम्भ होने से पहले देश मे सिचाई ५१० लाख एकड भूमि मे होती थी। प्रथम योजना के समय इस भूमि का क्षेत्रफल बढकर ६७० लाख एकड हो गया। आशा है कि द्वितीय योजना के अन्त मे और भी २१० लाख एकड़ भूमि मे सिचाई होने लगेगी और इस प्रकार १० वर्ष मे सिचाई की भूमि मे प्राय ७५ प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी। द्वितीय योजना मे जिस नई २१० लाख एकड भूमि मे सिचाई होने लगेगी, उसमे से १२० लाख एकड मे तो सिचाई बडे और मध्यम कार्यक्रमो के द्वारा होगी और ९० लाख एकड मे सिचाई के छोटे कामों द्वारा।

२३ बडे और मध्यम कार्यक्रम के अनुसार जिस अतिरिक्त भूमि मे सिचाई की जाएगी, उसका अधिकतर भाग (करीब ९० लाख एकड) प्रथम योजना के समय आरम्भ किये गये कार्यो के द्वारा लाभान्वित होगा। द्वितीय योजना मे आरम्भ किये गये नये कार्यो से लाभ केवल, लगभग ३० लाख एकड भूमि को पहुचेगा। द्वितीय योजना मे जो बडे और मध्यम कार्य आरम्भ किये जाएगे उनके पूरा हो जाने पर लगभग १५० लाख एकड भूमि को लाभ पहुचेगा।

द्वितीय योजना के समय, सिचाई के बडे और मध्यम कार्यों से, प्रति वर्ष प्रायः समान ही लाभ पहुंचने की आशा है। प्रथम ३ वर्षों मे इस लाभ की मात्रा लगभग २० लाख एकड़ प्रति वर्ष और अन्तिम २ वर्षों में प्रायः ३० लाख एकड़ प्रति वर्ष रहेगी।

२४. कृषि का उत्पादन निरन्तर बढाते रहने की आवश्यकता है। इसलिए सिचाई की मध्यम योजनाओ पर अधिक ध्यान देने का विचार है। प्रथम योजना में सिचाई के ७ कार्य ऐसे आरम्भ किए गये थे जिनमें से प्रत्येक पर ३० करोड़ रुपए से अधिक रुपए व्यय होने वाला था, ६ ऐसे थे जिन पर १० और ३० करोड रुपए के बीच व्यय हुआ था, ५४ ऐसे थे जिन पर १ और १० करोड के बीच व्यय हुआ था। और लगभग २०० ऐसे थे जिनमें से प्रत्येक पर १ करोड़ रुपए से कम व्यय हुआ था। द्वितीय योजना में सिचाई के १८८ नये कार्य आरम्भ किये जाएंगे। इनमें से किसी पर भी ३० करोड़ रुपए से अधिक व्यय करने की आवश्यकता नही है। कोई १० कार्यों पर १० और ३० करोड़ रुपए के बीच, ४२ पर १ और १० करोड़ रुपए के बीच और शेष १३६ में से प्रत्येक पर १ करोड रुपए से भी कम व्यय होगा। मध्यम कार्यों के दो लाभ हैं। एक तो, उनका फल जल्दी निकलता है, और दूसरे, उनसे सिचाई के लाभों को विभिन्न क्षेत्रों में अधिक समानता से वितरित किया जा सकता है।

२५. सिंचाई के छोटे कार्यों में ३,५८१ नलकूप बनाने का जिक्र विशेष रूप से किया जा सकता है। इन पर २० करोड़ रुपया व्यय किया जाएगा और इनसे ६ लाख १६ हजार एकड़ में सिंचाई हो सकेगी। इसके अतिरिक्त, प्रथम योजना के समय जमीन-तले के अधिक गहरे पानी से सिंचाई कर सकने की सम्भावनाओं की खोज करने के लिए गहरे नलकूप बनाकर देखने का जो परीक्षण आरम्भ किया गया था, उसे द्वितीय योजना के समय भी जारी रखा जाएगा।

२६. प्रथम योजना आरम्भ होने के समय देश में बिजली तैयार करने के जो कारखाने लगे हुए थे, उनकी समस्त सामर्थ्य २३ लाख किलोवाट की थी। प्रथम योजना में यह सोचा गया था कि १५ वर्ष में बिजली के उत्पादन में ७० लाख किलोवाट की वृद्धि कर दी जाए। प्रथम योजना के समय ११ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न करने के कारखाने बनाये भी जा चुके हैं और द्वितीय योजना के समय में, आशा है कि ३५ लाख किलोवाट के कारखाने और बन जाएंगे। द्वितीय योजना में औद्योगिक उन्नति पर सब से अधिक बल दिया गया है, इसलिए आगामी ५ वर्षों में बिजली के उत्पादन में १०० प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हो जानी चाहिए। औद्योगिक उन्नति पर बल अगली योजनाओं में भी दिया जाता रहेगा। आरम्भ में ७० लाख किलोवाट का जो लक्ष्य रखा गया था, उसे बढ़ाकर १९६५-६६ तक लगभग १३० लाख किलोवाट का कर देना पड़ेगा।

२७. १९५०-५१ में देश में बिजली का व्यय १४ यूनिट प्रति व्यक्ति था, जिसके बढ़कर १९५५-५६ में २५ यूनिट और १९६०-६१ में ५० यूनिट हो जाने की आशा है। प्रथम योजना के अन्त तक २० हजार अथवा इससे अधिक आबादी के ९५ प्रतिशत नगरों और १० हजार और २० हजार के बीच की आबादी के ४० प्रतिशत नगरों में बिजली पहुंच जाने की आशा थी। द्वितीय योजना में लक्ष्य यह रखा गया है कि १० हजार अथवा इससे अधिक आबादी के तो सब नगरों, और ५ हजार और १० हजार के बीच की आबादी के ८५ प्रतिशत नगरों में बिजली पहुंचा दी जाए। ५ हजार की आबादी से कम के ग्रामों और छोटे नगरों में बिजली पहुंचाने पर बहुत अधिक व्यय होगा। इस कारण देहातों में बिजली पहुचाने का कार्य अधिक

दीर्घ काल मे फैलाकर करना पड़ेगा। द्वितीय पचवर्षीय योजना में इस कार्य के लि करोड रुपए की राशि रखी गई है, और आशा है कि उससे बिजली का लाभ उठाने वाले छोटे नगरो और ग्रामों की संख्या १९५६ की ५,३०० से बढ़कर १९६१ मे १३,९०० तक पहुच जाएगी। देहातों मे बिजली पहुंचाने पर विचार करते हुए केवल यही ध्यान नही रखना पड़ता कि वहां बिजली पहुंच जाए, बल्कि साथ ही यह भी देखना पड़ता है कि किस क्षेत्र मे औद्योगिक और अन्य प्रयोजनो के लिए कितनी बिजली की आवश्यकता होगी, और उन्नति निर्विघ्न होने की दृष्टि से उसे किस दर पर देना उचित होगा।

२८. बिजली के अतिरिक्त उत्पादन का अधिकतर भाग योजना के सरकारी क्षेत्र में रहेगा। इस कारण इस क्षेत्र मे सरकार की स्थिति बहुत शीघ्र सर्वोपरि हो जाएगी। १९५०-५१ में सरकार केवल ६ लाख किलोवाट बिजली का उत्पादन करती थी। यह परिमाण बढकर १९६०-६१ में ४३ लाख किलोवाट तक पहुंच जाने की आशा है। बिजली के उत्पादन मे सरकार का भाग, आगामी १० वर्षो में २६ प्रतिशत से बढ़कर ६७ प्रतिशत हो जाएगा। इसी प्रसंग मे यह जान लेना भी महत्वपूर्ण होगा कि योजना के सरकारी भाग मे विद्युत उत्पादन के लिए किया गया विनियोग १९५०-५१ मे ४० करोड़ रुपए था। वह बढ़कर १९५५-५६ में लगभग २७० करोड़ रुपए हो गया और १९६०-६१ तक उसके ६८० करोड़ रुपए हो जाने की आशा है।

उद्योगों और खानों का विकास

२९. द्वितीय और प्रथम योजनाओं मे सब से बड़ा अन्तर यह है कि द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र में उद्योगो और खानो के विकास को सबसे अधिक प्राथमिकता दी गई है। भारत मे आर्थिक आयोजन की एक मानी हुई विशेषता यह है कि कृषि, बिजली, माल की ढुलाई, यात्रियों के यातायात और सामाजिक सेवाओं के विकास कार्य में पहल सरकार कर रही है। परन्तु अभी तक उद्योगों और खानों के विकास के कार्य योजना के सरकारी क्षेत्र के विनियोग कार्यक्रम में प्रमुखता से दृष्टिगोचर नही हुए थे। उदाहरणार्थ, प्रथम योजना के सरकारी क्षेत्र मे तो, बड़े उद्योगों की स्थापना के लिए, केवल ९४ करोड़ रुपए रखा गया था; और इसकी तुलना में योजना के निजी क्षेत्र में इसी कार्य के लिए, लगभग २३३ करोड़ रुपया व्यय हुआ था। द्वितीय योजना के सरकारी भाग में बड़े उद्योगों और खानों (वैज्ञानिक अन्वेषण को सम्मिलित करके) क लिए ६९० करोड रुपए की राशि रखी गई है। इसकी तुलना मे योजना के निजी भाग मे इन कार्यों पर नया विनियोग लगभग ५७५ करोड़ रुपए का होगा। औद्योगिक उन्नति मे निजी भाग भी निस्संदेह महत्वपूर्ण योग देगा, परन्तु सरकारी भाग मे इन कार्यो की उन्नति पर विशेष बल दिया जाएगा।

३०. सरकारी भाग में बड़े उद्योगों और खानों का विकास करने के लिए, ६९० करोड़ रुपए की जो राशि रखी गई है, वह प्रायः सब की सब लोहे और इस्पात, कोयले, रासायनिक खादों, बिजली के बड़े यन्त्रों और इजीनियरिग के अन्य भारी कामो आदि आधारभूत उद्योगो पर व्यय की जाएगी। द्वितीय योजना के समय इस्पात तैयार करने के ३ कारखाने राउरकेला, भिलाई और दुर्गापुर में खोले जाएंगे। इनमें से प्रत्येक की सामर्थ्य १० लाख टन इस्पात की सिल्लियां बना सकने की होगी। इनमे से एक कारखाने मे ३ लाख ५० हजार टन ढला हुआ लोहा भी बेचने के लिए तैयार किया जाएगा। मैसूर के लोहे और इस्पात के कारखाने मे इस्पात

उत्पादन की सामर्थ्य बढ़ाकर १ लाख टन कर दी जाएगी। आशा है कि सरकारी क्षेत्र के सब कारखानों का इस्पात उत्पादन मिलाकर, द्वितीय योजना के अन्त में, २० लाख टन तक पहुंच जाएगा।

३१. बड़े इंजीनियरिंग उद्योगों की स्थापना के कार्यक्रम में, रेलवे की भारी ढलाई की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए इस्पात की ढलाई का एक बड़ा कारखाना तो चित्तरंजन में रेलवे के इंजन बनाने के कारखाने में खोला जाएगा, और तीन नए कारखाने लोहे की ढलाई तथा कुटाई-पिटाई के बड़े काम करने और इमारती सामान तैयार करने के लिए, "राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम" की अधीनता में खोले जाएंगे। सरकारी क्षेत्र में, बिजली के बड़े यन्त्र बनाने की व्यवस्था भी की जा रही है। चित्तरंजन का इंजनों का कारखाना अब प्रति वर्ष १२५ इंजन बना रहा है, उसकी सामर्थ्य बढ़ाकर ३०० इंजन प्रति वर्ष बनाने की कर दी जाएगी। पैराम्बूर के रेल के जोड़हीन डिब्बे बनाने के कारखाने में उत्पादन का कार्य १९५५ में आरम्भ हो गया। वहां १९५९ तक ३५० डिब्बे प्रति वर्ष बनने लगेंगे। छोटी लाइन के लिए भी डिब्बे बनाने का एक कारखाना खोला जाएगा।

३२. आशा है कि खनिज पदार्थों का उत्पादन द्वितीय योजना के काल में ५८ प्रतिशत बढ़ जाएगा। इस प्रसंग में कोयले की चर्चा विशेष रूप में कर देनी चाहिए, क्योंकि उद्योगों और परिवहन के विकास कार्यों के लिए, उसके उत्पादन में वृद्धि की बहुत आवश्यकता पड़ेगी। इस समय देश में ३८० लाख टन कोयला निकाला जाता है। इसका बड़ा भाग योजना के निजी क्षेत्र में निकलता है। सरकारी क्षेत्र में केवल ४५ लाख टन कोयला निकलता है। आगामी ५ वर्षों में कोयले का उत्पादन लगभग २२० लाख टन बढ़ा देने का विचार है। इसमें से १२० लाख टन तो सरकारी क्षेत्र में बढ़ाया जाएगा और शेष १०० लाख टन किसी निजी क्षेत्र में।

३३. दक्षिण भारत में कोयले की खानें कम है, इसलिए दक्षिणी अर्काट जिले के नेवेली स्थान पर लिगनाइट कोयला खोदने के बहूद्देशीय कार्य को सब से पहले हाथ में लिया जा रहा है। यहां ३५ लाख टन लिगनाइट खोदकर, उसका उपयोग—(१) बिजली के एक कारखाने में २११ हजार किलोवाट बिजली उत्पन्न करने के लिए, (२) ७ लाख टन वार्षिक सामर्थ्य के एक कारखाने में ऊंचे किस्म की कारबन की ईंटे तैयार करने के लिए, और (३) यूरिया और सल्फेट तथा नाइट्रेट के रूप मे ७० हजार टन जमा हुआ नाइट्रोजन तैयार करने के लिए किया जाएगा। इसके अतिरिक्त रासायनिक खाद बनाने के दो नये कारखाने खोले जाएंगे। इनमें से एक नंगल में खोला जाएगा। उसमें ७० हजार टन स्थिर नाइट्रोजन की समता का नाइट्रोजन वाला चूने का पत्थर प्रति वर्ष तैयार किया जाएगा। रासायनिक खाद का दूसरा कारखाना राउरकेला में खोला जाएगा। उसमें प्रति वर्ष ८० हजार टन स्थिर नाइट्रोजन के बराबर, नाइट्रोजन-वाला चूने का पत्थर तैयार किया जाएगा। सिन्दरी के रासायनिक खाद कारखाने का काम भी और बढ़ाया जाएगा। उसका उत्पादन प्रति वर्ष ६६ हजार टन नाइट्रोजन से बढ़ाकर, ११७ हजार टन कर दिया जाएगा।

३४. डी० डी० टी० तैयार करने और हिन्दुस्तान केबल्स, हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक्स और इंडियन टेलीफोन उद्योग के जो कारखाने प्रथम योजना के समय खोले गये थे उन्हें और बढ़ा दिया जाएगा। डी० डी० टी० का एक और कारखाना तिरुवांकुर-कोचीन में खोला जाएगा। राज्यों में जो कारखाने खोले जाएंगे उनमें से पश्चिम बंगाल में, कोक तैयार करने के

दुर्गापुर के कारखाने का, और मैसूर के 'पोर्सीलेन इंसुलेटर' और 'ट्रांसफार्मर' (बिजली की धारा को बदलने वाला यन्त्र) बनाने वाले कारखाने का जिक्र विशेष रूप से किया जा सकता है ।

३५ योजना के निजी क्षेत्र में जो पूजी-विनियोग होगा, उसका भी अधिक भाग आधारभूत उद्योगो की उन्नति पर ही व्यय किया जाएगा । निजी क्षेत्र मे लोहे और इस्पात के उद्योग की सामर्थ्य बढाने के लिए बहुत बड़ा कार्यक्रम तैयार किया गया है । इस समय इस क्षेत्र मे १२।। लाख टन इस्पात तैयार होता है । आशा है १९५८ तक वह बढ़कर २३ लाख टन हो जाएगा । इस समय सीमेंट ४३ लाख टन तैयार होता है । आशा है कि वह बढ़कर योजना के अन्त तक १३०. लाख टन होने लगेगा । सीमेंट के कारखानों की सामर्थ्य १६० लाख टन तक कर देने का विचार है । इसी प्रकार एल्यूमिनियम, इस्पात-निर्माण मे काम आने वाले मैगनीज, और बहुत ऊंचे ताप की भट्ठियों मे काम आने वाली ईंटों का उत्पादन भी बहुत बढ़ाया जाएगा ।

३६ योजना के निजी क्षेत्र के विकास कार्यक्रमों में, सूती वस्त्र और पटसन बुनने, चीनी, कागज और सीमेंट बनाने और खेती मे तथा सड़को पर काम आने वाले यन्त्रो का निर्माण भी सम्मिलित है । रासायनिक उद्योग की प्रथम योजना के समय में भी बहुत उन्नति हुई थी । द्वितीय योजना मे इस उद्योग का विस्तार विभिन्न दिशाओ मे किया जाएगा । उदाहरणार्थ, सोडा एश का उत्पादन तिगुना और कास्टिक सोडे का चौगुना कर दिया जाएगा । तेल शोध का तीसरा कारखाना विशाखापत्तनम् में १९५७ तक बनकर तैयार हो जाएगा । तब, देश की औद्योगिक और पावर अल्कोहल तैयार करने की सामर्थ्य २७० लाख गैलन से बढ़कर ३६० लाख गैलन हो जाएगी ।

३७. उपभोग्य पदार्थों के उद्योगों मे से, सूती वस्त्र का उत्पादन २४ प्रतिशत बढ़ाकर वर्तमान ६८५ करोड़ गज से ८५० करोड़ गज कर दिया जाएगा । अभी तक यह निश्चय नही किया गया है कि इस उत्पादन का कितना भाग बडी मिलों में, और कितना हाथकरघा और शक्ति से चलने वाले करघों में बनेगा । इसी प्रकार यह भी निश्चय करना अभी शेष है कि कितना सूत मिलों से और कितना चरखों से काता जाएगा । ये दोनों निश्चय हाथकरघों और अम्बर चर्खे की भावी सम्भावित सामर्थ्य को देखकर किये जाएंगे । वस्त्र के उत्पादन का जो लक्ष्य यहा बताया गया है वह लगभग १८ गज प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष के व्यय और १०० करोड़ गज के वार्षिक निर्यात के आधार पर रखा गया है । वस्तुतः हाल के वर्षों में कपड़े की माग जिस प्रकार बढ़ती रही है उसे देखते हुए कपड़े का उत्पादन इससे भी अधिक करने की आवश्यकता पड सकती है । अन्य उपभोग्य पदार्थों के सम्बन्ध में द्वितीय योजना का लक्ष्य, चीनी का उत्पादन लगभग ३५ प्रतिशत और कागज और गत्ते का शत-प्रतिशत बढ़ा देने और वनस्पति तेलों का १६ लाख टन से २१ लाख टन कर देने का है । रेयन (नकली रेशम) और औषधियों आदि के निर्माण का विकास भी द्वितीय योजना के कार्यक्रम मे सम्मिलित किया गया है ।

३८. सरकारी और निजी, दोनो क्षेत्रों के कारखानों का उत्पादन द्वितीय योजना के समय मे ६४ प्रतिशत बढ़ जाने की आशा है । यन्त्र तैयार करने के उद्योगों पर कितना अधिक ध्यान दिया जाएगा, इसका कुछ अन्दाजा इस बात से हो सकता है कि उनके उत्पादन मे डेढ़

सौ प्रतिशत तक वृद्धि हो जाने की आशा है। भारत में आधारभूत उद्योगों का विकास अभी आरम्भिक अवस्था में ही है। इस समय हमारे देश की बढ़ती हुई बहुत-सी आवश्यकताएं विदेशों से आयात करके पूरी की जाती है। इससे स्पष्ट है कि अपने औद्योगिक विकास में हमें किस दिशा में आगे बढ़ना चाहिए। ज्यों-ज्यों ये आवश्यकताएं देश में ही पूरी होती जाएंगी और आधारभूत उद्योगों का संगठन दृढ़तर होता जाएगा, त्यों-त्यों हमारे लिए यह विचार करना आवश्यक हो जाएगा कि यन्त्र-निर्माण के उद्योगों, उपभोग्य वस्तुएं तैयार करने के उद्योगों और छोटे उद्योगों का सन्तुलित विकास किस प्रकार किया जाए।

३९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ग्रामोद्योगों और छोटे उद्योगों के विकास के लिए २०० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसमें से ५९॥ करोड़ रुपए हाथकरघा उद्योग के लिए, ५५ करोड़ रुपए छोटे उद्योगों के लिए, ५५॥ करोड़ रुपए खादी तथा अन्य ग्रामोद्योगों के लिए, और शेष अन्य उद्योगों के लिए रखे गए हैं। इनमें से प्रत्येक उद्योग के उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित करने से पहले, प्रत्येक उद्योग की सामर्थ्य और सम्भावनाओं के विषय में विशेष जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता होगी।

परिवहन और संचार

४०. योजना के सरकारी क्षेत्र में परिवहन और संचार के विकास के लिए १,३८५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। इसमें से ९०० करोड़ रुपए रेलों के लिए हैं। इसके अतिरिक्त रेलें कोई २२५ करोड़ रुपए अपना पुराना सामान बदलने पर व्यय करेंगी। गत विश्व युद्ध के समय और उसके बाद के कुछ वर्षों में पुराना सामान बदला नहीं गया था, इस कारण यह आवश्यकता बहुत बढ़ गई है। वह अभी तक पूरी नहीं की गई। द्वितीय योजना में उद्योगों और खानों का विकास अधिक होने के कारण, रेलों का यातायात बहुत अधिक बढ़ जाने की सम्भावना है। १९५५-५६ में रेलों द्वारा १२ करोड़ टन माल की ढुलाई की गई थी, यह बढ़ कर १९६०-६१ में १८·१ करोड़ टन हो जाने, अर्थात ५० प्रतिशत बढ़ जाने की सम्भावना है। सम्भव है कि रेलों की उन्नति के लिए ९०० करोड़ रुपए की जो बड़ी राशि रखी गई है, वह भी माल के इस अतिरिक्त परिवहन का सामना करने के लिए पर्याप्त सिद्ध न हो। इस कारण द्वितीय योजना में यात्रियों का यातायात केवल ३ प्रतिशत बढ़ाने का विचार है। यात्रियों के यातायात में केवल इतनी वृद्धि करने से रेलों की वर्तमान भीड़-भाड़ में सुधार नहीं होगा। ९०० करोड़ रुपए की राशि में देश के उन भागों में नई रेलवे लाइनें बनाने का कार्यक्रम भी सम्मिलित नहीं है जहां कि अब तक रेलें नहीं पहुंची। नई लाइनें केवल वहां बनाई जाएंगी जहां कि औद्योगिक प्रयोजनों या अन्य किसी कार्यक्रम की पूर्ति के लिए आवश्यकता होगी। रेलों की वर्तमान अवस्था और सामर्थ्य में सुधार करने पर द्वितीय योजना के समय विशेष ध्यान दिया जाएगा। रेलों और परिवहन के अन्य साधनों के विकास कार्यक्रमों पर प्रति वर्ष विचार किया जाता रहेगा, जिससे कि परिवहन की अपर्याप्तता के कारण योजना की प्रगति में कोई बाधा न पड़े।

४१. रेलों की उन्नति के कार्यक्रम में १,६०७ मील रेलवे लाइन का दुहरा करना, २६५ मील छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदलना, ८२६ मील में बिजली की रेलें चलाना, और १,२९३ मील में इंजनों में कोयले और भाप की जगह डीज़ल तेल के इंजनों का प्रयोग करना भी सम्मिलित है। ८४२ मील लम्बी नई रेल बनाई जाएगी और ८,००० मील लम्बी पुरानी लाइन को बदलकर नया किया जाएगा।

४२. इस समय रेलो में ९७४ करोड़ रुपए की पूंजी लगी हुई है, और इस प्रकार रेलें देश का सब से बड़ा उद्योग है। परिवहन की बहुत बड़ी आवश्यकता पूरी करने के अतिरिक्त रेलें अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए बहुत-से कारखाने भी चलाती है। इन कारखानों को द्वितीय योजना मे बहुत बढाया जाएगा। रेलों के औद्योगिक विकास का कार्यक्रम कितना बडा है, इसका कुछ अन्दाजा यह देखकर लगाया जा सकता है कि द्वितीय योजना के समय हमारी रेलों को सब मिलाकर २,२५८ इंजन, १,०७,२४७ मालगाड़ी के डिब्बे और ११,३६४ सवारी गाडी के डिब्बे खरीदने पडेंगे, और इनकी तुलना में इन वस्तुओ का निर्माण बढ़कर द्वितीय योजना के अन्त मे क्रमश: ४,००, २५,००० और १,८०० वार्षिक हो जाने की आशा है। द्वितीय योजना के समय रेलों को ४२५ करोड़ रुपए का सामान विदेशों से मंगाना पडेगा। इसमें से १३७ करोड रुपए इस्पात पर, ८१ करोड़ रुपए इंजनों पर और शेष यात्रियों तथा माल के डिब्बो आदि अन्य सामानो पर व्यय होगें। द्वितीय योजना मे औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने के जो लक्ष्य रखे गये है, उनकी यदि पूर्ति हो गई तो आगामी योजनाओं के समय रेलों को विदेशी आयात का सहारा कम से कम लेना पड़ेगा।

४३. द्वितीय योजना में सड़कों और सडकों पर परिवहन के लिए २६३ करोड़ रुपए; जहाजरानी, बन्दरगाहों, जहाज घाटों और नदी तथा नहरों के मार्ग से ढुलाई के लिए ९६ करोड रुपए, नागरिक हवाई परिवहन के लिए ४३ करोड रुपए, और प्रसारण, डाक व तार और अन्य संचार के कार्यो के लिए ७६ करोड रुपए की व्यवस्था की गई है। नागपुर योजना (१९४३) में सडको का विकास करने के लिए २० वर्ष का एक लम्बा-चौडा कार्यक्रम बनाया गया था। अब द्वितीय योजना में सडकों के विकास पर जो विनियोग किया जाएगा उससे नागपुर योजना में प्रस्तावित सड़कों का विस्तार १९६०-६१ तक पूरा हो लेगा। सड़कों के परिवहन का राष्ट्रीयकरण करने का कार्यक्रम उचित रूप से कुछ वर्षों में फैलाकर पूरा किया जाएगा, और आशा है कि राज्यों की सरकारें अपने वर्तमान साधनों में लगभग ५ हजार गाड़ियों की वृद्धि कर लेगी। बड़े बन्दरगाहों की सामर्थ्य मे ३० प्रतिशत वृद्धि की जाएगी, और समुद्र-तट के राज्यो में छोटे बन्दरगाहों का अधिक विकास किया जाएगा। इस योजना में प्रकाश-स्तम्भों का विकास करने का कार्यक्रम भी काफी बडा रखा गया है। प्रथम योजना समाप्त होने पर जहाजों की कुल भारवहन क्षमता ६ लाख जी० आर० टी० थी जो द्वितीय योजना क अन्त में ९० हजार टन के जहाज पुराने व बेकार हो जाने पर भी ९ लाख जी० आर० टी० हो जाने की सम्भावना है। यह ठीक है कि जहाजरानी के लिए जो राशि रखी गई है, वह शायद अपर्याप्त रहेगी। इस कारण उसे और बढाने की आवश्यकता होगी—विशेषत. इस कारण कि जहाजो के मूल्य बढ रहे है। विशाखापत्तनम् के हिन्दुस्तान शिपयार्ड नामक जहाजी कारखाने का विस्तार करके, वहा जहाजों की मरम्मत के लिए एक सूखा जहाज-घाट बनाया जाएगा। सम्भव है कि बाद को एक और भी जहाजी कारखाना बनाने पर विचार किया जाए। इडियन एयर लाइन्स कार्पोरेशन और एयर इंडिया इंटरनेशनल (भारत सरकार की राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय हवाई सर्विसों के नाम) दोनों ने बहुत-से वायुयान खरीदने और अपने वर्तमान हवाई यातायात मे नई सुविधाएं बढाने का कार्यक्रम बनाया हुआ है। डाक-घरो की सख्या प्रथम योजनाकाल मे बढ़ाकर ३६ हजार से ५५ हजार कर दी गई थी। उसे और भी बढाकर द्वितीय योजनाकाल मे ७५ हजार कर दिया जाएगा। टेलीफोनों की माग शीघ्रता से बढ रही है। द्वितीय योजनाकाल मे टेलीफोनों की संख्या में ६७ प्रतिशत वृद्धि—उनकी संख्या २ लाख ७० हजार से ४ लाख ५० हजार—कर देने का कार्यक्रम है। यह ध्यान

रखना आवश्यक है कि टेलीफोन की सुविधाओं के विस्तार और टेलीफोनों के निर्माण की वर्तमान गति में संगति रहे। इसलिए इन दोनों कार्यों में मेल का ध्यान रखकर ही आगे बढ़ना होगा। सम्भव है कि इस बात को ध्यान में रखकर इस कार्यक्रम पर योजनाकाल में ही पुनर्विचार करना पड़े। प्रसार का विस्तार करने के लिए दिल्ली में एक नया ट्रांसमीटर (प्रसारक यन्त्र) १०० किलोवाट शार्ट वेव का और एक नया प्रसारक १०० किलोवाट मीडियम वेव का; और कलकत्ता, बम्बई तथा मद्रास में एक एक नया ट्रांसमीटर ५०-५० किलोवाट शार्ट वेव का लगाया जाएगा। देहातों में लगभग ७२ हजार नये रेडियो रिसीवर लगाये जाएंगे।

सामाजिक सेवाएं

४४. सामाजिक सेवाओं के लिए द्वितीय योजना में ९४५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। यह प्रथम योजना की राशि से लगभग दुगुनी है। शिक्षण और चिकित्सा की सुविधाओं में वृद्धि, और औद्योगिक श्रमिकों, विस्थापित लोगों और अन्य अधिकारहीन वर्गों की दशा में सुधार, सामाजिक सेवाओं के विशिष्ट अंग हैं। इन सेवाओं के द्वारा देश में सबके लिए अवसरों की अधिक समानता उत्पन्न करके, समाज को समाजवादी आदर्श पर संगठित करने के लक्ष्य को पूरा करने का प्रयत्न किया जाएगा।

४५. संविधान का एक निदेशक सिद्धान्त यह है कि १९५०-५१ के पश्चात १० वर्ष के भीतर, १४ वर्ष तक की आयु के सब बालकों के लिए निःशुल्क अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था कर दी जाए। परन्तु द्वितीय योजना में जो लक्ष्य रखे गये हैं, उनके द्वारा १९६०-६१ तक ६ से ११ वर्ष तक की आयु के बालकों में से केवल ६३ प्रतिशत, और ११ से १४ वर्ष की आयु के बालकों में से केवल २२.५ प्रतिशत के लिए उक्त व्यवस्था की जा सकेगी। इसी अवधि में प्रारम्भिक शिक्षण पाने वाले बालकों की संख्या ७७ लाख और माध्यमिक शिक्षण पाने वाले बालकों की संख्या १३ लाख बढ़ जाएगी। योजना के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए ५३ हजार प्राइमरी स्कूल और ३,५०० मिडिल स्कूल नये खोलने पड़ेंगे। हाई और हायर सैकेंडरी स्कूलों में शिक्षण के क्रम को अधिकाधिक विभिन्न प्रकार का करते जाने का विचार है। प्रथम योजना के अन्त में बहूद्देश्यीय स्कूलों की संख्या २५० थी। द्वितीय योजना के अन्त में उसे बढ़ाकर १,२०० तक पहुंचा दिया जाएगा। विकास के प्रत्येक क्षेत्र में प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता शीघ्रातिशीघ्र और अधिकाधिक संख्या में पड़ेगी। इसलिए देश के उत्तरी, पश्चिमी और दक्षिणी भागों में ३ नये हायर टैक्नोलौजीकल इंस्टीट्यूट खोलने का, और दिल्ली के पोलीटेकनीक और खड़गपुर के इंस्टीट्यूट आफ टैक्नोलौजी का अधिक विस्तार करने का विचार है। धनबाद के इंडियन स्कूल आफ माइन्स एण्ड एप्लाइड जिओलौजी का भी विस्तार किया जाएगा। इंजीनियरिंग सिखाने वाली संस्थाओं में से स्नातक और स्नातकोत्तर शिक्षण देने वाली संस्थाओं की संख्या ४५ से ५४, और डिप्लोमा देने वाली संस्थाओं की संख्या ८३ से १०४ कर दी जाएगी। १९५५ में इंजीनियरी के ग्रेजुएट ३,००० और डिप्लोमा होल्डर ३,५६० निकले थे। १९६० में इनकी संख्या बढ़ाकर क्रमशः ५,४८० और ८,००० कर दी जाएगी।

४६. देश में स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार करते हुए बड़ी कठिनाई यह होती है कि प्रशिक्षित व्यक्ति पर्याप्त संख्या में नहीं मिलते। इसलिए डाक्टरों, नर्सों और हैल्थ असिस्टेंटों की संख्या द्वितीय योजना काल में क्रमशः १८, ४१ और ७५ प्रतिशत बढ़ा दी जाएगी।

चिकित्सालयो में रोगियों को रखने की व्यवस्था मे भी २४ प्रतिशत वृद्धि कर देने का विचार है। पारिवारिक नियोजन के लिए ४ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, और आशा है कि द्वितीय योजना काल मे इस प्रयोजन के लिए नगरों में ३०० और ग्रामो मे २,००० क्लिनिक खोले जाएंगे ।

४७. निर्माण, आवास और सम्भरण मंत्रालय, आवास के जो नये कार्य करेगा उनके लिए १२० करोड रुपए की राशि रखी गई है। इसके अतिरिक्त, केन्द्रीय सरकार के रेलवे, लोहा तथा इस्पात, उत्पादन, पुनर्वास और प्रतिरक्षा आदि मन्त्रालयो और राज्य सरकारों के भी नये भवन बनाने के बहुत-से कार्यक्रम है। द्वितीय योजना काल में सरकारी संस्थाएं जो निवास-गृह बनाएगी उनकी सख्या १३ लाख तक पहुंच जाएगी । द्वितीय योजना मे श्रम-कल्याण के कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए २९ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है। कल्याण केन्द्रों और प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार करने के अतिरिक्त, एक विचार यह भी है कि काम-दिलाऊ दफ्तरो की संख्या बढाकर १३६ से २५६ कर दी जाए, और इनके कार्य का विस्तार कर दिया जाए। पिछड़े हुए वर्गो के कल्याण के लिए जो कार्य प्रथम योजना काल में आरम्भ किये गये थे, वे द्वितीय योजना काल मे भी अधिक बडे पैमाने पर जारी रहेंगे। जो सस्थाएं समाज कल्याण का कार्य स्वेच्छा से करती है, उनको भी और अधिक सहायता दी जाएगी। विस्थापित लोगों के पुनर्वास का कार्य द्वितीय योजना काल मे भी जारी रखना पड़ेगा। इस कार्य के लिए ९० करोड़ रुपए की राशि रखी गई है।

राष्ट्रीय आय, खपत और रोजगार

४८. इस कार्य के लिए जो लक्ष्य रखे गये है, और विकास के जो कार्य आरम्भ किये जाएंगे, उनकी रूपरेखा पिछले अध्यायो मे दी जा चुकी है। विविध क्षेत्रों में विकास का जो कार्य किया जाएगा, वह राष्ट्रीय आय की वृद्धि से प्रकट होगा। प्रथम और द्वितीय योजना की अवधियो में राष्ट्रीय आय मे जो वृद्धि होने की आशा है, वह नीचे की तालिका में प्रकट की गई है:

उद्योगों के द्वारा होने वाला राष्ट्रीय उत्पादन

(१९५२-५३ के मूल्यों के आधार पर करोड़ रु०)

				प्रतिशत वृद्धि	
	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	१९५१–५६	१९५६–६१
१	२	३	४	५	६
१. कृषि और सम्बद्ध कार्य	४,४५०	५,२३०	६,१७०	१८	१८
२. खानें	८०	९५	१५०	१९	५८
३ कारखाने	५९०	८४०	१,३८०	४३	६४
४ छोटे उद्योग	७४०	८४०	१,०८५	१४	३०
५. निर्माण	१८०	२२०	२९५	२२	३४
६. वाणिज्य, परिवहन और संचार	१,६५०	१,८७५	२,३००	१४	२३

१	२	३	४	५	६
७. पेशे और नौकरियां (सरकारी नौकरियां सम्मिलित करके)	१,४२०	१,७००	२,१००	२०	२३
८. समस्त राष्ट्रीय उत्पादन	९,११०	१०,८००	१३,४८०	१८	२५
९. प्रति व्यक्ति आय (रु०)	२५३	२८१	३३१	११	१८

४९. ऊपर की तालिका मे कृषि, खानों और कारखानों के बड़े-बड़े विभागों के समस्त उत्पादन का अन्दाजा, पहले प्रकरणों में बताए हुए उत्पादन के विस्तृत लक्ष्यों के आधार पर, किया गया है। परन्तु व्यापार, पेशों और नौकरियों आदि के जो विभाग योजना के क्षेत्र से बाहर के हैं, उनकी आय का तो केवल अप्रत्यक्ष अन्दाजा ही लगाया जा सकता है। तो भी इन अन्दाजों से यह स्पष्ट हो जाता है कि १९५५-५६ में जो राष्ट्रीय आय १०,८०० करोड़ रुपए की थी वह (मूल्यों को अपरिवर्तित मानते हुए) १९६०-६१ में बढ़कर १३,४८० करोड़ रुपए हो जाएगी, अर्थात उसमें लगभग २५ प्रतिशत की वृद्धि होगी। इसका अर्थ यह है कि प्रति व्यक्ति की आय में लगभग १८ प्रतिशत की वृद्धि होगी, और वह १९५५-५६ की २८१ रुपए की आय से बढ़कर १९६०-६१ में ३३१ रुपए की हो जाएगी। यह वृद्धि प्रथम योजना काल में केवल ११ प्रतिशत हुई थी। (उन्हीं पांच वर्षों में आय २५३ रुपए से बढ़कर २८१ रुपए तक पहुंची थी।) यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि द्वितीय योजना में खानों और कारखानों के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि का कार्यक्रम होने पर भी देश की सारी अर्थ-व्यवस्था में योजना काल में परिवर्तन थोड़ा ही होगा। उदाहरणार्थ, राष्ट्रीय आय में कृषि और उससे सम्बद्ध कार्यों का भाग १९५५-५६ में ४८ प्रतिशत था, वह घटकर १९६०-६१ में ४६ प्रतिशत रह जाएगा। और इसके विपरीत खानो और कारखानों का भाग बढ़कर ९ से ११ प्रतिशत हो जाएगा। इस बात से इस विचार का समर्थन होता है कि आगामी योजना कालों में औद्योगिक उन्नति पर अधिकाधिक बल देने की आवश्यकता कितनी अधिक रहेगी।

५०. हमारी अर्थ-व्यवस्था में खपत के औसत स्तर में वृद्धि उतनी द्रुत गति से नहीं होगी जितनी कि राष्ट्रीय आय में। इसका कारण यह है कि देश में उत्पादन का अधिकतर भाग बचाकर योजना की पूर्ति में लगा दिया जाएगा। द्वितीय योजना काल में विनियोग का कार्यक्रम ६,२०० करोड़ रुपए का रखा गया है। इसे पूरा करने के लिए १९६०-६१ तक राष्ट्रीय आय का लगभग १० प्रतिशत योजना में लगा देना पड़ेगा। इस समय इस विनियोग का परिमाण राष्ट्रीय आय का केवल ७ प्रतिशत है। यह अवस्था तब है जब कि योजना में यह कल्पना कर ली गई है कि देश की बचत को १,१०० करोड़ रुपए के विदेशी साधनों का योग भी मिल सकेगा। इस कल्पना के आधार पर देश मे समस्त खपत में वृद्धि केवल २१ प्रतिशत हो सकेगी। और उसके विपरीत राष्ट्रीय आय में वृद्धि २५ प्रतिशत की होगी। प्रथम योजना काल की तुलना में खपत की यह वृद्धि १६ प्रतिशत है। नीचे की तालिका में मोटे हिसाब से

यह दिखाया गया है कि द्वितीय योजना काल के अन्त में १९५०-५१ और १९५५-५६ की स्थिति की तुलना में राष्ट्रीय आय, पूंजी-विनियोग, देश की बचत, और खपत में कितनी-कितनी वृद्धि होगी :

राष्ट्रीय आय, विनियोग, बचत और खपत

—	(१९५२-५३ के मूल्यो के आधार पर करोड रु०)		
	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
१. राष्ट्रीय आय	९,११०	१०,८००	१३,४८०
२. विशुद्ध विनियोग	४४८	७९०	१,४४०
३. विदेशी साधनो की प्राप्ति	(–)७	३४	१३०
४. देश की विशुद्ध बचत (२–३)	४५५	७५६	१,३१०
५. खपत पर व्यय (१–४)	८,६५५	१०,०४४	१२,१७०
६. राष्ट्रीय आय मे विनियोग			
६ राष्ट्रीय आय मे विनियोग का प्रतिशत (उक्त क्रम २, क्रम १ का प्रतिशत है)	४ ९४	७ ३१	१० ६८
७ राष्ट्रीय आय में देश की बचत का प्रतिशत (उक्त क्रम ४, क्रम १ का प्रतिशत है)	४ ९८	७·००	९ ७

५१. यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि विदेशी साधन आवश्यक मात्रा मे न मिल सके, तो खपत में वृद्धि को उसी हिसाब से अधिक सीमित कर देना पडेगा। सच तो यह है कि खपत मे वृद्धि की कल्पना इसी आधार पर की गई है कि ६,२०० करोड़ रुपए का विनियोग हो जाने पर राष्ट्रीय आय में २५ प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी, और इतनी मात्रा में विनियोग करने के लिए आवश्यक बचत भी की जा सकेगी। आवश्यक मात्रा मे साधन एकत्र करने की समस्या पर विचार अगले अध्याय मे किया गया है। महत्वपूर्ण बात यह है कि राष्ट्रीय आय और खपत के स्तर मे आशानुरूप वृद्धि तभी हो सकती है जब कि आवश्यक परिमाण में विनियोग को सफल बनाने के लिए खपत मे वृद्धि को नियन्त्रित रखा जाए। यह भी स्पष्ट है कि ६,२०० करोड रुपए विनियोग करने का परिणाम राष्ट्रीय आय मे २५ प्रतिशत वृद्धि के रूप मे तभी प्रकट होगा जब कि कुछेक कल्पनाए यथार्थ सिद्ध हो जाएगी। ये कल्पनाए है—योजना के विविध कार्यक्रमों की परस्पर सगति, अपव्यय का न होना, उत्पादन के लिए उन्नत उपायो का अवलम्बन करने और विकास के अनुकूल वातावरण तैयार करने मे जनता का सहयोग और समर्थन प्राप्त करने के लिए उपयुक्त नेताओं का मिल जाना और अभीष्ट प्रयत्न का होना। किसी भी योजना की सफलता का अन्दाजा केवल उसके कार्यक्रमो की सूची को पढ़कर नही लगाया जा सकता। सफलता तभी प्राप्त हो सकती है जब कि योजना के कार्यक्रमों और नीतियों को पूरा करने के लिए उचित उत्साह और संगठन बनाकर कार्य किया जाए।

५२. द्वितीय योजना से रोजगार में कितनी वृद्धि हो सकेगी और आर्थिक नीति में क्या-क्या परिवर्तन होंगे, इन प्रश्नो पर विचार पाचवें अध्याय में किया गया है। अन्दाजा यह है कि द्वितीय योजना काल में कृषि के अतिरिक्त, अन्य क्षेत्रो में ८० लाख व्यक्तियों को नया रोजगार मिल सकेगा। यह हिसाब केवल पूरे समय के रोजगारों का है। योजना में सिंचाई और नई भूमि तोडने आदि जैसे विकास कार्यक्रम भी है, जिनसे अर्ध-रोजगार में कमी करने में सहायता मिलेगी। सम्भव है कि इन कामों से कुछ नए लोगों को भी रोजगार मिल जाए। हमारे देहातो का आज जो सामाजिक और आर्थिक संगठन है, उससे काम और आमदनी का ऐसा हिसाब नहीं किया जा सकता कि उससे यह स्पष्ट हो जाए कि कितने लोगों को तो पूरे समय का रोजगार मिला और कितनों की अर्ध-रोजगारी कम हुई। योजना में कृषि का जितना उत्पादन बढ़ने और कृषि के पेशे से बाहर के पेशों में जितने नए रोजगार मिलने की कल्पना की गई है उसके पूरा हो जाने पर आमदनियों में काफी वृद्धि हो जाएगी, और जीवन की प्रथम अवस्था में अर्ध-रोजगारी कम होने में सहायता मिलेगी। योजना में देहाती और छोटे उद्योगों की उन्नति और पुनर्गठन करने के जो मार्ग सुझाए गए हैं, उन पर चलने से इन उद्योगों में लगे हुए बहुत-से लोगों को अब से अधिक रोजगार मिल सकेगा। सारांश यह है कि आगामी पांच वर्षों में श्रमिकों की संख्या में लगभग एक करोड़ की जो वृद्धि हो जाएगी, उसे सन्तुलित करने के लिए सब मिलाकर योजना के द्वारा श्रमिको की माग पर्याप्त मात्रा में बढ़ाई जा सकेगी।

परिशिष्ट

योजना पर राज्यों का व्यय

	(करोड़ रुपयों में) प्रथम योजना	द्वितीय योजना
	१	२
आन्ध्र	७५·६	११६·०
असम	२८·१	५७·६
बिहार	१०४·४	१६४·२
बम्बई	१८१·३	२६६·२
मध्य प्रदेश	५७·५	१२३·७
मद्रास	६७·०	१७३·१
उड़ीसा	८५·२	१००·०
पंजाब	१२४·०	१२६·३
उत्तर प्रदेश	१६५.६	२५३·१
पश्चिम बंगाल	१५१·६	१५३·७
(क) भाग के राज्यों का योग	१०७१ २	१५६७·२
हैदराबाद	५७·०	१००·२
मध्यभारत	३६·१	६७·३
मैसूर	५३·२	८०·६
पैप्सू	३६·२	३६·३
राजस्थान	६२·८	६७·४
सौराष्ट्र	२६·८	४७ ७
तिरुवांकुर-कोचीन	३५·४	७२·०
जम्मू व कश्मीर	१३·२	३३·६
(ख) भाग के राज्यों का योग	३२६·७	५३५ ४
अजमेर	३·६	७·६
भोपाल	६·३	१४ ३
कुर्ग	२·०	३·८
दिल्ली	१०·५	१७·०
हिमाचल प्रदेश	७·५	१४·७
कच्छ	४·८	७·६
मणिपुर	२·२	६·२
त्रिपुरा	३·०	८·५
विन्ध्य प्रदेश	६·३	२४·६
(ग) भाग के राज्यों का योग	५२·२	१०५·२

—	१	२
अण्डमान-निकोबार द्वीपसमूह .	१·५	५·६
उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी	४·४	६·५
पाडिचेरी .. .	०·८	८·८
योग	६·७	२०·२
दामोदर घाटी निगम के व्यय में केन्द्र का भाग . .	—	१२·२
राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्य . .	—	०·७ +
समस्त योग	१४५६·८	२२४०·६

+ यह राशि उस १८७ करोड़ रुपए के अतिरिक्त है, जो कि योजना में पृथक-पृथक राज्यों के लिए रखी गई है। द्वितीय योजना में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों के लिए २०० करोड रुपए की राशि रखी गई है। इसमें से लगभग १२ करोड़ रुपए केन्द्र का भाग है। जब राज्यों की योजनाएं तैयार की गई थीं तब पृथक-पृथक राज्य के लिए इस खाते में अस्थायी राशियां रख दी गई थी। इन पर इस कार्यक्रम का अधिक हाल मालूम होने के बाद पुनर्विचार किया जाएगा।

अध्याय ४

वित्त और विदेशी मुद्रा

इस अध्याय में यह बतलाया जाएगा कि योजना के लिए आवश्यक वित्तीय साधनों का संग्रह किस प्रकार किया जाएगा, और इस सम्बन्ध में जो नीति सम्बन्धी प्रश्न उठेंगे उनमें से भी कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया जाएगा। साधन एकत्र करने की समस्या पर विचार करते हुए सरकारी और निजी दोनों क्षेत्रों को ध्यान में रखना होगा, क्योंकि दोनों अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति बचत के एक ही कोष में से करते हैं। यह भी सावधानी रखनी होगी कि देश के वित्तीय साधनों के अतिरिक्त विदेशी मुद्रा भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होती रहे।

२. मूल प्रश्न यह है कि देश में जितनी वित्तीय बचत करने की आवश्यकता है उतनी हो सकती है या नहीं, और हो सकती है तो कैसे ? इस प्रश्न का उत्तर केवल इस निर्णय पर निर्भर नहीं करता है कि एक सीमा से आगे व्यय को सीमित कर देना वाछनीय होगा या नहीं, बल्कि वर्तमान आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियों में इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए जो उपाय काम में लाये जा सकते हैं उनकी उपयुक्तता के बारे में भी देखना होगा। एक लोकतन्त्री राज्य में कर-प्रणाली और अन्य आर्थिक नीतियों के निर्धारण में पिछली बात महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से इस संदर्भ में जहा निजी और सरकारी क्षेत्रों को साथ-साथ काम करना हो। यह बात विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि एक बार विनियोग की जाने वाली राशि का निश्चय कर लेने के पश्चात, उसे एकत्र करने के लिए आवश्यक बचत करनी ही होगी, और उसका अधिक भाग अपनी ही अर्थ-व्यवस्था में से निकालना होगा। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि विदेशी विनिमय की समस्या की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पड़ेगी। औद्योगीकरण के मार्ग पर कदम बढ़ाने वाले देश को शुरू-शुरू में आवश्यक मशीनों और साज-सामान का विदेशों से आयात करना ही पड़ता है, और इस कारण विदेशी मुद्रा का अधिकतम मात्रा में एकत्र करना उसके लिए नितान्त आवश्यक हो जाता है। आयात में अधिकतम सयम करने के पश्चात भी, पूर्ति के लिए बड़ी मात्रा में विदेशी साधनों की आवश्यकता रहेगी। इस तथ्य से स्पष्ट है कि निर्यात बढाने की नीति पर सक्रियता से चलना कितना अधिक आवश्यक है।

सार्वजनिक क्षेत्र के लिए वित्त

३. केन्द्र और राज्यों की सरकारों के विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए ४,८०० करोड़ रुपए की आवश्यकता कूती गई है। उसे इस प्रकार एकत्र करने का विचार है :

	(करोड़ रु०)
१. चालू राजस्व खाते से बचत	८००
क. कर की वर्तमान (१९५५-५६) दर से	३५०
ख. नये करों से	४५०

	(करोड़ रु०)
२. जनता से ऋण	१,२००
क. बाजार के ऋण	७००
ख. छोटी-छोटी बचतें	५००
३. बजट के अन्य साधन	४००
क. विकास कार्यक्रमों में रेलवे का भाग	१५०
ख. प्रोविडेण्ट फण्ड और अन्य जमा के खाते	२५०
४. विदेशों से	८००
५. घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा	१,२००
६. कमी—यह देश के साधनों को उन्नत करके पूरी की जाएगी	४००
योग ...	४,८००

केन्द्र और राज्यों की सरकारें टैक्स लगाकर, ऋण लेकर, और अन्य साधनों द्वारा अपने बजटों में जो राशि बचा सकती हैं, वह २,४०० करोड़ रुपए कूती गयी है। १,२०० करोड़ की राशि घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा इकट्ठी की जा सकती है। विदेशों में एकत्र की जाने वाली ८०० करोड़ रुपए की राशि मिलाकर, सरकारी क्षेत्र के कार्यक्रम पूरे करने के लिए उपलब्ध साधनों का योग ४,४०० करोड़ रुपए हो जाता है। इसके बाद भी ४०० करोड़ रुपए की कमी रह जाती है। इसे पूरा करने के उपाय ढूंढने होंगे। यह मान लिया गया है कि अन्त में यह कमी देश के साधनों में वृद्धि करके ही पूरी करनी होगी। यह देखते हुए कि घाटे की जिस वित्त-व्यवस्था की आगे चर्चा की जाएगी उसकी कुछ अपनी सीमाएं हैं, और यहां पूंजी एकत्र करने की जो रूपरेखा आंकी गयी है उसका बहुत कुछ दारोमदार कर्ज लेने पर है; इस कमी को पूरा करने का एकमात्र सम्भव उपाय कर लगाना और सरकारी उद्योग-व्यवसायों से यथासंभव लाभ है।

४. करो की वर्तमान दरों के आधार पर, चालू राजस्व खाते से योजना के व्यय पूरे करने के लिए ३५० करोड़ रुपए बच जाने का जो अन्दाजा लगाया गया है वह केन्द्र और राज्य सरकारों की समस्त आय पर विस्तारपूर्वक विचार कर लेने के पश्चात ही किया गया है। यह अन्दाजा लगाते हुए प्रतिरक्षा और प्रशासन सरीखे व्यय के विकासेतर मदों में न्यूनतम वृद्धि की ही कल्पना की गयी है। समाज सेवाओं तथा इसी प्रकार के अन्य विकास कार्यों को चालू रखने के लिए १९५५-५६ के अन्त तक जिस स्तर तक व्यय पहुंच गया था उसकी व्यवस्था कर ली गई है, क्योंकि इस प्रकार के व्यय योजना में सम्मिलित नहीं किये गये हैं। १९५५-५६ में टैक्सों की जो दर होंगी उनके आधार पर, योजना के पांच वर्षों में, केन्द्र और राज्यों की सरकारों की समस्त आय ५,००० करोड रुपए होने का अनुमान किया गया है। इसमें से ४,६५० करोड़ रुपए प्रतिरक्षा आदि उन विकासेतर कार्यों और समाज सेवा आदि उन विकास कार्यों को जारी रखने पर व्यय हो जाएंगे जिनका अभी जिक्र किया गया है। इस प्रकार की योजना पर व्यय करने के लिए ३५० करोड़ रुपए बच जाएंगे। यहां इस बात पर जोर देना जरूरी है कि वर्तमान दरों के आधार पर राजस्व में से यह ३५० करोड़ रुपए बचाने के लिए, विकासेतर खातों के व्यय

पर कडी दृष्टि रखनी पड़ेगी। यदि कही ये व्यय बढ़ गए, या यदि शराबबन्दी जैसे समाज सुधार के कार्यों पर अमल करने के कारण कहीं राजस्व मे विशेष कमी हो गई, तो योजना के चालू राजस्व खाते मे से मिलने वाले भाग को यथापूर्व बनाये रखने के लिए साथ ही साथ साधन वृद्धि का विशेष प्रयत्न करना पड़ेगा।

५. ऊपर नये करो द्वारा ४५० करोड़ रुपए एकत्र करने के जिस लक्ष्य की चर्चा की गई है वह नये प्रयत्नो की न्यूनतम सीमा है। इस राशि का अन्दाजा लगाते हुए कर जांच आयोग की सिफारिशो पर भी विचार कर लिया गया है और यह मान लिया गया है कि योजना आरम्भ होने के पश्चात उन पर अमल करने की कार्रवाई यथाशीघ्र की जाएगी। आशा है कि राज्यों की सब सरकारे मिलकर राजस्व में कुल मिलाकर २२५ करोड़ रुपए की वृद्धि कर सकेगी, और केन्द्रीय सरकार भी इतनी ही वृद्धि कर लेगी। इस हिसाब से सरकार के चालू राजस्व-खाते से योजना के लिए मिलने वाली राशि ८०० करोड रुपए तक पहुंच जाती है जो समस्त अपेक्षित साधनो का केवल छठा भाग है। जैसा कि आगे बतलाया गया है, सारी आवश्यकताओ का खयाल रखते हुए सरकारी आय का इतना योग पर्याप्त नही है, इसलिए यदि पूरी योजना को पूर्णत. अमल मे लाना है और साथ ही मुद्रा-स्फीति के दुष्प्रभावो को दबाए रखना है तो कर बढ़ाने के प्रयत्न करने पड़ेगे।

६. पिछले कुछ वर्षों मे सरकार द्वारा ऋण लेने के कार्यक्रमों का अच्छा स्वागत हुआ। प्रथम योजना मे ११५ करोड़ रुपए ऋण लेने का जो लक्ष्य रखा गया था, उससे लगभग ६५ करोड़ रुपया अधिक मिला। सरकारी ऋणो की मांग मे सुधार मुख्यतया अन्तिम दो वर्षों मे हुआ। इनमे सरकार को औसतन ६५ करोड़ रुपए प्रति वर्ष नया ऋण मिल गया। इस अवधि में रिजर्व बैंक के पास (ट्रेजरी बिलों अर्थात छोटी मियाद की सरकारी हुण्डियों को छोड़ कर) जो सरकारी कागज (सिक्युरिटियां—ऋण-पत्र) जमा थे उनके मूल्य में लगभग ७० करोड़ रुपए की कमी हो गई। इसका मतलब यह है कि कोई २५० करोड़ रुपए के सरकारी कागज बाजार में (व्यापारी बैंकों को शामिल करके) खप गए। यदि केन्द्र और राज्यो की सरकारों के पास सुरक्षित रखी हुई सरकारी हुण्डियों की बिक्री भी हिसाब में शामिल कर ली जाए, तो बाजार में सरकारी कागज की खपत का परिमाण और भी ऊंचा हो जाएगा।

७. इसलिए द्वितीय योजना की अवधि में जनता से ७०० करोड़ रु० का—औसतन १४० करोड़ रुपए प्रति वर्ष—ऋण मिल जाने का जो अन्दाजा लगाया गया है वह यह मानकर लगाया गया है कि इस सूत्र से होने वाली प्राप्ति का वार्षिक औसत, हाल के वर्षों में हुई प्राप्ति से लगभग ४० प्रतिशत ऊंचा रहेगा। यह लक्ष्य बहुत ऊंचा तो अवश्य नही है, परन्तु इसे निर्धारित करते समय यह ध्यान रखा गया है कि द्वितीय योजना की अवधि में जो सरकारी ऋण चुकाने योग्य हो जायेंगे उनकी राशि ४३० करोड़ रुपए होगी। इस कारण इस अवधि में सब मिलाकर १,१३० करोड़ रुपए का ऋण लेना पडेगा। इसके अतिरिक्त, इस समय निजी कारबार मे भी पूजी की माग बहुत अधिक है। इन दोनों बातो को ध्यान मे रखते हुए सरकारी कामों मे लगाने के लिए जनता द्वारा ७०० करोड़ रुपए की बचत इकट्ठी कर लेने का काम सरल नहीं जान पड़ता। इस प्रसंग मे सामाजिक सुरक्षा के कार्यो का विस्तार करने की सम्भावनाओ पर भी भली भाति विचार कर लेना चाहिए। इन कार्यो द्वारा कर्मचारियो के साथ तो न्याय होता ही है, अतिरिक्त बचत का भी एक मूल्यवान साधन हाथ लग जाता है। प्रोविडेण्ट फण्डों और इसी प्रकार के बचत के अन्य कामों द्वारा जो धनराशि एकत्र होती है वह अब भी जनता

मे ऋण मिलने का एक महत्वपूर्ण साधन है। आशा है कि आगामी वर्षों में इनका महत्व और भी बढ़ जाएगा। जीवन बीमे का राष्ट्रीयकरण किया तो गया है लोगों में बीमा कराने की आदत डालने के लिए, परन्तु वह जनता से ऋण मिलने का भी ऐसा साधन है जो निरन्तर बढ़ता ही जाएगा।

८. छोटी-छोटी बचतों से द्वितीय योजना की अवधि में ५०० करोड़ रुपए एकत्र हो जाने का अन्दाजा लगाया गया है। गत वर्षों में इस सूत्र से प्राप्त राशि में निरन्तर वृद्धि होती रही है। १९५०-५१ में ३३ करोड़ रुपए एकत्र हुए थे और १९५५-५६ में ६५ करोड़ हुए। द्वितीय योजना की अवधि में प्रति वर्ष औसतन १०० करोड़ रुपए मिलने का जो लक्ष्य रखा गया है उसकी पूर्ति के लिए इन बचतों को काफी बढ़ाना होगा। इसके लिए थोड़ी-थोड़ी बचत करने के आन्दोलन को प्रबलतर और देश-व्यापी बनाकर, उसे घर-घर और निम्नतम आय वर्ग के लोगों तक पहुंचाने की आवश्यकता है। हमारा सुझाव है कि इस बात का गहन अध्ययन किया जाए कि शहरी और देहाती क्षेत्रों में छोटी-छोटी बचत करने का आन्दोलन अभी किस अवस्था तक पहुंचा है, और उसके आधार पर राज्य सरकारें और गैर-सरकारी संगठन मिलकर ऐसा प्रयत्न करें कि योजना का सन्देश देश भर में फैल जाए और अल्प बचत का आन्दोलन जिन इलाकों और लोगों तक अभी नहीं पहुंचा है उन तक भी पहुंच जाए। इसका उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रत्येक नागरिक को देश की अर्थ-व्यवस्था सुधारने में योग देने के लिए—वह कितना ही थोड़ा क्यों न हो—प्रेरित किया जा सके।

९. रेलों को उन्नत करने की योजना ९०० करोड़ रुपए की बनाई गई है। उसके लिए पूंजी एकत्र करने में रेलों को १५० करोड़ रुपए का योग देना होगा। प्रथम योजना में रेलों की उन्नति पर २६७ करोड़ रुपए व्यय करने का लक्ष्य रखा गया था, और उसमें रेलों ने ११५ करोड़ रुपए का योग दिया था। द्वितीय योजना में, रेलों के अपने योग का अनुपात बहुत कम रखा गया है। बात यह है कि देश की अर्थ-व्यवस्था में जो नए सुधार किए जाएंगे उनकी सफलता के लिए रेलों को बहुत कम समय में काफी अधिक नई जिम्मेदारियां उठानी पड़ेंगी। इसके लिए रेलों को अनिवार्य रूप से सामान्य कोष में से बड़ी मात्रा में सहायता लेनी पड़ेगी। इस कारण रेलें अपनी उन्नति में क्यों अधिक योग नहीं दे सकेंगी, यह बात समझ में आ जाती है। मूल्यह्रास के चालू खाते में भी रेलों को योजना की अवधि मे २२५ करोड़ रुपए देने पड़ेंगे। यह राशि योजना के व्यय में सम्मिलित नहीं की गई, फिर भी यह उचित समझा गया है कि रेलों को अपनी उन्नति में न्यूनतम १५० करोड़ रुपए का योग देना ही चाहिए। हम यह बात दोहरा देना चाहते हैं कि अन्य सब निजी या सरकारी विकास कार्यों के समान रेलों को भी अपने विस्तार की आवश्यकताओं का बड़ा भाग अपने ही साधनों से पूरा करना चाहिए। द्वितीय योजना काल में रेलवे यातायात में भी बहुत वृद्धि होने की सम्भावना है। यद्यपि इसका कुछ भाग ऐसा भी होगा जिससे आय में उसी अनुपात से वृद्धि होगी तथापि कुल मिलाकर रेलों की आमदनी बढ़ जाएगी। यह मान लेने के बाद भी कि रेलों के प्रबन्ध-व्यय में अनिवार्य रूप से कुछ वृद्धि हो जाएगी, हमें लगता है कि रेलों से अपनी उन्नति में जितना योग देने के लिए कहा जा रहा है उसका कुछ भाग उन्हें वर्तमान दरों पर ही यातायात बढ़ जाने से प्राप्त हो जाएगा और कुछ भाग की पूर्ति उन्हें यात्रियों के किरायों और माल के भाड़े में आवश्यक हेर-फेर करके करनी पड़ेगी। हमारी सिफारिश तो यह है कि द्वितीय योजना के कारण सरकार के वित्तीय साधनों पर जो भारी बोझ पड़ेगा उसका विचार करते हुए रेलों को

चाहिए कि उनके जिम्मे जो १५० करोड़ रुपए डाला गया है वे उससे अधिक जुटाने का प्रयत्न करें ।

१०. प्रोविडेण्ट फण्डो और इसी प्रकार के अन्य जमा-खातो से २५० करोड़ रुपए मिल जाने का अन्दाजा लगाया गया है। यह अन्दाजा इस समय इन खातो से मिलने वाली राशियो की वर्तमान प्रवृत्तियो को देखते हुए लगाया गया है। १९५५-५६ मे केन्द्रीय सरकार के पास प्रोविडेण्ट फण्डो की राशि १७ करोड रुपए तक एकत्र हो जाने का अन्दाजा है और राज्य सरकारों के पास इस अवधि मे इस खाते की राशि का परिमाण ६ करोड़ ६० लाख तक पहुंच जाएगा। इन दोनों का योग २३ करोड ६० लाख होता है। इसे देखते हुए यह अन्दाजा लगाना संगत ही जान पड़ता है कि द्वितीय योजना काल में इस खाते में एकत्र राशि १५० करोड रुपए तक पहुच जाएगी। शेष १०० करोड़ रुपए की राशि, केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा दिये हुए ऋणो की वसूली तथा पूजी-खाते मे प्राप्त हुई अन्य रकमो से पूरी हो जाएगी।

११. अब तक गिनाए गए साधनों का योग २,४०० करोड़ रुपए होता है। समस्या शेष २,४०० करोड रुपए एकत्र करने की रह जाती है। इसका ५० प्रतिशत, अर्थात मोटे हिसाब से १,२०० करोड़ रुपए, घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा निकाला जा सकता है। योजना मे ८०० करोड रुपए विदेशो से मिल जाने की आशा की गई है। प्रथम योजना मे विदेशी ऋणों और सहायताओं का परिमाण ४० करोड रुपए वार्षिक रहा था। इस प्रकार ऊपर बताई गई योजना में विदेशों से प्रति वर्ष १६० करोड रुपए मिल जाने की जो बात कही गई है वह पहले से बहुत अधिक है।

१२. स्पष्ट है कि देश के वित्तीय साधनो पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना का भारी बोझ पड़ेगा, परन्तु विकास की किसी भी योजना मे बोझ तो पडा ही करता है, अर्थात योजना की परिभाषा ही यह है कि विनियोग के स्तर को औसत से ऊंचा उठाना अर्थात इसका अर्थ यह निकलता है कि आवश्यक साधनों का सग्रह करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक प्रयत्न करने की आवश्यकता है। फलत. साधन एकत्र करने का कार्य, इस दृष्टि से और अगले कई वर्षों तक देश की आर्थिक आवश्यकताओ के निरन्तर बढते रहने की दृष्टि से, करना होगा। विनियोग और राष्ट्रीय आय का स्तर शीघ्रातिशीघ्र ऊंचा उठाने के लक्ष्य की पूर्ति के लिए देश में निरन्तर और अधिकाधिक बचत करनी होगी।

बचत और सरकारी विनियोग

१३. सरकारी क्षेत्र के विकास कार्यक्रमो के लिए पूंजी जुटाने की समस्या को एक अन्य दृष्टि से भी देखा जा सकता है। पांच वर्षो मे ४,८०० करोड़ रुपए व्यय करने की जो योजना बनाई गई है उसमे से लगभग १,००० करोड रुपए, शिक्षण, स्वास्थ्य, वैज्ञानिक अनुसन्धान और राष्ट्रीय विस्तार जैसे विकास कार्यो के प्रसार के लिए, चालू व्यय के रूप में, खर्च किए जाएंगे। इस प्रकार के व्ययो का परिणाम उत्पादक साधनों के रूप मे प्रकट नही होता, और इस कारण ही इन व्ययो को विनियोगेतर व्यय मानने की परम्परा पड़ चुकी है। इस प्रकार के व्यय को चालू साधनों में से ही करना पडता है। इसलिए ४,८०० करोड़ रुपए की योजना में विनियोग-व्यय का भाग ३,८०० करोड रुपए ही रह जाता है और उसकी पूर्ति ऋण लेकर की जा सकती है। जो अर्थ-व्यवस्था विकसित हो रही हो और जिसमें पूजी निर्माण पर व्यय जल्दी-जल्दी बढ़ते जा रहे हों, उसमे वस्तुतः उचित यही होता है कि कुछ व्ययों की पूर्ति नए

टैक्स लगाकर की जाए। इस सिद्धान्त पर प्रथम योजना की रिपोर्ट में भी बल दिया गया था, और अब फिर बल देने की आवश्यकता है।

१४. योजना के लिए आवश्यक पूंजी एकत्र करने के लिए जो उपाय सोचे गए हैं, उनके अनुसार आय के चालू खातों की बचत केवल ८०० करोड़ रुपए बैठती है, और इसकी तुलना में योजना के चालू खातों का व्यय १,००० करोड़ रुपए बैठ जाता है। रेलें १५० करोड़ रुपए का जो योग देंगी उसे भी चालू राजस्व-खातों का ही भाग समझना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि योजना के चालू खातों में व्यय तो १,००० करोड़ रुपए का हो जाएगा और चालू खातों से आय केवल ९५० करोड़ रुपए की होगी। इस प्रकार योजना पर ३,८०० करोड़ रुपए का जो व्यय होगा उसकी पूर्ति के लिए सरकारी बचत तो कुछ होती नहीं, व्यय ५० करोड़ रुपए का हो जाता है। दूसरे शब्दों में, ३,८०० करोड़ रुपए की सारी पूंजी का निर्माण—बल्कि इससे कुछ अधिक पूंजी—निजी बचतों द्वारा ही पूरी करनी होगी। जो ८०० करोड़ रुपए विदेशों से मिलने का अन्दाजा किया गया है उसे यदि सर्वथा पृथक राशि माना जाए—क्योंकि वह विदेशी साधनों की बचत होगी—और ब्रिटेन में एकत्र पाउण्ड-पावने में से ली जाने वाली २०० करोड़ रुपए की राशि को भी इसमें जोड़ लिया जाए, तो जनता की निजी बचत में से एकत्र करके जो धनराशि सरकारी विनियोग-खाते में डालनी पड़ेगी वह २,८५० करोड़ रुपए बैठेगी। यदि यह भी मान लें कि ४०० करोड़ रुपए की जिस राशि की पूर्ति का अभी कोई उपाय नहीं सोचा गया वह आगे चलकर सरकारी बचत से ही पूरी हो जाएगी तो भी, सरकारी उपयोग में लाई जाने वाली निजी बचत का परिमाण २,४५० करोड़ रुपए होना चाहिए।

१५. तो क्या यह मानकर चलना तर्क-संगत होगा कि निजी बचत से २,४५० करोड़ रुपए सरकारी कोष में उपयोग करने के लिए मिल जाएंगे? इस प्रसंग में यह स्पष्ट हो जाता है कि बाजार के ऋण, छोटी-छोटी बचतों और घाटे की वित्त-व्यवस्था में अन्तर का कोई विशेष महत्व नहीं है। ये सब स्वेच्छा से या मूल्य ऊंचे करके विवशता से, निजी बचत को सरकारी कोष की दिशा में मोड़ देने के उपाय मात्र हैं। निजी बचत सरकारी कोष में किस प्रकार और कितनी पहुंचती है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि जनता अपने धन को, नकद, सरकारी हुण्डियों, सेविंग्स सर्टिफिकेटों अथवा बैंकों में जमा आदि किस रूप में रखना पसन्द करती है। यदि सरकार को मिलने वाली राशि पर्याप्त हो तो इस बात का महत्व अधिक नहीं कि उसका रूप—सरकारी ऋण, सेविंग्स सर्टिफिकेट या नकदी नोटों आदि में से—क्या है। इसलिए प्रथम विचारणीय बात यह है कि क्या जनता की निजी बचत, उसके निजी विनियोग की आवश्यकता से इतनी अधिक हो सकेगी जितनी कि सरकार को आवश्यकता है। इन अर्थों में निजी बचत को पर्याप्त तभी माना जा सकेगा जब कि लोगों के व्यय पर लगाए हुए आवश्यक प्रतिबन्धों पर भली प्रकार अमल होने लगेगा। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ यह है कि करों अथवा सरकारी उद्योगों के लाभ के रूप में सरकार को प्राप्त होने वाली जनता की बचत का परिमाण जितना कम होगा, उतना ही उसके (जनता के) व्यय को अभीष्ट सीमा में रखने के लिए अन्य उपायों का अवलम्बन करने की आवश्यकता अधिक होगी।

१६. यदि जनता की बचत को अभीष्ट सीमा तक बढ़ाने के उपाय न किए जाएंगे, तो वित्तीय साधनों को, यहां निर्दिष्ट परिमाण में, अपने लिए संगृहीत करने के जो भी प्रयत्न सरकार करेगी उन सबका परिणाम अनिवार्य रूप से मुद्रा-स्फीति के रूप में प्रकट होगा—मुद्रा-स्फीति के प्रकट लक्षण यही तो होते हैं कि लोगों की बचत सरकारी कोष में तो कम

पहुचती है और उनके हाथ मे जो अपेक्षाकृत अधिक नकद धन रह जाता है उसे व्यय करने का प्रलोभन नाना दिशाओ मे होने लगता है और वही उपभोग्य वस्तुओ का बाजार ऊंचा उठा देने का कारण बन जाता है। इस प्रसग मे यह बतला देना भी उचित है कि बचत बढाने की नीति को सफल बनाने के लिए आवश्यक दो प्रारम्भिक उपाय मुद्रा-स्फीति के कारणों को नियन्त्रण मे रखना और मुद्रा की स्थिरता मे जनता का विश्वास बनाए रखना है। जनता से ऋण लेने के सम्बन्ध मे सरकार को प्रथम योजना के पहले और पिछले वर्षो मे जो अनुभव हुए, उनकी एक-दूसरे से भिन्नता यह भली भाति प्रकट कर चुकी है कि ऋण लेने और बचत बढाने की नीति अत्यधिक सफल तभी होती है जब कि लोगो का सरकार की वित्तीय स्थिरता मे विश्वास होता है। तब, एक तो सट्टेबाजी के अवसर कम रह जाते है और दूसरे जनता का सरकारी मुद्रा के प्रति दृष्टिकोण अनुकूल रहता है।

घाटे की वित्त-व्यवस्था

१७. अब हमारे सामने यह प्रश्न आता है कि घाटे की वित्त-व्यवस्था कितनी और किस सीमा तक की जा सकती है। प्रथम योजना के विवरण मे घाटे की वित्त-व्यवस्था का अर्थ यह बतलाया गया था कि सरकार को करों, सरकारी उद्योग-व्यवसायो की आमदनी, सार्वजनिक ऋणों, जमा-खातो और अन्य विविध सूत्रो से जो नकद आय हो, उससे व्यय का अधिक हो जाना। 'घाटे की वित्त-व्यवस्था' की यह परिभाषा दो सिद्धान्तो पर आधारित है। प्रथम सिद्धान्त तो यह था कि घाटे का निर्णय केवल आय के हिसाब को देखकर नही, अपितु केन्द्र और राज्य दोनो की सरकारों के राजस्व-खाते और पूजी-खाते के सब भुगतानों को देखकर करना चाहिए। और दूसरा यह था कि कोई वित्त-व्यवस्था घाटे की वित्त-व्यवस्था है या नही, इसका निर्णय करते हुए यह देख लेना चाहिए कि उसके कारण नकद धन का चलन तो नही बढ जाएगा। इनमे से पहले सिद्धान्त का तो अपवाद कही भी नहीं होता। दूसरे के विषय मे प्रश्न उठता है कि बजट की किसी कार्रवाई का नकदी (नोटो और रुपए) के चलन पर सीधा और स्पष्ट प्रभाव क्या पड़ेगा, इसका निश्चय केवल उसी कार्रवाई के विषय में कर सकना सम्भव भी है या नही। नकद रोकड़ बाकी मे से रुपया निकाल लेने और अधिक ऋण ले लेने का फल प्रायः नकदी का परिमाण बढ जाने के रूप में प्रकट होता है, और इसलिए इन दोनों कार्रवाइयो को घाटे की वित्त-व्यवस्था का अग माना जाता है। परन्तु दूसरी कार्रवाई के विषय में प्रश्न हो सकता है कि क्या थोड़ी मियाद के सभी ऋणों से नकदी का परिमाण अवश्य बढ जाता है, अथवा केन्द्रीय बैंक, बाजार के व्यापारी बैंको और जनता से ऋण लेने मे कुछ भी अन्तर नहीं करना चाहिए? सिद्धान्ततः सरकार द्वारा छोटी और बड़ी दोनों मियादो का ऋण लेने में अन्तर करना चाहिए। जब सरकारी व्यय केन्द्रीय (अर्थात रिजर्व) बैंक से ऋण लेकर किया जाता है, तब प्रत्यक्ष है कि बाजार में नकदी का चलन बढ जाता है। सरकारी हुण्डिया को व्यापारी बैंकों द्वारा और सीधे जनता द्वारा खरीद को भी, एक समान नही माना जा सकता। नकदी के चलन पर सरकार के ऋण लेने का प्रभाव इस बात पर निर्भर करेगा कि ऋण किससे लिया गया है, और इसलिए सरकार की ऋण लेने की कार्रवाइयो को केवल नकदी के चलन पर प्रभाव की दृष्टि से नही देखना चाहिए। इसके अतिरिक्त, सरकारी हुण्डियां सदा उन्हीं व्यक्तियों या संस्थाओ के साथ में नही रहती जो कि उन्हे पहले-पहल खरीदते है। यहा आकर सरकार की अर्थनीति और केन्द्रीय (रिजर्व) बैंक की मुद्रानीति परस्पर रिल-मिल जाती है, इस कारण इन दोनों के प्रभावों को एक-दूसरे से पृथक करके देख सकना कठिन है। अतः

एकमात्र व्यावहारिक मार्ग यह रह जाता है कि कोई ऐसी सरल परिपाटी अपना ली जाए जो विद्यमान परिस्थितियों में इष्ट प्रयोजनों के अधिकतम समीप पहुचा दे। भारत में साधारणतया सरकार लम्बी मियाद के ऋण केन्द्रीय बैंक से न लेकर, केवल छोटी मियाद के ऋणों के लिए उसका सहारा लेती है, इसलिए रोकड़ बाकी में से कितनी रकम ली गई और चालू ऋणों में कितनी वृद्धि हुई, इन दो बातों को देख लेने से इस बात का खासा अच्छा पता लग जाता है कि बजट का नकदी के चलन पर क्या प्रभाव पड़ा। तो भी इस बात पर हम विशेष बल देना चाहते है कि बजट, नकदी और विदेशी मुद्रा से सम्बद्ध सब व्यवहारों का विशिष्ट संदर्भ में सूक्ष्म विश्लेषण करने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नही है।

१८. उदाहरणार्थ, यह स्पष्ट है कि रोकड बाकी में जितनी कमी या अल्पकालीन ऋण मे जितनी बढ़ती हो उतनी ही मात्रा यदि सुरक्षित विदेशी मुद्रा-कोष से निकाल ली जाए तो सब मिलाकर देश मे नकदी के चलन मे कोई वृद्धि नही होगी। फिर भी, सुगमता इसी में रहती है कि रोकड़ बाकी में कमी और थोडी मियाद के ऋण मे बढ़नी को, घाटे की वित्त-व्यवस्था माना जाए; और सुरक्षित विदेशी मुद्रा-कोष में न्यूनता का, रोकड़ बाकी में से नकदी निकाल लेने पर जो प्रभाव हो, उसे पृथक दृष्टि से देखा जाए। इस प्रसग में, इसी प्रकार की एक अन्य समस्या का जिक्र कर देना चाहिए, जो कि केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा अपने रोकड़ बाकी-विनियोग के खातों में बेची हुई हुण्डियो के कारण खड़ी होती है। प्रथम योजना में इस व्यवहार को घाटे की वित्त-व्यवस्था माना गया था। उस समय यह मान लिया गया था कि तब विद्यमान परिस्थितियों में इस बिक्री का बोझ रिजर्व बैंक पर ही पड़ेगा। परन्तु वस्तुतः वैसा हुआ नहीं। जैसा कि पहले बतला चुके है, रिजर्व बैंक के पास लम्बी मियाद की जो हुण्डिया थीं वे घट गईं। इसका प्रभाव यह हुआ कि पुरानी हुण्डियों को बेचने से नकदी के चलन का परिमाण बढ़ा नहीं। इस प्रकार एक कल्पना के अनुसार तो सुरक्षित रखी हुई पुरानी हुण्डिया बेचने का अभिप्राय घाटे की वित्त-व्यवस्था हो जाता है, और एक अन्य परिस्थिति में उसका प्रभाव जनता से ऋण लेने के समान होता है। सुरक्षित कोष में से बेची हुई सरकारी हुण्डियों को कोई घाटे की वित्त-व्यवस्था मे शामिल करे या नहीं, यह स्पष्ट है कि नकदी के चलन पर घाटे की वित्त-व्यवस्था के प्रभाव का विचार करते हुए, केन्द्रीय बैंक द्वारा सरकारी हुण्डियों की बिक्री जैसी अन्य सम्बद्ध बातों का भी विचार करना ही पड़ेगा। इसके अतिरिक्त, नकदी के चलन में वृद्धि का अन्दाजा लगाते हुए, अन्य कई परिस्थितियों का ध्यान भी रखना पड़ेगा।

१९. अब प्रस्तावित घाटे की वित्त-व्यवस्था का प्रभाव क्या होने की सम्भावना है, इस प्रश्न पर विचार करते हुए १,२०० करोड़ रुपए की घाटे की वित्त-व्यवस्था के मुकाबले में हमें उस २०० करोड़ रुपए को रख लेना चाहिए जो कि पौण्ड-पावने की रोकड़ बाकी में से निकाला जाएगा। शेष १,००० करोड़ रुपए वह राशि है जो कि सरकार अपनी बजट की कार्रवाइयों द्वारा नकदी के चलन में बढ़ा देना चाहती है। इसका एक परिणाम यह होने की सम्भावना है कि बैंक भी अब से अधिक उधार देने लगेंगे और उससे नकदी का चलन और बढ़ जाएगा। परन्तु नकदी के चलन को बढ़ाने की बैंकों की यह सामर्थ्य, एक बात से सीमित हो जाने की सम्भावना है। वह यह है कि भारतीय जनता अपना धन बैंकों में जमा कराने की अपेक्षा, अपने हाथ में नकदी के रूप में रखना पसन्द करती है। इस कारण बैंकों के हाथ में जो नकदी अधिक जाएगी, उसे वे अपेक्षाकृत कम मात्रा में उधार दे सकेंगे। यदि हम यह मान लें कि जो मुद्रा चलन में होगी और जो नकदी बैंकों में जमा की जाएगी, उसके अनुपात में कोई परिवर्तन

नही होगा, तो योजना की सारी अवधि में नकदी के चलन में वृद्धि लगभग ६६ प्रतिशत होगी। आशा है कि इसी अवधि मे राष्ट्रीय आय मे वृद्धि २५ प्रतिशत होगी। इसलिए हम यह मान सकते है कि नकदी के चलन में भी इस सीमा तक वृद्धि से कोई हानि नहीं होगी। अर्थ-व्यवस्था में नकदी का व्यवहार बढ जाने की भी कुछ गुजाइश रखनी चाहिए। ज्यो-ज्यों लोगो के रहन-सहन का स्तर ऊंचा होगा और लोग इस स्थिति में आते जाएगे कि हाथ मे अधिकाधिक नकदी रख सकें, त्यों-त्यों नकदी की माग भी बढ़ती जाएगी। इस सबके पश्चात भी ऊपर नकदी के चलन मे जितनी वृद्धि होने का जिक्र किया गया है उसे सीमा से अधिक ही समझना चाहिए।

२०. घाटे की वित्त-व्यवस्था से बैको की निजी उद्योग-व्यवसायो को उधार देने की सामर्थ्य बढ जाएगी। इसकी आवश्यकता भी है, और एक सीमा तक इसके परिणाम लाभदायक होगे। परन्तु यह ध्यान रखना पडेगा कि उधार अत्यधिक न दिया जाने लगे, क्योंकि उसका मूल्यों पर प्रतिकूल प्रभाव पड सकता है। यह भी ध्यान रखना पड़ेगा कि बैकों के उधार का दुरुपयोग, सट्टेबाजी को बढाने मे न होने लगे जो उत्पादन के लिए अभीष्ट होगा। रिजर्व बैक को व्यापारी बैकों के निरीक्षण और नियंत्रण के व्यापक अधिकार प्राप्त है। वह चाहे तो बैको के उधार देने पर नियंत्रण लगा सकता है और कुछ परिस्थितियों में उनको हिदायतें भी जारी कर सकता है। हमने घाटे की वित्त-व्यवस्था की जो सिफारिश की है, उसके साथ, हमारी राय मे, यह ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है कि बैकों के उधार देने के परिमाण और प्रकार पर नियंत्रण रखा जाए, और उनके द्वारा दिए हुए उधार, और उनके हाथ मे विद्यमान नकद रुपए मे, आवश्यकतानुसार उचित अनुपात स्थिर रखा जाए। यदि केन्द्रीय बैक अपनी नीति इस प्रकार की रखेगा तो उससे देश की वित्त-व्यवस्था को एक-सी और स्थिर गति से चलाने मे बहुत सहायता मिलेगी।

२१. हमने गत एक अध्याय मे बताया है कि घाटे की वित्त-व्यवस्था के अनिष्ट परिणामों को रोकने के लिए क्या-क्या सावधानियाँ की जानी चाहिए। यहा उनकी सक्षेप मे चर्चा कर देना ही पर्याप्त होगा। एक बड़ी सावधानी यह की जानी चाहिए कि खाद्यान्न को पर्याप्त मात्रा मे सग्रह करके रखा जाए जिससे कि मूल्य वृद्धि की सभावना को रोका जा सके। द्वितीय अध्याय में इसे अपनी अर्थ नीति का महत्वपूर्ण अंग माना गया है। द्रुत गति से विकसित होती हुई किसी भी अर्थ-व्यवस्था मे मुद्रा-स्फीति की प्रवृत्तियो का पूर्णत. अत केवल वित्तीय व्यवस्था द्वारा नही किया जा सकता। मुद्रा-स्फीति से बचने का सर्वोत्कृष्ट उपाय तो यह है कि उसे होने ही न दिया जाए, परन्तु बहुत बच-बचकर चलने की नीति भी विकास मे सदा सहायक नही होती। किसी हद तक जोखिम उठानी ही पडती है, और उस जोखिम से बचने का निश्चित उपाय यह है कि खाद्यान्न का और कुछ अन्य आवश्यक वस्तुओ का सुरक्षित भडार अपने हाथ में रखा जाए, जिससे कि जब और जितनी आवश्यकता हो, तब और उतनी मात्रा मे बाजार में बिक्री के लिए विद्यमान माल मे वृद्धि की जा सके। भारतीय अर्थ-व्यवस्था में खाद्यान्न और वस्त्र के मूल्य का महत्व बहुत अधिक है; और उसमें एकदम वृद्धि को सभी उपलब्ध उपायों द्वारा रोकना अत्यधिक आवश्यक है। जब तक मूल्य उचित स्तर पर रहेंगे तब तक साधारण जनता के रहन-सहन का व्यय नियत्रण में रहेगा। अन्य वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि का महत्व उतना नही है, फिर भी किसी भी वस्तु के मूल्य में अत्यधिक वृद्धि से यह भय हो ही जाता है कि साधनों का उपयोग कही अल्प महत्व के कामों मे न होने लगे। परन्तु इस परिस्थिति का निवारण आवश्यक कार्रवाई के द्वारा किया जा सकता है। मुद्रा-स्फीति को रोकने का एक दूसरा उपाय

यह है कि खपत में अत्यधिक वृद्धि को रोकने और घाटे की वित्त-व्यवस्था के कारण होने वाले भारी मुनाफों या अकस्मात ही हो जाने वाली आमदनी को समेट लेने के लिए तुरन्त ही कर लगा दिए जाएं। खपत को सीमा से आगे न बढ़ने देने और दुर्लभ वस्तुओं तथा उत्पादन के दुर्लभ साधनों का उपयोग कम करने के लिए, नियंत्रण का उपयोग अन्तिम उपाय के रूप में ही किया जा सकता है—इसमें वस्तुओं का 'राशन' कर देना और 'कोटा' बांध देना भी शामिल है। परन्तु अब तक का अनुभव यह है कि इस प्रकार के नियंत्रणों का, विशेषत नित्यप्रति काम आने वाली वस्तुओं का नियंत्रण करने का उपाय ऐसा नहीं है कि उसका उपयोग बहुत अधिक समय तक प्रभावशाली रूप से किया जा सके। इसलिए यह और भी आवश्यक हो जाता है कि पहले अन्य सावधानियों और उपायों का प्रयोग पूर्णतया करके देख लिया जाए। योजना को सीमित कर देने की बात पर विचार, अत्यन्त विषम परिस्थितियों में ही किया जा सकता है।

राज्य सरकारों के साधन

२२. अब तक हमने केन्द्र और राज्य सरकारों के साधनों पर विचार योजना के समस्त व्यय—४,८०० करोड़ रुपए—की दृष्टि से किया। अब हम राज्य सरकारों के साधनों का पृथक विश्लेषण करते हैं। इस अध्याय के अन्त में, परिशिष्ट १ में, एतद्विषयक ज्ञातव्य दिया गया है, और निम्नलिखित तालिका में संक्षेप में यह दिखलाया गया है कि 'क' और 'ख' भागों के राज्य अपनी-अपनी योजनाओं में कितना-कितना वित्तीय योग दे सकेंगे :

'क' और 'ख' भाग के राज्यों के वित्तीय साधन

(करोड़ रुपए)
१९५६-६१

—	'क' भाग के राज्य	'ख' भाग के राज्य	योग
१. योजना का परिमाण ...	१५६७·२	५३५·४	२१०२·६
२. राजस्व-खाते के साधन . .	३१२ ३	२४·४	३३६·७
(क) करों की वर्तमान दर से राजस्व में बचत	११५·३	—१७·५	९७·८
(ख) नए कर	१७२·०	४४·०	२१६·०
(ग) केन्द्र से मिलने वाला नए करों का भाग	४९·१	८·१	५७·२
—घटाइए नये सार्वजनिक ऋणों का ब्याज	२४·१	१०·२	३४·३
३. पूंजी-खातों के साधन	३७७·३	१०८·८	४८६·१
(क) जनता से लिये हुए नए ऋण (समस्त) .. .	२१०·०	९०·०	३०० ०
(ख) छोटी बचतें	१५८·५	२१·५	१८०·०

(ग) अन्य प्राप्तिया (शुद्ध*)	८ ८	(—) २·७	६·१
राजस्त्र और पूजी-खातों का योग	६८६·६	१३३·२	८२२·८
साधनो मे कमी	८७७·६	४०२·२	१२७६·८

इससे प्रकट है कि ये राज्य, करो की वर्तमान दरों के आधार पर अपने साधनो में से बचा कर जो राशि दे सकते है वह १०० करोड रुपए से कम है। सब राज्यों के जिम्मे, अतिरिक्त करों के द्वारा २२५ करोड रुपए की वसूली लगाई गई है। उसमे से इन राज्यों का योग २१६ करोड रुपए बैठता है। केन्द्रीय सरकार अतिरिक्त करो के द्वारा जो पूजी एकत्र करेगी उसमे से इन राज्यो को ५७ करोड रुपए मिलने की सम्भावना है। जनता से लिए हुए ऋण पर इन राज्यो को जो ब्याज देना पडेगा उसे घटाने के पश्चात भाग 'क' और 'ख' राज्यों के समस्त साधनो का जोड़ लगभग ३३७ करोड रुपए होता है। द्वितीय योजना की अवधि मे राज्य सरकारो द्वारा जनता से लिये जाने वाले ऋणो की सीमा ३०० करोड़ रुपए रखी गई है। यह इस राशि का मोटा हिसाब है। इससे जो ऋण चुकाने पड़ेंगे उनका जोड़ लगभग ३५ करोड रुपए है। इस प्रकार राज्यो को ऋणो से जो राशि मिलेगी वह २६५ करोड़ रुपए रह जाती है। इसकी तुलना में, केन्द्र और राज्य सरकारो द्वारा लिये जाने वाले समस्त ऋणो की राशि ७०० करोड़ रुपए रखी गई है। आशा है कि राज्य सरकारों को छोटी-छोटी बचतों से १८० करोड रुपए मिलेगे। पूजी-खातो मे राज्य सरकारों को जो अन्य प्राप्तिया होगी, उन्हे मिलाकर इस हिसाब मे राज्यो के साधनों का योग ४८६ करोड रुपए हो जाने की संभावना है। इस प्रकार 'क' और 'ख' भाग के राज्यो के साधनों का योग लगभग ८२३ करोड रुपए हो जाने की आशा है। इसके विपरीत, योजना पर उनके भाग का व्यय २,१०० करोड़ रुपए से ऊपर रखा गया है।

२३. योजना मे 'ग' भाग के राज्यों, अण्डमान तथा निकोबार द्वीपसमूहों, उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सियों और पाण्डिचेरी का अनुमानित व्यय लगभग १२५ करोड़ रुपए है। इस व्यय की पूर्ति के लिए 'ग' भाग के राज्य प्राय कुछ नही दे सकेंगे। प्रत्युत, उनमे से कइयो के राजस्व-खातों की कमी तक को केन्द्रीय सरकार को ही पूरा करना पड़ता है। एसा सुझाया गया है कि 'ग' भाग के राज्यो मे, योजना के ५ वर्षो मे, ६ करोड़ रुपए के नए कर लगाए जाए। उनमे छोटी बचतों से जो राशि एकत्र होगी, उस पर उन्हे केन्द्रीय सरकार की ओर से जो ऋण दिया जाएगा, वह अन्दाजन २० करोड रुपए होगा। सब मिलाकर स्थिति यह है कि इन राज्यो और ऊपर निर्दिष्ट अन्य प्रदेशो की योजना का सारा व्यय केन्द्र को ही उठाना पड़ेगा।

२४ इससे स्पष्ट हो जाता है कि राज्यों के सब साधन मिलाकर भी वे आवश्यकता से बहुत कम रहते है—सारी आवश्यकता का लगभग ६० प्रतिशत कम बैठते है। इस कारण केन्द्र को राज्यो के लिए बहुत बड़ी मात्रा मे साधन जुटाने पड़ेंगे। यह ध्यान रखना चाहिए

*इन प्राप्तियों मे प्रॉविडेन्ट फण्डो मे एकत्र राशियों, ऋणो और पेशगी दी हुई रकमो की वसूली, ऋण को कम करने या उससे बचने के लिए चालू आय मे से ली हुई राशियों और पूजी-खाते की अन्य विविध प्राप्तियो की गणना करके; उनमे से पूजी-खाते मे किये जाने वाले व्यय, ऋणो की अदायगी और जमीदारो तथा जागीरदारो को दिया गया मुआवजा आदि घटा दिए गए है।

कि स्वयं केन्द्र के साधन भी सीमित है, और इसलिए योजना की जितनी बड़ी कल्पना की गई है उतनी को पूरा करने के लिए आवश्यक होगा कि राज्य सरकारें यथाशक्ति अधिक से अधिक साधन प्रदान करे।

२५. राज्य सरकारों द्वारा २२५ करोड़ रुपए के नए कर लगाए जाने का जो लक्ष्य रखा गया है वह उनके साथ काफी विचार करके और कर जांच आयोग की सिफारिशों पर अमल करने से जो प्राप्ति हो सकती है उसे ध्यान में रखकर ही किया गया है। जो नए कर लगाए जाएंगे उनमें जमीन-लगान पर 'सर चार्ज', कृषि की आय कर की दर में वृद्धि और उसके क्षेत्र का विस्तार, सम्पत्ति कर के क्षेत्र का विस्तार, स्थानीय संस्थाओं द्वारा सम्पत्ति के बेचने पर कर, और बिक्री-कर में वृद्धि तथा उसका विस्तार इत्यादि भी सम्मिलित है। जहा तक केन्द्र का सम्बन्ध है, उसने कर-जांच आयोग की कुछ सिफारिशों पर अमल १९५५-५६ में ही आरम्भ कर दिया था। करो की वर्तमान दरों के आधार पर योजना के लिए उपलब्ध साधनों का अन्दाजा लगाते हुए इन सिफारिशों के अमल से होने वाली आय को भी शामिल कर लिया गया था। १९५६-५७ के केन्द्रीय बजट में जो कर लगाये गये है उनसे लगभग ३५ करोड़ रुपए का अतिरिक्त वार्षिक राजस्व होने की संभावना है। इस प्रकार ५ वर्षों में केन्द्र द्वारा २२५ करोड़ रुपए के नए कर लगाए जाने का जो लक्ष्य रखा गया है उसकी पूर्ति के लिए एक बड़ा कदम उठाया जा चुका है। जैसा कि आगे बतलाया गया है कि इस लक्ष्य को और ऊंचा उठाने की आवश्यकता है। परन्तु इस प्रसंग में, हम इस बात पर विशेष बल देना चाहते है कि राज्य सरकारों से नए करों के द्वारा जो २२५ करोड़ रुपए एकत्र करने की आशा रखी गई है उसकी पूर्ति के लिए उन्हें कार्रवाई यथाशीघ्र करनी चाहिए। इस २२५ करोड़ रुपए में से कोई १९६ करोड़ रुपए इकट्ठा करने के उपाय, राज्य सरकारों के साथ विस्तारपूर्वक चर्चा करके, निश्चित किए जा चुके हैं। कुछ राज्यों के साथ अतिरिक्त उपायों के विषय में चर्चा अभी चल रही है। राज्य सरकारें जिन नए करों के द्वारा २२५ करोड़ रुपए एकत्र करेंगी, उनका कुछ विवरण इस प्रकार है :

	(करोड़ रु०)
जमीन लगान	३७·०
कृषि पर आय कर	१२·०
सुधार उपकर (लेवी)	१६·०
सिंचाई दर	११·०
बिक्री-कर	११२·०
बिजली-कर	६·०
मोटर-गाड़ियों पर कर स्टाम्प और अदालती फीस आदि }	१४·०
अन्य (मुख्यतया स्थानीय सम्पत्ति कर)	१७·०
योग ...	२२५·०

इस विवरण से ज्ञात होगा कि जो नए कर लगाने का विचार किया गया है उन्हें लगाते हुए दूरगामी किसी नई दिशा को अपनाने के स्थान पर वर्तमान दिशाओं में ही आगे बढ़ने की बात सोची गई है।

२६. पहले चर्चा हो चुकी है कि सरकारी आय को विशेष रूप से बढ़ाने का प्रयत्न किए जाने की आवश्यकता है, जिससे कि उसका उपयोग पूजी निर्माण में हो सके। इससे स्पष्ट है कि प्रत्येक सरकारी प्राधिकारी को कम से कम अपना आय-व्यय संतुलित तो कर ही लेना चाहिए। कुछेक व्यय अब तक राजस्व-खाते में से किये जाते है, उन्हें पूजी-खाते में डाला जा सकता है। खातों का यह वर्गीकरण अब तक सब राज्यो में एक-सा नही है। प्रश्न के इस पहलू पर विचार किया जा रहा है। अब राजस्व और पूजी-खातों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में कोई सम्मत निश्चय हो जाएगा तब कर लगाने वाला प्रत्येक सरकारी प्राधिकारी अपनी आवर्तक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, आय की प्राप्ति के उपाय खोज सकेगा। संविधान के आदेशानुसार, प्रति ५ वर्ष पीछे नियुक्त किया जाने वाला वित्त आयोग जो राशियां केन्द्र द्वारा राज्यों को दिए जाने की सिफारिश करता है वह सब परिस्थितियों पर विचार करके ही करता है। इस सहायता के अतिरिक्त, राज्य सरकारों के बजटों में किसी भी प्रकार के बड़े या निरन्तर घाटे का समर्थन, किसी सिद्धान्त या व्यावहारिक दृष्टि के आधार पर, नही किया जा सकता।

एक विकासशील अर्थ-व्यवस्था म सार्वजनिक बचत का भाग

२७. अब तक योजना की आवश्यकताओ के लिए केन्द्र और राज्यों के वित्तीय साधनों पर जो विचार किया गया है उससे एक महत्वपूर्ण परिणाम यह निकलता है कि सरकार की जो नई-नई जिम्मेदारियां बढ़ती जा रही हैं, उन्हे वह सफलतापूर्वक तभी उठा सकती है जब कि सब सरकारी प्राधिकारी सार्वजनिक बचत को बढाने का यत्न करे। योजना के अनुसार, सरकार को बहुत व्यापक क्षेत्र मे नए कार्यो के आरम्भ और प्रबन्ध करने का उत्तरदायित्व उठाना पड़ेगा, इसलिए इसके साथ ही उसमे आवश्यक वित्त जुटाने की भी क्षमता होनी चाहिए। वर्तमान परिस्थिति में एक बड़ी कमजोरी यह है कि सरकार के पास अपने ऐसे साधन बहुत कम बचते है जिनका उपयोग वह नए कार्यों में विनियोग के लिए कर सके, इसलिए उसे ऋण लेकर अथवा घाटे की वित्त-व्यवस्था करके, जनता की निजी बचत को ही, इस कार्य में लगाने का सहारा लेना पड़ेगा। प्रथम योजना की अवधि में केन्द्र और राज्य सरकारों ने, (विकास कार्यो के अतिरिक्त) अपने कार्यो में विनियोग के लिए जनता की जो निजी बचत एकत्र की थी वह लगभग २५० करोड़ रुपए थी। इसका बड़ा भाग, योजना के प्रथम दो वर्षों मे ही उपलब्ध हो गया था, क्योंकि उस समय निर्यात-करों से बड़ी राशि एकत्र हुई थी। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, द्वितीय योजना की अवधि मे योजना की आवश्यकता पूर्ति के लिए चालू राजस्व से जो राशि दी जा सकेगी वह वस्तुत. १००० करोड़ रुपए की उस राशि से भी कुछ कम है जो कि चालू व्ययो की पूर्ति के लिए खर्च करनी पड़ेगी। इससे पता लगता है कि विनियोग के बड़े कार्यक्रम को पूरा करने की सरकार की सामर्थ्य वस्तुत कितनी सीमित है।

२८. इस कारण एक अवधि तक केन्द्र और राज्यो के कर लगाने के साधनों में पर्याप्त वृद्धि ही आवश्यक और संभव है। यह भली-भांति विदित है कि भारत मे राष्ट्रीय आय का जो भाग सरकार को करो के द्वारा प्राप्त होता है वह केवल ७ ५ प्रतिशत के लगभग है। यह इंगलैड और अमेरिका जैसे देशो की तुलना में तो बहुत कम है ही, अनेक अविकसित देशो की अपेक्षा भी कम है। कर जांच आयोग ने इस ओर ध्यान आकर्षित किया है कि यह भाग कई वर्षो से अपरिवर्तित चला आ रहा है और यदि कल्याणकारी राज्य की विविध आवश्यकताओं को भली-भांति पूरा करना अभीष्ट हो तो कर प्रणाली को फैलाना और विशद करना पड़ेगा।

द्वितीय योजना की वित्तीय आवश्यकताएं, कर-जांच आयोग की कल्पनाओं से कहीं अधिक हैं। उन्हें घाटे की वित्त-व्यवस्था द्वारा पूरा करना जोखिम से खाली नहीं है, और योजना के व्यय को कम करना इष्ट नहीं है, इसलिए हमारी सिफारिश है कि योजना की अवधि में अतिरिक्त कर लगाने के जो लक्ष्य रखे गये हैं, उन्हें और उंचा करने की संभावनाओं पर विचार किया जाए, योजना में ४०० करोड़ रुपए की जो कमी दिखाई गई है उसे सरकारी व्यापार, वित्तीय एकाधिकार और सरकारी उद्योग व्यवसायों के लाभ आदि के द्वारा पूरा किया जाए। एक ओर तो योजना की आवश्यकताओं और दूसरी ओर ऋण लेने तथा घाटे की वित्त-व्यवस्था पर जितना भरोसा किया जा रहा है उनकी तुलना करने के पश्चात अनिवार्य परिणाम यह निकलता है कि अतिरिक्त करों के लक्ष्य को ४५० करोड़ रुपए से उठाकर लगभग ८५० करोड़ रुपए तक पहुंचा देना चाहिए। इससे न केवल भारी मुद्रा स्फीति के दुष्परिणाम कम हो जाएंगे, साथ ही भविष्य की दृष्टि से, योजना के सरकारी क्षेत्र में विनियोग की सामर्थ्य बढाने की ओर वह एक सही कदम भी होगा।

२६. कर बढ़ाने का प्रयत्न किन दिशाओं में किया जाए, इस पर सावधानी से विचार करना पड़ेगा। पिछले एक अध्याय में इनमें से जिन कुछेक की चर्चा हो चुकी है वे सम्पत्ति पर कर, उपहारों पर कर, और आय कर का क्षेत्र विस्तृत करके उसमें सम्पत्ति के क्रय-विक्रय से होने वाले लाभों को शामिल कर लेना आदि है। एक सुझाव यह भी दिया गया है कि कम से कम अधिक आय वाले वर्गों के लिए तो वैयक्तिक कर लगाने का आधार, आय को न रखकर, व्यय को कर दिया जाए। कर प्रणाली को इन दिशाओं में सुधार देने और दृढ़ कर देने से सम्भव है कि न केवल सरकारी आय में वृद्धि हो जाए अपितु अब तक कर से बच जाने के जो तरीके हैं वे भी समाप्त हो जाए। करों की इस चोरी को केवल शासन को दृढ़ करके समाप्त नहीं किया जा सकता। इसके लिए कर लगाने के आधार और शैली में ही सुधार करने की आवश्यकता है। निस्संदेह यह मानना पड़ेगा कि कर लगाने की भी सीमाएं हैं। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट है कि समाज व्यवस्था में ऐसा परिवर्तन करना पड़ेगा, जिससे कि माल बेचने और जनता की अन्य सेवाएं करने से जो लाभ होते है वे सीधे सरकारी कोष में पहुंच जाए। अपने विकास कार्यों के लिए भारत की अपेक्षा अन्य विकसित कई देश इसी प्रकार के उपायों का अवलम्बन करके आवश्यक साधन एकत्र कर रहे है। इन साधनों में से कुछ ये हैं—सरकारी उद्योग-व्यवसायों में तैयार हुई वस्तुओं का यथोचित मूल्य नियत करना, सरकार द्वारा व्यापार करना, और कुछ क्षेत्रों पर वित्तीय एकाधिकार कर लेना इत्यादि। समाजवादी आधार पर समाज के संगठन का एक स्वाभाविक परिणाम—यदि वह पूर्वापेक्षित नहीं है तो यह होता है कि जिसे हम सार्वजनिक बचत कहते है, उसमें वृद्धि हो जाती है।

३०. अन्त में यह भी बता देना चाहिए कि योजना के सरकारी क्षेत्र में इतने अधिक विनियोग कार्यक्रमों को पूरा करने में यह सन्निहित है कि योजना के और योजना से इतर व्ययों में अधिकतम मितव्ययिता से काम लिया जाएगा। योजना से इतर कई मदों में वृद्धि अनिवार्य हो सकती है, परन्तु योजना के अलावा विकास योजनाओं को शुरू करने के प्रलोभन से दृढतापूर्वक बचकर चलना होगा। इस पर भी कुछ आवश्यकताएं बाद में पैदा होंगी परन्तु उन्हें पंचवर्षीय योजना के ढांचे में ही, वार्षिक आगा-पीछा करके, पूरा कर लेना होगा। इस सन्दर्भ में मितव्ययिता का सीमित अभिप्राय केवल खर्च कम करना नहीं है। अनुभव से प्रकट हो चुका है कि केवल व्यय कम करने मात्र से कोई विशेष परिणाम नहीं निकलता। महत्वपूर्ण

बात यह है कि सीमेट और लोहे जैसे दुर्लभ साधनो को व्यय करने मे अत्यन्त सावधानी रखी जाए और जनशक्ति तथा अन्य उपलब्ध साधनो का अधिकतम उपयोग इस प्रकार किया जाए कि फल की प्राप्ति शीघ्र हो जाए। इन सब बातो को ध्यान मे रखकर ही राष्ट्रीय विकास परिषद ने हाल मे एक उच्च-अधिकार सम्पन्न समिति नियुक्त की है, जो विकास कार्यो की प्रगति को देखती रहेगी, जिससे कि कार्य यथासम्भव अधिक मितव्ययिता और कुशलता से सम्पन्न हो सके।

निजी क्षेत्र में विनियोग

३१. योजना के सरकारी क्षेत्र मे ३,८०० करोड़ रुपए के विनियोग कार्यक्रम के अतिरिक्त, उसके निजी भाग में विनियोग के लिए २,४०० करोड रुपए की आवश्यकता का अन्दाजा लगाया गया है। इन आवश्यकताओं का मोटा विवरण तीसरे अध्याय मे दिया जा चुका है। विचारणीय प्रश्न यह है कि सरकार जिन साधनो का उपयोग कर लेगी, उनके पश्चात निजी भाग मे विनियोग करने के लिए आवश्यक वित्तीय साधन उपलब्ध हो सकेंगे या नही। एक प्रकार से तो इस प्रश्न का उत्तर इस विचार मात्र से मिल चुका है कि समस्त विनियोग के लिए आवश्यक वित्तीय साधन बचत के द्वारा एकत्र किए जा सकेंगे। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, समस्या यह है कि द्वितीय योजना आरम्भ करने के समय निजी बचत का जो परिमाण राष्ट्रीय आय का लगभग ७ प्रतिशत था उसे बढाकर योजना की समाप्ति के समय तक १० प्रतिशत किस प्रकार किया जाएगा। यदि आगामी ५ वर्षो मे निजी बचत इतनी कर ली गई तो विदेशी सूत्रो से १,१०० करोड रुपए मिल जाने से काम चल जाएगा। योजना मे निजी बचत बढ़ाने की जो कल्पना की गई है वह किसी भी प्रकार बहुत अधिक नही है। इसमें जिस कम से कम वृद्धि की गुजाइश है वह २० प्रतिशत से कुछ ही अधिक बैठती है। इसलिए इस पैरे मे जो प्रश्न उठाया गया है एक प्रकार से उसका उत्तर 'हा' मे ही है।

३२. परन्तु यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि विनियोग के लिए अपेक्षित राशि और संभावित बचत को सर्वथा समान मान लेने मात्र से इस प्रश्न का पूरा-पूरा उत्तर नही मिलता। व्यावहारिक दृष्टि से समस्या यह है कि जितना विनियोग किया जाए वह सब, मूल्यों में वृद्धि और इसी प्रकार की अन्य विषम परिस्थितियां उत्पन्न किए बिना, पूरा हो जाए। इसलिए देखना यह होगा कि अभीष्ट परिणाम की प्राप्ति के लिए जिन उपायों और नीतियों का अवलम्बन किया जा रहा है वे उपयुक्त है या नही। पहले से ही यह जान लेना बिल्कुल असम्भव है कि आवश्यक बचत हो सकेगी या नही। साथ ही पहले से यह बतला देना भी सुगम नही है कि बचत में कहां कमी पडेगी। एक तर्क यह भी दिया जा सकता है कि सरकारी क्षेत्र में विनियोग के कार्यक्रम के आधार पर क्योकि निजी क्षेत्र से लिये हुए ऋण होंगे, इसलिए बचत मे कमी का प्रभाव निजी क्षेत्र की अपेक्षा सरकारी क्षेत्र पर ही पडने की सम्भावना अधिक रहेगी। दूसरी ओर, सार्वजनिक क्षेत्र को दुर्लभ साधनो की उपलब्धि आदि कुछ फायदे आगे भी रहेंगे। यह भी सत्य नही है कि निजी क्षेत्र मे बचत उन्ही अवसरों पर होती है जब कि कोई निजी विनियोग करना होता है। इसलिए, दोनो भागो की सापेक्षिक सफलता बहुत कुछ इस पर निर्भर करेगी कि जहां बचत हो वही उसको उपयोग कर लिया जाए। इससे स्पष्ट हो जाता है कि पर्याप्त मात्रा मे बचत के लिए उपयुक्त आर्थिक और अन्य नीतियों का अवलम्बन करना कितना जरूरी है। इसके साथ ही, यदि आवश्यकता हो तो निजी क्षेत्र के विनियोग के कार्यक्रम मे विशेष सरकारी सहायता द्वारा प्राथमिकता का भी निर्णय कर देना चाहिए।

३३. योजना के निजी क्षेत्र के लिए बचत किन सूत्रों से होगी यह बतलाना कठिन है, क्योंकि उस क्षेत्र में जितनी बचत का उपयोग होना है उसका बहुत थोड़ा अंश ही संगठित संस्थाओं द्वारा नियन्त्रित होता है। खेती, व्यापार, भवन-निर्माण और छोटे पैमाने के उद्योगों में जो पूंजी लगती है उसका बहुत बड़ा भाग उन्हीं लोगों अथवा उनके मित्रों और सम्बन्धियों की बचत का होता है जो कि उनके मालिक या संचालक होते हैं। निजी क्षेत्र के इस भाग में साधनों का थोड़ा-सा भी अभाव, विनियोग के लिए धन की अनुपलब्धि के रूप में झट प्रकट हो जाता है। निजी उद्योगों का जो भाग संगठित है, उसके लिए पूंजी के सूत्रों का अन्दाजा अवश्य लगाया जा सकता है, परन्तु उसका आधार भी कुछ मोटी कल्पनाएं ही होंगी। इन व्यवसायों के लिए पूंजी एकत्र करने की परिकल्पना का विवरण उन्नीसवें अध्याय में दिया गया है। इस क्षेत्र के कार्यक्रमों को पूरा करने में सरकार आगे बताये उपायों द्वारा सहायता कर सकती है। कुछ तो पूंजी के अवांछित विनियोग को रोककर—इसके लिए नये पूंजी-विनियोग का तथा आयात-निर्यात का नियन्त्रण करना होगा और नये कारखाने खोलने के लिए 'लाइसेंस' लेने का नियम बनाना पड़ेगा—कुछ करों में परिवर्तन-परिवर्द्धन करके तथा रियायतें देकर, और कुछ इसी प्रयोजन के लिए बनाए गए विविध निगमों द्वारा खास-खास व्यवसायों को वित्तीय सहायता देकर। योजना के सरकारी क्षेत्र के समान, निजी क्षेत्र में भी, पूंजी-विनियोग की प्रगति पर निरन्तर दृष्टि रखनी पड़ेगी और समय-समय पर नीति में आवश्यक परिवर्तन करने पड़ेंगे। संगठित व्यवसायों में विनियोग का स्तर पहले ही पर्याप्त ऊंचा है और पूंजी का बाजार मजबूत होता जा रहा है। इन हालात को देखते हुए ऐसा नहीं लगता कि निजी व्यवसायों को अपने निश्चित विनियोग के लिए पूंजी एकत्र करने में कठिनाई होगी। चालू व्यय के लिए पूंजी जुटाने में तो और भी कम कठिनाई होगी, क्योंकि योजना में घाटे की अर्थ-व्यवस्था से काम चलाने की बात सोची जा रही है। जैसा कि पहले विचार किया जा चुका है, वास्तव में समस्या शायद यह हो कि बैंकों की बहुत अधिक उधार देने की प्रवृत्ति को और पूंजी को सट्टेबाजी में लगने से कैसे रोका जाए।

योजना के लिए विदेशी मुद्रा के साधन

३४. अब हम योजना के लिए विदेशी मुद्रा के साधनों की समस्या पर आते हैं। दूसरी पंचवर्षीय योजना में पूंजी के विनियोग की मात्रा बहुत बढ़ा दी गई है और औद्योगिक उन्नति पर सबसे अधिक बल दिया गया है। इस कारण विदेशी मुद्रा के साधनों पर अधिक दबाव पड़ने की सम्भावना है। पांच वर्षों की अवधि में हमें कितनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ेगी और हम कितनी विदेशी मुद्रा अर्जित करेंगे, इसका ठीक-ठीक अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। कारण यह है कि परिस्थितियां अनेक दृष्टियों से अनिश्चित हैं। चाय, जूट के सामान और कच्चे मैंगनीज आदि भारत से निर्यात होने वाली महत्वपूर्ण वस्तुओं की मांग में बहुत उतार-चढ़ाव होता रहता है, और यदि बरसात में थोड़ा भी अन्तर पड़ जाए तो खाद्यान्न और कच्चे माल का भारी मात्रा में आयात करने की आवश्यकता पड़ सकती है। इसके अतिरिक्त, समय-समय पर व्यापार की शर्तें बदलती रहती हैं। यदि इनमें १० प्रतिशत का भी प्रतिकूल परिवर्तन हो जाए तो एक वर्ष में ८० करोड़ रुपए अधिक के भुगतान की आवश्यकता हो सकती है। वर्ष भर के आयात का रूप निश्चित करना विशेष रूप से कठिन होता है, क्योंकि यह न केवल विकास कार्यक्रम की आवश्यकताओं पर, अपितु इस्पात आदि उन दुर्लभ वस्तुओं की उपलब्धि पर भी निर्भर करता है जो कि विदेशों से मंगानी पड़ती हैं। इन अनिश्चितताओं के होते हुए भी,

यह अन्दाजा कर लेना अत्यन्त आवश्यक है कि विदेशों के साथ हमारा भुगतान संतुलन कैसा रहेगा और उनसे आवश्यक माल खरीदने के लिए हमारे पास पर्याप्त विदेशी मुद्रा होगी या नहीं।

३५. विदेशी मुद्रा की आवश्यकताओं और पाच वर्षो में हम उसे कितना कमा सकते हैं, इसके आकलन मे कितनी कठिनाई होती है इस बात का अनुभव हमें प्रथम योजना काल मे भली प्रकार हो चुका है। जब (दिसम्बर १९५२ में) प्रथम योजना बनायी गई थी, तब यह अन्दाजा था कि योजना के शेष काल में हमारे देश का भुगतान संतुलन लगभग १८०—२०० करोड़ रुपए प्रति वर्ष रहेगा। परन्तु वस्तुतः इन पांचों वर्षो मे (विदेशों से प्राप्त सहायता को छोड़कर) सारा घाटा केवल ५० करोड़ रुपए का रहा—१९५१-५२ में तो १४२ करोड रुपए का घाटा हुआ था, परन्तु १९५४-५५ मे यह केवल ९ करोड़ रुपए रह गया था, उसकी आशिक पूर्ति अन्य वर्षों की बचत से हो गई थी। यह अनुकूल परिणाम निकलने का एक बड़ा कारण यह था कि इन वर्षो मे देश में खाद्यान्न के उत्पादन मे काफी वृद्धि हुई और विदेशो से खाद्यान्न कम मंगाना पड़ा। प्रथम योजना की अवधि में मशीने भी विदेशों से अन्दाजे की अपेक्षा कम मगानी पड़ीं।

३६. नीचे की तालिका में द्वितीय योजना काल मे विदेशों के साथ भुगतान-सतुलन का अन्दाजा दिया गया है :

चालू खाते में भारत का भुगतान-संतुलन

(१९५६-५७ से १९६०-६१ तक)

(करोड रुपए)

——	१९५६-५७	१९५७-५८	१९५८-५९	१९५९-६०	१९६०-६१	१९६०-६१ तक के पांच वर्षो का औसत	१९६०-६१ तक के पाच वर्षो का योग
१. निर्यात (जहाज पर लादने तक के खर्च मिलाकर)	५७३	५८३	५९२	६०२	६१५	५९३	२,९६५
२. आयात (भारत के तट तक पहुंचने का खर्च मिलाकर)	७८३	८८६	९९०	८९५	७८६	८६८	४,३४०
३. व्यापार संतुलन (१—२)	—२१०	—३०३	—३९८	—२९३	—१७१	—२७५	—१,३७५
४. अदृश्य प्राप्तियां (सरकारी सहायता छोड़कर)	+६२	+५५	+५१	+४६	+४१	+५१	+२५५
५. चालू खाते के संतुलन का योग (३+४)	—१४८	—२४८	—३४७	—२४७	—१३०	—२२४	—१,१२०

इस प्रकार पांच वर्षों में चालू खाते में कुल मिलाकर लगभग १,१०० करोड रुपए का घाटा बैठता है। ऊपर की तालिका मे आयात-निर्यात का जो अन्दाजा दिया गया है, वह स्वभावत. बहुत मोटा है। परन्तु उससे इतना तो प्रकट हो ही जाता है कि घाटे का अधिक भाग योजना के दूसरे और तीसरे वर्षों मे होने की संभावना है। योजना के मध्य मे घाटा चरम सीमा पर पहुंच जाने का कारण यह है कि आरम्भ के वर्षों मे इस्पात, मशीनो और अन्य सामग्री का आयात होने की जो सभावना है वह योजना के लगभग आधी पूरी होने के समय तक अपनी ऋण सीमा पर पहुंच जाएगी। इस्पात के जो नए कारखाने बन रहे है और रेलों के सुधार और विस्तार के जो कार्य हो रहे है उन्हें योजना के अन्तिम वर्ष से पूर्व ही पूर्ण कर लेना होगा। जब ये और अन्य कार्यक्रम पूरे हो जाएंगे तब विदेशी भुगतान संतुलन पर से बोझ घट जाएगा।

३७. इससे हमारे सामने जो चित्र उभरता है वह यह है कि जहा निर्यात १९५६-५७ के अनुमानित स्तर ५७३ करोड़ रुपए से धीरे-धीरे बढते हुए १९६०-६१ में ६१५ करोड़ रुपए तक पहुचेगा, वहा प्रथम ४ वर्षों में आयात बहुत बढ़ जाएगा और योजना के पांचो वर्षों में प्रतिकूल व्यापार संतुलन की मात्रा १,३७५ करोड़ रुपए तक, अर्थात औसतन २७५ करोड रुपए प्रति वर्ष तक पहुंच जाएगी। अदृश्य रूप में जो सहायता मिलेगी उसको जोड़ देने पर भी चालू खाते में घाटे की समस्त मात्रा १,१२० करोड़ रुपए, अर्थात २२४ करोड़ रुपए वार्षिक निकलती है।

३८. निर्यात, आयात और अदृश्य विदेशी सहायता का जो अन्दाजा लगाया गया है, उसकी तफसील में जाने से पहले उन दो कल्पनाओं की चर्चा कर देना आवश्यक है जिनके आधार पर ये अन्दाजे लगाए गए हैं : (क) प्रथम यह कि आगामी पाच वर्षों में व्यापार की शर्तें औसतन वही रहेंगी जो १९५५-५६ (पहले ९ महीनों) में रही थीं; और (ख) द्वितीय यह कि मुद्रा-स्फीति को दृढतापूर्वक नियंत्रण में रखा जा सकेगा। व्यापार की अवस्थाओं का देशनांक (१९५२-५३ के अंक को १०० मानकर) १९५५-५६ के पहले ९ महीनो में लगभग १०० रहा था। इसकी तुलना में कोरिया के युद्ध के कारण महंगाई अत्यधिक बढ जाने से यह अंक १९५१-५२ में १३३, १९५३-५४ में १०१, और १९५४-५५ में ११० हो गया था। इन अंकों से मोटे रूप में यह स्पष्ट हो जाता है कि हमने व्यापार की अवस्थाओं को प्रकट करने के लिए अपनी गणना का आधार इन वर्षों को क्यों बनाया है। द्वितीय योजना की अवधि में हमने बचत, विनियोग और वित्तीय साधनों के जो अंदाजे लगाये है उन सबका आधार यही कल्पना रही है। इस संदर्भ मे इस बात को स्पष्ट कर देना बहुत आवश्यक है। भुगतान संतुलन पर मुद्रा-स्फीति का प्रभाव तुरन्त और विशेष रूप से पडता है। यदि देश में मूल्य बढ़ने लगें तो विदेशों से अधिक आयात करने की आवश्यकता पड़ जाती है और निर्यात के बढ़ाने में बाधाएं उपस्थित हो जाती है। यद्यपि व्यापारिक नीति में थोड़ा-बहुत परिवर्तन करके कुछ समय के लिए इन प्रतिकूल परिणामों को कम किया जा सकता है, तथापि इसमें संदेह नही कि मुद्रा-स्फीति के एकदम बढ़ जाने अथवा अधिक समय तक चलने के प्रतिकूल प्रभाव को देश के भुगतान संतुलन पर पड़ने से बहुत देर तक नही रोका जा सकता। इसलिए देश की अर्थ-व्यवस्था की स्थिरता और भुगतान संतुलन को अनुकूल बनाए रखने की दृष्टि से मुद्रा-स्फीति को सफलतापूर्वक नियन्त्रण में रखना अत्यन्त आवश्यक है।

निर्यात

३९ नीचे की तालिका मे यह दिखाया गया है कि १९५४ और १९५५ की तुलना में द्वितीय योजना काल में निर्यात की प्रधान वस्तुओं से हम कितनी प्राप्ति होने की आशा कर सकते हैं :

व्यापारिक निर्यात

(करोड रुपए)

	१९५४	१९५५	योजना का अंतिम वर्ष, १९६०-६१	द्वितीय योजना का वार्षिक औसत	१९५६-६१ तक पाच वर्षो का योग
१. चाय	१३१	११२	१३३	१२७	६३५
२. जूट का माल (सूत और अन्य सामान)	१२२	१२६	११८	१२२	६१०
३ सूती माल (सूत और वस्त्र)	७२	६३	८४	७५	३७५
४ तेल (खनिज तेलो को छोड़कर)	११	३९	२४	२२	११०
५. तम्बाकू	१२	११	१७	१५	७५
६. खाले और चमड़ा (कच्चा, कमाया हुआ और तैयार)	२९	२७	२८	२८	१४०
७. कपास और गूदड	१९	३५	२२	२२	११०
८ कच्ची धातुए (लोहे की कतरनें और इस्पात)	२३	२०	२७	२३	११५
९ कोयला और कोक	६	४	३	५	२५
१०. रासायनिक द्रव्य और औषधिया आदि	५	४	५	५	२५
११ छुरी-काटे आदि धातुओ का सामान, गाड़िया, बिजली का सामान और अन्य यत्र-सामग्री	३	४	४	४	२०
१२ अन्य वस्तुएं	१३०	१५१	१५०	१४५	७२५
योग	५६३	५९६	६१५	५९३	२,९६५

द्वितीय योजना की अवधि के ये अन्दाजे १९५५-५६ (पहले ९ महीनो) मे प्रचलित मूल्यो के आधार पर लगाए गए है, परन्तु १९५४ और १९५५ के अन्दाजे उन वर्षो मे प्रचलित मूल्यो के आधार पर है। इनसे ज्ञात होगा कि द्वितीय योजना की अवधि मे निर्यात से १९५४ की अपेक्षा अधिक प्राप्ति होने की आशा है, और १९६०-६१ मे आयात की कमाई, १९५४ की तुलना में ९ प्रतिशत बढ जाएगी। द्वितीय योजना के समय हमने निर्यात का अन्दाजा जिन मूल्यो के आधार पर किया है, उनकी अपेक्षा १९५४ मे निर्यात किए हुए पदार्थो का मूल्य लगभग

५ प्रतिशत अधिक था। यदि इस तथ्य को ध्यान में रखें तो भी योजना काल में १९५४ की अपेक्षा निर्यात की कमाई में महत्वपूर्ण वृद्धि की आशा की जा सकती है। योजना काल में निर्यात का स्तर १९५५ के निर्यात से विशेष अधिक नहीं बढ़ेगा। इसका बड़ा कारण यह है कि १९५५ में तेल और सूती सामान का निर्यात विशेष रूप से अधिक हुआ था और योजना काल में उसके उतना रहने की संभावना नहीं है। इन दोनों के अतिरिक्त, अन्य वस्तुओं के निर्यात में, १९५५ की अपेक्षा भी विशेष वृद्धि होने की संभावना है।

४०. १९५५ में चाय का निर्यात बहुत घट गया था। उस वर्ष केवल ३६ करोड़ २० लाख पौंड चाय निर्यात हुई थी। उसकी तुलना में १९५४ के निर्यात का परिमाण ४५ करोड़ पौंड था। आशा है कि द्वितीय योजना काल में चाय का निर्यात सुधर जाएगा और १९६०-६१ तक ४७ करोड़ पौंड के लगभग हो जाएगा। योजना के पांच वर्षों में चाय के निर्यात का वार्षिक औसत ४५ करोड़ पौंड का अनुमान है। हाल के वर्षों में चाय के निर्यात-मूल्यों में बहुत घटा-बढ़ी हुई है। १९५४-५५ में इसके मूल्य का देशनांक (आधार १९५२-५३ = १००) १६९ था; इसकी तुलना में १९५३-५४ का देशनांक केवल ११५ था। १९५५-५६ के पहले ९ महीनों में चाय के मूल्य निरन्तर घटते गए। इन महीनों का औसत देशनांक १४९ था। इससे ज्ञात होगा कि हमने चाय के निर्यात से कमाई का अंदाजा १९५५-५६ के मूल्यों के आधार पर करते हुए निर्यात का मूल्य १९५४-५५ की तुलना में बहुत नीचा लगाया है, परन्तु वह उससे पहले के २ वर्षों की अपेक्षा खासा ऊंचा है।

४१. जूट के तैयार सामान का निर्यात १९५४ में ८ लाख ४१ हजार टन हुआ था। १९५५ में वह बढ़कर ८ लाख ९३ हजार टन हो गया था। आगामी वर्षों में अन्य जूट निर्माता देशों के साथ अधिकाधिक मुकाबला होने की संभावना है। इसलिए द्वितीय योजना के वर्षों में जूट के निर्यात का औसत ८ लाख ७५ हजार मन वार्षिक से अधिक आंकना उचित नहीं जान पड़ता।

४२. सूती वस्त्र (मिल और हाथकरघे दोनों) का निर्यात १९५४ में ८६ करोड़ ७० लाख गज हुआ था। १९५५ में घटकर वह ७४ करोड़ ७० लाख गज रह गया। योजना की अवधि में इस निर्यात में क्रमशः उन्नति होने की आशा है और शायद १९६०-६१ तक यह १ अरब गज तक पहुंच जाए। सूती वस्त्र व्यवसाय हमारे देश के प्राचीनतम व्यवसायों में से है, और इसलिए इसके द्वारा अधिकाधिक विदेशी मुद्रा कमा सकने की आशा करना स्वाभाविक है। दूसरी ओर, देश में भी वस्त्र की मांग बढ़ती जा रही है। इसलिए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इस व्यवसाय की प्रतिस्पर्द्धात्मक स्थिति को स्थिर रखने और सुधारने का यत्न निरंतर किया जाए। हाथकरघे के उत्पादन का निर्यात बढ़ाने का भी यत्न करना चाहिए। विदेशों में उसकी मांग बढ़ती जा रही है।

४३. खनिज तेलों के अतिरिक्त अन्य तेलों के निर्यात से आय मुख्यतया निर्गन्ध वनस्पति तेलों के निर्यात से ही होती है। १९५४ में इन तेलों का निर्यात केवल १ करोड़ ६८ लाख गैलन हुआ था, परन्तु १९५५ में वह बढ़कर एकदम ७ करोड़ ५७ लाख गैलन हो गया था। द्वितीय योजना काल में तिलहन का उत्पादन बहुत बढ़ जाने की आशा है, इसलिए यह आशा करना तर्कसंगत होगा कि भविष्य में चाहे १९५५ के निर्यात का स्तर स्थिर न रहे, परन्तु निर्गन्ध वनस्पति तेलों के निर्यात का औसत १९५४ से काफी ऊंचा रहेगा। इन तेलों का निर्यात बहुत बढ़ाया जा सकता है, विशेषतः नए विदेशी बाजारों में। जैसा कि पहले सुझाया गया

है, खेती की पैदावार के लक्ष्य को योजना मे दिखाए गए स्तर से ऊंचा उठाया जा सकता है और इसलिए तेलों के निर्यात का परिमाण न केवल १९५५ के स्तर पर रखा जा सकता है, अपितु उसे सुधारा भी जा सकता है ।

४४. कपास का निर्यात १९५५ में एकदम बढ़कर ९३ हजार टन तक पहुच गया था । १९५४ मे वह केवल २६ हजार टन था । हाल के वर्षो मे कपास का औसत निर्यात लगभग ५० हजार टन वार्षिक रहा है । द्वितीय योजना काल में हमने निर्यात के इस स्तर को बनाए रखने की गुंजाइश रखी है ।

४५. कच्ची धातुओं और कतरनों के निर्यात में वृद्धि होने की संभावना है। प्रधानतया कच्चे लोहे का निर्यात बढने के कारण १९५४-५५ में ४३ लाख टन कच्चा लोहा निकाला गया था । १९६०-६१ में इसका परिमाण बढकर १ करोड़ २५ लाख टन हो जाने की आशा है । इसके साथ ही यह भी संभावना है कि देश मे कच्चे लोहे की खपत ३० लाख टन से बढ़कर १ करोड़ ५ लाख टन हो जाएगी । विदेशों में हमारे कच्चे लोहे की मांग बहुत है, इस कारण कच्चे लोहे का निर्यात बढ जाने की आशा है । सम्भव है कि वह योजना के अंतिम वर्ष तक लगभग २० लाख टन हो जाए । हाल के वर्षों मे इसका औसत केवल १० लाख टन वार्षिक रहा है ।

४६ निर्यात की अन्य वस्तुओं के विषय मे विशेष कुछ लिखने की आवश्यकता नही जान पड़ती । ये वस्तुए विविध है और हमने जान लिया है कि इनके निर्यात से विदेशी मुद्रा की कमाई उतनी ही होगी जितनी कि अब होती है । परन्तु हाल के वर्षों मे कुछ नए उद्योगों का विकास हुआ है । यहा उनके माल का निर्यात होने की संभावना का उल्लेख कर दिया जाए । प्रथम योजना मे आशा प्रकट की गई थी कि ज्यों-ज्यो हमारी अर्थ-व्यवस्था का विभिन्न दिशाओं में विस्तार होता जाएगा त्यों-त्यो सीने की मशीनों, बिजली के पखों और साइकिलो आदि हल्के इजीनियरी उद्योग के सामान का निर्यात बढ़ता जाएगा । परन्तु इन निर्यातो से होने वाली कमाई अभी मात्रा की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण नही है । इन उद्योगों को मजबूती से अपने पाव जमाने में और विदेशी बाजारों तक काफी माल पहुंचाने मे अभी कुछ समय लगेगा ।

४७ सब मिलाकर स्थिति यह है कि योजना काल में हमने जितना निर्यात बढ़ाने की कल्पना की है वह अधिक आकर्षक नही है । भारत को कुछ ही वस्तुओं के निर्यात से कमाई होती है । इनमे से आधी कमाई तो तीन वस्तुओं—चाय, जूट और सूती वस्त्र से हो जाती है । इन वस्तुओ के निर्यात मे अब अन्य देशो के साथ अधिकाधिक मुकाबला करना पड़ रहा है । इस कारण निकट भविष्य में निर्यात में अधिक वृद्धि होने की गुंजाइश कम ही है । नई वस्तुओं का निर्यात बढाने का और निर्यात की मुख्य वस्तुओं के लिए नए बाजार खोजने का हर सम्भव प्रयत्न तो किया ही जाना चाहिए, परन्तु साथ ही साथ यह मानना पड़ेगा कि हमारे देश मे निर्यात के द्वारा अधिक कमाई के रूप मे उत्पादन वृद्धि का परिणाम तभी प्रकट होगा जब कि हम औद्योगिक उन्नति के मार्ग पर पर्याप्त आगे बढ चुकेंगे ।

आयात

४८ नीचे की तालिका मे उन आयातों का विवरण दिया गया है जो द्वितीय योजना की अवधि मे करने पड़ेंगे :

व्यापारिक आयात

(करोड़ रुपए)

	१९५४	१९५५	योजना का अंतिम वर्ष, १९६०-६१	द्वितीय योजना का वार्षिक औसत	पाचों वर्षों का योग, १९५६-६१
१. मशीने और गाडियां	१२१	१५९	२५०	३००	१,५००
२ लोहा और इस्पात	२७	५०	६०	८६	४३०
३. अन्य धातुए	२४	२५	४०	४४	२२०
४. अन्न, दालें और मैदा	४९	३५	४०	४८	२४०
५. चीनी	३१	२०	७	७	३५
६. तेल	९४	९३	९०	८२	४१०
७. रासायनिक द्रव्य और औषधिया आदि	३१	३४	३३	३२	१६०
८. रग आदि	१९	१८	१५	१७	८५
९. कागज, गत्ता और लेखन सामग्री	१३	१४	१०	११	५५
१०. छुरी-काटे आदि धातु का सामान और बिजली का सामान और यंत्र-सज्जा आदि	२८	३६	२९	२९	१४५
११. कपास	५८	५४	५४	५४	२७०
१२. कच्चा जूट	१२	१७	१८	१८	९०
१३. अन्य	११३	१३०	१४०	१४०	७००
योग	६२०	६५५	७८६	८६८	४,३४०

इस तालिका से ज्ञात होगा कि आयात मे अधिकतर वृद्धि मशीनों, गाड़ियों, लोहे और इस्पात और अन्य धातुओ के कारण होगी। योजना काल में मशीनों और गाड़ियों के समस्त आयात का अन्दाजा १,५०० करोड़ रुपए लगाया गया है। इसमें से लगभग १,०५० करोड़ रुपए का सामान योजना के सरकारी क्षेत्र में लग जाएगा, ४२५ करोड़ रुपए का परिवहन और संचार साधनों में (२९० करोड़ रुपए का केवल रेलों में), २९० करोड़ रुपए का उद्योगों और खानों में (१८० करोड़ रुपए इस्पात कारखानों में), १७० करोड़ रुपए का सिंचाई और बिजली के कामों में, और लगभग १६५ करोड़ रुपए का सरकार की अन्य आवश्यकताओं मे। योजना के निजी क्षेत्र के विस्तार, नवीकरण और सुधार के लिए ४५० करोड़ रुपए की मशीनो और गाड़ियों की आवश्यकता होने की संभावना है। मशीनों और गाड़ियों के बड़े परिमाण मे आयात करने की आवश्यकता से प्रकट होता है कि योजना में मूलभूत उद्योगों के विकास का कितना अधिक ध्यान रखा गया है। यद्यपि इसके कारण आरम्भ में भुगतान संतुलन पर बहुत बोझ पड़ेगा, परन्तु अंत में जाकर इससे देश के विदेशी खाते मजबूत होने के साथ-साथ उसकी विनियोग-सामर्थ्य भी बढ़ जाएगी।

४९ द्वितीय योजना की अवधि में धातुओं और विशेषत: लोहे और इस्पात का आयात बहुत बढ जाने की सभावना है। १९५४ मे ३।। लाख टन लोहे और इस्पात का आयात किया गया था। १९५५ मे वह बढकर लगभग ७ लाख टन हो गया। द्वितीय योजना काल मे उसके ७० लाख टन हो जाने की सभावना है। यह सबका सब प्राय: ४ वर्षो मे हो जाएगा। एल्यूमीनियम और ताबा आदि लोहेतर धातुओं की आवश्यकता भी बहुत बढ जाएगी। सब मिलाकर योजना काल मे लोहे और इस्पात और अन्य धातुओ का आयात ६५० करोड रुपए तक का होने की सभावना है। इसका औसत १३० करोड रुपए वार्षिक बैठता है। इसकी तुलना में १९५५ में केवल ७५ करोड रुपए का आयात हुआ था।

५० जहा तक खाद्यान्न के आयात का सम्बन्ध है, योजना की समस्त अवधि मे यह कुल ६० लाख टन होने का अनुमान है। गत दो वर्षों में खाद्यान्न का आयात घटा है। १९५४ मे यह आयात ८ लाख ४० हजार टन और १९५५ मे ७ लाख ५५ हजार टन हुआ था। आगामी वर्षो मे खाद्यान्न की खपत आबादी और लोगों की आमदनी बढ जाने के कारण अधिक होना निश्चित है। इस समय सरकार के पास खाद्यान्न का सग्रह बहुत थोडा है। उस सग्रह को शीघ्र ही बढ़ाने की आवश्यकता है। इन सब परिस्थितियो पर विचार करते हुए योजना काल मे ६० लाख टन का आयात करना अनिवार्य रूप से आवश्यक जान पडता है। इतना ही नही, इसका बहुत बड़ा भाग योजना काल के पूर्वार्ध मे मंगाना पडेगा। चीनी का उत्पादन देश मे ही बहुत बढ जाने की आशा है, इसलिए इसका आयात योजना काल मे ५ लाख टन से अधिक नही करना पडेगा।

५१ तेलो मे हमें अधिकतर खनिज तेलों का आयात करना पड़ता है। आशा है कि जब तेल साफ करने के तीसरे कारखाने (रिफाइनरी) में उत्पादन होने लगेगा तब मोटर के तेल की हमारी सारी आवश्यकता देश मे उपलब्ध तेल से ही पूरी हो जाएगी, और तब मोटर की स्पिरिट की जगह, कच्चे तेल (क्रूड पैट्रोल) का आयात होने लगेगा। परन्तु तब भी हवाई जहाजों के तेल (स्पिरिट), मिट्टी के तेल और अन्य कुछ खनिज तेलों का आयात तो बड़ी मात्रा में करना ही पड़ेगा। इन सब बातो का विचार करते हुए अनुमान यह है कि योजना काल मे तेलो का औसत आयात लगभग ८२ करोड रुपए प्रति वर्ष का रहेगा। यह १९५४ के आयात से कम परन्तु १९५५ के आयात से अधिक है।

५२. यद्यपि देश में रासायनिक द्रव्यों और औषधियो की आवश्यकता बढ जाएगी, फिर भी विदेशों से इनका आयात, द्वितीय योजना काल मे प्राय उतना ही रहने की संभावना है, जितना कि १९५४ और १९५५ मे हुआ था। इस काल मे रासायनिक द्रव्यों का, विशेषत: कास्टिक सोडे और सोडा ऐश का उत्पादन देश में ही बहुत अधिक बढ़ जाने की आशा है। इस कारण कास्टिक सोडा और सोडा ऐश का आयात तो घट जाएगा, परन्तु अन्य रासायनिक द्रव्यो का बढ जाएगा। देश मे रगो के उत्पादन के भी बढ़ने की सभावना है। इसलिए उनका औसत आयात भी कम होगा। इसी प्रकार अखबारी और अन्य कागज का उत्पादन देश में बढ़ जाने के कारण उसके आयात मे भी कमी होने की आशा है।

५३. काटे-छुरी आदि, बिजली के सामान, धातुओ की बनी वस्तुओं और अन्य उपकरणों का आयात, देश मे रहन-सहन का दर्जा ऊचा हो जाने के कारण, बढ़ जाने की सभावना है। बढी हुई मांग का कुछ भाग देश के अतिरिक्त उत्पादन से भी पूरा किया जा सकेगा। इस स्तर से अधिक जो माग होगी, उसके बारे में यह मान लिया गया है कि विदेशी मुद्रा विनिमय की

भारी कमी को देखते हुए ऐसी नीति अपनाई जाएगी जिससे इन वस्तुओं के आयात में विशेष वृद्धि न हो।

५४. कपास का आयात, १९५४ के १ लाख २३ हजार टन से घटकर, १९५५ में १ लाख ६ हजार टन रह गया था, परन्तु कच्चे जूट का आयात, १९५४ के २ लाख १७ हजार टन से बढ़कर, १९५५ मे २ लाख ४८ हजार टन हो गया था। हमने यह मान लिया है कि योजना काल में इन दोनों वस्तुओं के आयात का औसत वही रहेगा जो १९५४-५५ मे था।

५५. "अन्य वस्तुओं" के आयात मे हमने कुछ वृद्धि की गुंजाइश रखी है, क्योंकि हाल में सीमेंट का आयात बढाना पडा है। इसके लिए योजना के पाच वर्षों में २५ करोड़ रुपए की अतिरिक्त राशि रखी गई है। इस वर्ग में सम्मिलित अन्य वस्तुएं, तम्बाकू, वस्त्र, कच्ची ऊन, नकली रेशम और इमारती लकड़ी आदि हैं। इन वस्तुओं का आयात लगभग वही रहेगा जो इस समय हो रहा है।

अनभिलिखित खाते

५६. अनभिलिखित खाते में (विदेशी सरकारों की सहायता को छोड़) १९५४ में ७३ करोड़ रुपए और १९५५ में ७२ करोड़ रुपए की बचत दिखाई गई थी। द्वितीय योजना की अवधि में यह बचत औसतन ५१ करोड़ रुपए प्रति वर्ष होने की आशा है। विनियोग के लिए उपलब्ध राशियों में बहुत अधिक कमी हो जाने की संभावना है, क्योंकि सरकारी खातों की विदेशी पूंजी (पौंड-पावने) में बहुत कमी हो जाने की आशा है। इसके साथ ही ब्याज और लाभांश की विदेशों में अदायगी बढ़ जाएगी, क्योंकि निजी कारोबार में विदेशों के विनियोग में और विदेशी सरकारों के ऋणों में बहुत वृद्धि हो जाने की संभावना है। द्वितीय योजना की अवधि में १९५४-५५ की तुलना में विनियोग की राशियों पर वास्तविक अदायगियों का परिमाण, औसतन लगभग २० करोड़ रुपए प्रति वर्ष अधिक होने की संभावना है। विदेशी यात्रा, माल की ढुलाई और निजी आदि मदों में विशेष परिवर्तन होने की संभावना नहीं है।

घाटा

५७. सब मिलाकर पांच वर्षों में चालू खाते में घाटा १,१०० करोड़ रुपए तक होने की संभावना है। पूंजी खाते में विलम्ब से चुकाने की शर्त पर अमेरिका से लिये हुए गेहूं के ऋण और अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक से लिये हुए नकद ऋण, उस वसूली के द्वारा लगभग समाप्त हो जाने चाहिएं जो कि ब्रिटेन की सरकार से हमें पौंड-पेंशनों के हिसाब में होगी। द्वितीय योजना की अवधि में जो नए ऋण लिये जाएंगे, उनमें से कुछ को चुकाना भी पड़ेगा, परन्तु उस हिसाब में सब ऋणों की गणना न करके, अदायगी करने के पश्चात् बचे हुए शुद्ध ऋणों की गणना की जा सकती है। सारांश यह है कि पूंजी खाते में सरकार पर नई देनदारियों का जो बोझ पडेगा, उसका प्रभाव अदायगियों पर विशेष अधिक होने की संभावना नही है। निजी पूंजी के हिसाब में, देश में लगी हुई निजी पूंजी को चुकाने का ध्यान रखना पड़ेगा। जहां पहले से लगी हुई कुछ पूजी वापस करनी पड़ेगी, वहां कुछ नई निजी पूंजी भी देश में आ जाएगी और इसलिए अदायगी का सतुलन प्रायः यथापूर्व रहेगा, ऐसा माना जा सकता है। मतलब यह है कि ऊपर इस हिसाब में १,१०० करोड़ रुपए का घाटा रहने की जो

चर्चा की गई है, उसके मुकाबले मे निजी या सरकारी हिसाब में मिलने वाली नई विदेशी पजी को रखकर स्थिति को समान माना जा सकता है।

५८. १,१०० करोड़ रुपए के घाटे के कुछ भाग की पूर्ति देश के विदेशी मुद्रा के सुरक्षित कोष से भी की जा सकती है। इस मुद्रा पर भरोसा कहा तक किया जा सकता है, यह बात इस पर निर्भर करती है कि हमारे भुगतान-सन्तुलन मे साधारणतया कितना उतार-चढाव होगा। देश के खाते में विदेशी मुद्रा को सुरक्षित रखने की आवश्यकता इस कारण होती है कि कभी-कभी विदेशी अदायगियो में अस्थायी रूप से जो कठिनाई हो जाती है, उसे हल किया जा सके। यदि मुद्रा के सुरक्षित कोष का उचित परिमाण, कोई ६ या ७ महीनों में होने वाले आयात का मूल्य मान लिया जाए तो भारत के पौड-पावने में से लगभग २०० करोड़ रुपए का उपयोग, योजना की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता को पूरा करने के लिए बिना किसी जोखिम के किया जा सकता है। प्रथम योजना के वितरण मे, इस प्रयोजन के लिए, पौड-पावने मे से २६० करोड़ रुपए निकालने की बात कही गई थी। तब अनुभव किया गया था कि पौड-पावने में से इतनी राशि निकाल देने पर, देश के खाते में सुरक्षित विदेशी मुद्रा का परिमाण संतुलित हो जाएगा। परन्तु प्रथम योजना काल में हमारा पौड-पावना लगभग १४० करोड़ रुपए घट गया। द्वितीय योजना की अवधि मे, पौंड-पावने में से २०० करोड़ रुपए और निकाल लेने की सिफारिश करते हुए हम यह सुझाव दे रहे है कि देश के खाते में सुरक्षित विदेशी मुद्रा के परिमाण को प्रथम योजना मे अनुमानित स्तर तक गिराया जा सकता है। भारत ने गत दो वर्षों में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से अपनी मुद्रा का पुन भुगतान कर दिया है, और इस कारण वह इस स्थिति मे है कि उस कोष का उपयोग कर सके। वह कोष आवश्यकता के समय उपयोग के लिए अतिरिक्त राशि का काम दे सकता है।

५६. देश के खातों में विदेशी मुद्रा में सुरक्षित राशि मे से २०० करोड़ रुपए निकाल लेने के पश्चात्, ६०० करोड़ रुपए की कमी रह जाएगी। उसे पूरा करने के लिए ये उपाय किए जा सकते है : (क) विदेशी मुद्रा के बाजार मे ऋण लेना, (ख) विदेशों में बैंकों और फर्मों में आयात के लिए उधार पर माल खरीदने की व्यवस्था करना, (ग) अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक और नव-संगठित अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम से ऋण लेना, (घ) संयुक्त राष्ट्रीय टैकनीकल सहायता—प्रशासन अथवा आर्थिक विकास के लिए प्रस्तावित विशेष संयुक्त राष्ट्रीय कोष जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से ऋण और सहायता लेना, (ङ) निजी विदेशी पूजी का अपने देश में विनियोग करवाना, और (च) मित्र विदेशी सरकारों से ऋण और सहायता लेना। योजना की विदेशी मुद्रा की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए हमें इन सभी उपायो का प्रयोग करना पडेगा।

६०. प्रथम योजना की अवधि मे सरकारी क्षेत्र के विकास के कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए, हमे सब मिला कर २६८ करोड़ रुपए की विदेशी पूजी मिल गई थी। इसमें से लगभग २०४ करोड़ रुपए का उपयोग प्रथम योजना काल में ही कर लिया गया है। नीचे की तालिका में यह विवरण दिया गया है कि प्रथम योजना के समय कितनी राशि उपयोग में लाने का अधिकार दिया गया था, कितनी उपयोग मे लाई गई थी, और कितनी द्वितीय योजना के समय उपयोग के लिए बची हुई है :

(करोड़ रुपए)

	अधिकृत	ऋण या अनुदान	मार्च १६५६ तक काम में लाई गई अनुमानित राशि	द्वितीय योजना काल के लिए शेष
अमेरिका				
गेहूं का ऋण ...	६०·३	ऋण	६०·३	..
भारत-अमेरिका सहायता कार्यक्रम .	१०२·५	अनुदान	७०·५	३२·०
..	३६·३	ऋण	७·०	३२·३
अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक	१२·०	ऋण	८·५	३·५
कोलम्बो योजना				
आस्ट्रेलिया	१०·५	अनुदान	५·३	५·२
कैनेडा	३५·६	अनुदान	१६·५	१६·२
न्यूज़ीलैंड	१·२	अनुदान	०·३	०·६
ब्रिटेन	०·५	अनुदान	०·३	०·२
फोर्ड फाउन्डेशन	५·४	अनुदान	२·०	३·४
नार्वे	०·३	अनुदान	०·२	०·१
योग ...	२६७·६		२०३·६	६३·८

भारत को विस्तृत टेकनीकल सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत संयुक्त-राष्ट्र संघ की विशेष एजेन्सियों से, चार सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत अमेरिका से, और कोलम्बो योजना के अन्तर्गत राष्ट्रमण्डल के देशों से भी टेकनीकल सहायता मिलती रही है। यह सहायता, विशेषज्ञों की सेवाओं, भारतीय नागरिकों को प्रशिक्षण की सुविधाओं और प्रदर्शन यन्त्रों की प्राप्ति के रूप में मिली है। १६५० से अब तक, भारत-अमेरिका टेकनीकल सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत २५१ विशेषज्ञों की, कोलम्बो योजना के अन्तर्गत राष्ट्रमण्डल के देशों से ८१ विशेषज्ञों की, और संयुक्त-राष्ट्रीय टेकनीकल सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत और संयुक्त-राष्ट्र संघ की एजेन्सियों से ५६१ विशेषज्ञों की सेवाएं हमें उपलब्ध हो चुकी हैं। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत बहुत-से भारतीय नागरिक भी प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं। संयुक्त राष्ट्र-संघ के शिक्षा-विज्ञान तथा संस्कृति संगठन कार्यक्रम के अनुसार, वैस्टर्न हायर टेकनीकल इंस्टीट्यूट और इंडियन टेकनीकल इंस्टीट्यूट के लिए विशेषज्ञों और यन्त्र-सामग्री की सहायता की भी अनुमति दी जा चुकी है। सोवियत रूस ने, संयुक्त राष्ट्रीय टेकनीकल सहायता कार्यक्रम में जो योग दिया था, उसी में से यह सहायता हमें दी गई है।

६१. सब मिलाकर, द्वितीय योजना के लिए हमे विदेशी सहायता की आवश्यकता उससे बहुत अधिक पडेगी जो कि हमें हाल के वर्षो में मिलती रही है। योजना के सरकारी क्षेत्र के लिए वित्तीय साधनो का अन्दाजा लगाते हुए यह मान लिया गया है कि ८०० करोड़ रुपए विदेशो मे एकत्र किए जाएगे। प्रथम योजना मे इस प्रकार २०४ करोड रुपए का उपयोग हुआ था। योजना के निजी क्षेत्र में १०० करोड रुपए की विदेशी पूजी की कल्पना की गई है।

६२. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, योजना के सरकारी क्षेत्र की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए पहले अधिकृत राशियों में से ६४ करोड रुपए बचे हुए हैं। उसके अतिरिक्त भिलाई मे इस्पात कारखाने लगाने के लिए रूस की सरकार से ६३ करोड़ रुपए ऋण लेने का समझौता किया जा चुका है। इस ऋण मे से द्वितीय योजना काल मे जो भाग चुका देना पडेगा, उसे घटाने के पश्चात्, शेष राशि ४३ करोड़ रुपए की रह जाएगी। दुर्गापुर के इस्पात कारखाने के लिए ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश बैंको ने ३३ करोड रुपए देने का वचन दिया है। इस प्रकार द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र के लिए १७० करोड़ रुपए की व्यवस्था का निश्चय हो चुका है। शेष ६३० करोड रुपए की व्यवस्था अभी और करनी होगी।

६३. योजना के निजी क्षेत्र के लिए १०० करोड रुपए की विदेशी पूजी की जो कल्पना की गई है, अन्तर्राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक ने, इडियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, दि टाटा हाइड्रो-इलेक्ट्रिक कम्पनियो और इडस्ट्रियल-क्रेडिट एण्ड इनवैस्टमेण्ट कार्पोरेशन आफ इडिया को जो ऋण दिया था, उसमें से लगभग २२ करोड रुपए अभी शेष बचा हुआ है। आशा है कि अन्तर्राष्ट्रीय बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम से नये ऋण मिल सकेंगे, और कुछ निजी विदेशी पूंजी भारत मे भी नई लगेगी। यद्यपि पहले लगी हुई निजी विदेशी पूजी का कुछ भाग चुका देना पड़ेगा, तो भी आशा है कि नए ऋणों और विनियोगों को मिलाकर योजना के निजी क्षेत्र के लिए जितनी विदेशी पूजी का अन्दाजा लगाया गया है, उतनी मिल जाएगी।

६४. साराश यह है कि द्वितीय योजना के लिए बहुत अधिक विदेशी पूजी की अवश्यकता है। अब तक जो राशि मिल चुकी है, उसके पश्चात् भी हमारे भुगतान-संतुलन में भारी कमी रहेगी। उसे पूरा करने के लिए सब सभव उपाय करने पड़ेगे। इस प्रसग मे यह ध्यान विशेष रूप से रखना चाहिए कि यह निश्चय पहले से नही किया जा सकता कि हम अपने विकास कार्यक्रमो की पूर्ति के लिए विदेशों से कितनी सहायता मिलने का भरोसा कर सकते हैं। इस लिए साधनो की समस्या पर विचार करते समय देश और विदेश के साधनों को मिलाकर ही विचार करना चाहिए। विदेशी साधनों मे जो कमी रह जाएगी, उसे देश में ही अधिक साधन एकत्र करने का प्रयत्न करके पूरा करना होगा। इसके बिना योजना का विनियोग कार्य निर्विघ्न आगे नही बढ सकेगा। इस कारण हमारी नीति मे सर्वाधिक बल निर्यात द्वारा आय को अधिकाधिक बढाने और आयात को अधिकतम घटाने पर रहना चाहिए।

परिशिष्ट १

राज्यों की योजनाओं का विवरण—(क) और (ख) भाग के राज्य

१९५६-६१
(करोड़ रुपयों में)

	राजस्व खाता								पूंजी खाता			
	राज्य की योजना का परिमाण	करों की वर्तमान दरों से राजस्व में बचत	अतिरिक्त करों से राजस्व	केन्द्र से प्राप्त अतिरिक्त करों का भाग	जनता के ऋणों पर देय ब्याज (घटाइए)	कुल योग (सं ३, ४ और ५ को जोड़कर और ६ को घटाकर)	जनता से ऋण (कुल आय मिला कर)	छोटी बचतों का भाग	अन्य प्राप्तियां (वास्तविक)*	योग (सं० ८, ९ और १० का)	राजस्व और पूंजी खाते के साधनों का योग (सं० ७ और ११ का)	साधनों में कमी** (सं० २ और १२ का अन्तर)
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
आन्ध्र	११९·०	६·५	८·०	३·२	२·३	१५·४	२०·२	३·५	०·१	२३·६	३९·०	८०·०
आसाम	५७·९	९·०	५·०	१·५	—	१५·५	—	४·०	(—)२·२	१·८	१७·३	४०·६
बिहार	१९४·२	१६·२	२८·०	६·५	१·७	४९·०	१५·०	१३·५	(—)०·३	२८·२	७७·२	११७·०
बम्बई	२६६·२	३२·५	१४·०	८·०	५·२	४९·३	४५·०	४१·०	४२·०	१२८·०	१७७·३	८८·९
मध्य प्रदेश	१२३·७	१४·०	१५·०	३·५	१·२	३१·३	१०·०	१०·०	—	२०·०	५१·३	७२·४
मद्रास	१७३·१	३४·०	१५·०	६·३	४·५	५०·८	४०·०	१०·०	(—)१०·६	३९·४	९०·२	८२·९
उड़ीसा	१००·०	९·७	८·०	२·४	०·६	१९·५	५·०	२·५	०·२	७·७	२७·२	७२·८
पंजाब	१२६·३	३·२	१९·०	२·१	०·६	२३·७	५·०	११·०	(—)४·२	११·८	३५·५	९०·८
उत्तर प्रदेश	२५३·१	(—)२·६	४६·०	१०·३	४·०	४९·७	३५·०	३५·५	(—)१०·०	६०·५	११०·२	१४२·९
पश्चिम बंगाल	१५३·७	(—)७·२	१४·०	५·३	४·०	८·१	३५·०	२७·५	(—)६·२	५६·३	६४·४	८९·३
योग	१,५६७·२	११५·३	१७२·०	४९·१	२४·१	३१२·३	२१०·०	१५८·५	८·८	३७७·३	६८९·६	८७७·६

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
हैदराबाद	१०० २	(—)६·८	६·०	३·०	१ ७	०·५	१५ ०	३·५	१·७	२० ०	२०·७	७९·५
मध्य भारत	६७ ३	(—)५ ८	९·०	१ २	१ १	३ ३	१०·०	२ ५	(—)४·४	८ १	११·४	५५·९
मैसूर	८०·६	(—)११·२	५·०	०·४	२ ३	(—)८·१	२०·०	२·५	(—)१·१	२१·४	१३·३	६७·३
पेप्सू	३६·३	१·१	४·०	०·५	—	५·६	—	१·५	३·५	५ ०	१०·६	२५ ७
राजस्थान	९३·४	(—)५ २	८·०	२·४	१·७	३·५	१५ ०	५ ०	६·३	२६ ३	२९·८	६७·६
सौराष्ट्र	४७·७	१·२	५·०	०·२	१·७	४·७	१५·०	४·०	१·१	२० १	२४·८	२२ ९
तिरुवांकुर-कोचीन	७२ ०	८ ७	७ ०	०·४	१·७	१४ ४	१५·०	२·५	३·३	२०·८	३५·२	३६·८
जम्मू व कश्मीर	३३ ९	०·५	—	—	—	०·५	—	—	(—)१३·१	(—)१३ १	(—)१२·६	४६·५
योग	५३५·४	(—)१७·५	४४·०	८ १	१० २	२४·४	९० ०	२१·५	(—)२·७	१०८ ८	१३३·२	४०२·२
कुलयोग	२,१०२·६	९७·८	२१६·०	५७·२	३४·३	३३६·७	३००·०	१८०·०	६·१	४८६·१	८२२·८	१२७९·८

*प्राप्तियो में प्राविडेण्ट फण्डों में जमा राशियों, ऋणों और पेशगी दी हुई रकमों की वसूली, ऋण को कम करने या उसमे बचने के लिए चालू आय में से ली हुई राशियों और पूजी खाते मे अन्य विविध प्राप्तियों का योग करके, उसमे से पूंजी-खाते में किए हुए व्यय, ऋणों की अदायगी और जमीदारों तथा जागीरदारो आदि को दिया हुआ मुआवजा घटा दिए गए हैं।

**इसकी पूर्ति केन्द्र की सहायता से और सुरक्षित कोष में रखी हुई सरकारी हुण्डियों की बिक्री तथा राज्यों द्वारा अतिरिक्त साधन एकत्र करके की जायगी।

टिप्पणी :—१. राज्य सरकारों के साथ विचार-विनिमय के पश्चात् राज्यों में जो अतिरिक्त कर लगाने का निश्चय किया गया था उसमें से 'क' और 'ख' भाग के राज्यों का भाग १६६ करोड़ रुपए था। बाद में क्योंकि राज्यों के अतिरिक्त करों का लक्ष्य बढ़ाकर २२५ करोड़ कर दिया गया था, इसलिए इस विवरण में प्रत्येक राज्य के अतिरिक्त कर का परिमाण उसी हिसाब से बढ़ा दिया गया है। 'क' और 'ख' भाग के राज्यों का बढ़ा हुआ अंश २१६ करोड़ रुपए है।

टिप्पणी :—२. अतिरिक्त करों के यहां दिए हुए विवरण में ३१·१ करोड़ रुपए का सुधार उपकर सम्मिलित नहीं है, क्योंकि वह केन्द्र का ऋण चुकाने में व्यय कर दिया जाएगा, और राज्यों की योजनाओं में उसका उपयोग नहीं होगा। इस ३१·१ करोड़ रुपए का राज्य वार विवरण इस प्रकार है :

	(करोड़ रु०)
उड़ीसा	१·६
पंजाब	१०·०
पश्चिमी बंगाल	३·०
पेप्सू	६·७
राजस्थान	५·८
योग	३१·१

टिप्पणी :—३. यह मान लिया गया है कि १९५६ से १९६१ तक के पांच वर्षों में केन्द्रीय सरकार जो २२५ करोड़ रुपए के नए कर लगाएगी, उनमें से कोई ६० करोड़ रुपए राज्यों को दिए जाएँगे। 'ख' भाग के तीन राज्यों—मैसूर, सौराष्ट्र और तिरुवांकुर-कोचीन को पहले चार वर्षों तक इस राशि में से कुछ नहीं मिलेगा, क्योंकि १९५९-६० तक इन राज्यों का राजस्व खाने का घाटा भी केन्द्र से पूरा किया जाता रहेगा।

टिप्पणी :—४. १९५५ के जुलाई और सितम्बर के मध्य में राज्य सरकारों के साथ विचार-विनिमय से निश्चय हो गया था कि वे २१८ करोड़ रुपए का ऋण जनता से लेंगी। परन्तु अब उसे बढ़ाकर ३०० करोड़ रुपए कर दिया गया है। इसमें से प्रत्येक राज्य के भाग का निर्णय हाल के वर्षों में उस राज्य द्वारा लिये हुए ऋण की सफलता को देखकर किया जाएगा।

टिप्पणी :—५. छोटी-छोटी बचतों से योजना के पांच वर्षों में ५०० करोड़ रुपए एकत्र होने का अन्दाजा किया गया है। इसमें से राज्यों का भाग २०० करोड़ रुपए रखा गया है। इसका आधार यह है कि १९५१ से १९५६ तक प्राप्त बचतों के वार्षिक औसत का तो राज्यों को २५ प्रतिशत दिया जाए, और उससे अधिक संग्रह का ५० प्रतिशत। २०० करोड़ रुपए में से क और ख भाग के राज्यों का अंश १८० करोड़ रुपए है।

अध्याय ५

योजना का रोजगार पक्ष

आर्थिक विकास की कोई भी योजना हो, यह मानी हुई बात है कि उसमे प्राप्य साधनो का इस तरह उपयोग करना होगा कि उत्पादन की वृद्धि की गति अधिक से अधिक बढ सके। यह ऐसा काम है जिसमे वक्त लगता है। समाज मे हर एक को पूरी तरह रोजगार मिल सके—ऐसी परि-स्थिति उत्पन्न करने की योजनाएं भी इसी तरह वक्त लेगी। अगर काफी लम्बा समय दृष्टि मे रखा जाए तो विकास की गति बढने के साथ-साथ पूरा रोजगार देने की योजना भी निर्विरोध चल सकती है, दोनो मे कोई असामंजस्य नही होता। बल्कि अब सभी मानने लगे हैं कि बेरोज-गारी की समस्या, खासकर हमारे जैसे कम उन्नत देश मे, तभी हल हो सकती है जब खूब जोरो से विकास का काम किया जाए। हो सकता है कि पाच बरस की छोटी-सी अवधि मे थोडा सघर्ष इस बात को लेकर होता रहे कि द्रुत गति से पूजी-निर्माण करने और अधिकाधिक रोजगार की व्यवस्था करने—इन दोनों में से कौन अधिक आवश्यक है। पर अगले ५ वर्षो का योजना कार्य-क्रम निर्धारित करते समय सबसे पहले इसी बात का ध्यान रखना है कि बढती हुई बेरोजगारी को रोक दिया जाए।

समस्या का रूप और आकार

२. आने वाले वर्षों में रोजगार के अवसर बढाने के काम मे तीन प्रकार की समस्याए आएगी। पहले तो गावो और शहरो मे जो लोग पहले से ही बेरोजगार है, उन्हे काम से लगाना होगा; दूसरे श्रमिको की स्वाभाविक रूप से बढती हुई संख्या के लिए भी—जो अगले ५ वर्षो तक अनुमानत कोई २० लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष के हिसाब से बढती रहेगी—काम जुटाना है; तीसरे उन लोगो को और काम देना है जो शहरो या गावो मे खेत या घर पर काम करते है, पर पूरी तरह रोजगार से लगे नही कहे जा सकते। सयुक्त परिवार व्यवस्था मे रोजगार के अवसरो की कमी का रूप यह होता था कि या तो लोग पूरी तरह काम से लगे हुए न होते थे, या फिर बेरोजगार होते थे, लेकिन उनकी वह बेरोजगारी सामने नही आती थी। वह व्यवस्था किसी हद तक बेरोजगार लोगो को थोडी-बहुत सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती थी। शिक्षा के प्रचार, भूमि कानूनो में सुधार और युवक वर्ग की अपनी रोजी आप कमाने की स्वाभाविक इच्छा से अब मजूरी पर काम करने की प्रवृत्ति दिखाई दे रही है, जिससे बेरोजगारी का आकार दिनो दिन अधिक स्पष्ट होकर सामने आता जा रहा है।

३ पहली योजना के अनुभव से मालूम हुआ है कि बेरोजगारी की समस्या को कुल मिलाकर तो देखना ही चाहिए, पर उसके ग्राम्य और शहरी—दोनो प्रकारो को अलग-अलग भी परखना चाहिए। इसलिए यह समझने के लिए कि अगले कुछ वर्षो मे उसका क्या रूप हो जाएगा, यह देखना जरूरी है कि देश के विभिन्न भागो मे ग्राम और नगर क्षेत्रो मे उसका आकार क्या है? इसीलिए शिक्षित बेरोजगारों को बाकी बेरोजगारो से अलग करके देखना पड़ेगा।

४. बेरोजगारी दूर करने के उपाय स्थिर करने मे जो बाधाए है, उनमें एक है बेरोजगारी के आकार और प्रकार से अनभिज्ञता और इस बात की यथेष्ट जानकारी का अभाव कि विभिन्न प्रकार से पूजी लगाने में रोजगार कितना-कितना मिल सकता है। समय-समय पर बेरोजगारी सम्बन्धी सूचना वही मिल पाती है, जहा काम दिलाने के दफ्तर काम कर रहे हैं—और ये जगह ज्यादातर शहरों मे है। इसलिए बिलकुल ठीक-ठीक कह सकना बहुत कठिन है कि बेरोजगारी की समस्या विभिन्न क्षेत्रों मे कितनी है। काम दिलाने के दफ्तरो से प्राप्त जानकारी मे भी कुछ अपनी सीमाएं होती है, फिर भी नियतकालिक सूचनाए केवल इन्ही दफ्तरो से प्रकाशित होती हैं। इसलिए उनके रजिस्टरो मे बेरोजगारो की सख्या कम-ज्यादा होने से शहरो की बेकारी की समस्या के परिमाण का कुछ पता चल सकता है। पहली योजना सम्बन्धी जानकारी से मालूम होता है कि जब वह योजना आधी पूरी हो चुकी तो बेरोजगारी बढ़ने लगी। पहली योजना के समय मे बेकारो के रजिस्टर मे सख्याए, मार्च १९५१ मे ३ ३७ लाख, दिसम्बर १९५३ मे ५·२२ लाख और मार्च १९५६ में ७·०५ लाख थी। इन आकड़ो का अर्थ और भी स्पष्ट हो जाता है—यदि इन्हे योजना आयोग के कहने पर राष्ट्रीय सर्वेक्षण द्वारा किए गए शहरों मे बेकारी के प्रारम्भिक सर्वेक्षण के साथ देखा जाए। इससे मालूम हुआ है कि १९५४ मे देश मे २२·४ लाख बेकार थे। इससे यह भी पता चला कि मोटे तौर पर बेकारों मे से कोई २५ प्रतिशत अपना नाम रोजगार दिलाने के दफ्तरों मे लिखाते है। इस हिसाब से इस समय सम्भव है शहरों मे करीब २८ लाख आदमी बेकार हों। यह अनुमान कुछ और शहरी क्षेत्रो में हाल ही मे किए गए दूसरे सर्वेक्षण के देखने से मोटे तौर पर पुष्ट हो जाता है। विकासशील अर्थ-व्यवस्था में कुछ बेरोजगारी अनिवार्य रूप से बढेगी ही। इसकी गुजाइश रखकर कहा जा सकता है कि इस समय शहरो मे बेरोजगारो की सख्या २५ लाख के आस-पास होगी।

५ इस संख्या मे, शहरी श्रमिक समाज मे नए आने वाले भी शामिल किए जाएगे। अनुमान है कि इस प्रकार अगले पाच वर्षो मे कोई ३८ लाख बेकार और बढ जाएगे। ऐसा यह मान कर कहा गया है कि १९५१–६१ के दशक मे शहरो की आबादी मे ३३ प्रतिशत की वृद्धि हो जाएगी—यह वृद्धि १९३१–४१ की (३१ प्रतिशत) से अधिक और १९४१–५१ की (४० प्रतिशत) से कम है। १९४१–५१ के दशक मे शहरो की आबादी, युद्ध और विभाजन के कारण असाधारण रूप से बढी थी, इसलिए यह मान लेना उचित है कि १९५१–६१ मे शायद इतनी न बढे। इसके अलावा योजना के कार्यान्वित होने और शहर मे काम मिलने की दिक्कतो के अनभव से किसी हद तक गावो से लोगो का शहरो मे आना शायद कम हो जाए।

६ गावो मे बेरोजगारी और कम रोजगारी मे भेद कर सकना कठिन है। इन क्षेत्रो मे रोजगार बढाते वक्त यह देखने के साथ-साथ कि काम का परिमाण बढा है, और कम रोजगारों मे अधिकाश की आय बढी है, यह भी देखना होगा कि कुछ पूर्ण रोजगार के अवसर भी निकले है या नही। इस सदर्भ मे खेतिहर मजदूरो का, विशेषत जिनके पास जमीन नहीं है विशेष विचार करना चाहिए। हाल ही मे कुछ राज्यो मे गावो की बेरोजगारी का सर्वेक्षण किया गया है। अभी ये सर्वेक्षण आरम्भिक ही है और अलग-अलग दृष्टि से किए गए है, इसलिए विभिन्न क्षेत्रो का तुलनात्मक ब्योरा नही तैयार किया जा सकता—और समूचे देश के लिए अनुमान लगाना खतरनाक हो सकता है। हाल मे किए गए सर्वेक्षणो मे सिर्फ खेतिहर जाच समिति ने बाकायदा सर्वेक्षण किया है, जिसके अनुसार १९५०–५१ मे ग्राम्य बेरोजगारी २८ लाख थी। हाल मे राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे ने समय-समय पर गावों और शहरो मे बेरोजगारी का ब्योरा तैयार

करना शुरू किया है। शहरी बेरोजगारी के ब्योरे प्राप्त हो गए है, पर गावों के ब्योरे अध्ययन और समीक्षा के लिए अभी प्राप्त नही हुए है। पाच वर्षो मे गांवो में रोजगार की व्यवस्था मे क्या परिवर्तन हुआ होगा, यह अभी नही कहा जा सकता। यह अलबत्ता कहा जा सकता है कि पहली योजना मे जोर गावो के विकास कार्यो पर ही दिया गया था और वे अधिकाश सफल भी हुए थे, इसलिए गावो मे बेरोजगारी शायद नही बढ़ी होगी। विशिष्ट प्रवृत्तियो के अभाव मे बस यही कहा जा सकता है कि पहली योजना के कार्यकाल मे गावों मे बेरोजगारी की स्थिति मे खास फर्क नही पडा।

७. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, अगले ५ वर्षो मे श्रमिक समाज मे नए आने वालो की सख्या १ करोड़ आकी गई है। इनमे से शहरी मजदूरो की सामान्य सख्या ३८ लाख निकाल देने से १९५६–६१ मे गावो मे बढ़ने वाले मजदूरो की सख्या ६२ लाख रह जाती है। दूसरी पंच-वर्षीय योजना मे बेरोजगारी मिटा देने के लिए निम्नाकित सूची के अनुसार रोजगार की सुविधाएं उपलब्ध करनी होगी

तालिका १

(सख्या लाख मे)

	शहरों मे	गावो मे	कुल
नए मजदूरो के लिए	३८	६२	१००
पहले के बेरोजगारो के लिए	२५	२८	५३
कुल	६३	९०	१५३

८ रोजगार के इतने साधन जुटा भी दिए जा सके तो भी कम रोजगारी की समस्या जो उतनी ही कठिन है मिट नही जाती। यहा भी यथेष्ट जानकारी के अभाव मे समस्या को समझना ही मुश्किल हो रहा है। उन सस्थाओ की सहायता के लिए जो बेरोजगारी सर्वेक्षण करती है केन्द्रीय आकडा सगठन ने एक पुस्तिका प्रकाशित की है इसके सुझावो को चालू सर्वेक्षणों में काम मे भी लाया गया है। विभिन्न क्षेत्रो मे पूजी लगाने का बेरोजगारी पर क्या प्रभाव होता है इसके सम्बन्ध मे योजना आयोग के पास जो ब्योरा अध्ययन के लिए था उसके अलावा अब वह उस सामग्री का भी उपयोग कर रहा है जो राज्य सरकारों ने दूसरी योजना के रचना काल में एकत्र की थी। इस सब अध्ययन का परिणाम मालूम होने पर बेरोजगारी की समस्या के प्रादेशिक पहलुओ पर पूरा ध्यान दिया जा सकेग।

पद्धतियों का चुनाव

९. आज की बेकारी और श्रमिक सख्या मे होने वाली वृद्धि (तालिका १) को देखकर यह आशा करते रहना बेकार होगा कि दूसरी योजना के समाप्त होते-होते पूरा रोजगार सबको दिला दिया जाएगा। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, यह लक्ष्य तो योजनाबद्ध रूप से कोशिश करते-करते दूसरी योजना के काफी बाद ही सिद्ध किया जा सकता है। इसे और जल्दी सिद्ध करने के लिए यह अवश्य करना होगा कि योजना मे निहित कार्यो की अधिकाधिक काम देने की शक्ति बढाई जाए, पर दीर्घकालिक आवश्यकताओ का ध्यान रखा जाए।

१०. अपने देश की अर्थ-व्यवस्था को देखते हुए, जिसमे मजदूरों की बहुतायत है, यह उचित और स्वाभाविक है कि ज्यादातर ऐसी पद्धतिया अपनाएं जिनमे मजदूरो की अधिक

खपत हो। तो भी जहा यह सवाल उठेगा कि पूजी लगाने के लिए विभिन्न पद्धतियो मे से किसका चुनाव किया जाए वहा निर्णय उन बातो के आधार पर ही किया जा सकेगा जिनका उल्लेख अन्यत्र हुआ है। विभिन्न पद्धतियो के प्रयोग मे स्पर्द्धा या विरोध का क्षेत्र उतना बडा नही जितना अक्सर समझा जाता है। ज्यादातर तो स्पष्ट ही होता है कि अमुक पद्धति क्यों चुनी जाए—और उसका शुद्ध कारण उत्पादन के शिल्प सम्बन्धी तथ्य होते हैं। उदाहरण के लिए, मूल उद्योगों के सम्बन्ध मे, कोई दूसरा उपाय नही है। वहां बेरोजगार की खातिर आकार की और टेकनो-लौजिकल आवश्यकताओ को भुलाया नही जा सकता। उधर इस प्रकार के उद्योग स्थापित करने की आवश्यकता से इन्कार भी नही किया जा सकता, क्योकि अतत देश की रोजगार शक्ति बढाने के लिए उनका महत्व निस्सन्देह है। कृषि मे, केवल कुछ परिस्थितियो को छोड़कर, विकास की वर्तमान दशा मे, मशीनीकरण के सम्भव आर्थिक लाभ भी मशीनीकरण से उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी की सामाजिक हानि को देखते हुए कम हो जाते हैं।

११. सडक, मकान, रेल आदि के निर्माण की जो पद्धति चालू है, वह वर्षों के उद्योग से कठिन मानव श्रम को कम करते हुए निकाली गई है—आज की सामाजिक मान्यताए उस तरह के मानव श्रम को स्वीकार भी नही करेंगी। इसलिए यह पद्धति अगले ५ वर्षो तक माननी ही पडेगी, हालाकि मशीन के प्रयोग के फलस्वरूप बेकार हुए लोगो को रोजगार देने के प्रश्न को भुलाया नहीं जा सकता। सिचाई और बिजली कार्यो में मशीन का इस्तेमाल कुछ तो टेकनीकल कारणो और कुछ उस क्षेत्र मे उपलब्ध श्रम पर निर्भर करता है, पर जहां ऐसी परिस्थितिया न हो, वहा निर्माण मशीनो का उपयोग देश मे उपलब्ध श्रम शक्ति और मूल्यवान विदेशी मुद्रा की बचत के संदर्भ मे स्थिर करना होगा। यही दशा रेलवे को छोड़ अन्य परिवहन और संचार व्यवस्था के मामले मे भी पाई जाती है।

१२. विकसित अर्थ-व्यवस्था मे निर्माण कार्य मे वृद्धि करना अल्प काल के लिए बेरोजगारी को हल करने का उपाय माना जाता है, पर भारत मे इस प्रकार के कार्यों मे पूजी लगाने को एक सीमा से आगे नही चलने दिया जा सकता। निर्माण कार्यो मे पूजी लगाने से एक बार मे ढेर की ढेर पूजी लगती है और फिर काम पूरा होने के साथ-साथ मजदूर बेकार होने लगते हैं। हा, निर्माण से उत्पन्न सुविधाओ से अनेक लाभ भी होते है और इनके कारण निर्माण मे लगाए गए श्रम का काफी अश फिर काम मे लग सकता है। पर जो लोग काम मे नही लग पाते उनको अन्यत्र भेजने या नए सिरे से सिखाने जैसी समस्याए भी उठ खडी होती है।

१३ केवल उपभोग्य सामग्री के उत्पादन के सिलसिले मे उत्पादन पद्धतियो के चुनाव का प्रश्न कठिन हो सकता है। यदि और बातो का विचार न भी करे तो भी पूजी-प्रधान उत्पादन पद्धति मे दोहरी हानि होती है (क) श्रमिको का हटाया जाना, और (ख) पूजी लगाने के दुर्लभ साधनों पर और जोर पडना—खासकर विदेशी मुद्रा विनिमय साधनों पर। इस क्षेत्र की समस्याओ का आर्थिक और सामाजिक विकास की समस्या से मौलिक सम्बन्ध है। इनमें से कुछ पर उपयुक्त अध्यायो मे प्रकाश डाला गया है। यह मानना पडेगा कि दीर्घकालीन उद्देश्य, पूजी लगाने की गति मे वृद्धि करना है—और वह चालू उत्पादन मे से यथेष्ट बचत किए बगैर नही हो सकता। इन सब भिन्न भिन्न उद्देश्यो मे संघर्ष उसी समय चिन्ता का कारण बन सकता है जब विकेन्द्रीकृत उत्पादन की सचय क्षमता पर आक्षेप होने लगता है। श्रम-प्रधान पद्धति अपनाने से प्रति व्यक्ति अतिरिक्त पूजी सचय की क्षमता कम हो सकती है, अधिक विकसित पद्धति से उत्पादन करने से वह अधिक हो सकती है। पर यह देखते हुए कि श्रम-प्रधान

पद्धति से काम न लेने पर जो बेरोजगार रहेंगे, उनके पोषण का सामाजिक और आर्थिक व्यय क्या होगा, उस पद्धति मे उत्पादन की हर इकाई मे पूजी निर्माण के लिए शायद अतिरिक्त क्षमता अधिक हो सकती है। अविकसित अर्थ-व्यवस्था मे, जहा बेरोजगारो को निर्वाह के लिए धन देना व्यावहारिक नही हैं, लाभ-हानि की तुलना करने पर श्रम प. जोर देने की पद्धति निश्चय ही लाभकर मानी जाएगी, परन्तु विकास की दृष्टि से ऐसी पद्धतिया चुनने मे दिक्कत इस प्रश्न को लेकर उठती है कि कई छोटी-छोटी उत्पादन इकाइयो मे उप-ब्ध अतिरिक्त पूजी को सगठित कैसे किया जाए—पर यह सगठन की समस्या है और इसे हल करना चाहिए। साथ ही, परम्परागत पद्धतियो को और उपादेय बनाने का प्रयत्न जारी रखना चाहिए। यह सच है कि इन इकाइयों मे टेकनीकल विकास का कोई चमत्कार प्रकट नही हो सकता, पर उनसे नए प्रकार के औजारो और साज-स मान की जरूरत पैदा हो सकती है और अन्य उद्योगो की उत्पत्ति में सहायता मिल सकती है। हाल के अन्वेषणो से पता चलता है कि छोटे उद्योगों मे बिना और पूजी लगाए या श्रम पर बोझ डाले उत्पादनशीलता बढाने की काफी गुजाइश है। इस गुजाइश का पूरा इस्तेमाल होना चाहिए। जब ऊची आय वाले स्तर पर रोजगार की गुजाइश बढेगी तभी अर्थ-व्यवस्था को श्रमिक वर्ग के उत्साह मे वृद्धि के रूप मे शक्ति मिलेगी। हम मानते है कि अर्थ व्यवस्था मे विकास इसी ढग से होगा। अन्तत जनता को ही विकास का भार वहन करना पडता है, यद्यपि लाभ भी वही उठाती है।

१४. ये कुछ बाते हैं जिनके आधार पर हमने दूसरी योजना मे सम्मिलित करने के लिए योजनाए चुनी है। अब यह देखना बाकी रह जाता है कि इन योजनाओ से रोजगार पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष क्या प्रभाव पडेगे।

दूसरी योजना में रोजगार का अनुमान

१५ सरकारी क्षेत्र मे कुल खर्च ४,८०० करोड रुपया कूता गया है, जिसमे से ३,८०० करोड विनियोजित पूजी की शक्ल मे होगा। इसके अलावा, निजी क्षेत्र मे २,४०० करोड रुपए की पूजी लगाए जाने की आशा है। दूसरी योजना कितना अतिरिक्त रोजगार दे सकती है, इसका अनुमान राज्यो और केन्द्रीय मत्रालयों के रोजगार आंकडो और निजी क्षेत्र के लिए प्रस्तावित लक्ष्यों के आधार पर उनकी उत्पादनशीलता मे वृद्धि की कुछ सम्भावनाए मानकर किया गया है।

इस अनुमान का सक्षिप्त रूप यहा दिया जाता है।

तालिका २

अनुमानित अतिरिक्त रोजगार

	(सख्या लाखो मे)
(१) निर्माण .	२१ ००*
(२) सिंचाई और बिजली .	०·५१
(३) रेलवे .	२·५३

*विभिन्न विकास क्षेत्रों मे निर्माणजन्य रोजगार का विस्तारपूर्वक विवरण अगले पृष्ठ पर फुटनोट (+) म देखिए।

(४)	अन्य परिवहन और सचार	१·८०
(५)	उद्योग और खनिजादि	७·५०
(६)	कुटीर उद्योग और छोटे पैमाने के उद्योग	४·५०
(७)	वनोद्योग, मछली उद्योग, राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सम्बद्ध योजनाएं	४ १३
(८)	शिक्षा	३·१०
(९)	स्वास्थ्य	१ १६
(१०)	अन्य सामाजिक सेवाएं	१·४२
(११)	सरकारी नौकरियां	४·३४
	योग (१ से ११ तक)	५१·९९
(१२)	तथा "अन्य" जिनमे योग के ५२ प्रतिशत के हिसाब से व्यापार-वाणिज्य भी शामिल है	२७·०४
	कुल योग	७९·०३ या ८०

१६. ये अनुमान कैसे किए गए है, इसका संक्षित विवरण आगे के पैराग्राफों में दिया गया है ।

(१) **निर्माण**—जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि विकास चेष्टा के सभी क्षेत्रो में निर्माण का स्थान है, ऊपर की सूची मे इस मद में जो अनुमान दिया गया है, उसमें सिंचाई, बिजली, सड़क, रेलवे, भवन, फैक्टरी-भवन, मकान इत्यादि सब स्थापत्यों के निर्माण काल में प्राप्य

+निर्माणजन्य रोजगार का विवरण

	क्षेत्र का नाम	निर्माण मे अनुमानित अतिरिक्त रोजगार
(१)	कृषि और सामुदायिक विकास ..	२·६६
(२)	सिंचाई और बिजली . ..	३·७२
(३)	उद्योग और खनिजादि (कुटीर उद्योग और छोटे पैमाने के उद्योग सहित) .	४·०३
(४)	परिवहन और सचार (रेलवे सहित) .	१·२७
(५)	समाज सेवा	६·९८
(६)	फुटकर (सरकारी नौकरी सहित) .	२·३४
	योग ...	२१·००

रोजगार शामिल है। निर्माण से प्राप्य रोजगार का अन्दाजा लगाने मे १६५५-५६ में होने वाले व्यय की १६६०-६१ के होने वाले व्यय से तुलना की गई है (जो दूसरी योजना के निर्माण व्यय का २० प्रतिशत मान लिया गया है)। बिजली और सिचाई के लिए कुल व्यय का श्रम पर खर्च होने वाला अश, नदी घाटी योजनाकार्य टेकनीकल कर्मचारी समिति के अन्वेषण के आधार पर स्थिर किया गया है। सड़कों के लिए श्रम पर कितना अश खर्च होगा, यह परिवहन मंत्रालय के सड़क सगठन से ज्ञात हुआ है—ये अनुमान विभिन्न राज्यों के सड़क इंजीनियरों से परामर्श करके स्वीकार किए गए। रेल मत्रालय ने विभिन्न क्षेत्रों मे अपने कार्य के अनुभव से बताया कि कितने मील रेल निर्माण पर कितने आदमी लगते है। मकान निर्माण के बारे में एक करोड़ रुपया खर्च करते हुए कितने आदमी काम पर लगाए जाते है, इसकी जानकारी, निर्माण, आवास और संभरण मंत्रालय ने दी और राज्य इंजीनियरों से परामर्श करके कुछ संशोधन सहित इसे स्वीकार किया गया। निजी क्षेत्र मे भी मकान के सम्बन्ध मे इसी जानकारी के आधार पर अनुमान किया गया है। निर्माण के लिए जो अनुमान किए गए है उनसे अधिक आदमियों की ही आवश्यकता पड़ सकती है, कम की नही।

(२) **सिचाई और बिजली**—इस क्षेत्र में रोजगार का अनुमान चालू कार्यों के अधीन किया गया है। इसमे इन कार्यो मे रख-रखाव करने वाले कर्मचारियों और इन कार्यों से उत्पन्न लाभ का वितरण करने वाले कर्मचारियों को भी शामिल किया गया है। इसमे आम तौर से कितना रोजगार है—यह नदी घाटी योजनाकार्य टेकनीकल कर्मचारी समिति ने सम्पूर्ण कार्यों में प्रयुक्त कर्मचारियों की संख्या को देखकर स्थिर किया है।

(३) **रेलवे**—रेलवे मे नई लाइनों के रख-रखाव और सचालन मे कितना रोजगार मिलता रहेगा, यह रेलवे मंत्रालय ने सूचित किया है।

(४) **अन्य परिवहन और संचार**—इसमें सड़क, सड़क परिवहन, संचार, प्रसारण इत्यादि शामिल है। इसमे नया रोजगार अशत. रख-रखाव और संचालन मे है। सड़कों के रख-रखाव में कितना रोजगार निकलेगा, इसका सामान्य अनुमान सड़क संगठन से परामर्श करके किया गया; सड़क परिवहन मे कर्मचारियों की आवश्यकता का भी अनुमान इसी प्रकार स्थिर किया गया। राज्य सरकारों ने अपनी योजनाओं में इस क्षेत्र मे चालू रोजगार की जो जानकारी दी थीं, उससे केन्द्रीय मंत्रालय द्वारा प्राप्त अनुमानों का मिलान किया गया। सचार मंत्रालय की योजनाओं में चालू कार्यो पर होने वाले व्यय के आधार पर यह स्थिर किया गया कि उस मत्रालय की योजनाओं में कितना रोजगार प्राप्त होता रह सकेगा।

(५) **उद्योग और खनिज**—बड़े पैमाने के उद्योगों मे कितना रोजगार मिलेगा, इसका अनुमान लाइसेंस समिति को दिए गए ज्ञातव्य के आधार पर किया गया। जहां इस प्रकार के ज्ञातव्य प्राप्य नही थे, और दूसरी योजना के लिए लक्ष्य निश्चित हो चुके थे, वहा सेंसस आफ मैनुफैक्चर्स के आधुनिकतम संकलन के आधार पर रोजगार का अनुमान लगाया गया। उत्पादनशीलता मे वृद्धि के लिए २० प्रतिशत की गुजाइश रखी गई। इस्पात, खाद, बनावटी पेट्रोल, इस्पात संयंत्रो के निर्माण की मूल मशीनो और बिजली की मूल मशीनो के मामले में सम्बद्ध मंत्रालयों से प्राप्त अनुमानो को स्वीकार किया गया।

खनिज विकास के बारे मे आज का प्रति व्यक्ति उत्पादन मालूम करके, उत्पादनशीलता के लिए २० प्रतिशत गुजाइश देकर और १६६१ तक के उत्पादन लक्ष्य दृष्टि में रखकर, १६६१ मे रोजगार की स्थिति का मोटा अनुमान लगाया गया।

(६) **कुटीर उद्योग और छोटे पैमाने के उद्योग**—इनके मामले में कर्वे समिति का कोई ४ ५ लाख पूर्णकालिक नौकरियो का अनुमान स्वीकार किया गया है। उक्त समिति की रिपोर्ट मे उल्लिखित पूर्णतर नौकरियो को नही गिना गया है, क्योंकि उनसे मूलरूप मे अर्ध-रोजगार वालो को और काम मिलेगा।

(७) **वनोद्योग और मछली उद्योग**—इनके बारे मे राज्यो से प्राप्त जानकारी को आधार माना गया है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा के लिए रोजगार का वह अनुमान प्रयुक्त किया गया है जो सामुदायिक विकास कार्य प्रशासन ने तैयार किया था।

(८ से १०) **सामाजिक सेवाएं**—शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य समाज सेवाओ के लिए राज्यो से प्राप्त जानकारी को योजना आयोग के तत्सम्बन्धी विभागो की सहायता से जाचकर सुविधानुसार स्वीकार किया गया।

(११) **सरकारी नौकरियां**—सरकारी नौकरियो मे जगह मिलने के बारे मे पहले तो यह मालूम किया गया कि असैनिक क्षेत्र मे १९५५-५६ की तुलना मे १९६०-६१ में विकास को छोड अन्य व्यय में अनुमान से कितनी वृद्धि हो जाएगी। एक सरकारी नौकर को औसतन कितना वेतन हर साल दिया जाता है इसके हिसाब से मोटे तौर पर रोजगार का अनुमान लगाया गया।

(१२) **अन्य**—व्यापार, वाणिज्य और अन्य सेवाओं के रोजगार का अनुमान अपेक्षाकृत कम पक्का है। यह १९५१ की जनगणना से प्रकट विविध व्यवसायों के प्रचलन के आधार पर स्थिर किया गया है। "अन्य" मे वाणिज्य, परिवहन (रेलवे छोड़कर), भण्डार गोदाम, ऐसी फुटकर सेवाए जिनका अन्यत्र उल्लेख नही है, और सामान्य मजदूर—ये सब शामिल हैं*। १९५१ की जनगणना के अनुसार इन सबसे श्रमिक समाज के १२८·७६ लाख जनो को काम मिलता है। इन सब समूहों के योग की उस जनसख्या से तुलना की जाए जो खेती के सिवाय, प्राथमिक व्यवसाय, खनिकर्म आदि उद्योग, रेलवे परिवहन, निर्माण और जनोपयोगी कार्य, स्वास्थ्य, शिक्षा, सार्वजनिक प्रशासन और संचार मे लगी है और जिसका योग २२४ ४७ लाख है, तो ० ५२ का अनुपात निकलता है। यह मान लिया जाता है कि यही अनुपात १९६१ मे भी रहेगा। रोजगार का अनुपात निकालने मे शुद्ध खेती का कार्य करने वालो को यह मानकर छोड दिया गया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना मे अतिरिक्त रोजगार अधिकतर गैर-खेती क्षेत्र मे बढाना ही अभीष्ट है। कृषि क्षेत्र मे उत्पादन बढने के साथ-साथ, उन व्यक्तियों को जो व्यापार, वाणिज्य आदि अन्य वर्ग मे पहले ही से है अपने वर्तमान ग्राहकों से ही और काम मिलेगा जिससे उनका रोजगार पूर्णतर हो जाएगा। कहा जा सकता है कि ० ५२ का अनुपात बहुत कम माना गया है।

१७. इन अनुमानों को दूसरी पंचवर्षीय योजना के इस उद्देश्य के संदर्भ में कि खेती के अतिरिक्त क्षेत्र मे समुचित रूप से रोजगार को अवसर देना है, देखना उचित होगा। यदि वर्तमान बेरोजगारी ऐसी ही बनी रह जाए, तो भी इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए १ करोड नई नौकरिया शुरू करनी पड़ेगी। पर श्रमिक समाज मे शामिल होने वाले १ करोड़ नवागुन्तकों में से बहुत-से ऐसे परिवारों के होंगे जो भूमि पर निर्भर करते है। ऐसे लोगो के मामले में, जैसा पहले कहा जा

*१९५१ की जनगणना के व्यवसाय-वर्गीकरण में उल्लिखित "सामान्य मजदूर" शीर्षक उपसमूह छोड दिया गया है, क्योंकि उसे दोनों मुख्य समूहो मे ठीक-ठीक बांटना असम्भव है।

चुका है, अतिरिक्त काम का परिमाण नौकरियो से नही, उनकी अतिरिक्त आय से मापा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त दूसरी योजना मे सिचाई की जो व्यवस्था है, उसके अनुसार यह अनुमान कर लेना सही होगा कि अधिक भूमि पर सिचाई होने पर उसके एक अंश के द्वारा गावों के हिसाब से पूरे वक्त के काम के और अवसर मिलने लगेगे। इसी के साथ ही, जन श्रम द्वारा भूमि को खेती योग्य बनाने की कुछ योजनाएं है और कुछ योजनाएं केन्द्रीय ट्रैक्टर सगठन आदि की है—बागान, काली मिर्च और वृक्ष आदि के विस्तार और विकास की भी योजनाएं है। इनको मिलाकर देखा जाए तो ग्राम क्षेत्र मे कोई १६ लाख नए श्रमिकों को काम मिल सकता है। सिचाई की बाकी सुविधा से उत्पन्न नए काम खेती, बारी मे कम काम पाने वालों को और काम दे सकेंगे। इसके अलावा ग्रामोद्योग और छोटे पैमाने के उद्योगों की योजनाओं मे और अधिक काम की जो व्यवस्था की गई है, उसको भी दृष्टि मे रखना होगा। इस प्रकार जहां तक रोजगार का सवाल है, आशा की जाती है कि योजना का परिणाम महत्वपूर्ण होगा, पर बेरोजगारी की समस्या पर दूसरी योजना के कार्यकाल मे काफी ध्यान देते रहने की जरूरत बनी रहेगी।

१८ इस स्थल पर, पहली और दूसरी योजनाओं के रोजगार पक्षों की तुलना करना उपयोगी होगा। आयोग ने जाच करके मालूम किया है कि पहली योजना की अवधि में सरकारी और निजी क्षेत्र मे सीधे ४५ लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला। इस अनुमान में वाणिज्य, व्यापार जैसे क्षेत्रो मे मिलने वाला रोजगार शामिल नही है। अब विकास प्रयत्न जब करीब-करीब दुगुना हो रहा है तो भी दूसरी योजना मे अतिरिक्त रोजगार का लक्ष्य बहुत ऊचा नहीं होने वाला है। इसकी वजह यह है कि दूसरी योजना मे विकास व्यय की वृद्धि पहली योजना से बहुत अधिक होने की आशा नही है। और इसका कारण यह है कि १९५५-५६ मे सरकारी क्षेत्र में योजना सम्बन्धी व्यय ६००—६२० करोड़ रुपया रहा है, जबकि १९५०-५१ में विकास पर २२४ करोड़ रुपया खर्च हुआ था। पहली योजना के अन्तिम वर्ष में सरकारी क्षेत्र मे खर्च, १९५०-५१ की उसी अवधि के मुकाबले कोई ४०० करोड़ रुपया अधिक होगा। सम्भव है कि पहली योजना के अन्तिम वर्ष के मुकाबले दूसरी योजना के अन्तिम वर्ष में विकास व्यय में ६०० करोड़ रुपए की वृद्धि हो। साथ ही तीसरे अध्याय में वर्णित पूजी लगाने के ढग से स्पष्ट है कि परिवहन और मूलोद्योगो पर कही अधिक व्यय करना सोचा गया है और इनमें अल्प काल में, रोजगार की सम्भावनाएं अपेक्षाकृत कम होती है।

विशेष क्षेत्रों के लिए कार्यक्रम

१९. योजना की रोजगार सामर्थ्य को समग्र रूप में देख लेना ही यथेष्ट नही है। रोजगार के अवसरो में वृद्धि को प्रादेशिक आधार पर भी आकना होगा। इस कोशिश में सबसे बडी दिक्कत यह है कि केन्द्रीय योजनाओ और निजी क्षेत्र के उद्योगों का रोजगार के हिसाब से प्रादेशिक विवरण अभी तैयार नही किया गया है। फिर भी, विशेष क्षेत्रों मे रोजगार बढाने के लिए किन दिशाओं मे काम किया जाएगा, इसकी कुछ आम बातें नीचे दी जाती हैं।

२०. रोजगार का एक पहलू जो विशेष रूप से उल्लेखनीय है, वह है घोर बेरोजगारी और अर्ध-रोजगारी की समस्या। कुछ क्षेत्रों में पुरानी कम रोजगारी चली आ रही है और आमदनियां देश के औसत आय प्रतिमान की तुलना मे भी बहुत कम है। ऐसी परिस्थितिया कुछ अधिक समृद्ध देशो मे भी अज्ञात नही है। उदाहरण के लिए, अमरीका मे ऐसे इलाके है, जहां देश की कुल अर्थ-व्यवस्था मे लक्षित बेरोजगारी के स्तर से अधिक गहरी बेरोजगारी है। ब्रिटेन में भी पिछड़े क्षेत्रों के लिए विशेष कार्यक्रम बनाए गये थे। इन देशो मे किए गए उपायों के अनुभवों से

मालूम हुआ है कि नीति निर्धारण के लिए पहले जिन महत्वपूर्ण बातो की जरूरत है उनमे ऐसे इलाकों का गहन अध्ययन भी एक है; हाल के अनुशीलनो से समस्या के समग्र रूप का कुछ पता तो चलता है, पर विभिन्न क्षेत्रो की विशदतर जानकारी—जैसे स्थानिक कारीगरो का सुलभ होना, सामग्री, प्राप्य सुविधाए, वहा के समाज की तात्कालिक आवश्यकताए आदि—प्राप्त करना भी जरूरी है। ऐसा सर्वेक्षण विभिन्न राज्यो मे करना चाहिए। यदि पिछड़े क्षेत्रो में स्थानिक समुदायो ने विशेष योजनाए तैयार की हो तो शायद उन्हे आवश्यक सहायता देना भी सम्भव हो सके। महत्वपूर्ण बात यह है कि रोजगार बढाने वाले कार्यक्रमो की नीव, स्थानिक जनता और समाज की दिलचस्पी और कोशिश ही होती है। स्थानिक लोग सहकारिता से कुछ करे, उद्योगपति नए काम शुरू करे और केन्द्र या राज्य सरकारे सहायता करे तो ऐसे क्षेत्रों मे रहन-सहन बहुत शीघ्र अच्छा होने लग सकता है। स्थानिक नेतृत्व ऐसे क्षेत्रो मे उपयुक्त कार्यक्रम स्थिर करने एव उन्हें कार्यरूप देने में क्या कुछ कर सकता है यह स्पष्ट ही है।

२१. उपरोक्त कारणों से यह अभी ठीक-ठीक कल्पना करके नही देखा जा सकता कि सरकारी नीति किस दिशा में बननी चाहिए। जिन क्षेत्रों के प्राकृतिक साधन अपेक्षाकृत हीन हैं, उनमें से कही-कही इसकी भी जरूरत पैदा हो सकती है कि अतिरिक्त श्रमिकों को आयोजित रूप से किसी अन्य स्थान को भेज दिया जाए। पर आम तौर से ऐसा भी होता है कि जब बहुत-से श्रमिक अपनी जगह छोड़ दूसरी को जाते है तो उलझने पैदा होने लगती है। इसलिए, कष्ट-ग्रस्त लोगों को उन्ही के क्षेत्रों मे सार्थक काम दिलाना समस्या हल करने का ज्यादा उपयोगी तरीका हो सकता है। हा, उचित जान पडने पर, स्थानान्तरण करना भी निषिद्ध न समझना चाहिए। सरकार ऐसे क्षेत्रों मे रोजगार के अवसर इस प्रकार बढ़ा सकती है: (१) और वजहें ज्यादा बड़ी न हों तो सरकारी क्षेत्र के नए योजना कार्य ऐसे ही स्थानों में पहले स्थापित करके, (२) स्थानिक व्यापारियों और उद्योगपतियों को अपेक्षाकृत अच्छी शर्तों पर ऋण देकर, (३) सरकारी क्षेत्रों के ठेकों का कुछ प्रतिशत ऐसे क्षेत्रो के रहने वालों के लिए सुरक्षित रखकर, और (४) अन्य धन सम्बन्धी उपाय करके जिनसे उद्योगपति पूजी लगाने का उत्साह पा सकें। इस प्रकार के विशेष क्षेत्रों में बिना और अधिक जांच-पड़ताल के कोई पक्के उपाय नहीं किए जा सकेंगे।

शिक्षित बेरोजगार

२२. पढ़े-लिखों की बेरोजगारी को भी देश की अर्थ-व्यवस्था की आम बेरोजगारी का एक अंग मानकर देखना होगा। भारत जैसे देश में इतने अधिक बेकार और उन बेकारों में पढ़े-लिखे बेकार इसी वजह से है कि श्रमिक वर्ग में लोग बढ़ते रहे है परन्तु उन्हें खपाने योग्य हमारे यहा कई वर्षों से यथेष्ट विकास कार्य नही हुआ। वैसे, शिक्षितों की बेरोजगारी का विशेष महत्व है, खासकर निम्नलिखित कारणों से :

(क) सही हो या गलत, जनता की धारणा है कि जो आदमी पढ़ाई में रुपया लगाता है उसे पैसे वाली नौकरी जरूर मिलनी चाहिए;

(ख) शिक्षित व्यक्ति स्वाभाविक रूप से उसी विशेष शिक्षा के अनुरूप नौकरी ढूंढता है जो उसने प्राप्त की है—नतीजा यह हुआ है कि देश में शिक्षा के विकास के अनुसार कुछ पेशों मे उम्मीदवारो की बाढ आ गई है और कुछ में कमी पड़ गई है। फिर, शिक्षित लोग अपने मन के प्रदेशो में भी नौकरी चाहते है—जिससे समस्या और उलझ जाती है; और

(ग) शिक्षित लोग आम तौर पर आफिस की नौकरी के अलावा और कोई नौकरी खोजना नही चाहते ।

२३. शिक्षितों में बेरोजगारी कम करने के कार्यक्रम बनाने के लिए दिसम्बर १९५५ में एक अध्ययन मण्डल स्थापित किया गया था, जिसने अपना प्रतिवेदन हाल ही मे दिया है । इसने अनुमान लगाया है कि अगले ५ वर्षों मे श्रमिक समाज मे १४.५ लाख शिक्षित जन शामिल हो जाएगे । इस मण्डल ने मैट्रिक या उसके बराबर कक्षा तक पढ़े हुए लोगो तक को शिक्षित वर्ग में रखा है । राष्ट्रीय सर्वेक्षण निदेशालय की शहरी बेरोजगारी सम्बन्धी प्रारम्भिक जांच की रिपोर्ट के आधार पर इस मण्डल ने शिक्षित बेरोजगारों की संख्या ५.५ लाख कूती है । इस अध्ययन मण्डल के अनुमानो की पुष्टि कुछ विश्वविद्यालयों की उन रिपोर्टों से हो जाती है जो उन्होने अपने स्वाधीन अध्ययन के बारें मे मण्डल की रिपोर्ट के बाद प्रकाशित की है । यदि पढ़े-लिखे लोगों में बेरोजगारी दूर करनी है तो उनके लिए कोई २० लाख नौकरियों की व्यवस्था करना अगले ५ वर्षो की समस्या है । इस को दृष्टि मे रखकर, अध्ययन मण्डल ने अनुमान लगाया है कि केन्द्रीय और राज्य सरकारों के दूसरे पंचवर्षीय योजनाकार्यो से लगभग १० लाख नौकरिया निकल सकती है । अगले ५ वर्षो मे जो लोग अवकाश ग्रहण करेंगे, उनका स्थान भरने से २.४ लाख शिक्षित व्यक्तियों को रोजगार मिल जाएगा । इसके अतिरिक्त निजी उद्योग क्षेत्र कोई २ लाख को खपा लेगा । इसका अर्थ यह हुआ कि समस्या का रूप दूसरी योजना की अवधि में कुछ बहुत न बदलेगा । अध्ययन मण्डल ने इस समस्या के प्रादेशिक पक्ष पर भी जोर दिया है और सुझाव दिया है कि तिरुवाकुर-कोचीन और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यो में इस समस्या को बहुत ध्यान से जाचते रहने की जरूरत है ।

२४. इस अध्ययन मंडल के अनुसार, शिक्षितो मे बेरोजगारी के सवाल पर सिर्फ संख्या की दृष्टि से विचार करना काफी नही है । गैर-सीखे या अशिक्षित वर्गो के लिए तो कहा जा सकता है कि इतनी संख्या मे नौकरियों की जरूरत है, पर शिक्षित बेकारों के बारे मे यह भी बताना जरूरी हो जाता है कि किस-किस विद्या के जानकारों के लिए रोजगार की व्यवस्था करनी है । इस समस्या के प्रादेशिक और व्यावसायिक पक्षों पर अलग से विचार करना होगा । काफी ऊंचे वर्गों को छोड़कर शिक्षित लोगों का एक प्रदेश से दूसरे में कम जाना—उनके पूरा-पूरा इस्तेमाल होने में बाधक है । ऐसी मिसाले मौजूद है कि काम दिलाने के कुछ दफ्तरों मे कुछ प्रकार के शिक्षित और प्रशिक्षित उम्मीदवारों की भरमार रही है और कुछ मे इन्ही प्रकारों का अभाव रहा है । ऐसे मामलो मे मांग और पूर्ति का सामंजस्य, आवश्यक प्रोत्साहन और अवसर देने से ही काफी हद तक हो जाएगा । जहां तक व्यावसायिक पहलू का सवाल है, काफी पहले से यह योजना करने की जरूरत होगी कि कितने व्यक्तियों की जरूरत पड़ेगी और भविष्य मे ऐसे व्यक्ति जुटाने का क्या प्रबन्ध होगा ।

२५. इस समस्या के विस्तार और स्वभाव को देखते हुए अध्ययन मण्डल ने कुछ ऐसे क्षेत्रों के नाम सुझाए है जिनमें शिक्षितों को रोजगार के अवसर मिल सकते है । इस मण्डल ने योजनाएं मुख्यत: इस आधार पर चुनी है कि वे या तो उत्पादन सम्बन्धों में सुधार की दृष्टि से बहुत जरूरी है या और सामान्य आर्थिक विकास के लिए बहुत अधिक महत्व की है । पहली श्रेणी की योजनाओं में मण्डल ने उत्पादन और वितरण के क्षेत्र में सहकारिता संगठनों को मजबूत बनाने की योजनाएं भी शामिल की है । भविष्य मे शीघ्र ही जो समाज व्यवस्था हम स्थापित करना चाहते है, उसके सन्दर्भ में इन योजनाओ का महत्व स्पष्ट ही है । संगठनात्मक,

प्रशासनिक और निरीक्षणात्मक प्रशिक्षण आदि का विस्तार करने की काफी गुजाइश दिखाई देती है। सुझाव दिया गया है कि छोटे उद्योगों में माल का उत्पादन और विक्रय सहकारी सस्थाएं करे। ग्रामोद्योगो मे शिक्षितों को वास्तविक उत्पादन मे खपा लेने की गुजाइश कम है। खास तौर से इसलिए कि इस क्षेत्र मे जो कारीगर काम कर रहे है वे खुद ही बेरोजगार या अर्ध-रोजगार पर है। भारी उद्योगों का जहा तक सवाल है, उनमे एक प्रकार के टेकनीकल जानकारो की जरूरत होगी। इन दोनों के बीच मे छोटे उद्योगों का एक विशाल क्षेत्र है और अध्ययन मण्डल इसे शिक्षितों को रोजगार दिलाने के लिए उपयुक्त समझता है। उसने इस क्षेत्र के उद्योगो का वर्गीकरण इस प्रकार किया है :

(१) निर्माता उद्योग, जैसे औजार, खेलकूद का सामान, फर्नीचर आदि बनाना।

(२) सहायक उद्योग, जैसे फाउंड्रियां, भट्ठियां, मोटर की दूकान, मशीन के पुर्जे, बिजली की कलई और गैल्वनाईजिंग की दूकाने आदि।

(३) मरम्मत उद्योग, जैसे मोटरों, बाइसिकलो और अन्य मशीनों की मरम्मत आदि।

२६. शिक्षितों को काम से लगाने की गुजाइश कुछ और योजनाओं मे भी है और माल परिवहन सहकारिता योजनाएं भी इसमे शामिल है। इस क्षेत्र मे कार्यक्रम यह बनाया गया है कि १,२०० अन्तर्नगर चालन इकाइया स्थापित की जाए, जिनमे हर नगर में औसतन ५ गाड़ियां हो और इनके अलावा २४० नगरान्तरीय सहकारिता संस्थाए और खोली जाए, जिनमे औसतन २५-२५ गाडियां हों। मण्डल का एक प्रस्ताव यह भी है कि नई दृष्टि देने के लिए विशेष शिविर आयोजित किए जाएं ताकि शिक्षितों के मन से हाथ का काम करने का संकोच निकल जाए और उनमे आत्मविश्वास आ सके। इन शिविरों से यह भी पता चल सकेगा कि अमुक युवक कौन-सा धधा अच्छी तरह कर सकता है। काम देने वाले से सम्पर्क रहे तो वे लोग इन्ही शिविरों से उपयुक्त शिक्षितो को चुनकर ले भी जा सकते हैं।

२७ इस मण्डल की प्रस्तावित योजनाओं मे कुल १३० करोड़ रुपए का खर्च होगा और आशा है इनसे कोई २·३५ लाख जनो को अतिरिक्त रोजगार मिलेगा। कुल खर्च, वापसी, शुद्ध खर्च और रोजगार सामर्थ्य का ब्योरा इस प्रकार है :

तालिका ३

(रकमें करोड़ रुपयों मे)

योजनाएं	अनुमानित कुल खर्च	वापसी	शुद्ध खर्च	रोजगार शक्ति (व्यक्ति संख्या)
छोटे पैमाने के उद्योग	८४·०	५८·३	२५ ७	१,५०,०००
माल परिवहन सहकारिता	२०·०	१८·०	२·०	३२,०००
राज्य सरकारों की योजनाएं	१९·०	९·५	९·५	५३,०००
काम और नवजीवन शिविर	७·१	शून्य	७·१	शून्य
योग	१३०·१	८५·८	४४·३	२,३५,०००

शिक्षितों को नौकरी के लिए अनिश्चित समय तक इन्तजार करने की तकलीफ से बचाने के लिए मण्डल ने जो प्रस्ताव किये है वे ये है : (१) सरकारी नौकरियों मे भरती करने की वर्तमान पद्धति में सुधार, (२) होस्टलों की व्यवस्था, और (३) विश्वविद्यालयो के लिए काम दिलाने के कार्यालय ।

२८. अध्ययन मण्डल की सिफारिशों पर प्रयोग के तौर पर काम करके देखना चाहिए कि शिक्षितो की प्रतिक्रिया क्या होती है । इसके लिए उपयुक्त प्रबन्ध कर दिया गया है और मण्डल से कहा गया है कि वह इन प्रायोगिक योजनाओ का ब्योरा तैयार करे । यदि शिक्षितो की तरफ से यथेष्ट प्रोत्साहन मिला तो इस क्षेत्र में और बड़े प्रयोगों के लिए प्रबन्ध कर दिया जाएगा ।

२९. अन्त में, कहना होगा कि शिक्षितों की बेरोजगारी एक ऐसी समस्या है जो लम्बी अवधि मे ही दूर हो सकती है; उसके लिए दूर तक असर डालने वाले उपाय करने होंगे । छोटे-मोटे तात्कालिक उपायो से समस्या का स्थायी हल कैसे हो सकता है ? अनुभव बताता है कि शिक्षितों को उपयोगी ढंग से काम में लगाने का रोजगार न मिलने की एक वजह यह भी रही है कि हमारी शिक्षा पद्धति का हमारे आर्थिक विकास की जरूरतो से यथेष्ट सम्बन्ध नहीं रहा है । इससे यह भी किसी हद तक स्पष्ट हो जाता है कि क्यो एक ओर शिक्षितों में इतनी बेरोजगारी रहती है तो दूसरी ओर कभी-कभी कुछ विशेष प्रकार के शिक्षित कर्मियों की कमी पड जाया करती है । इसलिए शिक्षा और प्रशिक्षण आदि का विकास अर्थ-व्यवस्था की भावी आवश्यकताओ के अनुसार होना चाहिए और ऐसी शिक्षा-व्यवस्थाएं कम करनी चाहिए जिनसे शिक्षितो मे बेरोजगारो की संख्या मे और बढती हो । बाकायदा पता लगाना चाहिए कि विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षित व्यक्तियो और शिक्षितो के लिए क्या-क्या रास्ते हैं और यह जानकारी शिक्षा और व्यवसाय सम्बन्धी परामर्श के रूप मे या विश्वविद्यालय के छात्रों के रोजगार कार्यालयों की मार्फत अच्छी तरह सब को सुलभ कर देनी चाहिए । ग्राम क्षेत्रो मे सहकारिता के और छोटे या मध्यम पैमाने के उद्योगों के विकास के साथ, शिक्षितों को उपयोगी ढंग से काम पर लगाने की सम्भावना अधिकाधिक बढती जाएगी । शिक्षा व्यवस्था मे परिवर्तन करते समय विकास सम्बन्धी इस प्रकार की सब बातो को दृष्टि मे रखना होगा जो दूसरी पंचवर्षीय योजना मे परिकल्पित हैं—ताकि, शिक्षा व्यवस्था में वे तत्व धीरे-धीरे पुष्ट हो जाएं, जिनसे रोजगार और काम मिलना बढता और आसान होता है ।

३०. उपरोक्त विश्लेषण से मालूम होता है कि दूसरी पचवर्षीय योजना मे परिकल्पित प्रयत्नो से श्रमिक वर्ग मे नवागन्तुको के लिए रोजगार के और अवसर आएंगे । खेती मे लगे लोगो की संख्या मे थोडी वृद्धि होगी, परन्तु खेती, सिचाई और ग्रामीण सामुदायिक विकास की अनेक योजनाओं से अर्ध-रोजगारी भी घटेगी तथा संख्या मे वृद्धि होने पर भी आशा है प्रति व्यक्ति आय कोई १७ प्रतिशत बढ़ जाएगी । ग्रामोद्योगो और छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए इस अध्याय में जो अनुमान दिए हुए है, उनमे केवल पूरे वक्त के रोजगारो का ही विचार किया गया है । इसलिए, कम रोजगार कारीगरों के लिए और काम का भी थोड़ा-बहुत प्रबन्ध हो जाएगा । शिक्षित बेरोजगारो को योजना की आम स्कीमों से भी फायदा होगा और उन स्कीमों से तो होगा ही जो उन्हे विभिन्न व्यवसायों की शिक्षा देने के लिए खास तौर पर लागू की जाएगी ।

इन निष्कर्षो से मालूम होता है कि दूसरी पचवर्षीय योजना में प्राप्त साधनो के उपयोग का संगठित प्रयत्न करने और उनका पूरा-पूरा लाभ प्राप्त करने पर भी बेरोजगारी और

अर्ध-रोजगारी की दोमुही समस्या को सुलझाने की दिशा मे उतना असर न होगा जितना होना चाहिए। साथ ही, यह भी एक तथ्य है कि पंचवर्षीय योजना में जो पूजी लगाई जा सकती है उसकी भी सीमा है। भारी उद्योगो पर जोर दिया जा रहा है, इस वजह से पूजी लगाने के क्रम मे थोड़ा ही परिवर्तन किया जा सकता है—प्राथमिकता मे और अधिक हेर-फेर करने से रोजगार की शक्ल में बहुत अधिक लाभ सम्भव नही दीखता। एक बात यह भी है कि जितना कुछ इस समय ज्ञात है, उसके आधार पर इसी समय यह जान सकना सम्भव नही कि योजना मे परिकल्पित भारी उद्योगो मे पूजी लगाने से रोजगार की स्थिति पर किस-किस प्रकार से असर पड़ेगा। इस सम्बन्ध मे इस बात पर जोर देना जरूरी जान पडता है कि योजना को इस तरह कार्यरूप देना चाहिए कि उत्पादन और रोजगार की सुविधा में अधिकतम वृद्धि हो। ऐसे कार्यो का, जो एक-दूसरे के पूरक हो, उचित प्रकार से समन्वय करके तथा योजनाजन्य पानी, बिजली आदि साधनो का सुनियोजित उपयोग करके यह सम्भव हो सकता है—इसमे यह भी देखना होगा कि जिनके लाभ के लिए नई संस्थाएं या नए अभिकरण स्थापित हो रहे हैं उन्हे उनका पूरा-पूरा लाभ मिले। जैसे-जैसे योजना का कार्य होता चले, उससे प्राप्त होने वाले अतिरिक्त रोजगार का मूल्याकन भी निरन्तर होता रहना चाहिए ताकि रोजगार के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए उचित उपाय किए जा सकें।

अध्याय ६

प्रशासनिक कर्तव्य और संगठन

दूसरी योजना के काम

इस समय राष्ट्रीय विकास की समस्याओं के प्रति देश में जो सामान्य सामाजिक-आर्थिक दृष्टिकोण प्रकट हो रहा है, उसमे समस्याओ के विश्लेषण और अनेक मूल नीतिगत प्रश्नों के विषय में बहुत काफी सहमति है। गौर से देखने पर मालूम होता है कि जो भेद है वे बहुधा दृष्टि-क्षेत्र या ब्योरे के मामले में है। नीति सम्बन्धी मामलों के बारे में यथेष्ट सहमति होते हुए भी इस सम्बन्ध मे कुछ संशय प्रकट किया जाता है कि प्रशासनिक प्रयत्न अपनी सीमाओं के अन्दर उन उत्तरदायित्वों को सभाल सकेगा या नही जो केन्द्र और राज्य सरकारों ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत उठाए है। सम्भव है कि जैसे-जैसे योजना आगे चले, नीति और दृष्टिकोण के क्षेत्र मे नही, प्रशासन और संगठन के क्षेत्र में अधिक कठिनाइया आती चले। कर वसूली व्यय, और छोटी बचतों द्वारा धनराशि जमा करना आदि सरकार के कार्यांग के ही अंग हैं। इसलिए वित्त को भी प्रशासन की सामान्य समस्या के अन्तर्गत माना जा सकता है।

२ विकास मे वृद्धि के साथ "प्रशासन" शब्द का अर्थ भी बराबर विकसित होता जाता है। उसमे कर्मियों की वृद्धि, प्रशिक्षण, प्रशासन व्यवस्था का संचालन, जनता के सहयोग और सहकार्य का आवेदन, जनता मे सूचना और जानकारी का प्रचार और अन्त मे, प्रत्येक स्तर पर जन सहयोग एव प्रौद्योगिक, आर्थिक व आकिक जानकारी के आधार पर एक योजना पद्धति की रचना, यह सब कुछ शामिल हो जाता है। उत्तरोत्तर क्रम से नए-नए क्षेत्रो मे प्रशासनिक कार्य आरम्भ किए जाते है—विशेषतः आर्थिक, औद्योगिक और वाणिज्य क्षेत्रों मे। यदि केन्द्र और राज्यों में प्रशासन व्यवस्था अपना काम दक्षता, निष्ठा और फुर्ती से करे और जनहित न भूले, तो दूसरी पचवर्षीय योजना की प्रगति निश्चित है। इस प्रकार दूसरी पंचवर्षीय योजना वास्तव में प्रशासनिक कार्यो की एक सुनिश्चित शृंखला का रूप धारण कर लेती है।

३. पहली योजना के मुकाबले मे कार्य अधिक व्यापक है—और कही अधिक जटिल भी है। कुछ कार्य तो पूर्वपरिचित क्षेत्रों मे ही होगे और पिछले कामो की परम्परा मे होगे, तथापि उनका विस्तार पहले से बड़ा होगा। इसके अतिरिक्त बहुत कुछ ऐसा होगा जो वस्तुतः नया है और जिसके लिए आम तौर पर काफी लम्बी तैयारी की जरूरत होती है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के मुख्य प्रशासनिक कार्य मोटे तौर पर शायद इस प्रकार बाटे जा सकते हैं:

(१) प्रशासन मे निष्ठा और ईमानदारी पैदा करना।

(२) प्रशासनिक और प्रौद्योगिक संवर्ग स्थापित करना और रचनात्मक सेवा की प्रेरणा एवं अवसर प्रदान करना।

(३) नए कार्यो के सन्दर्भ में कर्मियों की आवश्यकता का निरन्तर अनुमान करते रहना, सब क्षेत्रो मे बड़े पैमाने पर प्रशिक्षण के कार्यक्रम शुरू करना और प्राप्य प्रशिक्षण

साधनों को सगठित करना—इनमे, सरकारी गैर-सरकारी संस्थाओं, औद्योगिक एवं अन्य प्रतिष्ठानो, अप्रेन्टिसों और नौकरी मे रहते हुए काम सिखाने के केन्द्रों को भी शामिल किया गया है ।

(४) काम के ऐसे तरीके निकालना जिससे जल्दी, अच्छी तरह और कम खर्च मे काम हो जाए; निरन्तर निरीक्षण का प्रबन्ध करना और नियत अन्तर पर तरीको और नतीजों के निरपेक्ष मूल्याकन का प्रबन्ध करना ।

(५) खेती, राष्ट्रीय विस्तार सेवा, सामुदायिक कार्य, और ग्रामोद्योग अथवा छोटे पैमाने के उद्योग जैसे क्षेत्रो मे उत्पादकों को प्रौद्योगिक, आर्थिक अथवा अन्य प्रकार की सहायता पहुंचाना ।

(६) औद्योगिक, वाणिज्यिक कार्यो में, परिवहन सेवाओ मे और नदी घाटी योजनाओं जैसे कार्यो मे सरकारी उद्योग के कुशल प्रबन्ध का सगठन करना ।

(७) खेती और समाज सेवा जैसे क्षेत्रो मे स्थानिक जन सहयोग उपलब्ध करना ताकि सार्वजनिक पैसे का पूरा-पूरा लाभ उठाया जा सके ।

(८) सचालकीय और प्रौद्योगिक कर्मियो की सहायता द्वारा सहकार, वित्त, हाट-व्यवस्था आदि संस्थान स्थापित कर सहकारिता क्षेत्र का विकास करना ।

प्रशासनिक कार्यो का यह विवरण किसी तरह सम्पूर्ण नहीं माना जा सकता । इनमे से प्रत्येक कार्य अपने मे विशिष्ट है, फिर भी इन सबको दूसरी योजना के सन्दर्भ में अन्तरावलम्बित मानना ठीक होगा । इन कार्यों को उठाते समय यह जरूरी है कि नीति और कार्यक्रम की दृष्टि से अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में उद्देश्यों और लक्ष्यो का यथेष्ट समन्वय हो ।

प्रशासन में ईमानदारी

४. जैसा कि पहली पचवर्षीय योजना मे उल्लेख किया जा चुका है, भ्रष्टाचार के ऐसे कुपरिणाम होते है कि उनसे छूटना मुश्किल हो जाता है और जनता का प्रशासन मे विश्वास क्षीण हो जाता है। इस समय प्रशासन के कई क्षेत्रों मे अधिकारियो मे ईमानदारी की कमी की शिकायत की जाती है । बराबर सचेत रहकर तथा उपाय सोचते रहकर प्रशासन और समाज दोनो मे से भ्रष्टाचार को निर्मूल कर देने की आवश्यकता है । कुछ वर्षो से केन्द्र और राज्यों मे कुछ निश्चित उपाय किए भी जा रहे है । कई राज्यों ने भ्रष्टाचार विरोधी विभाग खोले है । विभागीय पड़ताल मे देर न लगे ऐसा प्रबन्ध किया गया है । सरकारी नौकरो को नियत समय के अन्तर पर अपनी चल और अचल सम्पत्ति का ब्योरा देना पड़ता है । जनता के आवेदन पत्रों का हिसाब पहले से कही अधिक देना होता है । जिन अधिकारियो की नीयत सन्दिग्ध है, उन्हे वक्त से पहले ही अवकाश देकर विशेष दायित्व के पदों से दूर रखा जा रहा है। रेल मंत्रालय की एक जांच समिति ने रेलवे मे भ्रष्टाचार की समस्या की जाच करके कई दुर्गुणो के लिए कई उपाय बताए है । रेल मंत्रालय बडे-बडे मामलों और गजटशुदा अफसरों के विरुद्ध मामलों के निपटारों के लिए एक भ्रष्टाचार विरोध संगठन नियुक्त करना चाहता है, और इस प्रकार की समितिया हर रेल व्यवस्था में खोली जाएंगी ।

५. पहली पंचवर्षीय योजना में प्रशासन के अन्तर्गत ही निरीक्षण और सतर्कता की आवश्यकता पर जोर दिया गया था और कहा गया था कि भ्रष्टाचार पर असली हमला प्रशासन के हर क्षेत्र मे कार्यकुशलता बढाने से ही हो सकता है। विशेष रूप से यह कहा गया था कि विभागाध्यक्ष पता लगाए कि प्रचलित नीतियो और पद्धतियो के कारण भ्रष्टाचार के मौके कहा-कहां निकलते है, ताकि वे अपने-अपने विभाग मे ऐसी परिस्थितियो का उत्पन्न होना रोक सकें जिनमे भ्रष्टाचार आसानी से हो सकता है । कई जाच समितियो की राय है कि भ्रष्टाचार का एक साधन मामलो या अर्जियों के निपटारे मे देर होना भी है। देर होने का कारण यह हो सकता है कि एक व्यक्ति पर कार्य का बोझ अत्यधिक हो, अथवा सत्ता केन्द्रित हो, कर्मचारियो की कमी हो, कर्मी अयोग्य हो, स्पष्ट नीति या निदेश न हों या ऐसी ही और कोई बात हो। प्रत्येक संगठन मे पता लगाना चाहिए कि देर क्यो होती है और फिर आवश्यक उपाय करने चाहिए। यह भी बताया गया था कि सरकारी कर्मचारियो की ढील की वजह बहुधा यह होती है कि ईमानदारी से किया गया अच्छा काम पूछा नही जाता और काम न जानने वाले या बेईमानी करने वालों को पूरी सजा नही मिलती। अन्त मे, यह भी जरूरी है कि जनता को भ्रष्टाचार दूर करने का महत्व समझाया जाए और सरकारी प्रशासन के अन्दर ईमानदारी बनाए रखने मे उसका सहयोग प्राप्त किया जाए। इसी खयाल से गृह मंत्रालय मे एक प्रशासनिक चौकसी विभाग खोला गया है। यह विभाग एक ओर विशेष पुलिस प्रतिष्ठान से और दूसरी ओर विशेष रूप से नियुक्त चौकसी अधिकारियो से सम्पर्क रखता है जो सीधे विभिन्न मंत्रालयों और विभागो के सचिवो और विभागाध्यक्षो के नीचे कार्य करते है। प्रशासनिक चौकसी विभाग और उससे सम्बद्ध इकाइयो का उद्देश्य भ्रष्टाचार देखते ही तुरन्त कार्रवाई करना भी है और भ्रष्टाचार के कारणों को दूर करना भी है। इस प्रकार इस विभाग के निदेशक के अधीन विभिन्न मत्रालयो और विभागो मे नियुक्त चौकसी अधिकारी वर्तमान संगठनों और पद्धतियो की जाच करके पता लगाते है कि किन कारणो से भ्रष्टाचार या कुरीतिया बढती है, उन्हे कैसे दूर या कम किया जाए, भ्रष्टाचार के प्रमाण पाने के लिए अचानक निरीक्षण या दौरा करते है और जहा यथेष्ट प्रमाण होता है वहां तुरन्त कार्रवाई करते है। चौकसी अधिकारी बाकायदा चलते हैं—पहले उन क्षेत्रो को लेते हैं जिनमें भ्रष्टाचार की सबसे अधिक गुजाइश होती है। उनसे कहा गया है कि जिन मामलो से जनता का सम्बन्ध है, उनके लिए प्रक्रिया सम्बन्धी सहज स्वीकार्य नियम सर्व प्रचारित कर दिए जाएं। गृह मंत्रालय का चौकसी विभाग और उससे सम्बद्ध इकाइया कोई साल भर से काम कर रहे है। अब तक जो अनुभव हुआ है उससे इतना कहा जा सकता है कि ऐसी ही व्यवस्था राज्यो मे और बड़े-बड़े सरकारी उद्योगों मे भी कर दी जाए तो हितकर होगा।

६. रेलवे भ्रष्टाचार जाच समिति ने भ्रष्टाचार निवारण की सफलता के लिए कुछ अनिवार्य आवश्यकताओं की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। ऐसा हो सकता है कि कभी कोई अधिकारी जिस पर भ्रष्टाचार का सन्देह हो बचा लिया जाए। व्यक्तियों को भ्रष्टाचार का भण्डा-फोड़ करने से दंडित किए जाने का डर होता है और यह डर हमेशा झूठ भी नही होता। बहुत-से छोटे-छोटे मामलों मे भी लोग व्यक्तिगत प्रभाव से बच नही पाते और इससे यह भी होता है कि निर्बल पक्ष की हानि होती है। किसी खास रियायत की अपेक्षा न होने पर भी लोग अक्सर महसूस करते है कि प्रभाव के जरिए काम निकल सकते है। इस कुरीति के बने रहने से लोकतंत्रीय आयोजन की बड़ी क्षति हो सकती है। और इसे दूर करने मे जागरूक जनता बहुत सहायता दे सकती है। सही प्रकार की जन चेतना विकसित करने के लिए आवश्यक है कि भ्रष्टाचारी व्यक्तियो की

करतूत का पर्दाफाश किया जाए, जनता के अधिकारो और कर्तव्यो का प्रचार किया जाए और ऐसे दृष्टांत सब जगह प्रचारित किए जाएं जिनसे जनता को मालूम होता हो कि भ्रष्ट व्यक्ति को दंड दिया गया है ।

प्रशासनिक और प्रौद्योगिक संवर्ग

७ आवश्यक कर्मियो के बिना कोई भी बड़ा कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता । प्रत्येक क्षेत्र मे अधिकाश कार्य ऐसे है कि उनका प्रभाव दूर तक पड़ता है और प्रत्येक महत्वपूर्ण समस्या पर कई वर्षो तक बराबर ब्योरेवार ध्यान देते रहने की आवश्यकता है । कुछ वर्षों से यह प्रवृत्ति दिखाई देने लगी है कि नए कर्मचारी अस्थायी तौर पर नियुक्त कर लिये जाते है और उन्हे बरसों अस्थायी रखा जाता है । उनमे न सुरक्षा की भावना रहती है न अपनी सफलता का सन्तोष ही उन्हे मिलता है । इससे जनशक्ति का अपव्यय होता है और अन्ततः यह तरीका ज्यादा महंगा भी पडता है । जैसा कि 'दूसरी योजना मे कर्मचारियों की आवश्यकता' शीर्षक आठवें अध्याय से प्रकट होगा, देश के साधनों के सुनियोजित विकास के साथ-साथ लगभग प्रत्येक क्षेत्र में कर्मियो की आवश्यकता बहुत बढ जाएगी । प्रत्येक विभाग के लिए सबसे ठीक तरीका यही है कि वह अपने यहा संवर्ग स्थापित करे और दूसरी योजना के कार्यक्रमों के लिए वर्तमान संवर्गों मे स्थायी तौर पर भर्तिया करे । भारतीय सीमान्त प्रशासन सेवा द्वारा एवं राष्ट्रीय सेवा विस्तार अथवा सामुदायिक विकास कार्यक्रमो द्वारा पहली पंचवर्षीय योजना के अधीन ऐसा किया जा चुका है और इसमें सफलता भी मिली है ।

८. भारतीय प्रशासन सेवा पर, जो केन्द्र ओर राज्य दोनो के लिए है, अब उत्तरदायित्व बढता जा रहा है । इस संवर्ग के लिए आवश्यक कर्मचारियो की संख्या का हाल मे ही पाच आगामी वर्षो को दृष्टि मे रखकर पुनः निर्धारण किया गया है और अनुभवी व्यक्तियो मे से ३८६ अतिरिक्त नियुक्तिया करने का प्रबन्ध भी किया जा चुका है । इनके अलावा अगले ५ वर्षो मे प्रतियोगिता द्वारा निम्नतर श्रेणी मे २२५ व्यक्ति और लिये जाएगे ।

९. दूसरी पंचवर्षीय योजना को कार्य रूप देने के लिए राज्य सरकारे भी विभिन्न स्तरों पर प्रशासकीय कर्मचारियो की आवश्यकता का अनुमान करती रही है । जैसा पहली योजना मे कहा गया था, जिलों मे ब्योरेवार प्रशासन का अधिकाश दायित्व राज्य प्रशासन सेवा के कर्मचारियो पर ही रहता है और यह बहुत कुछ उन्ही का जिम्मा हो जाता है कि प्रशासन की विभिन्न शाखाओ मे समन्वय करे तथा विकास कार्यो मे जनता का सहयोग प्राप्त करे । यह निश्चय करने के लिए कि ये सेवाए राज्यो मे अपना दायित्व पूरा कर सके, यह जरूरी है कि सवर्गो की शक्ति यथेष्ट हो । अलग-अलग अधिकारियों का प्रशिक्षण भी उतना ही जरूरी समझा जाए जितना अखिल भारतीय सेवा मे आने वालो का । और राज्य सेवाओ के सर्वोत्तम व्यक्तियो को उदारतापूर्वक पदवृद्धि के अवसर दिए जाए । राज्य प्रशासन सेवाओ पर दूसरे योजना काल मे बहुत अधिक दायित्व बढ जाएगा । हाल की समीक्षा के बाद निम्नाकित प्रस्ताव राज्य सरकारों के विचारार्थ प्रस्तुत किये जा रहे है .

(१) राज्य सवर्गो की अभिवृद्धि करने से पहले काफी लम्बे समय, कोई १० वर्ष, की जरूरते सोच लेनी चाहिए ।

(२) आवश्यकताओं का अनुमान करते समय राज्य सरकारो के उस दायित्व मे सभावित विस्तार का यथेष्ट ध्यान रखना चाहिए जो वे अपन कार्यक्रमों और

केन्द्रीय सरकार के कार्यक्रमो के सम्बन्ध में उठाएगी । प्रत्येक सवर्ग मे काफी लोग सुरक्षित रखने चाहिए—प्रशिक्षण मे सहायता देने के लिए भी लोग रखे जाए ।

(३) राज्य संवर्गो मे वृद्धि यथासम्भव स्थायी आधार पर की जाए ।

(४) जैसा कि आगे चलकर स्पष्ट कर दिया गया है, जिला विकास कार्यक्रमों से कलक्टरो पर काम बढ़ रहा है । इसलिए उन्हे अपना कर्तव्य भली-भाति पालन करने के लिए यथेष्ट सहायता दी जानी चाहिए ।

(५) प्रशासकीय कर्मचारियों के प्रशिक्षण के कार्यक्रम कई राज्यों में सम्पुष्ट किए जा रहे है और अब उनमे ग्राम विकास को भी शामिल कर लिया गया है। अनुभवी और योग्य अधिकारी चुनकर उन्हे ऐसी जगहों पर नियुक्त करना चाहिए जहां से वे नए कर्मचारियों के शुरू-शुरू के वर्षों में उनके काम का बारीकी से निरीक्षण कर सकें और उनके परीक्षण मे व्यक्तिगत तौर पर दिलचस्पी ले सके । प्रशिक्षण के तरीको की ओर भी ज्यादा ध्यान देना ठीक होगा—इस विषय में राज्य सरकारों को एक-दूसरे से अनुभव और ज्ञान का आदान-प्रदान करते रहना चाहिए ।

१० पहली पचवर्षीय योजना की अवधि मे जो अनुभव प्राप्त हुआ, उससे यह तथ्य प्रमाणित हुआ है कि अधिक विकसित राज्यो मे भी विकास कार्यक्रम का सामान्य विस्तार करने से प्राप्य टेकनीकल व्यक्ति-साधन पर जोर पडता है और खास तौर से ऊंचे स्तरो पर । सब प्रकार के विकास मे ऐसा ही होता है और कुछ कम-विकसित राज्यो मे तो इसके कारण दशा शोचनीय भी हो गई है। उदाहरण के लिए, कुछ राज्यो मे महत्वपूर्ण विभागों मे ऊंचे अधिकारियों या निदेशकों के बिना काम चलाना पड़ रहा है । 'ग' भाग के कुछ राज्यो में नीचे स्तर पर भी टेकनीकल व्यक्तियों की कमी रही है और वहा खर्च मे कमी पड़ जाने और अन्तत पहली पचवर्षीय योजना के लक्ष्य न पा सकने मे जितना हाथ इस बात का रहा है उतना किसी और का नही । हो सकता है कि कुछ राज्यों मे टेकनीकल व्यक्ति उपलब्ध करने की सुविधा हो, फिर भी योजना की एक महत्वपूर्ण सीख यह रही है कि औसत राज्य विकास की बढती हुई जरूरतों के अनुसार ऊची योग्यता के व्यक्ति जुटाने, समुचित प्रशिक्षण का प्रबन्ध करने और हमेशा कुछ आदमी अलग मे तैयार रखने मे समर्थ नही होता । इसलिए यदि पहली योजना की परिकल्पना के अनुसार अखिल भारतीय सेवाओ, सम्मिलित विकास सवर्ग या केन्द्र और राज्यो मे अन्य प्रकार के सहकारिता प्रबन्ध किए जाएं और इसी सिलसिले मे राज्य समूहो की आवश्यकता पूरी करने के लिए प्रादेशिक आधार पर संवर्ग बनाए जाएं और अन्य सहकारिता प्रबन्ध किए जाए तो उससे लाभ होगा । सिफारिश की जाती है कि इस विषय मे विस्तार से प्रस्ताव तैयार किए जाएं ।

कम खर्च और कार्यकुशलता

११. दूसरी योजना का विशाल आकार देश पर काफी बडा भार डालेगा और जनता के सब वर्गो पर काफी प्रयत्न करने का दायित्व होगा । आम तौर से यदि जनता को विश्वास हो कि सरकार जो साधन जुटाएगी उन्हे मितव्ययिता और कुशलता से खर्च करेगी और उसकी बरबादी नही होगी तो वह और भी अधिक दायित्व उठाने को तैयार हो सकती है । यह बात माननी पडेगी कि दूसरी योजना मे पहली योजना के मुकाबले हर विभाग या अधिकरण द्वारा अधिक

व्यय होने के कारण खर्च मे पहले से ज्यादा सावधानी बरतनी होगी। खर्च में किफायत के उपाय बरतने के लिए केन्द्र और कुछ राज्यों मे विशेष दल काम करते रहे है। जैसे-जैसे विकास कार्य बढ रहा है, अधिकाधिक धन ऐसे कार्यों मे खर्च हो रहा है जिनमे निर्माण या दुष्प्राप्य माल और सामान के आयात की जरूरत है। इसलिए हर विभाग को सगठन, पद्धति और कार्यक्रम इस प्रकार बनाने चाहिए कि जनता के पैसे का दुरुपयोग न होने पाए और उससे अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। प्रत्येक सगठन मे आन्तरिक कार्यकुशलता की जाच-पडताल करने और व्यय पर नियन्त्रण रखने की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। योजना कार्यो मे किफायत के खास इरादे से राष्ट्रीय विकास परिषद् ने हाल ही मे एक योजना कार्य समिति नियुक्त की है। इसका विशेष कर्तव्य यह होगा कि—

(१) केन्द्र और राज्यो मे विशेष रूप से चुने हुए लोगों द्वारा महत्वपूर्ण योजना कार्यो की पडताल कराए, मौके पर जाकर भी देखें;

(२) किफायत करने, फिजूलखर्ची रोकने और कार्यो का कुशलतापूर्वक सम्पादन करने के लिए संगठन के रूप, पद्धतिया, प्रतिमान और तरीके खोज निकाले,

(३) विभिन्न योजना कार्यो और उनके सम्पादन के अभिकरणों मे आन्तरिक कार्य-कुशलता की निरन्तर पडताल की समुचित व्यवस्था निर्धारित करने मे मदद दे,

(४) उसके पास आए हुए प्रतिवेदनो मे जो सुझाव हों उनको कार्य रूप दे और अध्ययन और शोध के परिणाम आम तौर से सबको प्राप्य हों, इसका प्रबन्ध करे, और

(५) दूसरी पंचवर्षीय योजना में किफायतशारी और कार्यकुशलता के लिए राष्ट्रीय विकास परिषद् और जो काम बताए वह करे।

योजनाधीन कार्य पडताल के लिए ६ वर्गो में बाटे गए है . सिचाई और बिजली, सार्वजनिक निर्माण और आवास, खेती और सामुदायिक विकास, परिवहन और संचार, सार्वजनिक कारखाने और खनिज उद्योग तथा समाज सेवा। प्रत्येक विभाग के लिए समिति केन्द्रीय मत्रियो और राज्यों के मुख्य मंत्रियो की गोष्ठियो के माध्यम से कार्य करेगी। पडताल टोलियों के प्रतिवेदनो पर विचाराधीन योजना कार्यो से सम्बद्ध राज्यों के मुख्य मंत्रियो के साथ विचार-विमर्श होगा और आम तौर से पड़ताल टोलियां अपने प्रतिवेदनो के मसौदो को समिति के सामने रखने से पहले उस पर केन्द्र या राज्य के विभागो या अधिकरणों की राय जान लिया करेंगी। पड़ताल के सम्बन्ध मे आम नीति सम्बन्धी बातो पर राष्ट्रीय विकास परिषद् की स्थायी समिति मे समय-समय पर विचार हुआ करेगा।

१२ पिछले दो वर्षों से केन्द्र के मंत्रिमण्डल सचिवालय मे एक संगठन और पद्धति निदेशालय काम कर रहा है। विभिन्न मंत्रालयों ने भी विशेष संगठन और पद्धति विभाग खोले है जो उक्त निदेशालय से घनिष्ठ रूप से सहयोग करते है। इस प्रबन्ध से काम का निपटारा जल्दी होने लगा है और प्रशासनिक कार्यकुशलता मे ज्यादा दिलचस्पी ली जाने लगी है। अनेक राज्यो में भी संगठन और पद्धति विभाग खोलने का उपाय हुआ है। सिफारिश की गई है कि प्रत्येक राज्य संगठन और पद्धति विषयक विशेष विभाग खोले और उनकी मदद से आवश्यक टेकनीकल निदेशन देने के अलावा अनुभव का ऐसा भण्डार एकत्र करे जिससे सब विभाग लाभ उठा सकें। केन्द्रीय सगठन और पद्धति निदेशालय प्रशिक्षण की सुविधा देने की स्थिति में है और उसके अनुभव से राज्य भी लाभ उठा सकते है।

१३. संगठन और पद्धति की ओर ध्यान देने से अमूल्य लाभ हो सकता है, पर साथ ही साथ सब श्रेणियों के सार्वजनिक नौकरों को अपनी कार्यकुशलता बढाने के लिए सही मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण भी अपनाना होगा। सुनियोजित विकास और गरीबी दूर करके एक ऐसी सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था करना जिसमे सबको समान अवसर प्राप्त हो—इन उद्देश्यों से प्रेरित होकर कालान्तर मे आशा की जा सकती है कि सभी सरकारी नौकरों की कार्यकुशलता बढेगी। अपने कर्तव्य का योग्यतापूर्वक पालन उस व्यक्ति का स्वाभाविक गुण होना चाहिए जिसे किसी काम के लिए प्रशिक्षित किया गया हो और सरकारी नौकरी को जिसने अपना पेशा बनाया हो। प्रशासनिक व्यवस्था का सबसे अच्छा उपयोग करने के लिए कुछ पहलुओ पर खास जोर दिया जाना चाहिए। पहले तो कोशिश करके ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि सब स्तरो पर अधिकारियों को अधिकाधिक उत्तरदायित्व निबाहने का अवसर मिले और वे सचमुच उसे निबाहे। दूसरे योग्यता और नेतृत्व शक्ति वाले व्यक्तियों को उनके कार्यकाल के काफी आरम्भ मे ही चुन लिया जाए और ऐसे काम सौपे जाएं कि उनकी योग्यताएं और बढे और अधिक दायित्व वाले कार्यो का भार वे उठा सके। तीसरे, यह देखते हुए कि जो प्रशासनिक कार्य सब क्षेत्रों में किया जाना है वह कितना विशाल है, फुर्ती और मेहनत की भावना पर जोर देना चाहिए। चौथे, विकास के सन्दर्भ में कर्मचारी नीति मे कठिन नियमबद्धता की जगह परिवर्तन करना चाहिए। उदाहरण के लिए प्रशासकों मे और टेकनीकल कर्मचारियो मे जो प्रशासनिक काम करते हों, या विभिन्न श्रेणियो और सवर्गो के अधिकारियो में भेदभाव की अब जगह ही नहीं है। विभिन्न क्षेत्रो मे नए स्थानो से नए लोग लेने की जरूरत है और थोड़े या ज्यादा समय के लिए विविध अनुभवो और योग्यताओ वाले व्यक्तियो को प्रशासन मे लाने की आवश्यकता है। अन्तत सरकार के अन्दर प्रत्येक विभाग में सही मानवीय सम्बन्ध की स्थापना पर पहले से ज्यादा जोर देना होगा। उन सब क्षेत्रो की भाति जिनमे मनुष्य विभिन्न रूपो मे मिलकर एक ही उद्देश्य के लिए काम करते है, प्रशासन में भी बधुत्व की भावना, अच्छे काम की प्रशंसा से उत्पन्न आत्म-विश्वास और उन निर्णयों के स्थिर करने में योग देने का अवसर जिन्हें स्वयं कार्यरूप देना है आदि, सरकारी कर्मचारियों में उत्साह और कार्यकुशलता बढ़ाने में बहुत अधिक सहायक होंगे।

१४. वर्तमान प्रशासन प्रणाली की एक कमजोरी यह है कि उसमें प्रशासनिक नियत्रण का ढंग ठीक नही है। इस सिलसिले मे दो बाते विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पहली पचवर्षीय योजना मे बताया गया था कि ऊंचे सरकारी नौकरों का बहुत-सा समय उस काम मे लग रहा है जो पहले नीचे के स्तर पर ही हो जाता था। "सरकार का प्रत्येक विभाग नए-नए दायित्व लेता जा रहा है पर साथ ही साथ प्रत्येक विभाग मे सार्थक निर्णय लेने का अधिकार अधिकाधिक ऊंचे अधिकारियो के पास ही एकत्र होता जा रहा है।" पथ-प्रदर्शन करने का और निर्णय लेने का अधिकार ऊचे अफसरो मे ही केन्द्रित होता जाए—ऐसी प्रवृत्ति अब भी थोड़ी-बहुत है। इसको दूर करना अंशतः संगठन और पद्धति का काम है अंशतः इसमें यह बात भी देखनी है कि प्राप्य कर्मचारी साधनों का सबसे अच्छा इस्तेमाल कैसे किया जाए और लोगों को दायित्व ग्रहण करने का प्रोत्साहन कैसे दिया जाए।

१५. लगभग ऐसी ही समस्या सचिवालय के विभागों और सचिवालय के बाहर के विभागों या अधिकरणों के पारस्परिक सम्बन्ध मे उठती है। पहली पंचवर्षीय योजना मे इस बात पर जोर दिया गया था कि सम्बद्ध या अधीन कार्यालयों जैसे कार्यपालक संगठनों के प्रधानों को

यथेष्ट स्वाधीनता से काम करने दिया जाए और साथ ही साथ उन्हे यह भान भी रहे कि अपने मंत्रालयों के वे विश्वासपात्र है। जब कोई सचिवालय या मंत्रालय मामूली-मामूली बात पर नियन्त्रण रखता है तो उस विभाग मे उत्साह और स्फूर्ति कम होने लगती है। इस दिशा मे थोडा सुधार हुआ है और कार्याग विभागो को और ज्यादा दायित्व ग्रहण करने का प्रोत्साहन दिया जा रहा है, पर यह प्रोत्साहन जारी रखने की जरूरत है। पहली पंचवर्षीय योजना में यह भी सुझाव दिया गया था कि केन्द्रीय मंत्रालयो और राज्य सरकारों को उस दायित्व की, जो उन्होंने हाल के वर्षो मे ग्रहण किया है, विधिवत समीक्षा करनी चाहिए और सोचना चाहिए कि उसमे से कितना और कौन-सा काम अधीनस्थ अधिकरणों के जिम्मे सौपा जा सकता है। आम तौर से यह अच्छा होगा कि मंत्रालयो या सचिवालयों की विशिष्ट नीति के क्षेत्र यथासम्भव स्पष्टत निर्दिष्ट कर दिए जाए और कार्यपालक दायित्व अलग-अलग विभागों को इस प्रकार सौंप दिए जाए कि वे सचिवालय का कम से कम सहारा लेकर उनका पालन कर सके।

१६ दूसरी पंचवर्षीय योजना के परिपालन मे पहले से ज्यादा महत्वपूर्ण रूप मे एक समस्या यह आती है कि अल्प साधनों वाले लोगों को टेकनीकल, वित्तीय और अन्य सहायता पहुंचाने के लिए उपयुक्त प्रशासनिक पद्धतियों और माध्यमों की जरूरत है। खेती में हो या छोटे उद्योगों में या समाज सेवा मे, व्यक्ति और धन दोनो के सीमित साधनो से ही विशाल व्यक्ति समुदाय की सेवा करनी है। विभिन्न योजनाओं में सहायता देने की शर्तें इस प्रकार की रखनी चाहिएं कि उनसे अल्प साधन वाले लोगों का हित हो। फिलहाल, अक्सर यह होता है कि किस-किस को सहायता दी जाए, इस मामले में काफी छूट रहती है और हो सकता है कि जरूरत से ज्यादा सहायता उन लोगों को मिल जाए जो अपेक्षाकृत समृद्ध है या जो अपने दावो की ओर खास ध्यान दिलवा सकते है। इसके अलावा प्रत्येक क्षेत्र में सार्वजनिक सहायता का समुचित वितरण करने के लिए यह जरूरी है कि छोटे उत्पादकों को संगठित किया जाए जैसे कि सहकारिता संस्थाओं आदि मे होता है, ताकि उस सगठन के सदस्यों की सच्ची मदद हो सके। जहा-जहा ऐसे संगठन है और उनके सदस्य जागरूक है, वहां प्रशासन भी विभिन्न व्यक्तियों की अपेक्षा उन्हें अधिक सहायता और निदेश दे सकता है। ये संगठन अपने सदस्यों के प्रति अधिक दायित्व ग्रहण करते जा सकते है जिससे प्रशासन व्यवस्था का बोझ भी कम हो सकता है। खेती, छोटे उद्योगों और अन्य क्षेत्रों में सहकारिता का योग आगे के अध्यायों मे बताया गया है। यहा केवल इस बात पर जोर दे देना काफी है कि यथासम्भव सहकारिता संस्थाओं की रचना और पारस्परिक सहायता की व्यवस्था दूसरी पंचवर्षीय योजना के महत्वपूर्ण प्रशासनिक कार्यों में शामिल है और ऐसे ही प्रबन्धों द्वारा अल्प साधन वाले व्यक्तियों का स्वयं अपने कार्य का विकास तथा सार्वजनिक सहायता का पूर्ण उपयोग सम्भव हो सकता है।

सार्वजनिक उद्योग

१७. दूसरी पंचवर्षीय योजना के अधीन सार्वजनिक उद्योगों की क्या प्रशासनिक आवश्यकताएं होंगी—इस पर औद्योगिक नीति प्रस्ताव में उल्लिखित सार्वजनिक उद्योग के स्थान की दृष्टि से विचार करना होगा। दूसरी योजना में औद्योगिक विकास की योजनाओं के कारण सरकार पर और बातों के अलावा नए इस्पात सयत्रो, कोयला खानों, भारी मशीन बनाने के कारखानों, खाद कारखानों, भारी बिजली का सामान बनाने वाले कारखानों और तेल अनुसन्धान और विकास का दायित्व डाला गया है। पहली और दूसरी योजनाओं में पूजी विनियोग की तुलना से

आधुनिक उद्योग में सरकार की बढ़ती हुई जिम्मेदारी का आभास हो जाता है। राज्य व्यापार निगम स्थापित करने का निर्णय इस बात का एक और प्रमाण है कि सरकार को अगले पाच ही नहीं आगे के अनेक वर्षो के लिए अपने काम को कर्मचारियो से सम्पन्न कराना है और संगठन रचने हैं। उन औद्योगिक कार्यो के अतिरिक्त जिन्हें सरकार स्वयं चलाती है, ऐसी भी बहुत-सी योजनाएं हैं जिनमे सरकार को औद्योगिक विकास मे घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध होना है। औद्योगिक साज-सामान और संयत्रों को बनाने के लिए डिजाइन तैयार करने वाले संगठन सरकार के अन्तर्गत ही बनाए जाने है। उद्योग (विकास और नियमन) अधिनियम, १९५१ के अधीन विभिन्न उद्योगों के सहायतार्थ विकास परिषदो के लिए भी व्यक्ति खोजने हैं।

१८. पहली पंचवर्षीय योजना में केन्द्र और राज्य सरकारों के औद्योगिक प्रयत्नों के लिए कर्मी खोजने के विशेष प्रबन्ध की ओर ध्यान आकर्षित किया गया था। हाल ही मे उत्पादन, परिवहन और सचार, लोहा और इस्पात और वाणिज्य और उद्योग मत्रालय के अधीन सरकारी उद्योगों मे कर्मचारी नियुक्त करने के लिए एक उद्योग प्रबन्ध सेवा स्थापित करने का निर्णय किया गया है। इस सेवा का अभिप्राय यह है कि औद्योगिक दायित्वों के लिए प्रबन्ध कर्मचारी जुटाए जा सकें, जैसे, आम प्रबन्ध, वित्त और हिसाब-किताब (सर्वोच्च नौकरियां छोड़कर) क्रय-विक्रय, परिवहन, भण्डार कर्मचारी, प्रबन्ध और कल्याण, नगर प्रशासन इत्यादि में जरूरी होते हैं। इस सेवा में सार्वजनिक सेवा में से और बाहर से भी लोग भरती किए जाएंगे। नीचे के स्तरों पर कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाएगी ताकि बाद में वे कर्मचारी अधिक दायित्व सभाल सकें। इस सेवा का नियामक गृह मंत्रालय होगा और इसे परामर्श देने के लिए एक मण्डल स्थापित किया जाएगा जिसमें सम्बद्ध मत्रालयो के प्रतिनिधि और मत्रिमंडल के सचिव सदस्य रहेंगे। यह भी विचार है कि सार्वजनिक उद्योगों को नीचे स्तर पर निर्दिष्ट सख्या से अधिक स्थानों पर अस्थायी नियुक्तिया करने को कहा जाए ताकि कालान्तर में विकासशील सार्वजनिक उद्योगों की जरूरतें पूरी हो सके। इस सेवा से राज्यों के उद्योग विभागों में ऊंची श्रेणियों के कर्मचारी भी जा सकेंगे—वहा छोटे, मध्यम और सहकार उद्योगों का काम निरन्तर बढ़ता ही जाएगा। टेकनीकल कर्मचारियों के बारे में यह प्रस्ताव विचाराधीन है कि एक या अधिक टेकनीकल संवर्ग बनाए जाएं जिनसे राज्य के औद्योगिक कार्यों के लिए टेकनीकल आदमी मिल सकें।

१९. व्यापार प्रबन्ध में प्रशिक्षण की सुविधाएं बढ़ाने का असर औद्योगिक क्षेत्र के विकास की गति पर काफी पड़ेगा। छोटे अफसरों को व्यापार प्रशासन की शिक्षा देने के कोर्स हाल ही में बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और दिल्ली में शुरू किए गए हैं। एक प्रशासनिक कर्मचारी कालेज खोलने का भी प्रस्ताव है जिसमें विभिन्न क्षेत्रों के ऊंचे कार्यपाल एकत्र होकर सगठन और प्रशासन की पद्धतियों का अध्ययन करेंगे। प्रमुख केन्द्रों में प्रबन्ध संस्थाए भी खोली जा रही है।

२०. जहा बड़ी-बड़ी संस्थाओं के संचालन का सवाल है, वहां दो स्तरों पर उचित संगठन की आवश्यकता होती है: (क) विभिन्न उद्योगों के लिए, और (ख) विभिन्न उद्योगो या उद्योग समूहों के समन्वय, निदेशन, संगठन या आयोजन से सम्बद्ध दायित्वो को पूरा करने के लिए। इस तरह उदाहरण के लिए दूसरी श्रेणी के कार्य रेलवे, लोहा और इस्पात और उत्पादन मंत्रालय तथा राष्ट्रीय उद्योग विकास निगम करते है। इस स्तर के नीचे कुछ वर्षो से अनेक प्रकार के संगठन विकसित होते रहे है, पर औद्योगिक कार्यो में ज्वाइंट स्टाक कम्पनी प्रणाली जिसमें सारी पूजी सरकार की ही होती है अधिकाधिक अपनाई जा रही है। इस प्रकार राष्ट्रीय इंस्ट्रूमेंट फैक्टरी,

इन्टीगरल कोच फैक्टरी और चित्तरजन लोकोमोटिव विभागीय प्रबन्ध के उदाहरण हैं। सिन्दरी, हिन्दुस्तान केबल्स, भारत इलेक्ट्रोनिक्स, एन्टीबायोटिक्स और अन्य स्थानो मे कम्पनी पद्धति अपनाई गई है। दामोदर घाटी योजना और विमान सेवाओ के लिए विधिसम्मत निगम बनाए गए है। अनेक सिचाई कार्यों का प्रशासन, केन्द्र और राज्य के प्रतिनिधियों से युक्त नियंत्रण बोर्डों द्वारा होता है। विभिन्न सार्वजनिक उद्योगो मे कौन-कौन-सी सगठन पद्धतिया ठीक है, इसका निर्णय करते समय सबसे अधिक ध्यान इस बात पर देना है कि विभागीय प्रशासन मे सामान्य रूप से प्रयुक्त प्रशासनिक और वित्तीय पद्धतिया वाणिज्य और औद्योगिक प्रशासनों मे उपयुक्त सिद्ध नही होती। इन प्रशासनों मे व्यापार सम्बन्धी नियमों और आदर्शो के अनुरूप व्यवस्था रखनी पड़ती है और बाकी उद्योगो की ही तरह बल्कि कुछ अर्थ मे उससे अधिक दायित्व निभाने पड़ते हैं। इसलिए मोटे तौर पर नीति यह है कि सरकार की अन्तिम जिम्मेदारिया और संसद् के प्रति उत्तरदायित्व को रखते हुए इन सगठनों को अधिकतम प्रबन्धकीय और प्रशासकीय स्वाधीनता दे दी जाए। सार्वजनिक उद्योगो के सगठनो के प्रश्नो पर निरन्तर विचार होता रहता है और काफी अनुभव के बाद ही कुछ प्रकट हो सकता है कि विभिन्न प्रकार के संगठनों के अपने-अपने लाभ क्या हैं। उदाहरणार्थ इस विषय पर लोक सभा की अनुमान समिति की हाल की रिपोर्टों मे भी काफी ध्यान दिया जा चुका है। संचालक मण्डलों की रचना और कार्य अधीनस्थ सार्वजनिक उद्योगो के प्रति मंत्रालय या सचिवालय का सम्बन्ध और एक-से सार्वजनिक उद्योगो के लिए किसी हद तक एक प्रबन्ध की आवश्यकता—ये कुछ प्रश्न है जो विभिन्न मत्रालयो में विचाराधीन हैं।

२१. बडे पैमाने के उद्योगो में और उन मण्डलों या मंत्रालयों में जिनके अधीन वे काम कर रहे हैं काफी दीर्घकालीन आयोजन की जरूरत है। कठिन समस्याएं है, जैसे योग्य और विश्वास-पात्र टेकनीकल सलाहकार, विदेशों और विदेशी फर्मों से व्यवहार, निरीक्षकों और मुख्य कर्मचारियों का सगठन, विदेशी विशेषज्ञों का चयन और अलग-अलग उद्योगों की जरूरत के हिसाब से वैज्ञानिक प्रबन्ध पद्धति को अपनाना। इसलिए सार्वजनिक उद्योगों में प्रबन्ध पद्धति और कर्मचारी नीति के प्रश्नों के सम्बन्ध मे बराबर सावधानी से अध्ययन की जरूरत है और इसमे विभिन्न विशेषज्ञ और प्रमुख सगठन, चाहे वे सार्वजनिक क्षेत्र मे हों या निजी क्षेत्र में महत्वपूर्ण अनुभव दान कर सकते है।

राज्यों में योजना व्यवस्था

२२ पहली पंचवर्षीय योजना में अधिकाश राज्यों ने अपनी योजना गोष्ठिया बना ली थीं। ऐसा नियम है कि प्रत्येक राज्य में योजना और विकास के काम पूर्णकालिक या लगभग पूर्णकालिक सचिवों के जिम्मे है जिनमे से बहुतो को राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यो में कार्यपालक का दायित्व भी निबाहना पडता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में राज्यों मे योजना का काम विस्तार और जटिलता मे बढ़ेगा, ऐसी आशा है। अभी तक राज्यों में योजना विभाग का काम यही रहा है कि वह बाकी विभागो के काम का सीमित मात्रा मे समन्वय करता रहे। अब उसका काम अधिकाधिक राज्य की आर्थिक और सामाजिक आवश्यकताओं तथा वित्तीय और भौतिक साधनों के अध्ययन, प्रशिक्षण कार्यक्रम और राज्य के कार्यक्रमों की समस्त नीति से सम्बन्धित होगा। रोजगार का स्तर, प्रशिक्षण कर्मचारियो की पूर्ति, योजना के सम्पादन के योग्य भौतिक साधनों की पूर्ति, थोडा-थोड़ा बचाने का आंदोलन, मूल्यों की प्रवृत्ति और उपभोग्य सामग्री की पूर्ति आदि ऐसे विषय है जो कि अधिकाधिक राज्यो की योजना के क्षेत्र में आते जाने

चाहिएं। वार्षिक योजनाओं की रचना, योजना की शैलियों में सुधार और राज्य की अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की तथा विभिन्न योजना कार्यों की प्रगति का नियमित एवं सही लेखा-जोखा, इन सबके कारण राज्यो के योजना संगठनों का विकास करना और उन्हे मजबूत करना अपेक्षित होगा। कुछ राज्यों में आवश्यक काम हो भी रहा है। इस सम्बन्ध में इस बात पर जोर देना जरूरी है कि राज्यों में अंक-संकलनकर्ता कर्मचारियों और अर्थशास्त्रियों की वृद्धि करनी है और उन्हें योजना विभागों से मिलकर काम करना है।

२३. जैसा कि अगले अध्याय में बताया गया है, जिला और राज्य दोनों स्तरों पर प्रमुख गैर-सरकारी व्यक्ति योजनाओं की रचना और सम्पादन से सम्बद्ध हैं। अन्य लोगों के अतिरिक्त राज्य विधान मण्डलों और ससद के सदस्य, जिला विकास समितियों में और योजना कार्य परामर्श समितियों के अलावा राज्य योजना मण्डलों में भी काम कर रहे है। संसद सदस्य केन्द्रीय सरकार से और घनिष्ठ सहयोग कर सके, इसके लिए दो साल हुए अनौपचारिक सलाहकार समितियां बनाई गई थीं जिनमें लोक सभा और राज्य सभा के सदस्य थे और जो अनेक मंत्रालयों के हेतु बनी थी। पिछले साल ये परामर्श समितियां विभिन्न क्षेत्रो में योजना कार्य से सम्बद्ध रही हैं और विभिन्न स्तरो पर योजना आयोग ने अपने से सम्बद्ध परामर्श समिति से सलाह ली है। योजना आयोग ने राज्य सरकारों के आगे यह प्रस्ताव भी रखा था कि प्रत्येक राज्य से निर्वाचित ससद् सदस्य आयोजन के काम से और खास तौर से दूसरी योजना की तैयारी से सम्बद्ध किए जा सकते है। इस प्रकार का सम्बन्ध योजना के सम्पादन में बहुत महत्व का होगा और आशा है कि राज्यों मे संसद सदस्यों और राज्य विधान मण्डलों से अनौपचारिक परामर्श का प्रबन्ध किया जाएगा जिससे योजना की प्रगति की समीक्षा हो सके और जनता का उसके परिपालन में सहयोग और समर्थन मिल सके।

राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं का वार्षिक संशोधन

२४. जैसा कि प्रथम अध्याय मे बताया गया है, नियोजित विकास के आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों का विचार करते समय काफी दूर तक—जैसे १५ वर्ष तक—आगे देखना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना बनाते समय इस्पात और भारी उद्योगों के विकास के लिए, सिंचाई और बिजली में, कर्मचारी योजना में, शिक्षा के आयोजन तथा खाद्य पूर्ति के सन्दर्भ में और जनसंख्या की प्रवृत्ति आकने में दो या तीन योजनाकालों की सम्भाव्य आवश्यकताओं और विकास का ध्यान रखा गया है। दूर तक के आयोजन मे एक ऐसा दृष्टि-विस्तार मिलता है जो विभिन्न क्षेत्रों के सन्तुलित विकास के लिए और सामाजिक प्रवृत्तियों को आंकने के लिए उपयोगी होता है। कम अवधि, जैसे १ वर्ष के लिए, निस्सन्देह ब्योरेवार योजना की जरूरत होती है। पांच साल की योजनाओं को एक तरह से इन दीर्घकालिक आम योजनाओं और एक-एक साल की सविस्तर योजनाओं मे बैठाना पडेगा। पाच बरस की योजना से उन सुस्पष्ट कार्यों पर ध्यान एकाग्र करना सम्भव हो जाता है जिनके लिए देश के साधनों और शक्तियों को संगठित करना है। पांच साल की योजना स्वभावत. परिकल्पना और परिपालन दोनों की दृष्टि से ऐसी होनी चाहिए कि वह छोटे-मोटे परिवर्तनों को स्वीकार कर सके।

२५. पंचवर्षीय योजना के सम्पादन मे रद्दोबदल की गुंजाइश जरूरी भी है और लाभप्रद भी। साज-सामान और इस्पात मंगाने मे और विदेशी मुद्रा विनिमय में जो अनिश्चितता रहती है उसे देखते हुए और मूल आर्थिक हालतों मे होने वाले परिवर्तनों को देखते हुए योजना की कार्य-प्रगति को समय-समय पर जाचना जरूरी हो जाता है। योजना में जितनी गुंजाइश परिवर्तनों

की होगी उतना ही उसम नई जानकारी और अनुभव का लाभ उठाना सम्भव होगा और उतना ही उसमें नए प्रौद्योगिक विकास शामिल हो सकेंगे। यह सच है कि लम्बी अवधि की योजनाओं और विकास योजनाओ में कई वर्षो तक के दायित्व उठाए जाते हैं और इस तरह के कार्यों के लिए स्थान कम बच रहता है जिनमें कम समय के दायित्व उठाये जा सके और हेर-फेर किए जा सकें। प्रस्ताव है कि १९५६-५७ में आरम्भ करके प्रत्येक सालाना बजट के बाद प्रत्येक वर्ष की विस्तृत योजनाएं जो पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हों प्रकाशित कर दी जाया करे। इससे कार्य सम्पादन में अनावश्यक नियमबद्धता नही आएगी और अर्थ-व्यवस्था की बदलती जरूरतों के अनुसार परिवर्तनों की भी गुंजाइश रहेगी।

२६. जो परिवर्तन और हेर-फेर वार्षिक योजनाओं के कारण सम्भव हो सकेगा, वह अधिक करके राष्ट्रीय योजना के उन्हीं क्षेत्रों में हो सकेगा जो खास तरह से केन्द्र सरकार के काम है, जैसे उद्योग, खनिज और परिवहन। इन परस्पर सम्बद्ध क्षेत्रों में सार्वजनिक क्षेत्र का विस्तार किया जाएगा और खर्च पहली योजना से कही अधिक होने लगेगा। इसमें बडे-बड़े प्रशासनिक कार्य निहित है। कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाना है और कार्यकुशल सगठन बनाए जाने है। इन क्षेत्रों में योजना बनाते समय इस्पात और सामान के बाहर से आने की अनिश्चितता का ध्यान जरूर रखना पड़ेगा और यह भी देखना पडेगा कि कितनी विदेशी मुद्रा प्राप्य है। इस क्षेत्र के प्रत्येक विभाग मे कार्यो की प्राथमिकताएं सावधानी से निश्चित करने की जरूरत है ताकि हेर-फेर और परिवर्तन आदि शीघ्रता से किए जा सके। दूसरी बात यह है कि उद्योगो, खनिजों और परिवहन के कार्यक्रमों का सम्बद्ध रूप से सम्पादन करना चाहिए और उनसे सम्बन्ध रखने वाले कार्यों को एक-दूसरे से मिलाकर करना चाहिए ताकि प्रत्येक योजना समूह पर जो व्यय किया जाए उसका पूरा-पूरा लाभ मिले। यह भी प्रस्ताव है कि एक विशेष समिति बनाई जाए जो मंत्रिमंडल की आर्थिक समिति को और योजना आयोग को कार्यो की प्राथमिकताओं, विदेशी मुद्रा, माल और कुछ प्रकार के प्रौद्योगिक कर्मचारियो आदि साधनों के वितरण के विषय में प्रतिवेदन दे।

इससे कुछ कम सीमा तक राज्यों मे भी योजना की परिधि के भीतर ही हेर-फेर की जरूरत होगी। राज्यों के प्रतिनिधियो से बात करके वार्षिक समीक्षाएं करने और राज्यों के लिए वार्षिक योजनाएं प्रस्तुत करने की पद्धति हाल ही में निश्चित की जा चुकी है।

जन साहचर्य और जन सहयोग

२७. लोकतंत्रीय योजना में जन सहयोग और जन साहचर्य का महत्व भली-भांति समझा जाता है। जैसा कि पहली पंचवर्षीय योजना में कहा गया था, योजना की तरफ भारत का जो रवैया है उसकी मुख्य शक्ति ही जन सहयोग और जन मत है। पिछले कुछ वर्षो में जब-जब लोगों से, खास तौर पर गावों के लोगों से, मदद मांगी गई है उन्होंने उत्सुकतापूर्वक साथ दिया है। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों में स्थानिक विकास कार्यो में, श्रमदान में, सामाजिक कल्याण विस्तार कार्यों में और स्वयसेवी सगठनों के कार्य में श्रमदान करने के लिए जनता हमेशा राजी और तैयार रही है और स्थानिक साधन भी पूरी तरह जुटा दिए गए है।

२८. हमारी अविकसित अर्थ-व्यवस्था में मानव शक्ति का अतुल भण्डार है जिसका अभी पूरा लाभ नहीं उठाया जा रहा है। इस भण्डार का इस्तेमाल स्थायी महत्व की रचनाओं में

करना चाहिए। यह लक्ष्य तभी अच्छी तरह पूरा होगा जब प्रत्येक नागरिक अपने समय और शक्ति का एक अंश सामाजिक हित के कार्यों मे देने को तैयार हो; यही लोकतत्रीय सहकारी उन्नति का तरीका है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा का एक मुख्य लक्ष्य ही यह है कि मानव शक्ति के भण्डार का नियमित इस्तेमाल किया जाए, खास तौर से गावों में, जिससे कि सारे समाज का हित हो। इसके कई तरीके है, जैसे गाव की सड़क बनाना, ईधन योग्य जंगल लगाना, तालाब खोदना, पानी पहुंचाना और सफाई मे योग देना और वर्तमान छोटे सिचाई कार्यों की रक्षा करना आदि। जहां बड़ा काम उठाया गया हो, जैसे सिंचाई कार्य, वहां राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्य के कर्मचारियों को आगे बढना चाहिए और गैर-सरकारी नेताओं की मदद से गांव के उन श्रमिको का संगठन करना चाहिए जो नहर पर काम करने में दिलचस्पी रखते हों। सड़कों या अन्य कार्यों में भी ऐसा ही किया जा सकता है। योजना कार्यों के लिए लोगों में स्थानिक सहयोग की भावना उत्पन्न करने और काम के अवसर देने के अतिरिक्त इससे स्थानीय लोगों को उस धन में से भी लाभ होगा जो इस काम पर खर्च होगा और उनकी आर्थिक स्थिति भी सुधरेगी। स्वेच्छा से श्रम करने वालों को संगठित करके और स्थानिक जन शक्ति का उपयोग करके दूसरी योजना के अधीन अनेक क्षेत्रों में लक्ष्य से कही अधिक कार्य हो सकता है। इस ढंग से सहकारितापूर्वक काम करने के बहुत-से अवसर दूसरी पचवर्षीय योजना मे मिलेंगे।

२९. पहली पंचवर्षीय योजना मे गांवों में स्वेच्छा से काम करने वालों के संगठन की जरूरत का उल्लेख किया गया था। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यो का मुख्य उद्देश्य गाव वालो को अपनी जरूरतों के लिए खुद के परिश्रम से गांवों का जीर्णोद्धार करना है। चूकि राष्ट्रीय विस्तार सेवा दूसरी योजना पूरी होने के पहले समस्त ग्रामीण आबादी तक नही पहुच सकेगी, इसलिए उन क्षेत्रों में जहा राष्ट्रीय विस्तार सेवा नहीं है आरम्भिक प्रयास के रूप में एक स्थानिक विकास कार्यक्रम जारी करना निश्चित किया गया, ताकि ग्रामवासी अपनी बड़ी-बड़ी जरूरतों के लिए मुख्यतः अपने ही परिश्रम से काम शुरू कर सकें। इसे दृष्टि मे रखकर पहली योजना में १५ करोड़ रुपए रखे गए थे। यह योजना कोई तीन साल से जारी है। उत्तर प्रदेश मे स्थानिक विकास कार्यक्रम श्रमदान से सम्बद्ध है ही, वहा के अलावा और राज्यों मे जैसा कि खबरों से मालूम होता है कोई ३९,००० स्थानिक कार्य अब तक अनुमोदित किए जा चुके है। इनमे छोटे भवनों, दवाखानों, सामुदायिक केन्द्रों, पचायतघरों, पुस्तकालयों, गाव की सड़कों और पुलियों तथा कुओं और छोटे सिंचाई कार्यो का निर्माण शामिल है। इस समय विभिन्न राज्यों के इस कार्य का विस्तार पूर्वक अध्ययन तीन निरीक्षण दलों द्वारा किया जा रहा है। उनके मूल्यांकन के बाद कार्यक्रम मे आवश्यक परिवर्तन और सुधार आदि किए जाएगे।

३०. कालेजों और स्कूलों के नवयुवक और नवयुवतिया राष्ट्रीय विकास के कामों में बराबर अधिकाधिक हिस्सा लेते रहे है। पहली पंचवर्षीय योजना में युवक शिविरों और श्रम सेवाओं के लिए विशेष व्यवस्था की गई थी। अक्तूबर १९५५ तक शिक्षा मंत्रालय की प्रेरणा से ७९५ युवक शिविर लगाए जा चुके थे और इनमें ६६,००० व्यक्ति भाग ले चुके थे। इन शिविरों से मेहनत के प्रति एक गर्व की भावना उत्पन्न होती है, नई-नई रुचिया पैदा होती है। नैशनल कैडेट कोर ने बहुमूल्य कार्य किया है, उसके सीनियर डिवीजन में ४६,०००, जूनियर डिवीजन में ६४,०००; लड़कियों के डिवीजन मे ८,००० व्यक्ति है और इनके अलावा शिक्षालयों से लिये गए ३,००० शिक्षक तथा अन्य व्यक्ति भी है। आक्जिलरी कैडेट कोर में इस समय ७,५०,००० व्यक्ति हैं। भारत स्काउट और गाइड्स में ४,३८,४०५ स्काउट और

६१,११८ गाइड है, यानी पहली योजना के बाद से अब तक उसमें ५० प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी है। भारत सेवक समाज ने करीब ५०० युवक और विद्यार्थी शिविरों का आयोजन किया है, जिसमें करीब ४०,००० विद्यार्थी और युवकगण भाग ले चुके है। इन सब सगठनों में दूसरी योजना के अधीन विकास के बड़े-बड़े कार्यक्रम है। युवकों को देश के निर्माण में विशेष योग देना है और योजना का उद्देश्य उन्हें सेवा और सहयोग के अधिकाधिक अवसर देना है।

३१. दूसरी पंचवर्षीय योजना की रचना के सिलसिले मे यह हाल ही में कोशिश शुरू की गई है कि योजना के क्षेत्र में विद्यार्थी और अध्यापकों का घनिष्ठ सहयोग प्राप्त हो सके। योजना आयोग के सुझाव पर कई विश्वविद्यालयों और कालेजों मे योजना विचार गोष्ठियां स्थापित की गई है ताकि अध्यापक और विद्यार्थी राष्ट्रीय विकास सम्बन्धी समस्याओं पर विचार कर सकें और अपने सुझाव योजना आयोग, राज्य सरकारो और स्थानीय संस्थाओ को भेज सके। आशा की जाती है कि सब विश्वविद्यालयों और शिक्षालयो में इस तरह की गोष्ठियां कालान्तर में स्थापित हो जाएगी। सूचना का प्रचार करके, राष्ट्रीय, राज्यीय और स्थानीय योजनाओं का महत्व और अधिक व्यापक रूप से समझाकर तथा विकास कार्यों में स्वेच्छापूर्वक योगदान का संगठन करके, ये योजना गोष्ठियां अध्यापको और विद्यार्थियो को दूसरी योजना की सफलता में हाथ बटाने का अमूल्य अवसर देगी।

३२. पहली पंचवर्षीय योजना के अनुसार स्थापित भारत सेवक समाज ने एक गैर-सरकारी और गैर-राजनीतिक सगठन के रूप में सारे राष्ट्र को रचनात्मक कार्यों की सुविधा दी है। अब इसकी ३१ प्रदेश शाखाएं, २२६ जिला शाखाएं और अनेक तहसील, ताल्लुका और ग्राम शाखाएं है। जिन सदस्यों ने सप्ताह में ५ घंटे समाज सेवा करना स्वीकार किया है, उनकी कुल संख्या अब ५०,००० तक पहुंच गई है। भारत सेवक समाज मे पूरे वक्त काम करने वाले कर्मचारी थोड़े-से हैं और इनके अलावा अनेक अवकाशप्राप्त और अनुभवी सार्वजनिक कार्यकर्ता भी है। ये सब उसके समाज शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, श्रम सहकार, कार्य केन्द्र, युवक और विद्यार्थी गोष्ठी, सूचना केन्द्र और सांस्कृतिक समारोह आदि कार्यों में भाग लेते है। भारत सेवक समाज के अपने कार्यक्रम तो होते ही हैं, वह अन्य समाजसेवी संगठनों के साथ भी काम करता है। शिविर नेताओं को तैयार करने के लिए विशेष प्रबन्ध किया गया है। कुछ शिविर शिक्षा विभागो और विश्व-विद्यालय के अधिकारियों की ओर से आयोजित किए गए है। भारत सेवक समाज ने हाल ही में भारत युवक समाज नामक एक युवक संगठन आयोजित किया है। भारत सेवक समाज के कार्यों मे कोसी योजना में १६।। मील लम्बा पुश्ता बाधना, जमुना बांध पर काम करना, सहकारी संस्थाएं स्थापित करना, छोटी बचत आन्दोलन मे सहायता देना और स्थानीय विकास कार्यों में हिस्सा लेना उल्लेखनीय है।

३३. गाधी जी के बहुत-से मूल सिद्धांत आज भारत की राष्ट्रीय विरासत है। उन्होंने तथा रचनात्मक कार्यों में उनके साथ काम करने वालों ने वर्षों के अनुभव से जो तरीके और पद्धतियां निर्धारित की है, वे ग्रामोपयोगी कार्यों के सम्पादन में बहुमूल्य प्रमाणित हुई हैं। सेवा की भावना, जो उनका आदर्श थी, ग्रामोद्धार, ग्रामोद्योग, बुनियादी तालीम, हरिजन कल्याण और सभी दलितों का कल्याण, दूसरी योजना की सफलता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। सर्व सेवा संघ, कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि और गांधी स्मारक निधि अपने कार्यों से राष्ट्रीय योजना के सम्पादन में महत्वपूर्ण योग दे रही है। गाधी जी के सामने ही रचनात्मक कार्य करने वाले अनेक

संगठन बन गए थे, जैसे अखिल भारतीय चर्खा संघ, अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ, तालीमी संघ, गोसेवा संघ आदि। सर्व सेवा संघ, एक संपृक्त और व्यापक रचनात्मक कार्यक्रम तैयार करने तथा सभी क्षेत्रों मे रचनात्मक कार्यकर्ताओं का पथप्रदर्शन करने के लिए बनाया गया था। सर्व सेवा संघ के कार्यकर्ता जिन कार्यो मे मुख्य रूप से सलग्न है, उनमे भूदान यज्ञ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उड़ीसा के कोरापुट जिले में ग्रामदान के रूप में प्राप्त ८०० गावों मे वे ग्राम-परिवार आन्दोलन भी चला रहे है जिसका उद्देश्य सारे गांव को एक परिवार मानकर उसकी अर्थ-व्यवस्था का विकास करना है। ग्रामोद्योग के क्षेत्र मे सर्व सेवा संघ ने अम्बर चर्खे के विकास में भी योग दिया है जो ग्रामक्षेत्रों मे जगह-जगह कताई का प्रचार करने के काम आएगा।

३४ कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक निधि ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चों व औरतों के कल्याण के लिए ही मुख्य रूप से काम कर रही है। यह निधि ग्राम सेविकाओं के प्रशिक्षण का प्रबन्ध करती है और ग्रामीण दस्तकारियों, बुनियादी तालीम, दाईगीरी आदि की विशेष शिक्षा देती है, १६ ग्राम सेविका विद्यालयों और ७ दाई शिक्षा केन्द्रों का संचालन करती हैं, साथ ही अन्य संस्थानों का भी उपयोग करती रहती है। १९५५-५६ मे इस निधि ने केन्द्रीय समाज कल्याण मंडल के लिए ६५० ग्राम सेविकाएं प्रशिक्षित की और १९५६-५७ मे १,०९५ ग्राम सेविकाएं प्रशिक्षित करने का कार्यक्रम है। इस निधि का एक और महत्वपूर्ण काम गांवों मे शिशु विद्यालय और आरोग्य केन्द्र खोलना रहा है। अभी तक २९० केन्द्र खुल चुके है। गाधी स्मारक निधि ने गाधी साहित्य प्रकाशित किया है। दिल्ली, सेवाग्राम, साबरमती और मदुरै मे गाधी जी की स्मृति मे संग्रहालय खोले है। यह निधि २०० सस्थाओं को धन देती है और देश भर मे इसने ३०० ग्रामोद्धार केन्द्र स्थापित किए है। गाधी स्मारक निधि ने कुष्ठ निवारण और जापानी ढग की धान की खेती के प्रचार मे भी काम आगे बढ़ाया है।

३५. हर जगह ग्राम योजनाएं तैयार करने में जनता ने गहरी दिलचस्पी और योजना के सिलसिले में उत्तरदायित्व संभालने के लिए भी तत्परता दिखाई है। दूसरी योजना में स्थानिक विकास कार्यो के लिए १५ करोड़ रुपया और जन सहयोग के संगठन की योजनाओं के लिए ५ करोड़ रुपया रखा गया है। अधिकाश कार्यक्रमों मे कमोबेश गुजाइश इस बात की है कि जनता से और अधिक सहयोग प्राप्त किया जाए। केन्द्र और राज्यो मे उपयुक्त अभिकरणो को ऐसे क्षेत्रों को विशेष रूप से छांट लेना चाहिए जिनमे जन सहयोग से सचमुच अधिक लाभ हो सकता है और लक्ष्य जल्दी प्राप्त हो सकते है, तथा इनमें जन सहयोग के लिए लगातार बाकायदा प्रयत्न करना चाहिए।

३६. जन सहयोग में वृद्धि करने के साधन केवल ग्राम संगठन और स्वेच्छा कार्य का संगठन ही नही है, जैसा कि पहली पंचवर्षीय योजना में कहा गया था। राज्य सरकारों को स्थानिक अधिकरणों का अपनी ही संस्थाओं की तरह अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिए। इसी तरह स्थानिक अधिकरणों को स्वेच्छा कार्य संगठनों और समाज सेवकों का सहयोग प्राप्त करना चाहिए। डाक्टर, वकील, अध्यापक, प्रौद्योगिक और प्रशासक लोगों की संस्थाएं सामुदायिक कल्याण में अमूल्य योग दे सकती हैं। विश्वविद्यालयों, शिक्षालयों और युवक समाजों ने कल्याण कार्यक्रमो में नेतृत्व करने और हिस्सा लेने की इच्छा प्रकट की है जो कि उत्साहवर्द्धक बात है। इसका और उपर्युक्त अन्य सम्भावनाओं का दूसरी पंचवर्षीय योजना में जितना हो सके उतना उपयोग करना चाहिए।

३७. काम की शक्ल में तो लोग योग दे ही सकते है, थोड़ा-थोड़ा धन बचाकर भी वे अपनी हैसियत और परिस्थिति के अनुसार राष्ट्रीय योजना की सफलता में हाथ बंटा सकते है । जिस पैमाने पर दूसरी पचवर्षीय योजना शुरू की जा रही है उसको देखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि समाज के साधनों का भरपूर उपयोग किया जाए। सभी लोग थोड़ा-थोड़ा प्रयत्न करे तो राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के विकास मे गति ला सकते है । पहली योजना में छोटी बचत का हाल उत्साह-जनक रहा है पर दूसरी योजना में उससे भी ज्यादा अच्छा काम इस सम्बन्ध मे करना होगा। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक कार्यो का एक उद्देश्य यह भी रहा है कि गांवों के प्रत्येक परिवार तक जाकर बचत करने का उत्साह बढाए। देश भर मे पढ़े-लिखे स्त्री-पुरुष अपने-अपने क्षेत्रों के सब परिवारों से मिल-मिलकर उनसे बचत यज्ञ में बराबर योग देते रहने का अनुरोध करें तो राष्ट्रीय योजना को सहायता मिलेगी। स्त्रियो के बचत आन्दोलन मे जो काम पिछले तीन साल के अन्दर हुआ है, वैसा ही काम सब जगह होना चाहिए । देश भर की संस्थाओ को और प्रत्येक योजना को अपने और कामो के साथ-साथ, अल्प बचत आन्दोलन के विस्तार के लिए व्यावहारिक रूप से योग देना भी एक महत्वपूर्ण कार्य समझना चाहिए ।

योजना का प्रचार

३८. सामुदायिक सहयोग की बदौलत और अपनी सफलताओ के कारण पहली पंचवर्षीय योजना बहुत-से लोगों तक पहुंची है । फिर भी देश की जनसंख्या का वह केवल एक छोटा-सा अश है । जैसा कि पहली योजना मे कहा गया था योजना की सफलता के लिए एक बात यह भी जरूरी है कि अधिकाधिक लोग उसका अर्थ समझते हो । लोगो को मालूम होना चाहिए कि अनेक दिशाओं मे जो प्रगति होती है वह सब सम्बद्ध है और एक दिशा में प्रयत्न करने से दूसरी दिशाओं में भी प्रगति तो होती ही है तथा प्रयत्न की आवश्यकता भी बढ़ती है । यदि लोग यह समझ ले कि योजना के लिए कौन चीज पहले जरूरी है, कौन बाद मे, तो समस्त देश के हित को बड़ा मानते हुए वे अपने कर्तव्य भी समझ सकेगे । इन बातो को दृष्टि मे रखकर राज्यो में ६ करोड़ और केन्द्र मे ७ करोड़ रुपया दूसरी योजना के प्रचार के लिए रखा गया है । सूचना और प्रसारण मंत्रालय के तथा राज्य सरकारों के कार्यक्रमों में होशियारी के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जा रहा है । इन कार्यक्रमों के बनाने मे प्रचार के अलग-अलग माध्यमों की अलग-अलग प्रभावोत्पादकता का और देश में एक समान प्रचार संगठन होने की जरूरत का ध्यान रखा गया है और इनका अभिप्राय यह है कि राज्य सरकारो से सहयोग बढ़ाते हुए तथा गैर-सरकारी संस्थाओं का सहयोग प्राप्त करते हुए जगह-जगह काम करके दूसरी योजना का संगठित रूप से कारगर प्रचार किया जाए । इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत देश भर में बहुत-से सूचना केन्द्र खोलने, योजना के विभिन्न पहलुओ पर साहित्य प्रस्तुत करने, फिल्मों, दृश्य-श्रव्य साधनों की व्यवस्था करने, जगह-जगह प्रचार करने के लिए गाडियों का प्रबन्ध करने तथा प्रदर्शनियों, पचायती रेडियो सेटों और पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओ की व्यवस्था करने का प्रबन्ध है ।

३९. सूचना केन्द्र राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों तथा जिला प्रधानालयों में स्थापित किए जाएंगे । इन केन्द्रो में प्रचार साहित्य, फिल्म एवं अन्य दृश्य-श्रव्य साधनो का संग्रह रहेगा । धीरे-धीरे इनमें ऐसा यथेष्ट प्रबन्ध भी कर दिया जाएगा कि योजना सम्बन्धी पूछताछ का उत्तर दिया जा सके । केन्द्र और राज्य सरकारों के साधन मिलाकर ग्राम क्षेत्रों में प्रचार के लिए दृश्य-श्रव्य साधनयुक्त मोटर गाड़ियों की वर्तमान संख्या बढ़ा दी जाएगी ।

ग्राम क्षेत्रों में घूम-घूमकर प्रदर्शनियां दिखाने वाली चल प्रचार गाड़ियां भी चला दी जाएंगी। दूसरी योजना की अवधि में, १,००० से अधिक जनसंख्या वाले गांवों से शुरू करते हुए, कोई ७२,००० गावों म पचायती रेडियो भेजने का विचार है।

४०. फिल्म के माध्यम से प्रचार पर खासा जोर दिया जाएगा। इनमें वृत्तचित्र, कथाचित्र और व्यग्यचित्र भी शामिल होगे। इनके लिए योजना में २ २ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। कक्षाओं में दिखाने योग्य और अन्य प्रकार की शिक्षात्मक फिल्में बनाना शुरू किया जा रहा है। गैर-सरकारी सगठनों और शिक्षालयों को फिल्मे दिखाने की सुविधाए अधिकाधिक दी जाएगी और बच्चो के लिए फिल्मे बनाने पर खास ध्यान दिया जाएगा। गान और नृत्य मंडलियां भी सगठित की जाएंगी। हिन्दी और अंग्रेजी के टेलीप्रिंटरो की व्यवस्था और दूर-दूर तक की जाएगी ताकि छोटे-छोटे अखबारों और अलग-अलग स्थानों को भी समाचार जल्दी से पहुंच सके। जनता को अच्छी नागरिकता का ज्ञान देने, उसके सामने नीति और नीतिपालन सम्बन्धी महत्वपूर्ण बातें रखने तथा रचनात्मक आलोचना करने मे अखबारो का बड़ा हाथ रहेगा। प्रचार के कार्यक्रम में अखबारों का सहयोग और सहायता इसीलिए विशेष रूप से अपेक्षित समझी जा रही है।

४१. योजना सम्बन्धी साहित्य तैयार करने में सूचना और प्रसारण मत्रालय मुख्यत: हिन्दी और अंग्रेजी मे, तथा थोड़ा-बहुत प्रादेशिक भाषाओ में भी प्रकाशन करेगा; प्रादेशिक भाषाओं के संस्करणों के प्रकाशन का भार वह धीरे-धीरे राज्यों पर डालता जाएगा। एक ऐसे पत्र की आवश्यकता अनुभव की गई है जो दूसरी पचवर्षीय योजना का सन्देश, उसके उद्देश्यो और आदर्शों का अर्थ देश के गाव-गांव मे फैला सके और राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सलग्न सरकारी और गैर-सरकारी कार्यकर्ताओं, सहकारिता सस्थाओं, स्वेच्छा कार्य सगठनों तथा पंचायतो तक पहुंच सके। इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए "योजना" नामक एक बहुप्रचारित नया पत्र निकालने का विचार है।

अध्याय ७

जिलों में विकास प्रशासन

हाल में की गई कार्रवाइयां

भारत में सदा से जिला, प्रशासन के गठन का आधार रहा है। जब से हमने अपना लक्ष्य कल्याणकारी राज्य की स्थापना बिना लिया है, तब से जिले के प्रशासन में विकास कार्यों पर बहुत अधिक बल दिया जाने लगा है। विकास कार्यक्रम बनाकर उन्हे जिले मे पूरा करने के लिए हर स्तर पर जनता के सर्वोत्तम नेताओ का सहयोग और समर्थन प्राप्त करते जाने का महत्व बहुत अधिक होता है। जिलों में अब तक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यों की जिस प्रकार प्रगति हुई है, गाव पंचायतों की जितनी सख्या बढ़ी है, और विकास कार्यक्रमों मे भाग लेने के अवसरों से लाभ उठाने के लिए जनता जैसी उत्सुकता दिखलाने लगी है, उस सबसे इस तथ्य की पुष्टि होती है।

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना में जिलो के कार्यक्रम पूरा करने की समस्याओं पर विचार करके बहुत-सी सिफारिशें की गई थी। अब इस अध्याय मे यह विचार किया जाएगा कि विगत तीन या चार वर्षों में उन सिफारिशो पर क्या कार्रवाई की गई और द्वितीय पचवर्षीय योजना मे जो काम उठाए जाएंगे, उनकी दृष्टि से जिला कार्यक्रमो की पूर्ति के लिए बनाए गए संगठन को और अधिक बलशाली किस प्रकार बनाया जा सकता है। जैसा कि प्रथम पचवर्षीय योजना मे बतलाया गया था, जिले के प्रशासन का पुनर्गठन करते हुए उपयुक्त कार्यकर्ताओ की तलाश करने और प्रशासन के गठन को लोकतन्त्री पद्धति के अनुसार ढालने के अतिरिक्त इन आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना होगा :

१. गांवों में विकास का कार्य करने के लिए ऐसे उपयुक्त संगठन की स्थापना करना, जिसे कि अपने अधिकार देहाती जनता से ही प्राप्त हों,

२. जिले के विभिन्न विकास विभागों के कार्यो मे सामंजस्य रखना और एक सामान्य विस्तार संगठन की स्थापना करना;

३. स्थानीय स्वशासन संस्थाओं और राज्य सरकार के प्रशासन विभागों मे ऐसा सम्बन्ध स्थापित करना कि वे विकास के सब कार्य मिलकर किया करें;

४. जिले के विकास कार्यक्रमों में प्रादेशिक समन्वय और निरीक्षण की व्यवस्था करना, और

५. सामान्य प्रशासन के संगठन को सुधारना और अधिक समर्थ बनाना।

इन सब कार्यो का महत्व द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए और भी अधिक है।

३. साधारण प्रशासन के संगठन को सुधारने और अधिक मजबूत बनाने का कार्य राज्य के मुख्यालयों में तो होना ही चाहिए, साथ ही अन्य स्तरों पर भी किया जाना चाहिए। मुख्यालयों में समन्वय का कार्य, जिन सचिवों के सुपुर्द विकास के विभिन्न विभाग हों, उनकी अन्तर्विभागीय समिति संगठित करके किया जा सकता है। समिति का अध्यक्ष राज्य का मुख्य सचिव अथवा योजना विभाग का सचिव होता है। साधारणतया योजना के विभिन्न कार्यों में समन्वय रखने और

जिलों के कार्यक्रम पूरा करवाने के काम, एक ही अधिकारी के सुपुर्द रहते है, और उसे "डिवेलपमेंट कमिश्नर" अर्थात विकास आयुक्त कहते है, और राज्य के मन्त्रिमण्डल की एक समिति, मुख्य मन्त्री के अधीन रह कर, सर्वोपरि मार्ग-दर्शन और निदेशन का कार्य करती है। अधिकतर राज्यो मे राज्य योजना मण्डलों का सगठन भी किया जा चुका है और उनमें प्रमुख गैर-सरकारी व्यक्ति भी रखे गए हैं।

४. प्रथम पचवर्षीय योजना आरम्भ होने के समय कुछ राज्यों मे, विशेषत: हाल मे नवगठित राज्यों में, पर्याप्त योग्य प्रशासन कर्मचारियों की कमी थी। यह कमी तो अब पूरी हो चुकी है, परन्तु कुछ छोटे राज्यों को दूसरे राज्यों से कुछ समय के लिए अनुभवी अधिकारी उधार लेने मे कठिनाई का सामना करना पड़ता है। बिहार, राजस्थान और हैदराबाद आदि जिन राज्यों ने जमींदारी या जागीरदारी प्रथा का अन्त कर दिया है, वे विभिन्न स्तरों पर प्रशासन का आवश्यक संगठन् करने के उपाय कर रहे हैं।

५. विगत कुछ वर्षों में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम चलाने, जिले के विकास कार्यो को राष्ट्रीय विस्तार के नमूने पर गठित करने और गांव पंचायतो का विकास करने आदि के जो उपाय किए गए है उनसे ज्ञात हुआ है कि जिलों मे लोकतन्त्री संस्थाओ का विकास और भी द्रुत गति से करने की आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में बहुत समय से एक कमी चली आ रही है जिसे दूर करने की आवश्यकता है। प्रत्येक क्षेत्र में यथाशीघ्र ऐसी समर्थ संस्थाओं का सगठन कर देने की आवश्यकता है जो अपने यहां की जनता को इस योग्य बना दें कि वह अपने राज्य और समूचे राष्ट्र की व्यापक विकास कल्पना के अन्तर्गत अपने साधनों का विकास करने और अपनी स्थानीय समस्याओ को हल करने का प्रधान उत्तरदायित्व स्वय उठा ले।

६. योजना और राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के कारण जिलों के शासनों की जिम्मेदारी बढ गई है। राज्यों के विकास विभागों ने राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमो की पूर्ति के लिए जिलो मे जो अतिरिक्त कर्मचारी नियुक्त किए है, उनसे जिलो के प्रशासन की भी शक्ति बढी है। इसके विपरीत, विभिन्न शाखाओ के कार्य का निरीक्षण करने का काम बढ़ जाने तथा उसके अधिक पेचीदा हो जाने के कारण जिला कलक्टर के समय और सामर्थ्य पर पहले से अधिक बोझ पडने लगा है। कृषि की उन्नति करने के बडे-बड़े कार्यक्रम, सहकारिता आन्दोलन का विस्तार और सुधार, देहाती और लघु उद्योगों को बढावा देना, और नागरिक क्षेत्रों का विकास करना आदि ऐसी नई जिम्मेदारिया है जिन्हें निभाने के लिए जिला कलक्टरों को खास तैयारी करनी पड़ेगी। स्पष्ट है कि प्रशासन की विभिन्न शाखाओ को इन सब कामों में पहले से कहीं अधिक भाग लेना पड़ेगा। जनता भी विभिन्न कार्यक्रमों में अधिक भाग लेना चाहती है। कई राज्यो मे नई आवश्यकताएं पूरी करने मे जिलों के कलक्टरों और पदाधिकारियो की सहायता करने के लिए, अतिरिक्त कलक्टर और जिला विकास या योजना अधिकारी नियुक्त करके उनको अधिक अधिकार दे दिए गए है। कलक्टर, सब-डिविज़नल अफसर और ब्लाक डिवेलपमेण्ट अफसर, विशेषज्ञों के दल के नेता का काम देते है और उनको मार्ग दिखलाकर उनके काम में समन्वय रखते है। कई राज्यों में सब-डिविज़नो की संख्या या तो बढ़ा दी गई है या नए सब-डिविज़न बनाने के लिए निर्धारित कार्यक्रम पर चला जा रहा है। शेष सब राज्यों में भी कार्य इसी प्रकार किया जाना चाहिए, क्योंकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं का कार्य सारे देश में फैला देनें का निश्चय किया जा चुका है।

ग्रामों की योजनाएं और ग्राम पंचायतें

७. राज्यों मे प्रथम पंचवर्षीय योजना प्रायः राज्यों के मुख्यालयों में तैयार की गई थी। बाद मे राज्य योजनाओं को जिला योजनाओं में विभक्त करने का यत्न किया गया। जब राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास क्षेत्रो मे कार्यक्रम गावों तक पहुंच गए और उन्हें ग्रामीण जनता की सहायता से कार्यान्वित किया जाने लगा, तब अनुभव हुआ कि ग्रामों की योजना बनाने का महत्व कितना अधिक है। स्थानीय विकास कार्यक्रम तैयार करते हुए यह बात स्थानीय जनता पर ही छोड दी जाती है कि वह स्वयं ऐसे कार्य सुझावे जिन्हे वह सरकार की सहायता लेकर अपने ही श्रम से पूरा कर सके। यह माना जा चुका है कि जब तक देहातों के विकास की योजना सारी बस्ती का ध्यान रखकर व्यापक रूप में नही बनाई जाएगी, तब तक पट्टेदार खेतिहर मजदूर और कारीगर आदि समाज के निर्बल लोगों को सरकार द्वारा दी हुई सहायता का पूरा लाभ नही मिलेगा। राष्ट्रीय विस्तार आन्दोलन का लक्ष्य गाव के प्रत्येक परिवार तक पहुंचने का है। जैसा कि प्रथम पचवर्षीय योजना में बतलाया गया था, इस लक्ष्य की पूर्ति तब तक नही हो सकती, जब तक कि गाव मे वहां की सारी बस्ती का प्रतिनिधित्व करने वाली कोई ऐसी संस्था न हो जो कि गाव के साधनो का विकास करने की जिम्मेदारी अपने सिर पर लेने और उसमे पहल करने और नेतृत्व करने के लिए तैयार न हो। साराश यह है कि गावों की उन्नति पूर्णतया गाव के ही ऐसे सक्रिय सगठन पर निर्भर करती है जो कि गाव के सब लोगों को—ऊपर-निर्दिष्ट निर्बल लोगों को भी—एक सयुक्त कार्यक्रम मे लगा सके और सरकार की सहायता से उसे पूरा कर सके।

८. द्वितीय पंचवर्षीय योजना को तैयार करते हुए इन सब विचारों को ध्यान में रखा गया है। १९५४ के आरम्भ में राज्य सरकारो से कहा गया था कि वे अकेले-अकेले ग्रामो और तहसील, ताल्लुका, विकास खण्ड आदि ग्राम-समूहों के लिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना बनाने की तैयारी करे। उसके लिए आवश्यक था कि योजनाएं बनाने के लिए स्थानीय सूझ-बूझ को और उन्हें पूरा करने के लिए स्थानीय प्रयत्न और साधनों को यथासम्भव अधिकतम बढावा दिया जाए। इससे योजनाओं को स्थानीय आवश्यकताओ और परिस्थितियों के साथ संगत करने और उनकी पूर्ति के लिए जनता का सहयोग, स्वेच्छा प्रयत्न और दान प्राप्त करने मे सहायता मिलेगी। गांवों की योजनाओं का सम्बन्ध मुख्यतया खेती की पैदावार के साथ, और उससे मिलते-जुलते सहकारिता, ग्रामोद्योग, परिवहन और स्थानीय महत्व के अन्य कार्यक्रमो के साथ है। इन सुझावों पर अमल किया गया और सब राज्यों में गावों और जिलों की योजनाएं तैयार करके, उन्हें ही राज्य सरकारों द्वारा पेश की गई योजनाओं का आधार बनाया गया।

९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करने के लिए जो मार्ग अपनाया गया उससे ग्रामीण जनता और विकास कार्य से सम्बद्ध ग्रामीण अधिकारियो दोनों को मूल्यवान प्रशिक्षण का अवसर मिला। यह अनुभव किया गया है कि यदि ग्रामीण संस्थाओ का आधार दृढ़ न किया गया और स्थानीय कार्यक्रम पूरा करने के उत्तरदायित्व का एक बड़ा भाग उनके सुपुर्द न किया गया तो राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों मे जिला प्रशासन के जिस ढाचे की कल्पना की गई है वह अधूरा ही रह जाएगा। गावों में विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए तदर्थ विशेष संगठन बना देने से जो अनुभव मिला, उससे भी इसी विचार की पुष्टि हुई। गांव पंचायतों का ठीक प्रकार से विकास करने का महत्व कई अन्य कारणों से भी बहुत अधिक है। आबादी की वृद्धि, भूमि सुधार,

शहरों का विस्तार, शिक्षा का प्रसार, उत्पादन और परिवहन में सुधार आदि नई प्रगतियों के प्रभाव से ग्रामीण समाज बहुत जल्दी-जल्दी बदलता जा रहा है। ग्राम पंचायतें, सहकारिता समितियों के साथ मिलकर, देहातों के समाज को संगठित करके एक बनाने और वहां नए प्रकार के नेता उत्पन्न करने में सहायक हो सकती है। वे देहाती लोगों को समझा सकती है कि सब काम सारी जनता के हितों का, विशेषत: इस समय अनेक प्रकार की रुकावटों के कारण पिछड़े हुए लोगों की आवश्यकताओ का ध्यान रखकर करने चाहिएं।

१०. एक लक्ष्य यह रखा गया है कि प्रत्येक गांव में कानून-सम्मत पंचायत की स्थापना हो जाए, विशेषत: उन इलाकों में जिन्हें राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्य करने के लिए चुना गया है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय गांव पंचायतों की संख्या ८३,०८७ से बढ़कर १,१७,५६३ हो चुकी है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए अब तक जो कार्यक्रम बनाया गया है उसके अनुसार १९६०-६१ तक गांव पचायतों की संख्या बढ़कर २,४४,५६४ हो जाएगी। भारत भर में गावों की सीमाओं का भी पुनर्गठन करने की आवश्यकता है, जिससे कि गावो की ऐसी इकाइयां बन जाएं जो अच्छी, सजीव, काम करने वाली और चुस्त गांव पंचायतों से सम्पन्न हों। इस समय भारत में ५०० या इससे कम आबादी के गावों की संख्या ३,८०,०२० है। ७ करोड़ ८० लाख से अधिक, अथवा देहाती आबादी के २७ प्रतिशत लोग, इन्हीं गांवों में रहते है। ५०० और १,००० के बीच की आबादी के गांवों की संख्या १,०४,२६८ है। लगभग ७ करोड़ ३० लाख, अथवा देहाती आबादी के २५ प्रतिशत से अधिक लोग, इन गावो में बसे हुए है। इस प्रकार, आधे से अधिक देहाती लोग १,००० से कम आबादी के गावों मे आबाद है। इन गावो का एक भाग पहाडी है, उनकी आबादी इतनी छितरी है कि वहां कई-कई गावों के समूह बनाना सरल नही होगा। अन्य क्षेत्रों में, वर्तमान कई-कई गांवो को मिलाकर, लगभग एक-एक हजार की आबादी की इकाइयों में संगठित कर देने का सुझाव विचार करने के योग्य है। आवश्यकता इस बात की है कि गाव इतने छोटे तो हो कि उनमें एकता की भावना रहे, परन्तु इतने छोटे भी न हो कि उनके लिए कार्यकर्ताओं और अन्य आवश्यक सेवाओ का प्रबन्ध न किया जा सके। १९५४ मे स्थानीय स्वायत्त शासन मन्त्रियों के द्वितीय सम्मेलन ने सिफारिश की थी कि जो गाव इतने बड़े न हों कि उनमें स्वतन्त्र पचायतें बनाई जा सकें, उनमे कई-कई गांवो को मिलाकर १,००० से १,५०० तक की आबादी के लिए एक-एक पंचायत बनाई जा सकती है। यह सिफारिश एक हद तक उपयोगी है, परन्तु वास्तविक समस्या गांवो की सुविधाजनक इकाइयां बनाने की है।

११. गांवों में विकास कार्यक्रमों का संगठन पंचायतें भली प्रकार कर सकें, इस प्रयोजन से प्रथम पंचवर्षीय योजना में सिफारिश की गई थी कि गांवो में उत्पादन बढ़ाने और जमीनों तथा साधनों का विकास करने के कुछ काम, कानून बनाकर, पंचायतों के सुपुर्द कर देने चाहिएं। हाल में इस सिफारिश पर और भी विचार किया गया था। तब पंचायतों के काम को मोटी दृष्टि से दो भागों में बाटा गया, शासन के काम और न्याय के काम। शासन के कामों के सुगमता से चार विभाग किए जा सकते है: (१) नागरिक, (२) विकास सम्बन्धी, (३) जमीन का बन्दोबस्त, और (४) भूमि सुधार। पचायतो के नागरिकता सम्बन्धी कर्तव्य, विभिन्न राज्यों मे कानून द्वारा निर्धारित किए जा चुके है, और वे सब जगह बहुत कुछ एक-से है। उनमें इस प्रकार के काम सम्मिलित है: जैसे कि गांव की सफाई, जन्म और मृत्यु का हिसाब रखना, गाव में चौकीदारी का प्रबन्ध करना, गाओं में गलियां बनाना, उन्हें ठीक रखना और उनमें रोशनी करना आदि।

१२. पंचायतों के विकास सम्बन्धी कर्तव्यो की परिगणना कुछ इस प्रकार की जा सकती है :

(१) गांवो में उत्पादन कार्यक्रम बनाना;

(२) सहकारिता सस्थाओ की सहायता से गाव की आवश्यकताओं का ब्योरा तैयार करना और कार्यक्रमो को पूरा करने के लिए वित्तीय व्यवस्था का बजट तैयार करना,

(३) गाव को अधिकाधिक मात्रा मे सरकारी सहायता दिलाने के साधन के रूप में कार्य करना,

(४) पड़ती जमीनों, जगलों, आबादियो, तालाबों आदि गाव की सामान्य जगहो को सुधारने का और भूमि के सरक्षण का प्रबन्ध करना,

(५) गाव की पंचायती इमारते, कुएं, तालाब और सड़के आदि बनाना, उनकी मरम्मत करना और उन्हे ठीक रखना,

(६) सब कामों में परस्पर सहायता और सम्मिलित प्रयत्न का संगठन करना,

(७) सहकारिता समितियों को बढ़ावा देना,

(८) पचायती कामों के लिए श्रमदान का आयोजन करना,

(९) लोगो को अल्प बचत करना सिखलाना; और

(१०) पशुओं की नस्ल सुधारना ।

१३ गावों की, जमीन के प्रबन्ध और भूमि सुधार को क्रियाविन्त करने के सम्बन्ध में पंचायतो के कर्तव्य उन बातों से सम्बद्ध है जिनके आधार पर भारत के देहातो का पुर्ननिर्माण करने का विचार है। इनकी विस्तार से चर्चा अध्याय ९ मे की गई है। पचायतो के भूमि प्रबन्ध सम्बन्धी मोटे-मोटे काम ये है :

(१) पडती जमीनों, जगलों, आबादी की जगहों और तालाबों आदि सामान्य स्थानों के प्रयोग के नियम बनाना;

(२) चकबन्दी के समय अथवा अन्य अवसरों पर गाव के सब लोगो के लाभ के लिए पृथक रखी गई जमीनो मे खेती का प्रबन्ध करना;

(३) अच्छे प्रबन्ध और अच्छी खेती के प्रतिमानों को, स्थानीय अवस्थाओं के अनुसार, बदलकर उन्हें अपने यहां लागू करना; और

(४) भूमि सम्बन्धी लेखा रखने के काम के साथ सहयोग करना ।

पचायतो के भूमि सुधार सम्बन्धी कर्तव्य उन कानूनो पर आधारित होंगे जो कि उनके राज्य मे बनाए जाएगे । मोटे हिसाब से, गांव पचायतों को इस प्रकार के कार्यों मे योग देना होगा :

(१) निजी खेती करने के लिए जमीदार द्वारा जमीन पर पुन: अधिकार कर लेने के अधिकार का प्रयोग करने पर जमीन में मालिकों और काश्तकारों के भागों का निश्चय करना,

(२) खेती की भूमि की अधिकतम सीमा का नियम लागू होने पर अवशिष्ट भूमि के परिमाण का निश्चय करना, और

(३) अधिकतम सीमा का नियम लागू हो चुकने पर शेष भूमि का पुनर्वितरण ।

कई राज्यों में गांव पंचायतें चकबन्दी के काम में पहले से ही योग दे रही हैं ।

१४. पंचायतो के न्याय सम्बन्धी कर्तव्य इस प्रकार के है :

(१) दीवानी और फौजदारी मुकदमो का फैसला करना;

(२) कृषि मजदूरों को न्यूनतम मजूरी दिलवाना; और

(३) भूमि सम्बन्धी छोटे-छोटे झगड़ों को निबटाना ।

इन कर्तव्यो के पालन को सरल बनाने के लिए राज्यों में साधारणतया न्याय पचायतो का पृथक संगठन करके उनका अधिकार क्षेत्र कई-कई गावों तक सीमित कर दिया जाता है।

१५. प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह मान लिया गया था कि पंचायतों का संगठन चुनाव की जिस पद्धति से किया जाएगा उसमें सम्भव है कि गांव के पुर्ननिर्माण के लिए अच्छे किसानों, सहकारिता के कार्यकर्ताओं और समाजसेवकों आदि जिस प्रकार के व्यक्तियों की आवश्यकता होती है, वे सदा पर्याप्त संख्या मे न चुने जा सके। इसी प्रकार, ऐसा भी हो सकता है कि आबादी के निर्बल भागों के, विशेषतः भूमि-हीन लोगों के, प्रतिनिधि पंचायत में न पहुंचने पावें। इन त्रुटियों के प्रतिकार के रूप में प्रथम पंचवर्षीय योजना मे अतिरिक्त सदस्यों को नामजद कर देने का जो उपाय सुझाया गया था वह भी दोष-रहित नहीं है। इसलिए गाव पचायतों को एक सीमित संख्या मे कुछ सदस्य अपने मे सम्मिलित कर लेने का अधिकार दे देना उचित जान पड़ता है। यह सख्या छोटी पचायतो के लिए दो या तीन, और बडी पंचायतों के लिए अपनी सदस्य संख्या के पांचवें भाग तक निश्चित की जा सकती है। गाव की प्रमुख सहकारिता समिति के प्रतिनिधि को भी पंचायत का सदस्य होने का अधिकार दिया जा सकता है। कुछ राज्यो के पचायत कानूनों मे हरिजनों और अन्य पिछड़े वर्गो के लिए पचायत में कुछ स्थान सुरक्षित कर देने का नियम बना दिया गया है। पचायत कानून पर अमल करते हुए इस बात का विशष ध्यान रखने की आवश्यकता है कि चुनाव मे देहाती आबादी के निर्बल भागों के प्रतिनिधि अवश्य चुने जाए।

१६. एक बार अच्छी तरह काम आरम्भ कर देने पर गांव पंचायत सरीखी संस्था को शीघ्र ही वित्त की कठिन समस्या का सामना करना पड़ेगा। अधिकतर राज्यों के पंचायत कानूनों में पंचायतों को अपनी आमदनी के लिए रोजगारों या पेशो और सम्पत्ति पर कर लगाने, लाइसेन्सों की फीस वसूल करने, जुर्माने करने और चौकीदारी कर लगाने आदि के अधिकार दे दिए गए है। परन्तु प्राय. सर्वत्र ही इनसे कोई अधिक आमदनी नही होती। अधिकतर पचायतों को आमदनी के लिए राज्य सरकारो द्वारा दी हुई तीन प्रकार की सहायता का सहारा लेना पड़ता है। इनमे से प्रथम है लगान के एक अंश का अनुदान। द्वितीय यह है कि पंचायत लगान एकत्र करे और इस लगान के एकत्र करने के लिए जो वसूली रकम गांव के मुखिया को मिलती थी वह पंचायत को मिले। परन्तु इसके उदाहरण अभी अधिक नही मिलते। तृतीय सूत्र है सामान्य भूमियों और तालाबो आदि की आय का उपयोग कर लेने का अधिकार। पंजाब में और अन्य एक-दो राज्यो में चकबन्दी करते समय, आपसी समझौते से जमीन का कुछ भाग गाव की बस्ती को दे दिया जाता है, जिससे कि उसकी आमदनी का उपयोग सबके लाभ के लिए किया जा सके। कई राज्यों में लगान का एक भाग अनुदान के रूप मे पचायतों को दे दिया जाता है। यह भाग विभिन्न राज्यों में १० से १५ प्रतिशत से लेकर ३० प्रतिशत तक है। उचित तो यह है कि प्रत्येक गांव में लगान का एक निश्चित अनुपात स्थानीय विकास के लिए पंचायत के नाम पृथक रख दिया जाए। यह राशि मूल कोश का काम देगी, और इसे पचायत अपने यहां के लोगों के श्रमदान तथा सम्पत्तिदान आदि द्वारा बढ़ा सकेगी। हमारा सुझाव

तो यह है कि राज्य सरकारें पंचायतों को अनुदान दो भागों में बाट कर देने पर विचार करें। पहला भाग तो उन्हे लगान का १५ या २० प्रतिशत अनुदान के रूप मे दिया जाए, और दूसरा भाग लगान के १५ प्रतिशत तक अतिरिक्त अनुदान के रूप में इस शर्त पर दिया जाए कि पंचायत उतनी ही राशि करों द्वारा अथवा दान आदि द्वारा स्वय एकत्र कर ले। राज्य सरकारों को आय के ऐसे साधन ढूढ़ने मे भी पंचायतो की सहायता करनी चाहिए जिनसे पचायतों को बार-बार धन प्राप्त हो सके।

१७. राज्य सरकारें और जिला अधिकारी जो कार्यक्रम बनावें, उनके व्यय में पंचायतें श्रमदान द्वारा अथवा अन्य प्रकार क्या योग दे सकती है, इसका निश्चय उन्हें स्वयं कर लेना चाहिए। उनका सीधा सम्बन्ध तो गाव की आरम्भिक सेवाओं और उनके लिए आवश्यक न्यूनतम कर्मचारी रखने के व्यय के साथ ही है। इस प्रकार की जो जिम्मेदारियां पंचायतों के सुपुर्द की जाएंगी, वे क्रमश. बढती ही जाएंगी। इसीलिए कई स्थानों पर तो पंचायतो के लिए पूरे समय के सेक्रेटरी नियुक्त कर दिए गए है, और कई जगह केवल कुछ समय के कार्यकर्ता रखने से काम चल गया है। सब जगह किसी एक निश्चित मार्ग पर चलना आवश्यक नही, परन्तु विभिन्न राज्यो मे विभिन्न स्थानों पर गाव पंचायतो के कर्मचारियों को सहायता पहुचाने के लिए जो उपाय किए जा रहे हैं उन्हें ध्यानपूर्वक देखकर परिस्थिति के अनुसार जहा जो ठीक जान पड़े वहां उसे अपना लेना चाहिए। पंचायतों के कार्यकर्ताओ को भली प्रकार प्रशिक्षित भी कर देना चाहिए।

१८. ज्यों-ज्यो राष्ट्रीय विस्तार आन्दोलन का प्रसार होता जाए, त्यों-त्यों गाव पंचायतो के काम का सामंजस्य विकास क्षेत्रों के कार्यक्रमो के साथ करते जाना चाहिए। पंचायतों के करने के काम दो प्रकार के रहेगे : एक तो वे जिन्हे राज्य सरकारे अपने विस्तार कार्यकर्ताओं द्वारा अथवा जिला बोर्ड अपने अधीन संगठनों द्वारा आरम्भ कराएगे; और दूसरे वे जिन्हे गाव के लोग स्वयं अपने श्रमदान, सम्पत्तिदान अथवा अन्य साधनों की सहायता से आरम्भ करेंगे। पहली प्रकार के कार्यो के व्यय मे गाव के लोगों को केवल श्रमदान करके हिस्सा बंटाना पड़ेगा। काम तो दोनों ही प्रकार के महत्वपूर्ण है, और गांव पचायतों का उपयोग भी विकास कार्यक्रमों को पूरा करने मे जहां कही सम्भव हो वहा करना चाहिए, परन्तु पंचायत सस्था की सफलता की एक बड़ी कसौटी यह है कि पहली प्रकार के कामों की तुलना में उसने दूसरी प्रकार के कितने काम किए। पचायत की वास्तविक उपयोगिता इस बात में है कि वह देहाती जनता को कार्य मे प्रवृत्त होने के लिए कितना प्रेरित कर सकती है। दूसरी ओर, यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जहा कही गाव पचायतें, सिचाई, भूमि के विकास और भूमि के संरक्षण आदि के छोटे-मोटे काम आरम्भ करे, वहा उन्हे उतनी सहायता तो दे ही देनी चाहिए जितनी कि विभिन्न कार्यों के लिए साधारणतया व्यक्तियों को दे दी जाती है। साराश यह है कि स्थानीय आबादियों को स्वयं मिल-जुल कर यथासम्भव अधिकतम काम करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

जिला योजनाएं

१९. जब कोई योजना राष्ट्रीय पैमाने पर बनाई जाती है, तब साथ ही यह भी ध्यानपूर्वक देख लेना होता है कि किन-किन कामों को राष्ट्र, राज्यों और जिला योजनाओं का भाग बना देना चाहिए। यह देखते हुए जिन बातो का विचार करना होता है उनमें से कुछ ये है :

(१) आवश्यक प्रौद्योगिक और प्रशासनिक साधनों की सहायता से किस काम को कौन-से स्तर पर आरम्भ किया जाए;

(२) किसी काम का सम्बन्ध किसी क्षेत्र-विशेष के साथ है या अधिक व्यापक प्रदेश के साथ, ताकि उसे अनेक स्थानों से सम्बद्ध बड़ी योजना का भाग बनाया जा सके, और

(३) किसी कार्यक्रम को पूरा करते हुए अथवा उसका क्षेत्र और प्रभाव बढाते हुए, जनता के कितने सहयोग और सहायता की आवश्यकता पड़ेगी ।

इन बातों का विचार करके केन्द्रीय सरकार को रेलों, देशव्यापी बड़ी-बड़ी सड़कों और बड़े-बड़े उद्योगों के विकास का और विभिन्न क्षेत्रो में सिचाई, बिजली और छोटे-बड़े उद्योगो आदि के विकास में सामंजस्य रखने का प्रधान उत्तरदायित्व अपने सिर लेना पड़ता है । कई कार्य ऐसे है जिनका आयोजन राज्य सरकारें अधिक अच्छी प्रकार कर सकती है—जैसे कि सिंचाई और बिजली की मध्यम योजनाएं, सड़क परिवहन सेवाएं और सिंचाई के छोटे-मोटे कार्यक्रम तैयार करने के लिए सर्वेक्षण का काम आदि । जिलों और गावों की योजनाएं राज्यो की योजनाओं मे खपनी चाहिएं । उधर राज्यो को अपनी योजनाएं बनाते हुए समस्त देश की दृष्टि से बनाई गई योजना का ध्यान रखकर चलना पड़ता है ।

२०. द्वितीय पंचवर्षीय योजना तैयार करते हुए इस बात पर सबकी सहमति हो गई थी कि जो कार्यक्रम राज्य सरकारो अथवा स्थानीय सस्थाओ अथवा राज्यों में स्थापित किए हुए विशेष मण्डलों द्वारा पूरे किए जाएंगे, उन सबको जहा तक सम्भव होगा वहा तक राज्यों की ही योजनाओ मे सम्मिलित किया जाएगा । केवल इस कारण से कि किसी कार्यक्रम की पूर्ति के लिए सब या कुछ साधन केन्द्रीय सरकार द्वारा अथवा उसकी बनाई हुई विभिन्न एजेन्सियों द्वारा दिए गए है, उस कार्यक्रम को राज्यों की योजनाओं मे सम्मिलित करने का सिद्धान्त बदल नही जाता । यह मार्ग इसलिए अपनाया गया कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना की तैयारी का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू यह था कि बहुत-सी योजनाएं राज्य से निम्न स्तरों पर, अर्थात ग्रामो, नगरों, ताल्लुकों, तहसीलों अथवा राष्ट्रीय विस्तार खण्डों और जिलो में बनेगी । यह मान लिया गया था कि जन-प्रतिनिधि संस्थाओं द्वारा प्रस्तावित तीन प्रकार के कार्यक्रमों को जिलों और राज्यों की योजनाओं में सम्मिलित कर लिया जाएगा, अर्थात —

(क) उन कार्यक्रमों को जो कि ताल्लुके, जिले या राज्य द्वारा प्रस्तुत किए जाएगे;

(ख) उन कार्यक्रमों को जो कि इससे भी निम्न स्तर पर प्रस्तुत किए गए होंगे, परन्तु जो संख्या (क) के कार्यक्रमों का अंग बनाए जा चुके होगे; और

(ग) उन कार्यक्रमों को जो कि प्रस्तुत तो ऊपर से किए गए होगे, परन्तु जो संख्या (क) मे उल्लिखित कार्यक्रमों का भाग बन चुके होंगे; उदाहरणार्थ, वे योजनाएं जिन्हें तैयार तो केन्द्रीय सरकार ने किया, परन्तु जो कार्यान्वित की गईं राज्य सरकारों द्वारा, अथवा वे योजनाएं जिन्हे तैयार तो किया किसी राज्य सरकार ने परन्तु कार्यान्वित किया गया किसी जिले में उपलब्ध साधनो द्वारा ।

२१. राज्यों की योजनाए दो प्रकार से तैयार की जाती है—एक तो उनमे दिखलाए हुए विकास के विभिन्न विभागों के अनुसार और दूसरे, विभिन्न अंचलों और जिलो के अनुसार । विभिन्न विभागों के कार्यक्रमों मे वे कार्यक्रम भी सम्मिलित रहते है जो कि सीधे राज्य सरकारों के महकमों द्वारा पूरे किए जाते है और वे भी, जो पूरे तो किए जाते हैं जिला अधिकारियों द्वारा, परन्तु जिनका समन्वय किया जाता है राज्य के मुख्यालय में । इस प्रकार जिलों की योजनाओं में ग्रामों, ग्राम

समूहो, ताल्लुकों, राष्ट्रीय विस्तार खण्डो और म्युनिसिपल क्षेत्रों आदि सीमित प्रदेशों के लिए बनाए गए कार्यक्रम रहेंगे जो राज्य सरकारों द्वारा बनाए जाकर, उनके महकमों की मार्फत, पूरे जिलों मे किए जाएंगे । जिला योजनाओ का वह भाग कई दृष्टियों से अधिक महत्वपूर्ण होता है जो कि जिलो में ही बनाया जाता है । उसमे सम्मिलित कार्यो की दृष्टि से तो वह महत्वपूर्ण होता ही है, इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होता है कि उसके प्रत्येक पग पर उसे पूरा करने में लोग स्वयं भाग लेते है, और उसके कारण उन्हें अपनी आवश्यकताओं का अन्दाजा लगाने और उन्हे स्वयं पूरा करने का अवसर मिलता है ।

२२. जिस प्रकार राज्य योजनाएं बनाते हुए जिला योजनाएं बनाना एक आवश्यक कदम होता है, उसी प्रकार राज्य योजनाओं पर अमल करते हुए उन्हें जिला योजनाओं मे विभक्त कर देना भी आवश्यक होता है । विशेष करके राज्य योजनाओ के विभिन्न खण्डों में जिन कार्यक्रमों अथवा आयोजनों की पूर्ति में स्थानीय सहयोग और जनता के श्रम से विशेष सहायता मिल सकती हो उनकी पृथक तालिका बनाकर ऐसा प्रकट करना चाहिए कि वे जिला योजनाओ के अंग है । जिन कार्यों की पूर्ति में सरकार द्वारा दिए हुए साधन केवल आरम्भिक साधनों के रूप मे रहकर उनकी वृद्धि प्रधानतया जनता के प्रयत्न और सहयोग से होती है, उन कार्यों को जिला योजनाओ का ही अंग समझना चाहिए । भविष्य मे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के आयोजनो को बहुत अधिक बढाने का विचार है । इससे योजना कार्यों में जिला योजनाएं तैयार करने का महत्व और भी बढ़ जाता है । द्वितीय पचवर्षीय योजना की समाप्ति तक ये आयोजन प्राय सारे देश की ग्राम जनता में फैल चुकेंगे । विभिन्न ग्राम समूहों और ताल्लुकों आदि को धीरे-धीरे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के अन्तर्गत ले आने का कार्यक्रम प्रत्येक राज्य का अपना-अपना होगा । जिले के किसी भाग मे किसी निश्चित दिन राष्ट्रीय विस्तार का कार्यक्रम आरम्भ हो चाहे न हो, जिला योजना जिले के सब भागों का ध्यान रखकर तैयार की जाएगी । इसलिए जिला योजना तैयार करते हुए जिले के जिन भागों मे राष्ट्रीय विस्तार का कार्य आरम्भ हो चुका है, उनके अतिरिक्त जिनमे यह कार्य शुरू नहीं हुआ, उनकी आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना होगा । इस प्रकार, जिला योजना लोक-मत को शिक्षित करने, जिले के विभिन्न कार्यक्रमो को एक सूत्र में बाधने, लोगों में उन्हे स्वयं पूरा करने का उत्साह भरने, एक-दूसरे की स्वेच्छा से सहायता करने और आप आगे बढ़ने की भावना उत्पन्न करने, और उन्ही मे से नए नेता तैयार करने का प्रभावशाली साधन सिद्ध होगी । इससे प्रत्येक जिले के लोगों को अवसर मिलेगा कि वे अपनी आवश्यकताओ और साधनों का अन्दाजा स्वयं लगावे और देखे कि कौन-से कामो में सक्रिय सहायता देने के लिए सरकार को तैयार किया जा सकता है, और उसके लिए वे आवश्यक प्रयत्न करें । इसके अतिरिक्त यदि जिला योजना का रूप प्रशासन और जनता के सम्मिलित प्रयत्न पर आधारित रहेगा, तो उसे पूरा करने के लिए दोनों की जिम्मेदारी स्पष्ट हो जाएगी ।

२३. जिला योजना के प्रधान अंग ये है :

(१) सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रम,

(२) समाज कल्याण के कार्य,

(३) कृषि उत्पादन के कार्यक्रम, और ग्राम विकास के क्षेत्र मे पशु पालन तथा भूमि संरक्षण आदि जैसे सम्बद्ध कार्य,

(४) सहकारिता का विकास,

(५) ग्राम पचायते,

(६) देहाती तथा अन्य छोटे उद्योग,

(७) सिचाई, बिजली, सचार, औद्योगिक विकास और प्रशिक्षण सुविधाओं के विस्तार के लिए राज्य योजनाओ द्वारा विकसित साधनों का प्रभावशाली ढग से उपयोग करने की योजनाएं,

(८) मकानों की व्यवस्था और नगरो का विकास करना;

(९) अल्प बचत कार्यक्रम,

(१०) निर्माण कार्यो मे श्रमिको के सहकारी सगठनो तथा श्रमदान द्वारा सहायता देना,

(११) पिछडे वर्गो के कल्याण के कार्यक्रम,

(१२) देहाती और शहरी इलाकों मे समाज सेवा के, विशेष करके आरम्भिक तथा माध्यमिक शिक्षा के विस्तार, स्वास्थ्य सेवा की इकाइया सगठित करने, स्वास्थ्य के नियमो के प्रचार, सफाई, मलेरिया नियन्त्रण और परिवार नियोजन आदि के कार्यक्रम;

(१३) रचनात्मक समाज सेवा के कार्यो मे लगे हुए स्वयसेवक सगठनों से काम लेना और उनकी सहायता करना,

(१४) भूमि सुधार,

(१५) नशाबन्दी और

(१६) राष्ट्रीय, राज्यीय, प्रादेशिक और स्थानीय विकास कार्यक्रमो के सम्बन्ध में लोगो की जानकारी बढाना ।

२४ ये सब कार्यक्रम अनेक सरकारी और गैर-सरकारी सगठनो की मार्फत पूरे किए जाएंगे और उनमे से कई एक में एक से अधिक सगठनो के बीच समन्वय रखने की आवश्यकता है। इस प्रकार सरकारी अधिकारियो और विभिन्न विकास विभागो के अधिकारियो के अतिरिक्त, प्रत्येक जिले में एक देहाती स्थानीय बोर्ड, बहुत-सी गाव पचायते और देहातो की अनेक म्युनिसिपैलिटियां भी रहेगी। आर्थिक हलचलो के केन्द्र के रूप मे कस्बो का महत्व शायद बढ जाएगा, और आचलिक विकास की योजनाओं पर विचार करते हुए शहरी और देहाती इलाको को मिलाकर विचार करना होगा। जिन इलाकों मे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम अधिक तीव्रता से चलाए जाएगे, उनमे योजना अथवा ग्राम समूह सलाहकार समितिया बना दी जाएगी, और उनमें ससद तथा राज्य विधानमण्डल के सदस्यो के अतिरिक्त, राज्य सरकार द्वारा कुछ गैर-सरकारी व्यक्तियो को भी नियुक्त किया जाएगा । जिले मे ऐसी बहुत-सी संस्थाओं के विद्यमान होने से, जिनके काम मे समन्वय जिला योजना के द्वारा किया जाएगा, इस सम्भावना की सूचना मिलती है कि जिलो के विकास साधनो का शायद पुनर्गठन करना पड़े ।

जिला विकास संगठन

२५. जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि मे राष्ट्रीय विस्तार व्यवस्था, जिलों के साधारण प्रशासन सगठन का ही भाग बन गई थी। प्राय. सब राज्यों

में जिला विकास अथवा योजना समितिया बना दी गई है, जो जिले मे विकास कार्यक्रम बनाने और उनको कार्यान्वित करने मे राज्य विधानमडल तथा संसद मे जिले के प्रतिनिधियो तथा जिला बोर्ड, मुख्य म्युनिसिपल संस्थाओं और प्रमुख गैर-सरकारी कार्यकर्ताओ के प्रतिनिधियो का सहयोग प्राप्त करती है । इन समितियो का मुख्य काम सलाह-मशविरा देने का ही है । कुल मिलाकर वे जनता से वह सहायता और सहयोग प्राप्त करने मे सफल नही हुई, जिसे जिले की योजना बनाने के विचार का आधार माना गया था । इन समितियो की मार्फत विकास कार्यो में जिला बोर्ड तथा अन्य स्थानीय निकायों का सहयोग प्राप्त करने का विशेष लाभ नही हुआ । प्रथम पचवर्षीय योजना में स्थानीय निकायो ने विकास के कार्यक्रमो में जो भाग लिया, उस पर विचार करके सुझाव दिया गया था कि साधारणतया नीति यह रहनी चाहिए कि उन्हे अपने क्षेत्र मे प्रशासन और समाज सेवा के काम की यथाशक्ति अधिकतम जिम्मेदारी अपने सिर लेने के लिए उत्साहित करके, उसका निर्वाह करने मे उनकी सहायता की जाए । यह भी बतलाया गया था कि विभिन्न क्षेत्रो के स्थानीय स्वायत्त शासन निकायो के काम का एक-दूसरे के साथ मेल बैठाने के लिए शायद आवश्यक व्यवस्था करनी पडे, उदाहरणार्थ, गाव पंचायतों और जिला अथवा सब-डिविजनल लोकल बोर्डो के काम का समन्वय करना पडे । यह भी सुझाया गया था कि इस प्रक्रिया का विकास स्वयं होने देने के साथ-साथ राज्य सरकारो को चाहिए कि वे विकास के क्षेत्र मे इन निकायो मे घनिष्ठ सहयोग इन दिशाओ मे करवाने का प्रयत्न करे :

(१) स्थानीय निकायो द्वारा उठाए गए कार्यक्रमो को राज्य कार्यक्रमो के साथ सगठित करके उन्हे जिला योजनाओं के भाग के रूप मे दिखलाना चाहिए,

(२) राज्य सरकारो के समाज सेवा कार्यक्रमो की पूर्ति के लिए स्थानीय निकायो का उपयोग करना चाहिए। "किसी भी जन-प्रतिनिधि सस्था के लिए साधारणतया उपयोगी एक नियम यह है कि जिस कार्य को उसके तुरन्त बाद की अधीन अधिकारी संस्था उतनी ही भली प्रकार अथवा लगभग उतनी भली प्रकार कर सके, उसे करने का उत्तरदायित्व उस पर डालकर उसे करने में उसकी कुछ सहायता और उसका मार्ग-दर्शन कर दिया जाए";

(३) स्थानीय निकाय जिन सस्थाओ को चलावे और जो सेवाएं करे, उनका निरीक्षण और मार्ग-दर्शन राज्य सरकार के टेकनीकल और प्रशासनिक कर्मचारियों को ठीक उसी प्रकार और उतनी ही चुस्ती से करना चाहिए जितनी चुस्ती से वे सरकार द्वारा सचालित सस्थाओं और सेवाओं का करते;

(४) जिलों और ताल्लुकों के विकास कार्यक्रमो की पूर्ति की विधि निश्चित करने और उनकी निगरानी करने के लिए जो विकास समितिया बनाई जाए, उनके मूल सदस्य जिला बोर्डों के प्रतिनिधि होने चाहिएं । इन समितियो मे अन्य सस्थाओ के प्रतिनिधि भी सम्मिलित रहेगे; और

(५) जहा कही सब-डिविजन हो या भविष्य में बनाए जाए, वहा सब-डिविजनल लोकल बोर्डों की स्थापना पर भी विचार करना चाहिए ।

२६. अभी तक इन सिफारिशो पर अधिक अमल नही किया गया । मध्य प्रदेश, उड़ीसा, बिहार, पंजाब, उत्तर प्रदेश और अन्य कुछ राज्यों मे हाल ही मे इस बात पर विचार किया गया है कि जिला बोर्डो के भावी संगठन और कर्तव्यो का निश्चय, ग्राम पंचायतो और जिले की

अन्य अधिकृत सस्थाओ के कामो का ध्यान रखकर करना चाहिए। कर जाच आयोग ने यही विचार प्रकट किया है कि जिला लोकल बोर्डो का वर्तमान रूप आगे नही रह सकेगा, और स्थानीय स्वायत्त शासन के गठन मे उनकी स्थिति अस्थिर से अस्थिरतर होती जा रही है। अब यह आवश्यकता व्यापक रूप से अनुभव की जा रही है कि जिले के प्रशासन का गठन लोकतन्त्री और सुगठित होना चाहिए। इस गठन मे ऊपर के लोकतन्त्री संगठनों के साथ गाव पचायतो को भी सम्बद्ध करना चाहिए। कुछ राज्यों मे लोकतन्त्री सस्था जिले के स्तर पर रखने मे सुगमता होगी, और कुछ मे सब-डिविजन के स्तर पर। दोनो अवस्थाओ मे दो जरूरी शर्तो का ध्यान रखना होगा। पहली शर्त यह है कि लोक-निर्वाचित निकाय को, कानून और अमन-अमान, न्याय का शासन और माल विभाग के कुछ काम छोड़कर, उसके क्षेत्र के साधारण शासन और विकास के सभी कार्य सौपने का लक्ष्य सामने रखा जाए। आवश्यकता हो तो उसे ये कार्य क्रमश. सौपे जा सकते है, परन्तु उस क्रम का निश्चय पहले से कर देना चाहिए। दूसरी शर्त यह है कि विकास ग्राम समूह या ताल्लुका आदि, जिले अथवा सब-डिवीज़न के जो छोटे क्षेत्र हो, उनमे स्थानीय कार्यक्रमो की पूर्ति के लिए जिला निकाय की उपसमितियां बनाकर उनके कामो को स्पष्ट-स्पष्ट निर्धारित कर दिया जाए। देश के विभिन्न भागों की अवस्थाओ और प्रथम पचवर्षीय योजना के समय में हुए अनुभव का ध्यान रखते हुए इस विषय पर सर्वथा निष्पक्ष विचार करने की आवश्यकता है। इसलिए हम सिफारिश करते है कि राष्ट्रीय विकास परिषद स्वयं इसका विशेष अनुसन्धान करवाए। यह अनुसन्धान और विभिन्न राज्यो मे किए हुए परीक्षणो के परिणाम का अध्ययन तो ऊपर निर्दिष्ट दृष्टियों से होता रहेगा, उसके साथ ही, विकास कार्यो की पूर्ति के लिए जिलो में, और विशेषत: राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास खण्डो मे जो गैर-सरकारी सगठन सब राज्यो मे स्थापित किए जा चुके है उनकी शक्ति बढाने और उनका पुनर्गठन करने की शीघ्र आवश्यकता है।

२७. मूल उद्देश्य यह है कि जिले में विकास का काम करने वाली विभिन्न एजेन्सियों के काम मे परस्पर सामजस्य स्थापित कर दिया जाए, और जो सरकारी और गैर-सरकारी प्रतिनिधि उनकी विशेष सहायता कर सकते हो उनका सम्बन्ध उनके साथ जोड दिया जाए। विकास खण्डो और ताल्लुकों के लिए मुख्य लक्ष्य यह रखा गया है कि सब एजेन्सिया, विशेष करके सहकारिता सस्थाए, गाव पंचायते और स्वयंसेवी संगठन, अधिकतम सहयोगपूर्वक कार्य करें। जिला विकास समितियो और योजना सलाहकार समितियों ने अभी तक जिस प्रकार कार्य किया है उस पर विचार करने से प्रकट होता है कि पुनर्गठन की दिशा मे राज्य सरकारो को तुरन्त ही एक काम यह करना चाहिए कि वे जिलों मे जिला विकास परिषदों, और विकास खण्डो या ताल्लुकों जैसे इलाकों मे विकास समितियो की स्थापना कर दें।

जिला विकास परिषद का गठन करते हुए निम्नलिखित को सम्मिलित किया जा सकता है :

(१) राज्य विधानमण्डल और ससद मे जिले के प्रतिनिधि;
(२) म्युनिसिपैलिटियों और देहाती स्थानीय निकायो के प्रतिनिधि,
(३) सहकारिता आन्दोलन के प्रतिनिधि,
(४) ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधि,
(५) प्रधान-प्रधान समाज-सेवक संस्थाओ, शिक्षण संस्थाओं और रचनात्मक सामाजिक कार्यकर्ताओं की ओर से सम्मिलित किए हुए सदस्य; और
(६) जिले का कलक्टर, सब-डिवीज़नल अफसर, और विभिन्न विकास विभागों के अध्यक्ष अधिकारी।

२८. जिला विकास परिषद के निम्नलिखित कार्य हो सकते है .

(१) राज्य की पचवर्षीय योजना के दायरे मे रहते हुए विकास का वार्षिक कार्यक्रम निश्चित करने के सम्बन्ध मे सलाह देना;

(२) विकास का स्वीकृत कार्यक्रम कहा तक पूरा हुआ और कहा तक नही, इस पर विचार करना,

(३) आर्थिक और सामाजिक विकास की योजनाओ, विशेषत· राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमो, कृषि उत्पादन और स्थानीय विकास कार्यों, समाज सेवाओ और छोटे ग्रामोद्योगो को शीघ्र तथा प्रभावकारी ढंग से सफल बनाने के उपाय सुझाना;

(४) विकास कार्यक्रमों मे भाग लेने और योग देने के लिए जनता को उत्साहित करना और शहरी तथा देहाती इलाको मे स्थानीय लोगो के प्रयत्नों का विस्तार करना,

(५) सहकारिता संस्थाओ और ग्राम पंचायतों का विकास करने मे सहायता देना;

(६) अल्प बचत करने के लिए लोगो को बढावा देना,

(७) गांव पंचायतों के भूमि सुधार, भूमि प्रबन्ध और ग्राम विकास के कामो की निगरानी करना;

(८) अध्यापको, विद्यार्थियों और अन्य लोगो की सक्रिय सहायता और सहयोग से स्थानीय सम्पत्ति और साधनों का पता लगाना और उनका विकास करना;

(९) मेलो, प्रदर्शनियो और वाद-विवाद सभाओ आदि द्वारा ग्राम लोगो को ज्ञान-वृद्धि के अवसर देना, और

(१०) पंचायतो और सहकारिता समितियो के सदस्यो को प्रशिक्षित करना ।

विकास खण्डों अथवा ताल्लुको के लिए बनाई हुई विकास समितियो के काम, जिला विकास परिषदो जैसे ही होगे । उनके सदस्य निम्न प्रकार के लोगों में से लिये जा सकते है

(१) ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधि,

(२) शहरी स्वायत्त शासन संस्थाओ और देहाती लोकल बोर्डो के प्रतिनिधि,

(३) सहकारिता आन्दोलन के प्रतिनिधि;

(४) उस क्षेत्र से राज्य विधानमण्डल और संसद् के लिए निर्वाचित प्रतिनिधि (यदि उन्हें अपने अन्य कामो से फुर्सत मिले तो),

(५) समाजसेवी संस्थाओं, शिक्षण सस्थाओ और रचनात्मक समाज सेवको मे से चुनकर सम्मिलित किए हुए कुछ व्यक्ति; और

(६) विकास विभागो के अध्यक्ष सरकारी अधिकारी ।

२९. यद्यपि जिला विकास परिषदो और विकास खण्डों अथवा ताल्लुको की विकास समितियों का काम सलाह देने का होगा, फिर भी उनको विभिन्न कार्यक्रमों के सम्बन्ध मे अपनी ओर से सुझाव देने की स्वतन्त्रता पर्याप्त मात्रा मे देनी चाहिए । राज्य सरकार ने जिले के लिए जो कार्यक्रम स्वीकृत कर लिये हो, उनके दायरे मे सहायता और साधन वितरण करने का काम भी बहुत हद तक उन्हीं को सौप देना चाहिए । उनका कार्य सुनियोजित ढग से होना चाहिए । किसी

भी कार्यक्रम को अन्तिम रूप देने से पहले उनकी सलाह ले लेनी चाहिए, और जो काम पूरे होते जाएं उनका समय-समय पर सिंहावलोकन करने का अवसर भी उनको देना चाहिए । उनकी एक खास जिम्मेदारी यह देखने की है कि जनता सब कामों मे अधिक से अधिक योग दे, विभिन्न कार्यक्रम इस प्रकार पूरे किए जाएं कि वे एक-दूसरे के पूरक हों, और आबादी मे पुराने रीति-रिवाजों आदि की बाधाओ के शिकार लोगो को भी यथेष्ट लाभ पहुंचता रहे ।

ऊपर बतलाए गए ढंग से जिला विकास परिषदों और विकास खण्डो या ताल्लुका विकास समितियों का गठन हो चुकने पर वे वर्तमान विकास समितियो और कार्यक्रम सलाहकार समितियों की जगह काम करने लगेगी । आरम्भ मे इन सगठनो का रूप कानून द्वारा अनिर्धारित रह सकता है । परन्तु जब वे प्रभावशाली ढंग से काम करने लगेगी, तब जिले के प्रशासन के पुनर्गठन की एक महत्वपूर्ण मंजिल तय हो जाएगी । उनके द्वारा जो अनुभव प्राप्त होगा उससे पता चलेगा कि जिले के प्रशासन को लोकतन्त्री ढग पर चलाने के लिए उसके वर्तमान रूप में क्या-क्या परिवर्तन और सुधार कर देने चाहिएं । इसके अतिरिक्त, इस प्रकार कार्य करने से जिला और क्षेत्रीय योजना की दो महत्वपूर्ण विशेषताओं पर आप से आप जोर पड जाता है । स्थानीय कार्यक्रम सम्मिलित प्रयत्न द्वारा पूरे किए जाते है, जिससे प्रकट होता है कि वे सारी जनता के लिए कितने लाभदायक है, और उस लाभ की तुलना मे पुराने विचारो, विश्वासो, मत-मतान्तरों या जात-पात के अन्तर का मूल्य कितना कम है । दूसरी विशेषता यह है कि जब स्थानीय सरकारी अधिकारियों को परस्पर मिलकर और जनता तथा उसके प्रतिनिधियो के साथ काम करना पडेगा, तब उनके विचारों और प्रवृत्तियो मे बहुत-कुछ ऐसा परिवर्तन हो जाएगा कि वे समाजवादी ढग के समाज की आवश्यकताओ से सगत हो जाएगी, और ऊपर तथा नीचे के अधिकारियो के मध्य जो एक बाड़-सी खडी रहती है और सम्मिलित प्रयत्नो की सफलता मे बाधक बन जाया करती है वह टूट जाएगी । ये संस्थाएं, वाद-विवाद सभाएं, अपने अनुभव एक-दूसरे को बतलाने और कार्यक्रम बनाने तथा उनकी पूर्ति पर विचार करने के लिए परस्पर सलाह-मशविरा करने की परम्पराएं इस दिशा में पहले भी उपयोगी सिद्ध हो चुकी है ।

समन्वय और निरीक्षण

३०. विकास कार्यक्रमों में सामंजस्य रखने और उनका निरीक्षण करते रहने का काम विभिन्न स्तरों पर—ताल्लुके या विकास कार्य के लिए बनाए हुए ग्राम समूह मे, जिले मे, या सब-डिवीज़न मे, कई-कई जिलो के सम्मिलित प्रदेश और राज्य के लिए संगठित करना होगा । प्रत्येक स्तर पर दो समस्याएं खड़ी होंगी । पहली होगी विभिन्न टेकनीकल विभागों के काम में सामंजस्य रखने की, जिससे कि उन सबका एक समन्वित कार्यक्रम बनाया जा सके । दूसरी होगी मार्ग-दर्शन, निरीक्षण मूल्यांकन और वृत्त-लेखन की । सामजस्य की आवश्यकता एक ओर तो नीति में और साधनो के वितरण मे निरन्तरता रखने के लिए होती है, और दूसरी ओर विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले एक ही विस्तार संगठन की आवश्यकताएं सर्वत्र एक-सी रखने के लिए । समन्वित कार्यक्रम का बल इस बात पर निर्भर करता है कि विशिष्ट सेवा करने का काम जिन लोगों से लिया जा रहा है वे कितने योग्य है । इसलिए समन्वय इस प्रकार करना चाहिए कि विशेषज्ञों की योग्यता का अधिकतम लाभ मिल जाए । इसके लिए आवश्यक है कि कार्यक्रमो का संचालन करते हुए प्रत्येक प्रौद्योगिक विभाग की जिम्मेदारियों को भली-भाति समझ लिया जाए और यह जान लिया जाए कि समस्त कार्यक्रम में उनका कितना योग रहेगा । जैसा कि पहले

२८. जिला विकास परिषद के निम्नलिखित कार्य हो सकते है .

(१) राज्य की पंचवर्षीय योजना के दायरे मे रहते हुए विकास का वार्षिक कार्यक्रम निश्चित करने के सम्बन्ध मे सलाह देना,

(२) विकास का स्वीकृत कार्यक्रम कहा तक पूरा हुआ और कहा तक नही, इस पर विचार करना,

(३) आर्थिक और सामाजिक विकास की योजनाओं, विशेषतः राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमो, कृषि उत्पादन और स्थानीय विकास कार्यों, समाज सेवाओ और छोटे ग्रामोद्योगों को शीघ्र तथा प्रभावकारी ढंग से सफल बनाने के उपाय सुझाना,

(४) विकास कार्यक्रमो मे भाग लेने और योग देने के लिए जनता को उत्साहित करना और शहरी तथा देहाती इलाको मे स्थानीय लोगों के प्रयत्नो का विस्तार करना;

(५) सहकारिता संस्थाओ और ग्राम पचायतो का विकास करने मे सहायता देना;

(६) अल्प बचत करने के लिए लोगो को बढावा देना,

(७) गाव पंचायतों के भूमि सुधार, भूमि प्रबन्ध और ग्राम विकास के कामों की निगरानी करना;

(८) अध्यापको, विद्यार्थियो और अन्य लोगो की सक्रिय सहायता और सहयोग से स्थानीय सम्पत्ति और साधनों का पता लगाना और उनका विकास करना;

(९) मेलो, प्रदर्शनियों और वाद-विवाद सभाओ आदि द्वारा ग्राम लोगो को ज्ञान-वृद्धि के अवसर देना; और

(१०) पंचायतों और सहकारिता समितियो के सदस्यों को प्रशिक्षित करना ।

विकास खण्डों अथवा ताल्लुको के लिए बनाई हुई विकास समितियो के काम, जिला विकास परिषदो जैसे ही होगे । उनके सदस्य निम्न प्रकार के लोगों में से लिये जा सकते है .

(१) ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधि,

(२) शहरी स्वायत्त शासन संस्थाओ और देहाती लोकल बोर्डो के प्रतिनिधि,

(३) सहकारिता आन्दोलन के प्रतिनिधि;

(४) उस क्षेत्र से राज्य विधानमण्डल और ससद् के लिए निर्वाचित प्रतिनिधि (यदि उन्हें अपने अन्य कामो से फुर्सत मिले तो);

(५) समाजसेवी सस्थाओ, शिक्षण सस्थाओ और रचनात्मक समाज सेवको में से चुनकर सम्मिलित किए हुए कुछ व्यक्ति, और

(६) विकास विभागों के अध्यक्ष सरकारी अधिकारी ।

२९. यद्यपि जिला विकास परिषदो और विकास खण्डो अथवा ताल्लुकों की विकास समितियों का काम सलाह देने का होगा, फिर भी उनको विभिन्न कार्यक्रमो के सम्बन्ध में अपनी ओर से सुझाव देने की स्वतन्त्रता पर्याप्त मात्रा मे देनी चाहिए । राज्य सरकार ने जिले के लिए जो कार्यक्रम स्वीकृत कर लिये हो, उनके दायरे मे सहायता और साधन वितरण करने का काम भी बहुत हद तक उन्ही को सौप देना चाहिए । उनका कार्य सुनियोजित ढंग से होना चाहिए । किसी

भी कार्यक्रम को अन्तिम रूप देने से पहले उनकी सलाह ले लेनी चाहिए, और जो काम पूरे होते जाएं उनका समय-समय पर सिंहावलोकन करने का अवसर भी उनको देना चाहिए । उनकी एक खास जिम्मेदारी यह देखने की है कि जनता सब कामों में अधिक से अधिक योग दे, विभिन्न कार्यक्रम इस प्रकार पूरे किए जाएं कि वे एक-दूसरे के पूरक हो, और आबादी में पुराने रीति-रिवाजों आदि की बाधाओं के शिकार लोगों को भी यथेष्ट लाभ पहुचता रहे ।

ऊपर बतलाए गए ढंग से जिला विकास परिषदो और विकास खण्डों या ताल्लुका विकास समितियों का गठन हो चुकने पर वे वर्तमान विकास समितियों और कार्यक्रम सलाहकार समितियों की जगह काम करने लगेगी । आरम्भ में इन सगठनों का रूप कानून द्वारा अनिर्धारित रह सकता है । परन्तु जब वे प्रभावशाली ढंग से काम करने लगेगी, तब जिले के प्रशासन के पुनर्गठन की एक महत्वपूर्ण मंजिल तय हो जाएगी । उनके द्वारा जो अनुभव प्राप्त होगा उससे पता चलेगा कि जिले के प्रशासन को लोकतन्त्री ढंग पर चलाने के लिए उसके वर्तमान रूप मे क्या-क्या परिवर्तन और सुधार कर देने चाहिएं । इसके अतिरिक्त, इस प्रकार कार्य करने से जिला और क्षेत्रीय योजना की दो महत्वपूर्ण विशेषताओं पर आप से आप जोर पड जाता है । स्थानीय कार्यक्रम सम्मिलित प्रयत्न द्वारा पूरे किए जाते है, जिससे प्रकट होता है कि वे सारी जनता के लिए कितने लाभदायक है, और उस लाभ की तुलना मे पुराने विचारों, विश्वासो, मत-मतान्तरो या जात-पात के अन्तर का मूल्य कितना कम है । दूसरी विशेषता यह है कि जब स्थानीय सरकारी अधिकारियों को परस्पर मिलकर और जनता तथा उसके प्रतिनिधियो के साथ काम करना पड़ेगा, तब उनके विचारो और प्रवृत्तियो मे बहुत-कुछ ऐसा परिवर्तन हो जाएगा कि वे समाजवादी ढंग के समाज की आवश्यकताओ से सगत हो जाएगी, और ऊपर तथा नीचे के अधिकारियों के मध्य जो एक बाड़-सी खडी रहती है और सम्मिलित प्रयत्नों की सफलता मे बाधक बन जाया करती है वह टूट जाएगी । ये संस्थाए, वाद-विवाद सभाएं, अपने अनुभव एक-दूसरे को बतलाने और कार्यक्रम बनाने तथा उनकी पूर्ति पर विचार करने के लिए परस्पर सलाह-मशविरा करने की परम्पराएं इस दिशा में पहले भी उपयोगी सिद्ध हो चुकी है ।

समन्वय और निरीक्षण

३०. विकास कार्यक्रमों मे सामंजस्य रखने और उनका निरीक्षण करते रहने का काम विभिन्न स्तरो पर—ताल्लुके या विकास कार्य के लिए बनाए हुए ग्राम समूह मे, जिले मे, या सब-डिवीज़न मे, कई-कई जिलों के सम्मिलित प्रदेश और राज्य के लिए संगठित करना होगा । प्रत्येक स्तर पर दो समस्याएं खडी होंगी । पहली होगी विभिन्न टेकनीकल विभागो के काम में सामंजस्य रखने की, जिससे कि उन सबका एक समन्वित कार्यक्रम बनाया जा सके । दूसरी होगी मार्ग-दर्शन, निरीक्षण मूल्याकन और वृत्त-लेखन की । सामंजस्य की आवश्यकता एक ओर तो नीति मे और साधनों के वितरण मे निरन्तरता रखने के लिए होती है, और दूसरी ओर विभिन्न क्षेत्रों मे कार्य करने वाले एक ही विस्तार सगठन की आवश्यकताएं सर्वत्र एक-सी रखने के लिए । समन्वित कार्यक्रम का बल इस बात पर निर्भर करता है कि विशिष्ट सेवा करने का काम जिन लोगो से लिया जा रहा है वे कितने योग्य है । इसलिए समन्वय इस प्रकार करना चाहिए कि विशेषज्ञो की योग्यता का अधिकतम लाभ मिल जाए । इसके लिए आवश्यक है कि कार्यक्रमों का संचालन करते हुए प्रत्येक प्रौद्योगिक विभाग की जिम्मेदारियो को भली-भाति समझ लिया जाए और यह जान लिया जाए कि समस्त कार्यक्रम मे उनका कितना योग रहेगा । जैसा कि पहले

बतलाया जा चुका है कि राज्य के स्तर पर समन्वय का काम मन्त्रिमण्डल की विकास समिति की देख-रेख मे विकास आयुक्त करेगा, जिले और सब-डिविजन मे यह जिम्मेदारी क्रमशः कलक्टर और सब-डिविजनल अफसर को उठानी पड़ेगी। द्वितीय पचवर्षीय योजना के विकास कार्यक्रमो का क्षेत्र प्रथम योजना के क्षेत्र की अपेक्षा बहुत बडा है। इस कारण विकास आयुक्त के लिए यह सम्भव नही होगा कि राज्य में उसे और जो काम करने पड़ते है उन्हे करते हुए वह काफी घूम-फिर सके और राज्य योजना पर जिलों मे कैसा अमल हो रहा है इसका निरीक्षण समीप से कर सके। इस कठिनाई का अनुभव बडे राज्यों मे और भी अधिक होगा। इसलिए द्वितीय पचवर्षीय योजना की परिस्थितियो मे आचलिक सामजस्य रखने और जिले मे विकास कार्यो का समन्वय तथा निरीक्षण करने की प्रभावशाली व्यवस्था करना बहुत अधिक आवश्यक हो जाता है।

३१. जिले का प्रशासन, नई समाज व्यवस्था की दिशा मे बढने का एक साधन है। इसलिए उसे जनता की आशाओ और अभिलाषाओ के अनुरूप होना चाहिए। उसकी सफलता-असफलता का निर्णय, उसके कार्यो के परिणामो के अतिरिक्त, उन्हे करने की विधियों और उन सस्थाओ से भी किया जाएगा जो कि वह अपने गठन मे जनता का सहयोग प्राप्त करने के लिए सगठित करेगा।

अध्याय ८

कर्मचारियों की आवश्यकता और उनके प्रशिक्षण का कार्यक्रम

किसी भी योजना में भौतिक और जनशक्ति के साधनो का सफलतापूर्वक उपयोग कर सकने का बडा महत्व होता है। विकास कार्य को अभीष्ट गति प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि भौतिक और जनशक्ति के साधनो मे यथासम्भव अधिकतम सन्तुलन रखकर आगे बढा जाए। जनशक्ति को प्राय: किसी भी राष्ट्र का प्रथम साधन माना जाता है। यह बात प्रौद्योगिक जन-शक्ति के विषय मे और भी सही है।

२. १९५३ में रोजगार की स्थिति काफी बिगड़ गई थी, और प्रौद्योगिक कर्मचारी पर्याप्त संख्या में नही मिलते थे; इस कारण जीविकोपार्जन के अवसरो की संख्या में वृद्धि करना कठिन हो गया था। इसलिए तब यह आवश्यकता तीव्र रूप मे अनुभव की गई कि यह हिसाब लगा लिया जाए कि हमारी प्रौद्योगिक कर्मचारियो की आवश्यकता कितनी है और वे हमें कितने मिल सकते हैं। इस दिशा मे कुछ समय पूर्व प्रथम प्रयत्न वैज्ञानिक जनशक्ति समिति ने किया था। परन्तु यह बात प्रथम पचवर्षीय योजना बनने से भी पहले की है। प्रथम योजना आरम्भ हो जाने पर उसमे कर्मचारियो को विभिन्न कार्यो का प्रशिक्षण देने की जो सुविधाएं रखी गई थी, उनका क्रमश: विस्तार किया जाने लगा। इसका फल यह हुआ कि द्वितीय योजना आरम्भ होने के समय स्थिति पहले से सुधरी हुई थी। द्वितीय योजना मे प्रौद्योगिक कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने की योजना बहुत पहले से तैयार कर लनी है, जिससे कि भविष्य मे सम्भावित आवश्यकताओं की पूर्ति भली प्रकार की जा सके। इस विचार से प्राय: सबकी सहमति होते हुए भी भावी आवश्यकताओ का पहले से अन्दाजा लगा लेना कठिन है। इसलिए उन कठिनाइयों की ओर ध्यान खीच देना आवश्यक है। भविष्य मे टेकनोलौजिकल उन्नति किस दिशा में होने की सम्भावना है, इसका हमे पूरा ज्ञान न होने के कारण उचित होगा कि हम अपनी चौमुखी और विभिन्न क्षेत्रो की—विशेषत· निम्न स्तरो की—सम्भावित आवश्यकता और पूर्ति दोनों का विचार कर लें। इसके अतिरिक्त प्रौद्योगिक कर्मचारियों मे—विकास के व्यापक क्षेत्रों में भी—सदा अनेक प्रकार के व्यक्ति मिले-जुले रहेंगे, इस कारण उनमें सन्तुलन हो जाने की सम्भावना है, विशेषत. इस कारण कि विस्तार की बातों पर पहले से ध्यान नही दिया जा सकता।

३ आगे जो विश्लेषण किया जा रहा है, उसमें सभी प्रकार के प्रौद्योगिक कर्मचारियों की चर्चा करने का विचार नही है। इस समस्या को हल करने का प्रयत्न केवल कुछ चुनी हुई दिशाओ मे किया जाएगा, क्योकि प्रथम योजना काल मे जिस प्रकार के कर्मचारियों की कमी अनुभव हुई थी, उन पर स्वभावत. विशेष ध्यान दिया जाएगा। अन्य जिन कई प्रकार के कर्मचारियो को तैयार करने मे बुनियादी प्रशिक्षण और पर्याप्त व्यावहारिक अनुभव दोनो की आवश्यकता पड़ती है, उनकी भावी मांग का—उदाहरणार्थ, तृतीय योजना काल में—मोटा अन्दाजा अभी से लगा लेना और प्रशिक्षण का कार्यक्रम उसी के अनुसार बना लेना होगा। यह बात इंजीनियरो के कामो पर विशेष रूप से लागू होती है क्योकि द्वितीय योजना मे इस्पात के उत्पादन पर खास जोर दिया गया है और उससे सम्बद्ध कामों में रोजगार की बहुत गुजाइश हो जाने की

सम्भावना है। तृतीय योजना काल मे इस्पात का उत्पादन और भी बढाया जाएगा, इसलिए आशा है कि इस क्षेत्र के कार्यो मे कर्मचारियों की माग निरन्तर बढती जाएगी। सीमेंट का उत्पादन भी विगत कुछ वर्षो मे बहुत बढ़ गया है। द्वितीय योजना मे भी उसका उत्पादन खूब बढ़ाने का कार्य-क्रम रखा गया है, यहा तक कि इस उद्योग के आरम्भ मे अब तक उसकी जितनी क्षमता हो चुकी है वह उससे भी आगे बढ जाएगा। इस्पात और सीमेंट मिलकर तामीर के कामों मे रोजगार मिलने के अवसरों की वृद्धि करेगे, इस कारण तामीरी कामो के लिए प्रौद्योगिक कर्मचारियो की योजना बनाने का महत्व विशेष बढ जाता है। प्रथम योजना मे जिन कर्मचारियों की कमी अनुभव हुई उनमे कृषि के ग्रेजुएट और डिप्लोमा-प्राप्त व्यक्ति, पशु चिकित्सक, वन, सहकारिता, तथा भूमि सरक्षण विभागो के कर्मचारी, विकास अधिकारी, योजनाओ के प्रशासक, चिकित्सक और प्रशिक्षित अध्यापक भी थे। इसलिए अब इन्हे तथा अन्य कुछ विशिष्ट प्रकार के कर्मचारियो को प्रशिक्षित करने की सुविधाओ पर विचार किया जाता है।

इंजीनियर कर्मचारी

४. प्रथम योजना मे इजीनियरी पेशो मे कर्मचारी प्रशिक्षित करने की सुविधाए बढाने के अनेक उपाय किए गए थे। खडगपुर मे इन्स्टिट्यूट आफ टेकनोलौजी (यन्त्रकला विज्ञान का प्रतिष्ठान) खोला गया और बगलौर के इण्डियन इन्स्टिट्यूट आफ साइन्स का और भी विकास किया गया। चार नए कालेज और १६ पोलीटेकनीक विद्यालय भी स्थापित किए गए। इसके अतिरिक्त, प्रौद्योगिक शिक्षण की अखिल भारतीय परिषद की सिफारिशो के अनुसार पहले से विद्यमान २० कालिजो और ३० स्कूलों में विद्यार्थियों की संख्या बढा दी गई। इन उपायो का परिणाम यह निकला कि प्रथम योजना की समाप्ति पर देश मे ४५ इजीनियरी सस्थाए ग्रेजुएटों के लिए और ८३ संस्थाए डिप्लोमा के स्तर तक प्रशिक्षण देने वाली हो गई थी। गत पाच वर्षो मे प्रति वर्ष निकलने वाले इजीनियर ग्रेजुएटो की सख्या प्राय दुगुनी और डिप्लोमा लेने वालो की १,८५० से बढ़कर ४,६०० हो चुकी थी। अन्य टेकनोलौ-जिकल विषयो के शिक्षण में भी पर्याप्त उन्नति हुई थी।

५. द्वितीय योजना काल मे इजीनियर, सुपरवाइजर, ओवरसियर और अन्य कार्यकर्ता तैयार करने के लिए प्रौद्योगिक शिक्षण की सुविधाए बढ़ाने पर लगभग ५० करोड रुपए व्यय करने का विचार है। जो कार्यक्रम तैयार किए गए है, उनमे मुद्रण विज्ञान, नगरों और प्रदेशो के रूपांकन और स्थापत्य कला के विभिन्न पाठ्यक्रमो का विकास, वर्तमान प्रौद्योगिक प्रतिष्ठानो का विस्तार, उच्चतर प्रौद्योगिक प्रतिष्ठानो की स्थापना, इण्डियन स्कूल आफ माइन्स एण्ड एप्लाइड ज्योलौजी (खानो तथा भू-गर्भशास्त्र के विद्यालय) का विस्तार, और सेवा मे सलग्न इजीनियरों के लिए प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रमो का संगठन आदि सम्मिलित है। इसमे इजीनियर कर्मचारियो को प्रशिक्षित करने वाली सस्थाओ की संख्या १२८ से बढकर १५५ हो जाएगी। १९५५ मे प्रति वर्ष पढकर निकलने वाले इंजीनियर ग्रेजुएटों की संख्या ३,६०० और डिप्लोमा वालों की ४,६०० थी, १९६० मे इन दोनो की सख्या बढकर क्रमश ४,५०० और ६,५०० हो जाने की आशा है।

६. इतने विस्तार के पश्चात भी विभिन्न राज्य सरकारो और केन्द्रीय मंत्रालयों का कर्मचारियों की आवश्यकता का अन्दाजा इतना अधिक था—इनमें से कइयो ने तो यह अन्दाजा लगाने के लिए विशेष समितियां नियुक्त की थीं—कि योजना आयोग ने एक इंजीनियर कर्मचारी

समिति का सगठन करके उसे आदेश दिया कि वह द्वितीय योजना से भी अधिक व्यापक क्षेत्र को ध्यान में रखकर इजीनियर कर्मचारियो की सम्भावित आवश्यकता और पूर्ति के प्रश्न का अध्ययन करे। यह समिति अनुसन्धान के पश्चात इस परिणाम पर पहुंची कि द्वितीय योजना मे इजीनियरी के शिक्षण की सुविधाए जितनी बढा देने का विचार किया जा रहा है उतनी के पश्चात भी अतिरिक्त प्रशिक्षण की इतनी आवश्यकता रहेगी कि उससे सिविल, मिकैनिकल, बिजली, दूर सचार, धातु विज्ञान और खानो के लगभग २,३०० ग्रेजुएट इंजीनियर तैयार किए जा सके। इनके अतिरिक्त, इजीनियरी के जिन क्षेत्रों की चर्चा पहले की जा चुकी है, उनमे निम्न स्तर के पदो पर कार्य करने के लिए लगभग ५,६४० व्यक्तियो की आवश्यकता पडेगी। यदि इजीनियर कर्मचारी मुहैया करने के लिए तुरन्त ही उपाय न किए गए तो तृतीय पचवर्षीय योजना में भी इस भारी कमी के जारी रहने और उसके और बढ जाने की आशका है। समिति का विचार है कि विकास मे प्रगति का यह एक आशाजनक चिह्न है कि औद्योगिक प्रशिक्षण की जितनी सुविधाए बढाई गई वे सब न केवल हमारी अर्थ-व्यवस्था मे खप गई, अपितु और अधिक की आवश्यकता अनुभव होने लगी। समिति ने सुझाया है कि .

(क) पहले से विद्यमान सस्थाओं का जितना विस्तार करना सम्भव हो, उतना कर देना चाहिए। इससे उनके उत्पादन में २५ प्रतिशत वृद्धि हो जाने की आशा है,

(ख) इजीनियरी के १८ अतिरिक्त कालेज और ६२ अतिरिक्त स्कूल खोल देने चाहिए,

(ग) ओवरसीयरी से निम्न स्तर के खास-खास कार्यो को करने के लिए प्रशिक्षित लोगो का एक नया वर्ग उनके कामो के आधार पर तैयार कर लेना चाहिए;

(घ) अप्रैन्टिस के तौर पर काम सिखाने और कारखानो में काम करने के आधार पर प्रशिक्षण देने के कार्यक्रम बडी सख्या मे संगठित करने चाहिए,

(ङ) भरती मे अनावश्यक विलम्ब नही करना चाहिए,

(च) पढाई का दर्जा ऊचा करने के लिए टेकनीकल सस्थाओ मे अध्यापको का कुछ काम सरकारी विभागो मे काम करने वाले अधिकारियो से लेना चाहिए। इस समय सरकारी नौकरियो मे जो इजीनियर काम कर रहे है, उनकी सख्या बढा देनी चाहिए जिससे कि यह आवश्यकता पूरी करने के लिए वे सुरक्षित शक्ति का काम दे सके; और

(छ) टेकनीकल कर्मचारियों के नीति सम्बन्धी प्रश्नो का निर्णय करने के लिए एक निकाय बनाकर उसे काफी अधिकार दे देने चाहिए, और उसकी सुविधा के लिए एक कार्यकारिणी का भी संगठन कर देना चाहिए। (अधिक विवरण के लिए पैरा संख्या २१ और २२ देखिए)।

समिति की इन सिफारिशो पर विचार किया जा रहा है।

७. जो ग्रेजुएट इंजीनियर और दूसरे लोग उद्योगो मे काम कर रहे है परन्तु जिन्हे पर्याप्त अनुभव नही है, उनके लिए सिन्दरी में एक बड़ा कार्यक्रम तैयार किया गया है। द्वितीय योजना के समय और उसके बाद के वर्षों मे रासायनिक खाद के जो नए कारखाने खोले जाएंगे उनकी आवश्यकताएं पूरी करने के लिए इस कार्यक्रम को और भी बढाया जा रहा है। इस्पात कारखानों के भी कुछ कार्यकर्ताओं को सिन्दरी मे प्रशिक्षित किया जा रहा है। डी० डी० टी० का जो नया

कारखाना खोला जाएगा, उसके भावी कार्यकर्ताओ को दिल्ली के डी० डी० टी० कारखानों में प्रशिक्षित किया जा रहा है। इसी प्रकार जहाज बनाने का जो नया कारखाना खोला जाएगा उसके भावी कार्यकर्ताओ को विशाखापतनम् के जहाजी कारखाने मे बडी सख्या मे प्रशिक्षित किया जा रहा है। कोयले का उत्पादन बढाने के लिए जिन अतिरिक्त टेकनीकल कार्यकर्ताओ की आवश्यकता पडेगी, उनमे से सुपरवाइजर, ओवरसीयर और बिजली का तथा मिकैनिकल काम करने वाले निम्न तथा मध्यम कर्मचारियो को प्रशिक्षित करने के लिए पहला कदम यह उठाया जा रहा है कि कारगली, गिरिडीह, तालचेर और कुरसिया मे चार केन्द्र खोले जा रहे हैं।

८ नए इजीनियरो को विशेष प्रशिक्षण देने और काम से लगे हुए इजीनियरों, कर्मचारियो और मिकैनिको के लिए अपने काम के प्रत्यास्मरण कार्यक्रम प्रथम योजना के समय मे ही अनेक योजना केन्द्रो मे आरम्भ कर दिये गये थे। इन कार्यक्रमो को द्वितीय योजना काल मे भी जारी रखा और बढाया जाएगा। इस समय प्रतिवर्ष ४५ इजीनियरो को बाध बनाने और बिजली के कारखाने लगाने की विधियो और डिजाइन के विषय मे विशेष प्रशिक्षण देने की जो व्यवस्था है उसे जारी रखा जाएगा। इस समय काम से लगे हुए इजीनियरो को जल साधनो का विकास करने की विधिया सिखाने का एक केन्द्र रुडकी मे है। उसे भी चालू रखा जाएगा। इस केन्द्र मे भारतीय इजीनियरो को ही नही, एशिया और अफ्रीका के अन्य देशो से भेजे हुए भी कुछ कार्यकर्ताओ को प्रशिक्षित किया जाता है। एक प्रशिक्षण केन्द्र, कन्स्ट्रक्शन प्लाण्ट एण्ड मैशीनरी कमेटी की सिफारिश पर कोटा (चम्बल घाटी योजना) मे कारीगरो और मिकैनिको के प्रशिक्षण के लिए खोला जा चुका है। एक और केन्द्र शीघ्र ही नागार्जुनसागर योजना कार्य के स्थान पर खोला जाएगा। इस समय ऊची ताकत की बिजली ले जाने और उसका वितरण करने वाले तारो को ठीक रखने की कला के जानकार हमारे देशो मे नही मिलते। यह काम सिखाने के लिए दो प्रशिक्षण केन्द्र खोलने का विचार है।

कारीगर

९ उच्च स्तर का प्रशिक्षण देने की योजना बना देना ही पर्याप्त नही है। सरकारी या निजी प्रतिष्ठानों को चलाने के लिए भी हर कदम पर कुशलता और अनुभव की आवश्यकता पडती है। इसलिए कारीगरों को प्रशिक्षित करने का महत्व बहुत बढ जाता है। परन्तु कारीगरो की आवश्यकता और पूर्ति का अन्दाजा लगाने मे कई बडी और स्वाभाविक कठिनाइया हैं। कितने कारीगर मिल सकते है, इसका अन्दाजा लगाना कठिन इसलिए है कि एक ही कुनबे मे बाप ने बेटो को, भाइयों ने भाइयों को और दूसरे रिश्तेदारों ने दूसरे लोगों को कितना काम सिखलाया, इसका ठीक हिसाब नही लगाया जा सकता। कारीगर कैसा हो, इसका ठीक पता होते हुए भी उनकी आवश्यकता का ठीक-ठीक पता नही लगता। इस सम्बन्ध में अधिक से अधिक इतना ही किया जा सकता है कि सस्थाओ मे प्रशिक्षण की सुविधाओ को लेख-बद्ध कर लिया जाए, कितने कारीगर मिलने की सम्भावना है यह बतलाया जाता रहे, और आवश्यकता का ठीक अन्दाजा लगाने का यत्न किया जाता रहे। कारीगरों को काम सिखाने की सुविधाओं का सर्वाधिक सगठित स्थान वे सस्थाए हैं जो देश भर मे श्रम मन्त्रालय द्वारा चलाई जा रही है। प्रशिक्षण की सुविधाओ का सगठन करने मे कितनी उन्नति हुई और प्रशिक्षितो को काम दिलाने में उनका कितना उपयोग हुआ, इसका विचार प्रशिक्षण तथा कामदिलाऊ संगठन समिति ने किया था। इस समिति की राय थी कि अब तक उपलब्ध परिणाम प्रभाव-रहित न होते

हुए भी प्रशिक्षण को और अधिक सोद्देश्य बनाया जा सकता है। इसलिए उसने अन्य बातों के अतिरिक्त ये सिफारिशे भी की थी :

(क) कर्मचारियो के प्रशिक्षण का आरम्भ सम्बद्ध उद्योगो द्वारा ही होना चाहिए, परन्तु सरकार को प्रशिक्षण की बनियादी सुविधाएं पर्याप्त मात्रा में देते रहना चाहिए,

(ख) श्रम मत्रालय के प्रशिक्षण कार्यक्रमो और राज्य सरकारो के विविध कार्यक्रमो मे समन्वय रखने के लिए आवश्यक है कि केन्द्र, प्रशिक्षण केन्द्रो को राज्यो के सुपुर्द कर दे,

(ग) केन्द्रीय सरकार को चाहिए कि वह इन तीन विषयो की जानकारी एकत्र करे : (१) उद्योगो को कितने प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता है; (२) प्रशिक्षण की कितनी सुविधाए उपलब्ध है, और (३) प्रशिक्षण के स्तर और विधियां क्या है, और उनके लिए किस पाठ्यक्रम का प्रयोग किया जाता है,

(घ) केन्द्रीय सरकार परिस्थिति का निरन्तर पर्यालोचन करती रहे, जिससे कि इन प्रशिक्षण केन्द्रो की उपयोगिता बढाई जा सके, और

(ङ) सरकार ऐसा कानून बना दे जिससे कि निजी कारखानों के लिए अप्रेन्टिसों को प्रशिक्षित करना अनिवार्य हो जाए।

इन सब सिफारिशों पर अमल किया जा रहा है। श्रम मत्रालय के कार्यक्रमो मे प्रशिक्षण के कई कार्य सम्मिलित कर लिये गए हैं। इस समय श्रम मत्रालय के टेकनीकल काम और पेशे सिखाने के कार्यक्रमो मे प्रति वर्ष १०,३०० व्यक्ति भरती किए जाते हैं। द्वितीय योजना के अन्त तक यह सख्या बढाकर ३०,००० प्रति वर्ष कर दी जाएगी। आशा है कि अप्रेन्टिस रखकर काम सिखाने की योजना द्वारा भी प्रति वर्ष ३,००० से ५,००० तक कारीगर काम सीख जाएंगे। इसी प्रकार उद्योगो मे पहले से काम करते हुए २०,००० कारीगरों के लिए सरकार द्वारा सचालित सस्थाओ मे सायकाल की कक्षाए लगाकर अथवा उनके कारखानो मे ही प्रशिक्षण केन्द्र खोलकर उन्हे ऊचे पदो के लिए प्रशिक्षित कर दिया जाएगा। मत्रालय के प्रशिक्षण केन्द्रों को उपयुक्त योग्य व्यक्तियो की कमी न पडे, इस उद्देश्य से शिक्षक और निरीक्षक कर्मचारी तैयार करने की व्यवस्था कर ली गई है।

१०. व्यावहारिक प्रशिक्षण पर सरकार कितना जोर देती है, इसका प्रमाण यह है कि उसने माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशे मानकर कई माध्यमिक प्रशिक्षण संस्थाओ को बहूद्देश्यीय स्कूलो मे परिवर्तित कर दिया है। इसका अधिक विवरण शिक्षा के अध्याय मे दिया गया है। यहा तो इतना ही जिक्र कर देना काफी है कि यदि इन सब प्रशिक्षण सुविधाओ का अर्थ-व्यवस्था की भावी आवश्यकताओ के साथ मेल मिला दिया जाए तो टेकनीकल कार्यकर्ताओ की विभिन्न स्तरो पर कमी अवश्य घटती चली जाएगी। इस बुनियादी प्रशिक्षण का उपयोग काम देने वाले अधिकारियों की विशिष्ट आवश्यकताए पूरी करने के लिए किस प्रकार किया जा सकता है, इसका एक उदाहरण लोहा तथा इस्पात मत्रालय की हाल की कार्रवाई से मिलता है। इस मत्रालय की सलाह से पुन:स्थापन तथा नियोजन महानिदेशक ने अपने पाठ्यक्रमो मे ऐसा परिवर्तन कर दिया कि उन्हे पूरा कर चुकने वाले व्यक्ति इस्पात के कारखाने खुलने पर उनमे काम कर सकें। इसी प्रकार का प्रयत्न सरकार निजी उद्योगों की भावी आवश्यकताओ

की पहले से कल्पना करके कार्यकर्ताओ को उनमे स्थान दिलाने के लिए कर रही है। विचार यह है कि एक तरफ तो काम देने वाले अधिकारियो और दूसरी तरफ प्रशिक्षण सस्थाओं तथा निजी उद्योगो मे अधिकतम सहयोगपूर्वक कार्य करने की व्यवस्था हो जाए।

कृषि तथा उससे सम्बद्ध क्षेत्रों के कर्मचारी

११ योजना की आवश्यकताओ के अनुसार, इजीनियरी के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों मे भी प्रशिक्षण की सुविधाए बढाने पर बहुत ध्यान दिया जा रहा है। अन्दाजा लगाया गया है कि द्वितीय योजना मे लगभग ६,५०० कृषि ग्रेजुएटो की आवश्यकता पडेगी। इस समय कृषि सिखाने की जो सुविधाए है, उनके आधार पर लगभग १,००० ग्रेजुएटो की कमी पडने की सम्भावना है, और उसे पूरा करने का प्रयत्न किया जा रहा है। राज्यो ने वर्तमान कालेजो को अधिक समर्थ बनाकर उनमें अधिक विद्यार्थियो को पढाने, और कही-कही नए कालेज खोलने के भी कार्यक्रम बनाए है। प्रशिक्षित कार्यकर्ताओ की सबसे अधिक माग आने की एक दिशा राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम हैं। उदाहरणार्थ, देहातो मे काम करने के लिए लगभग ३८,००० व्यक्तियो की माग है। इस माग को पूरा करने के लिए बुनियादी कृषि और विस्तार कार्यों का प्रशिक्षण देने वाली सस्थाओं की सख्या बढाकर द्वितीय योजना काल मे १५८ कर दी जाएगी। इसी प्रकार, ग्राम समूहो के स्तर पर काम करने वाले ११,४०० कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पूरी करने के लिए विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रो मे ग्राम समूह स्तर के कार्यकर्ताओ को प्रशिक्षित करने के २१ कक्ष और आरम्भ कर दिए जाएगे। ऐसे १७ कक्ष पहले से चल रहे है। कार्यक्रमो के योजना अधिकारियो और खड विकास अधिकारियो आदि को प्रशिक्षित करने की वर्तमान व्यवस्थाए द्वितीय योजना काल मे भी यथापूर्व चलती रहेगी।

१२. हमें लगभग ६,००० पशु चिकित्सा ग्रेजुएटो की आवश्यकता है। पशु चिकित्सकों की इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए ये काम किए जाएगे

(क) कुछेक वर्तमान कालेजों मे पढाई की दो पालिया कर दी जाएगी,
(ख) अन्य कालेजों की सामर्थ्य बढा दी जाएगी,
(ग) चार नए कालेज खोले जाएगे, और
(घ) दस स्कूल खोलकर उनमें पशु चिकित्सा का जरूरी काम थोडे समय में सिखा दिया जाएगा।

१३. वन विभाग के कार्यकर्ताओ की आवश्यकता पूरी करने के लिए देहरादून और कोयमुत्तूर के वन कालेजों का विस्तार किया जाएगा। इसके अतिरिक्त, कई राज्य सरकारो ने फारेस्ट गार्डो (जंगलों के रक्षको) तथा अन्य कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के लिए स्कूल खोलने की योजनाएं बनाई है। आशा है कि प्रशिक्षिण का इतना विस्तार करने के पश्चात वन विभाग में कार्यकर्ताओ की कमी नही रहेगी।

भूमि सरक्षण विभाग के अधिकारियो और सहायक अधिकारियों को भूमि सरक्षण का काम सिखाने की व्यवस्था केन्द्रीय भूमि संरक्षण मण्डल के अनुसन्धान तथा प्रदर्शन केन्द्रों और दामोदर घाटी निगम के हजारीबाग प्रशिक्षण केन्द्र में की गई है।

सहकारिता के कार्यक्रम पूरे करने के लिए भी प्रशिक्षित कार्यकर्ताओ की आवश्यकता बड़ी संख्या मे पड़ेगी विभिन्न स्तरो पर कोई २५,००० कार्यकर्ताओं का प्रबन्ध करना पडेगा।

आशा है कि ऊचे पदो पर तो कार्यकर्ताओ की कमी नही रहेगी, परन्तु मध्यम पदो पर कार्यकर्ता पर्याप्त संख्या मे मिलते रहने का निरन्तर ध्यान रखना पड़ेगा। विचार यह है कि आरम्भ मे सहकारिता सस्थाओ के सदस्यो को सहकारिता के सिद्धातों और कार्य करने की विधियो का प्रशिक्षण देने के लिए परीक्षण के रूप मे चलती-फिरती प्रशिक्षण इकाइयो का सगठन किया जाए।

ग्रामोद्योग और लघु उद्योग

१४. ग्रामोद्योग और लघु उद्योगो के अखिल भारतीय बोर्ड ने और राज्य सरकारो ने इन उद्योगो का प्रशिक्षण देने और अनुसन्धान करने के लिए कई योजनाए बनाई है। जुलाहों तथा बुनकरों को कपड़ा बुनने की उन्नत विधिया सिखाने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाएगे। देसी रगो का अनुसन्धान करने के लिए भी अनुसन्धान केन्द्र खोलने की व्यवस्था कर ली गई है। अ० भा० खादी तथा ग्रामोद्योग मण्डल ने जो कार्यक्रम बनाया है उसमें उत्पादन का सगठन करने के लिए ही ३०,००० प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पडेगी। वह इसके लिए अपने ही प्रशिक्षण केन्द्र खोल रहा है। खाद्य और अन्य ग्रामोद्योगो के संयुक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम मे भी ४ केन्द्रीय संस्थाओ और २० प्रादेशिक विद्यालयो का खोलना सम्मिलित है। इनके अतिरिक्त अनेक केन्द्रीय प्रशिक्षण सस्थाओं में विभिन्न ग्रामोद्योगों का विशिष्ट और उच्च प्रशिक्षण दिया जाएगा। अम्बर चर्खे का कार्यक्रम तो १९५५-५६ में ३० लाख रूपए की राशि से आरम्भ किया जा चुका है। उसमे चर्खे को चलाने और अनुसन्धान करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। ग्रामोद्योगो मे अनुसन्धान करने के लिए वर्धा मे एक केन्द्रीय टेकनोलौजिकल इन्स्टीट्यूट नामक सस्था पहले से चल रही है। दस्तकारियो के प्रशिक्षण और अनुसन्धान के कार्यक्रमो मे ये कार्य भी सम्मिलित है एक केन्द्रीय दस्तकारी विकास केन्द्र की स्थापना, औद्योगिक अनुसन्धान संस्थाओं की सहायता करना, प्रबन्ध, सहकारिता और अन्य कार्यो के लिए कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना, और कारीगरो को और प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए छात्रवृत्तिया देना। लघु उद्योगों के लिए अधिकतर राज्यो मे प्रशिक्षण तथा उत्पादन और प्रशिक्षण तथा प्रदर्शन के सयुक्त केन्द्र खोले जाएगे। कुछ राज्यो मे 'पोलिटेकनीक' (अनेक शिल्प कलाए सिखाने वाली सस्थाए) भी खोली जाएगी। लघु उद्योगो की सहायता करने वाली सस्थाओ के अतिरिक्त, नमूने के और चलते-फिरते कारखाने भी चलाए जाएगे। रेशम के कीड़े पालने का काम सिखाने के लिए राज्यो के रेशम विभागो की ओर से दो, और अन्य कामो के लिए अन्य अनेक केन्द्र खोले जाएगे। वर्तमान रेशम अनुसन्धान केन्द्र का भी विस्तार किया जाएगा। नारियल के रस्सो के व्यवसाय की उन्नति के कार्यक्रम मे तिरुवाकुर-कोचीन मे तीन प्रशिक्षण विद्यालयो और एक केन्द्रीय अनुसन्धान सस्थान की स्थापना भी सम्मिलित है। लघु उद्योगो के लिए लगभग ३० प्रौद्योगिक विशेषज्ञ विदेशो मे भरती किए जा रहे है। ये विशेषज्ञ प्रौद्योगिक सलाह देने के अतिरिक्त भारतीय कार्यकर्ताओ को प्रशिक्षित भी करेगे।

सामाजिक सेवाएं

१५. अन्दाजा लगाया गया है कि प्रथम योजना की समाप्ति पर देश मे ७०,००० डाक्टर होगे। राज्य सरकारो और केन्द्रीय मन्त्रालयो द्वारा दिए हुए विवरण के अनुसार योजना के सरकारी विभाग के विभिन्न विकास कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए लगभग ७,८०० अतिरिक्त डाक्टरो की आवश्यकता होगी। अब तक के अनुभव से पता लगता है कि देश की सब चिकित्सा

संस्थाओ से जितने डाक्टर निकलते है उन सबमे से ३५ प्रतिशत तो सरकारी, स्थानीय निकायो की अथवा अन्य नौकरियो मे खप जाते है, और शेष निजी रोजगार करने लगते है। सरकारी स्वास्थ्य सेवाओ का विस्तार हो जाने पर ऐसी सम्भावना है कि निजी रूप से चिकित्सा करने वाले डाक्टरो की सख्या घट जाएगी, क्योकि उनकी अधिक सख्या सरकारी या अर्ध-सरकारी नौकरियो मे खप जाएगी। जितने अतिरिक्त डाक्टरों की माग होती है और जितने डाक्टर बन जाने पर नौकरी पाने का यत्न करते है, उन सबके हिसाब से द्वितीय योजना के समय २० से २२ हजार तक मेडिकल ग्रेजुएटो की आवश्यकता पड़ेगी। प्रथम योजना काल मे मेडिकल कालेजो की सख्या ३० से बढकर ४२ हो गई थी। उन सबसे अन्दाजन प्रति वर्ष २,५०० डाक्टर पढकर निकलते है। यह सख्या डाक्टरो की आवश्यकता पूरी करने के लिए पर्याप्त नही है, इसलिए राज्यो की योजनाओं मे वर्तमान मेडिकल कालेजों मे से २८ का विस्तार करने की बात सोची गई है। ६ नए मेडिकल कालेज खोलने का भी विचार है। योजना मे अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान सस्थान को पूरा कर देने और कुछेक चुने हुए मेडिकल कालेजो का दर्जा ऊचा करके उनमे स्नातकोत्तर अध्ययन तथा अनुसन्धान का कार्य आरम्भ करने की व्यवस्था रखी गई है। दन्त-चिकित्सा सिखाने के लिए चार कालेज तो नए खोले जाएगे और वर्तमान कालेजों मे से दो का विस्तार किया जाएगा। इस समय चिकित्सा की जो अतिरिक्त सुविधाएं सोची जा रही है, योजना की अवधि समाप्त होने तक अधिकाश के पूर्ण हो जाने की आशा है। परन्तु डर है कि डाक्टरो की कमी बनी ही रहेगी। डाक्टरो के अतिरिक्त, नर्सों, मिड-वाइफो, हेल्थ विजिटरो, दाइयो, हेल्थ असिस्टैण्टो और सैनिटरी इन्स्पेक्टरो आदि सम्बद्ध कर्मचारियो की पर्याप्त संख्या मे उपलब्धि का भी उतना ही महत्व है। इन सबकी प्रशिक्षण सुविधाए पर्याप्त मात्रा में बढा देने का प्रयत्न किया जा रहा है।

१६. शिक्षा के क्षेत्र मे नए स्कूल खोलने के लिए ३ लाख १० हजार प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता पड़ने का अन्दाजा लगाया गया है। इनके अतिरिक्त, लगभग दो लाख अध्यापको की आवश्यकता पुराने अध्यापकों के सदा रिक्त होते रहने वाले स्थानों को भरने के लिए पड़ेगी। इस प्रकार आवश्यकता तो अन्दाजन ५ लाख प्रशिक्षित अध्यापको की पडेगी, परन्तु योजना काल मे कोई ६ लाख अध्यापकों को प्रशिक्षित करने का प्रबन्ध कर लिया गया है। शिक्षा पद्धति को प्रारम्भिक स्तर से ही नए मार्ग पर डालने के कार्य की गति बढाने के लिए द्वितीय योजना के अन्त तक बुनियादी प्रशिक्षण कालेजों की सख्या ३३ से बढ़ाकर ७१, और बुनियादी प्रशिक्षण स्कूलों की ४४६ से बढ़ाकर ७२६ कर दी जाएगी। इसके अतिरिक्त बुनियादी तालीम की भी एक केन्द्रीय संस्था स्थापित करने का विचार है। यह बुनियादी तालीम के अनुसन्धान केन्द्र का काम देगी। विश्वविद्यालयों के स्नातकोत्तर प्रशिक्षण के कालेज बुनियादी प्रशिक्षण स्कूलों के लिए अध्यापको के स्रोत का काम देते है। इसलिए इन कालेजो में बुनियादी तालीम पर भी पर्याप्त ध्यान देने के प्रश्न पर विचार किया जा रहा है। इस दिशा मे प्रशिक्षण की सुविधाए बढाने के जो प्रयत्न किए जाएगे, उन सबसे मिलकर लगभग १ लाख २० हजार बुनियादी अध्यापक तैयार हो जाएगे, माग उनकी केवल एक लाख की है। इस प्रकार जो लक्ष्य रखे गए है उनसे न केवल विभिन्न प्रकार के अध्यापकों की अतिरिक्त माग पूरी हो जाएगी, बल्कि इस समय प्रशिक्षित अध्यापकों की जो कमी है वह भी एक हद तक दूर हो जाएगी।

१७. प्रशिक्षण सुविधाओं का बढ़ाना पिछड़ी हुई जातियों के कल्याणार्थ बनाए गए कार्यक्रमों का एक महत्वपूर्ण भाग है। एक टेकनीकल इस्टिट्यूट इम्फाल में खोलने का विचार

किया जा रहा है। उसमे आदिम जातियो के विद्यार्थियो को सिविल और मिकैनिकल इंजीनियरी का डिप्लोमा और सर्टिफिकेट लेने के लिए प्रशिक्षित किया जाएगा। इसी प्रकार के तीन और इस्टिट्यूट, आदिम जातियो के युवकों के लिए ७५ लाख रुपए की लागत से अन्य उपयुक्त स्थानो पर खोले जाएगे। इनके अतिरिक्त, आदिम जातियों के विद्यार्थियों को पेशो और टेकनीकल विषयो की पढाई करने के लिए छात्रवृत्तिया भी दी जाएगी। दर्जीगिरी, लुहारगिरी, चमड़े की कमाई, बुनाई और टोकरी बनाने आदि के काम और दस्तकारिया १८,००० युवको को सिखलाई जाएगी। समाज कल्याण के इन कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए सामाजिक विज्ञानों मे प्रशिक्षित युवकों की बड़ी संख्या मे आवश्यकता पड़ेगी। ऊपर सामाजिक सेवाओं के लिए आवश्यक जिन कार्यकर्ताओं की चर्चा हुई है उनके अतिरिक्त, समाज कल्याण बोर्ड अपने विस्तार कार्यक्रमो की पूर्ति के लिए ८,००० ग्रामसेविकाएं, १,६०० मिड-वाइफें और ६,००० दाइया प्रशिक्षित करने की सोच रहा है। आशा है कि जितने व्यक्ति वर्तमान संस्थाओ से काम सीखकर निकलते है और इनके लिए जो नई संस्थाए खोलने की सोची जा रही है, उन्हे मिलाकर आवश्यकता और उसकी पूर्ति में सन्तुलन हो जाएगा।

१८. ऊपर प्रशिक्षण के जिन कार्यक्रमो की चर्चा हुई है, उनके बाद टेकनीकल कर्मचारियो के क्षेत्र का अन्त नही हो जाता। इनकी चर्चा तो यह दिखलाने के लिए केवल उदाहरण के रूप मे की गई है कि टेकनीकल अथवा प्रौद्योगिक कर्मचारियो की आवश्यकता पूरी करने की समस्या का हल किस प्रकार किया जा रहा है। कुछ कार्यक्रमो की चर्चा विशेष रूप से इसलिए कर दी गई है कि यह पता लग जाए कि केन्द्र और राज्य सरकारे कार्यकर्ताओं की समस्या से भली-भाति परिचित है और द्वितीय योजना के समय मे जिन कर्मचारियो की विशेष कमी अनुभव होने की सम्भावना है उन्हे तैयार करने के लिए उन्होने उपायो की योजना की है। जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है, कुछ प्रदेशो मे असन्तुलन हो सकता है, परन्तु जहा और जब वह हो, वहां और तब उसे दूर करने के लिए विशेष उपाय किए जा सकते है।

कुछ सामान्य विचार

१९. योजना के कार्यक्रमों पर विचार करते हुए प्रशिक्षण व्यवस्था के एक खास पहलू की ओर ध्यान खीच देना उचित है। वह है, इंजीनियरी, टेकनोलौजी, चिकित्सा और कृषि आदि किसी भी क्षेत्र के ऊचे कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करते हुए हमारे सीमित साधनों पर भारी बोझ का पड जाना। फिर भी, केवल इस कारण कोई प्रशिक्षण कार्य बन्द कर देने का विचार नहीं है। परन्तु इसका अर्थ यह नही कि धन के प्रयोग में मितव्ययिता, अथवा उससे भी बढ़कर कर्मचारियों के प्रयोग में मितव्ययिता का ध्यान न रखा जाए। इसका एक उपाय यह है कि प्रशिक्षण के लिए नई सस्थाए खोलने के स्थान पर यथाशक्ति पहले से विद्यमान सस्थाओं में ही प्रशिक्षण की सुविधाओ का विस्तार करने का यत्न किया जाए। कुछ टेकनीकल कलाओं को सिखलाते हुए यह भी आवश्यक हो सकता है कि प्रशिक्षण की सुविधाए देने के प्रश्न पर विचार प्रदेशों या राज्यो की दृष्टि से न किया जाए। ऊचे कर्मचारियो को प्रशिक्षित करते हुए इस बात का महत्व और भी अधिक हो जाता है।

२०. एक और बात जिसकी ओर विशेष रूप से ध्यान खीचना आवश्यक है, यह है कि कर्मचारियों की नियुक्ति करने वाले अधिकारी उनके अनुभवी होने पर अत्यधिक जोर देने

लगते है। जो व्यक्ति उनकी दृष्टि से पर्याप्त रूप से योग्य नही होते, उन्हे नियुक्त करने मे उनका संकोच समझ मे तो आता है, परन्तु केवल 'तैयार माल' को मंजूर करने का आग्रह, विकास को आगे बढाने की दृष्टि से अधिक उपयुक्त नही है। इसका परिणाम एक प्रकार के भवर मे फंस जाना हो सकता है। टेकनीकल कार्यकर्ताओ की कमी के कारण विकास के कार्यक्रम आगे नहीं बढ़ पाएगे और काम मे न लग सकने के कारण बुनियादी प्रशिक्षण पाए हुए कार्यकर्ता अनुभव प्राप्त नही कर सकेंगे। नियुक्ति करने वाले अधिकारियों को चाहिए कि जिन प्रशिक्षित व्यक्तियो में सफल कार्यकर्ता की सभावना हो उनमे अनुभव और दक्षता की अपर्याप्तता को, वे कुछ समय तक सह ले। नियुक्त करने वाले और नौकरी चाहने वाले टेकनीकल कर्मचारियो दोनो को चाहिए कि वे संस्थाओ में मिले हुए प्रशिक्षण को इसी दृष्टि से देखें कि उससे प्रशिक्षित व्यक्ति मे काम करने की बुनियादी योग्यता उत्पन्न हो जाती है।

२१. भारत व्यापक औद्योगिक विकास की देहरी पर है। इसलिए टेकनीकल कार्यकर्ता अभीष्ट संख्या मे मिलने में जिन कठिनाइयो का सामना होने की सम्भावना है, उनकी कल्पना पहले से कर लेना और उन्हे हल करने के लिए उपाय सोच लेना उचित है। जन-शक्ति की किसी भी नीति को सफल करने के लिए इन बातो पर ध्यान देने की आवश्यकता है :

(क) टेकनीकल और अन्य क्षेत्रो मे जिन जगहो पर काम मिल सकता हो, सबके विषय मे आकडे तथा अन्य सम्बद्ध जानकारी एकत्र करके रखना;

(ख) उक्त जगहो के लिए जो कर्मचारी मिल सकते हो उनकी ठीक-ठीक जानकारी रखना,

(ग) उपरोक्त (क) और (ख) मदो मे जो जानकारी उपलब्ध हो, उसके आधार पर नीति निर्धारित कर लेना जिससे कि विभिन्न स्तरो पर आवश्यक प्रशिक्षित कार्यकर्ता मिलते चले जाए, और

(घ) जो कार्य पूरे हो जाए उनमें से कार्यकर्ताओ को नए आरम्भ किए हुए कामो मे बदल देने की सुविधा करते रहना।

२२. केन्द्रीय मंत्रालय इस समय कर्मचारियो की आवश्यकता के सम्बन्ध में तथ्यों का संग्रह करने का यत्न कर रहे है, परन्तु प्रौद्योगिक कर्मचारियो के विषय मे अभी तक किसी समन्वित नीति और मार्ग का निश्चय नही किया जा सका है। योजना के सरकारी भाग मे कार्यकर्ताओ की आवश्यकता निरन्तर बढ़ती चली जाएगी। इसलिए आवश्यक है कि इन कार्यकर्ताओ की भरती और इनका उपयोग करने की नीतियो के सम्बन्ध में निर्णय उच्चतर स्तर पर किए जाएं। यदि टेकनीकल जन-शक्ति के सम्बन्ध मे मन्त्रिमण्डल की एक समिति बना दी जाए तो वह आवश्यक मार्ग का निदेश कर सकती है, और उसके अनुसार, योजना आयोग और श्रम मत्रालय मे जन-शक्ति तथा काम की जगहें बढ़ाने के उपाय किए जा सकते है। इसी प्रकार की व्यवस्था राज्यो की विभागीय आवश्यकताए पूरी करने के लिए वहा भी की जानी चाहिए। जन-शक्ति की योजना बनाने के लिए केन्द्र और राज्यो में समन्वय होना आवश्यक है।

अध्याय ६

भूमि सुधार और कृषि व्यवस्था का पुनर्गठन

योजना में भूमि सुधार का महत्व

दूसरी योजना की अवधि में अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में जिन नीतियों और कार्यक्रमो का पालन किया जा रहा है, उनसे आर्थिक उन्नति और सामाजिक न्याय की मुख्य समस्या के प्रति एक सन्तुलित और समन्वित दृष्टि का परिचय मिलता है। इन कार्यक्रमों में भूमि सुधार के उपायों का खास महत्व है और इसकी वजहे दो हैं, एक तो यह कि भूमि सुधार कार्य कृषि विकास का सामाजिक, आर्थिक और सस्थात्मक ढांचा प्रस्तुत करते है, और दूसरे इनका बहुत ज्यादा लोगों के जीवन पर गहरा असर पड़ता है। दरअसल इनका असर देहात की अर्थ-व्यवस्था तक ही सीमित नहीं रहता—देहात से बाहर के आर्थिक जीवन को भी ये प्रभावित करते है। भूमि सुधार की योजना परिवर्तन और पुनर्गठन के जिन सिद्धातों पर आधारित है, वे आर्थिक और सामाजिक प्रश्नों के प्रति एक व्यापकतर रवैये के ही अंग है जिसे अर्थ-व्यवस्था के सभी क्षेत्रों में कमोबेश अपनाना ही होता है। इसलिए भूमि सुधार के उपायों का विचार करते समय भूमि से रोजी कमाने वाले लोगो के विभिन्न वर्गों के स्वार्थों में सामजस्य लाने से कुछ अधिक ही सोचना होगा।

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना के लिए भूमि विषयक नीति निर्धारित करते समय यद्यपि भूमि सुधार के सामाजिक पहलू का पर्याप्त विचार किया गया, तथापि यह माना गया कि अगले कुछ वर्षों मे कृषि की पैदावार में ज्यादा से ज्यादा वृद्धि को ही सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाए; अतएव कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था का विस्तार करना होगा और कृषि के क्षेत्र में कार्यकुशलता बढ़ानी होगी। दूसरी योजना की अवधि में भी इस आग्रह का अपना विशेष महत्व है। पहली बात तो यही है कि आज हमारे यहां औद्योगिक विकास की जो बड़ी योजना कार्यान्वित की जा रही है, उसकी वजह से कच्चे माल और खाद्य की मांग निरन्तर बढ़ती ही जाएगी। पहली योजना के अधीन औद्योगिक उत्पादन में जो वृद्धि हो सकी उसका मुख्य कारण यही था कि कच्चा माल अधिक उपलब्ध था। भारत मे ऐसे अनेक कृषि-जन्य पदार्थ होते है जिनकी सारी दुनिया मे मांग है—जैसे चाय, पटसन, कपास, तिलहन आदि। देश की इस क्षमता का औद्योगिक उन्नति के लिए अधिकाधिक विकास करना जरूरी है। इधर हमारे यहा पहले के मुकाबले बाहर से कही कम अनाज मगाया जा रहा है। लेकिन देश मे खाद्य उत्पादन अब भी इस सीमा तक नही पहुच पाया है कि लोगों को पोषक खुराक मिले, देश की सारी जरूरत हर हालत में पूरी की जा सके और साथ ही स्टाक मे सदा इतना खाद्य बच रहे कि बाहर से मशीनें और कच्चा माल मंगाने के लिए रुपया बच रहे और इस प्रकार विकासशील उद्योग व्यवस्था की बढ़ती हुई आवश्यकताओ की पूर्ति हो। और फिर आबादी के बढ़ने से नए-नए शहरो, कस्बो और उद्योग केन्द्रों के बसते जाने से और रहन-सहन के तौर-तरीकों मे सुधार हो जाने से देश मे खाद्य की मांग बढ़ चली है और बढ़ती जा रही है। उसका स्वरूप भी बदलता जा रहा है। जैसा पिछले अध्यायों में भी समझाया जा चुका है कि दूसरी योजना में बड़े पैमाने पर विकास कार्य करना तभी सम्भव होगा जब

देश मे आम तौर से सभी चीजों का और खास तौर से खाद्य और कपड़े का उत्पादन तेजी से बढाया जाए। चाहे उद्योगों के विकास में सहारा देने के लिए कृषि व्यवस्था की क्षमता बढ़ाने की बात सोचिए, चाहे उन आर्थिक आवश्यकताओं की, जो योजना को सम्पन्न करने के लिए अपेक्षित है, आप एक ही नतीजे पर पहुचेंगे और वह यह कि दूसरी योजना की अवधि मे जो निहायत जरूरी काम करने है उनमे कृषि उत्पादन में खासी वृद्धि करना, कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था को बहुमुखी बनाना, और कृषि उत्पादन की कारगर और प्रगतिशील व्यवस्था कर देना भी शामिल है।

३. इन सब बातो को सोच-समझकर भूमि सुधार के लक्ष्य निर्धारित किए गए है। कृषि व्यवस्था की जो बातें पैदावार बढाने मे बाधक सिद्ध होती हों, वे दूर कर दी जाएं और ऐसा इन्तजाम कर दिया जाए कि देश में जल्दी से जल्दी ऐसी कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था की प्रतिष्ठा हो जिसमे उत्पादन और कार्यकुशलता दोनों के मान बहुत ऊचे हो। ये दो लक्ष्य परस्पर सम्बद्ध है; बस इतना ही है कि भूमि सुधार के कुछ कार्यो का पहले लक्ष्य से ज्यादा सीधा वास्ता है, कुछ का दूसरे से। इस प्रकार सरकार और किसानों के बीच वाले वर्ग को समाप्त करने से और पट्टेदारों को संरक्षण देने से जमीन जोतने वाले को कृषि व्यवस्था मे अपना उचित स्थान मिलता है और साथ ही परम्परागत बेड़ियों के टूट जाने अथवा कम हो जाने से काश्तकार को पैदावार बढ़ाने की नई प्रेरणा और नया उत्साह भी मिलता है। इसी तरह पट्टेदार का राज्य से सीधा सम्बन्ध स्थापित हो जाने से और जमीदारी समाप्त हो जाने से टिकाऊ और सन्तुलित ग्राम-व्यवस्था के लिए आवश्यक आधार तैयार होता है। भारत की परिस्थितियों मे आय और सम्पत्ति की अत्यधिक विषमता का होना आर्थिक प्रगति के लिए हर दिशा मे बाधक ही होगा। जमीन के विषय में तो यह बात खासकर लागू होती है। खेती-बारी के लिए उपलब्ध जमीन अनिवार्यत· सीमित है। पिछले जमाने मे मुख्यत: भूमि सम्बन्धी अधिकारों से ही ग्राम्य जनता के विभिन्न वर्गों की सामाजिक हैसियत और आर्थिक अवस्था निर्धारित होती थी। प्रगतिशील ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था की प्रतिष्ठा के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि भू-स्वामित्व विषयक विषमताए कम की जाए। आज देश में कृषि भूमि जिस तरह बंटी हुई है उसे और चको के वर्तमान आकार-प्रकार को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि भूमि की अधिकतर सीमा निश्चित करके अतिरिक्त भूमि का पुनर्वितरण करने से कोई खास बात नहीं बन पाएगी। जो हो, फिर भी यह काफी जरूरी है कि दूसरी योजना की अवधि में इस दिशा में भी कुछ ठोस काम किया जाए ताकि देहातों के भूमिहीन लोगों की सामाजिक हैसियत बढे और वे अनुभव कर सके कि उन्नति करने के लिए उन्हे भी औरों के समान अवसर प्राप्त है। कृषि अर्थ-व्यवस्था का स्वरूप सहकारी बनाने के लिए भी भू-स्वामित्व विषयक विषमताओं का कम किया जाना अपेक्षित है। कारण, सहकार ऐसे ही वर्गों में पनप सकता है, जिनकी हैसियत लगभग एक-सी हो। यदि विषमता ज्यादा हो तो सहकार व्यवस्था चल नही पाती है। इस प्रकार सरकार और किसान के बीच के बिचौलियों की समाप्ति, पट्टेदारों के संरक्षण और पट्टेदार को जमीन का मालिक बनाने की दिशा में प्रथम चरण के रूप में पट्टेदार और राज्य में सीधे सम्बन्ध की स्थापना से अन्ततः एक ऐसी कृषिपरक अर्थ-व्यवस्था की प्रतिष्ठा होती है जिसमें जमीन जोतने वाला ही जमीन का मालिक समझा जाता है।

४. ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था के विकास में शुरू से ही सबसे बडी बाधा यह रही है कि देश में खेतों का आकार आम तौर से बहुत छोटा और अर्थलाभ की दृष्टि से अनुपयुक्त होना है। यह सभी मानते है कि सहकारिता के आधार पर पुनर्गठन करके ही देश की कृषि-व्यवस्था में उत्पादनशीलता और दक्षता की वृद्धि की जा सकती है। दूसरी योजना की अवधि में ऐसे कई उपाय किए

जाने वाले है, जिनसे ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था का सहकारिता के आधार पर पुनर्गठन सम्भव हो जाएगा। अधिकतर काश्तकारों को अपनी काश्त की जमीन के पूरे या लगभग पूरे स्वामी बन चुकने के बाद चकबन्दी करना न सिर्फ चकबन्दी के लिए ही, बल्कि सहकारिता के विकास के लिए भी आवश्यक हो जाता है। चकबन्दी के काम का देश के कई भागों में इतना अनुभव प्राप्त किया जा चुका है कि दूसरी योजना की अवधि मे इस क्षेत्र मे उल्लेखनीय प्रगति की जा सकेगी। चकबन्दी से जुड़ी हुई एक और समस्या है—भूमि प्रबन्ध के तरीको में सुधार करने की। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यो का एक मुख्य उद्देश्य प्रत्येक गाव और प्रत्येक क्षेत्र के लोगों को सुसगठित होकर उत्पादन बढाने की प्रेरणा देना, टेकनीकल मामलों में उनका पथ-प्रदर्शन करना, हर तरह से उन्हे सहायता पहुचाना और ग्राम्य जनता के साधनहीन और गरीब वर्गो की हैसियत बढ़ाने में हाथ बंटाना है। ऐसी उपयुक्त परिस्थिति की अपेक्षा है जिसमें ग्राम्य आर्थिक जीवन में सहकार संस्थाओं के माध्यम से कृषिपरक और इतर दोनों ही तरह के अधिकाधिक कार्य सपन्न हो। सहकार व्यवस्था के विकास के लिए सबसे सुविधाजनक और उपयुक्त इकाई एक गाव की रहती है। अतएव सहकार सस्थाओं और पंचायतों के विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा, ऋण, हाट-व्यवस्था और विधायन के सुसंगठन के लिए जो उपाय किए जा रहे है उनके और ग्राम और लघु उद्योगो की स्थापना के द्वारा प्रत्येक क्षेत्र मे सहकारी ग्राम-प्रबन्ध की ऐसी व्यवस्था करा दी जाएगी जो उस क्षेत्र विशेष की परिस्थिति के अनुकूल हो। एक क्षेत्र में सहकारिता की प्रतिष्ठा से दूसरे क्षेत्र मे सहकारिता को बढ़ावा और सहारा प्राप्त होता है। सहकारिता के क्षेत्र मे रचनात्मक उद्यम करने के लिए बडी संभावनाएं है। ये संभावनाएं अब निरन्तर बढ़ती ही जाएगी। सरकार के प्रति जनता मे उत्साह और अटूट लगन जगाने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि सहकारिता का प्रबन्ध अधिक से अधिक कुशलता से किया जाए।

५. भूमि सुधार के कार्य के विभिन्न चरण शुरू करते समय इस बात का ध्यान रखना जरूरी होता है कि खास जोर भूमि सुधार कार्य के अच्छे और रचनात्मक पहलुओं पर ही दिया जाना है, और भूमि सुधार के उपाय इस ढग से किए जाने है कि कृषि पैदावार में वृद्धि हो सके। इस दृष्टि से राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कार्यक्रम और कृषि विकास, ग्राम्य ऋण-व्यवस्था, हाट-व्यवस्था आदि की योजनाएं भूमि सुधार की सफलता के लिए उतनी ही जरूरी हो जाती हैं जितना कि उनकी सफलता के लिए भूमि सुधार। स्वाभाविक ही है कि भूमि सुधार कार्य की दिशा भले ही कितनी स्पष्ट और सुनिश्चित क्यों न हो, उसकी गति, स्वरूप और ब्योरा हर राज्य को अपनी विशिष्ट परिस्थिति के अनुसार निर्धारित करना होगा। भूमि सुधार के काम के लिए सरकार को बड़ी प्रशासनिक जिम्मेदारिया उठानी पड़ती है, और जैसा कि इसी अध्याय में आगे चलकर दर्शाया गया है, भूमि सुधार योजना के लिए राज्य सरकारों को अनेक पेचीदा मसले जो इस समय कई राज्य प्रशासनो को अपनी सामर्थ्य से बाहर जान पड़ते है, कुछेक वर्षो में ही हल कर दिखाने होंगे। करीब-करीब इन सभी मसलो को हल करने मे जन-सहयोग, सद्भाव और आपसी व्यवस्था की बहुत अपेक्षा होगी। कितने ही ऐसे जटिल मामले भी हो सकते है जिन पर गौर करना हरेक राज्य के लिए जरूरी हो। केन्द्रीय भूमि सुधार समिति ने, जिसमें योजना आयोग के सदस्य और तत्सम्बन्धी प्रमुख मंत्रालयों के प्रतिनिधि सम्मिलित है, और जो समय-समय पर देश के विभिन्न भागो मे भूमि सुधार की प्रगति की समीक्षा करती है, पहली पचवर्षीय योजना की अवधि मे अपना दायित्व निभाते समय इन सब बातो का पूरा ध्यान रखा। गत वर्ष योजना आयोग को पट्टेदारी सुधार, चकों के आधार, कृषि पुनर्गठन और भूदान की विभिन्न समस्याओ का अध्ययन करने में भूमि सुधार विषयक जिस मण्डल ने सहायता दी, उसने भी इन तथ्यों को

९. बिचौलियो की समाप्ति के लिए मोटे तौर पर ये कदम उठाए जाते हैं :

(१) पड़ती जमीन, जंगल, आबादी-मुकाम जैसी बिचौलियो की जो भी पंचायती जमीन होती है, उसे राज्य सरकार अपने हाथ मे ले लेती है और उसके विकास वगैरह का इन्तजाम कराती है ।

(२) बिचौलियों की खुदकाश्त जमीन, और घरेलू फार्म जमीन बिचौलियों के पास ही रहने दी जा रही है । बिचौलियों के घरेलू फार्म मे जो लोग खेती करने आए हों उन्हें बिचौलियों के पट्टेदारों के रूप में खेती करते रहने दिया जाता है । कुछ राज्यों में अलबत्ता पट्टेदार भी सीधे राज्य के नियन्त्रण में ले लिये गए है और बिचौलियों का अपनी पट्टेदारी की जमीन पर कोई हक नहीं रह गया है । ऐसे राज्यों में उत्तर प्रदेश, मध्य भारत (जागीरदारी क्षेत्र), दिल्ली, अजमेर और भोपाल शामिल है । राजस्थान और मध्य भारत (जमींदारी क्षेत्र) में इस तरह के पट्टेदारों को यह सुविधा दी गई है कि वे चाहे तो जमीन के स्वामित्व का अधिकार खरीद ले सकते हैं । ज्यादातर राज्यों में बिचौलियो को खुदकाश्त के लिए सिर्फ वही जमीन दी गई है जिसमें वे पहले से खुद खेती करते आए थे और जो उनके घरेलू फार्मों में शामिल थी । लेकिन हैदराबाद, मैसूर (इनामी जमीन), राजस्थान, सौराष्ट्र, अजमेर, भोपाल, और विन्ध्य प्रदेश आदि कुछ राज्यों मे ऐसी व्यवस्था रखी गई है कि अगर बिचौलिए की खुदकाश्त की जमीन कानून मे खुदकाश्त के लिए निश्चित अधिकतम भूमि से कम हो, तो उसे खेती करने के लिए कुछ और जमीन दे दी जाए।

(३) ज्यादातर राज्यों में बिचौलियों के मुख्य पट्टेदार सीधे राज्य सरकार के मातहत ले लिये गए हैं । बम्बई में (बिचौलियों के अनेक विशिष्ट वर्गों के सम्बन्ध में) और हैदराबाद और मैसूर में (इनामी जमीन के सम्बन्ध में) और कुछ अन्य राज्यों में ऐसी व्यवस्था नहीं की गई है । इन राज्यों में कही-कही बिचौलियों के पट्टेदारों की जमीन बिचौलिए के नाम कर दी गई है। कुछ राज्यों मे पट्टेदारों का अधिकार स्थायी था, और उन्हें अपनी जमीन दूसरे के नाम कर देने का हक मिला हुआ था, इसीलिए वहां इस दिशा में कोई और कार्रवाई करने की जरूरत नही हुई। ऐसे राज्यों में असम, पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, भोपाल और विन्ध्य प्रदेश शामिल थे । बम्बई, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हैदराबाद, मैसूर और दिल्ली वगैरह में पट्टेदारों को स्वामित्व का अधिकार पाने के लिए राज्य सरकार को एक निश्चित रकम अदा करनी पड़ी । आंध्र, मद्रास, राजस्थान, सौराष्ट्र, (बारखली क्षेत्र) मध्य भारत, हैदराबाद (जागीर क्षेत्र) और अजमेर जैसे कुछ राज्यों मे या तो पट्टेदार को पहले से ज्यादा अधिकार दिला दिए गए थे, या उससे सीधे कुछ लिये बगैर उसका लगान कम कर दिया गया ।

१०. बिचौलियों को मुआवजे और पुनःस्थापन सहायता के रूप में जो रकम दी जानी है ; कुल मिलाकर ४५० करोड़ रुपए के आस-पास बैठती है । मुआवजे की कुल रकम का सत्तर तेशत हिस्सा तो उत्तर प्रदेश और बिहार ही का है । आम तौर पर मुआवजा, बिचौलियों को मीन से होने वाली शुद्ध आय का कुछ गुना तय कर लिया गया है । अधिकतर राज्यों में न्यून ाय वर्ग के बिचौलियों के लिए आमदनी की ज्यादा गुनी रकम मुआवजे के रूप में स्थिर की

गई। बिचौलियों के खत्म हो जाने से राज्य की आय बढ जाती है और आय मे जो वृद्धि होती है उसी में से मुआवजे की रकम अदा की जाती है। मुआवजा कभी-कभी नकद भी दिया जाता है। लेकिन ज्यादातर मुआवजे में ऐसे बौड दिए जाते है जिन्हे अदायगी के लिए दूसरे के नाम भी किया जा सकता है, जो परक्राम्य (निगोशिएबल) होते है, और जिन्हे एक निश्चित अवधि के बाद भुनाया जा सकता है। यह अवधि १० से लेकर ४० वर्ष तक रखी गई है। मुआवजे की रकम आकना, और उस हिसाब से मुआवजा में बौंड देना खासा बडा काम रहा है। ज्यादातर राज्यों में काम जल्दी से पूरा करने की खातिर प्रशासन की अतिरिक्त व्यवस्था करनी पड़ी है। फिर भी मुआवजा आंकने और अदा करने का बहुत-सा काम अभी बाकी पड़ा है। यह बहुत जरूरी है कि छोटे-छोटे जमीदारों और विधवाओं और नाबालिगो को मुआवजा देने का काम अब जल्दी पूरा किया जाए।

मालिकों के अधिकार

११. बिचौलियो की समाप्ति के बाद अब मोटे तौर पर दो तरह की पट्टेदारिया बच रही है—एक वर्ग मे वे लोग आते है जिन्होंने सीधे राज्य से जमीन ले रखी है, और दूसरे मे वे जिन्होने पहले वर्ग के लोगों से जमीन ले रखी है। इनके कर्तव्य और अधिकार आम तौर पर उन कानूनों में निर्दिष्ट होते रहे जो राज्य सरकारे पट्टेदारी के बारे मे समय-समय पर बनाती रही। अधिकाश पट्टदारो को क़ानून से यह आश्वासन मिल चुका था कि उनकी पट्टेदारी को कभी आच न आने पाएगी। साथ ही लगान की रकम भी नियमित कर दी गई। यही नहीं, कुछ राज्यों मे उन्हें पट्टेदारी की जमीन किसी और के नाम कर देने के सम्बन्ध में बाकी अधिकार मिल चुके थे। मगर इतना सब होते हुए भी विभिन्न वर्गों की पट्टेदारी की विविधता काफी कम हो चली है और जो काश्तकार बिचौलियों के मातहत काम कर रहे थे, उनमे से अधिकाश खुद जमीन के मालिक हो गए है। जमीन के स्वामित्व के बारे मे कुछ मोटे सिद्धात तय करके अगर सभी जगह एक-सी नीति पर चला जाए तो बहुत अच्छा रहे।

१२. जमीन का मालिक होने का मतलब है कुछेक जिम्मेदारिया निभाने के लिए तैयार रहना। सबसे बड़ी जिम्मेदारी तो जमीन के उपयोग और देख-रेख की है। स्वामित्व के इस पहलू पर हम इसी अध्याय में आगे चलकर विचार करेंगे।

अनेक राज्यो मे चकबन्दी विषयक कानूनों के अन्तर्गत ऐसे उपाय किए गए है कि जमीन के अधिकाधिक छोटे टुकडे न होते जाएं। पर होता अक्सर यह है कि इन नियमो को सख्ती से लागू नही किया जाता। कृषि विकास के लिए यह जरूरी है कि जमीन के कटे-फटे टुकड़े न बनने दिए जाए और बंटवारे या हस्तातरण द्वारा उनके भी और छोटे-छोटे टुकडे न होने दिए जाए और जो छोटे कटे-फटे टुकडे इस समय है उनके हस्तातरण के नियमन की कोई व्यवस्था कर दी जाए।

१३. कुछेक राज्यों में काफी इलाका ऐसा है जिसमे उन लोगो को अपनी जमीन दूसरे के नाम कर देने का अधिकार नहीं है जिन्होंने जमीन सीधे राज्य से ले रखी है। ऐसे मालिक-जमीन फ़सल को रेहन रखकर थोड़े समय के लिए कर्ज ले सकते है। लेकिन रेहन मे रखने के लिए कोई चीज न होने पर ये शायद सहकारी ऋण सस्थाओं से लम्बे और दरमियाने अर्से के लिए कर्ज न ले पाएं। इसलिए यह जरूरी है कि जिन लोगों ने जमीन सीधे राज्य से ले रखी हो उन्हें

सरकार या सहकारी संस्थाओं से कर्ज लेने की खातिर जमीन रेहन रखने का अधिकार दिया जाए ।

१४. कुछ राज्यो मे जमीन को पट्टे पर उठाने का अधिकार ऐसे ही व्यक्तियों को दिया गया है जो अपनी जमीन की आय की देख-रेख करने मे किसी दृष्टि से असमर्थ हों, उदाहरण के लिए विधवाएं, नाबालिग, और सशस्त्र सेनाओ के कर्मचारी । अनुभव से पता चलता है कि इस तरह के निषेध से गांव की अर्थ-व्यवस्था मे एक तरह की जड़ता आ जाती है । यही नही, इस तरह के निषेध को सख्ती से लागू कर सकना प्रशासनिक दृष्टि से बहुत मुश्किल हो जाता है । पहली पचवर्षीय योजना मे यह परिकल्पना की गई थी कि जमीन को पट्टे पर उठाने के जो भी नियम वगैरह बनाए जाए उन्हे लागू करने की जिम्मेदारी पंचायतो पर रहे, यानी जमीन पंचायतो के माध्यम से ही पट्टे पर उठाई जाए । इस तरह की प्रथा को यथासम्भव बढावा दिया जाए । हर हालत मे जब कोई व्यक्ति अपनी जमीन पट्टे पर उठाए तो पट्टे की अवधि कम से कम पाच से दस वर्ष हो ।

पट्टेदारी सुधार

१५. समय के साथ पट्टेदारी की समस्या तीन तरह से जटिल होती गई । एक तो इसलिए कि अक्सर बिचौलिए अपनी घरेलू-फार्म जमीन को खुद नही जोतते-बोते थे और उसे पट्टे पर उठा देते थे । दूसरे इसलिए कि जिन लोगों ने बिचौलियो से जमीन ले रखी थी—इस वर्ग के लोग सब सीधे राज्य के नियंत्रण मे आ गए है—वे कभी-कभी पट्टे पर ली हुई जमीन को खुद भी पट्टे पर उठा देते थे । तीसरे इसलिए कि रैयतवाड़ी क्षेत्रों मे रैयत की जमीन के एक काफी बडे हिस्से मे पट्टेदार काश्त करते रहे थे ।

१६. बेदखली रोकने के लिए विभिन्न राज्यों में विभिन्न उपाय किए गए है । बारीकियों मे जाए, तो इन उपायों मे खासा अन्तर दीख पड़ेगा । पट्टेदारी की सुरक्षा की दृष्टि से हम विभिन्न राज्यों को इस प्रकार बाट सकते है :

(१) वे राज्य जहां पट्टेदारों को पट्टेदारी बनाए रखने का पूरा आश्वासन दिया गया है ।

(२) वे राज्य जहां पट्टेदारी के आंशिक रक्षण की व्यवस्था है, और जहा जमींदार एक सीमित क्षेत्र में खुद काश्त करने के अधिकार का उपयोग करने के लिए पट्टेदार को बेदखल कर सकता है । अलबत्ता इस शर्त का ध्यान रखते हुए कि बेदखल पट्टेदार के पास खेती-बारी के लिए कम से कम उतनी जमीन बच रहे जितनी कानून मे निश्चित है ।

(३) वे राज्य जहां जमीदार एक निश्चित सीमा तक ही पट्टेदारों से जमीन खुदकाश्त के लिए वापस ले सकता है, लेकिन जहां पट्टेदार को खेती-बारी के लिए थोड़ी-बहुत जमीन अपने पास रखे रहने का हक नही है ।

(४) अन्य राज्य, जहां बेदखली फिलहाल रोक दी गई है, या जहां पट्टेदारों के संरक्षण के लिए कदम उठाए जाने है ।

उत्तर प्रदेश और दिल्ली पहले वर्ग मे, बम्बई, पंजाब, राजस्थान, हैदराबाद और हिमाचल प्रदेश दूसरे वर्ग मे, और असम, मध्य प्रदेश (बरार), उड़ीसा, पेप्सू और कच्छ तीसरे वर्ग में आते है । उत्तर प्रदेश में पट्टेदारों को सीधे राज्य के नियन्त्रण में ले लिया गया है और उन्हें स्थायी

और मौरूसी हक दे दिए गए हैं। राज्य सरकार उनसे लगान लेती है और जमीदारों को बौंडों के रूप में मुआवजा अदा करती है। दिल्ली में पट्टेदारों को स्वामित्व का पूरा अधिकार दिया गया, और उनसे सरकार को लगान देने के साथ-साथ जमीदारों को मुआवजा देने को भी कहा गया। बम्बई में जमीदार पट्टे पर उठाई जमीन मे से आधी खुदकाश्त के लिए वापस ले सकता है, लेकिन इस सिलसिले मे आर्थिक दृष्टि से लाभदायी तीन चक की अधिकतम सीमा निर्धारित कर दी गई है। आर्थिक दृष्टि से लाभदायी चक का क्षेत्रफल जमीन की उर्वरता के हिसाब से ४ से लेकर १६ एकड़ तक कुछ भी हो सकता है। पंजाब में खुदकाश्त के लिए ३० 'स्टेण्डर्ड एकड़' से ज्यादा जमीन वापस नही ली जा सकती, और पट्टेदार के लिए कम से कम ५ 'स्टेण्डर्ड एकड़' जमीन छोड़ देना जरूरी होता है। ३० 'स्टैण्डर्ड एकड़' से ज्यादा जो भी जमीन होती है, सरकार के हाथ मे चली जाती है। न्यूनतम क्षेत्र ५ स्टेण्डर्ड एकड़ जमीन मे से कोई पट्टेदार तभी बेदखल किया जा सकता है जब सरकार उसे अपनी अतिरिक्त प्राप्त जमीन मे से बदले की जमीन दे। हैदराबाद में भी पट्टेदार के लिए कुछ जमीन छोड़ देने का नियम है। हा, अगर कुछ जमीन के पास ही कानून में निर्दिष्ट सीमा से भी कम या बिल्कुल बराबर जमीन हो तो बात दूसरी है। राजस्थान में भी पट्टेदार को आम तौर पर थोड़ी-बहुत जमीन अपने लिए रखे रहने का हक मिला हुआ है। हिमाचल प्रदेश में जमींदार खुदकाश्त के लिए पांच एकड़ जमीन वापस ले सकता है। पट्टेदार को पट्टी की तीन-चौथाई जमीन अपने पास रखे रहने का हक दिया गया है। तीसरे वर्ग के राज्यों मे खुदकाश्त के लिए कितनी जमीन वापस ली जा सकती है, इसका ब्योरा यो है:—असम में ३३$\frac{1}{3}$ एकड़, मध्य प्रदेश (बरार) मे ५० एकड़, पेप्सू मे ३० 'स्टैण्डर्ड एकड़', कच्छ में ५० एकड़, और उड़ीसा में ७ से १४ एकड़। देश के अन्य भागों मे तरह-तरह की व्यवस्था है और वहां पट्टेदारों की रक्षा के लिए उपरोक्त राज्यों के मुकाबले बहुत ही कम इन्तजाम हुआ है। भूमि सुधार कानूनों के बनने के बाद की स्थिति का मूल्यांकन करते हुए यह कहना पड़ेगा कि देश के विभिन्न भागो में इन कानूनों का व्यावहारिक पालन एक जैसा नही हुआ है, और एक ही राज्य मे कानूनों के कुछ हिस्सो का तो पालन बहुत जोर-शोर से हुआ है, और कुछ मे खास ध्यान नही दिया गया है। कुल मिलाकर खासी विषमता रही है।

१७. पिछले कुछ वर्षो में राज्यो मे बड़े पैमाने पर बेदखली किए जाने के और पट्टेदारी का स्वेच्छा से त्याग करने के मामले हुए हैं। इसके खास-खास कारण ये हैं कि लोग पट्टेदारी संरक्षण के कानूनों की व्यवस्था जानते नही है, कानूनों मे कहीं और कसर रह गई है, जमीन का हिसाब-किताब बाकायदा रखा हुआ नही है, और प्रशासन का इन्तजाम अच्छा नही है। स्वेच्छा से पट्टेदारी त्याग देने के ज्यादातर मामलो की सचाई सन्दिग्ध होती है। सिफारिश की जाती है कि ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाए कि पट्टेदारों या उप-पट्टेदारों को लगान न देने या जमीन का दुरुप-योग करने को छोड़ और किसी आधार पर बेदखल न किया जा सके। पिछले तीन-एक वर्ष में जो बेदखलियां या पट्टेदारी-त्याग हुए हों, उन पर बाकायदा गौर किया जाए और अगर कोई पट्टेदारी लौटाना उचित समझा जाए तो लौटा दी जाए। लोग दबाव में आकर पट्टेदारी का 'स्वेच्छा से' त्याग न करें और इसके लिए ऐसा विधान कर दिया जाए कि पट्टेदारी का छोड़ा जाना तब तक वैध नहीं समझा जाएगा जब तक कि उसके बारे में माल विभाग को बाकायदा खबर न की गई हो। पट्टेदार जो जमीन छोड़े, उसमें से जमींदार को सिर्फ उतनी ही जमीन लेने दी जाए जितनी वह कानून के अनुसार ले सकता हो।

खुदकाश्त का अर्थ

१८. पट्टेदारी के संरक्षण के कानूनों का पालन करने में कुछ दिक्कतों का इस वजह से सामना करना पड़ता है कि खुदकाश्त की कोई सुनिश्चित परिभाषा नही है। इस शब्द का अक्सर इस्तेमाल किया जाता है, पर इसके मतलब सब कही अलग-अलग लगाए जाते है। सभी राज्यों में खुदकाश्त में वह खेती-बारी भी शामिल की जाती है जो नौकरों या मजदूरों से कराई जा रही हो। अर्थभेद है तो इन बातों में कि खेती-बारी की देख-रेख कैसी और कितनी है, और नौकरों या मजदूरों का वेतन किस रूप में और किस तरह दिया जाए। दोनों ही चीजों का कानून से विधान हुआ है। अनेक राज्यों में देख-रेख के विषय में कोई प्रतिबन्ध नही है। बम्बई, सौराष्ट्र और कुछ अन्य राज्यों में ऐसी व्यवस्था है कि खुदकाश्त की देख-रेख या तो स्वयं मालिक-जमीन या उसके परिवार का कोई सदस्य करे, लेकिन इस प्रसग में 'परिवार' की कोई परिभाषा नहीं दी गई है। रही नौकरों और मजदूरों के वेतन की बात। बम्बई और कुछ अन्य राज्यों मे ऐसी व्यवस्था है कि वेतन चाहे नकद दे लो चाहे किसी और तरह, मगर पैदावार के हिस्से के रूप में न दो। उधर पंजाब में आप मजूरी चाहे किसी तरह अदा कर सकते है। खुदकाश्त का मतलब सभी जगह एक ही जैसा लगाया जाए, ऐसा प्रबन्ध कर देना अपेक्षित है।

१९. देखा जाए तो खुदकाश्त में तीन बातें खास होनी चाहिएं—पहली, फायदा-नुकसान जो हो मालिक उठाए; दूसरी, खेती-बारी की देख-रेख मालिक खुद करे, और तीसरी यह है कि खेती में वह खुद भी मेहनत करे। जो आदमी सारा फायदा-नुकसान खुद न उठाता हो, या जिसने पैदावार का एक हिस्सा किसी दूसरे के नाम पर कर दिया हो, उसके बारे मे यह कहना गलत होगा कि वह खेती स्वयं कर रहा है। जहां तक देख-रेख का मतलब है वह यह होना चाहिए कि या तो स्वय मालिक-जमीन या उसके परिवार का कोई सदस्य करे। देख-रेख अच्छी हो सके, इसके लिए ऐसा विधान करना जरूरी है कि देख-रेख करने वाला फसल के समय ज्यादातर या तो उसी गांव में रहे जहां उसके खेत हैं या उसके आसपास के किसी गाव में। इस प्रसंग में 'आसपास' की स्पष्ट परिभाषा कह दी जाए। सिद्धात रूप से तो खुदकाश्त के लिए खेती मे मालिक का थोड़ा-बहुत योग देना जरूरी होना चाहिए, लेकिन इस विधान का पालन करने में कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इसलिए सुझाव दिया जाता है कि इस शर्त को जरूरी न समझा जाए और खुदकाश्त की परिभाषा यों कर दी जाए; जिसमें जमीन का मालिक फायदे-नुकसान का सारा जोखिम खुद उठाता हो और खुद मालिक या उसके परिवार का कोई सदस्य खेती-बारी की देखरेख बाकायदा करता हो, वही खुद-काश्त है। लेकिन जहां खुदकाश्त के लिए जमीन पट्टेदार से वापस ली गई हो, वहां खुदकाश्त की तीसरी यानी मालिक की खेती-बारी मे खुद भी थोड़ी-बहुत मेहनत की शर्त भी लागू की जाए तो अच्छा रहे। इस तरह जो जमीन वापस ली गई हो अगर उसमें खुदकाश्त न की जाए या एक निश्चित अवधि मे उसे किराए पर उठा दिया जाए तो बेदखल पट्टेदार को यह दावा करने का हक रहे कि पट्टे की जमीन फिर उसे लौटा दी जाए।

२०. ऊपर खुदकाश्त की जो व्याख्या की गई है, उसे ध्यान में रखकर वर्तमान कानूनों पर फिर से विचार किया जाना चाहिए और उन लोगों को जो अब तक सिर्फ खेतिहर मजदूर या साझेदार समझे जाते रहे है, पट्टेदारी के अधिकार दिलाने का समुचित प्रबन्ध किया जाना चाहिए। खुदकाश्त की गलत व्याख्या किए जाने से अनेक राज्यों मे जमीदार खेती में साझा करने की ऐसी व्यवस्था करते रहे है जो पट्टेदारी जैसी होते हुए भी पट्टेदारी नही समझी जाती, और इस प्रकार साझदार उन अधिकारों से वंचित रह जाता है जो कानून में पट्टेदारों को दिए गए हैं।

जमीन का खुदकाश्त के लिए हासिल किया जाना

२१. पट्टेदारी कानून की कई-एक कठिनाइया पट्टेदार से खुदकाश्त के लिए जमीन वापस लेने के सवाल को लेकर उठती है। आम रिवाज कानून मे ऐसी व्यवस्था रखने का है कि सेना के कर्मचारी, अविवाहित औरतें, विधवाएं, नाबालिग लड़के-लड़किया, और शारीरिक या मानसिक दृष्टि से असमर्थ व्यक्ति अपनी जमीन पट्टे पर उठा सकते है और समर्थ होने पर पट्टेदार से जमीन खुदकाश्त के लिए वापस ले सकते है।

जहां तक प्रतिरक्षा सेवा मे नियुक्त कर्मचारियो का सम्बन्ध है, इस बात का ध्यान रखना बहुत ही जरूरी है कि पट्टेदारी के कानून की वजह से उन्हें किसी तरह की असुविधा न हो। सैनिकों को इस बात का पूरा इतमीनान होना चाहिए कि उनके हितों का ध्यान रखा जाएगा और उनके अधिकारो पर आंच नही आएगी। अगर वे जमीन के मालिक हों तो उन्हें जमीन पट्टे पर उठा देने का हक रहे, अगर वे पट्टेदार हों तो उन्हे पट्टे पर मिली जमीन किसी और को उठा देने का हक रहे। सेना से निवृत्त होने पर वे अपनी खुद की या पट्टे की जमीन खुदकाश्त के लिए वापस ले सकें। इस दिशा मे कोई रोक-टोक न हो।

२२. आम राय यह है कि जमीदार को खुदकाश्त के लिए पट्टेदार से जमीन वापस लेने का अधिकार होना चाहिए। पहली पचवर्षीय योजना में यह प्रस्ताव किया गया था कि जमीदार को खुदकाश्त के लिए हद से हद इतनी जमीन वापस लेने दी जाए जिसका क्षेत्रफल एक परिवार के लिए पर्याप्त जमीन से तिगुना हो। जमीन सिर्फ खुदकाश्त के लिए ही वापस लेने दी जाए और उसका क्षेत्रफल इतना ही रखा जाए जिसे जमींदार के परिवार के प्रौढ़ सदस्य जोत-बो सकते हों। इस प्रस्ताव का पालन करने मे पिछले तीन वर्षो मे जो अनुभव प्राप्त हुआ है उससे यह लगता है कि बड़े पैमाने पर बेदखली न होने देने की कोई कारगर व्यवस्था होनी चाहिए। व्यवहार मे सवाल यह उठता है कि जो मालिक खुदकाश्त करना चाहता हो और जिस पट्टेदार की इस वजह से रोटी-रोजी जाती हो, उनके परस्पर-विरोधी हित का समन्वय किस प्रकार किया जाए कि दोनों की बात रह जाए। बहुत-से राज्यों मे एक सीमा से आगे जमीदार खुदकाश्त के लिए जमीन वापस नही ले सकता। लेकिन इसके बाद भी उन जमींदारो की समस्या बच रहती है जिनकी जमीन एक परिवार के लिए पर्याप्त समझी जाने वाली जमीन से कम हो, या उससे तो ज्यादा हो पर खुदकाश्त की निर्धारित सीमा से कम पड़ती हो।

२३. छोटे-मोटे जमीदारों की आर्थिक दशा पट्टेदारो की आर्थिक दशा से इतनी भिन्न नही कि पट्टेदारी कानून मे उनके नुकसान की कोई बात रखना उचित ठहराया जा सके। यह जरूर वाछनीय है कि जो छोटा जमीदार खुदकाश्त के लिए जमीन वापस लेना चाहता हो उसे वैसा करने दिया जाए। मगर साथ ही पट्टेदार का हित-अहित बिसार देना भी मुश्किल है। काफी लोगों की यह राय है कि जिन जमीदारो की कुल जमीन बहुत थोड़ी-सी हो, उन्हें पट्टेदारों से सारी जमीन वापस लेने देनी चाहिए। इसकी सीमा इतनी रखी जाए कि जिसे बुनियादी चक समझा जा सके। जमीन के टुकड़े न होने देने के कानूनो में 'बुनियादी चक' की परिभाषा आम तौर से यों की जाती है: वह छोटे से छोटा क्षेत्र जिसमे खेती करना आर्थिक दृष्टि से फायदेमन्द हो। व्यवहार में हम यह मान सकते है कि परिवार का चक तीन बुनियादी चकों के बराबर है। तो मतलब यह हुआ कि जिन लोगों के पास एक परिवार के लिए पर्याप्त समझी जाने वाली जमीन की तिहाई जमीन हो, उन्हें अपनी सारी जमीन खुदकाश्त के लिए वापस लेने का अधिकार होना चाहिए। रहे वे लोग

जिनकी जमीन बुनियादी चक से तो ज्यादा हो मगर पारिवारिक चक से कम हो; उनके बारे में यह सुझाव दिया जाता है कि उन्हें अपनी आधी जमीन वापस लेने का अधिकार दिया जाए, हां, इस बात का ध्यान रखा जाए कि इन्हे जो जमीन वापस मिले वह किसी भी हालत मे बुनियादी चक से कम न हो। अगर जमीदार के वापस लेने के बाद पट्टेदार के पास जमीन बिल्कुल ही न बच रहे, या बुनियादी चक से कम बच रहे, तो सरकार उसे कहा से इतनी जमीन दिलाए कि उसके पट्टे में कम से कम एक पूरा बुनियादी चक हो जाए। जब जमीन की अधिकतम सीमा निश्चित कर दी जाएगी और अतिरिक्त भूमि पर सरकार का कब्जा हो जाएगा तो पट्टेदारो को बुनियादी चक दिलाने के काम में किसी हद तक सुविधा हो जाएगी।

२४. जहां तक उन लोगों का सवाल है जिनकी जमीन पारिवारिक चक से ज्यादा हो मगर खुदकाश्त के लिए निश्चित से कम, खास ध्यान इसी बात का रखा जाना चाहिए कि पट्टेदारों के पास भी थोड़ी-बहुत जमीन बच रहे। 'थोडी-बहुत' का मतलब क्या है, यह तो जमीदार की खुदकाश्त की जमीन के क्षेत्रफल पर निर्भर है। प्रस्ताव यह है कि—

(१) अगर जमींदार के पास खुदकाश्त की इतनी जमीन हो जो एक पारिवारिक चक से ज्यादा मगर निश्चित अधिकतम सीमा से कम हो, तो उसे पट्टेदार से जमीन वापस लेने दी जाए, अलबत्ता इस बात का ध्यान रखकर कि पट्टेदार के पास कम से कम एक पारिवारिक चक के बराबर जमीन बच रहे, और जमीदार की खुदकाश्त की जमीन का क्षेत्र कुल मिलाकर निश्चित अधिकतम सीमा से ज्यादा न हो जाए।

(२) अगर जमींदार के पास खुदकाश्त की जमीन एक पारिवारिक चक से कम हो तो उसे पट्टेदार की जमीन की आधी या इतनी जमीन वापस दे दी जाए कि उसका खुदकाश्त का इलाका कुल मिलाकर एक पारिवारिक चक के बराबर हो जाए, मगर शर्त यह हो कि पट्टेदार के पास कम से कम एक बुनियादी चक के बराबर जमीन बच रहे।

२५. यह जरूरी है कि मालिक-जमीन खुदकाश्त के लिए जो जमीन वापस ले सकता हो उसकी सीमा पर निशान लगाने का काम जितनी जल्दी हो सके पूरा कर दिया जाए। पाच-छः महीने की एक ऐसी उचित अवधि तय कर ली जाए जिसमें मालिक-जमीन खुदकाश्त का क्षेत्र निर्धारित कराने के लिए आवेदन कर सकें। माल विभाग के अधिकारी इस बात का न्यायोचित फैसला करे कि पट्टेदार से कितनी जमीन वापस ली जा सकती है, कितनी नहीं। जो इलाका खुदकाश्त की सीमा के अलावा हो, उसमें पट्टेदारों को स्थायी और मौरूसी हक दिया जाए। उन्हें पट्टे की जमीन दूसरे के नाम करने का भी थोड़ा-बहुत अधिकार दिया जाए ताकि वे जमीन रेहन रखकर सरकार से या सहकारी समितियों से कर्ज ले सकें। जो जमीन वापस ली जा सकती हो उसके पट्टेदारों को मौरूसी (मगर स्थायी नही) हक होने चाहिएं। उन्हें जमीन में सुधार करने का अधिकार भी मिलना चाहिए। ऐसा विधान कर देना भी वांछनीय है कि जमींदार एक निश्चित अवधि में ही जमीन वापस ले सकता है और उस अवधि के बाद स्वामित्व पट्टेदार को दे दिया जा सकता है। इसके लिए पहली योजना में पाच वर्ष की जो अवधि सुझाई गई है वह पर्याप्त जान पड़ती है। छोटे-छोटे जमींदारों के लिए ऐसा कोई प्रतिबन्ध रखना जरूरी नही।

लगान का नियमन

२६. पहली पंचवर्षीय योजना मे कहा गया था कि लगान की ऐसी दर जो पैदावार के चौथाई या पांचवे हिस्से से ज्यादा हो, बगैर किसी खास वजह के लागू न होने दी जाए। लगान नियमित करने का काम सभी जगह बराबर नही हुआ है, कई राज्यों में अभी तक इसकी कानूनी व्यवस्था नही हुई है। लगान के बारे में विभिन्न राज्यों में अब भी बहुत अन्तर है। अधिकतम लगान राजस्थान और बम्बई में पैदावार का छठा हिस्सा, दिल्ली और अजमेर और किसी हद तक हैदराबाद और असम मे पाचवा हिस्सा, उडीसा, हिमाचल प्रदेश, मैसूर के कुछ भागों मे, और असम, हैदराबाद और विन्ध्य प्रदेश मे कुछ मामलों में चौथाई हिस्सा, पंजाब और पेप्सू में, मैसूर के कुछ भागों में और कच्छ में कुछ मामलों में तिहाई हिस्सा, और बिहार में ७/२० हिस्सा निश्चित हुआ है। दूसरी ओर मद्रास मे सिर्फ तजौर और मलाबार में ही लगान नियमित है। तंजौर में लगान पैदावार का साठ प्रतिशत भाग लिया जाता है और मलाबार में आम तौर पर पचास प्रतिशत। पश्चिम बंगाल में साझेदार को, अगर काश्त का खर्च उसी ने उठाया हो तो, फसल का चालीस प्रतिशत, नही तो पचास प्रतिशत भाग जमीदार को देना पड़ता है। आंध्र जैसे कुछेक राज्यों में तो लगान का नियमन बिल्कुल हुआ ही नही है। यह आवश्यक हो चला है कि जल्दी ही लगान की दरों को घटाकर उतना कर दिया जाए जितना कि पहली योजना में सुझाया गया था। साथ ही, लगान को नकद चुका सकने की व्यवस्था भी कर दी जाए तो और भी अच्छा रहे। लगान का सामान्य ढंग से नियमन करने के साथ-साथ अधिकतम लगान को मालगुजारी के कुछ गुने के बराबर तय कर देना भी बहुत उपयोगी रहेगा।

पट्टेदार और स्वामित्व का अधिकार

२७. यह बात तय पाई जा चुकी है कि जो जमीन खुदकाश्त के लिए वापस न ली जा सकती हो उसके पट्टेदारों को अपने-अपने चकों का स्वामित्व प्रदान करने के लिए जल्दी ही जरूरी कदम उठाने चाहिएं। इस दिशा में अब तक प्रगति मन्द रही है। सुझाव यह है कि फौरन यह काम तो कर दिया जाए कि जो जमीन खुदकाश्त के लिए वापस न ली जा सकती हो उसके पट्टेदारों का राज्य से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाए। इस प्रसंग मे लगान घटाने का बड़ा महत्व होगा। लगान घटाने का काम पहले पूरा कर दिया जाए, उसके बाद हर राज्य मे वापस न ली जा सकने वाली जमीन के पट्टेदारों को स्वामित्व का अधिकार दिलाने का, और जमीदार-पट्टेदार सम्बन्ध की आखिरी निशानिया भी मिटा डालने का आयोजन हो। जैसा पहले बताया जा चुका है, उत्तर प्रदेश और दिल्ली मे सब पट्टेदार सीधे राज्य के नियन्त्रण मे रख दिए गए है। अन्य राज्यो में इस मामले मे दो भिन्न रास्ते अपनाए गए हैं। मध्य प्रदेश, पजाब, हैदराबाद, मध्य भारत राजस्थान और जल्द एक अन्य राज्य में पट्टेदारों को यह सुविधा दी गई है कि अगर उनकी मर्ज हो तो स्वामित्व के अधिकार खरीद लें। लेकिन हैदराबाद और हिमाचल प्रदेश, इन दो राज्यों सरकार ने पट्टेदारों से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार भी रखा है। यह देखा गय है कि जहां जमीन का स्वामी बनना पट्टेदारों की मर्जी पर छोड़ दिया गया है, वहां बिरले ही पट्टे दार स्वामित्व का अधिकार खरीदते है। इसकी एक खास वजह यह है कि उनके पास स्वामित का अधिकार खरीदने के लिए फालतू धन नही होता।

२८. ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि पट्टेदारों को अपनी मर्जी स्वामित्व खरीदने का अधिकार दे देना ही काफी नही है। जो जमीन खुदकाश्त के लि

वापिस न ली जा सकती हो, उसके सब पट्टेदारो का सरकार से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर देने की जरूरत है। पहली पचवर्षीय योजना मे यह बात अच्छी तरह समझ ली गई थी और इसलिए सुझाव दिया गया था कि खुदकाश्त के लिए निर्धारित सीमा से ज्यादा जो भी जमीन हो उसके बारे में आम तौर से पट्टेदारों को मालिक-जमीन बना देने की ही नीति अपनाई जाए। यह तीन तरह से किया जा सकता है :—

(१) राज्य लगान वसूल करे, और जमीदारों को मुआवजा देने का प्रबन्ध करे।

(२) राज्य पट्टेदारों से लगान के साथ-साथ किस्तो मे मुआवजा भी वसूल कर ले।

(३) राज्य पट्टेदारो से लगान वसूल करे, और पट्टेदार मुआवजे की किस्तें सीधे जमीदार को ही अदा कर दिया करें।

पहले और दूसरे रास्ते पर चलने के माने यह होंगे कि राज्य मुआवजे की रकम ऐसे बौण्डों के रूप में अदा करेगा जो बीस-बाईस वर्ष बाद भुनाए जा सकते है। पहला उपाय अपनाने पर मुआवजा उस वृद्धि पर आधारित होगा जो कि राज्य सरकार की आय में होगी, यानी जमी-दारों से जो मालगुजारी मिला करती थी उसके और अब जो पट्टेदारों से उचित लगान मिलेगा उसके अन्तर से मुआवजा अदा किया जाएगा। लेकिन इस उपाय को अपनाने से कुछ दिक्कते सामने आ सकती है, कारण, लगान की दरें जगह-जगह अलग-अलग है और नीति के अनुसार उनका क्रमशः घटाया जाना निश्चित है। इस प्रकार मुआवजा तय करने का कोई पक्का आधार मिलना मुश्किल हो सकता है। तीसरा जो उपाय बताया गया है उसमें दिक्कत हो सकती है कि पट्टेदार किस्तें समय से अदा न करें।

इसलिए कुल मिलाकर ऊपर के तीन उपायों में से दूसरा उपाय ही सबसे अच्छा जान पड़ता है। लेकिन इसमें यह ध्यान रखने की जरूरत होगी कि पट्टेदार पर बहुत ज्यादा भार न पड़ जाए। भार ज्यादा न होने देने के लिए ऐसा विधान कर दिया जा सकता है कि पट्टेदार को साल में लगान और मुआवजे की किस्तों के रूप में जो रकम देनी पड़े वह योजना मे निर्दिष्ट लगान के स्तर से ज्यादा न हो, यानी कुल पैदावार के चौथाई या पांचवे हिस्से से ज्यादा न हो। खयाल है कि मुआवजे की कुल रकम पट्टेदार से मय ब्याज के वसूल की जा सकेगी; सरकार पर कोई आर्थिक भार नहीं पड़ेगा।

२९ पहली पंचवर्षीय योजना के दौरान में पट्टेदारों को जमीन का स्वामित्व प्रदान करने के काम की प्रगति आकना सही-सही और पूरी-पूरी सूचना के अभाव में मुश्किल रहा है। राज्यों को इस सम्बन्ध मे साल के साल ब्योरेवार सूचना तैयार करनी चाहिए।

जमीन की बांट और चकों का आकार

३०. पहली पंचवर्षीय योजना मे यह सिद्धांत माना गया है कि कोई आदमी ज्यादा से ज्यादा कितनी जमीन का मालिक हो सकता है। इस बारे में एक सुनिश्चित सीमा निर्धारित होनी चाहिए। सुझाव दिया गया था कि यह सीमा हर राज्य अपनी खास समस्याओं और कृषि इतिहास का विचार करके निश्चित करे। चक किस तरह बंटे हुए है, और उनका आकार कितना है, इस बारे में प्रामाणिक सूचना के अभाव की ओर ध्यान खीचा गया था और प्रस्ताव किया गया था कि चक और खेती के बारे में परिगणना कराई जाए। इस सुझाव के अनुसार जनवरी १९५४ में राज्य

सरकारों से चक और खेती के विषय में परिगणना कराने को कहा गया। यह तय पाया गया कि जिन इलाकों में जमीन का सालाना हिसाब-किताब रखने का इन्तजाम है, उनमे यह परिगणना आम तौर से राज्य सरकार की मालगुजारी शाखा से कराई जाए। शजरा, खतौनी वगैरह जो भी दस्तावेज उपलब्ध हो सकें उनके आकडो पर अच्छी तरह विचार किया जाए और जरूरत हो तो किन्ही खास बातो की जानकारी पाने के लिए पड़ताल भी करा ली जाए। परिगणना के काम को जल्दी पूरा करने के खयाल से नवम्बर १९५४ मे राज्यो के एक सम्मेलन में यह फैसला हुआ कि कोई राज्य सरकार अगर चाहे तो परिगणना सिर्फ उन चको के बारे में कर सकती है जो १० एकड या उससे ज्यादा के हों। जिन इलाकों में जमीन का साल का हिसाब-किताब न रखा जाता हो, वहा नमूने की पड़ताल से काम चलाने का प्रस्ताव हुआ।

३१. जिन मुख्य-मुख्य धारणाओं को लेकर यह परिगणना की गई, उनका ब्योरा इस प्रकार है —

(१) परिगणना का सम्बन्ध किसी आदमी की उस जमीन से है जो कृषि योग्य हो; खेती की इस जमीन मे चरागाह और बाग-बगीचे भी शामिल किए जाएं। ऐसी जमीन की, जिसमे खेती न हो सकती हो—उदाहरण के लिए जगल—गणना न की जाए। शहर मे जो जमीन हो उसका भी हिसाब न लिया जाए।

(२) "अपनी जमीन" की परिभाषा इस प्रकार की जाए कि उसमें जमींदार की खुद जमीन के साथ-साथ वह जमीन भी शामिल की जा सके जिसे उसने (स्थायी और मौरूसी रूप से) ले रखा हो। अगर "क" की कोई जमीन "ख" ने कब्जे के अधिकार से ले रखी हो तो उसे "ख" ही की जमीन मे गिना जाए, "क" की मे नही। यह भी तय पाया गया था कि जिन लोगो को जमीन पर कानून से स्थायी और मौरूसी अधिकार न मिले हों पर जिन्हें व्यवहार में इन अधिकारों का उपयोग करने का पूरा अवसर प्राप्त हो उन्हे भी मालिक-जमीन समझा जाए—यथा बम्बई राज्य के संरक्षित पट्टेदारो की जमीन उनकी खुद की जमीन मानी गई है।

(३) किसी आदमी के पास सारे राज्य में कुल मिलाकर जितनी कृषि भूमि हो, वह एक ही चक के बराबर मानी जाए। अगर स्वामित्व में साझा हो तो हर साझेदार का अपना हिस्सा अलग चक समझा जाए।

(४) खुदकाश्त का क्षेत्र, खुद की कुल जमीन और पट्टे पर उठाई जमीन के क्षेत्रफलों के अन्तर के बराबर माना जाए। पट्टेदार को मिली उस जमीन को पट्टे पर उठाई जमीन समझा जाए जिस पर उसे स्थायी और मौरूसी अधिकार प्राप्त न हुए हो।

३२. भूमि सुधार की कोई भी व्यापक योजना कार्यान्वित करते समय ऐसा उपाय करना जरूरी हो जाता है कि जमीन के क्षेत्रफल के साथ-साथ उसके उपजाऊपन की भी अभिव्यक्ति हो जाए, या दूसरे शब्दो में यों कहें कि किस्म-किस्म की जमीन के लिए एक ही मापदण्ड निर्धारित हो सके। पंजाब और पेप्सू में पाकिस्तान से बेघर होकर आए ५ लाख से भी ज्यादा लोगो को कोई ५० लाख एकड़ जमीन में इस बात का विचार करते हुए बसाया गया था कि वे पाकिस्तान में जो जमीन छोड़कर आए हैं वह कैसी थी और उस पर उन्हे क्या हक मिले हुए थे। इस तरह जो

अनुभव प्राप्त हुआ उसे देखते हुए सभी राज्य सरकारों से यह अनुरोध किया गया कि वे स्टैण्डर्ड एकड़ के निर्धारण के लिए कोई अच्छा-सा सूत्र निकाले। उससे हर राज्य मे विभिन्न प्रकार की जमीन अनुमोदित स्टैण्डर्ड एकड़ के हिसाब मे मापी जा सकती है। स्टैण्डर्ड एकड़ किसी खास किस्म की ऐसी एक एकड़ जमीन है जिसे आधार मानकर सभी किस्म की जमीन मूल्यांकित की जा सके। कुछ राज्यों मे स्टैण्डर्ड एकड़ बन्दोबस्त मे दर्ज पैदावार का और दूसरे उपलब्ध आंकडों का विचार करते हुए जमीन के उपजाऊपन के संदर्भ में तय किया गया है। अन्य राज्यो मे सिचाई साधनों, या मालगुजारी के किन्ही दिए हुए आंकडो, या लगान दरों की दृष्टि से, कहीं-कही स्टैण्डर्ड एकड निश्चित करते समय एक से ज्यादा बातों को ध्यान मे रखा गया है। इस प्रकार हर राज्य या प्रदेश की जमीन के किसी विषय में तुलना करने के लिए स्टैण्डर्ड एकड़ों का उपयोग अभी सम्भव नही। इसके लिए और अध्ययन करने की जरूरत है। हां, किसी एक राज्य या प्रदेश-विशेष मे सभी तरह की जमीन की माप करने के लिए स्टैण्डर्ड एकड़ तय हो जाने से पुनर्वास और पुर्नवितरण के कार्यक्रम मे बहुत सुविधा हो जाती है। हो सकता है कि आगे कभी जाँच-पड़ताल करके सारे देश के लिए ऐसा स्टैण्डर्ड एकड़ निश्चित कर दिया जाए जिसके आधार पर विभिन्न राज्यों के स्टैण्डर्ड एकड़ो की तुलना सभव हो।

३३. चक और खती सम्बन्धी परिगणना २२ राज्यों मे हो चुकी है। आध्र, बम्बई, मध्य प्रदेश, मद्रास, हैदराबाद, मध्य भारत, सौराष्ट्र, अजमेर, भोपाल और कच्छ—इन दस राज्यों मे सभी चकों की पूरी तरहग णना की गई। पंजाब, पेप्सू, मैसूर, कुर्ग, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश और विन्ध्य प्रदेश—इन सात राज्यों में गणना पूरी तरह तो की गई मगर सिर्फ १० एकड़ या उससे ज्यादा चकों की ही की गई। उत्तर प्रदेश में जहा गावों में जमीन का बाकायदा सालाना हिसाब-किताब रखने की प्रथा है, राज्य सरकार ने सिर्फ नमूने की एक पड़ताल कर लेने का फैसला किया क्योंकि माल विभाग के कर्मचारी चकबन्दी के काम मे व्यस्त थे। बिहार, उड़ीसा, राजस्थान और तिरुवाकुर-कोचीन में, जहां जमीन के पूरे सालाना लेखे उपलब्ध नही हैं, नमूने की पड़ताल कराई गई। असम और पश्चिम बंगाल में राज्य सरकारें चकों के बारे में पहले ही कुछ सूचना प्राप्त कर चुकी थी। जमीन की अधिकतम सीमा निश्चित कर देने के विषय मे पश्चिम बंगाल मे आवश्यक कानून बन चुका है और असम में एक विधेयक पास किया जा चुका है। जम्मू-कश्मीर में भी अधिकतम सीमा का निर्धारण हो चुका था, इसलिए वहां कोई विशेष परिगणना करने की जरूरत नही समझी गई। मणिपुर और त्रिपुरा मे कर्मचारियों की कमी थी और सभी स्थान खासे दुर्गम थे, इसलिए वहा परिगणना करने का इरादा छोड़ दिया गया। बीस राज्यों से परिगणना की रिपोर्ट आ चुकी है। बाकी से भी जल्दी ही आती होगी।

३४. चक वितरण और आकार के बारे में जो आंकड़े जमा किए गए हैं वे जमींदार की कुल जमीन और खुदकाश्त जमीन दोनों के ही हिसाब से जमा किए गए हैं। ये आंकड़े अन्तिम या अपरिवर्तनीय नहीं। अधिकतर राज्यो से यह सूचना साधारण एकड़ों और स्टैण्डर्ड एकड़ों दोनों मे ही प्राप्त हुई है। स्टैण्डर्ड एकड़ की माप हर राज्य ने अपनी सुविधा के लिए अलग निर्धारित की है और उसे अभी राज्य-राज्य की तुलना करने का आधार नही माना गया है। इसलिए इस अध्याय के दूसरे परिशिष्ट मे उपलब्ध आकडे सिर्फ साधारण एकड़ो मे दर्शाए गए है। आगे चलकर चक और खेती सम्बन्धी इस परिगणना के बारे में अलग से एक विशेष रिपोर्ट प्रकाशित करने का प्रस्ताव है।

कृषि भूमि की अधिकतम सीमा का निर्धारण

३५. पहली पंचवर्षीय योजना मे यह सिद्धात अपनाने की सिफारिश की गई थी कि कोई आदमी ज्यादा से ज्यादा कितनी जमीन का मालिक हो सकता है—इस विषय मे एक सीमा निश्चित होनी चाहिए । चक और खेती के बारे में जो परिगणना हुई है उससे राज्यो की अधिकतम सीमा निर्धारित करने के प्रस्ताव पर चलने के वास्ते काफी सूचना प्राप्त हो गई है । परिगणना से जो आकड़े सामने आए हैं, कोई भी ब्योरेवार आयोजन करने से पहले उनका ध्यान से विचार करने की जरूरत है । अधिकतम सीमा के निर्धारण की समस्या के प्रति क्या रवैया अपनाया जाए, इस बारे मे यहा सिर्फ मोटी-मोटी बातें दी जा रही है । जाहिर है, हर राज्य को इनके आधार पर ब्योरेवार योजना खुद ही ध्यानपूर्वक तैयार करनी होगी । मुख्य विचारणीय प्रश्न ये है :—

(क) अधिकतम सीमा किस-किस जमीन पर लागू हो ?

(ख) यह अधिकतम सीमा मोटे तौर पर कितनी हो ?

(ग) इससे छूट दी जाए तो किस आधार पर ?

(घ) क्या कदम उठाए जाए कि लोग अधिकतम सीमा की व्यवस्था से बचने के लिए जमीन को बेइमानी की नीयत से किसी और के नाम न कर पाएं ?

(ङ) जो अतिरिक्त ज़मीन सरकार अपने हाथ मे ले उसके लिए मुआवजा किस हिसाब से दिया जाए ?

(च) उस अतिरिक्त भूमि को फिर से किस तरह बाटा जाए ?

३६. सीमा-निर्धारण के दो पहलू हैं : (१) आगे जो जमीन ली जाए उसकी सीमा का निर्धारण; और (२) अब जो जमीन है उसकी सीमा का निर्धारण । उत्तर प्रदेश मे ऐसा विधान है कि कोई भी व्यक्ति आगे से ३० एकड़ से ज्यादा जमीन नहीं ले सकता । इस विषय मे दिल्ली मे ३० स्टैण्डर्ड एकड की, बम्बई में जमीन की किस्म के अनुसार १२ से लेकर ४८ एकड़ तक की, पश्चिम बंगाल मे २५ एकड़ की, हैदराबाद में तीन पारिवारिक चकों की, सौराष्ट्र में तीन लाभकारी चकों की, और मध्य भारत मे ५० एकड़ की सीमा निर्धारित है । अन्य राज्यों मे यह सीमा अभी तक निर्धारित नही हुई है । इन राज्यों में इस काम में अब ज्यादा विलम्ब नहीं करना चाहिए ।

३७ दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में हर राज्य में विद्यमान कृषि भूमि की भी अधिकतम सीमा तय कर देने का विचार है । यह सीमा हर जमीदार की अपनी जमीन के विषय में हो । अपनी जमीन मे उस जमीन की भी गिनती की जाए जिस पर उसे पट्टे द्वारा स्थायी और मौरूसी हक प्राप्त हो । जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, इस तरह की पट्टेदारी की जमीन का स्वामित्व पट्टेदार को ही दे देने की व्यवस्था की जा सकती है ।

३८. एक विचारणीय प्रश्न यह है कि अधिकतम भूमि की सीमा एक व्यक्ति के बारे मे हो या एक परिवार के बारे मे । दूसरे सुझाव के पक्ष मे यह तर्क किया जा सकता है कि खेती के मामले में परिवार को ही बुनियादी इकाई माना जाता रहा है, व्यक्ति को नही । इस बात का विचार करते हुए योजना आयोग द्वारा नियुक्त भूमि सुधार मण्डल ने यह सिफारिश की है कि अधिकतम भूमि की सीमा सारे परिवार की कुल जमीन के बारे मे होनी चाहिए । इस प्रसंग मे परिवार में पत्नी और पति के अतिरिक्त बेटे-बेटियो और नाती-पोतों की गिनती की जाए ।

लेकिन उधर चक और खेती की परिगणना में यह मानकर चला गया है। किसी व्यक्ति विशेष के पास सारे राज्य मे कुल मिलाकर जितनी जमीन हो वह एक ही चक के बराबर है और अगर स्वामित्व मे साझा है तो हर साझेदार का अपना हिस्सा एक अलग चक के बराबर है। इसलिए प्रशासन की सुविधा की दृष्टि से व्यक्ति विशेष की जमीन की अधिकतम सीमा निर्धारित करने का सुझाव ज्यादा उपयुक्त जान पडता है, क्योंकि सीमा-निर्धारण की योजना लागू करते समय हलफनामों और नियतकालिक विवरणों के साथ-साथ चक और खेती की परिगणना के दस्तावेजों का भी बहुत उपयोग होगा। परिवार की जगह व्यक्ति को इकाई मानने के विरोध मे यह अवश्य कहा जा सकता है कि उससे सरकार को पुनर्वितरण के लिए अपेक्षाकृत कम जमीन प्राप्त होगी।

३९ रास्ता चाहे जो अपनाया जाए, साथ-साथ इस बात की पक्की व्यवस्था जरूर कर दी जाए कि कोई भी जमीदार बेईमानी की नीयत से अपनी जमीन दूसरे के नाम न कर पाए। अधिकतम भूमि की सीमा लागू करते समय अगर एक व्यक्ति की जमीन का विचार किया गया, एक परिवार का नही तो शायद इस तरह की धोखेबाजी की ज्यादा आशका रहेगी, क्योंकि उस दशा में जमीदार अपनी जमीन को परिवार वालों मे इस तरह बांट सकेगा कि अधिकतम सीमा के नियम से उसे कम से कम नुकसान हो। स्पष्ट है कि इस तरह के हस्तान्तरण रोकने का खास इन्तजाम करना होगा। हर राज्य को चाहिए कि उसके यहा पिछले दो-तीन वर्षो मे बेईमानी की नीयत से जमीन के जो हस्तान्तरण हुए हों उनके प्रभाव की जांच कराए और इस तरह के हस्तान्तरण के तात्कालिक निषेध का कोई उपाय करे। जो हस्तान्तरण हो चुके हों, उनकी जाच कराई जाए। यदि कोई व्यक्ति अपनी जमीन का हस्तान्तरण कर दे और उसके बाद भी उसके पास जमीन बच रहे, तो उस हालत मे इस सवाल पर गौर किया जाना चाहिए कि क्या भूमि की सीमा लागू करते समय यह मानकर चला जाए कि हस्तान्तरण मानो हुआ ही नही। राज्यों को यह भी प्रबन्ध कर देना चाहिए कि आगे बेईमानी की नीयत से जमीन का हस्तान्तरण न हो पाए।

अधिकतम सीमा कितनी हो

४०. अधिकतम सीमा किस स्तर पर लागू हो, इसका विचार करते समय कोई ऐसी सुविधाजनक इकाई ढूढ निकाली जाए जो मोटे तौर पर देश के सभी भागों के लिए समुचित ठहरती हो। और बाद मे हर राज्य अपनी विशिष्ट परिस्थिति को ध्यान में रखकर उसमें आवश्यक संशोधन-परिवर्द्धन कर सकता है और उसका ब्योरा तय कर सकता है। पहली पंचवर्षीय योजना मे सुझाव दिया गया था कि इस और ऐसे ही अन्य प्रसगों में क्षेत्र विशेष की परिवार-पर्याप्त भूमि की कुछ गुने भूमि अधिकतम निश्चित कर दी जाए। 'परिवार-पर्याप्त भूमि' या 'पारिवारिक चक' के दो पहलू हैं. (१) वह कृषि की एक इकाई हो; और (२) वह इतनी जमीन हो जिसमें खेती करने से एक निर्दिष्ट औसत आय हो सकती हो। पहली पंचवर्षीय योजना मे 'पारिवारिक चक' की व्याख्या यो हुई थी : स्थानिक परिस्थिति और कृषि प्रणाली के अनुसार एक औसत परिवार सिर्फ इतनी ही सहायता लेकर जितनी कि खेती में आम तौर से ली जाती रही हो, जितनी जमीन को जोत या बो सकता हो, उसे ही एक पारिवारिक चक समझा गया है। किसी जमीन से कितनी आय होगी, यह इस पर निर्भर है कि उसमे क्या कुछ बोया जाता है, खेती कितनी कुशलता से की जाती है। एक ही जमीन से विभिन्न लोगो को उनकी कुशलता, क्षमता

और साधन के अनुसार विभिन्न आय हो सकती है। ज्यों-ज्यों कृषि के नए तरीकों का प्रचलन होता जाएगा, और कृषि प्रणाली अधिक कुशल और नानाविध होती जाएगी, भूमि से प्रति इकाई आय भी बढ़ती ही जाएगी। इसलिए 'पारिवारिक चक' की आय के हिसाब से निर्धारण करना, और वह भी तब जब स्वय निर्दिष्ट आय कृषि-जन्य पदार्थों के एक कल्पित भाव के आधार पर तय की गई हो, मुश्किल ही है। इसलिए सुविधा इसी में है कि हर राज्य विभिन्न इलाकों की परिस्थिति, जमीन की किस्म, सिचाई के साधन आदि को ध्यान में रखकर आय की नही क्षेत्रफल की दृष्टि से यह तय कर दे कि एक परिवार के लिए कितनी जमीन पर्याप्त होती है। 'पारिवारिक चक' के सिद्धात पर व्यवहार करते समय भी काफी कठिनाइयां उठ सकती है। इस प्रश्न का आगे विचार करने के लिए बन्दोबस्त और माल विभाग के अनुभवी लोगों की एक छोटी-सी समिति बैठा देना अच्छा रहेगा।

यह देखते हुए कि देश में लोगों के पास जो कृषि भूमि है उसमे से कुछ ही को 'बड़े चक' की सज्ञा दी जा सकती है। भूमि की अधिकतम सीमा तीन 'पारिवारिक चक' निश्चित कर देनें में सुविधा होगी। अगर अधिकतम सीमा एक सम्पूर्ण परिवार की जमीन क संदर्भ में निश्चित हो तो इस बारे मे कोई न कोई विधान करना आवश्यक हो जाएगा कि परिवार की इकाई मे किन-किन लोगों की गिनती करनी होगी। अगर अधिकतम सीमा व्यक्तिगत चक के संदर्भ में निश्चित हुई तो ऐसा विधान करने की आवश्यकता शायद न पड़े। सामाजिक परिस्थिति और अन्य प्रासगिक तथ्यों का विचार करके हर राज्य यह तय कर सकता है कि भूमि की अधिकतम सीमा व्यक्तिगत चक के सन्दर्भ में लागू की जाए कि पारिवारिक चक के। दूसरा रास्ता अपनाए जाने पर यह खास तौर से जरूरी हो जाएगा कि परिवार के आकार-प्रकार के बारे मे कोई स्पष्ट निर्धारण हो। इस प्रसंग मे यह भी तय करना होगा कि अगर परिवार बड़ा हो तो उसके लिए अधिकतम सीमा बढ़ानी होगी कि नही। भूमि सुधार मण्डल ने, जिसका ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, यह विचार प्रकट किया है कि जिस परिवार मे पांच से ज्यादा सदस्य हों, उसके लिए अधिकतम भूमि की सीमा बढ़ाकर अधिक से अधिक छः पारिवारिक चको तक नियत की जाए।

अधिकतम सीमा से छूट

४१. किसी राज्य में भमि की सामान्य अधिकतम सीमा निश्चित करते समय इस बात का भी विचार करना होगा कि किस-किस तरह की कृषि भूमि को अधिकतम सीमा के विधान से मुक्त रखा जाए। इस विषय में कोई फैसला करते समय इन तीन मुख्य बातों को ध्यान मे रखा जा सकता है :

(१) जहा संयुक्त कार्य होते हों, खासकर जहां औद्योगिक और कृषि कार्य साथ-साथ किए जाते हों,

(२) विशिष्ट कृषि; और

(३) पैदावार की दृष्टि से बड़े-बडे खास ढंग के सुसंचालित फार्म तोड़े न जाएं।

इन मान्यताओं का विचार करते हुए निम्नलिखित वर्ग के फार्मों को अधिकतम सीमा से मुक्त रखना लाभदायी जान पड़ता है :—

(१) चाय, कहवा, और रबड़ के बागान,

(२) फलों के ऐसे बगीचे जिनका इलाका खासा गठा हुआ हो;

(३) ऐसे फार्म जो गोसवर्द्धन, डेरी, भेड़ पालन आदि किन्हीं खास कार्यों के लिए खोले गए हों;

(४) चीनी के कारखानों के गन्ना फार्म; और

(५) ऐसे सुसचालित फार्म जिनका इलाका बिखरा हुआ न हो, जिनमे बहुत धन लगाया जा चुका हो और स्थायी सुधार किए जा चुके हों और जिनके भंग किए जाने से पैदावार घट सकती हो ।

ये सुझाव मोटे तौर पर दिए गए हैं; इनके ब्योरे का तो हर राज्य को अपनी विशेष परिस्थिति और आवश्यकता के सन्दर्भ में विचार करना होगा । उदाहरण के लिए, देश के उन भागों में जहां कृषियोग्य भूमि बंजर पड़ी है और काश्तकारों का अभाव है, वहां भूमि की अधिकतम सीमा निश्चित करने की फिलहाल शायद कोई जरूरत न हो । और हो भी तो वहां सीमा अन्य प्रदेशों की अपेक्षा ज्यादा ऊंची रखना उचित ठहरे । इसके विपरीत जिन इलाकों मे आबादी घनी है वहां सीमा कम ऊंची रखना अपेक्षित हो सकता है ।

मुआवजा

४२. मालिक-जमीन को मुआवजा किस आधार पर दिया जाए, और जिन लोगों को उनकी जमीन दिलाई गई है उनसे जमीन की कीमत किस आधार पर वसूल की जाए—ये नीति विषयक ऐसे सवाल हैं जिनका हर राज्य को अपनी परिस्थिति के अनुसार सोच-समझकर हल निकालना होगा । जहां तक मुआवजे का सम्बन्ध है, मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि किसी निश्चित अवधि, उदाहरण के लिए २० वर्ष के बौण्ड जारी करना सुविधाजनक रहेगा । मुआवजे की रकम तय करने के तीन तरीके हो सकते हैं : (१) विभिन्न किस्म की जमीन के भाव निश्चित करके उनके हिसाब से मुआवजा आंक लिया जाए; (२) जमीन से जो लगान मिलता हो उसका कुछ गुना मुआवजे के रूप में दे दिया जाए; और (३) कोई और उपाय सम्भव हो तो उसे अपना लिया जाए । रहा उन पट्टेदारों से कीमत वसूल करने का सवाल जिन्हे जमीन दिलाई गई हो । इस सिलसिले में यह तय करना होगा कि कीमत क्या हो और उसे कितनी किस्तो में और कितने समय में वसूल किया जाए । जैसा पहले सुझाव दिया जा चुका है, ऐसी व्यवस्था करनी होगी कि जिन पट्टेदारो के नाम जमीन की जाए उन पर कर, मालगुजारी और जमीन की कीमत की किस्म वगैरह का कुल मिलाकर ज्यादा से ज्यादा इतना ही भार पड़े जितना उचित दर पर सालाना लगान का पड़ता है, यानी उनसे कर आदि के रूप मे साल मे कुल मिलाकर सम्पूर्ण फसल का चौथाई या पांचवें भाग के मूल्य की ही रकम वसूल की जाए । अगर भूमि सुधार कार्य उपरोक्त सुझावो के अनुसार किया जाए तो मुआवजे की रकम और ब्याज से राज्य सरकारों पर अतिरिक्त देनदारी नही आ पड़ेगी ।

पुनःस्थापन की योजनाएं

४३. अधिकतम सीमा के निर्धारण से सरकार को जो जमीन मिले, उसका बन्दोबस्त करते समय खुदकाश्त के लिए जमीन वापस लिये जाने से विस्थापित पट्टेदारों का तथा उन किसानों का जिनकी जमीन आर्थिक दृष्टि से अपर्याप्त हो, और भूमिहीन खेतिहरों का खास खयाल रखा जाए ।

जहा तक सम्भव हो, जमीन सहकारी खेती के लिए ही दी जाए। जिन किसानों के पास इतनी कम जमीन हो कि उसमे खेती करने मे कोई फायदा न हो, उन्हे इस तरह के सहकारी कृषि फार्मो में ले लिया जाए। हां, शर्त यह हो कि वे अपनी भूमि फार्म के लिए दे दे। इस तरह किसानों की अपनी जमीन और जमीदारों की अतिरिक्त जमीन मे से सरकार द्वारा दी गई जमीन से जो सहकारी फार्म बनाए जाए उनके सदस्यों को सरकार द्वारा प्रदत्त जमीन का हिस्सा कराने का अधिकार न हो।

४४. भूमि सुधार के प्रसंग मे भूमिहीन खेतिहरो की जिन समस्याओं की ओर ध्यान देना जरूरी है उन पर सोलहवे अध्याय मे विचार किया गया है। लोग इस बात को मानते है कि खेतिहरो की संख्या को देखते हुए कृषि योग्य भूमि इतनी कम है कि थोड़े-से ही भूमिहीन खेतिहरो को जमीन दिलाई जा सकती है। यह जरूरी होगा कि राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का ज्यो ज्यों विकास होता जाएगा, त्यो-त्यों अन्य साधनहीनों की भांति भूमिहीन खेतिहर भी उद्योग आदि क्षेत्रों मे रोजगार पाते जाएगे। तो भी सामाजिक नीति और आर्थिक विकास दोनों की दृष्टि से यह अपेक्षित है कि भूमिहीन खेतिहरों के वर्ग को जो अर्से से साधनों और सुविधाओं से वंचित रहा है, और जिसे सामाजिक और आर्थिक उन्नति के न्यूनतम अवसर भी प्राप्त नहीं हुए, अब ग्राम अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत थोडी-बहुत सुख-सुविधा प्रदान की जाए। इसलिए यह सिफारिश की जाती है कि हर राज्य चक और खेती परिगणना से प्राप्त आकड़ों से यह पता लगाए कि अधिकतम सीमा के निर्धारण से उसे कितनी जमीन मिलेगी, और फिर खेतिहर मजदूरों को उस जमीन पर बसाने की ब्योरेवार योजना तैयार करे। भूदान यज्ञ के द्वारा जो जमीन उपलब्ध हो, उसे भी अतिरिक्त भूमि के बन्दोबस्त सम्बन्धी योजना के लिए ले लिया जाए।

४५. यह ठीक है कि भूमिहीन खेतिहरों को फिर से बसाने के लिए अलग से खास कर्मचारी नियुक्त करने होगे, लेकिन जहा तक जमीन के विकास के लिए आवश्यक साधनों का सवाल है, वे कृषि, राष्ट्रीय विस्तार, सामुदायिक विकास, ग्रामोद्योग और योजना मे निर्दिष्ट अन्य कार्यक्रमो से भी प्राप्त किए जा सकते है। लेकिन पहले यह विचार कर लेना होगा कि इन कार्यक्रमों से विकास के साधन किस हद तक मिल पाएगे। अगर हर राज्य अपने यहा खेतिहर मजदूरो के पुन.स्थापन के बारे में परामर्श करने, और पुन स्थापन की प्रगति का समय-समय पर लेखा-जोखा कर लेने के लिए सरकारी और गैर-सरकारी प्रतिनिधियो का एक मण्डल नियुक्त करे तो बहुत अच्छा रहे। इस तरह का एक सार्वदेशिक मण्डल स्थापित करना भी बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। उनमें पुन:-स्थापन योजनाओं की नीति, संचालन और प्रगति का सारे देश के संदर्भ मे विचार हो सकेगा।

४६ इस प्रसग में भूदान यज्ञ का भी उल्लेख किया जा सकता है। उससे भूमिहीन खेतिहरों के वास्ते अब तक ४० लाख एकड़ से भी ज्यादा जमीन दान में मिल चुकी है और कोई ३ लाख एकड़ जमीन वितरित की जा चुकी है।

कृषि पुनर्गठन

४७. पट्टेदारी सुधार की प्रगति और कृषि भूमि की अधिकतम सीमा के निर्धारण से छोटे-छोटे जमीदारो की संख्या मे खासी वृद्धि हो जाएगी। लगान वसूल करने वाले बिचौलियों की समाप्ति करके, और जमीन जोतने वाले पर कर वगैरह का भार कम करके भूमि सुधार, कृषि पुनर्गठन का रास्ता तैयार कर देता है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, भूमि सुधार और कृषि पुनर्गठन दरअसल एक ही आयोजन के दो पहलू हैं। भूमि सुधार तब तक सफल नही हो सकता

जब तक कर्ज पाने की सुविधा काफी बढ़ा नही दी जाती, भूमि के छोटे-छोटे और आर्थिक दृष्टि से अनुपयुक्त चक समाप्त नही कर दिए जाते, और कृषि भूमि के इस्तेमाल और प्रबन्ध की कमियों को दूर नही कर दिया जाता। खेती के लिए कर्ज पाने की सुविधा के प्रश्न का भूमि सुधार के सदर्भ मे अगले अध्याय मे विचार किया जाएगा। यहा हम कृषि पुनर्गठन की इन चार खास बातों पर सक्षेप मे विचार करेंगे : (१) चकबन्दी, (२) भूमि की देखरेख के तरीके; (३) कृषि की सहकारी व्यवस्था का विकास, और (४) ग्राम संचालन की सहकार प्रणारी जिसकी स्थापना ग्राम अर्थ-व्यवस्था के पुनर्गठन का लक्ष्य है।

चकबन्दी

४८. पहली पंचवर्षीय योजना में सभी राज्यों से यह आग्रह किया गया था कि वे चकबन्दी की और भी बडी योजनाएं बनाएं और उनका उत्साह से पालन करें। चकबन्दी कितनी लाभप्रद होती है, यह बताने की जरूरत नही। यह सर्वविदित है कि उससे समय और मेहनत की बचत होती है। सिंचाई की व्यवस्था द्वारा जमीन अच्छी बन पाती है, अलग-अलग चकों और आबादी के इलाके को नया स्वरूप देने का अवसर प्राप्त होता है, और पक्की सड़के और ऐसी ही अन्य सुविधाए उपलब्ध हो पाती हैं। फिर भी कुछेक को छोड़ बाकी सब राज्यों मे चकबन्दी की दिशा में पर्याप्त यत्न नहीं हुआ है। मार्च १९५५ की समाप्ति तक पंजाब में ४० लाख एकड़, मध्य प्रदेश मे २५ लाख एकड़, और पेप्सू मे १० लाख एकड़ से कुछ ज्यादा जमीन की चकबन्दी हो चुकी थी। बम्बई और दिल्ली मे क्रमश १,०६० और २१० गावों मे चकबन्दी की जा चुकी थी। उत्तर प्रदेश मे २१ जिलों मे चकबन्दी का काम चल रहा है। इस प्रकार कुछ राज्यो मे चकबन्दी मे उल्लेखनीय प्रगति हो चुकी है। अन्य राज्यों मे भी यह काम खासा चल निकला है। मगर कुल मिलाकर अभी चकबन्दी के क्षेत्र मे बहुत कुछ करने को पडा है। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास खण्डो मे चकबन्दी का काम, कृषि कार्यक्रम के परम महत्व का काम समझकर उठाया जाए। अनेक राज्यों ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए अपने कार्यक्रमो में चकबन्दी की व्यवस्था कर रखी है।

४९ देश के विभिन्न भागों मे चकबन्दी का काम शुरू हुए अब एक पीढी गुजर गई। जिन राज्यों मे चकबन्दी पहले शुरू हुई थी, अन्य राज्य उनके अनुभव से फायदा उठा रहे है। इस अनुभव के आधार पर वे अपनी विशिष्ट परिस्थिति का विचार करते हुए अपने यहां चकबन्दी का काम कर सकते है। चकबन्दी सम्बन्धी प्रश्नों को हल करने के लिए देश के विभिन्न भागो में जो तरीके अपनाए गए है, योजना आयोग उनका तुलनात्मक अध्ययन कर रहा है। योजना आयोग चाहता है कि अब तक के अनुभव के आधार पर जो तरीके सर्वोत्तम ठहरते हों, उन्हे सबके उपयोग के लिए उपलब्ध कर दिया जाए।

भूमि की देख-रेख के तरीके

५०. पहली पचवर्षीय योजना में यह सिद्धांत अपनाने की सिफारिश की गई थी कि जमीन की जुताई-बुवाई और रख-रखाव के विषय मे एक निश्चित स्तर बनाए रखने के लिए कानूनी व्यवस्था की जाए। शुरू-शुरू मे केवल बड़ी जमीदारियों के ही संदर्भ मे ऐसी व्यवस्था करने का विचार था। दूसरी योजना के सिलसिले मे कृषि और रख-रखाव की कुशलता के प्रश्न का व्यापकतर दृष्टि से विचार किया जाना होगा। खेती की छोटी-बड़ी सभी तरह की जमीन में

कुशलता से काम हो, ऐसा प्रबन्ध कर देना होगा। भूमि सुधार मण्डल की एक समिति ने इस विषय का इसी पहलू से ब्योरेवार अध्ययन किया है। उसने अनुसन्धान करके अनेक सुझाव, जिनकी हम सिफारिश करते है, प्रस्तुत किए जिनमे से खास-खास ये है :—

(१) सभी काश्तकारो का कर्तव्य है कि वे उत्पादन के उचित स्तर को बनाए रखे और जमीन की उपजाऊ शक्ति को न केवल बनाए रखे बल्कि बढाए भी। जमीन क प्रबन्ध के विषय मे जो कानून बनाए जाएं उनमे इस कर्तव्य का पालन कराने के लिए समुचित प्रेरणा और दण्ड का विधान किया जाए। लेकिन इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि अच्छी खेती के लिए काश्तकार की लगन और मेहनत के अलावा और भी कई चीजे जरूरी होती है। कही ऐसा न हो कि जमीन के रख-रखाव का कानून एकांगी होकर काश्तकार को बाध्य करने का साधन मात्र रह जाए। स्तरों के निर्धारण के साथ-साथ पट्टेदारी सरक्षण, चकबन्दी, सहकारिता विकास, आर्थिक और टेकनीकल सहायता आदि की भी व्यवस्था की जाए।

(२) रख-रखाव सम्बन्धी कानून में ऐसे स्तर निश्चित किए जाए जिनके आधार पर निरपेक्ष और गुणात्मक निर्णय संभव हो। किसी फाम या चक के रख-रखाव की अच्छाई-बुराई का विचार करते समय जिन बातों को ध्यान मे रखा जाना चाहिए वे परिशिष्ट संख्या एक मे सूचीबद्ध है। इन बातों को ध्यान मे रखते हुए प्रबन्ध-कुशलता की दृष्टि से फार्मों को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है : उदाहरणार्थ, दो सामान्य से बढिया फार्मो के और दो सामान्य से घटिया फार्मों के। पहले दो वर्गों के फार्मों को समुचित प्रोत्साहन और मान्यता दी जाए और अन्तिम दो वर्गो के फार्मों को निश्चित स्तर प्राप्त करने मे सहायता देने के लिए जरूरी कदम उठाए जाएं।

(३) रख-रखाव कानून मे कुछ कर्तव्यों के विषय मे ऐसी व्यवस्था रखी जानी चाहिए कि उनका पालन न करने वाले को दण्ड भोगना होगा। उदाहरण के लिए, कुछ कर्तव्य ये है . (क) बडी और मझोली जमीदारियों में कृषि योग्य बजर भूमि में एक निश्चित अवधि मे खेती शुरू कर देना; (ख) जमीन को चौरस बनाना, बाड़ वगैरह लगाना, सिचाई की नालियों की देख-रेख करना, फसल के कीड़ो और बीमारियों की रोकथाम, नराई, और खेत की जमीन ऊची उठाना और मेड़ बांधना; और (ग) अच्छे बीज का उपयोग, मैले से खाद बनाना आदि।

(४) जमीन के रख-रखाव का कानून तो सभी तरह के फार्मों पर लागू होना चाहिए। लेकिन अनुभव प्राप्त करने और उपयुक्त तरीके खोजने के लिए हर राज्य शुरू-शुरू मे इसे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कुछ चुने हुए क्षेत्रो मे ही लागू करे।

(५) गांव में इस कानून का परिपालन कराने की जिम्मेदारी आम तौर पर ग्राम पचायत को सौंपी जाए; हा, साथ ही उसके काम की देख-रेख का प्रबन्ध जरूर कर दिया जाए।

५१. ये कुछ मोटे-मोटे सिद्धांत हैं जिनका रख-रखाव सम्बन्धी कानून बनाते समय विचार किया जा सकता है। कानून के ब्योरे की बातें तो हर राज्य को अपनी आवश्यकता और परिस्थिति के अनुसार तय करनी होंगी। कृषि पैदावार बढ़ाने और प्राकृतिक साधनों को बनाए रखने में जमीन के कुशल रख-रखाव का महत्वपूर्ण योग होगा, इसलिए राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास खण्डों मे इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

सहकारी कृषि

५२. इस बारे मे सभी सहमत हैं कि देश मे सहकारी कृषि का जल्दी से जल्दी विकास होना चाहिए। लेकिन इस दिशा में अब तक जो कुछ करके दिखाया गया है, वह अपर्याप्त और असंतोष-प्रद है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में खास काम यह करना होगा कि सहकारी कृषि की पक्की नींव डाल देनी होगी, जिससे कि दस वर्ष या लगभग इतने ही समय मे काफी जमीन में सहकारी प्रणाली से कृषि होने लगे। दूसरी योजना में सहकारी कृषि के विषय में लक्ष्य क्या हो—यह योजना के पहले वर्ष में हर राज्य से परामर्श करके और अब तक की प्रगति और अनुभव पर विचार-विमर्श करके तय किया जाने वाला है। ये लक्ष्य कृषि पैदावार के लक्ष्य और राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के कार्यक्रम से जुड़े हुए होंगे और उनके साथ ही सिद्ध किए जाएंगे।

५३. कभी-कभी यह सवाल किया जाता है कि आखिर सहकारी कृषि है क्या चीज ? सहकारी कृषि के लिए यह तो अनिवार्य है कि सहयोगी अपनी-अपनी जमीन दे, और इस तरह जो जमीन इकट्ठी हो उसकी देख-रेख और जुताई-बुवाई वगैरह मिल-जुलकर करे। लेकिन विकास की वर्तमान स्थिति मे जमीन मिलाने और फिर सहकारिता के आधार पर उसम खेती करने के सम्बन्ध में काफी नरमी बरती जाए। संगठन कई तरह के सभव हैं। विभिन्न परिस्थितियो मे विभिन्न प्रकार की व्यवस्था की जा सकती है, यथा जमीन इकट्ठा करने के बारे में निम्नलिखित तरीकों में से खाली कोई एक या किन्हीं दो का मिश्रण अपनाया जा सकता है :

(१) हर सहयोगी अपनी-अपनी जमीन का मालिक बना रहे, लेकिन संगठन की सारी जमीन का प्रबन्ध एक इकाई के रूप में चलाया जाए, और इसके लिए सहयोगियों को किसी तरह का स्वामित्व लाभांश दिया जाता रहे।

(२) सहयोगी अपनी जमीन सहकारी संगठन को पट्टे पर उठा दें और बदले में कानून में निर्दिष्ट दर से या आपस मे तय की हुई किसी अन्य दर से रकम पाते रहें।

(३) सहयोगी अपनी जमीन का स्वामित्व सहकारी संगठन के नाम कर द और बदले में उन्हें उनकी जमीन के मूल्य के हिस्से दे दिए जाएं।

सहकारी कृषि संगठनों के कार्य-सचालन के कई तरीके अपनाये जा सकते है। संगठन के या तो सभी काम मिल-जुलकर किए जा सकते है या कुछ मिल-जुलकर और बाकी अलग-अलग अपने आप परिवारों के समूह संगठन के अन्तर्गत अलग-अलग छोटी इकाइयों के रूप में काम कर सकते हैं। या, जैसा सहकारिता विकास के पहले-पहले दौर में ज्यादा संभव है, हर परिवार अपनी जमीन पर काम करे और कुछ निश्चित कार्यों मे दूसरे परिवारों का हाथ बंटाए। सहकारी प्रणाली तो ऐसी चीज है कि कृषि या अन्य किसी क्षेत्र में किसी परिस्थिति विशेष में उसका कौन-सा रूप उपयुक्त होगा, इस बारे में बिना आजमाइश किए कुछ नहीं कहा जा

सकता । व्यावहारिक अनुभव नितांत आवश्यक हो जाता है । इसलिए सहकारिता के विषय मे पग-पग पर अनुसन्धान और प्रयोग की दृष्टि अपनाई जाए । कोशिश यही रहे कि बाकायदा अध्ययन और समीक्षा करके विभिन्न समस्याओ मे सबसे उपयुक्त समाधान निश्चित किए जाए और उन्हे ज्यादा से ज्यादा किसानो को बता दिया जाए ताकि वे उनके आधार पर अपनी परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए अपनी विशेष पद्धति तय कर सके ।

५४ पहली पंचवर्षीय योजना मे छोटे-मोटे काश्तकारों को मिलकर स्वेच्छा से सहकारी कृषि सगठन बनाने मे बढावा और सहायता देने के बारे में कई सुझाव रखे गए थे । सिफारिश की गई थी कि भारत की विशेष परिस्थिति मे सहकारी कृषि के कौन-कौन-से तरीके उपयुक्त रहेंगे, यह पता चलाने के लिए सुनियोजित प्रयोग किए जाएं । आगे चलकर राज्य सरकारों से सहकारी कृषि के बारे में श्रेणीबद्ध कार्यक्रम तैयार करने को कहा गया । मगर कुल मिलाकर इस दिशा मे अब तक कोई खास काम नही हुआ है । बस यही हुआ है कि बहुत-से राज्यो मे लोगों ने मिलकर स्वेच्छा से थोड़ी-बहुत सहकार कृषि समितियां बना ली है । इनमें से कुछेक ही सफल हो पाई है । बाकी के सामने ऐसी व्यावहारिक कठिनाइया प्रस्तुत हुई है जिनके समाधान के बारे मे उन्हे कोई निदेश प्राप्त नही हो सका है । नतीजा यह हुआ है कि जो काम बडे उत्साह से उठाया गया था उसे बेकार समझकर छोड दिया गया है । भारत मे सहकारी कृषि समितिया बनाने में लोगो को जो सफलता और विफलता मिली है उन दोनों पर ध्यान से विचार किया जाए तो शायद सहकारी कृषि की विभिन्न समस्याओ के सर्वोत्तम समाधान खोजे जा सकें । यही सोचकर योजना आयोग ने कार्यक्रम मूल्याकन सँगठन के मार्फत १३ राज्यों की चुनी हुई २३ सहकारी कृषि समितियो के काम की जांच कराने का प्रबन्ध किया । इस जांच से बहुत उपयोगी जानकारी हासिल हो रही है । इस विषय में जल्दी ही किसी समय अलग से एक खास रिपोर्ट प्रकाशित की जाएगी ।

५५. इस समय देश के विभिन्न भागों मे कुल मिलाकर कोई एक हजार सहकारी कृषि समितियां काम कर रही है । सहकारिता के विकास का चाहे जो कार्यक्रम हो, सहकारी और कृषि विभाग के कर्मचारी और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के कार्यकर्ता उसमे सबसे पहले इन समितियो की ओर ही ध्यान दें । इनमें से जितनी अधिक समितिया सफल होंगी उतना ही अधिक लोगो मे इस प्रकार की समितिया बनाने का उत्साह बढ़ेगा ।

५६. चकबन्दी के समय लोगों को सहकारी कृषि के लाभ से अवगत कराने की कोशिश की जानी चाहिए, ताकि लोग यथासंभव अपनी जमीन की सहकारी कृषि के लिए एक खण्ड मे या कुछ सुगठित खण्डों में चकबन्दी करा लें । जो लोग इस तरह स्वेच्छा से कृषि सहकारी प्रणाली अपनाएं, उन्हे कृषि उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम और अन्य योजनाओ के साधनो से विशेष सहायता मिले । राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास के क्षेत्रों में इस बात का खास तौर पर ध्यान रखा जाए । उनमे निम्नलिखित सुविधाए बहुत आसानी से जुटाई जा सकती है :

(१) सरकारी या सहकार ऋण सस्थाओं से कर्ज दिलाना, और अनुमोदित कृषि कार्यक्रमों के विषयों में सरकारी सहायता देते समय खास ध्यान रखना ।

(२) अच्छे किस्म का बीज, रासायनिक खाद, और निर्माण सामग्री देते समय खास रियायत करना ।

(३) सहकारी फार्म की जमीन की चकबन्दी कराने की सुविधाए देना ।

(४) सरकार ने जो बजर जमीन छोडी हो, कृषि योग्य जो परती जमीन हो, सरकार ने जिस जमीन का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया हो, और ग्राम पंचायतो की देख-रेख मे जो जमीन हो, उसको पट्टे पर उठाते समय प्राथमिकता देना ।

(५) ऐसा विधान कर देना कि सहकार समिति एक बार बनकर जब तक स्थापित रहे और उसका प्रबन्ध कानून में निर्दिष्ट शर्तों के अनुसार चलता रहे, तब तक किसी को कोई ऐसा अधिकार न मिले जिसके प्रयोग से समिति के सदस्यों का अहित हो सकता हो । जहां पट्टेदारों को स्थायी अधिकार मिले हुए है वहां सहकार समिति का सदस्य बनना न बनना उनकी मर्जी पर निर्भर होगा । रही वह जमीन जिसके पट्टेदार को स्थायी अधिकार प्राप्त न हों, उसके बारे में यह है कि उसका मालिक सहकार समिति में तभी शामिल हो सकता है जब पट्टेदार भी राजी हो ।

(६) फार्म संचालन, बिक्री, उत्पादन कार्यक्रमों के निर्माण आदि के कर्मचारियो को टेकनीकल सहायता दिलाना ।

(७) सहकारी कृषि समिति के सदस्यों और उनके सहयोगियों के लिए कुटीर उद्योग, गो-पालन, बागवानी आदि कृषि से भिन्न रोजगार उपलब्ध कराने में टेकनीकल या आर्थिक सहायता दिलाना ।

(८) जहां जरूरत समझी जाए, प्रबन्ध व्यय के खातिर कुछ समय के लिए अनुदान दिलाना ।

इस बात का ध्यान रखा जाए कि ये रियायतें जिन संस्थाओं के साथ की जाए वे सच्चे मानों मे कृषि सहकार समितिया हों और उनके इरादे नेक हों । अगर यह सावधानी न बरती गई तो धडाधड़ ऐसी समितियां बनने लगेगी जो कुछ समय बाद सरकार का घाटा कराके ठप्प हो जाएंगी ।

५७. यह ज्यादा अच्छा रहेगा कि शुरू-शुरू मे अनुभव और प्रयोग के लिए पहले हर जिले मे और आगे चलकर हर राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक क्षेत्र में दो-एक सहकारी फार्म चुन लिये जाए । इन फार्मो के कामकाज पर निगाह रखी जाए और इनकी प्रगति का ब्योरा दर्ज किया जाता रहे । कोशिश यह हो कि इनमे प्रबन्ध और संगठन के बढ़िया तरीकों का विकास हो । आगे चलकर ये फार्म सहकारिता, कृषि और अन्य विस्तार सेवाओं के कार्यकर्ताओं के लिए व्यावहारिक प्रशिक्षण के केन्द्र बन जाएं ।

५८. भूमि की अधिकतम सीमा निर्धारित होने पर जब सारी अतिरिक्त भूमि सरकार के हाथ में आ जाएगी, तब सहकारी कृषि का बड़े पैमाने पर आयोजन करना आसान हो जायगा । जैसा पहले सुझाव दिया जा चुका है, अतिरिक्त भूमि मे जहां तक हो सके सहकारी कृषि की ही व्यवस्था की जाए ।

५९. आदिम जातियो के इलाकों में, जहा सामुदायिक स्वामित्व का विधान है, कृषि की सहकारी प्रणाली का विकास करने के लिए खास प्रयत्न किया जाए ।

६०. कृषि की जो जमीन बुनियादी चक से भी छोटी होती है वह कृषि पुनर्गठन के सिलसिल में टेड़ी समस्या प्रस्तुत कर देती है । अगर इस तरह की जमीन मिलाकर सहकारी इकाइयां खोल दी जाए तो इनके मालिकों को बड़े पैमाने पर होने वाली खेती के सब लाभ मिल जाएंगे । साथ ही

उनके लिए कृषि विकास के आर्थिक साधन और रोजगार-वृद्धि के अवसर भी उपलब्ध हो जाएगे। सामान्य उद्देश्य यही रहना चाहिए कि जो जमीन बुनियादी चक से भी छोटी हो उसे मिलाकर सहकारी फार्म खोल दिए जाएं। इस दिशा में पहला कदम उठाने के लिए हर गांव में अतिरिक्त भूमि और अन्य उपलब्ध भूमि में सहकारी इकाइयां खोल दी जाएं। जिन लोगों की जमीन बुनियादी चक से कम हो, उन्हें इन इकाइयों में शामिल हो जाने का निमन्त्रण दिया जाए। यह भी अपेक्षित है कि चकबन्दी करते समय बहुत ही छोटी जमीदारियां, सहकारी कृषि के लिए संगृहीत जमीन के नजदीक से नजदीक रखी जाए, ताकि अगर उनके मालिक आगे चलकर कभी सहकारी फार्म में शामिल होना चाहें तो उन्हे सुविधा रहे। एक क्षेत्र में सहकारिता बढने से अन्य क्षेत्रो में भी सहकारिता पनपती है। इसलिए यह जरूरी है कि कृषि के क्षेत्र में सहकारिता प्रतिष्ठित करने की खातिर पहले कृषि से भिन्न क्षेत्रो मे सहकारिता बढ़ाई जाए।

६१. सहकारी कृषि के विकास कार्यक्रम के परिपालन के प्रसंग मे प्रशिक्षण के व्यापक आयोजन का भी बहुत महत्व हो जाता है। सहकार प्रशिक्षण के विद्यालयों मे सहकारी कृषि के सैद्धातिक और व्यावहारिक पक्षों के बारे मे विशेष अध्ययन करने की सुविधा होनी चाहिए। विस्तार कार्यकर्ताओं और कृषि विभाग अधिकारियों को भी सहकारी कृषि के विषय में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इसमें प्रबन्ध और संगठन की समस्याओं के और हिसाब लिखने के तरीकों के बारे मे उनकी जानकारी बढ़ाई जानी चाहिए। इससे भी ज्यादा जरूरी यह है कि उन्हे सहकारिता के मानव सम्बन्ध के पहलू से भली-भांति अवगत करा दिया जाए।

ग्रामोन्नति किस तरह होगी

६२. सहकारी कृषि समितियों की वृद्धि और कृषीतर क्षेत्रों में सहकारिता के विकास से गाव की अर्थ-व्यवस्था सुदृढ़ बन जाएगी और पैदावार व आमदनी निरन्तर बढती जाएगी। भारत की विशेष परिस्थिति में कृषि और जनहित सम्बन्धी अन्य कई आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों मे संचालन की बुनियादी इकाई का स्थान गाव को देना कई कारणों से उपयुक्त जान पड़ता है।

६३. जैसा पहले बताया जा चुका है, सहकारी सामुदायिक विकास के लिए वर्तमान परिस्थिति मे गांव की ही इकाई सर्वोत्तम ठहरती है। हो सकता है कि इस काम के लिए कुछ गाव बहुत छोटे पड़ें, कुछ बहुत बड़े, लेकिन जिला विकास प्रशासन वाले अध्याय मे गांवों की सीमा नए सिरे से निश्चित करने का जो सुझाव दिया गया है उससे यह दिक्कत काफी हद तक दूर हो जाएगी। तब अधिकाश गावो का आकार-प्रकार ऐसा होगा कि उन्हे सहकारी कृषि की इकाई मानना सचालन और संगठन दोनो की ही दृष्टि से उपयुक्त रहेगा। गांव के सहकारी प्रशासन की बात यह मानकर की जाती है कि गाव में जमीन किसानों की खुद की है। ज्यो-ज्यो भूमि सुधार का काम आगे बढेगा, त्यों-त्यों ग्राम समुदाय मे मालिक जमीनो की संख्या बढ़ती जाएगी और भूमि स्वामित्व के सम्बन्ध में विषमता कम होती जाएगी। लेकिन तो भी हर गाव में दस्तकारों, कारीगरो वगैरह के अलावा और बहुत-से ऐसे लोग बच रहेंगे जिनकी रोटी-रोजी खेती से चलती होगी लेकिन जिनके पास अपनी कहने को नाम मात्र भी जमीन नही होगी। इस वर्ग के लोगो का सवाल बहुत टेढ़ा और विचारणीय है, इसलिए और भी कि वास्तव में गावों मे इन्हें पूरा रोजगार दिलाया नहीं जा सकता। गाव की अर्थ-व्यवस्था में पूरे समय काम करने वालों के रूप में इनकी कोई आवश्यकता नहीं है।

६४. कृषि मे और उससे बाहर लोगो के लिए तरह-तरह के व्यवसाय उपलब्ध कराने के लिए ग्राम अर्थ-व्यवस्था को ही एक नया रूप दे देना होगा। इस दृष्टि से नए-नए तरीकों का जल्दी से जल्दी अपनाया जाना बहुत जरूरी हो जाता है। गावों मे बिजली लाई जाए और गाव वालों को आधुनिक साज-सामान से परिचित कराया जाए। छोटे-छोटे चक खत्म किए जाएं क्योकि जब तक कृषि प्रबन्ध की इकाई का स्थान उन्हे मिलता रहेगा तब तक ग्राम अर्थ-व्यवस्था को समृद्ध बनाकर गाव वालो के लिए तरह-तरह के व्यवसाय उपलब्ध करना बहुत ही मुश्किल होगा। इस प्रसंग में प्रबन्ध और कार्य-संचालन की इकाई में भेद करने की जरूरत है। समूचे गाव को ही यदि प्रबन्ध की इकाई बना लिया जाए तो भी वर्षो तक कृषि कार्य की इकाई किसान की अपनी जमीन ही रहेगी। अगर योजना की इकाई का स्थान गांव को दिया जाए तो कई कामों मे, उदाहरण के लिए अच्छे बीज के इस्तेमाल मे, क्रय-विक्रय मे, उर्वर भूमि संरक्षण में, पानी के उपयोग में, और स्थानीय सार्वजनिक निर्माण में, और धीरे-धीरे जुताई-बुवाई वगैरह मे सहकारिता सभव हो सकेगी।

६५. ग्राम-प्रबन्ध की सहकारी व्यवस्था होने तक सक्रांति काल मे गांवो मे जमीन के रख-रखाव वगैरह के तीन तरीके प्रचलित रहेगे। किसान अपनी जमीन को स्वयं ही जोतते-बोते रहेगे। कुछ किसान ऐसे होगे जो अपनी-अपनी जमीन मिलाकर स्वेच्छा से सहकारी इकाइया बना लेगे। तीसरे, कुछ जमीन ऐसी होगी जिसका प्रबन्ध न व्यक्तिगत न सहकारी, बल्कि सामुदायिक होगा। इसमे गाव की पचायती जमीन, आबादी मुकाम, गावो की प्रदत्त कृषि योग्य बजर भूमि, ऐसी जमीन जिसका स्वामित्व का प्रबन्ध अधिकतर सीमा निर्धारण के बाद समूचे गाव को सौप दिया गया हो और वह जमीन शामिल होगी जो भूमिहीन खेतिहरो को बसाने के लिए उपलब्ध की गई हो। इस तरह हर गाव मे प्रबन्ध व्यवस्था की दृष्टि से तीन क्षेत्र हो जाएगे निजी या व्यक्तिगत क्षेत्र, सहकारी क्षेत्र और पंचायती क्षेत्र। इन क्षेत्रों का अनुपात प्रगति और विकास के साथ-साथ सुनिश्चित आयोजन पर भी निर्भर होगा। कोशिश यह रहेगी कि सहकारी क्षेत्र को बढ़ाया जाता रहे, ताकि होते-होते गाव की सारी जमीन का प्रबन्ध सहकारी प्रणाली से होने लगे। ऋण, विक्रय, और परिष्कार के विषय में सहकारी प्रणाली अपनाये जाने से उत्पादन के क्षेत्र मे भी सहकारिता बढेगी। ये सब काम एक-दूसरे से जुड़े हुए है। इनमें जो आसान हों, जाहिर है पहले उनको ही उठाया जाएगा। सहकारिता चाहे जैसी हो और चाहे जिस क्षेत्र में हो प्रशंसनीय समझी जाए, क्योकि सहकारिता की भावना भी उतनी ही महत्वपूर्ण है जितना कि सहकारिता का स्वरूप।

६६. ग्राम-प्रबन्ध की सहकारी प्रणाली का लक्ष्य सिद्ध करने के मुख्य साधन और माध्यम ये है :—

(१) राष्ट्रीय विस्तार सेवा, और कृषि और उससे सम्बद्ध कार्यो के विकास के आयोजन।

(२) ग्राम पंचायत और गांव के विकास की देख-रेख करने वाली सस्था के रूप में उसे सौंपे गए काम।

(३) ऋण, विक्रय, गोदाम, प्रबन्ध, परिष्कार आदि की सहकारी व्यवस्था के आयोजन।

(४) ग्रामोद्योग की उन्नति के कार्यक्रम, खास करके वे जो स्थानिक जरूरतों को पूरा करने और गाव के सभी लोगों के लिए रोजगार उपलब्ध करने की खातिर शुरू किए गए हों।

(५) लोगों को स्वेच्छा से सहकारी कृषि समितियां बनाने को प्रोत्साहित करने और इस प्रकार बनी समितियों की सहायता करने के आयोजन।

(६) गांवों मे पंचायती क्षेत्रों का विकास (इसमें पंचायती जमीन, प्रदत्त जमीन वगैरह शामिल की जाती है) और गांव वालों के सामुदायिक आयोजन।

इन माध्यमों और साधनों द्वारा जो काम होंगे वे अन्योन्याश्रित और परस्पर सम्बद्ध काम होंगे। एक की प्रगति दूसरे की प्रगति पर निर्भर होगी। इसलिए ग्राम-प्रबन्ध की सहकारी प्रणाली रातो-रात प्रतिष्ठित नही हो जाएगी, उसका विकास धीरे-धीरे और क्रमिक रूप से ही हो पाएगा। कई व्यावहारिक कठिनाइया प्रस्तुत होंगी जिनका सोच-समझकर समाधान करना होगा। कुशल संगठन और संचालन की व्यवस्था करनी होगी। विस्तार सेवा कार्यकर्ताओं को सहकारिता विकास के काम के लिए पूरी तरह तैयार करना होगा, और गांव-गाव में सहकार का एक सुसंचालित और सोद्देश्य आन्दोलन चलाना होगा।

ग्राम-प्रबन्ध की सहकार व्यवस्था कौन-कौन-से स्वरूप धारण करेगी और उसे प्राप्त करने के रास्ते में कौन-कौन-सी मंजिलें आएंगी, यह तो हर क्षेत्र के निवासियों के अनुभव और उत्साह पर और ग्राम सामुदायिक योजना के एक-एक कार्यक्रम की सफलता पर निर्भर करेगा।

६७. जहा एक बार ग्राम-प्रबन्ध की सहकार व्यवस्था हो गई और ग्राम अर्थ-व्यवस्था के ही अन्तर्गत रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हो गए कि भूमि सम्पन्न और भूमिहीन का भेद बहुत कुछ जाता रहेगा। तब असल भेद कृषि और कृषीतर दोनो तरह के विभिन्न धंधों में लगे हुए लोगों की निपुणता का होगा। ग्राम समुदाय को कृषि, व्यापार और उद्योग से जो साधन प्राप्त होंगे, उनका गांव मे तरह-तरह के आयोजन करके और गाव से बाहर के आयोजनो में सहयोग करके पैदावार और रोज़गार बढाने मे उपयोग किया जाएगा। इस तरह के ग्राम समुदाय का सुगठित सामाजिक और आर्थिक रूप होगा। उसे तहसील और जिले के आर्थिक कार्य-कलाप में उत्पादन और वाणिज्य की एक सक्रिय इकाई का स्थान प्राप्त होगा। इसके आधार पर हम ऐसी ग्राम अर्थ-व्यवस्था की परिकल्पना कर सकते है जिसमे खेती, ग्रामोद्योग, परिष्कार उद्योग, विक्रय, और ग्राम व्यापार, सभी कार्य सहकारी प्रणाली से मिल-जुलकर किए जाया करेंगे।

६८. ग्राम अर्थ-व्यवस्था का सहकारी प्रणाली के अनुसार विकास करने की दिशा में इधर एक बडा काम हुआ है—ग्रामदान आन्दोलन का समारम्भ। भूदान यज्ञ मे उडीसा और कुछेक अन्य राज्यों के जमीदारो ने गाव के गाव दे डाले है। कुल मिलाकर आठ सौ गाव प्राप्त हुए है। इन गावों के विकास में जो सफलता प्राप्त होगी, उसका देश के सहकारी ग्राम विकास आन्दोलन की प्रगति पर गहरा असर पड़ेगा। सहकारी कृषि समितियों के लिए जो सुविधाए निर्दिष्ट की गई थीं वे सहकारी गावों के लिए अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में उपलब्ध की जाए। यहा दो अन्य चीजों की ओर ध्यान आकृष्ट कराना जरूरी है। सहकारी गांवों में मालगुजारी पचायतो की मार्फत ली जाया करे; दूसरी यह कि ग्राम समुदाय में वैयक्तिक अधिकार जिस रूप से दिए गए हो उसके अनुसार किसी व्यक्ति को और अन्य सहायता या तो समुदाय द्वारा प्रस्तुत जमानत

के आधार पर दी जाए, या ग्राम भूमि में उस व्यक्ति के हिस्से के आधार पर। मालगुजारी और सहकार विषयक वर्तमान कानूनों मे भूमि के वैयक्तिक स्वामित्व के स्थान पर सहकारी या सामुदायिक स्वामित्व की प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक संशोधन-परिवर्द्धन कर दिए जाएं।

भूमि सुधार कार्यक्रमों का प्रशासन

६९. भूमि सुधार कार्यक्रम राष्ट्रीय आयोजन का एक अभिन्न अंग है। उसे जल्दी से जल्दी कुशलतापूर्वक सम्पन्न न किया जाए तो कई और योजनाए अटकी रह जाती है। लेकिन साथ ही इससे प्रशासन पर बहुत ज्यादा बोझ पड़ जाता है। इसलिए यह जरूरी है कि इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम की पूर्ति के लिए विशेष प्रशासनिक व्यवस्था की जाए। भूमि सुधार के लिए प्रशासन को जो काम करने पड़ते हैं, उन्हें मोटे तौर पर दो वर्गों मे विभाजित किया जा सकता है वे कार्य जिनका मालगुजारी प्राप्त करने की सफल व्यवस्था से सम्बन्ध हो, और वे कार्य जो चकबन्दी, भूमि प्रबन्ध, अधिकतम सीमा-निर्धारण, भूमि वितरण, और सहकारी कृषि या किसी अन्य विशिष्ट आयोजन के सम्बन्ध मे हों। इन कर्तव्यों के प्रति समान दृष्टि अपनाई जानी चाहिए क्योंकि मूलतः ये अन्योन्याश्रित है, और एक ही योजना के विभिन्न पहलू हैं।

७० पहले वर्ग के प्रशासनिक कार्यो की सूची इस प्रकार है :—

(१) भूमि सुधार के लिए खसरा, खतौनी आदि जमीन के लेखों में सही-सही और ताजी से ताजी सूचना उपलब्ध रहना बहुत जरूरी है। कई राज्यों मे बिचौलियो की समाप्ति हो जाने पर मालगुजारी के सिलसिले में जमीन का हिसाब-किताब लिया गया है या अब लिया जा रहा है। जमीन के बारे मे जो दस्तावेज तैयार किए जाते है, उनमें अक्सर पट्टेदारों और साझेदारों की जमीन के बारे मे कोई सूचना नही दी जाती और इस दृष्टि से वे अधूरे रह जाते है।

(२) बहुत-से क्षेत्र ऐसे है जिनमे बहुत समय से पैमाइश नही हुई है। पैमाइश आम तौर पर बन्दोबस्त के साथ-साथ की जाती है। लेकिन कई राज्यों मे यह काम अभी करने को बाकी पड़ा है। ग्राम अभिलेखों की तैयारी और संशोधन-परिवर्द्धन का काम जल्दी से जल्दी पूरा किया जाना चाहिए। पैमाइश-पड़ताल के लिए रुका नहीं रहा जा सकता, इसलिए यह जरूरी मालूम होता है कि इस समय सबसे पहले जो भी जैसे भी नक्शे उपलब्ध हो सकें, उनके आधार पर मालगुजारी के अभिलेख तैयार कर लिये जाएं।

(३) माल विभाग के कर्मचारियो पर इधर काम का बोझ बहुत ज्यादा रहा है, इसलिए उन्होंने जो वार्षिक विवरण तैयार करके दिए है, उनमें अशुद्धियां रह गई है। विवरण को जाचने और सही करने के बारे मे जो लम्बे-चौड़े निदेश दिए गए हैं, निरीक्षण कर्मचारियों की कमी के कारण उनका पालन करना बहुत मुश्किल हो गया है। पट्टेदारों और फसल के साझेदारो की जमीन के बारे मे जो सूचना दी गई है उसमे अशुद्धियां होने की विशेष आशका है। इसलिए यह वांछनीय है कि माल विभाग के अधिकारी जब कभी मौके पर जाकर मुआयना करने निकलें, ग्राम पंचायत के किसी सदस्य को साथ ले जाएं। जमीन के बारे में जो भी दस्तावेज तैयार किए जाएं उनकी प्रतियां जांच के लिए पंचायत कार्यालय में उपलब्ध रहा करें और भूमि सम्बन्धी

दस्तावेज में कोई परिवर्तन करने से पहले तत्सम्बन्धी लोगों को सूचित किया जाया करे ।

(४) कुछ इलाकों मे मालगुजारी या लगान की ताजी और विश्वसनीय दर आसानी से नही मालूम हो पाती है । जो प्रदेश पहले इस्तमरारी बन्दोबस्त के अधीन थे, उन पर यह बात खास तौर पर लागू होती है । मालगुजारी और लगान की दर तय करने मे आम तौर पर बहुत समय लगता है । इसलिए जहां संभव हो, इसका कोई आसान-सा तरीका अपना लिया जाए । उदाहरण के लिए, माल-गुजारी लगान की कुछ गुनी निश्चित कर दी जाए । लगान मे कमी करने और लगान नकद लेने की व्यवस्था करने के लिए यह काम बहुत ही जरूरी है ।

७१. दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में भूमि सुधार के विशेष कार्यक्रमों के लिए दूसरे वर्ग की जो प्रशासनिक कारंवाइयां करनी होंगी उनमे से निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं :—

(१) चकबन्दी करना ।
(२) जिन पट्टेदारों को अकारण बेदखल कर दिया गया हो उन्हें पट्टेदारी फिर से दिलाना ।
(३) बेईमानी की नीयत से जमीन दूसरे के नाम किए जाने के मामले पकड़ना ।
(४) विभिन्न अधिकारों के ग्रहण किए जाने पर कितना-कितना मुआवजा दिया जाए यह तय करना ।
(५) चक की अधिकतम सीमा निर्धारित करना ।
(६) सीमा के निशान लगाना, अधिकतम सीमा, भूदान आदि से प्राप्त अतिरिक्त जमीन पर कब्जा लेना और उसे फिर से बांटना ।
(७) गांव-गांव मे जमीन के अच्छे रख-रखाव के कानूनों का पालन करना ।
(८) सहकारी कृषि और सहकारी प्रबन्ध मे मदद देना ।

७२. इतने सारे प्रशासनिक कार्यों से माल विभाग के कर्मचारियों पर बोझ तो बहुत ज्यादा पड़ जाएगा । जाहिर है कि शुरू से ही निरीक्षण और कर्मक्षेत्र दोनों तरह के कर्मचारियों की संख्या मे वृद्धि करने का आयोजन करना होगा । भूमि सम्बन्धी नए कानून ज्यादातर खासे जटिल हैं, और यह जरूरी हो चला है कि माल विभाग के कर्मचारी उनका पालन कराने की जिम्मेदारी उठाने से पहले उनके लक्ष्य और लक्ष्य सिद्धि के उपायों से भली-भांति अवगत हो ले । इस दृष्टि से थोड़े-थोड़े समय में प्रशिक्षण क्रम शुरू करना उपयोगी सिद्ध होगा । लगान में कमी करना, खुदकाश्त के लिए वापस ली जा सकने वाली और न ली जा सकने वाली जमीन का अलग-अलग करना, और ऐसे ही कुछेक और काम तो सारे राज्य मे एक साथ करने ही पड़ेगे । मगर बाकी काम ऐसे है जिन्हें अनुभव और प्रशिक्षण के लिए शुरू-शुरू मे कुछ चुने हुए क्षेत्रों में किया जाए तो बाद में अन्य क्षेत्रों मे वे बहुत आसानी से और बहुत जल्दी सम्पन्न हो सकेंगे । अगर जनता को मालूम हो कि भूमि सुधार से क्या-क्या लाभ है और वह इस शुभ कार्य में आगे बढकर हाथ बंटाने को तैयार हो, तो भूमि सुधार कार्यकर्ताओं को बहुत सुविधा हो जाए । इसलिए ग्राम समाज के विभिन्न वर्गो को यह समझाने का आवश्यक प्रबन्ध शीघ्र किया जाए कि भूमि सुधार कानून के अनुसार उनके दायित्व और अधिकार क्या हो जाते हैं । भूमि सुधार के विभिन्न

कार्यो मे सरकारी कर्मचारी जिला विकास प्रशासन के अधिकरणों से बहुत मदद ले सकते है और ले। इन अधिकरणों का ब्योरा सातवे अध्याय मे दिया गया है और इनके नाम है—ग्राम पंचायत, ताल्लुका विकास समिति, विकास खण्ड, और जिला विकास परिषद। ग्राम पंचायतें तो खासकर बड़ी काम की साबित हो सकती है। जमीन के रख-रखाव की उत्तम व्यवस्था कराने में और चकबन्दी की प्रगति मे उनसे बहुत मदद मिल सकती है। उनकी सहायता ली जाए तो खसरा, खाता, खतौनी आदि मालगुजारी विषयक अभिलेखों के लिए ज्यादा सही सूचना प्राप्त हो सकती है और अन्याय होने की आशंका दूर की जा सकती है। यही नही, ग्राम पचायतें बेदखली, लगान अदायगी मे देरी, जमीन पर कब्जा लिये जाने, जमीन पट्टेदार को वापस दिलाने, और जमीन मे बगैर किसी हक के आकर जम जाने वाले को हटाने के मामले निबटाने में भी बहुत सहायक हो सकती है। जिला और ग्राम विकास आयोजन मे भूमि सुधार कार्यक्रम का विशिष्टि स्थान है। भूमि सुधार की सफलता से उत्साहित होकर लोग इन कार्यक्रमों की ओर अधिकाधिक आकृष्ट होंगे।

परिशिष्ट १

किसी फार्म या चक के कामकाज की परख करते समय किन-किन बातो का ध्यान रखा जाना चाहिए, इस विषय में भूमि सुधार मडल की एक समिति ने जो सूची तैयार की है वह नीचे दी जा रही है। इस सूची का उपयोग करने से पहले स्थानिक परिस्थिति के अनुसार इसमें आवश्यक हेर-फेर कर लिया जाए। हर क्षेत्र में इसमें से वे बाते छाट ली जाएं जिनका वहा खास महत्व हो, और फिर उन्हीं बातों को खरे-खोटे की पहचान करने की मुख्य कसौटी मान लिया जाए।

(१) भूमि :

(क) चौरस बनाना, बाड लगाना, धरातल उठाना, मेड़ और पुश्ते बांधना (जहा आवश्यक और आर्थिक दृष्टि से सभव हो) और जमीन का उपजाऊपन बनाए रखने के दूसरे उपाय करना।

(ख) कृषि योग्य बंजर भूमि का उपयोग उदाहरण के लिए जिन इलाकों में पानी भरा रहता हो वहा नालियों का इन्तजाम करना, जिस इलाके मे खार या कल्लर हो वहा जमीन का कटाव रोकने या उर्वरता बनाए रखने के उपाय करना, ऐसे पौधों का उन्मूलन करना जो खेती को नुकसान पहुंचाते हों, झाड़-झंखाड साफ करना आदि।

(२) जानकारों ने जो बीज अच्छा बताया हो उसका इस्तेमाल करना।

(३) खाद और रासायनिक खाद :

(क) खेत मे खाद की जो सामग्री हो उसे बचाए रखना।

(ख) हर तरह का कूड़ा-करकट खाद बनाने के लिए गड्ढों मे भर देना।

(ग) हरी खाद का नियमित उपयोग करना।

(घ) जहा आवश्यक हो वहा रासायनिक खाद का इस्तेमाल करना, बशर्ते उसमें खर्च बहुत ज्यादा न बैठता हो।

(४) सिंचाई :

(क) जहां नहरी सिंचाई की व्यवस्था न हो, वहा कुएं, नलकूप, पम्पदार कुएं, तालाब और बांध वगैरह बनाना, या तो खुद ही या पास पड़ोस के किसानों से मिलकर।

(ख) पानी जाया न होने देने के लिए सिचाई की नालियों के समुचित रख-रखाव की व्यवस्था करना, यानी नालियों मे पलस्तर लगाना, जहा तक हो सके उन्हे सीधी बनाना टेढी-मेढ़ी नही, उन्हे घास-फूस आदि से मुक्त करना, और अगर हो सके तो उन्हें पक्का करवा लेना।

(५) खेती के औजार :

खेती के उन बढ़िया किस्म के उपकरणों का ही उपयोग करना जिनकी कृषि विभाग ने इस इलाके के लिए सिफारिश की हो।

(६) निराई :

फसल के कीड़ों और बीमारियों की रोकथाम, फसल को नुकसान पहुंचाने वाले जगली पौधो का उन्मूलन करना, कृषि विभाग द्वारा सुझाए गए तरीके के अनुसार अपने आप भी और स्थानिक काश्तारों से मिल-जुलकर भी।

(७) उन्नत कृषि प्रथाओं का इन कार्यो मे अपनाया जाना :
- (क) बीज क्यारियों की तैयारी।
- (ख) बुवाई।
- (ग) फसलों का अन्तर-संवर्द्धन।
- (घ) निराई।
- (ङ) बुरे पौधों की छंटनी।
- (च) कटाई।

(८) फसल का उपयुक्त क्रम।

(९) वृक्षारोपण और वृक्ष सरक्षण (खासकर नालियों-कुलियाओं के किनारे-किनारे, कुओं के आस-पास और परती जमीन मे)।

(१०) जिन इलाकों मे खेती वर्षा पर निर्भर हो, वहा सिचाई हीन कृषि के उन उत्तम तरीकों का उपयोग जो कृषि विभाग द्वारा सुझाए गए है, उदाहरण के लिए :—
- (क) वर्षा शुरू होने से पहले खेत मे हलका हल चलाना।
- (ख) झाड-झखाड़ उखाड़ फेकना।
- (ग) बाड़ लगाना और जमीन ऊपर उठाना।
- (घ) वर्षा बन्द होने के बाद फौरन हल चलाकर और सोहागा देकर नमी को बचाए रखना।

(११) मिश्रित कृषि (यानी कृषि के साथ-साथ फल-फूल लगाने, सब्जी उगाने, गाय-भैसे, मुर्गिया मधुमक्खियां वगैरह पालने जैसे सम्बद्ध कार्य करने) के बारे मे कृषि विभाग की सिफारिशों का पालन करना।

(१२) पशु पालन :
- (क) अनुमोदित नस्ल के पशुओं का सवर्द्धन करना।
- (ख) जानवरो के दाना-पानी का अच्छा इन्तजाम करना।
- (ग) गोबर वगैरह से खाद बनाना।
- (घ) जानवर बांधने की अच्छी जगह बनाना।
- (ङ) जानवरों को बीमारियों से बचाने और बीमार जानवरों के इलाज की व्यवस्था करना।

(१३) खेती के साज-सामान और स्थायी सुधार मे रकम लगाना।

(१४) फसल काटकर रखने के लिए गोदाम वगैरह का प्रबन्ध करना।

(१५) खेतिहर मजदूरों के रहने के स्थान का प्रबन्ध करना।

(१६) बड़े और मझोले आकार के फार्मों में निर्धारित रीति से आमदनी और खर्च का हिसाब-किताब रखना।

(१७) सहकारी संघों में सम्मिलित होना।

परिशिष्ट २

जमीन की बांट और चकों का आकार

पैरा ३० से ३४ तक में चकों और उन पर होने वाली खेती सम्बन्धी आंकडों को एकत्र करने की कार्य-विधि और विचार-विधि का वर्णन किया गया है; इस संलग्न सूची मे निम्नलिखित विषयों पर संक्षेप में १९ राज्यो के इस विषय में आंकडे दिए गए है : (क) स्वामित्व के आधार पर चकों का वर्गीकरण, और (ख) खुदकाश्त के अंतर्गत जमीन का वर्गीकरण। बिहार सम्बन्धी आंकड़े विचाराधीन हैं। उत्तर प्रदेश और उड़ीसा के आकडे अभी प्राप्त नही हुए हैं। अन्य राज्यों में चकों और खेती सम्बन्धी आंकड़ों के संग्रह की प्रगति का विवरण इस अध्याय में दिया गया है।

(क) वे राज्य जिनमें सभी आकार-वर्गों के चकों का विवरण प्राप्त किया गया (हजार मे)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
१. आंध्र									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	१७६७	४२३	१७८	१८१	५०	२०	२६	२६४५
	प्रतिशत .	(६६ ८)	(१६·०)	(६·७)	(६·८)	(१·९)	(०·८)	(१·०)	(१००)
	क्षेत्रफल ..	३२७०	२९७६	२१६८	३७३७	१८०४	१००५	३०७४	१८०३४
	प्रतिशत ..	(१८·१)	(१६·५)	(१२·०)	(२०·७)	(१०·०)	(५·६)	(१७·१)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन†	चकों की संख्या	१६७४	३९६	१६६	१६६	४५	१७	२१	२४८६
	प्रतिशत ...	(६७·३)	(१५·९)	(६·७)	(६·७)	(१·८)	(०·७)	(०·८)	(१००)
	क्षेत्रफल	३०१७	२७३९	१९९७	३३८०	१६०१	८६८	२१९९	१५८०१
	प्रतिशत	(१९·१)	(१७·३)	(१२·६)	(२१·४)	(१०·१)	(५·६)	(१३·९)	(१००)

†खुदकाश्त वाली जमीन के अंतर्गत आम तौर पर एक साल से अधिक समय तक बेकार पड़ी कृषि योग्य परती जमीन नही आती।

(हजार में)

		चको का वर्गीकरण (एकड़ो मे)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
२. बम्बई									
स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	२४४६	९६१	४८३	५६८	१७२	६५	६९	४७६४
	प्रतिशत	(५१·३)	(२०·२)	(१०·२)	(११·९)	(३·६)	(१·४)	(१·४)	(१००)
	क्षेत्रफल	५०८६	६९२३	६००१	११८९९	६२५८	३३२७	७७१०	४७२०४
	प्रतिशत	(१०·८)	(१४·७)	(१२·७)	(२५·२)	(१३·३)	(७·०)	(१६·३)	(१००)
खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या	२१८३	८६२	४४२	५१५	१५५	५७	५९	४२७३
	प्रतिशत	(५१·०)	(२०·२)	(१०·३)	(१२·२)	(३·६)	(१·३)	(१·४)	(१००)
	क्षेत्रफल	४४८१	६०६३	५३५०	१०५४१	५५२७	२८७५	५८८९	४०७२६
	प्रतिशत	(११·०)	(१४·९)	(१३·१)	(२५·९)	(१३·६)	(७·०)	(१४·५)	(१००)
३. मध्य प्रदेश									
स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	२६४८	८४२	३७६	३८५	१०५	४२	६०	४४५८
	प्रतिशत	(५९·४)	(१८·९)	(८·४)	(८·७)	(२·४)	(०·९)	(१·३)	१००)
	क्षेत्रफल	५०७५	५९८८	४५९२	७९६५	३८०६	२१५९	७६१७	३७२०२
	प्रतिशत	(१३·६)	(१६·२)	(१२·३)	(२१·४)	(१०·२)	(५·८)	(२०·५)	(१००)
खुदकाश्त वाली जमीन	चको की संख्या	२५५३	७७९	३४४	३५०	९५	३७	४९	४२०७
	प्रतिशत	(६०·७)	(१८·५)	(८·२)	(८·३)	(२·२)	(०·९)	(१·२)	(१००)
	क्षेत्रफल	४७८२	५५३१	४१९५	७२१८	३४०१	१९०७	५७०५	३२७३९
	प्रतिशत	(१४·६)	(१६·९)	(१२·८)	(२२·१)	(१०·४)	(५·८)	(१७·४)	(१००)

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५—१०	१०—१५	१५—३०	३०—४५	४५—६०	६० से ऊपर	योग
४. मद्रास									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	३३४८	८६०	३२४	२८५	७०	२७	४४	४९५८
	प्रतिशत	(६७·६)	(१७·४)	(६·५)	(५·७)	(१·४)	(०·५)	(०·९)	(१००)
	क्षेत्रफल‡	६५९२	६००६	३९५२	५८५३	२५५३	१३९९	६१९४	३२५४९
	प्रतिशत	(२०·३)	(१८·५)	(१२·१)	(१८·०)	(७.८)	(४·३)	(१९·०)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन†	चकों की संख्या	३२१९	८०८	३०१	२६०	६१	२३	३१	४७०३
	प्रतिशत	(६८·४)	(१७·२)	(६·४)	(५·५)	(१·३)	(०·५)	(०.७)	(१००)
	क्षेत्रफल‡	६३१६	५६३६	३६६४	५२६९	२२०५	११५९	४२८४	२८५३३
	प्रतिशत	(२२·१)	(१९·८)	(१२·८)	(१८·५)	(७.७)	(४·१)	(१५·०)	(१००)
५. हैदराबाद									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	८९७	५९५	३८५	५३५	१९०	८२	११४	२७९८
	प्रतिशत	(३२·०)	(२१·३)	(१३·८)	(१९·१)	(६·८)	(२.९)	(४.१)	(१००)
	क्षेत्रफल‡	२१२५	४३८२	४७२९	११२८७	६८९०	४२४५	१३५२८	४७१८६
	प्रतिशत	(४·५)	(९·३)	(१०·०)	(२३·९)	(१४·६)	(९·०)	(२८·७)	(१००)

†मद्रास में भू-स्वामी की लापरवाही के कारण परती पडी जमीन और 'मामूल' परती को स्वामित्व वाली जमीन में शामिल कर लिया गया है, पर खुदकाश्त में नहीं।

‡मद्रास और हैदराबाद में क्षेत्रफल को सूखे एकड़ों में लिखा जाता है। पनियारी जमीन को स्वीकृत फार्मूले के अनुसार सूखे एकड़ो में तबदील कर लिया जाता है।

(हजार मे)

		चको का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	८४४	५२८	३३६	४६४	१६३	७०	९२	२४९७
	प्रतिशत ...	(३३·८)	(२१·१)	(१३·५)	(१८·६)	(६·५)	(२·८)	(३·७)	(१००)
	क्षेत्रफल‡ ...	१९८५	३८९५	४१३९	९७९१	५९०८	३६०३	९७७७	३९०९८
	प्रतिशत ...	(५·१)	(१०·१)	(१०·६)	(२५·०)	(१५.१)	(९·२)	(२५·०)	(१००)
६. मध्य भारत									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या ...	६५२	३२३	१७३	१९३	५१	१८	१९	१४२९
	प्रतिशत ...	(४५·६)	(२२·६)	(१२·१)	(१३·५)	(३·५)	(१·३)	(१·४)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	१४१४	२३२५	२१२४	४००४	१८३१	९२१	२०२४	१४६४३
	प्रतिशत ...	(९·६)	(१६·०)	(१४·५)	(२७·३)	(१२·५)	(६·३)	(१३·८)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	६२७	३०७	१६२	१७९	४५	१६	१६	१३५२
	प्रतिशत ..	(४६·४)	(२२·७)	(१२·०)	(१३·२)	(३·३)	(१·२)	(१·२)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	१३५२	२२०२	१९८७	३६९९	१६२८	७९९	१५१६	१३३८३
	प्रतिशत ...	(१०·३)	(१६·७)	(१५·१)	(२८·०)	(१२·३)	(६·१)	(११·५)	(१००)

‡मद्रास और हैदराबाद मे क्षेत्रफल को सूखे एकड़ो मे लिखा जाता है। पनियारी जमीन को स्वीकृत फार्मूले के अनुसार सूखे एकड़ो मे तबदील कर लिया जाता है।

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
७. सौराष्ट्र									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	३४	४६	४६	११५	६०	२४	१८	३४३
	प्रतिशत	(९·९)	(१३·४)	(१३·४)	(३३·६)	(१७·५)	(७·०)	(५·२)	(१००)
	क्षेत्रफल	१००	३५५	५७९	२५२८	२१८२	१२२८	१५३३	८५०५
	प्रतिशत	(१·२)	(४·२)	(६·८)	(२९·७)	(२५·७)	(१४·४)	(१८·०)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या	३३	४५	४५	११३	५९	२४	१८	३३७
	प्रतिशत	(९·८)	(१३·४)	(१३·४)	(३३·५)	(१७·५)	(७·१)	(५·३)	(१००)
	क्षेत्रफल	९४	३४२	५६७	२४९२	२१६१	१२१६	१४९९	८३७१
	प्रतिशत	(१·१)	(४·१)	(६·८)	(२९·८)	(२५·८)	(१४·५)	(१७·९)	(१००)
८. अजमेर									
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	७८	१८	७	६	१	—	१	१११
	प्रतिशत	(७०·३)	(१६·२)	(६·३)	(५·४)	(०·९)	—	(०·९)	(१००
	क्षेत्रफल	१३१	१२८	८८	११९	३९	१६	३०	५५
	प्रतिशत	(२३·७)	(२३·३)	(१६·०)	(२१·६)	(७·१)	(२·९)	(५·४)	(१००
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या	७८	१८	७	६	१	—	—	११
	प्रतिशत	(७०·९)	(१६·४)	(६·४)	(५·४)	(०·९)	—	—	(१००
	क्षेत्रफल	१२९	१२६	८७	११६	३८	१६	३०	५४:
	प्रतिशत	(२३·८)	(२३·२)	(१६·१)	(२१·४)	(७·०)	(३·०)	(५·५)	(१००)

(—) नगण्य

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों मे)							
		५ से कम	५—१०	१०—१५	१५—३०	३०—४५	४५—६०	६० से ऊपर	योग
				९. भोपाल					
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चको की सख्या ..	३९	२३	१७	२५	९	४	६	१२३
	प्रतिशत ..	(३१·७)	(१८·७)	(१३·८)	(२०·३)	(७·३)	(३·३)	(४·९)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	६२	१७४	२१२	५२२	३२१	१९४	७७०	२२५५
	प्रतिशत ...	(२·७)	(७·७)	(९·४)	(२३·२)	(१४·२)	(८·६)	(३४·२)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चको की संख्या ...	३७	२३	१६	२४	८	३	५	११६
	प्रतिशत ...	(३१·९)	(१९·८)	(१३·८)	(२०·७)	(६·९)	(२·६)	(४·३)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	६०	१६५	२००	४९४	२९६	१७८	६३०	२०२३
	प्रतिशत ...	(३·०)	(८·२)	(९·९)	(२४·४)	(१४·६)	(८·८)	(३१·१)	(१००)
				१०. कच्छ					
(क) स्वामित्व वाली जमीन†	चकों की संख्या ..	१६	१७	१०	१७	८	४	६	७८
	प्रतिशत .	(२०·५)	(२१·७)	(१२·८)	(२१·७)	(१०·३)	(५·२)	(७·८)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	४९	१२८	१२९	३७९	२९९	२१२	६२८	१८२४
	प्रतिशत ..	(२·७)	(७·०)	(७·१)	(२०·८)	(१६·४)	(११·६)	(३४·४)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या ...	१४	१४	९	१५	७	४	४	६७
	प्रतिशत ...	(२०·८)	(२०·८)	(१३·४)	(२२·३)	(१०·४)	(५·९)	(५·९)	(१००)
	क्षेत्रफल ...	४३	१०७	११२	३२७	२६५	१८०	३०३	१३३७
	प्रतिशत ...	(३·२)	(८·०)	(८·३)	(२४·५)	(१९·८)	(१३·५)	(२२·७)	(१००)

†कृषि योग्य बेकार जमीन की पतली पट्टियों को स्वामित्व वाली जमीन में शामिल कर लिया गया है, पर खुदकाश्त वाली जमीन में नही ।

(ख) वे राज्य जिनमे १० एकड़ या उससे अधिक जमीन के आंकड़े लिये गए (हजार मे)

		चकों का वर्गीकरण (एकडों में)					
		१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
१. पंजाब							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चको की संख्या	१२१	१३१	३८	१५	१९	३२४
	क्षेत्रफल	१५१५	२७४३	१३७८	७५७	२३०१	८६९४
(ख) खुद्काश्त वाली जमीन	चकों की सख्या	१०१	१०४	२७	१०	१०	२५२
	क्षेत्रफल	१२४६	२१४६	९७५	४८५	९९०	५८४२
२. मैसूर							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चको की संख्या	८६	८४	२२	८	१०	२१०
	क्षेत्रफल	१०३९	१७३६	७७२	४१२	१०८५	५०४४
(ख) खुद्काश्त वाली जमीन	चको की संख्या	८१	७९	१९	७	८	१९४
	क्षेत्रफल	९६७	१६०७	६९९	३६२	८६४	४४९९
३. पेप्सू							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	६३	६४	१६	६	६	१५५
	क्षेत्रफल	७८८	१३२१	५८७	२८८	६१६	३६००
(ख) खुद्काश्त बाली जमीन	चको की संख्या	५१	५४	१३	४	४	१२६
	क्षेत्रफल	६४३	११०८	४६२	२२३	३६३	२७९९
४. दिल्ली							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चको की संख्या	३	२	—	—	—	५
	क्षेत्रफल	३३	३७	११	३	६	९०

(—) नगण्य

(हजार में)

		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)					
		१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चको की सख्या	३	२	—	—	—	५
	क्षेत्रफल	३३	३६	९	३	६	८७
५. हिमाचल प्रदेश							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चको की सख्या	६	३	१	—	—	१०
	क्षेत्रफल	६७	६५	१४	५	१७	१६८
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चको की संख्या	५	३	१	—	—	९
	क्षेत्रफल	६५	६१	१३	५	१६	१६०
६. विन्ध्य प्रदेश							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	५१	६४	१९	७	९	१५०
	क्षेत्रफल	६३१	१३४३	६९०	३८३	९६८	४०१५
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चकों की संख्या	५०	६३	१८	७	८	१४६
	क्षेत्रफल	६१६	१२९६	६५७	३६१	८५४	३७८४
७. कुर्ग							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चको की संख्या	१	१	—	—	—	२
	क्षेत्रफल	९	२३	१२	९	७४	१२७
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चको की संख्या	१	१	—	—	—	२
	क्षेत्रफल	८	२१	११	७	७०	११७

(—) नगण्य

(ग) वे राज्य जिनमें चकों सम्बन्धी आंकड़ों का संग्रह नमूना-प्रणाली के आधार पर किया गया

(हजार में)

		चको का वर्गीकरण (एकड़ो में)							
		५ से कम	५–१०	१०–१५	१५–३०	३०–४५	४५–६०	६० से ऊपर	योग
		१. राजस्थान (केवल २२ चुनी हुई तहसीलो के बारे मे)							
(क) स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	८४	३४	१६	१८	६	२	३	१६३
	प्रतिशत ..	(५१·४)	(२०·९)	(१०·१)	(११·४)	(३·४)	(१·३)	(१·५)	(१००)
	क्षेत्रफल . .	१७२	२४४	२००	३८२	१९८	१०७	२६०	१५६३
	प्रतिशत	(११·०)	(१५·७)	(१२ ८)	(२४·४)	(१२·६)	(६·८)	(१६·७)	(१००)
(ख) खुदकाश्त वाली जमीन	चको की संख्या .	७६७	३२	१५	१६	४	२	२	१४८
	प्रतिशत . ..	(५२·५)	(२१·५)	(१० ०)	(१०·९)	(२·९)	(१·१)	(१·१)	(१००)
	क्षेत्रफल	१६३	२२८	१८१	३३२	१५७	८१	१४२	१२८४
	प्रतिशत .	(१२·७)	(१७·७)	(१४ १)	(२५·८)	(१२·३)	(६·३)	(११·१)	(१००)

(हजार में)

——		चकों का वर्गीकरण (एकड़ों में)					
		५ से कम	५–१०	१०–२५	२५–४०	४० से ऊपर	योग
		२. तिरुवांकुर-कोचीन (नमूने के आधार पर)					
स्वामित्व वाली जमीन	चकों की संख्या	२१६५	८०	३०	४	३	२२८२
	प्रतिशत	(९४·९)	(३·५)	(१·३)	(०·२)	(०·१)	(१००)
	क्षेत्रफल	१८९७	५४१	४३२	१२६	३२७	३३२३
	प्रतिशत	(५७·१)	(१६·३)	(१३·०)	(३·८)	(९·८)	(१००)

अध्याय १०

सहकारिता का विकास

सहकारिता और राष्ट्रीय आयोजन

लोकतन्त्रीय पद्धति पर आर्थिक विकास करने में सहकारिता के विविध रूपो मे प्रयोग की बहुत बडी गुजाइश रहती है। समाजवादी ढग के समाज की हमारी परिकल्पना मे कृषि और उद्योग दोनो मे बहुत बड़ी संख्या मे विकेन्द्रीकृत इकाइयो की स्थापना निहित है। इन छोटी इकाइयो को विस्तार और सगठन के लाभ मुख्यत एकत्र होकर प्राप्त हो सकते है। भारत में आर्थिक विकास के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन पर भी और जोर दिया जा रहा है और इसमे सहकारिता के संगठन के लिए बड़ा भारी क्षेत्र है। इसलिए नियोजित विकास के रूप मे एक सहकारिता क्षेत्र की रचना हमारी राष्ट्रीय नीति का एक प्रमुख उद्देश्य है।

२ सहकारिता का सिद्धान्त किन-किन कार्यों पर लागू किया जा सकता है, इसका निर्धारण इस तथ्य द्वारा होता है कि हर एक प्राथमिक सहकारिता सगठन को इतना छोटा होना ही चाहिए जितने मे उसके सदस्य एक-दूसरे को जान सके और उन पर विश्वास कर सके। कुछ विशेष उद्देश्यों से कई छोटे-छोटे समूह मिलकर बड़े संगठन बना सकते है और बनाने भी चाहिए, परन्तु अन्तत सहकारिता की शक्ति अपेक्षाकृत छोटे समूहों मे ही है, जिनमे सब लोग एक-से हों और सक्रिय होकर काम कर सकें। यदि मूल स्तर पर मजबूत प्राथमिक इकाइया वनी हो तो ऊंचे स्तरो पर सफल सगठन बनाए जा सकते है। तब सम्पूर्ण व्यवस्था एक होकर ऐसे काम उठा सकती है और ऐसी सेवाएं प्रस्तुत कर सकती है जिनमे अधिक धन और सगठन की आवश्यकता पड़ती हो। इस दृष्टि से सहकारी संगठन के लिए विशेष रूप से उपयुक्त क्षेत्र ये है ग्रामीण ऋण, हाट-व्यवस्था और माल की तैयारी, ग्राम क्षेत्रो मे उत्पादन के सब पक्ष, उपभोक्ता सहकारी भंडार, कारीगर और श्रम सहकार और निर्माण सहकार सस्थाएं आदि। इन क्षेत्रो मे उद्देश्य यह होता है कि सहकारिता का धीरे-धीरे विकास करके उसे आर्थिक जीवन का मूल आधार बना दिया जाए।

३. सहकारिता के विकास का जिन क्षेत्रों मे विशेष अवसर मिलता है, उनमे सहकारी सगठन से होने वाले फायदों का मुकाबला निजी उद्योग और सरकारी उद्योग दोनों ही नही कर सकते। वास्तव में सहकारिता एक ऐसा साधन है जिसका लाभ सामाजिक और व्यक्तिगत दोनों क्षेत्रो के उद्दीपकों द्वारा समाज को मिलता है। जहां वह सफल होती है वहा समाज का प्रचुर हित होता है, किन्तु उसकी एक विशेषता यह है कि उसमें कुछ जटिल मानवीय तत्व भी छिपे होते है और कुछ अर्थो मे एक सम्पूर्णत समाजीकृत उद्योग या एक निरे व्यक्तिगत उद्योग के मुकाबले सहकारी संगठन का सफल होना कहीं अधिक कठिन होता है। इसलिए जहां सम्भव हो वहा सहकारिता की सफलता के हेतु कुछ सार्थक उपाय करना आवश्यक है, विशेषत: राष्ट्रीय विकास की योजना में जो क्षेत्र सहकारिता के लिए चुने गए हैं उनमे तो यह आवश्यक है ही।

४. रिजर्व बैक ग्राफ इडिया द्वारा ग्रायोजित ग्राम ऋण सर्वेक्षण ने जो प्रतिवेदन तैयार किया है उसमें इस पहलू पर काफी प्रकाश डाला गया है। दूसरी पचवर्षीय योजना के लिए सहकारिता के विकास के कार्यक्रम मोटे तौर पर इसी प्रतिवेदन की सिफारिशो के आधार पर बनाए गए है। अभी इन कार्यक्रमो मे सहकारिता का सम्पूर्ण क्षेत्र समाहित हो गया है, ऐसा नही कहा जा सकता है। कुछ दिशाओ मे आगे भी कार्यक्रम बनाना है, कुछ में लक्ष्यो तथा अन्य ब्योरों को योजना के परिपालन के साथ-साथ ध्यानपूर्वक निश्चित करके चलना है। भारत की ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण गत पचास वर्ष मे सहकारिता का अधिकतर विकास कृषि ऋण के कारण ही हुआ है। समुचित शर्तो पर यथेष्ट कर्ज की व्यवस्था करना सहकारिता का निस्सन्देह एक बड़ा महत्वपूर्ण काम है। पर इस काम के प्रभाव इससे अधिक व्यापक और दूरगामी है। ग्राम सहकार में सबसे महत्वपूर्ण इकाई होती है — गाव। ग्राम सहकार के कार्यक्रम लागू करते समय उसके तीन पहलुओं पर विशेष ध्यान देना जरूरी है। पहले तो यह समझना है कि ऋण की व्यवस्था सहकारिता का केवल आरम्भिक कदम है। ऋण से आगे चलकर सहकारिता को गावों के अनेक कार्यों में लागू करना होगा जिनमें सहकारिता की खेती भी शामिल होगी। सहकारिता मे विकास के अडिग और अचल नियम नहीं बनाए जा सकते और हर कदम जनता के अनुभव द्वारा निश्चित होता चलता है। दूसरे यह कि गाव के प्रत्येक परिवार को कम से कम एक सहकार सस्था का सदस्य होना चाहिए। तीसरे यह कि सहकारिता आन्दोलन का उद्देश्य यह भी होना चाहिए कि गाव का प्रत्येक परिवार कर्ज चुकाने मे समर्थ हो सके। इस समय उन क्षेत्रो मे भी, जहा सहकारिता सबसे अधिक प्रचलित है, केवल तीस-चालीस प्रतिशत परिवार ही इस शर्त को पूरा करने मे समर्थ है। प्राथमिक सहकारी संस्था और ग्राम पचायतो को गाव के सब परिवारो की आवश्यकताएं पूरी करने का उद्देश्य लेकर मिलकर काम करना होगा।

५. प्राथमिक ग्राम सस्था का आकार कैसा हो, यह कर्ज के और सामान्य सहकारिता के विकास के पहलुओं से निश्चित किया जाएगा। कुल मिलाकर, जैसा ऊपर कहा जा चुका है, उद्देश्य यह है कि गाव के सब कामों मे—खेती मे भी—सहकारिता लागू हो जाए। जैसा कि सातवे अध्याय मे बताया जा चुका है, पांच सौ या उससे कम की आबादी वाले गाव ३८०,००० से भी अधिक है और यह प्रश्न विचारणीय है कि कम आबादी वाले छोटे गावों को मिलाकर लगभग एक हजार की आबादी वाली इकाइयां बनाई जाए। ऐसे गांवों का होना आवश्यक है जो इतने छोटे तो हो कि उनमे एक होने की भावना रहे पर इतने छोटे न हो कि उनके लिए संगठित आवश्यक सेवाओं की खातिर कर्मचारी न मिल सके। जिन बातों का विचार सुविधाजनक ग्राम इकाइया संगठित करने में जरूरी है, उन्ही बातो का विचार करते हुए प्राथमिक सहकारी संस्था का आकार निर्धारित किया जा सकता है। इस संस्था का कार्यक्षेत्र इतना बड़ा तो होना चाहिए कि वह सार्थक रूप से काम कर सके, पर इतना बड़ा नही होना चाहिए कि उसके सदस्यों मे ज्ञान, पारस्परिक कर्तव्य की भावना, समाज के कमजोर वर्गों को उन्नत करने की इच्छा और प्रबन्ध समिति तथा अलग-अलग परिवारों के बीच घनिष्ठ सम्पर्क की भावना पैदा करना कठिन हो जाए। इसके बिना सहकारिता ग्राम जीवन पर कोई सच्चा प्रभाव नही डाल सकती। ग्राम पंचायतों की भाति सहकारी सस्थाएं भी सामाजिक एकता उत्पन्न करने की माध्यम है। जिस देश मे आर्थिक व्यवस्था की जड़ें गांवों में हों वहां सहकारिता सहकार पद्धति पर संगठित कार्यों की कोरी शृंखला नही हो सकती; वहा उसका मूल उद्देश्य एक ऐसी सहकारी सामुदायिक संगठन की पद्धति तैयार करना है जो जीवन के सब पहलुओं पर प्रभाव डालती हो। ग्राम समाज के अन्दर

ही ऐसे वर्ग भी है जिन्हे विशेष सहायता की जरूरत है। इसलिए सहकारिता को गावो के सब परिवारो का हित करना चाहिए और समूचे गावों के हित में भूमि तथा अन्य साधनो का विकास और सामाजिक सेवाओं का प्रबन्ध करना चाहिए। ग्राम अर्थ-व्यवस्था मे नया जीवन लाने के लिए सहकारी ग्राम प्रबन्ध की स्थापना करने का यही मूल उद्देश्य है।

६. शहरों का तेजी से विकास होने के कारण और ग्रामीण तथा औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था में सम्पर्क बढते जाने के कारण शहरी क्षेत्रो में भी सहकारिता के विकास की गुजाइश बढ़ती जा रही है। पहले के दिनों मे नगर सहकारिता पर समुचित ध्यान नही दिया गया है। उदाहरण के लिए, फुटकर और थोक व्यापार, परिवहन, छोटे उद्योग, महाजनी, आवास और निर्माण मे सहकारिता के आधार पर अच्छे सगठन बना कर बहुत कुछ उन्नति की जा सकती है। जब सहकारिता यथेष्ट विकास को प्राप्त हो जाती है तो उत्पादक, विक्रेता, उपभोक्ता और अन्य सहकारी संगठन एक परस्परावलम्बित और परस्पर सम्बद्ध सहकार क्षेत्र का अंग बन जाते है। इस क्षेत्र का अर्थ-व्यवस्था के अन्य क्षेत्रो से घनिष्ठ सम्पर्क होता है और ग्राम और शहरी सहकारिता में जो इस समय भेद है उसका महत्व इतना नही रह जाता है।

प्रगति की समीक्षा

७. जब सहकारी ऋण सस्था अधिनियम, १९०४ के अधीन सहकारिता पहले-पहल लागू की गई तो वह कर्जदारी घटाने और किफायतशारी बढाने के उद्देश्य से ग्राम और शहरी क्षेत्रो मे सहकारी ऋण सस्थाएं सगठित करने तक ही सीमित थी। सहकारी सस्था अधिनियम, १९१२ ने कर्ज देने के अलावा और काम करने वाली सहकारी सस्थाओं की रजिस्ट्री तथा प्राथमिक संस्थाओ के ऊचे स्तरों पर सघबद्ध होने की अनुमति दे दी। कर्ज देने और उसके अतिरिक्त अन्य कार्यो मे सलग्न सहकारिता का रूप यह है कि गांवों या शहरों मे पहले प्राथमिक सस्थाएं, फिर जिलों मे केन्द्रीय सगठन और राज्य स्तर पर सर्वोच्च संगठन बने हुए हैं।

८. किसानों को कर्ज देने के सगठनो का विकास दो खण्डो मे हुआ है। एक वे है जो थोड़े समय के लिए कर्ज देते है, और दूसरे वे जो लम्बे समय के लिए देते है। पहले खण्ड में जून १९५४ मे २२ राज्य सहकार बैंक, ४९९ केन्द्रीय सहकार बैंक और १२६,९५४ कृषि ऋण संस्थाए थी, जिनकी कुल सदस्यता ५८ लाख थी। ये सब संगठन १९५३-५४ मे कुल ३९ करोड़ रुपए की मूल पूजी से चल रहे थे। उसके अतिरिक्त इनमें करीब ७१ करोड रुपया जमा था और लगभग १६१ करोड़ रुपए की चालू पूजी थी। कृषि ऋण संस्थाओ ने लगभग ३० करोड़ रुपए के नए कर्जे दिए थे। लम्बे समय के लिए किसानों को कर्ज देने वाली संस्थाएं इससे कही कम विकसित थी; उनमे केवल १० केन्द्रीय और ३०४ प्राथमिक भूमि रेहन बैंक थे जिनकी कुल चालू पूजी लगभग २४ करोड़ रुपए थी। कृषि के क्षेत्र से बाहर काम करने वाली संस्थाओ में ७१६ शहरी बैंक थे जिनकी कुल चालू पूजी लगभग ३३ करोड़ रुपए थी, ८,३८९ सहकारी ऋण संस्थाएं थीं जिनकी सदस्यता लगभग २७ लाख थी और ३,६५१ वेतन भोगी और मजदूरी भोगी कर्मचारियों की संस्थाए थी।

९. पिछले कुछ वर्षों मे ऋण देने के अतिरिक्त और काम करने वाले संगठनों का विकास करने पर और ज्यादा ध्यान दिया गया है, और यह नही कहा जा सकता कि इन कामों में सहकारिता ने सभी जगह और केवल चुने हुए केन्द्रों को छोड़कर और कहीं कोई खास

असर डाला है। कृषि हाट-व्यवस्था के क्षेत्र मे जून १९५४ मे १६ राज्य हाट-व्यवस्था संस्थाएं, २,१२५ हाट-व्यवस्था सघ और ६,२४० प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाएं थी, जिन्होने १९५३-५४ मे करीब ५२ करोड रुपए का कुल काम किया। कुछ राज्यो में पहली योजना मे सिंचाई संस्थाओ और दुग्ध सस्थाओ ने उत्साहवर्द्धक काम कर दिखाया है। १९५३-५४ मे ६३७ सिचाई संस्थाएं, ६५ दुग्ध संघ और १,४७३ प्राथमिक दुग्ध संस्थाएं थी। १९५३-५४ मे २३४ बस्ती संस्थाए और ६०१ सहकारी कृषि सस्थाएं भी थी। खेती से भिन्न क्षेत्र मे शायद सबसे अधिक सफलता करघा बुनकर सस्थाओं की स्थापना मे मिली है। इनकी संख्या १९५३-५४ मे ५,७४८ थी। इन संस्थाओ के अन्तर्गत करघो की संख्या पहली योजना की अवधि मे ६२६,११९ से बढ़कर लगभग १० लाख हो गई और दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक लगभग साढे १४ लाख हो जाएगी। उपभोक्ता सहकार में अभी तक बहुत थोड़ा काम हो सका है। प्राथमिक भण्डारों की संख्या ८,२५१ और थोक भण्डारो की संख्या ८६ है, जिन्होने ४० करोड़ रुपए से कुछ कम का काम किया है। हाल के वर्षो में कर्ज देने से भिन्न काम करने वाली जो संस्थाएं बनी है उनमे २,०३६ आवास संस्थाएं, ५३६ श्रम संस्थाएं, १२४ वन्य श्रम संस्थाएं और ७८ परिवहन सस्थाए है। इनमे से काफी अच्छी तरह काम कर रही है। इनके अलावा ४,६४३ ऐसी संस्थाए भी है जो स्वास्थ्य और जीवन-स्तर उन्नत करती है और ये सब लगभग ग्राम क्षेत्रो में ही है।

ग्राम ऋण और हाट-व्यवस्था का पुनर्गठन

१० ग्राम ऋण सर्वेक्षण की निदेशन समिति के मुख्य प्रस्ताव केन्द्रीय सरकार ने, रिजर्व बैंक आफ इंडिया ने और सहकारिता आन्दोलन के प्रतिनिधियो ने सिद्धान्त रूप में मान लिए है। इन्ही के आधार पर दूसरी पंचवर्षीय योजना मे विकास कार्यक्रम तैयार किए गए है। पहले के कार्यक्रमों मे और नए कार्यक्रमो में सबसे महत्वपूर्ण अन्तर जो ग्राम सर्वेक्षण ने सुझाया है यह है कि राज्य भिन्न स्तरों पर सहकार सस्थाओं मे साझेदार हो। यह अनुभव किया गया था कि इस प्रकार की वित्तीय साझेदारी से सहकारी सस्थाओं को अतिरिक्त शक्ति मिलेगी और सरकार से उन्हे सहायता और निदेश पहले से अधिक मिल सकेगा। राजकीय साझेदारी का सिद्धान्त विशेषत. शिखर पर और केन्द्रीय बैंक स्तर पर तथा सामान्यतः प्राथमिक स्तर पर लागू होगा। यह स्पष्ट कर दिया गया है कि राजकीय साझेदारी का वास्तविक आधार सहायता है, हस्तक्षेप या नियन्त्रण नही।

११ सहकारी संस्थाओं मे राज्य की साझेदारी सुगम बनाने के लिए रिजर्व बैंक ने लम्बी अवधि वाले एक राष्ट्रीय कृषि ऋण कोष की स्थापना १० करोड़ रुपये की आरम्भिक पूजी से कर दी है। दूसरी योजना की अवधि में इसमे ५ करोड़ रुपए वार्षिक और दिया जाएगा, ताकि १९६०-६१ तक कोश के पास ३५ करोड़ रुपये की पूजी हो जाए। इस कोश से राज्यों को ऋण दिए जाएंगे, ताकि वे सहकारी ऋण संस्थाओं की पूजी के रूप में हिस्से खरीद सके। राष्ट्रीय सहकारिता विकास कोश नामक एक अन्य कोश भी केन्द्रीय सरकार स्थापित करेगी जिसमें से ऋणेतर सहकारी संस्थाओं के हिस्से खरीदने के लिए राज्य कर्ज ले सकेंगे। इस कोश से गोदाम बनाने, सहकारी संस्थाओं मे कर्मचारी नियुक्त करने और सहकार विभागों का प्रशासन पुष्ट करने के लिए भी रुपया मिल सकेगा।

१२. ग्राम ऋण सर्वेक्षण मे प्रस्तावित पुनर्गठन योजना की एक और विशेषता यह है कि उसके अनुसार ऋण और ऋणेतर सस्थाओ को परस्पर जोड दिया जाएगा ताकि कृषक भी खाद, औजार और अपने दैनिक इस्तेमाल की चीजे खरीदने के लिए ऋण ले सके और अपने उत्पादन की निकासी मे भी सहायता पा सके। यह देखते हुए कि इसमें बहुत प्रकार के कार्यो का प्रबन्ध सोचा गया है, ग्राम ऋण सर्वेक्षण ने यह सिफारिश की है कि ग्राम समूहो के लिए काम करने वाली बडी ऋण सस्थाए बनाई जाए और इन्हें बनाने के लिए वर्तमान छोटी संस्थाओ को मिलाकर एक कर दिया जाए। जो नई सस्थाए बने, वे सर्वेक्षण की सिफारिशो के आधार पर बने और बडी सहकारी सस्था के संगठन का आम रूप यह होगा कि उसमे पांच सौ सदस्य होंगे और प्रत्येक सदस्य का दायित्व उसके द्वारा दी गई पूजी के अंकित मूल्य का पाच गुना होगा। सस्था के पास कम से कम १५,००० रुपए के करीब पूजी होगी और वह कम से कम इतने गांवो की सेवा करेगी जो एक साथ मिलकर यथासम्भव डेढ़ लाख रुपए का वार्षिक लेन-देन करते हों। प्रस्ताव यह है कि १९६०-६१ तक इस प्रकार की १०,४०० बड़ी ऋण संस्थाएं बन जावे और हर एक मे एक प्रशिक्षित सचालक रहे।

१३. ग्राम ऋण सस्थाए चाहे नई बनी हों या पहले वाली हों, ये मण्डियो का काम करने वाली प्राथमिक हाट-व्यवस्था सस्थाओ से सम्बद्ध की जाएगी। कृषको को खेती-बारी के लिए ऋण संस्थाओ से कर्ज मिलेगा। उन्हें इनसे अपनी जरूरत की चीजे नकद दाम देकर या स्वीकृत सीमा के अन्दर कर्ज पर भी मिल जाया करेगी। ऋण सस्थाएं अपने सदस्यो के उत्पादन को हाट-व्यवस्था सस्थाओं द्वारा निकालने के लिए एकत्र करेगी। वे जितना माल चाहेगी हाट-व्यवस्था संस्थाओं से खरीद कर अपने सदस्यों को वितरित भी करेंगी। प्राथमिक हाट-व्यवस्था सस्थाओं को सघबद्ध करके एक सर्वोच्च हाट-व्यवस्था संस्था बना दी जाएगी जो सारे राज्य के लिए काम करेगी।

१४. भूतकाल में ग्राम ऋण के विकास मे शायद सबसे बड़ी बाधा यह रही है कि किसानों की एक बड़ी संख्या ऋण देने के लिए आम तौर से प्रचलित ऋण नियमों की कसौटी पर खरी नही उतरती थी। इस बाधा को हटाने के लिए प्रस्ताव किया गया है कि ऋण सस्थाए उत्पादन कार्यक्रमों और प्रत्याशित फसलों के आधार पर कर्ज दे दिया करे। प्रत्येक सदस्य के लिए कर्ज लेने की एक सीमा निश्चित कर दी जाएगी और इस सीमा के भीतर वह अपनी जरूरत के हिसाब से कर्ज ले सकेगा। धन का दुरुपयोग न हो, इस खयाल से जहा तक हो सकेगा कर्ज बीज, उर्वरक इत्यादि माल की शक्ल में दिए जाएंगे। जब नकद कर्ज दिया जाएगा तो उसका भुगतान किस्तों मे भी हो सकेगा। ऋण संस्थाओं के सदस्यों को पहले से इस बात पर राजी कर लिया जाएगा कि वे अपने उत्पादन की बिक्री प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाओं के माध्यम से करे।

१५. ऋण और ऋणेतर संस्थाओं के कार्यों मे गोदाम व्यवस्था द्वारा एक महत्व-पूर्ण सम्बन्ध बना रहेगा। प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाओं और सुसंगठित ऋण संस्थाओं को बड़े पैमाने पर गोदाम बनवाने होगे। ग्राम ऋण सर्वेक्षण की सिफारिश के अनुसार एक केन्द्रीय गोदाम निगम और अनेक राज्य गोदाम निगम स्थापित करने का प्रस्ताव है। ये निगम राष्ट्रीय सहकारिता विकास और गोदाम मण्डल के अधीन कार्य करेंगे। राजकीय गोदाम निगम की अधिकतम अधिकृत पूंजी लगभग दो करोड़ रुपए तक हो सकती है, लेकिन जारी हिस्सा पूंजी की राशि अलग-अलग राज्यों की जरूरत के हिसाब से स्थिर की जाया करेगी। प्रस्ताव के यह है कि केन्द्रीय गोदाम निगम आधी पूजी दे और बाकी आधी

रकम राज्य सरकारें जुटाएं। अनुमान है कि सोलह गोदाम निगम खोले जाएंगे और दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि में वे विभिन्न केन्द्रो मे लगभग दस लाख टन की कुल भण्डार शक्ति के कोई २५० गोदाम खोलेंगे। केन्द्रीय गोदाम निगम के पास १० करोड़ रुपए की कुल पूंजी होगी। इसमें से राष्ट्रीय सहकारिता विकास और गोदाम मण्डल के माध्यम से केन्द्रीय सरकार ४ करोड़ रुपए देगी और बाकी स्टेट बैंक आफ इडिया, अनुसूचित बैंक, सहकारी संस्थाएं आदि देगी। केन्द्रीय गोदाम निगम बडे-बड़े लगभग १०० गोदाम महत्वपूर्ण केन्द्रों में खोलेगा। गोदाम की रसीदे हुण्डियो का काम देंगी जिनके आधार पर लेन-देन करने वाली संस्थाएं उन लोगों को उधार देगी जो गोदाम में अपना कृषि उत्पादन जमा करावेंगे।

१६. दूसरी पंचवर्षीय योजना मे चीनी, रुई, तेल और पटसन की तैयारी के लिए विशेष रूप से और अन्य वस्तुओ की तैयारी के लिए भी सहकारी व्यवस्था का विकास काफी बड़े पैमाने पर करने का प्रबन्ध किया गया है।

१७. दूसरी पंचवर्षीय योजना मे सहकारी ऋण, हाट-व्यवस्था, माल तैयार करने, गोदाम और भण्डार के जो लक्ष्य निश्चित किए गए है वे निम्नलिखित है .

ऋण :

बडी संस्थाओं की संख्या	१०,४००
अल्पकालीन ऋण का लक्ष्य	१५० करोड़ रुपए
मध्यमकालीन ऋण का लक्ष्य	५० करोड रुपए
दीर्घकालीन ऋण का लक्ष्य	२५ करोड़ रुपए

हाट-व्यवस्था और माल की तैयारी :

प्राथमिक हाट-व्यवस्था संस्थाएं जो संगठित की जाएंगी	१,८००
सहकारी चीनी फैक्टरियां	३५
सहकारी कपास धुनाई कारखाने	४८
अन्य सहकारी माल तैयार करने वाली संस्थाएं	११८

गोदाम और भण्डार :

केन्द्रीय और राज्य निगमो के गोदाम	३५०
हाट-व्यवस्था सस्थाओं के गोदाम	१,५००
बड़ी सस्थाओं के गोदाम	४,०००

सहकारी ऋण के लिए उपर्युक्त लक्ष्य वर्तमान और नई दोनों प्रकार की संस्थाओं द्वारा प्राप्त किए जाएंगे। आशा है कि सहकारी ऋण सस्थाओं की सदस्यता जो कि इस समय ६० लाख से कम है एक करोड़ ५० लाख के करीब पहुंचा दी जाएगी।

१८. ग्राम ऋण सर्वेक्षण की सिफारिश के अनुसार इम्पीरियल बैंक आफ इण्डिया को स्टेट बैंक आफ इण्डिया का रूप दिया गया। स्टेट बैंक आफ इण्डिया को कानून के अनुसार अपने आरम्भ के पांच वर्षों, या केन्द्रीय सरकार यदि इस अवधि को बढ़ाये तो उस अवधि क अन्दर, चार सौ नई शाखाएं खोलनी होंगी। शुरू मे सौ जगहें चुनी गई है। इनके अलावा उस विकास कार्यक्रम के अनुसार जिस पर इम्पीरियल बैंक राष्ट्रीयकरण के पहले चल रहा था ३१

शाखाएं भी खोली जाएंगी। गांवों में रुपया जमा करने और उधार लेने की व्यवस्था के अतिरिक्त स्टेट बैंक रुपया भेजने और हाट-व्यवस्था के लिए बड़ी रकमे देने की सुविधाएं पहले से अधिक प्रदान कर सकेगा ।

उत्पादक और अन्य सहकारी संस्थाएं

१६ उपरोक्त खण्ड मे ग्राम ऋण, हाट-व्यवस्था और माल की तैयारी के विकास के जो उपाय उल्लिखित है, उनसे खेती मे उत्पादकों की सहकारी सस्थाए खोलने और विकसित करने में सहायता मिलेगी। वित्तीय सहकारी संस्थाएं अगर मजबूत होगी तो औद्योगिक सहकारी सस्थाओ को भी वे अधिकाधिक सहायता देने मे समर्थ होगी। अध्याय ६ (भूमि सुधार और कृषि व्यवस्था का पुनर्गटन) मे कहा गया है कि दूसरी पचवर्षीय योजना के समय मे ऐसे मौलिक काम करने होगे जिनसे कृषि सहकारी सस्थाओं के विकास की मजबूत नीव पड जाए और दस-एक वर्ष मे कृषि भूमि का एक काफी बडा हिस्सा सहकारिता के आधार पर जोता जाने लगे। निम्नलिखित कार्रवाइयो की सिफारिश की गई है :

(१) प्रत्येक जिले मे और बाद मे प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य क्षेत्र मे प्रबन्ध और संगठन के और अच्छे तरीके प्रस्तुत करन के लिए प्रयोगात्मक या प्रारम्भिक योजना-कार्य चलाने चाहिएं। फिर इन केन्द्रो का विकास व्यावहारिक प्रशिक्षण केन्द्रो के रूप मे होना चाहिए जहां सहकारिता, खेती और अन्य विकास कार्य के कार्यकर्ताओं को शिक्षा दी जा सके ।

(२) जहा तक सम्भव हो उस जमीन मे, जो जमीन रखने की अधिकतम सीमा निश्चित करने के बाद फालतू बच रहेगी, सहकारिता के आधार पर खेती की जाए ।

(३) निर्धारित निम्नतम भूमि से भी छोटे खेतो को उन सहकारी सस्थाओं मे शामिल कर लेना चाहिए जिन्हे फालतू भूमि दी गई है, मगर शर्त यही है कि उन भूमिखण्डों के मालिक अपनी जमीनें एकत्र करने पर राजी हों। चकबन्दी करते समय बहुत कम जमीन वाले लोगो की जमीन जहां तक सम्भव हो एकत्र भूमि के पास होनी चाहिए ताकि वे किसान जो सहकारिता की खेती मे तुरन्त शामिल नहीं हो रहे है आगे चलकर उसमे शामिल होने के फायदे देख सके और उसमें शामिल हो जाए ।

(४) वर्तमान सहकारी कृषि सस्थाओ की ओर जो अधिकांशतः ऐसे-वैसे काम चला रही है विशेष ध्यान देना चाहिए और उनमें से जितनी अधिक सम्भव हों उतनी सुधारनी चाहिएं ताकि उनकी सफलता से औरो को भी प्रेरणा मिले तथा सहकारी कृषि संस्थाएं बनें ।

(५) लोगों को सहकारी कृषि सस्थाए बनाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए और उन्हे अध्याय ६ मे वर्णित तरीको के अनुसार सहायता दी जानी चाहिए ।

(६) आदिम जाति क्षेत्रो मे, जहा सामुदायिक स्वामित्व अब भी माना जाता है, जैसे-जैसे विधिवत खेती का चलन हो वैसे-वैसे सहकारिता की खेती को प्रोत्साहन दिया जाए ।

सहकारी खेती में प्रशिक्षण देने का एक व्यापक कार्यक्रम सगठित किया जाए ।

राज्यो से परामर्श करके अगले वर्ष की अवधि मे दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए ब्योरे-वार कृषि उत्पादक सहकारी सस्थाओं के लक्ष्य तैयार करने का विचार है ।

२० औद्योगिक सहकारी सस्थाओ की समस्याओं पर ग्रामोद्योग और लघु उद्योग शीर्षक से अध्याय २० मे विचार किया गया है । ग्रामोद्योगों मे शायद सहकारी उत्पादक सस्थाओं के लिए छोटे पैमाने के उद्योगो और दस्तकारियो के मुकाबले, जहा पूर्ति और हाट-व्यवस्था सहकार अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण है, ज्यादा गुजाइश है । करघा उद्योग मे औद्योगिक सहकारी सस्थाओं के बनाने के मोटे-मोटे लक्ष्य निर्धारित किए जा चुके है । अन्य ग्रामोद्योगो मे भी जितनी जल्दी हो सके सहकारी सस्थाओ के विकास कार्यक्रम बनाये जाए और सहकारी सस्थाओ की सहायता के लिए कर्मचारी नियुक्त किए जाए ।

२१ यद्यपि उपभोक्ता सहकारी आन्दोलन के लिए भी बहुत गुजाइश है, तथापि अभी तक उसका विकास नहीं हो सका है । युद्ध काल में और युद्धोत्तर काल मे शहरो और गांवो दोनों जगह काफ़ी बड़े पैमाने पर सहकारी विक्रय सस्थाएं बनाई गई थी और उनका काम उन चीजों की बिक्री करना था जो कम मिलती थी और जिन पर नियन्त्रण था । नियन्त्रण हट जाने के बाद इनमे से कई संस्थाएं बन्द हो गईं । केवल कुछ राज्यों को छोडकर शहरो में सहकार विभागो ने कोई बडा काम नही किया है । शहरो मे उपभोक्ता सहकार भण्डार अनेक हो तो उससे ग्राम क्षेत्रो मे उपभोक्ता सहकार आन्दोलन को तथा उत्पादक सहकारी सस्थाओं को शक्ति मिलेगी । यद्यपि उपभोक्ता सहकार आन्दोलन के विकास के लक्ष्य अभी तक विकसित नही हुए है तो भी सिफारिश की जाती है कि इस क्षेत्र की समस्याओं पर अभी गौर से ध्यान किया जाए और कार्यक्रम तैयार किए जाए । कुछ समय के बाद लक्ष्य निर्धारित करना भी सम्भव हो जाएगा । सहकारिता के आधार पर कृषि उत्पादन की बिक्री के लिए जो काम किए जाएगे उनसे बाकी ग्रामीण व्यापार को सहकारिता के आधार पर पुनर्गठित करना आसान हो जाएगा । इसमें कोई सन्देह नही कि यदि ग्राम व्यापार को अधिकांश व्यापारिक पद्धति पर सहकारी अभिकरणो द्वारा नियोजित किया जाता है तो ग्राम जनता के लिए अपने स्कूल, अस्पताल और अन्य सुविधाओ का प्रबन्ध करना पहले से या परिकल्पना से कही अधिक निश्चित हो जाता है । ग्रामीण व्यापार में हाट व्यवस्था और माल की तैयारी से तथा उपभोक्ता की जरूरत की चीजे लाने से वृद्धि होगी । ग्रामीण आवश्यकताएं पूरी करने वाली अन्य वस्तुओं के व्यापार से भी मुनाफा होगा और इस प्रकार गावो का उत्पादन बढ़ेगा तथा ग्राम जनता का कल्याण होगा । सहकारी उत्पादक सस्थाओ और उपभोक्ता सहकार का घनिष्ठ सम्पर्क होने से गांवों मे आय और रोजगार बढ़ाने मे महत्वपूर्ण सहायता मिलेगी ।

२२. ऐसी अर्थ-व्यवस्था मे जहा ग्राम्य क्षेत्रों मे जन शक्ति की अधिकता है, श्रम और निर्माण सस्थाए संगठित करने के अधिकाधिक अवसर आने लगते है । विकास के काल मे श्रम और निर्माण सहकारी सस्थाए संगठित करने के अवसर बढ़ते ही जाते है । इस विषय में अध्याय ६ (प्रशासनिक कर्तव्य और सगठन) और अध्याय १७ (सिचाई और बिजली) मे सुझाव दिए गए है । सुझाव है कि अन्य विभागो के साथ मिलकर सहकारिता विभागों कापता लगाना चाहिए कि वर्तमान ठेका पद्धति का स्थान सहकारी सस्थाएं क्रमश. किन दिशाओ मे ले सकती है ताकि प्रत्येक क्षेत्र मे आय और रोजगार की दृष्टि से अधिकाधिक लाभ हो सके । जिला और ग्राम परिकल्पना मे श्रम और निर्माण सहकारी सस्थाओं का ठोस आधार पर संगठन करना और

उन्हे समुचित शर्तो पर काम देना तथा आवश्यक निदशन और निरीक्षण की व्यवस्था करना एक मुख्य उद्देश्य होना चाहिए ।

२३. सहकारी आवास संस्थाओ के योग और उन उपायों के बारे मे जो ग्राम और शहरी क्षेत्रो में उनके विकास के लिए किए जा सकते है, अध्याय २६ (आवास) मे विचार किया गया है ।

प्रशिक्षण और संगठन

२४ इस अध्याय में वर्णित तथा दूसरी पचवर्षीय योजना की प्रगति के साथ-साथ नियोजित होने वाले सहकारिता के विकास कार्यक्रमों के लिए जिन कर्मचारियों की आवश्यकता होगी उनके प्रशिक्षण के लिए भी व्यापक कार्यक्रम लागू करने होंगे । अनुमान है कि २५,००० से अधिक व्यक्तियो को ग्राम ऋण, हाट-व्यवस्था और माल तैयार करने के कार्यक्रमों में विशेष कर्तव्यो के लिए तथा प्रशासनिक और अन्य प्रौद्योगिक कार्यो के लिए जरूरत पड़ेगी । यदि सहकारिता विकास के सब पहलुओं को लिया जाए तो इससे भी अधिक संख्या की आवश्यकता पड़ सकती है। सहकारिता की सफलता बहुत करके इसी बात पर निर्भर है कि आरम्भिक काल के बाद सहकारी सगठन अपने कर्तव्यो को अपने सदस्यों की हानि किए बिना अथवा सरकार पर अतिरिक्त बोझ डाले बिना पूरा करने लगे। इसलिए यह बहुत जरूरी है कि सहकारिता विभाग और सहकारी संस्थाए ऐसे व्यक्तियों द्वारा संचालित हों जो सहकारिता के सिद्धान्तों मे विश्वास रखते हों तथा उन्हे कार्यरूप देने में व्यावहारिक योग्यता और अनुभव रखते हों। इतना ही जरूरी यह भी है कि प्रत्येक राज्य में सामान्य जनता को सहकारिता के सिद्धान्तो की शिक्षा दी जाए और प्रत्येक समाज क प्रमुख व्यक्तियों को प्रशिक्षण के विशेष अवसर मिले जिससे कि वे सहकारिता आन्दोलन मे ज्यादा बड़े दायित्व उठा सके ।

२५. इन सब बातों पर पहली पंचवर्षीय योजना मे भी जोर दिया गया था । १९५३ में भारत सरकार और रिजर्व बैंक ने मिलकर सहकारिता प्रशिक्षण की एक केन्द्रीय समिति बनाई थी और उसे सहकारिता कर्मचारियों क लिए आवश्यक प्रशिक्षण सुविधाए जुटाने का दायित्व सौंपा था । इस केन्द्रीय समिति के निदेशन मे पूना का सहकारिता विद्यालय सहकारिता विभागों और संस्थाओं के ऊचे अधिकारियो के लिए छ. महीने का एक पाठ्यक्रम चलाता है । मध्यम श्रेणी के कर्मचारियो के शिक्षण के लिए पूना, राची, मेरठ, मद्रास और इन्दौर मे पांच प्रादेशिक सहकारिता प्रशिक्षण केन्द्र खोले गए है । राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कायक्षेत्रों की आवश्यकता पूरी करने के लिए खण्ड स्तर के चार हजार सहकारिता अधिकारियों को प्रशिक्षण देने के लिए आठ विशेष केन्द्र खोले गए हैं । अधीनस्थ कर्मचारियो के प्रशिक्षण के लिए राज्य सरकारे आवश्यक सुविधाएं प्रदान कर रही है और केन्द्रीय सरकार इसका खर्च बंटा रही है । सहकारिता सगठन के सदस्यो और पदाधिकारियो के प्रशिक्षण के लिए सरकार की सहायता से और सहकारिता प्रशिक्षण केन्द्रीय समिति द्वारा प्रस्तावित कार्यक्रमों के अनुसार अखिल भारत सहकारिता संघ और राज्य सहकारिता संघ इत्यादि कक्षाएं संगठित करेंगे । इन पहलुओं पर विधिवत ब्योरेवार जोर देना जरूरी है । सहकारिता की सफलता पर चूकि बहुत कुछ निर्भर है, इसलिए यह सिफारिश की जाती है कि सहकारिता प्रशिक्षण के लिए स्थापित विशेष संस्थाओं के अतिरिक्त राज्य सरकार और विश्वविद्यालय विभिन्न स्तरों पर शिक्षा के पाठ्यक्रमों मे सहकारिता के विषय को भी शामिल करन के उपाय सोचें ।

२६. ग्राम ऋण और हाट-व्यवस्था के पुनर्गठन का जो कार्यक्रम ऊपर बताया गया है वह सहकारिता और कृषि विभागों तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा के घनिष्ठ पारस्परिक सहयोग से लागू किया जाएगा। ग्राम स्तर कार्यकर्ता (ग्राम सेवक) प्रत्येक परिवार से परिचित होने के कारण सहकारिता विभाग के कर्मचारियो और गांवो के लोगों से सार्थक सम्पर्क रख सकता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना मे सरकार ने जो प्रशासनिक कार्य अपने जिम्मे लिये है उनमे से कठिनतम कार्यो का दायित्व राज्यों के सहकारिता विभागों पर पड़ेगा। अतएव यह आवश्यक है कि इन विभागों मे समुचित कर्मचारी हों और ये भली-भाति सगठित हो। कुछ वर्ष पहले तक रीति यह थी कि ग्रामीण जनता मे विशेष रुचि रखने वाले ऊचे और अनुभवी कर्मचारियों को संस्थाओं के रजिस्ट्रार पद पर चुना जाता था। कुछ वर्षो से इस रीति मे अन्तर भी हुआ है और आजकल जो लोग चुने जाते हैं उन्हे थोड़े-थोड़े अन्तर के बाद अन्य पदों पर भेज दिया जाता है। फलत. आवश्यक गुणों और अनुभवों का विकास नही हो पाता। सहकारिता को सफल बनाने के लिए सब स्तर के कर्मचारियो पर और विशेषत उन पर जो उत्तरदायित्व की जगहों पर है, प्रशासनिक योग्यता और अनुभव, सहकारिता आन्दोलन मे आस्था, जनता से एकरूपता या तादात्म्य और साथ ही साथ व्यावहारिक ब्योरों की ओर बहुत काफी ध्यान देने की शक्ति प्रदर्शित करने का दायित्व आ पड़ा है। प्रत्येक जिले में सहकारी संस्थाओं का विकास करने का अधिकांश भार जिला सहकारिता अफसर को उठाना होगा, जिसे साधारणत: सहायक रजिस्ट्रार कहा जाता है। इस कर्मचारी को जिले की अर्थ-व्यवस्था से तथा जिला योजना मे शामिल विभिन्न विभागो के कार्यक्रमो से पूर्ण परिचय प्राप्त करना होगा। उसे पता लगाना चाहिए कि सहकारिता पद्धति के विकास के विशेष अवसर किन दिशाओं में प्राप्त हो सकते है, तथा जिले मे कार्यरत अन्य विभागों की सहायता से सहकारिता का विस्तार ठोस और स्थायी आधार पर करना चाहिए। उसकी सफलता बहुत हद तक इस बात पर निर्भर होगी कि वह जिले में सहकारिता ऋण पद्धति का संगठन और पुष्टीकरण किस प्रकार से करता है और कराता है। उसे किसानो, कारीगरो तथा अन्य लोगो को सहायता देने वाले विभिन्न सहकारी विभागों से एवं केन्द्रीय सहकारिता बैंक, स्टेट बैंक आफ इडिया और अन्य संस्थाओं से घनिष्ठतम सम्पर्क रखना चाहिए। उदाहरण के लिए, यह अच्छा होगा कि प्रत्येक जिले का सहकारिता विभाग, कृषि विभाग और राष्ट्रीय विस्तार सेवा संगठन के सहयोग से प्रत्येक वर्ष अल्पकालीन ऋण की व्यवस्था का एक ब्योरेवार आयोजन तैयार किया करे। फसल के पहल ही विभिन्न फसलो के लिए कर्जो की प्रतिमान श्रेणिया निर्धारित की जाए और कर्ज के आवेदनों की मंजूरी दे दी जाए तो अच्छे बीजों, उर्वरकों आदि के लिए समय रहते ही कर्ज दिया जा सकता है। अन्त में यह भी कह देना उचित होगा कि ऋण के अलावा अन्य दिशाओं मे, जैसे खेती, उपभोक्ता भण्डार, औद्योगिक संस्थाएं, श्रम और निर्माण की सहकारी संस्थाएं, आवास इत्यादि मे, सहकारी संस्थाओं का संगठन करने के लिए जिला सहकारिता कर्मचारियों की संख्या में काफी वृद्धि करनी होगी।

भूमि सुधार और सहकारिता ऋण

२७. भूमि सुधार की सफलता और सहकारिता की सफलता में गहरा सम्बन्ध है, पर इसे बहुधा समझा नही जाता। सहकारिता की पूर्ण सफलता के लिए यह आवश्यक है कि भूमि व्यवस्था का पुनर्गठन तुरन्त कर दिया जाए ताकि समाज की उत्पादन क्षमता घटाने और

शोषण बढ़ाने के कारण दूर हो जाएं। इस प्रकार भूमि सुधार कार्यक्रमों के द्वारा सहकारिता आन्दोलन की उन्नति में बहुत सहायता मिलेगी। होता यह है कि भूमि सुधार हो जाने से छोटे-छोटे किसानों की संख्या बढ जाती है। ज्यादा भूमि या काफी फालतू भूमि रखने वाले किसान कम हो जाते है और नए किसानो को बहुत अधिक ऋण की आवश्यकता पडती है। साथ ही जैसे-जैसे राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम सर्वत्र स्थापित होते जाते है और ग्रामीण जनता विकास कार्यक्रमों मे अधिकाधिक हिस्सा लेने के लिए प्रस्तुत हो जाती है, उसकी ऋण और वित्त सम्बन्धी आवश्यकताए बहुत बढ जाती है। सहकारी संस्थाएं भी वे माध्यम है जिनसे कि गांवों के बहुत-से कामकाज पुनर्गठित किए जा सकते है और उनके लिए धन दिया जा सकता है। इसलिए यह जरूरी है कि भूमि सुधार कार्यक्रम तैयार करते समय इस बात की सावधानी बरती जाए कि उसके उद्देश्य भी पूरे हो जाए और सहकारिता ऋण संस्थाओं को किसी प्रकार की क्षति न पहुचने पाए जिससे उनकी वित्तीय स्थिति कमजोर होती हो।

२८. सहकारिता ऋण पर भूमि सुधार का प्रभाव दो दृष्टियों से देखा जा सकता है—एक तो पुराने कर्जो की और दूसरे भावी कर्जो की दृष्टि से। जहा तक पुराने कर्जों का सवाल है जो भूमि रेहन रखकर दिए गए है, सहकारी वित्त सस्थाओ को अदा किए जाने वाला धन उस मुआवजे के पहले आना चाहिए जो भूमि के व्यक्तिगत स्वामियो को दिया जाने वाला हो। उधार चुकता करने का जिम्मा उन व्यक्तियों पर पड़ना चाहिए जिन्हे भूमि के अधिकार हस्तान्तरित कर दिए गए है। इन दो साधनो से सहकारी वित्त सस्थाओ को धन प्राप्त होने के बाद भी सम्भव है कि सहकारी सस्थाएं घाटे मे रहें। उदाहरण के लिए जमीन का मूल्य घट जाने से उन्हे घाटा हो सकता है। ऐसी दशा मे सहकारी सस्थाओं को वित्तीय दृष्टि से पुष्ट बनाए रखने के लिए राज्य सरकारों को आवश्यक सहायता देनी चाहिए। इन बातों का महत्व भूमि रेहन बैकों के सिलसिले मे और भी बढ़ जाता है, क्योकि वे लोगो को पुराने कर्ज चुकाने के लिए पैसा दे चुके है।

२९. भावी कार्यो के सम्बन्ध में तीन पहलुओं का उल्लेख किया जा सकता है। पहले तो यह मान लिया जाना चाहिए कि कृषि उत्पादन के कार्यक्रमों से सम्बद्ध असाधारण कारणों को छोड़कर सहकारी संस्थाए और किसी कारण से नही केवल व्यक्तिगत खेती के क्षेत्र को देखकर कर्ज देगी। दूसरे, मध्यकालीन और दीर्घकालीन ऋण उन पट्टेदारों को देने के लिए जो भूमि सुधार के परिणामस्वरूप राज्य से सीधे सम्पर्क में आ गए है सहकारी वित्त सस्थाओं के नाम जमीन हस्तान्तरित करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। तीसरे, उस भूमि के सम्बन्ध मे जो सहकारी वित्त संस्थाओं के अधिकार में उनके कार्य के दौरान आ गई हो, खेती की जमीन की अधिकतम सीमा का नियन्त्रण या पट्टेदारों के द्वारा या बटाई पर खेती कराने के नियन्त्रण लागू न किए जाए। सहकारी सस्थाओ को वह जमीन बाजार भाव पर जिसे चाहे उसके हाथ बेच देने का अधिकार होना चाहिए; शर्त केवल यह होनी चाहिए कि खरीदने वाला जमीन पर स्वय खेती करेगा और खरीद या हस्तान्तरण के परिणाम-स्वरूप उसकी जमीन कानून द्वारा निश्चित सीमा से अधिक नही बढेगी।

अध्याय ११

सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार

ग्रामवासियों के हित पर सबसे अधिक प्रभाव डालने वाले विकास क्षेत्रों मे सामुदायिक योजना कार्यो और राष्ट्रीय विस्तार सेवा का महत्व मुख्य है। आरम्भ से ही इस कार्यक्रम के तीन पहलुओं पर जोर डाला गया है। पहले तो राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों को ऐसे प्रगाढ प्रयत्न के क्षेत्र माना जाता है जिनमें सरकार के विकास अभिकरण मिलकर एक दल की भाति, पहले से नियोजित और समन्वित कार्यक्रमों का सम्पादन करते हैं। सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रमों के अन्तर्गत कार्यो को ग्रामजीवन के सब पक्षों में सुधार करने के एक महान कार्यक्रम का ही अग समझना चाहिए। दूसरी बात यह है कि इस समस्त कार्य में यह जरूरी है कि ग्रामवासियों को जो कि सामाजिक परिवर्तन करने के लिए एक साथ जुटे हैं अपने लिए एक नए जीवन का निर्माण करने में सहायता दी जाए और वे अपने कल्याण के लिए आवश्यक योजना कार्यो की परिकल्पना और उनको पूरा करने मे अधिकाधिक जागरूकता और उत्तरदायित्व के साथ भाग ले। इस कार्यक्रम से उन्हे नए अवसर प्राप्त होगे और बदले मे उन्हे कार्यक्रम को पूरा करने मे सक्रिय होकर उसे एक विशिष्ट रूप देते हुए उसके क्षेत्र और प्रभाव को विस्तृत करना होगा। अपनी सहायता आप करना और मिलकर करना ही वे सिद्धान्त है जिन पर यह आन्दोलन निर्भर है। तीसरी बात यह है कि इस आन्दोलन के क्षेत्र मे सभी ग्राम परिवारों को आ जाना चाहिए, विशेषतः उनको जो कि वचित हैं—एवं इन परिवारो को सहकारिता आन्दोलन तथा अन्य कार्यो मे यथायोग्य स्थान प्राप्त करने का अवसर मिलना चाहिए। इन्हीं बातों को देखते हुए कहा जाता है कि राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य लोक हितकारी राज्य के संचालन का सहज उदाहरण है।

२. पहली पंचवर्षीय योजना में सामुदायिक विकास को उस पद्धति का रूप और ग्राम विस्तार को उसका अभिकरण माना गया था जो कि गावों के सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के लिए लागू की जाने वाली थी। एक बार सिलसिला शुरू हो जाने पर और पहले चरण पूरे हो जाने पर सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार जैसा कार्यक्रम स्वभावत. अपने ही अनुभव और गति से चालित होने लगता है। जैसे-जैसे वह विस्तृत होता है वह अपनी आवश्यकताएं पूरी तो करता ही है, नई आवश्यकताएं भी अनुभव करता है। नए तरीके निकाले जाते हैं, अरसे से चली आती कमजोरियां पहचानी जाती हैं और वह कार्यक्रम अपने तत्व और शैली की शक्ति से समाज की महत्वपूर्ण समस्याएं हल करने मे सफल भी होता है। धीरे-धीरे गांवों की समस्याएं एक विशालतर सन्दर्भ मे देखी जाने लगती हैं और विभिन्न क्षेत्रों के कार्य एक-दूसरे के पूरक बन जाते है। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य के सहारे ही राष्ट्रीय योजना ग्रामीण जनता की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं की पूर्ति करने में तत्पर होती है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि इन कार्यो मे दूसरी योजना के

अन्तर्गत उन परिवर्तनों की अधिकाधिक अभिव्यक्ति होती जाए जो समग्र योजना की परिकल्पना करते समय हमारी दृष्टि में होते रहे है, जैसे पहले की अपेक्षा अन्य बातों पर अधिक जोर देना, या किन्ही अन्य कार्यो को अधिक महत्वपूर्ण मानना इत्यादि । इसलिए एक चौथाई ग्रामीण जनता के स्थान पर अब लगभग समस्त ग्रामीण जनता के लिए कार्यक्रमों की व्यवस्था करना उस परिवर्तन का केवल एक पहलू है जो कि इनको अधिक प्रगाढ़ और व्यापक बनाने के लिए किया जाना है । कृषि अर्थ-व्यवस्था को अनेक दिशाओ में प्रतिफलित करने के लिए और कृषि उत्पादन बढाने मे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों का योग बहुत विशाल होना चाहिए । उन्हे दक्ष कारीगरों की संख्या बढाकर स्थानिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नई-नई विधियां आविष्कार करने की प्रवृत्ति मे बहुत वृद्धि करनी चाहिए, क्योकि बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण करने के लिए यह जरूरी है । अविकसित देशों मे सामाजिक परिवर्तन के बिना कोई ठोस आर्थिक विकास नही हो सकता । सामुदायिक विकास कार्यक्रम को भूमि सुधार करके, भूमिहीन और वंचित जनों की आवश्यकताएं समझ करके, ग्राम सगठन पुष्ट करके, स्थानिक नेतृत्व का विकास करके और सहकारिता आन्दोलन को आगे बढाकर देश में एक सपृक्त ग्राम समाज तथा एक विकासशील ग्राम अर्थ-व्यवस्था को जन्म देने मे निश्चित रूप से समर्थ हो जाना चाहिए ।

३. सारे देश पर छाए हुए ऐसे प्रभावशाली कार्यक्रम के लिए यह जरूरी है कि उसकी प्रत्येक मजिल पर उसके काम का ध्यान से और निरपेक्ष भाव से अध्ययन किया जाए । राष्ट्रीय विकास और सामुदायिक योजनाए सर्वप्रथम स्थानिक आवश्यकताओ, समस्याओं और साधनों के सम्बन्ध मे, राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं की नीति, उद्देश्य और कार्यक्रमों को सम्पन्न करने के साधन हैं । एक ओर तो प्रत्येक योजना क्षेत्र के कार्यक्रम उस जिला योजना के अंग होते है जिसका वर्णन अध्याय ७ में किया जा चुका है, दूसरी ओर राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों में प्रगाढ़ कार्य करने की भी आवश्यकता होती है—खास तौर से खेती और उससे सम्बद्ध सहकारिता, भूमि सुधार, ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग, ग्रामो मे बिजली लगाना, आरोग्य, शिक्षा, आवास एवं पिछड़े वर्गो के कार्यक्रमों के सम्बन्ध में । इस प्रकार राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के सम्पादन से ही यह स्पष्ट हो सकता है कि विकास खण्ड के बजट मे निर्धारित विशिष्ट कार्य किस हद तक पूरे किए जा रहे है । इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह बात है कि उन कार्यो का प्रभाव ग्राम स्तर पर, राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं की कार्य पद्धति और उनसे प्राप्य परिणामो पर बहुत ही ज्यादा पड़ता है । सामुदायिक योजना कार्य और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों के कार्य के सम्बन्ध में प्रकाशित योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्याकन संगठन की तीसरी मूल्याकन रिपोर्ट के वक्तव्यों को इन कार्यक्रमों से सम्बद्ध प्रत्येक व्यक्ति को इसी सदर्भ मे गम्भीरता से समझना चाहिए ।

४. राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्य में कार्य-सम्पादन की इकाई विकास खण्ड है जो कि औसतन १५० से १७० वर्ग मील में बसे हुए १०० गावों में रहने वाले ६० हजार से ७० हजार जनों का प्रतिनिधित्व करता है । अक्तूबर १९५२ से, अर्थात आरम्भ से लेकर अब तक, कुल १,२०० विकास खण्ड खोले जा चुके है जिनमें से ३०० सामुदायिक योजना कार्य और ९०० राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अधीन है । इन ९०० में से ४०० विकास खण्ड कालान्तर मे वैसा ही अधिक प्रगाढ़ विकास करने लगे हैं जैसा कि सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में होता है । इस समय प्रचलित पद्धति के अनुसार प्रत्येक नया

विकास खण्ड सर्वप्रथम राष्ट्रीय विस्तार सेवा के अधीन रखा जाता है जिसके लिए पहली पंचवर्षीय योजना में ४,५०,००० रुपए का कार्यक्रम बजट रखा गया था। यह रुपया उस रुपए के अतिरिक्त था जिसकी राष्ट्रीय विस्तार सेवा में अल्पकालीन ऋण देने के सम्बन्ध मे विशेष व्यवस्था की गई थी। यह ऋण इसलिए देने का प्रबन्ध किया गया था कि विस्तार सेवा कर्मचारियो के प्रयत्नो द्वारा इस धन का नियोजित उपयोग होकर विस्तार क्षेत्रों मे कृषि उत्पादन बढ़े। राष्ट्रीय विस्तार कार्यो में से कुछ को एक-दो साल की अवधि के बाद तीन साल का समय विकास के लिए और मिलेगा और उस अवधि में पन्द्रह लाख रुपए के विकास खण्ड बजट की सहायता से बाकी सामुदायिक कार्यक्रम पूरे किए जाएगे। इस प्रकार राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम एक सम्पूर्ण कार्यक्रम के दो अग बन गए है और विकास प्रशासन की सामान्य पद्धति ने राष्ट्रीय विस्तार सेवा का रूप ले लिया है। प्रत्येक वर्ष आरम्भ होने वाले राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास खण्ड अलग-अलग माने जाते है और प्रत्येक वर्ष उनकी प्रगति और सख्या का अलग-अलग हिसाब रखा जाता है। पहली योजना मे जो १,२०० खण्ड खोले गए थे उनका वितरण, उनकी जनसंख्या और ग्राम संख्या का विवरण नीचे दिया जाता है।

पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में आरम्भ किए गये विकासखण्ड

	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६	कुल
विकास खण्ड					
सामुदायिक विकास	२४७	५३	—	—	३००
राष्ट्रीय विस्तार	—	२५१	२५३	३९६	९००
कुल	२४७	३०४	२५३	३९६	१२,००
ग्रामसंख्या					
सामुदायिक विकास	२५,२६	४७,६९३	—	—	३२,९५७
राष्ट्रीय विकास	—	२५,१००	२५,३००	३९,६००	९०,०००
कुल	२५,२६४	३२,७९३	२५,३००	३९,६००	१,२२,९५७
जनसंख्या (करोड़)					
सामुदायिक विकास	१·६४	·४	—	—	२·०४
राष्ट्रीय विकास	—	१·६६	१·६७	२·६१	५·९४
कुल	१·६४	२·०६	१·६७	२·६१	७·९८

इस प्रकार पहली पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत लगभग १,२३,००० ग्रामों के रहने वाले लगभग आठ करोड़ जनों के लिए सम्बद्ध विकास कार्यक्रम जारी हो चुके होंगे। जिन गावों में अभी राष्ट्रीय विस्तार सेवा या सामुदायिक विकास कार्यक्रम नही लागू हुए है, उनमें स्थानिक विकास तथा कृषि सम्बन्धी अनेक कार्यक्रम सम्पादित किए गए है।

५. जैसा कि पहले कहा जा चुका है, राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यो में जो कुछ काम किया जाता है वह अलग-अलग विकास क्षेत्रों के अलग-अलग सम्पूर्ण कार्य-

क्रमों का एक अभिन्न हिस्सा होता है। यह जरूरी है कि प्रत्येक राज्य में इस बात पर और ज्यादा जोर दिया जाए कि ग्रामीण कार्यक्रमो की समीक्षा तथा उनके परिणामो का मूल्यांकन करने के तरीके ठीक होने चाहिए। प्राप्य जानकारी से मालूम होता है कि छोटी-मोटी सिंचाई, रासायनिक उर्वरक और सुधरे हुए बीज के वितरण के कार्यक्रम राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास क्षेत्रों मे अधिकाश अन्य क्षेत्रों से कही अधिक लागू किए गए है। जनता ने अनेक प्रकार के कार्यो में योग दिया है और इससे उसे अपनी योग्यता तथा कुछ सहायता पाकर स्थानिक समस्याओं को हल करने में अपनी योग्यता में पहले से अधिक विश्वास हो गया है। इस तरह योजना क्षेत्रों मे १४,००० नए स्कूलो की स्थापना, ५,१५४ प्राथमिक स्कूलो का बुनियादी स्कूलों मे परिवर्तन, ३५,००० प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रो की स्थापना जो ७,७३,००० प्रौढ़ों को साक्षर बना चुके है, ४,०६९ मील पक्की और २८,००० मील कच्ची सड़कों का निर्माण और ८०,००० ग्राम शौचालयों का निर्माण उस स्थानिक विकास का उदाहरण है जिसका प्रभाव समाज पर गहरा पड़ेगा। इन सबमे अधिकाश प्रयत्न जनता ने किया है और सरकारी अभिकरण जिनमें विस्तार कार्यकर्ता मुख्य रहे है निदेशन का काम करते रहे है। यदि सहयोग और ग्रामोद्योग के क्षेत्र मे सफलता बहुत कम मिली है तो इसकी कुछ वजह यह भी है कि इन क्षेत्रों मे सारे देश को देखा जाए तो कहना पडेगा कि सहकारिता और नए कामों के अवसर अभी भी समुचित रूप से संगठित किए जाने हैं।

६. तीसरी मूल्याकन रिपोर्ट ने कार्यक्रमो के व्यावहारिक सम्पादन की कुछ बातो पर ध्यान दिलाया है और इन पर राज्य सरकारे और जिला अधिकारी निश्चय ही गौर से विचार करेगे। इनमें से अधिक महत्वपूर्ण ये है :

(१) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम आशा के अनुरूप सफल हो सके, इसके लिए सब स्तरों पर और सब शाखाओं मे विभिन्न प्रौद्योगिक विभागो को पुष्ट करना बहुत आवश्यक है। अनेक जगह जिला और क्षेत्र स्तर पर विभागीय संगठनो की सख्या और कार्यकुशलता की दृष्टि से सुधार की बहुत अपेक्षा है।

(२) शोध की सुविधाए आम तौर से बढ़ानी चाहिएं और साथ-साथ क्षेत्र के निकट स्थित शोध केन्द्रों को और मजबूत करना चाहिए। क्षेत्र से शोध केन्द्र को सूचना और जानकारी का संचार और सुगम होना चाहिए।

(३) खण्ड स्तर पर विविध विषयों से सम्बद्ध विशेषज्ञों का नियन्त्रण खण्ड विकास अधिकारी (जिनका प्रशासनिक नियन्त्रण कभी-कभी सीमा के बाहर भी जा सकता है) और जिला स्तर पर नियुक्त प्रौद्योगिक अधिकारियों दोनों के द्वारा होता है और वह तरीका अभी तक संतोषजनक रूप से चल नही पाया है। कई बार ऐसा हुआ है कि विभागीय अधिकारियों ने राष्ट्रीय विस्तार या सामुदायिक योजना कार्य को अपना ही अभिकरण मानकर चलने के बजाय उन क्षेत्रों से भिन्न क्षेत्रों में अपना ध्यान केन्द्रित किया है जिनमें उन्हें अपने विशेषज्ञ कर्मचारियों पर अपेक्षाकृत अधिक प्रत्यक्ष नियन्त्रण था। स्पष्ट ही इस बात की बहुत ज्यादा जरूरत है कि राज्य, जिला और खण्ड स्तर पर प्रशासनिक और प्रौद्योगिक समन्वय सही ढंग से हो क्योंकि अगले कुछ वर्षों में राष्ट्रीय विस्तार सेवा समस्त ग्रामीण जनता तक पहुंचने वाली है।

(४) निर्माण कार्यो मे ग्राम स्तर कार्यकर्ताओं (ग्राम सेवकों) का, जिन्हें मूलतः कृषि और कृषि विस्तार की शिक्षा दी गई है और जिनका सर्वप्रमुख कर्तव्य कृषि उत्पादन बढ़ाना है, अधिकाधिक समय लगने लगा है।

(५) ग्राम पंचायतो को निरन्तर निदेशन और सक्रिय सहायता मिलती रहनी चाहिए ताकि वे अपने बढ़ते हुए दायित्वों को पूरा कर सकें।

(६) कार्यक्रमो के सम्पादन में भौतिक और वित्तीय सफलता पर बहुत ज्यादा जोर दिया जाता रहा है, अर्थात लक्ष्य सिद्ध कर लेना, खर्च कर देना, मकान खड़े कर देना इत्यादि अधिक महत्वपूर्ण रहा है और जनता को जीवन की नई पद्धति सिखाने और राष्ट्रीय विस्तार सेवा को राष्ट्रीय और राज्य योजनाओं मे निहित विकास और सुधार का सार्थक साधन बनाने की ओर कम ध्यान दिया गया है।

७. ग्रामीण योजनाओं की परिकल्पना और सम्पादन में जनता का सहयोग इस आन्दोलन का एक मौलिक तत्व है और इस दिशा मे जो कुछ सफलता मिली है वह उत्साहवर्द्धक है। जब-जब प्रशासन की ओर से रवैया सही रखा गया है तो जनता अपना काम पूरा करने के लिए खुशी-खुशी आगे आई है। जनता ने राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य क्षेत्रो मे जो कुछ योग दिया है उसका मूल्य सरकार द्वारा किए गए व्यय का लगभग ५६ प्रतिशत के बराबर है। जनता का सहयोग प्राप्त करने मे पंचायत और सहकारी सस्थाओं जैसे स्थानिक सगठनो का इस्तेमाल किया गया है, पर यह माना जाता है कि इस दिशा मे और भी कुछ करना है। कुछ क्षेत्रो मे विकास कार्य तदर्थ गैर-निर्वाचित सस्थाओं, जैसे ग्राम विकास मंडलो आदि को सौप दिए गए है। ऐसी संस्थाओ ने कुल मिलाकर काफी व्यावहारिक काम किया है। फिर भी जैसा कि दूसरी और तीसरी सामुदायिक कार्य मूल्याकन रिपोर्ट मे कहा गया है, ग्रामों मे मजबूत मूल संस्थान स्थापित करने, उनके साधन सुदृढ़ बनाने और उन्हें निरन्तर निदेश, अवसर और अनुभव का लाभ देते रहने पर और अधिक जोर देना होगा।

८. पहली योजना की अवधि मे सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रमों को पूरा करते समय समुचित प्रशासनिक व्यवस्था करना, सही प्रथाओ की स्थापना करना, कर्मचारियों को प्रशिक्षित करना और सरकारी और गैर-सरकारी अभिकरणों के बीच दिन-प्रति-दिन का सहयोग उपलब्ध करना एक बड़ा भारी और जरूरी काम रहा है। इन दिशाओ में जो प्रगति की जा सकी है, उसी के आधार पर दूसरी पचवर्षीय योजना में पहले से अधिक प्रयत्न करना सोचा गया है। उस प्रगति से यह भी मालूम हुआ है कि किन दिशाओ मे और अधिक ध्यान देने तथा पहले से अच्छा प्रबन्ध करने की जरूरत है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि यद्यपि कुछ बातो को दूर करना बाकी है (जिनका उल्लेख जिला विकास प्रशासन के अध्याय में किया गया है), तथापि जिलो में प्रशासन के अन्दर समन्वय की जो पद्धति प्रकट हुई है वह काफी अच्छी साबित हुई है। जिला प्रशासन दिन-दिन एक लोकहितकारी प्रशासन के अनुरूप कर्तव्य पालन करता जा रहा है। पहली योजना के अन्त में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यो मे संलग्न कर्मचारियो की सख्या ८०,००० से अधिक थी।

९. कई प्रकार के कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने के कार्यक्रम बड़े पैमाने पर संगठित किए गए है। ग्राम स्तर कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए १९५२ में ३४ विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र संगठित

किए गए और इस समय ऐसे ४३ केन्द्र काम कर रहे हैं जिनमें प्रति वर्ष लगभग ५,००० कार्यकर्ता तैयार किए जाते हैं। बहुत बड़ी संख्या में ऐसी संस्थाएं भी हैं जिनमें उन्हें कृषि की बुनियादी शिक्षा दी जाती है—इनमे ३० नए कृषि बुनयादी स्कूल, वर्तमान प्रशिक्षण केन्द्रो से सम्बद्ध १८ कृषि विभाग और अनेक मान्यता-प्राप्त संस्थाएं है। ग्राम स्तर कार्यकर्त्रियो (ग्राम सेविकाओ) के प्रशिक्षण के लिए विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रों में २५ गृह अर्थशास्त्र विभाग और दो सहायक गृह अर्थशास्त्र कक्षाएं खोली गई है। नर्सो और दाइयों की जो कमी है उसे पूरा करने के लिए सहायक नर्सो-दाइयों के प्रशिक्षण के वास्ते १८ संस्थाओं को सहायता दी जा रही है और आरोग्य निरीक्षिकाओं के प्रशिक्षण के लिए ६ तथा दाइयों के प्रशिक्षण के लिए १२ स्कूल स्वीकृत किए गए हैं। सहकारिता अधिकारियो के शिक्षण का प्रबन्ध सहकारिता प्रशिक्षण की केन्द्रीय समिति के आयोजन में किया गया है तथा ग्राम और छोटे उद्योगों के कर्मचारियों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध खादी और ग्रामोद्योग मंडल एवं छोटे उद्योग मंडल के सहयोग से किया गया है। खण्ड विकास अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए तीन और समाज शिक्षा संगठनकर्ताओ के लिए नौ केन्द्र खोले गए है। वर्तमान केन्द्रों में समाज शिक्षा संगठनकर्ताओं के प्रशिक्षण की जो सुविधाए प्राप्त है उन्हे भी बढ़ाया गया है। एक केन्द्र मे आदिम जाति क्षेत्रो के योग्य समाज शिक्षा सगठनकर्ताओ को तैयार किया जा रहा है।

१०. राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लिए जिस पैमाने पर प्रशिक्षण की सुविधाए संगठित करना जरूरी था, वह काफी बडा काम था। उसके सफल होने पर भी सम्पूर्ण कार्यक्रम की सफलता निर्भर थी। इस कार्यक्रम को विस्तार देते हुए इस सिद्धान्त से चालित हुआ जाता है कि कर्मचारियो को कार्यक्रम के लिए पहले से ही प्रशिक्षित करके रखा जाए और विस्तार की गति प्रशिक्षित कर्मचारियों की संख्या पर निर्भर रहे। संस्थाओ मे प्रशिक्षण देने के अतिरिक्त अनुभवों का आदान-प्रदान, अपने विचार स्वच्छन्द भाव से व्यक्त करने का अवसर और विभिन्न स्तरों पर तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्यक्रम में संलग्न व्यक्तियो का सहयोग राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के गतिशील सम्पादन के लिए आवश्यक दृष्टि-कोण बनने मे सहायक होता है। इस सिलसिले मे अन्तर्राज्य विचार-गोष्ठियों ने, और काम करते हुए सीखने तथा अध्ययन के लिए भ्रमण करने के प्रबन्धो ने काफी सहायता दी है एवं उनके द्वारा अन्दर से आलोचना और सुधार का उपयोगी प्रयत्न हुआ है। इतने बड़े कार्यक्रम को सम्पादित करने में यह जरूरी है कि उसमें काम करने वाला हर आदमी नए अनुभव ग्रहण करे और उन्हें आत्मसात करके पुरानी प्रथाओ की फिर से जाच करने तथा अपने मूल उद्देश्यों की प्राप्ति के नए तरीके ढूढने के लिए सर्वथा मुक्त रहे। कार्यक्रम का कोई भी हिस्सा ऐसा नही होना चाहिए जो ढर्रा मात्र बनकर रह जाए और प्रत्येक बड़े कार्य मे जो खतरा होता है कि उसमें जड़ता आने लगती है, नई परिस्थितियों के अनुसार ग्रहणशीलता नही रह जाती या व्यापकतर उद्देश्यों और प्राथमिकताओं की ओर समुचित ध्यान नही दिया जाता उससे बचा जाए।

दूसरी योजना के लिए कार्यक्रम

११. सितम्बर १९५५ में राष्ट्रीय विकास परिषद ने यह तय किया था कि दूसरी पंच-वर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार सेवा सारे देश में लागू हो जानी चाहिए और उसके कम से कम ४० प्रतिशत खण्ड सामुदायिक विकास खण्डों मे बदल दिए जाने चाहिएं। यदि यथेष्ट साधन प्राप्त हुए तो ५० प्रतिशत तक खण्डों को बदलने का विचार किया जाएगा। दूसरी योजना के समय में राष्ट्रीय विस्तार योजना के अन्तर्गत ३,८०० अतिरिक्त विकास

खण्ड लाए जाएंगे और आशा है कि इनमें से १,१२० सामुदायिक विकास खण्ड बना दिए जाएंगे। इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए दूसरी योजना मे २०० करोड़ रुपया रखा गया है।

१२ सामुदायिक योजना कार्य प्रशासन के प्रस्तावित कार्यक्रम मे यह व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डो को सामुदायिक विकास खण्डो में बदलने की योजना दूसरी पचवर्षीय योजना के प्रत्येक वर्ष मे निम्नलिखित क्रम से पूरी की जाए :

विकास खण्डों की संख्या

वर्ष	राष्ट्रीय विस्तार सेवा	सामुदायिक विकास खण्डों में परिवर्तन
१९५६-५७	५००	—
१९५७-५८	६५०	२००
१९५८-५९	७५०	२६०
१९५९-६०	९००	३००
१९६०-६१	१,०००	३६०
	३,८००	१,१२०

अनुमान है कि सामान्य निदेशन के लिए राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड मे ४ लाख रुपया और सामुदायिक विकास खण्ड मे १२ लाख रुपया खर्च होगा। राज्यो के लिए स्वीकृत २०० करोड़ रुपए का वितरण नए कार्यक्रम के अन्तर्गत अभी स्थिर नही किया गया है। राज्य योजनाओं मे उसके वर्तमान वितरण का जो उल्लेख है, वह पूरी तौर से अस्थायी है। अनुमान है कि इस राशि मे से लगभग १२ करोड रुपया सामुदायिक योजना प्रशासन द्वारा सम्पादित या प्रत्यक्षतः अनुप्राणित योजनाओं के लिए केन्द्र में खर्च होगा और लगभग १८८ करोड़ रुपया राज्य योजनाओ में जाएगा। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के लिए निश्चित कुल रकम का विभिन्न विकास मदों मे प्रस्तावित वितरण इस प्रकार है :

	(करोड रुपयों मे)
(१) कर्मचारी और साज-सामान (खण्ड मुख्यालय)	५२
(२) कृषि (पशुपालन, कृषि विस्तार, सिचाई और भूमि खेती योग्य बनाना)	५५
(३) संचार	१८
(४) ग्राम्य कलाएं और शिल्प	५
(५) शिक्षा	१२
(६) समाज शिक्षा	१०
(७) स्वास्थ्य और गांव की सफाई	२०
(८) आवास (योजना कर्मचारियों और ग्रामवासियों के लिए)	१६
(९) सामुदायिक विकास—विविध (केन्द्र)	१२
कुल	२००

दूसरी पंचवर्षीय योजना मे विभिन्न मदों के लिए राशि का वितरण करते समय उपर्युक्त व्यवस्था को ध्यान मे रखना होगा ।

१३ दूसरी पचवर्षीय योजना के कार्यक्रम पर अमल करते समय प्रत्येक ग्राम परिवार को अच्छी तरह समझा दिया जाना चाहिए कि वह स्वय योजना में योग दे रहा है और उसके रहन-सहन का स्तर ऊपर उठाने के लिए एक निश्चित कार्यक्रम का पालन किया जा रहा है । आशा है कि राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम तथा अन्य पूरक कार्यक्रमो द्वारा अगले कुछ वर्षो मे कृषि उत्पादन के अतिरिक्त निम्नलिखित क्षेत्रो मे भी उल्लेखनीय उन्नति होगी :

(१) सहकारिता कार्यो का विकास जिनमें सहकारी खेती भी शामिल है,
(२) ग्राम विकास के लिए उत्तरदायी सस्थाओ के रूप में ग्राम पचायतो का विकास,
(३) चकबन्दी,
(४) ग्रामोद्योगों और छोटे उद्योगो का विकास;
(५) ग्राम समाज के कमजोर वर्गो, विशेषत. छोटे किसानों, खेतिहरो और कारीगरो की सहायता करने के लिए कार्यक्रमो का संगठन;
(६) स्त्रियो और युवक-युवतियों मे और अधिक प्रगाढ कार्य, और
(७) आदिम जाति क्षेत्रो में प्रगाढ़ कार्य ।

१४. ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग, सहकारिता, कृषि उत्पादन, भूमि सुधार, समाज सेवा आदि विविध क्षेत्रों में कार्यक्रम लागू करने के लिए वे क्षेत्र विशेषत: उपयुक्त अवसर प्रदान करेंगे जो राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यो के अधीन प्रगाढ कार्य के लिए चुने गए है। जब ये कार्यक्रम समन्वित रूप मे पूरे किए जाएंगे और स्थानिक संस्थाओं तथा स्थानिक समर्थन का संगठन हो जाएगा, तो एक कार्यक्रम की सफलता से दूसरे कार्यक्रम को सफलता मिलेगी और सम्पूर्ण क्षेत्र की अर्थ-व्यवस्था पहले से शक्तिशाली हो जाएगी। दूसरी योजना मे कृषि उत्पादन विस्तार कार्यकर्त्ताओ का सर्वप्रथम और सर्वोपरि कार्य होना चाहिए। उसके बाद गावों के लिए सबसे जरूरी काम है बेरोजगारी, अर्थात काम के अवसरों की कमी को दूर करना। सन्तुलित ग्राम अर्थ-व्यवस्था में खेती न करने वाले लोगो के लिए भी उतने ही अवसर बढते रहने चाहिएं जितने खेती करने वालों के लिए। ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग कार्यक्रमों से प्राप्त अनुभव से कहा जा सकता है कि ऐसी एक विस्तार सेवा की बहुत बड़ी जरूरत है जिसका कारीगरों से सम्पर्क रहे और जो उन्हें आवश्यक निदेश और सहायता दे और उनके सहकारी सगठन स्थापित करते हुए उन्हे अपनी उत्पादित वस्तुएं ग्राम क्षेत्र के अन्दर तथा बाहर निकालने में सहायता दे। इस दिशा में २६ मार्गदर्शक योजना कार्यो का आरम्भ करके शुरुआत की गई है। यह आवश्यक है कि यथाशीघ्र प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यक्षेत्र में ग्रामोद्योग कार्यक्रम सम्पादित करने के लिए एक प्रशिक्षित विशेषज्ञ हो जाए ।

१५. सामुदायिक योजना और राष्ट्रीय विस्तार कार्यो में सहकारिता कार्यक्रम पर अमल सर्वत्र एक-सा नहीं हो सका है और बहुधा या तो समुचित कर्मचारी उपलब्ध नही रहे

है या वर्तमान सहकारिता सगठनों का पुनर्गठन न हो सकने के कारण वे योजना के कार्य मे सहयोग नही दे सके है। दूसरी पचवर्षीय योजना मे जिन बातों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए उनमें चकबन्दी के महत्व पर पहले भी जोर डाला जा चुका है।

१६. प्रत्येक सामुदायिक विकास खण्ड के बजट मे दो ग्राम सेविकाओ की व्यवस्था है। ग्राम सेविकाओ का प्रशिक्षण पाने के लिए स्त्रियां बराबर अधिक से अधिक सख्या में आगे आने लगी है। परन्तु यह स्पष्ट है कि शीघ्र ही इनसे भी अधिक संख्या मे उनकी आवश्यकता पडेगी। समाज कल्याण विस्तार कार्यो तथा सामुदायिक योजना क्षेत्रो मे प्राप्त अनुभव को हमे इस उद्देश्य से और अधिक जाचना चाहिए कि गावों मे स्त्रियों और बच्चों के मध्य कार्य करने के लिए कौन-सी पद्धतिया उपयुक्त होंगी। प्रत्येक जिले मे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना तथा सामाजिक कल्याण विस्तार कार्यो में घनिष्ठ सम्पर्क होना चाहिए। गांवों के नौजवानों में अभी भी बहुत ही थोंडा काम हुआ है। पर ग्राम क्षेत्रो में नेतृत्व का विकास करने के लिए उसका महत्व जितना बताया जाए उतना कम है।

१७. आदिम जाति क्षेत्रो की विशेष समस्याओं पर अध्याय २८ मे विचार किया गया है। राष्ट्रीय विस्तार सेवा का उद्देश्य इन क्षेत्रों के विकास में अधिकतम सहायता देना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति में उन नए प्रशासनिक प्रबन्धों से सहायता मिलेगी जो गृह मंत्रालय और सामुदायिक योजना प्रशासन ने हाल मे मिलकर किए है। आदिम जाति क्षेत्रो की जन-सख्या छितरी हुई है, इसे देखते हुए यह प्रस्ताव किया जाता है कि राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड ६६,००० नही बल्कि लगभग २५,००० की औसत आबादी के आधार पर सीमांकित किए जाए। जहा जनसख्या अशत. आदिम जाति और अशत अन्य हो, वहां योजना कार्य के अधीन इससे भी अधिक जनसख्या रखी जा सकती है। नए विकास खण्डो को शुरू करने मे आदिम जाति क्षेत्रो को प्राथमिकता देने का विचार है ताकि वे यथाशीघ्र राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम के आधीन आ जाए। कार्यक्रम का बजट स्थानिक आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन करने की सुविधा देता है। जिन क्षेत्रो मे आदिम जाति और अन्य दोनों ही प्रकार के लोग है, वहां के लिए यह सोचा गया है कि विस्तार टोली में एक ऐसा अधिकारी रहा करे जिसे आदिम जाति जनों का अच्छा परिचय प्राप्त हो। जहां तक सम्भव हो, अनुसूचित जातियो के कल्याण के विशेष कार्यक्रमो के लिए चुने हुए क्षेत्र और अनुसूचित क्षेत्र राष्ट्रीय विस्तार खण्डों के बराबर माने जाए। इस कार्यक्रम के अधीन लोक हितकारी योजनाए शुरू मे राष्ट्रीय विस्तार योजना के अधीन विकास खण्डों मे लागू की जाएगी ताकि उपलब्ध प्रशिक्षित कर्मचारियो का अधिकतम उपयोग हो सके।

१८. दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यो के लिए वर्तमान कर्मचारियों के अतिरिक्त लगभग २,००,००० कार्यकर्ताओ की जरूरत पड़ेगी। प्रशिक्षण के लिए आवश्यक प्रबन्ध किया जा चुका है। १८ विस्तार प्रशिक्षण केन्द्र, २५ बुनियादी कृषि स्कूल और १६ बुनियादी कृषि प्रशिक्षण देने वाले विभाग खोलने का निश्चय किया गया है। इस प्रकार दूसरी योजना के अन्तर्गत विस्तार और कृषि के प्रशिक्षण के लिए कुल मिलाकर ६१ प्रशिक्षण विस्तार केन्द्र और ६५ कृषि स्कूल या वर्तमान केन्द्रों से सम्बद्ध कृषि विभाग हो जाएंगे।

१९. जैसे-जैसे कार्यक्रम आकार और रूप में बढ़ता जाएगा तथा जैसे-जैसे उससे अन्य क्षेत्र प्रभावित होते जाएंगे, वैसे-वैसे उसे संपादित करने का अधिकाश श्रेय स्थानिक जनता

को मिलता जाना चाहिए। गांवों की सड़कें, पीने का पानी, सफाई और शिक्षा आदि मामूली-मामूली जरूरतों में से कुछ काफी शुरू में ही पूरी हो जाएंगी। उत्पादन और रोजगार बढ़ाने तथा ग्रामीण आर्थिक जीवन में वैविध्य लाने की समस्याए, अपेक्षाकृत अधिक जटिल है और इनको निपटाने के लिए काफी लम्बे समय तक निरन्तर प्रशासनिक प्रयत्न आवश्यक होगा। इस बात पर जोर देना जरूरी है कि लोगों की पार्थिव परिस्थितियां सुधार लेने पर भी गांवों का सामाजिक और आर्थिक जीवन बदलना यथार्थ में एक मानव समस्या रह जाता है। संक्षेप मे यह समस्या गावों मे रहने वाले सात करोड़ परिवारो के दृष्टिकोण मे परिवर्तन लाने की, उनमें नए ज्ञान की लालसा उत्पन्न करने, नए जीवन के लिए उत्साह भरने और आकाक्षा जगाने तथा पहले से अधिक सुखद जीवन के लिए परिश्रम करने का उत्साह भरने की समस्या है। विस्तार सेवाओ और सामुदायिक संगठनों को लोकतन्त्रीय आयोजन का प्राण कहना चाहिए और ग्राम विकास कार्यो को वह साधन बनाना चाहिए जिनसे ग्राम और ग्राम समूह मिल-जुलकर अपनी सहायता आप करते हुए सामाजिक और आर्थिक उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकते है और राष्ट्रीय योजना में योग दे सकते हैं।

अध्याय १२

आयोजन के लिए अनुसन्धान और अंक-संकलन

योजना सम्बन्धी अनुसन्धान, अंक-संकलन और मूल्याकन का विकास करने के लिए गत तीन वर्षों में जो उपाय किए गए है, प्रस्तुत अध्याय मे उनका सक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है और यह भी बताया जा रहा है कि आगे किस दिशा में काम करने का प्रस्ताव है। जिस समय पहली योजना तैयार की जा रही थी, कई महत्वपूर्ण चीजों के बारे में पर्याप्त सूचना उपलब्ध नहीं थी। राष्ट्रव्यापी आयोजन का स्वरूप और कार्रवाई ही कुछ ऐसी होती है कि उपलब्ध सूचना के तरतीब से सिलसिलेवार जमा किए जाने की व्यवस्था हो जाती है। साथ ही आयोजन के कारण कुछ ऐसी नई समस्याएं उठ खड़ी होती है जिनके समाधान के लिए मौके पर जाकर पड़ताल करने, विश्लेषण के नजरिए से पूछताछ और तहकीकात करने, और अंक-संकलन विद्या का उपयोग करने का बहुत ज्यादा महत्व हो जाता है। यही देखते हुए पहली पंचवर्षीय योजना में राष्ट्रीय विकास की आर्थिक, सामाजिक और प्रशासनिक समस्याओं के विषय में अनुसन्धान की खातिर पचास लाख रुपया रख छोड़ा गया था। विचार यह था कि विकास कार्य की कुछ चुनी हुई समस्याओं के बारे में विश्वविद्यालयों और अन्य संस्थाओं के सहयोग से जाच-पड़ताल कराई जाए। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए योजना आयोग ने जुलाई १९५३ में एक अनुसन्धान कार्यक्रम समिति नियुक्त की जिसमे देश के अग्रणी अर्थशास्त्री और अन्य समाजवेत्ता सम्मिलित किए गए।

२. इस अनुसन्धान कार्यक्रम समिति ने तय पाया कि शुरू-शुरू में इन चार मोटी-मोटी बातों के बारे में जांच-पड़ताल कराई जाए : (१) बचत, पूंजी-विनियोग, रोजगार, और लघु उद्योग, (२) प्रादेशिक विकास की समस्याएं, गावों-कस्बों के तेजी से शहरों के रूप में विकसित होने की समस्याओं की ओर खास ध्यान देते हुए; (३) भूमि सुधार, सहकारिता, और फार्म प्रबन्ध, (४) समाज कल्याण के प्रश्न और सार्वजनिक प्रशासन। अनुसन्धान कार्य समिति के निदेशन में विश्वविद्यालयों और अन्य शिक्षा केन्द्रों के माध्यम से कुल मिलाकर ६४ पड़ताल कार्य शुरू किए जा चुके है। इनमें से १९ की रिपोर्टें भी मिल चुकी है, जिनमें चार नमूने के सर्वेक्षण के विषय में है। बाईस में मौके पर जाकर तहकीकात करने का काम पूरा हो चुका है। बस, रिपोर्ट तैयार करना बाकी है। तेईस में तहकीकात और पड़ताल का काम अभी चल ही रहा है।

३. बचत, पूंजी-विनियोग, रोजगार, और लघु उद्योग विषयक सर्वेक्षण यह पता लगाने के उद्देश्य से किए गए कि नदी घाटी योजना कार्यों और भारी उद्योगों में बड़े पैमाने पर पूंजी लगाने का प्रभाव क्या हुआ है, छोटे पैमाने पर जो उद्योग शुरू किए जाते है, अर्थनीति की दृष्टि से उनकी स्थिति कैसी है, और बचत सम्बन्धी समस्याएं क्या हैं। व्यक्तिगत अध्ययनों का आयोजन इस दृष्टि से किया गया कि जिन उद्यमों में भारी पूंजी लगती है उनका आय और रोजगार पर क्या प्रभाव पड़ता है, अप्रधान विनियोग (सैकेन्डरी इन्वेस्टमेंट) का आकार-प्रकार क्या है, और इस तरह के विनियोग के प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव के कारण

अन्य क्या परिवर्तन सम्भव है? लघु उद्योग सर्वेक्षण का ध्येय इस क्षेत्र के औद्योगिक कार्यों के विषय में विनियोग, पूजी उत्पादन अनुपात और रोजगार सम्बन्धी सूचना उपलब्ध करना, लघु और बड़े उद्योगों की प्रतिद्वन्द्विता के क्षेत्र की और इस होड से पैदा होने वाली समस्याओं की निर्धारणा करना, और अर्थ-व्यवस्था के विकास की दृष्टि से लघु उद्योगों का महत्व आंकना था। अध्ययन के लिए जो पड़ताल कार्य किए गए उनमे ये भी शामिल थे भाखड़ा-नंगल योजना कार्य के रोजगार पक्ष की जांच, भिलाई क्षेत्र मे सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण, तिरुवांकुर-कोचीन मे बेरोजगारी की पड़ताल, असम मे शहरी इलाकों मे रोजगारी और बेरोजगारी की तहकीकात, गावो में आय और बचत के सम्बन्ध मे सर्वेक्षण, और चुने हुए केन्द्रों में लघु उद्योग विषयक अनेक अध्ययन।

४. गांवों से लोगो का शहरो मे आना, और गावो के तेजी से शहरों के रूप में विकसित होने से रोजगार के अवसरों मे वृद्धि होना प्रगति के इन दो महत्वपूर्ण पहलुओ का अध्ययन करने के लिए इक्कीस शहरों और नगरो* में पड़ताल शुरू कराई गई। इस पडताल का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना है कि लोगों का गांव छोड़कर शहरों मे जा बसना किन चीजो के असर से होता है, इस स्थानान्तरण मे कौन-सी बाते सहायक होती हैं और कौन बाधक, गांव छोड़कर शहरो में आने वालों की आर्थिक अवस्था क्या होती है और शहरो मे आ बसने पर उनके पेशों मे क्या परिवर्तन होता है।

५. तीसरे वर्ग के विषयो मे १८ अनुसन्धान योजनाएं सम्मिलित थी जिनमे से ७ भूमि सुधार के बारे मे और ११ फार्म प्रबन्ध के आर्थिक पक्ष और तत्सम्बन्धी अन्य प्रश्नों के बारे में थी। बम्बई, हैदराबाद, आंध्र, सौराष्ट्र और मध्य प्रदेश के भूमि सुधार कार्य के विभिन्न पहलू पड़ताल के लिए छांटे गए। इन जाच-कार्यों में बिचौलियो की समाप्ति, पट्टेदारी का नियमन और चकबन्दी के प्रभाव की पड़ताल करना सम्मिलित था। फार्म प्रबन्ध के आर्थिक पक्ष के बारे में जो जांच की गईं वह यह मालूम करने की दृष्टि से की गई कि लागत का लेखा-जोखा निकालना और सर्वेक्षण प्रणाली, इन दोनों में से कौन-सी विधि ज्यादा उपयुक्त है, लागत और पैदावार में क्या सम्बन्ध है, खर्च का स्वरूप कैसा है, विभिन्न आकार के फार्मो की पूंजी और मजूरी की जरूरतें क्या और कितनी हैं, और अर्थलाभ के प्रसंग मे प्रतियोगी फसलों की तुलनात्मक स्थिति कैसी है। इन अध्ययन कार्यो का क्षेत्र बहुत विशाल है और ये उत्तर प्रदेश, बम्बई, मध्य प्रदेश, पंजाब, पश्चिम बंगाल और मद्रास में किए जा रहे है।

६. समाज कल्याण के विषय मे जो सर्वेक्षण किए गए है, उनमे भिखमंगो की समस्या की तहकीकात, एक ग्राम्य क्षेत्र में सास्कृतिक परिवर्तन की निर्धारणा और भूतपूर्व अपराध-जीवी जातियो की सामाजिक और आर्थिक दशा की पड़ताल भी शामिल है। इस क्षेत्र में योजना आयोग ने समाज कल्याण विषयक विभिन्न अध्ययन लेखों के संग्रह का भी प्रबन्ध किया। भारत सरकार न यह संग्रह हाल में "सोशल वैलफेयर इन इण्डिया" शीर्षक से प्रकाशित किया है। सार्वजनिक प्रशासन के क्षेत्र मे जिला प्रशासन सम्बन्धी अध्ययन किया जा रहा है।

७. १९५५ के आरम्भ में योजना आयोग ने दूसरी पचवर्षीय योजना की तैयारी मे सहायता करने के लिए अर्थशास्त्रियों का एक मण्डल नियुक्त किया था। इस मण्डल के सदस्यों ने अनेक

*आगरा, इलाहाबाद, अलीगढ़, अमृतसर, बड़ोदा, भोपाल, बम्बई, कलकत्ता, कटक, दिल्ली, गोरखपुर, हैदराबाद, हुबली, जयपुर, जमशेदपुर, कानपुर, लखनऊ, मद्रास, पूना, सूरत और विशाखापत्तनम।

विशिष्ट अध्ययन लेख तैयार किए, जिन्हे योजना आयोग ने 'पेपर्स रिलेटिंग टु दि फॉर्मूलेशन ऑफ द सैकण्ड फाइव इयर प्लान' शीर्षक से प्रकाशित किया है। ये अध्ययन, पूजी निर्माण विनियोग के आकार-प्रकार, रोजगार और व्यवसाय के विधान, साधन उपलब्ध करने की समस्याएं, बड़े और छोटे उद्योगो के परस्पर सम्बन्ध और दूसरी योजना की नीति और संस्थागत पहलुओ से सम्बद्ध थे। भारतीय अंक-सकलन सस्था ने भी राष्ट्रीय विकास के आयोजन के सम्बन्ध मे कई प्रौद्योगिक एवं अंक-संकलन अध्ययन तैयार किए, जिन्हे वह सस्था स्वयं ही प्रकाशित कर रही है।

८. अनुसन्धान कार्यक्रम समिति का काम दूसरी योजना की अवधि मे जारी रखने की खातिर ४० लाख रुपए की व्यवस्था की गई है। इस समिति ने यह निदेश कर दिया है कि आगे किन-किन प्रमुख क्षेत्रों में अध्ययन कार्य करना उपयोगी होगा। चूंकि पहली योजना के दौरान में विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षण कार्यों की ओर विशेष ध्यान दिया गया था, दूसरी योजना की अवधि मे अब विश्लेषणात्मक अध्ययन करने पर और ज्यादा जोर देने का प्रस्ताव है। अनुसन्धान और गवेषणा के विषय निर्धारित करते समय इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि उन समस्याओं के अध्ययन पर विशेष जोर रहे जो दूसरी योजना के कार्यान्वित होने के दौरान में उठ सकती हों। अनुसन्धान कार्यक्रम समिति की एक उपसमिति ने इस बात का विचार करके सुझाव दिया है कि निम्नाकित क्षेत्रों मे अध्ययन करना उपयुक्त रहेगा :

(१) योजना के लिए साधनों की उपलब्धि जिसमे पूजी निर्माण, कर आपात और छोटी बचत आन्दोलन के सवाल भी शामिल है;
(२) शहर और गाव मे सम्बन्ध;
(३) विभिन्न प्रदेशो मे निर्माण कार्यो का रोजगार पर प्रभाव;
(४) विकेन्द्रीकरण की समस्याए, जिनमें यह मालूम करना भी शामिल है कि कुटीर और लघु उद्योगों के विकेन्द्रीकृत विकास के लिए उनकी अपनी समग्र आर्थिक और सामाजिक सामर्थ्य कम से कम कितनी होनी चाहिए,
(५) भवन निर्माण का आर्थिक पक्ष;
(६) कृषि सम्बन्धी कानूनों, भूमि सुधार और सामुदायिक विकास का अध्ययन; तथा
(७) आदिम जातियों की आर्थिक-सामाजिक समस्याए।

भारतीय अर्थ-व्यवस्था के सम्बन्ध मे भी उसकी दीर्घकालीन संभावनाओ की दृष्टि से अध्ययन कार्य शुरू करने का इरादा है। इनमें विभिन्न क्षेत्रों के परस्पर सम्बन्ध का विशेष रूप से विचार किया जाएगा।

९. तरतीब से आयोजन करने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि पूंजी का उत्पादन, पूजी और रोजगार का अनुपात, विभिन्न चीजों के उत्पादन और खपत के प्रतिमान, और आर्थिक उन्नति के विभिन्न क्षेत्रों की जनशक्ति विषयक आवश्यकता के बारे मे पर्याप्त सूचना उपलब्ध रहे। इस समय जो सूचना उपलब्ध है वह बहुत ही सीमित है और इसलिए आर्थिक उन्नति की ब्योरेवार कोई योजना बनाने के लिए यथेष्ट नहीं है। अतएव आज इस बात की अपेक्षा है कि देश की समस्याओं के बारे में ज्ञान बढ़ाने के लिए बाकायदा प्रौद्योगिक अध्ययन किया जाए और इस महान कार्य में टेकनीकल आदमी, अर्थशास्त्री, और अंक-संकलन विशेषज्ञ सभी सहयोग करें।

१०. पिछले चार सालों मे पड़ताल के कई महत्वपूर्ण कार्य किए गए हैं जिनसे बहुत-सी जरूरी बातें पता चली हैं। इनमे कृषि श्रम जांच १९५१ की जनगणना, कर-व्यवस्था जाच समिति का जाच-पड़ताल का काम और उसका निष्कर्ष, ग्राम्य ऋण व्यवस्था सम्बन्धी सर्वेक्षण और राष्ट्रीय नमूना पडताल के प्रतिवेदन विशेष उल्लेखनीय हैं। योजना आयोग ने विकास कार्य के विभिन्न क्षेत्रों की जन-शक्ति सम्बन्धी आवश्यकता के बारे में भी अध्ययन कार्य शुरू कराए। यद्यपि कई क्षेत्रों में उपलब्ध सूचना सफल आयोजन की दृष्टि से अब भी अपर्याप्त है, तथापि यह कहा जा सकता है कि अब आंकड़े वगैरह खासे जमा हो चुके है, और साथ ही देश मे ऐसी कई संस्थाएं हो गई हैं जिन्हें जांच-पड़ताल करने का अनुभव है और जिनके पास काफी प्रशिक्षित कर्मचारी है। पहली योजना की अवधि में सूचना उपलब्ध करने की दिशा मे जहां तक काम हो चुका है, ये संस्थाएं उससे और आगे तक काम करने में असमर्थ हैं।

मूल्यांकन

११. पहली पंचवर्षीय योजना में यह सिफारिश की गई थी कि जन-कार्य-कलाप की सभी शाखाओं मे कार्य प्रगति की समय-समय पर समीक्षा करते रहना साधारण प्रशासनिक कर्तव्यों मे शामिल समझा जाना चाहिए। विकास की किसी योजना को कार्यान्वित करते समय कदम-कदम पर यह सवाल उठता है कि नई नीतियों और नए कार्यक्रमों का क्या असर पड़ रहा है और उनके प्रति जनता का विचार क्या है? अतएव मूल्यांकन नीति-निर्धारण के वास्ते निहायत जरूरी है। मूल्यांकन को अनुसन्धान की ही एक शाखा माना जा सकता है, जिसमें मुख्य रूप में व्यावहारिक कार्यक्रम की जरूरतों के अनुसार परिवर्तन किया जा सकता है।

१२. मूल्यांकन विधियों का विकास करने की गरज से योजना आयोग ने १९५२ में फोर्ड प्रतिष्ठान के सहयोग से कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन को एक स्वतंत्र इकाई के रूप मे स्थापित किया। इसे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के कार्य का मूल्यांकन करने का भार सौंपा गया। इस कार्यक्रम के सन्दर्भ में उसके निम्नांकित कर्तव्य निश्चित किए गए :

(१) कार्यक्रम के लक्ष्य पूरे करने में जो भी प्रगति हो रही हो, तत्सम्बन्धी सभी लोगों को उससे अवगत कराते रहना;

(२) यह बताना कि विस्तार के कौन-से उपाय कारगर सिद्ध हो रहे है, और कौन-से नहीं,

(३) यह समझने में मदद देना कि जो विधियां सुझाई जा रही है, गांव वाले उन्हें स्वीकार अथवा अस्वीकार क्यों कर रहे है; और

(४) ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था और संस्कृति पर राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रभाव दर्शाना।

इस प्रकार मूल्यांकन का उद्देश्य यह निर्धारित करना था कि कार्यक्रम अपने मूल उद्देश्यों की पूर्ति मे सफल हो रहा है या नहीं। मूल्यांकन के पीछे यह धारणा थी कि विस्तार के उपायों और जनता द्वारा उनके अपनाए जाने और विकास कार्यक्रम के प्रभाव से आर्थिक और सामाजिक दशा में हुए परिवर्तनों का अध्ययन किया जाए।

१३. कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन का इस समय अपना एक संचालक, प्रधान कार्यालय में एक यूनिट, तीन प्रादेशिक यूनिटें और देश के विभिन्न भागों में स्थित २० योजना कार्य मूल्यांकन यूनिटें है। योजना कार्य मूल्यांकन यूनिटें राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की प्रगति का मूल्याकन करती है और क्षेत्रीय सर्वेक्षण तथा जांच-पड़ताल का कार्य करती है। योजना कार्य के कर्मचारियों से बराबर सम्पर्क बनाए रखा जाता है, लेकिन रिपोर्ट सिर्फ कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन को ही दी जाती है। इस संगठन के वार्षिक मूल्यांकन प्रतिवेदन से और कार्यक्रम के विशिष्ट पहलुओं के बारे मे पड़ताल द्वारा उपलब्ध तथ्यों से सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार के कार्यक्रम के परिपालन में बहुत सहायता मिली है। संगठन ने राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्यों के विषय में तीन मूल्यांकन प्रतिवेदन तैयार किए है जिनका अध्ययन किया जा रहा है। इन प्रतिवेदनों मे उन प्रशासनिक और अन्य समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित कराया गया है जो कार्यक्रम के परिपालन के दौरान में विभिन्न स्तरों पर, खास कर गावों में उठ खड़ी होती है। १९५४ के आरम्भ में मूल्यांकन केन्द्रो मे एक पीठ चिह्न सर्वेक्षण (बेंचमार्क सर्वे) किया गया। हर क्षेत्र में हजार-डेढ़ हजार परिवारों से खास तौर से पूछताछ की गई। समय-समय पर इस प्रकार के सर्वेक्षण करते रहने का प्रस्ताव है ताकि परिवर्तनों का लेखा-जोखा ज्ञात होता रहे। कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन ने जो अध्ययन किए है उनमें वे विशेषत: उल्लेखनीय है जिनका सम्बन्ध गांव संगठन के विधान, ग्राम्य जन समुदाय के विभिन्न वर्गो में कार्यक्रम की प्रारम्भिक प्रतिक्रिया, उन्नत तरीकों के अगीकरण, और ग्रामसेवक के कार्यो से है। उन्नत तरीको के अगीकरण के बारे मे जो तहकीकात की गई है, उसके परिणाम शीघ्र ही प्रकाशित कर दिए जाएंगे। इस तहकीकात का उद्देश्य यह पता लगाना था कि नई विधियों मे से कौन-कौन-सी ग्रामीण जनता को स्वीकार्य हुई, गाव वालो को इन नई विधियो को अपनाने के लिए किस तरह राजी किया गया, नई विधियों को अपनाने वालो के लिए क्या-क्या सुविधाएं देने का वचन दिया गया और गांव वालों का नई विधियां अपनाने के परिणामों के प्रति क्या विचार है? २३ सहकारी कृषि समितियों के कामकाज का भी गहन अध्ययन किया गया है और इसके विषय मे शीघ्र ही एक प्रतिवेदन प्रकाशित किया जाएगा।

१४. दूसरी पचवर्षीय योजना के दौरान में राष्ट्रीय विस्तार सेवा का काम समस्त देश में फैल जाएगा। अतएव मूल्यांकन के क्षेत्र में ग्रामोन्नति के समग्र कार्य-कलाप और जिला योजना के अधिकाश कार्य आ जाएगे। भूमि सुधार, सहकार, ग्राम और लघु उद्योगों की प्रगति से और शहरों और उद्योगों के तेजी से विकसित होने से देहातो मे भी मौलिक परिवर्तन होने लगे है। दूसरी योजना की अवधि में ये परिवर्तन शायद और भी तेजी से होंगे। यह निहायत जरूरी हो जाता है कि जैसे-जैसे सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन होते जाएं, वैसे-वैसे उनका निरपेक्ष दृष्टि से विश्लेषण किया जाता रहे और यह देखा जाए कि आर्थिक विकास का ग्रामीण जनता के विभिन्न वर्गों पर क्या असर पड़ रहा है। विकास कार्य के सभी क्षेत्रों मे मूल्यांकन की अपेक्षा है, उन क्षेत्रों में तो खासकर जहां नए या विस्तृत काम उठाए जा रहे हैं। सुनियोजित विकास के सभी क्षेत्रों में कई अज्ञात और अप्रत्याशित चीजों का सामना करना पड़ जाता है। जिन कार्यक्रमों का जनजीवन से निकट सम्बन्ध होता है, उनमें निहित विभिन्न तत्वों की परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया को समझना, उन्हें जनकल्याण की दृष्टि से अधिक सार्थक और सफल बनाने में बड़ा सहायक हो सकता है। अतएव यह अपेक्षित है कि मूल्यांकन के अन्तर्गत कुछ चुने हुए विषयों का ही गहनतर अध्ययन किया जाए, ताकि

इसके सहारे आगे कुछ ठोस काम किया जा सके। इसके लिए विभिन्न स्तरों पर आयोजन अभिकरणों के अनुभव, विशिष्ट क्षेत्रों के विशेषज्ञों के विचार, अर्थशास्त्रियो और अंक-संकलन-विदों के विश्लेषणात्मक अध्ययन, इन सब पर एकीकृत रूप से विचार किया जाए, जिससे कि न केवल यह ठीक-ठीक पता लग सके कि क्या कार्य किया जा रहा है, अपितु व्यावहारिक समस्याओ और नए कार्यो के बारे मे भी नया रुख अपनाया जा सके। इस दिशा मे उत्तर प्रदेश में आयोजन अनुसन्धान और कार्य संस्था ने कुछ उपयोगी काम शुरू भी कर दिया है। उत्तर प्रदेश मे विभिन्न क्षेत्रों में आम तौर से प्रयोगात्मक योजना कार्य पद्धतियों के विषय में जो अनुभव प्राप्त हुआ है, वह अन्य राज्यों के लिए भी लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

अंक-संकलन

१५. जिस समय पहली पंचवर्षीय योजना का सूत्रपात किया जा रहा था उस समय देश की आर्थिक अवस्था के कई महत्वपूर्ण पहलुओं के बारे में ऐसे आंकड़े प्राप्त नही थे जिन पर भरोसा किया जा सकता। राज्यों में आंकड़े जमा करने के लिए जो संस्थाएं थीं वे भी सुसंगठित नहीं थी। यद्यपि लड़ाई के जमाने मे केन्द्रीय सरकार द्वारा आकड़े जमा करने का काम और अधिक विस्तार से किया जाने लगा था, तथापि अक-संकलन की समन्वित व्यवस्था करने की दिशा मे कोई कोशिश न हो पाई थी। नीति या प्रशासन के मामलो मे कोई फैसला करते समय पुराने आकड़ों का भली-भाति विचार करने का रिवाज नही था, इसीलिए उपलब्ध सूचना के सच-झूठ की ओर काफी ध्यान नही दिया जाता था।

१६ देश के स्वाधीन होने के साथ यह स्थिति बदल गई। पहले के मुकाबले ज्यादा और विश्वसनीय आंकड़े जमा करने की जरूरत महसूस की गई। १९४९ के शुरू मे अक-संकलन का काम समन्वित करने के लिए एक केन्द्रीय अंक-संकलन यूनिट स्थापित की गई। उसी साल राष्ट्रीय आय समिति नियुक्त की गई जिसके काम से राष्ट्रीय आय विषयक आंकड़े जमा करने की बहुत सुविधा हुई है। १९५० में नेशनल सैम्पल सर्वे नामक संस्था इस उद्देश्य से खोली गई कि जनजीवन के विभिन्न पहलुओं के बारे में राष्ट्रीय आधार पर नमूने की पड़ताल कराई जाए। यह संस्था वर्ष में दो बार तहकीकात करके जन्म लेने वालों की संख्या तथा व्यापारियों आदि, उपभोग, घरेलू उत्पादन, चक, फसल, बेरोजगारी, उद्योग आदि के बारे में शहरों और गांवों से जानकारी और आंकडे उपलब्ध कराती है। इस संस्था की ओर से तहकीकात के विशिष्ट आयोजन भी होते रहे है। समय-समय पर किसी खास बात का पता चलाने के लिए अलग से भी सर्वेक्षण किए जाते रहे हैं। श्रम मंत्रालय द्वारा आयोजित खेतिहर मजदूर तहकीकात और रिजर्व बैक द्वारा आयोजित ग्राम्य ऋण व्यवस्था सर्वेक्षण से बहुत-सी काम की बातें मालूम हुई हैं। १९५१ में केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन की स्थापना हुई (जिसमें केन्द्रीय अंक-संकलन यूनिट मिला दी गई) यह नई संस्था राज्यों के अंक-संकलन कार्यालयों को भी सलाह-मशविरा देती है और उनसे परामर्श करती है। भारतीय अंक-संकलन संस्था में भी इस बीच काफी प्रगति हुई है। वहां अनुसन्धान और प्रशिक्षण का एक विद्यालय खुल गया है जिसमें केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन के सहयोग से अंक-संकलन की विद्या के बारे में स्नातकोत्तर पठन-पाठन और सरकारी अंक-संकलन कर्मचारियों के प्रशिक्षण का इन्तजाम किया गया है। भारतीय अंक-संकलन संस्था में एक योजना कार्य शाखा भी है जो नेशनल सैम्पल सर्वे और अन्य पड़ताल कार्यो के प्राविधिक कार्य की देख-रेख करती है। इस संस्था ने जगह-जगह अंक-संकलन विषयक किस्म नियंत्रण यूनिटें भी खोल रखी हैं।

यहा आधुनिक यंत्रो से हिसाब-किताब का काम करने से सम्बद्ध एक प्रयोगशाला भी है जिसका अपना कारखाना भी है ।

१७. केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन का राज्यो के अक-संकलन कार्यालयो से घनिष्ठ सम्पर्क है। उनके काम-काज में वह सहयोग और समन्वय करता है। समन्वय के काम में उसकी सहायता करने के लिए विभिन्न विभागों के अंक-संकलनविदो की एक स्थायी समिति और केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारों के अंक-सकलन विशेषज्ञों की एक मिली-जुली सभा नियुक्त है। केन्द्र और राज्यों की इस संयुक्त सभा की नियमित बैठक साल मे एक बार होती है। खास जरूरत पड़ने पर तदर्थ बैठक भी बुला ली जाती है। केन्द्रीय सरकार ने राज्य सरकारो से अपने यहां नमूने की पड़ताल शुरू कराने को कहा है, और उसके निमित्त उन्हें आर्थिक सहायता भी दी है। इस प्रकार राज्यों में जो नमूने की पड़तालें होगी उनका नेशनल सैम्पल सर्वे से कोई ताल्लुक न होगा, यद्यपि वे बिल्कुल उसी तरह, उसी ढंग पर, और उन्हीं मान्यताओं, परिभाषाओं, और प्रतिमानों को लेकर की जाएंगी। इससे एक ही जगह के बारे मे दो संस्थाओं के माध्यम से पृथक तथापि तुलनीय आकड़े प्राप्त होंगे जिनका अध्ययन करके सही-सही जानकारी हासिल की जा सकेगी ।

१८. अंक-सकलन की धीरे-धीरे एक समग्र और सुचारु व्यवस्था हो जाने से दूसरी पचवर्षीय योजना की तैयारी में बहुत सहायता मिली। १९५४ मे योजना आयोग ने यह तय किया कि केन्द्रीय अक-सकलन में योजना सबंधी एक विशेष शाखा खोली जाए जो योजना आयोग, विभिन्न मत्रालयों और भारतीय अंक-सकलन संस्थान की परिपालन विषयक अनुसन्धान यूनिट से निकट सम्पर्क बनाए रखे। योजना आयोग के सुझाव पर भारतीय अक-सकलन सस्थान और केन्द्रीय अक-सकलन संगठन ने आयोजन के विषय में संयुक्त रूप से कई अध्ययन कार्य किए और उनके आधार पर लेख लिखे। इसके बाद मार्च १९५५ में योजना की एक रूपरेखा तैयार की गई जिसमे बताया गया था कि दूसरी पंचवर्षीय योजना का किन-किन बातो के आधार पर सूत्रपात किया जा सकता है।

१९. योजना की रूपरेखा मे खास आग्रह दो चीजों पर था :— मशीन वगैरह तैयार करने वाले मूल उद्योगों का तेजी से विकास किया जाए, और शिक्षा, टेकनीकल प्रशिक्षण, अनुसन्धान, आरोग्य आदि की सुविधा में जल्दी से जल्दी वृद्धि की जाए जिससे लोगों की क्रय सामर्थ्य और उपभोग की वस्तुओं की माग बढ़ जाए। उपभोग्य वस्तुओ की इस बढ़ती हुई माग को पूरा करने के लिए कुटीर और लघु उद्योगों का विस्तार किया जाए। मशीन, कच्चा माल, और जनशक्ति उचित मात्रा मे और उचित समय पर उपलब्ध रहे, तभी उत्पादन के लक्ष्य सिद्ध किए जा सकते है। यही नही, मुद्रास्फीति से बचने के लिए जनता की मांग पूरी करने के निमित्त रोजमर्रा की जरूरत की चीजे भी उचित समय पर और उचित मात्रा मे उपलब्ध रहनी चाहिएं। अतएव योजना बनाने में खास ध्यान इस बात का रखना होगा कि मशीन, कच्चा माल, और श्रम की माग मे और उसकी पूर्ति मे बराबर संतुलन बनाए रखा जाए। वार्षिक योजनाए बनाकर लघुकालीन संतुलन और आगामी दस, बीस, तीस वर्ष या अधिक समय को ध्यान में रखते हुए भावी योजनाओं का निर्धारण योजनाएं बनाने का आवश्यक अंग होना चाहिए ।

२०. इस तरह योजनाएं तैयार करने के काम में मौजूदा और भावी योजनाओं के निर्धारण में आंकड़ो की अधिकाधिक आवश्यकता पड़ेगी। इसके अतिरिक्त अभावों, या टेकनीकल

और आंकड़े सम्बन्धी सूचनाओं की अशुद्धि, विदेशो की आर्थिक स्थिति का अप्रत्याशित प्रभाव, देश की अर्थ-व्यवस्था मे अप्रत्याशित परिवर्तन और अन्य गड़बडियों के कारण योजना पर अमल करने मे छोटी-बड़ी बाधाए आती ही रहेगी। इसलिए आर्थिक और भौतिक सफलता की दृष्टि से योजना की प्रगति का मूल्यांकन, और उनसे अनुभवों के प्रकाश में प्राप्त मौजूदा और भावी योजनाओ मे आवश्यक परिवर्तन करते रहना निहायत जरूरी है। अक-सकलन व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि मौजूदा और भावी योजनाओं के निर्धारण और परिवर्तन के लिए बराबर प्रामाणिक आकड़े और सूचनाएं प्राप्त होती रहे।

२१. केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा किए जाने वाले कार्यों को समन्वित करने के लिए एक अंक-सकलन व्यवस्था बनाना हमारा उद्देश्य है। सूचनाओं का परिमाण बढाने पर नहीं वरन् उन्हे अधिक विश्वसनीय बनाने पर अधिक बल दिया जा रहा है। योजना से सम्बद्ध कार्य की देखभाल के लिए केन्द्रीय अंक-संकलन संगठन में एक योजना शाखा विशेष रूप से खोली गई है। योजना आयोग ने राज्य सरकारों को सुझाया है कि राज्य स्तर पर बनने वाली योजनाओं से सम्बद्ध अंक-संकलन कार्य, राज्य अक-संकलन ब्यूरो को सौप देना चाहिए। इस कार्य के लिए विशेष अनुक्रमणिकाएं और सूचना-पत्र तैयार करके वितरित कर दिए गए हैं। केन्द्रीय और राज्यीय अंक-संकलन अभिकरणो की क्षमता बढ़ाई जा रही है और इस कार्य के लिए केन्द्रीय सहायता भी दी जा रही है। केन्द्रीय अंक-सकलन संगठन के तत्वावधान में देश भर में अक-सकलन का समन्वित विकास हो, इसे उद्देश्य से एक योजना बनाई जा रही है। राज्यीय अंक-सकलन ब्यूरो यदि चाहें तो राज्यों में विशेष योजना यूनिटें स्थापित की जा सकती हैं। सूचना के मूल स्रोतों से अधिक से अधिक, समय से और सही आंकड़ों की उपलब्धि के क्रमिक अनुष्ठान के अनुसार जिलो में अंक-संकलन अभिकरण स्थापित करने का भी प्रस्ताव है। केन्द्रीय अक-सकलन सगठन और भारतीय अंक-संकलन संस्था दोनों मिलकर राज्यों और केन्द्रीय मत्रालयों के सहयोग से विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण की व्यवस्था का प्रबन्ध कर रहे है।

२२. योजना आयोग मांग और पूर्ति के या विनियोग, रोजगार और आमदनी के, हाट-व्यवस्था के संतुलन और जन-शक्ति के भौतिक सम्बन्धों के विषय में टेक्नीकल और अंक-संकलन कार्य का और योजना के परिपालन सम्बन्धी अनुसन्धान कार्य को विस्तार देने और दृढ़ बनाने का विचार कर रहा है। इसके अतिरिक्त वह योजना के भावी रूप और भारतीय अंक-संकलन सस्था के तत्सम्बन्धी कार्य की ओर भी अधिक ध्यान दे रहा है। समन्वय की सुचारु व्यवस्था के लिए एक संयुक्त समिति बनाने का निर्णय किया गया है। संयुक्त समिति मे योजना आयोग, वित्त मंत्रालय के अर्थ विभाग, केन्द्रीय अंक-संकलन सगठन और भारतीय अंक-संकलन सस्थान के प्रतिनिधि होंगे।

अध्याय १३

कृषि कार्यक्रम

पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि और सामुदायिक विकास के कार्यक्रमों को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। चूंकि उस योजना का उद्देश्य सारी जनता का, विशेषतः देहाती क्षेत्रों के लोगों के जीवन-स्तर को ऊंचा उठाना था, इसलिए इन कायक्रमों को प्राथमिकता प्रदान करना स्वाभाविक था और यह इसलिए भी जरूरी था कि जिस समय योजना बनाई गई थी उस समय कमी और मुद्रास्फीति की विशेष परिस्थितियां मौजूद थी। १९५२-५३ से कृषि की पैदावार में जो वृद्धि हुई है उससे मुद्रास्फीति को समाप्त करने, अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने और दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि मे और तेजी से विकास का मार्ग तैयार करने मे जितनी सहायता मिली है उतनी अन्य किसी चीज से नहीं मिली। १९४९-५० को आधार वर्ष मानकर १९५०-५१ में कृषि उत्पादन का देशनांक ९६ था, १९५३-५४ और १९५४-५५ में यह ११४ और १९५५-५६ मे ११५ था। पहली योजना में राष्ट्रीय पैदावार मे १८ प्रतिशत वृद्धि हुई और इसी अनुपात मे कृषि के क्षत्र मे आय बढ़ी। कृषि उत्पादन मे वृद्धि होने के कारण अर्थ-व्यवस्था के अन्य क्षेत्रों मे भी वृद्धि हुई।

पहली योजना की समीक्षा

२. पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन मे जिस वृद्धि की परिकल्पना की गई थी, वह इस प्रकार थी :—

वस्तु	इकाई	आधार वर्ष मे उत्पादन*	अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य	प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	५४०	७६	१४
मुख्य तिलहन	,,	५१	४	८
गन्ना (गुड़)	,,	५६	७	१३
कपास	लाख गाठ	२९	१३	४५
पटसन	,,	३३	२१	६४

*खाद्यान्नों के लिए आधार वर्ष १९४९-५० है; अन्यों के लिए १९५०-५१।

सिंचाई, उर्वरकों का अधिक मात्रा में प्रयोग, सुधरे हुए बीजों का वितरण और भूमि को कृषि योग्य बनाने एव उसका विकास करने आदि विभिन्न कार्यक्रमों से मिलने वाली सहायता को ध्यान में रखकर ही अतिरिक्त उत्पादन, विशेषतः खाद्यान्नों के उत्पादन के ये लक्ष्य निर्धारित

किए गए थे। दूसरे शब्दों मे, यह अनुमान लगाया गया था कि यदि योजना मे निर्धारित विकास सम्बन्धी कार्यों को पूरा किया गया तो सम्भवतः निर्दिष्ट सीमा तक उत्पादन अवश्य बढ़ जाएगा। किन्ही भी वर्षो मे विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के वास्तविक स्तर मौसम सम्बन्धी परिस्थितियो तथा विभिन्न फसलों के सापेक्ष मूल्य जैसी अन्य बातों के अनुसार आवश्यक रूप से भिन्न-भिन्न होंगे।

३. पहली योजना मे कृषि उत्पादन की गति इस प्रकार रही :—

वस्तु	इकाई	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
अनाज	लाख टन	४२९	४९२	५८३	५५३	५५०
दालें	,,	८३	९१	१०४	१०५	१००
कुल खाद्यान्न	,,	५१२	५८३	६८७	६५८	६५०
मुख्य तिलहन	,,	४९	४७	५३	५९	५५
गन्ना (गुड)	,,	६१	५०	४४	५५	५८
कपास	लाख गांठें	३१	३२	३९	४३	४२
पटसन	,,	४७	४६	३१	२९*	४०

*अशत. सशोधित अनुमान।

यह प्रगट होता है कि योजना काल में १९५३-५४ मे खाद्यान्नो और १९५४-५५ मे तिलहन और कपास का सर्वाधिक उत्पादन हुआ। गन्ना और पटसन का सर्वाधिक उत्पादन १९५१-५२ में हुआ और यद्यपि उत्पादन कम हो जाने के कुछ समय बाद योजना की समाप्ति के समय उत्पादन फिर बढ़ गया, फिर भी जो लक्ष्य निर्धारित किए गए थे वे पूरे न हो सके।

४. नीचे दी गई तालिका से ये प्रवृत्तिया और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है। इसी तालिका में योजना की अवधि मे विभिन्न फसलों के उत्पादन के देशनाक भी दिए गए है .—

(आधार : १९४९-५० = १००)

	भार	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
१. खाद्यान्न–						
अनाज	५८.३	९१	१०१	११९	११२	११२
दालें	८ ६	९०	९९	११२	११३	१०८
कुल खाद्यान्न	६६.९	९१	१०१	११८	११२	१११

	भार	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
२. खाद्येतर फसलें—						
तिलहन	९.९	९७	९२	१०७	११५	१०८
कपास	२.८	११९	१२१	१५३	१६६	१६२
पटसन	१.४	१५१	१४९	१०१	१०२	१३६
विविध—						
गन्ना	८.७	१२३	१०२	९०	११२	११८
अन्य फसले जिनमें चाय, कहवा, रबड़ आदि शामिल है	१०.०	१०५	१०७	१०५	१११	१२५
कुल खाद्येतर फसले	३३.१	१११	१०४	१०६	११७	१२२
सभी वस्तुए	१००.०	९८	१०२	११४	११४	११५

यह बात महत्वपूर्ण है कि पिछले तीन सालों मे कृषि उत्पादन का देशनाक काफी ऊंचे स्तर पर बना रहा। इसके साथ-साथ खाद्यान्नो मे कुछ कमी रही जो कृषि उत्पादन के कुल मूल्य की लगभग ६७ प्रतिशत थी। एक अधिक लम्बी अवधि में इन प्रवृत्तियो के अध्ययन के बाद ही निश्चित परिणाम निकाले जा सकते है।

५. भिन्न-भिन्न खाद्यान्नों के उत्पादन मे वृद्धि के वास्तविक आकड़ों से यह साबित होता है कि कृषि कई ऐसी बातों पर निर्भर होती है जिनके बारे में पहले से ठीक-ठीक कुछ नहीं कहा जा सकता, और इसलिए यह आवश्यक है कि कृषि सम्बन्धी लक्ष्यों को अस्थायी ही मानना चाहिए :—

(लाख टन)

——	१९४९-५०	१९५०-५१	१९५१-५२	१९५२-५३	१९५३-५४	१९५४-५५	१९५५-५६ (अनुमानित)
चावल	२३२	२०३	२१०	२२५	२७८	२४२	२५५
गेहूं	६३	६४	६१	७४	७९	८५	८५
ज्वार और बाजरा	८५	८०	८३	१०४	१२४	१२६	१२०
अन्य अनाज	८०	७०	७५	८९	१०२	१००	९०
कुल अनाज	४६०	४१७	४२९	४९२	५८३	५५३	५५०
चना और दालें	८०	८३	८३	९१	१०४	१०५	१००
कुल खाद्यान्न	५४०	५००	५१२	५८३	६८७	६५८	६५०

यह आशा की गई थी कि पहली पंचवर्षीय योजना में ७६ लाख टन की अनुमानित वृद्धि मे से चावल की ४० लाख टन, गेहूं की २० लाख टन, चना और दालों की १० लाख टन और अन्य अनाजों की ५ लाख टन वृद्धि होगी। ज्वार-बाजरा तथा अन्य अनाजो मे सबसे अधिक वृद्धि हुई है और गेहूं के उत्पादन का लक्ष्य भी पूरा हो गया है। सामान्यत. एक विशेष रूप से अनुकूल वर्ष को छोड़कर चावल के उत्पादन के सम्बन्ध मे जो आशा की गई थी, वह पूरी नही हुई। फिर भी, खाद्यान्न उत्पादन मे वृद्धि के कारण आयात में कमी करना सम्भव हो सका। १९५० मे खाद्यान्न का आयात ४७ लाख ३० हजार टन और १९५१ में ३८ लाख ६० हजार टन था जो पिछले दोनों सालों में घटकर १० लाख टन से भी कम हुआ। इससे देश की सामान्य अर्थ-व्यवस्था को एक निश्चित लाभ पहुंचा।

६. उपलब्ध आकड़ों के आधार पर कृषि की अलग-अलग फसलों के उत्पादन की प्रगति को पहली योजना काल की वर्ष-प्रति-वर्ष की वास्तविक प्रगति से बहुत अधिक सम्बन्धित करके देखना ठीक न होगा। ऐसा देखने मे आता है कि एक ही समय में अनेक बातें एक साथ काम करती हैं। यह सुझाव दिया गया है कि पहली पंचवर्षीय योजना मे कृषि उत्पादन विषयक आकड़ों की, जिनमे फसले काटने सम्बन्धी सर्वेक्षण के परिणाम भी सम्मिलित हैं, कई प्रकार के विशेष एव गम्भीर अध्ययनों द्वारा जांच की जानी चाहिए। नीति-निर्धारण एवं परिणामों के निर्माण के लिए जिन पहलुओ के बारे मे और अधिक विस्तृत ज्ञान प्राप्त करना महत्वपूर्ण होगा, उनमें से निम्नलिखित का उल्लेख करना जरूरी है :—

१. विभिन्न प्रदेशों की उत्पादन प्रवृत्तियां,
२. कृषि उत्पादन के प्रभाव और विस्तार कार्यक्रम,
३. अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों का प्रभाव क्षेत्र,
४. अतिरिक्त उत्पादन के वर्तमान पैमानों की समीक्षा,
५. मुख्य-मुख्य फसलों की पैदावार की गतिविधि, और
६. जो लाभ हुए हों उनकी दृष्टि से विभिन्न कृषि उत्पादन और विस्तार कार्यों की लागत।

७. उपलब्ध सीमित जानकारी से यह पता चलता है कि पहली पंचवर्षीय योजना में जिन विकास कार्यक्रमों से कृषि उत्पादन मे वृद्धि हुई है उनमें सिंचाई के छोटे-छोटे कार्य, उर्वरकों का और अधिक प्रयोग, भूमि को खेती योग्य बनाना और उसका विकास और खेती की जमीन मे वृद्धि—ये सब विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं। योजना के पहले ही कई वर्षों से सिचाई के छोटे-छोटे कार्यक्रम चालू किए जा रहे थे। १९४३-४४ से १९५०-५१ तक की अवधि में 'अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन' के सिलसिले में लगभग ६२ करोड़ रु० की लागत के कार्यक्रम स्वीकार किए गए थे और इनमे से अधिकांश सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यों के सम्बन्ध में थे। पहली योजना के अन्तर्गत अनुमानतः लगभग १ करोड़ एकड़ भूमि मे सिंचाई के छोटे-छोटे साधनों से और लगभग ६३ लाख एकड़ भूमि मे सिचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओं से सिंचाई की गई। सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यों से लाभान्वित क्षेत्र की आधे से अधिक वृद्धि योजना के पहले दो वर्षों में हुई। कई राज्यों मे, विशेषतः बिहार, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, पंजाब, असम, बम्बई, मद्रास और मैसूर में काफी वृद्धि हुई है। उर्वरकों के प्रयोग के साथ ही सिंचाई का अधिक लाभ होता है। योजना की अवधि में अमोनियम सल्फेट की

खपत दुगुनी से अधिक हो गई है। योजना आरम्भ होने से पहले २,७५,००० टन की खपत थी, जो चार साल बाद बढ़कर ६,१०,००० टन हो गई। जापानी ढंग से चावल की खेती करने के तरीके के प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। अब तक १६ लाख एकड़ भूमि में इस ढंग से चावल की खेती की जाती है।

८. पहली पंचवर्षीय योजना के पहले चार वर्षो मे १० लाख एकड़ से अधिक भूमि केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन द्वारा और १४ लाख एकड़ भूमि राज्यो के ट्रैक्टर संगठनों द्वारा खेती के योग्य बनाई गई। इसके अतिरिक्त कृषकों ने यांत्रिक खेती के लिए सहायता, तथा शारीरिक परिश्रम द्वारा बन्द बनाना, भूमि को इकसार करना और उसका सुधार करना आदि कार्य-क्रमों द्वारा लगभग ५० लाख एकड़ भूमि को खेती योग्य बनाया है। खेती की जमीन मे वृद्धि होने के कारण उत्पादन में जितनी बढ़ोतरी हुई है, उतनी की योजना बनाने के समय आशा नहीं की गई थी। इस प्रकार योजना से पहले ३२ करोड़ ६० लाख एकड भूमि में खेती होती थी, जबकि १९५४-५५ में ३५ करोड़ २० लाख एकड़ भूमि में खेती होने लगी। अनाज की खेती का क्षेत्र २५ करोड़ ७० लाख एकड़ से बढ़कर २७ करोड़ २० लाख एकड हो गया और व्यावसायिक फसलों का क्षेत्र ४ करोड़ ९० लाख एकड़ से बढ़कर ६ करोड़ हो गया। व्यावसायिक फसलों का क्षेत्र, जो कुल खेती के क्षेत्र का १५ प्रतिशत था, बढ़कर १७ प्रतिशत हो गया, जबकि अनाज की खेती का क्षेत्र जो कुल खेती के क्षेत्र का ७९ प्रतिशत था घटकर ७७ प्रतिशत रह गया। अन्य फसलों के क्षेत्र (२ करोड़ एकड) मे कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ।

दूसरी योजना का दृष्टिकोण

९. पहली पंचवर्षीय योजना में यह बहुत आवश्यक था कि कृषि सम्बन्धी कार्यक्रमो में सफलता प्राप्त हो, क्योंकि सामान्यत: अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए कोई और बात इतनी महत्वपूर्ण नही थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना मे कृषि के कार्यक्रमों का उद्देश्य यह है कि बढ़ती हुई आबादी के लिए पर्याप्त खाद्य मिले और निरन्तर बढ़ती हुई औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था के लिए आवश्यक कच्चा माल प्राप्त हो तथा खेती की चीजें इतनी बची रहें कि और भी अधिक मात्रा में उनका निर्यात किया जा सके। दूसरी पचवर्षीय योजना पहली योजना की भी अपेक्षा, कृषि सम्बन्धी और औद्योगिक विकास की पारस्परिक निर्भरता के प्रति अधिक सचेष्ट है। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यक्रम बनाते समय दीर्घकालीन दृष्टि अपनानी आवश्यक है ताकि पदार्थों और मानवीय साधनों का सर्वोत्तम उपयोग हो सके, कृषि की विभिन्न शाखाओं में संतुलित विकास हो सके और ग्रामीण आय तथा जीवन-यापन के स्तर में यथेष्ट वृद्धि की स्थिति उत्पन्न की जा सके। राष्ट्रीय दृष्टिकोण से यह आवश्यक है कि कार्यक्रम बनाते समय गांवों के लोगों के सामने एक ध्येय रखा जाए जिसे प्राप्त करने का उन्हे प्रयत्न करना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना तैयार करने के सम्बन्ध मे यह कहा गया था कि उक्त ध्येय यह होना चाहिए कि लगभग १० वर्ष की अवधि में कृषि का उत्पादन दुगुना कर दिया जाए जिसमें अनाज की फसलें, तिलहन, कपास, गन्ना, बाग़ान और अन्य फसले, पशु-पालन जनित अन्य वस्तुएं आदि भी सम्मिलित है।

१०. खाद्य समस्या के सम्बन्ध में जिन बातों पर विचार करना चाहिए वे ये हैं: (१) कुल आबादी में वृद्धि, (२) शहरी आबादी में वृद्धि, (३) प्रति व्यक्ति उपभोग को बढ़ाने की

आवश्यकता, (४) दूसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यान्वित होने के कारण पैदा होने वाले सभावित मुद्रास्फीति के प्रभावों को दूर करने की आवश्यकता, और (५) राष्ट्रीय आय में वृद्धि और उसके वितरण मे परिवर्तनों का खाद्य के उपभोग पर प्रभाव। उपभोग की वर्तमान दर के अनुसार १९६०-६१ में खाद्य की कुल आवश्यकता ७ करोड़ ५ लाख टन होगी। दूसरी पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक उपभोग की दर अनुमानत. बढकर १८·३ औस प्रति व्यस्क व्यक्ति (अनाज १५·५ औस और चना तथा दाले २·८ औस) हो जाएगी जिससे कि खाद्य की कुल आवश्यकता ७ करोड़ ५० लाख टन होगी। योजना मे अगले पाच वर्षों मे खाद्य उत्पादन मे १ करोड़ टन की वृद्धि की व्यवस्था की गई है। केलोरीज की दृष्टि से प्रति दिन प्रति व्यस्क व्यक्ति खाद्य का उपभोग २,२०० है जो १९६०-६१ तक बढकर २,४५० हो जाएगा, जबकि पोषक आहार सम्बन्धी विशेषज्ञों ने कम से कम ३,००० केलोरीज की सिफारिश की है।

११. कई अन्य देशों की तुलना मे भारत मे अनाज के उपभोग की दर अपेक्षाकृत अधिक ऊची है। इसका कारण यह है कि दूध और दूध से बनी वस्तुएं, फल और सब्जियां, अंडे, मछली और मास आदि शक्तिदायक खाद्य जन-साधारण को खाने को नही मिलते। खाने-पीने की सही आदतों के सवाल के आलावा, जो निस्सदेह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण मसला है, इनमें से प्रत्येक पूरक खाद्य की पैदावार इस समय बहुत कम है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि की एक ही प्रकार की चीजों के उत्पादन पर जोर नही दिया जाएगा और अब तक अनाज की फसलों के उत्पादन पर ही जो बहुत अधिक बल दिया जाता रहा है वह अब थोड़ा-थोड़ा दूसरी चीजों के उत्पादन पर दिया जाएगा। दूसरी योजना में सुपारी, नारियल, लाख, काली मिर्च, काजू आदि चीजों के उत्पादन को बढ़ाने के लिए कार्यक्रमों की व्यवस्था की गई है। पहली योजना मे इन चीज़ों का उत्पादन बढ़ाने की ओर पर्याप्त ध्यान नही दिया गया था।

१२. खेती के क्षेत्र मे वृद्धि करने की गुजाइश बहुत ही कम है। इस क्षेत्र मे जो वृद्धि हो भी सकती है, उससे भी मुख्यत. घटिया प्रकार के अनाजों के उत्पादन में वृद्धि होने की सम्भावना है। राष्ट्रीय आय बढने के साथ घटिया प्रकार के अनाजों के स्थान पर बढ़िया प्रकार के अनाजों, जैसे चावल, गेहूं और मक्का आदि की मांग बढने की सम्भावना है। इन परिस्थितियों मे कृषि उत्पादन में वृद्धि करने का मुख्य साधन यही है कि अधिक भरपूर, कुशल और लाभदायक रूप से खेती करके खेती की पैदावार बढ़ाई जाए। यद्यपि उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर हमेशा ही तुलना कर सकना ठीक नही होता फिर भी इस बात में कोई शक नहीं कि भारत में गेहूं और चावल आदि मुख्य फसलों की औसत पैदावार कई अन्य देशों की वर्तमान पैदावार से बहुत कम है। देश के विभिन्न भागों में हाल के वर्षों मे फसल काटने के जो परीक्षण किए गए हैं उनसे पता चलता है कि विभिन्न प्रदेशों की फसलों की औसत पैदावार में बड़ा अन्तर है और प्रत्येक प्रदेश में भी यह अन्तर ऐसा ही है। गत कुछ वर्षो से की जाने वाली फसल प्रतियोगिताओं से भी यह प्रकट होता है कि यदि आवश्यक प्रयत्न किया जाए और आवश्यक सहायता प्राप्त हो तो भारतीय परिस्थितियों मे फसलों की पैदावार कहां तक बढाई जा सकती है। अब खेती की पैदावार मे तेजी से और काफी व्यापक रूप से वृद्धि कर सकना बिल्कुल सम्भव है। उसके लिए प्रदेशों, राज्यों, जिलों और ऐसे योजना क्षेत्रों को, जहां अभी तक कार्य शुरू नहीं हुआ है, ध्यान में रखकर और अधिक विस्तृत तथा क्रमबद्ध योजना बनाने की जरूरत है। फसल प्रतियोगिताओं के आंकड़ों का व्यापक रूप से प्रचार किया जाना चाहिए जिससे कि प्रत्येक प्रदेश प्रमाणित तथ्यों की दृष्टि

विकास शीर्षक	पहली योजना		दूसरी योजना	
	करोड़ रु०	प्रतिशत	करोड़ रु०	प्रतिशत
५. सहकारिता, जिसमें गोदाम और क्रय-विक्रय शामिल है ..	७	२·९	४७	१३·८
६. विविध	१	०·४	९	२·६
योग	२४०	१००·०	३४१	१००·०
(ख) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य .	९०	७७·६	२००	८८·१
(ग) अन्य कार्यक्रम :				
१. ग्राम पंचायतें	११	९·५	१२	५·३
२. स्थानीय विकास कार्य ...	१५	१२·९	१५	६·६
योग	११६	१००	२२७	१००·०
	३५६		५६८	

उत्पादन लक्ष्य

१५. दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि उत्पादन के मुख्य लक्ष्य नीचे की तालिका में बताए गए हैं :

वस्तु	इकाई	अनुमानित उत्पादन १९५५-५६	अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य	अनुमानित उत्पादन १९६०-६१	प्रतिशत वृद्धि
खाद्यान्न	लाख टन	६५०	१००	७५०	१५
तिलहन	,,	५५	१५	७०	२७
गन्ना (गुड़)	,,	५८	१३	७१	२२
कपास	लाख गांठे	४२	१३	५५	३१
पटसन	,,	४०	१०	५०	२५
नारियल (तिल)	लाख टन	१·३	०·८	२·१	६२
सुपारी	लाख मन	२२·०	५·०	२७·०	२३
लाख	,,	१२·०	४·०	१६·०	३३
तम्बाकू	लाख टन	२·५	—	२·५	—
काली मिर्च	हजार टन	२६·०	६·०	३२·०	२३
काजू	,,	६०·०	२०·०	८०·०	३३
चाय	लाख पौंड	६,४४०	५६०	७,०००	९

इन लक्ष्यो के देशनाक निम्नलिखित है (आधार वर्ष १९४९-५०).

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
खाद्यान्न .	९१	१११	१२९
तिलहन ..	९९	१०८	१३७
गन्ना (गुड़) . .	११४	११८	१४४
कपास ...	१०९	१६२	२१३
पटसन .. .	१०९	१३६	१९४
अन्य फसले जिनमे बागान भी शामिल है ...	१०५	१२५	१३६
कुल खाद्येतर फसलें .. .	१०६	१२२	१४८
सभी वस्तुए .	९६	११५	१३५

ये लक्ष्य आरम्भिक अनुमानों के रूप में है जिनका आधार वह सम्भावित उत्पादन है जो विभिन्न विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप प्राप्त होगा। दसवे पैरे में उल्लिखित बातो की दृष्टि से विशेषत: मुद्रास्फीति की सम्भावनाओ को दूर करने के उपाय बरतने की आवश्यकता के कारण ऐसा विचार है कि साधनो मे थोडी हेर-फेर करके कृषि उत्पादन के और अधिक ऊचे लक्ष्य प्राप्त कर सकना आवश्यक और सम्भव है। विशेषत. राष्ट्रीय विस्तार सेवा के द्वारा प्रत्येक गाव और परिवार तक पहुंचने का उद्देश्य होना चाहिए और इन लक्ष्यो को पूरा करने के लिए आवश्यक साधनो, सेवाओ तथा अल्प, मध्यम एव दीर्घकालीन वित्त की व्यवस्था की जानी चाहिए। उच्चतर लक्ष्य निर्धारित करने और उन्हे पूरा करने की दृष्टि से योजना आयोग तथा खाद्य और कृषि मत्रालय ने फसल की किस्म, भूमि तथा जल साधनो और सिचाई, राष्ट्रीय विस्तार और अन्य क्षेत्रों के विकास कार्यक्रमों के सदर्भ में प्रत्येक राज्य और प्रदेश मे कृषि कार्यक्रमों का और विस्तृत अध्ययन करने का विचार किया है।

१६. **खाद्यान्न**—खाद्यान्नों के लक्ष्य का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। आशा की जाती है कि खाद्यान्न मे १ करोड़ टन की वृद्धि होगी, जिसमें से चावल में ३० से ४० लाख टन, गेहू मे २० से ३० लाख टन, अन्य अनाजो मे २० से ३० लाख टन और दालों में १५ से २० लाख टन की वृद्धि होगी।

१७. **कपास**—दूसरी पंचवर्षीय योजना मे सूती कपडे के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कपास का उत्पादन १९५५-५६ मे ४२ लाख गाठ से बढाकर १९६०-६१ मे ५५ लाख गांठ करना होगा। कपास विकास के कार्यक्रमो में वे सब कार्य जारी रहेंगे जो पहली योजना में किए गए थे, जैसे बीजों की व्यवस्था, बीज विकास और उन्नत बीजो का वितरण, बीज और उर्वरक खरीदने के लिए किसानो को ऋण तथा कपास की खेती करने वालों में प्रचार कार्य। दूसरी योजना मे विकास का एक मुख्य पहलू यह होगा कि लम्बे रेशे वाली कपास की किस्मों का उत्पादन बढाने पर जोर दिया जाएगा, विशेषकर उन क्षेत्रों में जो सिचाई की बड़ी-बडी योजनाओ के अन्तर्गत है। लम्बे रेशेवाली किस्मो का उत्पादन बढाने में अब तक महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई है और इन किस्मों का अनुपात १९४८-४९ में १७·२ प्रतिशत से बढकर १९५४-५५ मे लगभग ३७ प्रतिशत हो गया।

१८. **पटसन**—देश के बंटवारे से पहले पटसन के उत्पादन एवं उपलब्धि के सम्बन्ध में भारत का लगभग एकाधिकार था, क्योकि यह भारत के लिए विदेशी मुद्रा अर्जित करने का सदा ही प्रमुख साधन रहा है। विभाजन के बाद अविभक्त भारत के पटसन का कुल उत्पादन का लगभग केवल १९ प्रतिशत ही भारत के हिस्से मे आया। पटसन के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है। १९४७-४८ मे इसका उत्पादन १७ लाख गांठ था, जो १९५५-५६ में बढकर लगभग ४० लाख गाठ हो गया, किन्तु पिछले कुछ वर्षो मे भारत में जो अतिरिक्त पटसन पैदा हुआ वह सीमान्त जमीनों मे हुआ था और उसकी किस्म घटिया थी, जिसके परिणामस्वरूप वह कम दामों पर बिका। पटसन के उत्पादन के कार्यक्रम में मात्रा पर जोर न देकर किस्म के बढिया होने पर जोर दिया जाना चाहिए, और अब पटसन की जो नई खेती की जाएगी वह बढ़िया किस्म के अनुकल क्षेत्रों में ही की जाएगी। यदि मिले अपनी पूरी क्षमता पर चलें, तो पटसन उद्योग को कुल ७२ लाख गाठ कच्चे पटसन की आवश्यकता होगी। इसके अलावा मिलों को लगभग १,५०,००० गाठों की और आवश्यकता होगी। इसलिए ५० लाख गाठें आंतरिक उत्पादन से और शेष बाहर से मंगाकर पूरा करने का विचार है। मुख्यत: खेती के उपायों के द्वारा १० लाख गाठें अतिरिक्त पटसन उत्पन्न करना सम्भव होना चाहिए और अन्तिम उद्देश्य यह होना चाहिए कि प्रत्येक एकड़ से पटसन की बढिया किस्म की औसत पैदावार हो। पटसन का उत्पादन बढ़ाने की वर्तमान योजनाओ को और अधिक विस्तृत आधार पर दूसरी योजना मे भी जारी रखा जाएगा, बीज फार्म स्थापित किए जाएगे, सुधरे हुए बीज मुहैया किए जाएंगे और साथ ही अन्य आवश्यक उपाय भी किए जाएंगे। उन्नत तरीकों से पटसन की खेती किस प्रकार की जा सकती है, इसका प्रदर्शन करने के लिए एक विस्तार सेवा का संगठन करना पटसन विकास कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अग है।

१९. **तिलहन**—जनता के भोजन में चर्बी की पूर्ति तिलहन और वनस्पति तेलो से होती है। इसके अतिरिक्त ये निर्यात के लिए भी मूल्यवान वस्तुएं हैं। पांच प्रमुख तिलहनों—मूगफली, तिल, अलसी, राई और सरसों तथा रेडी का उत्पादन १९५०-५१ मे ५१ लाख टन से बढ़कर १९५५-५६ में ५५ लाख टन हो जाने की आशा थी। पहली योजना मे इनके लिए यही लक्ष्य निर्धारित किया गया था। दूसरी पंचवर्षीय योजना मे ५ प्रमुख तिलहनों का उत्पादन बढाकर ७० लाख टन कर देने का विचार है, जिसका विवरण इस प्रकार है :—

	(लाख टन)
मूगफली	४७·००
तिल	६·५१
अलसी	४·२८
राई और सरसों	१०·६०
रेंडी	१·६१
योग ...	७०·००

अच्छी किस्म के बीजों के उत्पादन और वितरण के लिए भारतीय केन्द्रीय तिलहन समिति ने पहली योजना मे जो योजनाएं आरम्भ की थीं उनके बहुत अच्छे परिणाम निकले हैं। दूसरी योजना मे अधिकाधिक रूप से इन उन्नत बीजों का प्रचार करने का प्रस्ताव रखा गया है। राज्यों की योजनाओं में सम्मिलित अन्य योजनाएं ये हैं : उर्वरकों तथा खाद का प्रयोग, कीड़ों

और बीमारियो की रोकथाम, तथा और अधिक अच्छी तथा नई किस्मे तैयार करने के लिए शोध की व्यवस्था। तिलहनों के लिए और अधिक अच्छी हाट-व्यवस्था करने के लिए भी प्रयत्न किए जाएगे।

२०. तिलहनों के अतिरिक्त उत्पादन से वनस्पति, चर्बियों तथा वनस्पति तेलों की उपलब्धि मे कितनी वृद्धि होगी, इस बात पर विचार करते हुए अन्य महत्वपूर्ण खाद्य तेल—नारियल के तेल के उत्पादन, निर्यात के लिए आवश्यक मात्रा, औद्योगिक खपत आदि को भी ध्यान मे रखना होगा। पांच प्रमुख तेलों तथा बिनौले और नारियल के तेल के बारे मे जो स्थिति है वह नीचे की तालिका मे स्पष्ट की गई है :

(हजार टन तेल)

—	अनुमानित १९५४-५५	अनुमानित १९६०-६१
कुल उत्पादन	१७६०	२११४
खाने के लिए	११३९	११९२
वनस्पति निर्माण के लिए	२५९	४३०
औद्योगिक कार्यो के लिए	२२४	२७८
निर्यात	१३८	२१४

इसके अनुसार मूगफली के तेल का निर्यात लक्ष्य ५ लाख टन तथा अन्य तेलों का (बीज के सम्बन्ध मे) निर्यात लक्ष्य २ लाख टन है। बिनौले के तेल और जो तेल खीचकर तैयार किए जाते है उनके उत्पादन और निर्यात बढ़ाने पर भी जोर दिया जाएगा।

२१. **गन्ना**—हाल के वर्षो में चीनी और गुड़ की खपत निरन्तर बढ़ी है। १९५०-५१ मे जब कि नियन्त्रण की स्थिति थी, १०·७ लाख टन चीनी की खपत हुई। दूसरी योजना में दानेदार चीनी का उत्पादन २२·५ लाख टन तक बढ़ा देने का विचार है और १९६०-६१ के अन्त तक चीनी मिलो की उत्पादन क्षमता २५ लाख टन तक हो जाएगी। चीनी के कारखानों को और अधिक मात्रा मे गन्ना मिल सके तथा गुड़ की खपत भी बढ सके, इसलिए गन्ने के १३ लाख टन अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। इससे १९५५-५६ मे प्रत्याशित गन्ने का कुल उत्पादन ५८ लाख टन से बढ़कर १९६०-६१ मे ७१ लाख टन हो जाएगा। परिणामत. प्रतिदिन प्रति वयस्क व्यक्ति १·७२ औस गुड़ प्राप्त होगा। गन्ने की भरपूर खेती के लिए जो योजनाए है उनमे ये बातें सम्मिलित है : सिचाई की सुविधाओ की व्यवस्था, बीज-घर स्थापित करना, रोगमुक्त एवं उन्नत प्रकार के बीजों का वितरण, खाद तथा उर्वरको का वितरण, कीड़ों और बीमारियो की रोकथाम, प्रदर्शनो एवं फसल प्रतियोगिताओ का सगठन। मुख्य बल इस बात पर दिया जाएगा कि गन्ने मे मिठास की वृद्धि हो जिससे चीनी अधिक बने और गन्ना पेरने के मौसम मे अधिक से अधिक मात्रा मे गन्ना उपलब्ध किया जा सके।

२२. **नारियल**—संसार मे सबसे अधिक नारियल पैदा करने वाले देशों मे भारत का स्थान दूसरा है। भारत मे प्रतिवर्ष लगभग तीन अरब अस्सी करोड नारियल पैदा होते हैं। फिर भी नारियल के तेल की दृष्टि से देश में ४०,००० टन की कमी है। आबादी मे और अधिक

वृद्धि हो जाने तथा खपत का स्तर और अधिक बढ जाने के कारण आशा है कि १९६०-६१ में नारियल के तेल की यह कमी ८०,००० टन बढ़ जाएगी। अल्पकालीन और दीर्घकालीन प्रकार के उपायो द्वारा १९६०-६१ तक नारियल का उत्पादन तेल की दृष्टि से २,१०,००० टन तक बढ़ाने का विचार है, जबकि इस समय यह उत्पादन १,३०,००० टन है। अल्पकालीन कार्यक्रम के अन्तर्गत नारियल की बुवाई के उन्नत तरीकों का प्रचार करने के लिए प्रदर्शन केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। साथ ही यह भी बताया जाएगा कि फसल को कीड़ो और बीमारियों से किस प्रकार बचाया जाए। दीर्घकालीन कार्यक्रम के अनुसार उपयुक्त परती भूमि मे खेती करके नारियल के कृषि क्षेत्र को बढाया जाएगा तथा और अधिक अच्छी किस्म के पौधो के वितरण के लिए नर्सरियों का विकास किया जाएगा। नारियल की प्रति वृक्ष पैदावार ३० से बढाकर ४५ कर देने की भी योजना बनाई गई है।

२३. **सुपारी**—नारियल की भाति देश में सुपारी की भी कमी है। सुपारी का वर्तमान उत्पादन ८१,००० टन है, जबकि आवश्यकता १,१८,००० टन की है। आबादी बढ जाने और खपत के स्तर मे वृद्धि हो जाने के कारण १९६०-६१ के अंत मे १,२९,००० टन सुपारी की आवश्कता होगी। लेकिन चूकि सुपारी के पेड़ पर ८ से १० वर्ष की अवधि में फल लगता है, इसलिए सुपारी के कृषि क्षेत्र मे वृद्धि करने से जो परिणाम निकलेंगे वे तीसरी योजना की अविधि मे ही मालूम होंगे।

फिर भी खेती के भरपूर उपायो, कीड़ों और बीमारियों की रोकथाम, अच्छे किस्म के बीज वितरण आदि उपायों द्वारा सुपारी के उत्पादन मे लगभग २५ प्रतिशत वृद्धि करने का विचार है। प्रति एकड़ ६५८ पौड औसत पैदावार को बढ़ाकर ८२० पौड कर देने के प्रयत्न किए जाएगे। १९६०-६१ के अत तक सुपारी के उत्पादन का लक्ष्य ९९,००० टन होगा। भारतीय केन्द्रीय सुपारी समिति ने सुपारी बोने के लिए उपयुक्त परती भूमियो का सर्वेक्षण किया है, और दूसरी योजना मे इन सम्भावनाओं की पूरी तरह से जाच करने और उनका लाभ उठाने का विचार है।

२४. **लाख**—कच्ची लाख से चपड़ा और कणात्मक लाख बनाई जाती है। दोनो ही निर्यात व्यापार की बड़ी महत्वपूर्ण वस्तुए है। पिछले कुछ वर्षों में लाख का उत्पादन ३७,००० से ४८,००० टन तक रहा है। १९५५-५६ मे ४४,००० टन उत्पादन की आशा थी। अतिरिक्त उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित करते समय निर्यात की सम्भावनाओं तथा विदेशी लाख और कृत्रिम वस्तुओं के साथ प्रतियोगिता को भी ध्यान में रखना चाहिए। दूसरी योजना में लाख का उत्पादन बढाकर ५९,००० टन तक कर देने का लक्ष्य है। इसकी किस्म में सुधार करने पर भी जोर दिया जाएगा। इन उद्देश्यो की पूर्ति के लिए विभिन्न क्षेत्रों मे प्रादेशिक शावक फार्म (ब्रूड फार्म) स्थापित किए जाएंगे, पौधो का सर्वेक्षण किया जाएगा और लाख की खेती के बारे मे प्राविधिक शिक्षण दिया जाएगा। लाख पैदा करने वाले महत्वपूर्ण क्षेत्रों में लाख विस्तार सेवा सगठित करने का भी विचार है। इसके अतिरिक्त, क्रय-विक्रय के महत्व-पूर्ण केन्द्रों मे लाख के सग्रह के लिए वातानुकूलित तथा साधारण गोदाम स्थापित करने का विचार है।

२५. **तम्बाकू**—संसार के सबसे अधिक तम्बाकू पैदा करने वाले देशों में अमरीका और चीन के बाद भारत का स्थान है। १९५४-५५ में २,५०,००० टन तम्बाकू पैदा हुआ। तम्बाकू

की खेती के बारे में जो असली समस्या है, वह इसका उत्पादन बढ़ाने के सम्बन्ध मे इतनी नही है जितनी कि इसकी किस्म सुधारने के विषय मे। प्रतिकूल मौसम होने के कारण हाल के वर्षो मे अधिकांश फसल घटिया किस्म की पैदा हुई और उसको बेचना मुश्किल हो गया। परिणामतः बहुत सारा स्टाक जमा हो गया और इस कारण दाम गिर गए। दूसरी योजना के कार्यक्रम मे उत्पादन तो बहुत अधिक नही बढ़ाया जाएगा किन्तु इसकी किस्म सुधारने पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाएगा।

२६. **काली मिर्च**—काली मिर्च डालर अर्जित करने का महत्वपूर्ण साधन है और तिरुवांकुर-कोचीन, मलाबार तथा दक्षिण कनारा मे इसका स्थानीय महत्व भी है। हाल के वर्षो मे भारत को अन्य देशों की प्रतियोगिता का सामना करना पडा है। काली मिर्च का किस प्रकार विकास किया जाए और इसके बारे में क्या शोध की जाए, इस बारे मे एक विशेष समिति ने अपने सुझाव दिए है। १९५४-५५ में इस बारे में एक योजना आरम्भ की गई थी और दूसरी योजना में उस पर और अधिक कार्य किया जाएगा। इस योजना का लक्ष्य मिर्च के कृषि क्षेत्र मे लगभग ५०,००० एकड़ की वृद्धि करना है तथा इसके उत्पादन को २६,००० टन से बढाकर ३२,००० टन तक पहुंचा देना है।

२७. **काजू**—काजू डालर अर्जित करने का एक अन्य महत्वपूर्ण साधन है। इसका वार्षिक उत्पादन लगभग ६०,००० टन है और मुख्यतः वह मद्रास और तिरुवांकुर-कोचीन मे पैदा होता है। यद्यपि कुछ अन्य देशो, विशेषतः पूर्वी अफ्रीका में व्यावसायिक पैमाने पर काजू का सग्रह किया जाता है, किन्तु काजू के विधायन मे व्यावहारिक रूप से भारत का ही एकाधिकार है। काजू के विधायन के बारे मे निरन्तर बढती हुई प्रतियोगिता की दृष्टि से देश में काजू के उत्पादन मे विकास करने की बडी भारी आवश्यकता है। मसाला जाच समिति ने यह सुझाव दिया था कि मद्रास के पूर्वी तटवर्ती जिलों, कोंकण के तटवर्ती जिलों और पश्चिमी तट पर अन्य क्षेत्रो में बागान आधार पर काजू की खेती की जानी चाहिए। जिन कारखानो मे काजू तैयार किया जाए उनके आस-पास ही काजू की खेती होनी चाहिए। मध्य भारत, मैसूर, कुर्ग, आध्र, उड़ीसा, पश्चिम बगाल और अडमान द्वीप मे भी काजू की खेती करने की गुजाइश है। १९६०-६१ के अन्त तक काजू का उत्पादन ६०,००० टन से बढ़ाकर ८०,००० टन तक पहुचा देने का विचार है।

२८ **चाय, काफी और रबड़**—चाय, काफी और रबड़ के उत्पादन एवं अन्य कार्यक्रमों के सम्बन्ध मे बागान जाच आयोग ने विचार किया है। १९५० और १९५४ के बीच चाय का उत्पादन ६१ करोड़ ३० लाख से ६४ करोड़ ४० लाख पौंड तक रहा है, और इसका निर्यात ४२ करोड़ ७० लाख से ४७ करोड़ पौंड तक हुआ है। सामान्यत ऐसा प्रतीत होता है कि योजना के अन्त तक चाय का उत्पादन लक्ष्य, जो ७० करोड पौंड है, प्राप्त किया जा सकेगा और इसी प्रकार इसका निर्यात भी लगभग ४७ करोड़ से ५० करोड़ पौड तक होने लगेगा। काफी बोर्ड ने काफी का उत्पादन बढ़ाने के लिए एक १५ वर्षीय विकास कार्यक्रम की जाच की है जिसके अनुसार काफी का उत्पादन २५,००० टन से बढ़कर ४८,००० टन हो जाएगा। जितनी वृद्धि होगी, उसमे से १०,००० टन की वृद्धि भरपूर खेती और वर्तमान बागानो को सुधारकर की जाएगी और १३,००० टन की वृद्धि सुधार एव नए बागान लगाकर की जाएगी। वाणिज्य तथा उद्योग मत्रालय ने रबड़ बोर्ड द्वारा तैयार की गई एक योजना पर विचार किया है जिसके अनुसार १० साल की अवधि में ७,००० एकड़ प्रति वर्ष के

हिसाब से ७०,००० एकड क्षेत्र में रबड़ की खेती की जाएगी और २,००० एकड प्रति वर्ष के हिसाब से १०,००० एकड़ नई भूमि मे रबड की खेती की जाएगी। चाय, काफी और रबड के लिए निश्चित कार्यक्रम अभी स्वीकृत नही हुए है।

विकास कार्यक्रम

२९. यह बात पहले ही स्पष्ट की जा चुकी है कि किसी योजना के अंतर्गत कार्यान्वित विकास कार्यक्रमों तथा कृषि उत्पादन के स्तर के बीच कोई निश्चित सम्बन्ध स्थापित करना कठिन है। केवल कुछ समय के बाद ही ऐसी प्रवृत्तियों का अध्ययन किया जा सकता है। किसी एक प्रकार की फसलों, जैसे खाद्यान्नो के उत्पादन का कार्यान्वित किए गए विकास कार्यक्रमों के साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकना या विभिन्न प्रकार की फसलों के उत्पादन पर इन कार्यक्रमों का जो प्रभाव पड़ता है उसे अलग-अलग बता सकना और भी अधिक कठिन है। फिर भी, पहली योजना की तरह सम्भावित उत्पादन मे, विशेषत खाद्यान्नो के उत्पादन मे वृद्धि के सम्भव साधनो की जांच के लिए प्रयत्न किया गया है। पूर्व उल्लिखित एक करोड़ टन की वृद्धि मोटे तौर पर निम्नलिखित कार्यक्रमों से होगी :

	(लाख टन)
सिंचाई के बडे साधनों से	२४
सिंचाई के छोटे साधनों से	१८
उर्वरक और अन्य खादों से ...	२५
उन्नत बीजों से	१०
भूमि को खेती योग्य बनाने और उसके विकास से .	८
कृषि प्रणाली मे आम सुधार से	१५
योग	१००

हालांकि पिछले कई वर्षो मे सिचाई या उर्वरकों के प्रयोग अथवा अन्य कारणों से खाद्य उत्पादन मे वृद्धि को जानने के लिए मोटे पैमाने तैयार किए गए है, फिर भी इन्हें बहुत अधिक प्रामाणिक नही माना जा सकता। यह जानने के लिए कि विभिन्न कार्यक्रमों का अलग-अलग क्या प्रभाव होता है और ऐसे तरीके निकालने के लिए कि जिनसे यह ठीक-ठीक पता चल सके कि सामान्य मौसम में उत्पादन में कितनी वृद्धि होगी, बहुत अधिक अध्ययन की आवश्यकता है। सिचाई, उर्वरकों और खेती के सुधरे हुए तरीकों आदि कार्यक्रमों का निस्संदेह एक-दूसरे पर प्रभाव पडता है और वे अन्योन्याश्रित है। इसके अतिरिक्त, कृषक खेती के सुधरे हुए तरीकों से खेती करने लगेगा और जब वह उन उपलब्ध साधनो को जान जाएगा जिनका उसकी चारों ओर की परिस्थिति पर प्रभाव पड़ता है और जब स्थानीय जनता कार्य करने के लिए और अधिक संगठित हो जाएगी, तब सिंचित क्षेत्रों के उत्पादन पर काफी प्रभाव पड़ने की सम्भावना है।

३०. दूसरी पंचवर्षीय योजना में २ करोड़ १० लाख एकड़ भूमि में सिचाई की जाने की आशा है—१ करोड़ २० लाख एकड भूमि में सिचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओ से और ९० लाख एकड़ में सिचाई के छोटे-छोटे साधनों द्वारा। राज्यों के कृषि कार्यक्रमो में सिचाई के छोटे-छोटे कार्यो की आंशिक रूप से व्यवस्था की जाती है और उसी अंश में

राष्ट्रीय विस्तार एवं सामुदायिक विकास कार्यक्रमों में भी ऐसा किया जाता है। पहले कार्यक्रम में यह भी व्यवस्था है कि राज्यों की नलकूप योजनाओं द्वारा लगभग १० लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जाएगी। विभिन्न राज्यों में ३,५०० से अधिक उत्पादन नलकूप बनाए जाने की आशा है। अब तक उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और पेप्सू में ही नलकूप बने है। दूसरी योजना में नए प्रदेशो मे नलकूप कार्यक्रम कार्यान्वित किया जाएगा। एक प्रारम्भिक नलकूप योजना के अन्तर्गत भूगर्भस्थ जल की प्राप्ति के लिए इन प्रदेशों की जाच की जा रही है। सिचाई के लघु कार्यक्रम की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि राज्यों के कृषि विभाग तथा राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यो के लिए उत्तरदायी जिला विकास कर्मचारियों के बीच पूरा-पूरा सहयोग हो। प्रत्येक राज्य और जिले में इन दोनों को मिलाकर सिंचाई के लघु कार्यो का कार्यक्रम तैयार करना चाहिए और यह तय करना चाहिए कि सिचाई के लक्ष्य क्या हों। सिचाई के उपयुक्त छोटे-छोटे कार्यो की स्थापना के लिए वैज्ञानिक सर्वेक्षणों की आवश्यकता है। पिछले दस वर्षो मे प्रत्येक क्षेत्र मे सिंचाई के बहुत-से कार्य जो दीर्घ-काल से आवश्यक और संभव समझे जा रहे थे किए गए है, और अब नए रूप से जांच करना जरूरी है। अभी हाल मे खाद्य और कृषि मंत्रालय ने मध्य प्रदेश, हैदराबाद और बम्बई राज्य के पूर्वी भागों में, जहां खाद्यान्न की कमी हो जाती है, जल साधनों का सर्वेक्षण आरम्भ किया है। एक दूसरा पहलू जिसकी ओर फिर से ध्यान दिया जाना चाहिए, यह है कि सिचाई के छोटे-छोटे साधनों के निर्माण के साथ-साथ पुराने अधिकांश साधनों का उपयोग नही किया जा रहा है। यह सुझाव दिया गया है कि राज्य सरकारों को सिंचाई के छोटे-छोटे कार्यो की देखभाल के लिए विद्यमान व्यवस्थाओं की समीक्षा करनी चाहिए और जहा आवश्यक हो, उन्हे नए कानून बनाने चाहिए जिनसे कि ग्रामीण जनता पर काफी जिम्मेदारी डाली जा सके ताकि यदि सिचाई के छोटे साधनों की देखभाल न की जाए तो उनकी मरम्मत की जा सके और सम्बद्ध ग्रामीण जनता से उनकी लागत वसूल की जा सके। कई राज्यो के पंचायत कानून मे यह व्यवस्था की गई है कि जनता मेहनत-मजदूरी करके अपना सहयोग दे। इस प्रकार की सहायता का उपयोग सिंचाई के स्थानीय साधनों की देखभाल के लिए किया जाना चाहिए।

३१. १९५५ में नत्रजन उर्वरक की खपत ६,१०,००० टन थी, जिसे दूसरी योजना मे बढ़ाकर १८ लाख टन कर देने का विचार है। फास्फेट उर्वरको की खपत भी बढाई जाएगी। योजना में कूड़े और कचरे की खाद के उपयोग की भी व्यवस्था की गई है। सब क्षेत्रो में हरी खाद, खली और अन्य खादो के प्रयोग की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना मे रासायनिक उर्वरकों की और अधिक पैमाने पर प्राप्ति तथा वितरण के कारण केन्द्र तथा राज्यों की वर्तमान प्रशासनिक प्रबन्धों को और सुदृढ बनाने का सवाल पैदा होता है। केन्द्रीय सरकार ने १९४४ से केन्द्रीय उर्वरक संगठन नामक एक व्यापारिकयो जना कार्यान्वित की है। इस संगठन का कार्य यह है कि वह राज्यों तथा उपभोक्ताओं की, उदाहरणार्थ चाय और काफी बागान उपभोक्तओं की जरूरतें मालूम करे, आवश्यक मात्रा में उर्वरक प्राप्त करे, मूल्य निश्चित करे और उर्वरको के वितरण के लिए आवश्यक प्रबन्ध करे। राज्यों मे राज्य सरकारें ही सरकारी बिक्री केन्द्रों, निजी वितरण संस्थाओं तथा सहकारी संगठनों द्वारा उर्वरको का वितरण करती है। विभिन्न राज्यों में वितरण की व्यापक व्यवस्थाएं अलग-अलग है। चूंकि नए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जा रहा है और देश में खाद विषयक परीक्षण किए जा रहे हैं, इसलिए यह बात बड़ी महत्वपूर्ण है कि उर्वरकों के प्रयोग के सम्बन्ध

में अधिक से अधिक व्यापक पैमाने पर जानकारी कराई जाए और कृषकों को पर्याप्त पथ-प्रदर्शन तथा सहायता दी जाए। जिन केन्द्रों से उर्वरक खरीदे जा सके, उनकी सख्या मे काफी वृद्धि करने की जरूरत है। यह भी जरूरी है कि उर्वरकों का इतना स्टाक जमा रखा जाए कि उनकी उपलब्धि मे कभी कोई कमी न आ सके। और अन्तिम बात यह है कि गांवों मे उर्वरको के वितरण के लिए मुख्यत. सहकारी समितियो का ही उपयोग किया जाना चाहिए।

३२. राज्यों की योजनाओं में बीज विकास के लगभग ३,००० फार्मों की व्यवस्था है, जिनके अन्तर्गत कुल मिलाकर लगभग ९३,००० एकड क्षेत्र आता है। सामान्यतः प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड मे एक बीज फार्म और एक बीज गोदाम होगा। स्थानीय फार्मों में उत्पन्न बीज को रजिस्टर-शुदा बीज उत्पादकों के फार्मों मे और अधिक विकसित किए जाने के बाद खेतिहरो को दिया जाएगा। बीज विकास और वितरण कार्यक्रम को और भी अधिक आगे बढ़ाना होगा ताकि राष्ट्रीय विस्तार क्षेत्रो की सारी जरूरते पूरी की जा सके। बीज की जांच करने के केन्द्र भी खोले जाएगे जिससे कि कुछ प्रकार के बीजो, विशेषतः सब्जी उगाने के लिए किस्मों के मानदण्ड निर्धारित किए जा सके और उनके अनुसार ही कार्य कराया जा सके। कई राज्यो ने सहकारी बीज गोदाम स्थापित करने के लिए भी कार्यक्रम बनाए है। दूसरी योजना मे जापानी ढग से धान की खेती किए जाने वाला क्षेत्र १६ लाख एकड़ से बढकर ४० लाख एकड हो जाएगा।

३३. दूसरी योजना मे केन्द्रीय और राज्य ट्रैक्टर संगठनों, किसानो के व्यक्तिगत परिश्रम तथा अन्य साधनों द्वारा १५ लाख एकड़ भूमि को फिर से खेती योग्य बनाने और २० लाख एकड से अधिक क्षेत्र में भूमि सुधार के कार्यक्रम आरम्भ करने का विचार है। तैयार किए गए एक कच्चे कार्यक्रम के अनुसार अगले दो वषो में केन्द्रीय ट्रैक्टर सगठन लगभग ९६,००० एकड़ परती और जंगली भूमि को खेती योग्य बनाएगा और जिसमें पहले खेती की जा चुकी है ऐसी १,४९,००० एकड भूमि की जुताई करेगा। भोपाल मे एक ट्रैक्टर प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किया जा चुका है और एक अन्य केन्द्र खोलने का विचार है ताकि ट्रैक्टरों के मिस्त्रियों और चालकों को प्रशिक्षण के अवसर मिल सकें। योजना मे ट्रैक्टरो की जांच करने वाला एक केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था की गई है जो भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल सब प्रकार के ट्रैक्टरों की उपयुक्तता की जांच करने के अलावा डीजल इंजनों तथा पम्पिग सेटो की भी जांच करेगा।

३४. राज्यों के विस्तार कार्य मे शुष्क खेती (बिना नहरों वाली कृषि भूमि) के तरीकों से जो सहायता मिल सकती है उसकी ओर अभी तक पर्याप्त ध्यान नही दिया गया है। जिस पैमाने पर सिंचाई के कार्यक्रम किए जा रहे है, उसके बावजूद बहुत-सी भूमि को वर्षा पर निर्भर रहना होगा। इसलिए शुष्क खेती की सर्वोत्तम प्रणालियों को व्यापक रूप से अपनाने के महत्व पर विशेष जोर देना होगा। विशेषत· जल और भूमि दोनों के संरक्षण के लिए विस्तार और सामुदायिक योजना कार्यों के क्षेत्रों में ऊंची-नीची जमीन पर समोच्च बाध बनाने को खास तौर पर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यद्यपि देश के कुछ भागों मे यान्त्रिक साज-सामान की व्यवस्था करना आवश्यक है, फिर भी सामान्यतया स्थानीय श्रमिकों के द्वारा ऊंची-नीची जमीन में समोच्च बांध बनाने का कार्य किया जा सकता है और इस कार्य में प्रशिक्षित कृषि कर्मचारियों की आवश्यक सहायता एवं परामर्श प्राप्त किया जाना चाहिए। बम्बई, सौराष्ट्र, मध्य प्रदेश, हैदराबाद, विंध्य प्रदेश, भोपाल और उत्तर प्रदेश आदि राज्यों ने इस प्रकार के बाध बनाने के

लिए बड़े-बड़े कार्यक्रम बनाए है । दूसरी योजना की अवधि मे इन राज्यों में १५ लाख एकड़ से अधिक भूमि मे इस प्रकार के बांध बनाए जाएंगे ।

कई राज्यो मे शुष्क क्षेत्रों मे चकबन्दी के महत्व को पूरी तरह से अनुभव नही किया जा रहा है । जिन क्षेत्रो मे कूओं जैसे सिंचाई के छोटे-छोटे साधन जुटाए जा सकते है, वहा निस्संदेह चकबन्दी के और भी अधिक लाभ है, किन्तु शुष्क खेती की परिस्थितियो मे भी चकबन्दी के काफी लाभ है । इस विषय पर भूमि सुधार एव कृषि पुनर्गठन सम्बन्धी अध्याय मे और अधिक विस्तार से विचार किया गया है ।

३५. पौधो को कीड़ों से बचाने की दिशा मे, विशेषत: टिड्डी नियत्रण के सम्बन्ध मे सरकारी अभिकरणो ने महत्वपूर्ण कार्य किया है । किसान अपनी फसल को कीड़ो और बीमारियों से किस प्रकार बचाए, इस बारे मे उसे शिक्षित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए । इसी प्रकार राज्यों के कृषि विभागों को बैलों द्वारा चलाए जाने वाले उपयुक्त प्रकार के खेती के औजार तैयार करने के लिए और अधिक एव निरन्तर अध्ययन करना चाहिए । योजना काल मे केन्द्रीय तथा राज्य सरकारे पौधों को कीड़ों से बचाने के अपने-अपने कार्य और अधिक तेजी से करेगी । मुख्य बन्दरगाहों तथा हवाई अड्डों पर ऐसे केन्द्र स्थापित किए जाएंगे जहा बीमारी लगे पौधो को अलग कर दिया जाएगा । पहली पचवर्षीय योजना मे पौधो के संरक्षण सम्बन्धी उपकरणों के लिए चार केन्द्र स्थापित किए गए थे । इन्हे सुदृढ किया जाएगा और १० नए केन्द्र स्थापित किए जाएगे । टिड्डी दल के बारे मे जाच करने के लिए एक क्षेत्रीय केन्द्र भी स्थापित किया जाएगा ।

खाद्य और कृषि मत्रालय ने एक ऐसी योजना बनाने की व्यवस्था की है जिसके अनुसार खेती के औजारो को सुधारा जाएगा और नए प्रकार के औजार बनाए जाएगे । पिछले वर्षो मे देश के कई केन्द्रो मे यह कार्य किया गया है और दूसरी योजनाओं मे इसे और अधिक तेजी से करने की जरूरत है । अनेक राज्यो ने किसानो को उचित मूल्य पर खेती के सुधरे हुए औजार देने की व्यवस्था की है ।

पश्चिमी देशों मे खेती की उन्नत प्रणालियो के विकास में कृषि सम्बन्धी पत्र-पत्रिकाओ, पुस्तिकाओं तथा अन्य प्रकार के साहित्य से बड़ी सहायता मिली है । भारतीय कृषि शोध परिषद ने इस दिशा मे कदम उठाए है और खाद्य और कृषि मंत्रालय की योजना मे इस प्रकार के अन्य कार्यो की व्यवस्था की गई है । यह भी एक ऐसा कार्य है जिसे राज्यो के कृषि एव विस्तार अधिकारियो तथा अन्य सगठनों को उच्च प्राथमिकता देनी चाहिए ।

बाग-बगीचे

३६. आगे आने वाले अध्यायों मे पशुपालन, डेरी और दूध की उपलब्धि, वन तथा भूमि संरक्षण सम्बन्धी कार्यक्रमो का विस्तार से विवेचन किया गया है, किन्तु दूसरी पचवर्षीय योजना मे सब्जियों और फसलों की खेती के विकास के लिए जो कार्य किए जाएगे, उनके बारे में यहां उल्लेख कर देना उचित होगा । उत्पादन के वर्तमान स्तर पर फल और सब्जिया क्रमश. लगभग १·५ और १ औस प्रति व्यक्ति उपलब्ध है । संरक्षक खाद्यो की उपलब्धि बढाने तथा कृषि उत्पादन मे और अधिक विभिन्नता लाने के लिए फलों तथा सब्जियो के उत्पादन मे वृद्धि करना आवश्यक है । बाग-बगीचों के विकास के लिए योजना मे ८ करोड रुपए की व्यवस्था की गई है । नए बगीचे लगाने के लिए कृषकों को दीर्घकालीन ऋण दिए जाएंगे और वर्तमान बगीचों को ठीक-ठाक करने के लिए अल्पकालीन ऋण की व्यवस्था की जाएगी ।

नई नर्सरियां भी स्थापित की जाएंगी। मालियों के प्रशिक्षण और राज्यों के बाग-बगीचो कर्मचारियों की संख्या मे वृद्धि करने के लिए भी व्यवस्था की गई है। राज्यो की योजनाओं लगभग ५,००,००० एकड़ वर्तमान बगीचों को ठीक-ठाक करने और लगभग २,००,०० एकड़ जमीन में नए बगीचे लगाने की व्यवस्था की गई है। सब्जी उगाने वालों को अच्छे किस्म के बीज उधार देकर तथा उन्हें टेकनीकल परामर्श देकर विशेषतः शहरो के आसपास सब्जियो के उत्पादन को प्रोत्साहित किया जाएगा। राज्यों की योजनाओं मे आलू के बीज के विकास के लिए भी व्यवस्था की गई है। फल और सब्जी पैदा करने वालों के लिए क्रय-विक्रय सहकारी समितिया संगठित करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा। फल विकास एवं सब्जियों के सरक्षण के लिए, डिब्बा बन्द उद्योग की सहायता के लिए तथा ठडे गोदाम स्थापित करने के लिए खाद्य और कृषि मन्त्रालय ने १·७५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की है। डिब्बा बन्द फल और सब्जियो का वार्षिक उत्पादन २०,००० टन से बढाकर ५०,००० टन तक पहुंचा देने का विचार है। योजना मे फलों एवं सब्जियों से बनी सरक्षित वस्तुओं के निर्यात को प्रोत्साहन देने की भी व्यवस्था की गई है और आशा है कि योजना के अन्त तक इन चीजो का निर्यात १,००० टन से बढकर ११,००० टन हो जाएगा।

कृषि सम्बन्धी शोध और शिक्षा

३७. राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक योजना के अधिक उन्नत क्षेत्रों में कृषकों को जो शोध सम्बन्धी परिणाम बताए गए थे, वे उन्होने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिए हैं तथा और अधिक सूचना की मांग की है। ऐसी सम्भावना है कि पुरानी और नई समस्याओं के समाधान की मांग दूसरी पंचवर्षीय योजना में और तेजी से बढ़ेगी। इस मांग को पूरा करने के लिए कृषि विभागों तथा संस्थाओं को तैयार रहना चाहिए। पिछले कई वर्षों से भारतीय कृषि शोध परिषद और उससे सम्बद्ध संस्थाएं अलग-अलग समस्याओं की जांच-पड़ताल करने में लगी रहीं है। शोध के परिणामो को कार्यान्वित करने में ढिलाई हुई है और शोधको ने किसानों के दिन प्रतिदिन के अनुभवों और जरूरतों को ध्यान मे रखकर समस्याओ का विवेचन नही किया। दूसरी पचवर्षीय योजना मे उन जटिल समस्याओं पर अधिक ध्यान दिया जाएगा जो शोध एवं विकास के बीच एक कड़ी स्थापित करती हैं, और साथ ही आधारभूत समस्याओ के बारे में भी कार्य जारी रहेगा। ये कार्य केन्द्रीय और राज्य सरकारों तथा भारतीय कृषि शोध परिषद और राज्यों के कृषि कालेजों तथा अन्य सस्थाओ के सहयोग से किए जाएगे। हाल में कृषि सम्बन्धी शोध एव शिक्षा के संगठन विषयक कुछ प्रश्नों पर भारतीय और अमेरिकी विशेषज्ञों के एक संयुक्त दल ने विचार किया है।

३८ कृषि विषयक शोध के लिए योजना में लगभग १४·१५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है—४·६५ करोड़ रुपए केन्द्रीय माल समितियों द्वारा और ९·५० करोड़ रुपए खाद्य और कृषि मंत्रालय के कार्यक्रमों में। राज्यों की योजनाओं मे भी काफी संख्या में शोध सम्बन्धी योजनाएं हैं। भारतीय कृषि शोध परिषद इन योजनाओं में सहायता देगी। इस परिषद ने कई जाच-पडताल विषयक कार्य आरम्भ किए है, जो दूसरी योजना में जारी रखे जाएंगे। इनमें ये बातें सम्मिलित हैं: जिसमें रतुओं न लगे ऐसा गेहूं पैदा करना, कृषकों के खेतो में खाद सम्बन्धी परीक्षण करना ताकि खाद सम्बन्धी कार्यक्रम तैयार हो सके, और नए प्रकार के उर्वरक से खेत तैयार करना। भारत-अमेरिकी टेकनीकल सहयोग कार्यक्रम के अधीन जारी की गई एक योजना के अनुसार १८ केन्द्रों मे फसलों के उत्पादन और भूमि प्रबन्ध के

सम्बन्ध मे जो परीक्षण किए गए है, वे १६ अन्य केन्द्रों में भी किए जाएंगे। न्यासर्गीय तृणकघाती (हार्मोनल वीड़ी साइड्स) द्वारा नियन्त्रण के तरीकों की जांच के लिए पहली पंचवर्षीय योजना मे जो योजना आरम्भ की गई थी, उसका विस्तार किया जाएगा। बैलों से चलने वाले खेती के औजारों के लिए ४ शोध एवं जांच केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। अंकुरण के सम्बन्ध में उन्नत प्रकार के बीजों की किस्म की जाच के लिए और यह जानने के लिए कि झाड-झखाड के बीजों का कहां तक बुरा असर पड़ता है, आशा है ११ जांच केन्द्र स्थापित किए जाएगे। अपनी वर्तमान शोध प्रयोगशालाओं तथा फार्मो को सुदृढ करने के लिए राज्य सरकारों को सहायता दी जाएगी।

३९. भारतीय कृषि शोध संस्थान केन्द्रीय आलू शोध संस्थान केन्द्रीय चावल शोध संस्थान और गन्ना विस्तार संस्थान ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए आधारभूत शोध के बारे में कार्यक्रम बनाए है। भारतीय कृषि शोध संस्थान ने पहली योजना में भूमि की उर्वरता, उर्वरक के प्रयोग तथा गेहू में लगने वाले रतुए की रोकथाम के बारे में जांच-पड़ताल की थी, जिसके परिणामस्वरूप गेहूं की ऐसी किस्में निकल आई है, जिन्हें रतुआ नही लगता। हाल मे एक विशेषज्ञ समिति ने इसके शोध संगठन तथा कार्यक्रम की समीक्षा की है, और सिफारिश की है कि इसके विभिन्न विभागों को सुदृढ बनाया जाए। जिन नई दिशाओं में जांच-पडताल की जाएगी, उनमें से कुछ ये है · भूमि का प्रमापीकरण, भूमि के सम्बन्ध में शीघ्रता से जांच, कीड़ों को मारने वाली चीजों की जांच और उनको प्रमाणित करना, टिड्डियों को एक जगह एकत्र करना, पौधों की बीमारियों के कारण होने वाली हानि का निर्धारण तथा कृषि शोध विषयक समस्याओं के समाधान मे आणविक शक्ति का प्रयोग। बाग-बगीचों के लिए एक विभाग भी स्थापित किया जाएगा। संस्था के कार्यक्रमों के अनुसार विषाणु तत्वो की शोध के लिए प्रादेशिक केन्द्र, बीजों की जांच के लिए एक प्रयोगशाला और पौधों को लगाने के लिए एक ब्यूरो भी स्थापित किया जाएगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना मे कार्यान्वित करने के लिए संस्थान ने ६८ शोध विषयक योजनाएं बनाई है।

४०. पहली पंचवर्षीय योजना में केन्द्रीय आलू शोध संस्थान ने प्रायोगिक शोध तथा आलुओं के विकास के लिए एक एकीकृत योजना आरम्भ की थी। अब यह संस्थान रोगमुक्त बीजो का भंडार जमा रखने तथा सुधरी हुई किस्मों के उत्पादन की ओर विशेष ध्यान देगा। साथ ही आलुओ के अलावा अन्य कन्द फसलों के बारे में भी जांच करेगा। केन्द्रीय चावल शोध संस्थान चावल के सम्बन्ध में आधारभूत शोध कार्य करता रहा है और इस विषय मे सब प्रकार की सूचना का समन्वय केन्द्र रहा है। अब यह संस्थान और अच्छा चावल पैदा करने के लिए उप-केन्द्र स्थापित करेगा। भारतीय केन्द्रीय गन्ना समिति के तत्वावधान में गन्ना सम्बन्धी शोध की समस्याओ का अध्ययन किया जा रहा है। गन्ना सम्बधी शोध कार्यक्रम के अन्तर्गत जो कार्य किए जाएगें, वे ये हैं:—गन्ने की ऐसी किस्मो का अध्ययन जिनसे अधिक गन्ना पैदा हो और उससे अधिक चीनी प्राप्त हो, पैदावार तथा रस की किस्म की दृष्टि से उर्वरकों और खादों का इन किस्मों पर होने वाला प्रभाव, विभिन्न प्रदेशो के लिए सर्वाधिक उपयुक्त अदल-बदलकर गन्ना बोने की प्रणालियां, झाड़-झखाड और कुकुरमुत्ता से होने वाली बीमारियो की रोकथाम, रोग विरोधी शक्ति की प्राप्ति, फसलों मे लगने वाले कीडों पर जलवायु का प्रभाव, गुड बनाने तथा उसके संग्रह, कीड़ों और उन्नत प्रकार के कोल्हू तथा रस पकाने वाली भट्ठियों के बारे में शोध। भारतीय गन्ना शोध संस्थान भारतीय चीनी टेकनोलौजी सस्थान और गन्ना विकास संस्थान में कई शोध विषयक योजनाओं को कार्यान्वित किया जा रहा है।

४१ भारत सरकार द्वारा स्थापित सात केन्द्रीय हाट-व्यवस्था समितियो मे से हरेक ने अपने-अपने से सम्बन्धित फसल के बारे मे जाच-पड़ताल करने का एक कार्यक्रम बनाया है। इस प्रकार भारतीय केन्द्रीय कपास समिति की ७२ शोध योजनाओं के बारे मे इस समय जाँच-पड़ताल की जा रही है। यह समिति चार प्रादेशिक शोध केन्द्र स्थापित करेगी, बम्बई मे टेकनोलौजिकल प्रयोगशाला का पुनर्निर्माण कराएगी तथा लम्बे रेशे वाली कपास के सम्बन्ध मे शोध सम्बन्धी कार्य और तेजी से करेगी। कलकत्ता मे पटसन की टेकनोलौजिकल प्रयोगशाला का, जो भारतीय केन्द्रीय पटसन समिति के अधीन कार्य करती है, विकास किया जाएगा तथा उसे और सुदृढ बनाया जाएगा। भारतीय केन्द्रीय तिलहन समिति तेलों के लिए एक टेकनोलौजिकल सस्था स्थापित करेगी। इस समिति ने तिलहन की कुछ सुधरी हुई किस्मे तैयार की है और यह ऐसी किस्मो को पैदा करने के बारे मे और आगे कार्य करेगी जो सुधरी हुई हो और जिनसे तेल भी अधिक मात्रा मे प्राप्त हो। भारतीय केन्द्रीय तम्बाकू समिति तम्बाकू के बारे में अपना शोध कार्य और बढाएगी, क्योंकि हाल ही मे बढिया किस्म के तम्बाकू की पैदावार में कमी होने के कारण तम्बाकू के निर्यात मे भी कमी हो गई है। तम्बाकू की किस्म सुधारने के बारे मे विशेष जोर दिया जाएगा और राजमुन्द्री मे तैयार की गई नई किस्मों के वैज्ञानिक परीक्षण किए जाएगे। चूकि देश की आवश्यकताओ को पूरा करने की दृष्टि से नारियल का उत्पादन अपर्याप्त है, इसलिए भारतीय केन्द्रीय नारियल समिति अपने दो वर्तमान शोध केन्द्रो को सुदृढ करेगी और तीन प्रादेशिक शोध केन्द्रो का संगठन करेगी ताकि नारियल बोने की प्रणालियो को सुधारकर, अधिक पैदावार की किस्में तैयार करके और पौधो को कीडे एवं बीमारिया लग जाने के कारण होने वाली हानियों को कम करके प्रति वृक्ष नारियल की पैदावार बढ़ाई जा सके। सुपारी के सम्बन्ध में भी दीर्घकालीन कार्य के रूप मे शोध करनी होगी, क्योंकि देश मे सुपारी की भी कमी है। सुपारी की फसल हमेशा बनी रहती है और इस पर फल लगने मे ८ से १० वर्ष तक का समय लगता है। एक केन्द्रीय शोध केन्द्र और तीन प्रादेशिक शोध केन्द्र पहले ही स्थापित किए जा चुके है और भारतीय केन्द्रीय सुपारी समिति के तत्वावधान मे एक केन्द्रीय शिल्प विज्ञान सम्बन्धी प्रयोगशाला और तीन अन्य प्रादेशिक केन्द्र स्थापित करने का विचार है। लाख उपकर समिति भी लाख के प्रयोग के सम्बन्ध मे अपने शोध विषयक कार्य और तेजी से करेगी। दूसरी पचवर्षीय योजना मे फलों और सब्जियों के विकास के लिए कार्यक्रम बनाया गया है। इसके अतिरिक्त भारतीय कृषि शोध संस्थान मे बाग-बगीचो सम्बन्धी एक विभाग स्थापित किया जाएगा, साथ ही आम, अगूर, अनन्नास, सेब आदि महत्वपूर्ण फलों की फसलो मे सुधार करने के लिए प्रादेशिक आधार पर बाग-बगीचो सम्बन्धी शोध केन्द्र स्थापित करने का भी विचार है।

४२. उपर्युक्त प्रौद्योगिक शोध कार्यक्रमो के अतिरिक्त इस समय कृषि के आर्थिक पहलुओ का चार कृषि-अर्थ शोध केन्द्रो मे अध्ययन किया जा रहा है। ये केन्द्र १९५४-५५ में दिल्ली, शांति निकेतन, पूना और मद्रास मे स्थापित किए गए थे। योजना काल मे दो और कृषि-अर्थ केन्द्र स्थापित करने का विचार है। योजना आयोग की शोध कार्यक्रम समिति के तत्वावधान मे बम्बई, पंजाब, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, और मद्रास में कृषि फार्मो के प्रबन्ध के सम्बन्ध में अध्ययन किए जा रहे हैं। योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्याकन संगठन के कार्य के परिणामस्वरूप कृषि विकास के संस्थापन के पहलुओं के सम्बन्ध मे महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध हो रही है। इन अध्ययनों तथा ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण के सम्बन्ध मे भारत

के रिजर्व बैक द्वारा किए गए अन्य अध्ययनो की सहायता से भारतीय कृषि के सम्बन्ध मे महत्व-पूर्ण जानकारी की जो कमी है, उसके पूरा होने की आशा है। जिन चीजो के बारे मे जानकारी की कमी है, वे ये है : फार्मो की लागत, खेतो के आकार का आर्थिक पक्ष, कृषि मे बीज और पैदावार का सम्बन्ध, मिली-जुली खेती के आर्थिक पहलू, अर्ध रोजगार का परिमाण, ऋण की आवश्यकताएं, कर्जदारी, पूजी निर्माण आदि।

४३. सारे देश में राष्ट्रीय विस्तार सेवा लागू करने के निर्णय के साथ ही कृषि शिक्षा की उपलब्ध सुविधाओ मे विस्तार करने पर भी विचार किया गया था। बिहार, राजस्थान, तिरुवांकुर-कोचीन को नए कृषि कालेज स्थापित करने मे सहायता दी गई। असम, हैदराबाद, मद्रास, मध्य प्रदेश और पजाब मे वहां के वर्तमान कृषि कालजों को सुदृढ़ किया गया है। मध्य प्रदेश मे दो नए कालेज खोले जा रहे है। अब देश मे २८ कृषि कालेज हो गए है और ये संस्थाएं दूसरी पंचवर्षीय योजना मे कृषि स्नातकों की, जिनकी संख्या अनुमानत. ६,५०० होगी, समस्त आवश्यकता को पूरा कर सकेंगी। ग्राम-स्तर कार्यकर्ताओ के प्रशिक्षण के लिए वर्तमान ५४ प्रारम्भिक कृषि स्कूलो और ४४ विस्तार केन्द्रों के अलावा, २५ नए प्रारम्भिक कृषि स्कूल, २१ विस्तार केन्द्र और १६ प्रारम्भिक कृषि विभाग स्थापित करने का विचार है। ये सब विस्तार प्रशिक्षण केन्द्रो से सम्बद्ध होंगे।

कृषिजन्य वस्तुओं की क्रय विक्रय व्यवस्था

४४. कृषि सम्बन्धी हाट-व्यवस्था के विकास के लिए मुख्य रूप से विचारणीय बात यह है कि वर्तमान प्रणाली को इस प्रकार से पुनर्गठित किया जाए कि जिससे उपभोक्ता द्वारा अदा किए गए मूल्य का उचित भाग किसानों को मिल जाए और क्रमबद्ध विकास की आवश्यकताएं पूरी हो जाए। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कृषिजन्य वस्तुओ के खरीदने और बेचने के बार मे जो खराबिया विद्यमान है उन्हे दूर करना होगा। साथ ही ऐसे प्रबन्ध करने होंगे कि क्रय-विक्रय योग्य अतिरिक्त वस्तुओं को उत्पादन क्षेत्रों से उपभोग्य क्षेत्रो मे ले जाकर कुशलता-पूर्वक वितरित किया जाए। इसके अतिरिक्त सहकारी आधार पर हाट-व्यवस्था को अधिकाधिक रूप मे विकसित करना होगा। सहकारी आधार पर हाट-व्यवस्था और चीजों को तैयार करने की प्रणाली का विकास करके ग्रामीण हाट-व्यवस्था और वित्त का एकीकरण करना होगा। दूसरी पचवर्षीय योजना के लिए अब तक सहकारी हाट-व्यवस्था और निर्माण प्रणाली के सम्बन्ध मे जो कार्यक्रम बनाए गए है, वे पहले के एक अध्याय मे बताए गए है। यहा कृषि हाट-व्यवस्था के अन्य पहलुओं का उल्लेख करना अभीष्ट है। अनुमान है कि दूसरी योजना के अन्त तक सहकारी एजेसियो द्वारा क्रय-विक्रय योग्य अतिरिक्त पैदावार के लगभग दस प्रतिशत का क्रय-विक्रय किया जाने लगेगा। शेष बची हुई वस्तुए अन्य क्रय-विक्रय एजेंसियों द्वारा बेची जाती रहेगी। इसलिए यह किसान के हित की ही बात है कि बाजारों और बाजारो मे बरते जाने वाले तरीकों के नियमन की आवश्यकता पर विशेष जोर दिया जाए। इसके अतिरिक्त सहकारी आधार पर की जाने वाली हाट-व्यवस्था की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है कि नियमित बाजार कितनी कुशलता से काम करते है। यह देखने मे आया कि जिन राज्यो मे बाजारो का नियमन नही किया गया, वहा किसान को जो नुकसान उठाना पड़ता है, वह दूसरी जगह नही उठाना पडता।

४५. पिछले कुछ वर्षो में कृषि बाजारो के नियमन मे कोई विशेष प्रगति नही हुई। पहली पंचवर्षीय योजना मे यह सुझाव दिया गया था कि राज्य कृषि उत्पादन (बाजार) अधिनियम

को योजना काल के समाप्त होने से पहले ही सब महत्वपूर्ण बाजारों पर लागू कर देना चाहिए। योजना से पहले सात राज्यों में यह कानून लागू था। योजना काल मे केवल तीन और राज्यों ने कानून बनाया है। नियमित बाजारों की संख्या, जो १९५०-५१ मे २६५ थी, बढकर ४५० से अधिक हो गई है। कुछ राज्यों मे जहा आवश्यक कानून लागू है, वहा कई महत्वपूर्ण वस्तुओ, जैसे खाद्यान्नों, फलो, सब्जियो पशुओ आदि के व्यापार का नियमन किया जा रहा है। गांवों मे बिक्री की प्रणाली भी दूषित है, किन्तु अभी तक इसका नियमन नही किया गया। शहरों मे म्युनिसिपैलिटियों के बाजारों मे जहा माल वैसे भी पहुचता है और जहा उत्पादक खुद भी माल ले जाते है, अभी तक सामान्यत. राज्य कृषि उत्पादन (बाजार) अधिनियम लागू नही किया गया है। सहकारी आधार पर हाट-व्यवस्था के प्रस्तावों को छोड़कर अगले पांच साल के लिए कई राज्यो ने जो योजनाए बनाई है, उनमे कृषि बाजारों के नियमन के लिए पर्याप्त व्यवस्था नही की गई है। किन्तु इस उद्देश्य के लिए कुछ राज्यों ने अपने लक्ष्य निर्धारित किए है। जिन राज्यों ने ऐसा नही किया है, उन्हे वर्तमान स्थिति की समीक्षा करनी चाहिए तथा दूसरी पंचवर्षीय योजना मे समस्त महत्वपूर्ण थोक बाजारों के नियमन के लिए उपयुक्त कार्यक्रम बनाने चाहिए। अब तक जो कार्यक्रम तैयार हुए है, उनसे पता चलता है कि दूसरी पचवर्षीय योजना के अन्त तक नियमित बाजारो की सख्या दुगुनी हो जाएगी।

४६. यद्यपि कृषि उत्पादन (वर्गीकरण तथा हाट-व्यवस्था) अधिनियम १९३७ मे पास किया गया था, फिर भी कुछ निर्यात की जाने वाली वस्तुओं को छोड़कर, कृषि उत्पादन के वर्गीकरण के सम्बन्ध मे पर्याप्त प्रगति नही हुई है। निर्यात के लिए सन तम्बाकू का आवश्यक रूप से वर्गीकरण करने की प्रणाली युद्धकाल मे ही आरम्भ की गई थी। पहली पचवर्षीय योजना मे यह सुझाव दिया गया था कि निर्यात के लिए अन्य वस्तुए, जैसे ऊन, कड़े बाल, बकरी के बाल, लाख, भेड़ और बकरी की खाले, पूर्वी भारतीय कमाया हुआ चमड़ा, काजू, मिर्च, अदरक, तिलहन, तेल, गन्धयुक्त तेल तथा शाल्मली (रेशमी कपास) वृक्ष से प्राप्त कोमल, हल्का रोएदार रेशे आदि का आवश्यक रूप से वर्गीकरण किया जाए। योजना काल मे केवल ऊन, कडे बाल और कुछ गन्धयुक्त तेलो के बारे मे ही कुछ प्रगति हुई है तथा शेष वस्तुओं के सम्बन्ध में प्रारम्भिक कार्य किया गया है। पहली पंचवर्षीय योजना मे उल्लिखित सभी वस्तुओं के लिए शीघ्र ही आवश्यक रूप से वर्गीकरण करने का कार्य किया जाना चाहिए।

४७. निर्यात की जाने वाली वस्तुओं के लिए ही नही अपितु आन्तरिक व्यापार के लिए भी यह वर्गीकरण किया जाना आवश्यक है। अभी तक व्यापारियों की अपनी ही इच्छा पर यह काम छोड दिया गया था कि वे अपनी बनाई हुई वस्तुओं का एगमार्क वर्गीकरण कराएं या न कराए। मुख्यत. घी और वनस्पति तेलों का ही वर्गीकरण किया जाता रहा है। इन वस्तुओ के अलावा अन्य वस्तुओं का भी वर्गीकरण किया जाना चाहिए। किस्म और शुद्धता की जाच के लिए प्रयोगशाला की सुविधाए प्रदान की जानी चाहिए। इस दिशा में आरम्भिक कार्य के रूप मे नागपुर में केन्द्रीय किस्म प्रयोगशाला नियन्त्रण तथा ८ प्रादेशिक सहायक किस्म नियन्त्रण प्रयोगशालाएं स्थापित की गई है। आशा है कि दूसरी योजना की समाप्ति से पहले ये प्रयोगशालाएं कार्य आरम्भ कर देगी। किस्मों के नियन्त्रण के सामान्य कार्य के अतिरिक्त ये प्रयोगशालाएं विभिन्न वस्तुओं की श्रेणियों के नमूने निश्चित करने तथा उनमें संशोधन करने के सम्बन्ध मे जाच-पड़ताल करने का कार्य भी करेगी। कृषिजन्य वस्तुओं का वर्गीकरण, सहकारी व्यापार एवं गोदामों के विकास का भी एक आवश्यक अग है। कृषिजन्य वस्तुओं के

समन्वय तथा बड़ी मात्रा मे उनके संग्रह के लिए कुछ महत्वपूर्ण अनाजों, तिलहन, दालो, कपास, पटसन, मसालों आदि के बारे मे उपयुक्त श्रेणिया निश्चित करनी होगी। इस दिशा में कुछ कार्य किया गया है।

४८. अन्तर्राज्यीय व्यापार के लिए और कृषि की पैदावार की बिक्री को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि नाप-तोल तथा बिक्री और खरीद के ठेकों का प्रतिमानीकरण किया जाए। बहुत-से राज्यों मे नाप-तोल के सम्बन्ध मे कानून विद्यमान है, किन्तु उनमे से कुछ राज्यो ने निरीक्षण और देखभाल के लिए आवश्यक सगठन की व्यवस्था नही की है। नाप-तोल की मीटरिक प्रणाली अपनाने के लिए हाल में ही जो निर्णय किया गया है उस के कारण नाप-तोल सम्बन्धी कानून को कार्यान्वित करना स्थगित कर दिया गया है।

४९. ठेके की जिन शर्तों के आधार पर विभिन्न बाजारों मे व्यापार होता है उनमे बड़ी भिन्नता है। अन्तर्राज्यीय व्यापार और विभिन्न बाजारों के मूल्यों का एक-दूसरे से तालमेल बैठाने के लिए यह भी जरूरी है कि किस्म और सामान अच्छी तरह पैक करने के लिए दी जाने वाली छूट आदि के सम्बन्ध में ठेके की शर्तों का अखिल भारतीय आधार पर प्रतिमानीकरण किया जाए। वायदा सौदा (नियमन) अधिनियम, १९५२ की व्यवस्था के अनुसार विभिन्न स्वीकृत व्यापार सघो द्वारा बनाए गए उपनियमों की वायदा सौदा आयोग द्वारा पूर्व स्वीकृति आवश्यक है। यह सुझाव दिया गया है कि गेहू, अलसी, मूगफली, खोपा तथा इन तिलहनों से तैयार होने वाले तेलों के लिए खाद्य और कृषि मंत्रालय ने ठेके की जो स्टैंडर्ड शर्तें तैयार की है उन्हे ये सघ भी स्वीकार कर ले। जिन वस्तुओं के बारे में वायदा व्यापार का नियमन किया जाना है, उनके सम्बन्ध मे भी ठेके की स्टैंडर्ड शर्तें तैयार की जानी चाहिएं।

५०. बाजारो के सम्बन्ध मे ठीक-ठीक और नवीनतम सूचना उपलब्ध न होने के कारण किसान और प्रशासन दोनो को बडी परेशानी उठानी पड़ती है। बाजारों के बारे मे आवश्यक जानकारी फौरन ही उपलब्ध न करा सकने के कारण भिन्न-भिन्न बाजारों में एक ही चीज का मूल्य भिन्न-भिन्न होता है। कुछ बाजारों मे सूचना देने का कार्य निजी एजेंसियो द्वारा किया जाता है और इस प्रकार की गई व्यवस्थाए संतोषजनक सिद्ध नही हुई है। यद्यपि सीमान्त बाजारों से कई बातों के बारे मे सूचना मिल सकती है, किन्तु सग्रह एव विवरण केन्द्रों से व्यावसायिक एजेंसियों को महत्वपूर्ण बाजारों के सम्बन्ध में जानकारी होती है किन्तु उन्हे जो सूचना मिलती है उसकी जनता को कभी जानकारी नही हो पाती। योजना मे मुख्यत किसानो के लिए एक अखिल भारतीय बाजार समाचार सेवा स्थापित करने की व्यवस्था की गई है जिसका राज्यों के सहयोग से सगठन किया जाएगा। हर साल २० से ३० उम्मीदवारो को कृषि हाट-व्यवस्था के बारे में विशिष्ट प्रशिक्षण देने के लिए प्रशिक्षित कर्मचारियों का भी प्रबन्ध किया जा रहा है।

५१. कृषि हाट-व्यवस्था के विकास के लिए बाजारों के बारे मे शोध कार्य भी आवश्यक है जिसमे ये सभी बातें सम्मिलित है: हाट-व्यवस्था विषयक सर्वेक्षण, मूल्य विस्तार का विश्लेषण और अध्ययन और श्रेणी-नमूनों तथा बण्डलों का प्रतिमानीकरण। केन्द्रीय कृषि हाट-व्यवस्था सगठन ने अब तक लगभग ४० मुख्य-मुख्य वस्तुओं के क्रय-विक्रय के बारे मे अध्ययन किए हैं और उनके विषय मे रिपोर्ट प्रकाशित की है। कुछ रिपोर्टों मे जो सामग्री दी गई है वह पुरानी है। कृषि उत्पादन के स्वरूप तथा विदेशी और आन्तरिक व्यापार के गठन मे काफी परिवर्तन हो गए है। इसलिए यह जरूरी है कि कार्य अध्ययन पुनः से किए जाएं और ताजी से ताजी सामग्री एकत्र की जाए। महत्वपूर्ण फसलों के सम्बन्ध मे प्रादेशिक अध्ययन भी किए जाएंगे।

५२. पहली पचवर्षीय योजना मे एक महत्वपूर्ण बात यह हुई की कि वायदा शर्तनामा (नियमन) अधिनियम, १९५२ पास किया गया और उससे अगले वर्ष वायदा सौदा आयोग की नियुक्ति की गई। विभिन्न वस्तुओं तथा क्षेत्रो में वायदे के सौदों के लिए किन संघों को स्वीकार किया जाए तथा अधिनियम के अधीन किन वस्तुओ के बारे मे वायदे के सौदे करने की अनुमति दी जा सकती है, इन बातो के सम्बन्ध मे आयोग सरकार को सलाह देता है। यह स्वीकृत संघों के कार्य का नियमन एव नियन्त्रण करता है, उनके हिसाब-किताब की जांच करता है और विभिन्न वायदा बाजारो की कार्य प्रणाली पर बराबर नजर रखता है। आशा है कि इसके कार्यो से बाजारों मे होने वाली कृत्रिम कमी और व्यापक उथल-पुथल को दूर करने मे बडी सहायता मिलेगी। पिछले साल केन्द्रीय सरकार ने कई वस्तुओं के वायदा व्यापार के लिए नए केन्द्र स्वीकार किए है— कपास के लिए अकोला और इंदौर, तिलहनों तथा मूगफली के तेल के लिए बम्बई, अहमदाबाद, मद्रास, अडौनी, दिल्ली, राजकोट, हैदराबाद और कलकत्ता; हल्दी के लिए सागली; नारियल के तेल के लिए एलप्पी; और काली मिर्च के लिए कोचीन। इस समय वायदा सौदा आयोग विभिन्न केन्द्रों में प्राप्त सघों के उन प्रार्थनापत्रो पर विचार कर रहा है जो उन्होंने मान्यता प्राप्त करने के लिए भेजे है और आशा है कि देश भर मे लगभग ४० संस्थाओ को मान्यता दे दी जाएगी। इसके बाद आयोग का मुख्य कार्य वायदा बाजारों की देखभाल करना होगा और उनके कार्यों का नियमन करना होगा ताकि विभिन्न स्थानों के बीच और विभिन्न समयों पर मूल्यो का भारी उतार-चढ़ाव न हो सके। आयोग व्यापारियो को क्रय-विक्रय की सुविधाएं भी देगा।

कृषि सम्बन्धी आंकड़े

५३. कृषि के बारे में सही नीति निर्धारित करने और कृषि उत्पादन की योजना बनाने के लिए यह आवश्यक है कि कृषि सम्बन्धी आंकडो का सग्रह ठीक-ठीक और विश्वसनीय ढग से किया जाए और वैज्ञानिक आधार पर उनका विश्लेषण एव व्याख्या की जाए। पहली पचवर्षीय योजना मे इस प्रकार के आंकडों की कमी और उनमे सुधार करने की आवश्यकता की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया था। तब से लेकर अब तक कृषि सम्बन्धी आकड़ों में सुधार करने के लिए विभिन्न उपाय बरते गए है। पहले की अपेक्षा अब और अधिक फसलों के बारे में अनुमान उपलब्ध किए जाते है और उनके प्रकाशन में होने वाला व्यवधान भी कम कर दिया गया है। और अधिक असर्वेक्षित क्षेत्रो में भू-कर सर्वेक्षण किए गए है, और जहां प्रारम्भिक रिपोर्ट देने वाली एजेंसियां नही थी, वहा ये स्थापित कर दी गई है। इसके परिणामस्वरूप अब जितने क्षेत्र के बारे मे कृषि सम्बन्धी आकड़े उपलब्ध हैं वह पहली योजना के प्रारम्भ में ६१ करोड़ ५० लाख एकड से बढकर ७२ करोड़ एकड़ से ऊपर हो गया है। प्रामाणिक परिभाषाएं और एक जैसी मान्यताएं निर्धारित कर दी गई है और भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद ने कई व्यवस्था सम्बन्धी अध्ययन किए है। अप्रैल १९५६ मे की गई पशुगणना के तरीको में सुधार करने के लिए भी कदम उठाए गए हैं। अभी भी बहुत कुछ करना शेष है, पशुओं की संख्या, उनसे बनने वाली वस्तुओ और मछली पालन के सम्बन्ध में जो आंकड़े उपलब्ध है, वे अपर्याप्त तथा दोषपूर्ण है। व्यावसायिक महत्व की कई छोटी-मोटी फसलो के बारे में विश्वसनीय आकडे उपलब्ध नही है। योजना मे कृषि सम्बन्धी आकडों का क्षेत्र, तथ्य, और किस्म सुधारने के लिए व्यवस्था की गई है। प्रारम्भिक अध्ययनो के आधार पर, जो पूरे हो चुके है, मछली पालन तथा पशुओ के आकड़ों में सुधार किया जाएगा।

अध्याय १४

पशु पालन और मछली पालन

१. पशु पालन और डेरी उद्योग

विषय प्रवेश

पशु पालन और डेरी उद्योग से ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था के विकास मे तथा रहन-सहन का स्तर ऊंचा उठाने में जितनी सहायता मिल सकती है, उसे देखते हुए इस समय उसका योग बहुत ही कम है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पशु पालन और डेरी उद्योग की उन्नति के लिए ५६ करोड़ रुपए से अधिक व्यय की व्यवस्था की गई है और आशा है कि आगामी वर्षों में कृषि के इस क्षेत्र में पहले से अधिक प्रगति होगी। पशु पालन कार्यक्रमों का उद्देश्य एक तो यह है कि दूध, मांस और अण्डों की उपलब्ध होने वाली मात्रा बढ़ाई जाए क्योंकि खाने-पीने की मौजूदा सामग्रियों को संतुलित करने के लिए यह जरूरी है कि इनका उपभोग अधिक हो और दूसरे यह कि देश के प्रत्येक भाग में कृषि कार्यों के लिए समर्थ बलों की सुविधा मिल सके। वास्तव मे गावों की अर्थ-व्यवस्था सुधारने मे अच्छे मवेशियों का बहुत अधिक महत्व है। यही नहीं, ऊन, बाल, खाल और चमड़ा आदि कुछ ऐसी वस्तुए पशुओं से मिलती है जिनका औद्योगिक कच्चे माल के रूप में ठीक-ठीक उपयोग करना आर्थिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होगा। जो भी हो, पशु पालन कार्यक्रमों के सामने अभी भी कई गम्भीर और व्यावहारिक कठिनाइया है। इसके पहले कि इन कठिनाइयों का हल खोजा जाए, यह जरूरी है कि समस्या के आकार-प्रकार तथा मूल तत्वों को भली-भाति समझ लिया जाए।

२. १९५१ की पशु गणना के अनुसार भारत में मवेशियों की संख्या इस प्रकार थी :—

मवेशी	(अंक लाखों में)
प्रजनन करने वाली गायें	४६३·४
प्रजनन करने वाले सांड	६·५
जोतने और ढोने में काम आने वाले पशु :	
नर	५८४·१
मादा	२३·१
बाल पशु	४३४·६
अन्य	३८·६
योग	१५५०·६

मवेशी	(अंक लाखों में)
भैंसें :	
प्रजनन करने वाली भैंसें	२०६·६
प्रजनन करने वाले भैंसे	३·१
जोतने और ढोने में काम आने वाले पशु :	
नर	६०·१
मादा	५.३
बाल पशु	१४७·३
अन्य	७·८
योग ..	४३३·५

मवेशियों की इस भारी संख्या के बावजूद १९५०-५१ में पशुधन उत्पादनों का कुल मूल्य केवल ६६४ करोड़ रुपए अर्थात कृषि से होने वाली आमदनी का लगभग १६ प्रतिशत हुआ। अध्ययन से पता चलता हैं कि देश मे पशुओ की वर्तमान संख्या चारे की व्यवस्था को देखते हुए कहीं अधिक है। यह आम ख्याल है कि सूखे चारे की दृष्टि से देश में मवेशियों की संख्या कम से कम एक-तिहाई अधिक है और हरे चारे तथा खली वगैरह की दृष्टि से तो स्थिति और भी खराब है। मनुष्यों की अनाज सम्बन्धी आवश्यकताएं बढ़ गई है, इसलिए जिन क्षेत्रों में चराई की व्यवस्था हो सकती थी वे क्षेत्र बराबर कम होते जा रहे है। पशुओं की अधिक संख्या का परिणाम यह होता है कि उन्हे चारा कम मिल पाता है और खराब खिलाई के कारण उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्नों में रुकावट आती है। यह एक ऐसी उलझन है जिसे सुलझाना कठिन जान पड़ता है।

३. कृषि उपज से मिलने वाली अन्य चीजो के अतिरिक्त अभी तक मवेशी चरागाहो पर ही निर्भर रहे हैं। पशुओं के पालने की विधियों में हमें आमूल परिवर्तन करना होगा क्योंकि मिश्रित कृषि व्यवस्था का ही उसे भविष्य मे अधिक आश्रय लेना है। कृषि पुनर्गठन की समुचित व्यवस्थाएं खोजते समय हमे इस पहलू को ध्यान में रखना होगा।

४. अकाल और महामारियां बहुत कुछ बश मे कर ली गई हैं और साधारणतया प्रवृत्ति ऐसी जान पड़ती है कि फालतू पशुओ की संख्या बढ़ रही है। हाल के वर्षों मे पशुवध का पूर्णतः निषेध करने के सम्बन्ध में जो कार्रवाई की गई है उससे इस प्रवृत्ति को और बल मिलने की आशंका है। पशु-वध निषेध के सुझावों के मूल में व्यापक लोक-भावना है और उसने न केवल संविधान में अभिव्यक्ति पाई है बल्कि राष्ट्रीय योजना में भी उसका समावेश होना ही चाहिए। संविधान के ४८वें अनुच्छेद मे उल्लिखित है कि राज्य कृषि तथा पशु पालन का संगठन आधुनिक एवं वैज्ञानिक रीति से करने का प्रयत्न करेंगे और खास तौर पर नस्लो को अच्छा बनाए रखने और सुधारने तथा गायों, बछड़ो, दुधार पशुओं और दूध न देने वाले पशुओं के वध के निषेध के लिए कदम उठाएंगे। लेकिन इस निदेशक सिद्धान्त को कार्यान्वित करते समय इस बात का ध्यान रखना होगा कि ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न न कर दी जाएं कि संविधान द्वारा जिस उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयत्न किया गया है वह ही नष्ट हो जाए।

५. पशु-वध की रोकथाम के लिए भारत सरकार ने १९५४ में एक विशेषज्ञ समिति स उद्देश्य से नियुक्त की थी कि वह पशुओं की बुरी दशा को सुधारने के लिए उपाय झाए। यह समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि इस समय देश में उपलब्ध चारे के तथा अन्य ाधन इतने अपर्याप्त है कि वे वर्तमान पशु संख्या का भी भरण-पोषण नहीं कर सकते। मस्त पशुओ के वध पर पूर्णतया निषेध लगा देने का परिणाम यह होगा कि पशुओं की ख्या और अधिक बढ़ जाएगी और इस तरह देश के पास सीमित संख्या में जो भी च्छे पशु है उनके हितो की रक्षा नहीं हो सकेगी । इसका परिणाम यह भी हो सकता कि वन्य पशुओ की संख्या तीव्र गति से बढ़ने लगे। इस समिति ने अनुमान लगाया कि दि पशु-वध का पूर्ण निषेध कर दिया जाए तो पशु संख्या प्रायः छः प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब बढ़ने लगेगी। १९५३ में उत्तर प्रदेश की गोसंवर्धन जाच समिति ने इन प्रवृत्तियो का पता गाया था और अनुमान किया था कि राज्य में उपलब्ध चारे आदि के साधन मात्र इतने है क उनसे पशु संख्या के लगभग ५८ प्रतिशत का ही भरण-पोषण हो सकता, और यह भी हा था कि अनेक जिलों में छुट्टा पशुओं तथा जंगली जानवरों के कारण फसलों को नुकसान पहुंचता है।

६. प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ मे ऐसा लगा था कि कदाचित गोसदनों द्वारा स समस्या को सुलझाया जा सकेगा। अतः योजना मे इस बात की व्यवस्था की गई थी कि हले दौर मे १६० गोसदन स्थापित किए जाएं, जिनसे ३,२०,००० पशुओं की देखभाल ो सके। यह योजना संतोषजनक रीति से प्रगति नहीं कर सकी। कुल मिलाकर ८,००० शुओ के लिए २२ गोसदन स्थापित किए गए हैं और इनमे से भी कई गोसदनों को आवश्यक मीन पाने मे कठिनाई हुई है। द्वितीय योजना मे ३०,००० पशुओं के लिए ६० गोसदन खोले ाने का प्रस्ताव है। स्पष्ट है कि यदि केवल अयोग्य और बेकार पशुओं की देखभाल के लिए ोसदन स्थापित करने का प्रश्न होता तो भी काफी गोसदनो की स्थापना कर सकना असम्भव ोता। इसलिए निष्कर्ष यह निकलता है कि राज्यों को चाहिए कि वे पशु-वध निषेध की म्भावनाओं पर दृष्टिपात करते समय चारे के उपलब्ध साधनों के सम्बन्ध में वास्तविकता ा ध्यान रखें और यह भी देख लें कि बेकार और अयोग्य पशुओं के भरण-पोषण का ुख्य उत्तरदायित्व संभालने में उन्हें ऐसी स्वयंसेवी संस्थाओं का सहयोग कहां तक मिल कता है जो सरकारी सहायता से तथा सामान्य रूप से जनता की सहायता से उस जिम्मेदारी ो निभा सकती है।

७. प्रस्ताव है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ३,००० गोशालाओं में से ३५० को ुनकर उन्हें पशु-धन सुधार केन्द्रो के रूप में विकसित किया जाए। ये गोशालाएं अपने ेकार और अयोग्य पशुओ को सबसे निकट के गोसदन में भेजेंगी। प्रत्येक गोसदन े पास खालों, हड्डियों तथा अन्य वस्तुओं के बेहतर उपयोग के साधन रहेंगे। मृत शुओं की खालों, हड्डियों आदि के उचित उपयोग का बहुत अधिक आर्थिक महत्व है और खिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग बोर्ड ने इस क्षेत्र में अनेक कार्यक्रम बनाए हैं। प्रत्येक ोशाला को सरकार बढ़िया नस्ल के कुछ पशु देगी और प्रत्येक गोशाला को भी स्वयं पने साधनों द्वारा इतने ही पशु जुटाने होंगे। उन्हें आर्थिक सहायता भी दी जाएगी। स योजना के लिए लगभग १ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

पशु प्रजनन नीति और कार्यक्रम

८. भारत मे ढोरों की २५ और भैंसों की ६ सुनिश्चित नस्ले है। ये सब देश के विभिन्न भागों मे बंटी हुई है। हर नस्ल के बढिया नमूनो की संख्या बहुत सीमित है, और वह भी केवल उन इलाकों के भीतरी हिस्सों में मिलती है जहां कि ये नस्ले होती है। इस तरह के इलाको के आस-पास एक ही तरह के पशु अवश्य होते है, लेकिन ये घटिया किस्म के होते हैं। इनमे से कुछ नस्ले डेरी वर्ग की है, जिनमें मादा पशु काफी मात्रा मे दूध देते है और नर पशु काम के लिए बेकार होते हैं। पशुओ की अधिकाश नस्ले भारवाही वर्ग की है, जिनमे गाये बहुत कम दूध देती है और बैल बढ़िया किस्म के होते है। इनके बीच कई नस्लें ऐसी है जिन्हे इस अर्थ में 'दोकारी' नस्ल कहा जा सकता है क्योकि मादा पशु औसत मात्रा से कुछ अधिक दूध देते हैं और नर पशु अच्छे खासे काम करने वाले बैल होते है। ये सुनिश्चित नस्ले देश के सूखे जलवायु वाले भागो में पाई जाती है। इन क्षेत्रों के बाहर भारत के पूर्वी और दक्षिणी हिस्सों में, जहा बहुत अधिक वर्षा होती है, मवेशी किसी निश्चित नस्ल के नही है।

९. भारतीय कृषि अनुसधान परिषद ने पशु प्रजनन सम्बन्धी एक अखिल भारतीय नीति बनाई है ताकि अच्छे से अच्छे नतीजे हासिल किए जा सके। केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने यह नीति स्वीकार कर ली है। सक्षेप मे यह नीति इस प्रकार है :—

(क) श्रेष्ठ प्रजनन के द्वारा सुनिश्चित दुधार नस्लों की दूध देने की सामर्थ्य अधिक से अधिक बढानी चाहिए और अज्ञात नस्ल वाले मवेशियो के विकास के लिए नर पशुओं का उपयोग करना चाहिए।

(ख) सुनिश्चित भारवाही नस्लो के पशुओं में जितना भी सम्भव हो सके दूध बढ़ाना चाहिए। पर ध्यान रहे कि इसके कारण उनकी काम करने की सामर्थ्य कम न हो जाए।

इस प्रकार प्रजनन सम्बन्धी नीति का सामान्यत. उद्देश्य यह है कि देश में दूध का उत्पादन बढ़े और साथ ही खेती के लिए आवश्यक बैलो के मिलते रहने पर कोई बुरा असर भी न पड़े। प्रत्येक भारवाही नस्ल मे हमेशा थोड़े-से ऐसे पशु होते है जो औसत मात्रा से कुछ अधिक दूध देते हैं। इस वर्ग के साड़ो को चुनने और आगे भी चुनाव करते रहने तथा प्रजनन कराने पर दूध का उत्पादन काफी बढ़ाया जा सकता है। नस्ल क्षेत्रों के भीतरी इलाको में जब यह काम पूरा हो जाए तो वहा से मिले सांड़ों का उपयोग बाहरी इलाको में किया जा सकता है ताकि समूची पशु सख्या का सामान्य सुधार हो जाए।

१०. इस नीति को लागू करने के लिए विभिन्न राज्यों में जो भी नस्लें काम में लाई जाती है उनके हिसाब से प्रत्येक राज्य को क्षेत्रों में बाट दिया गया है। इस तरह अहमदाबाद, कैरा, भड़ौच और सूरत जिलो में 'कंकरेज' नस्ल का उपयोग किया जाएगा। सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, अलीगढ़, मथुरा आदि उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भागों में 'हरियाना' नस्ल का प्रयोग किया जाएगा। पहाड़ी क्षेत्रो में, जैसे देहरादून, गढवाल, अलमोड़ा, और नैनीताल के कुछ भागो में जहा के मवेशी अज्ञात नस्ल के है सिन्धी सांड़ों का उपयोग होगा।

११. राज्य सरकारे केन्द्र ग्राम योजनाओं के माध्यम से ही पशुधन सुधार कार्यक्रमों को आगे बढ़ा रही हैं। इस योजना के अनुसार कुछ चुने हुए इलाकों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इन इलाकों में घटिया किस्म के साड़ों को बधिया कर दिया जाता है और कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र स्थापित किए जाते हैं। इनमे से प्रत्येक केन्द्र मे लगभग ५ हजार गायों का कृत्रिम गर्भाधान किया जा सकता है, लोगो को बछड़े पालने के लिए सरकारी सहायता दी जाती है, चारे के साधनों का विकास किया जाता है और पशु पालन उद्योग की वस्तुओं की बिक्री के लिए सहकारी ढंग की व्यवस्था की जाती है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में ६०० केन्द्र ग्राम और १५० कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र स्थापित किए गए। द्वितीय योजना की अवधि में १,२५८ केन्द्र ग्राम, २४५ कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र और २५४ विस्तार केन्द्र खोले जाएंगे। कार्यक्रम का लक्ष्य यह है कि लगभग २२,००० बढ़िया सांड, ६,५७,००० बढ़िया बैल और दस लाख बढ़िया गायें हो जाएं। योजना में उत्साहजनक प्रगति हुई है, लेकिन चारे तथा पशु पालन जनित वस्तुओं की बिक्री व्यवस्था की दिशा में अधिक कार्य नही किया जा सका है। उलटे, नियंत्रित प्रजनन को काफी हद तक स्वीकार किया गया है और राज्यों ने इस योजना को लागू करने के लिए आवश्यक कानून बनाए हैं। शुरू-शुरू में अनेक केन्द्र ग्रामों और कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों में समितियों तथा कर्मचारियों की कमी के कारण काम में देरी हुई थी, लेकिन सर्वत्र स्थानीय लोग बगैर किराए की इमारतें देने के लिए और योजना को सफल बनाने के लिए अन्य रूपो में सहायता देने को इच्छुक थे। द्वितीय योजना मे चारे का प्रबन्ध करने के कार्यक्रम पर काफी ध्यान दिया जाना चाहिए क्योंकि पशुधन उन्नति कार्यक्रम का यह एक मुख्य आधार है। प्रत्येक क्षेत्र में जो भी कम-ज्यादा चरागाह सुलभ हो, उन्हे विकसित करने के प्रयत्न होने चाहिए। द्वितीय योजना मे परिकल्पित विशाल कार्यक्रम के कारण पर्याप्त कर्मचारियों का होना, उपलब्धि के लिए अधिक अच्छी प्रशासकीय व्यवस्था करना और पशु पालन विकास के बारे में जनता को शिक्षित करना बहुत अधिक आवश्यक हो गया है।

डेरी उद्योग और दूध की व्यवस्था

१२. भारत में दूध सम्बन्धी आंकड़ो के बारे में अब भी केवल मोटा अनुमान ही लगाया जा सकता है। अनुमान है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में देश में दूध का कुल उत्पादन १ करोड़ ८० लाख टन से कुछ अधिक था। इसका लगभग ३८ प्रतिशत दूध पीने के, लगभग ४२ प्रतिशत घी बनाने के और शेष खोआ, मक्खन, दही तथा अन्य वस्तुए बनाने के काम मे आता था। दूध की कुल मात्रा का आधे से कुछ कम हिस्सा गायों से और आधे से कुछ ज्यादा हिस्सा भैंसों से मिलता है। प्रति व्यक्ति दूध की औसत खपत ५ औंस से कुछ अधिक है, जबकि संतुलित भोजन की दृष्टि से कम से कम १५ औंस की सिफारिश की गई है। अतएव, और अधिक मात्रा में दूध उपलब्ध करना अत्यन्त आवश्यक है। विकास की इस स्थिति में दूध उत्पादन के लक्ष्यों को प्रादेशिक आधार पर निर्धारित करना होगा और शहरी इलाकों में दूध की व्यवस्था पर विशेष रूप से ध्यान देना पड़ेगा। अभी तक दूध के लिए कोई राष्ट्रीय उत्पादन लक्ष्य नही बनाया गया है। प्रस्ताव यह है कि राष्ट्रीय विस्तार एवं सामुदायिक योजनाओं में तथा अन्य क्षेत्रों में स्थानीय और क्षेत्रीय लक्ष्य निर्धारित किए जाएं ताकि अगले पांच वर्षों के समय में इन इलाकों में दूध के कुल उत्पादन में लगभग १० प्रतिशत की वृद्धि हो सके। सामान्य उद्देश्य यह होना चाहिए कि जिन इलाकों में काफी काम हुआ हो, वहां १० से लेकर १२ वर्ष की अवधि में दूध का उत्पादन ३० स लेकर ४० प्रतिशत बढ़ जाए।

१३. अच्छी किस्म की भारतीय नस्लों की गाय-भैंसों का औसत दूध उत्पादन प्रत्येक दूध देने की अवधि में लगभग १,५०० पौंड होता है। सामान्य औसत तो इस मात्रा से आधे से कुछ अधिक होगा। इन आंकड़ों की तुलना मे पश्चिमी देशो में दूध देने की प्रत्येक अवधि में औसत उत्पादन ३,००० से ४,००० पौंड तक होता है। जहां भी प्रजनन तथा संचालन का व्यवस्थित प्रबन्ध हो सका है (जैसे कि सुसंगठित डेरी फार्मों से होता है) वहां भारत में भी उत्पादन का औसत बढ़ाया जा सका है, लेकिन जिन पशुओं ने दूध औसत से अधिक दिया है, उनकी संख्या बहुत कम है। समुचित परिस्थितियों में गायें भी भैंसों के बराबर दूध दे सकती हैं। अधिक दूध देने वाले पशुओं की नस्लें बढ़ाने के लिए द्वितीय योजना में वंशानुसार प्रजनन केन्द्रों की स्थापना के लिए एक योजना चलाई जाएगी। इससे किसान यह जान जाएंगे कि दूध का अधिक उत्पादन करने के लिए प्रमाणित प्रजनन सांड़ों की सतति का उपयोग करना फायदेमन्द और कम खर्चीला होता है। दूध उत्पादन को अब तक हानि पहुंचाने वाला एक कारण यह भी रहा है कि अच्छी किस्म के दुधार मवेशी प्रसिद्ध नस्ल क्षेत्रों और बम्बई, कलकत्ता जैसे बड़े शहरों के बीच खरीदे-बेचे जाते रहे है। इन शहरों में आम चलन यह रहा है कि दूध सूख जाने पर मवेशियों को बेच दिया जाए। शहरी इलाकों में दूध पहुंचाने के जो कार्यक्रम अब लागू किए जा रहे हैं, उनसे यह लाभ होगा कि इस तरह के व्यापार से होने वाले नुकसान की गुंजाइश न रहेगी।

१४. पिछले वर्षों में कई कारणों से शहरी इलाकों में दूध की व्यवस्था करना एक बहुत जरूरी समस्या बन गई है। शहरी इलाकों में गन्दे-गन्दे ढंग से जो ढेरों डेरियां चल रही हैं, उनसे लोगों के स्वास्थ्य को बड़ा खतरा रहता है। शहरों-कस्बों में बिकने वाला बहुत-सा दूध मिलावटी और घटिया किस्म का होता है। इसलिए ऐसा प्रबन्ध करना जरूरी है जिससे कि शहरी इलाकों में लोगों को काफी मात्रा मे अच्छा दूध उचित भाव पर मिलने लगे और साथ ही गाय-भैंस पालने वालों को भी अपने दूध का उचित मूल्य मिल जाए। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए द्वितीय योजना मे दूध वितरण की ३६ योजनाएं शहरों में चलाई जाएंगी और क्रीम निकालने के १२ सहकारी कारखाने और दूध का पाउडर तैयार करने के ७ कारखाने खोले जाएंगे। ये कारखाने गावों में स्थापित किए जाएंगे और इनमें मक्खन, घी और मक्खन निकले हुए दूध का पाउडर तैयार किया जाएगा। सामान्य नीति यह है कि शहरों की दूध वितरण योजनाओं और क्रीम निकालने तथा दूध का पाउडर तैयार करने के कारखानों के लिए आवश्यक दूध उन दूध उत्पादक सहकारी संघों से आए जो कि गांवों में खोले गए हों। इसके लिए दूध उत्पादकों को यथोचित दाम, सांड़ों या कृत्रिम गर्भाधान की सुविधाओं, टेकनीकल सलाह, उत्पादन बढ़ाने, चारा भरकर रखने और दुहने के लिए शेडों की सुविधाओं के रूप में सहायता मिलनी चाहिए। गांवों से एकत्र किया गया दूध शहरों में दूध मंडल जैसे उपयुक्त अधिकरणों की देख-रेख में वितरित किया जाएगा। बम्बई के आरे में एक बड़ी दूध बस्ती स्थापित की गई है और कलकत्ते में ऐसी ही एक बस्ती हरिनघाटा में बनाई जा रही है। इन शहरों में बहुत-से मवेशी थे, जिन्हें शहर से बाहर हटाना ही था। इसलिए दूध बस्ती स्थापित करने के अलावा कोई दूसरा उपाय न था। दिल्ली और मद्रास में भी बड़े पैमाने पर दूध योजनाएं चलाई जाएंगी और उनकी आवश्यकताओं के अनुसार मवेशी बस्तियां बसाई जाएंगी। जहां भी दूध बस्तियां बनाई जा रही हैं, उनकी यथासम्भव गांवों के इलाकों से बराबर मिलते रहने वाले दूध के द्वारा की जानी चाहिए, जैसा कि बम्बई में होता है। शहरी इलाकों मे सस्ता दूध मिल सके, इसके लिए पोषक तत्व मिलाए हुए

दूध का वितरण बढ़ाने का भी इरादा है। कुछ मौजूदा डेरियों को भी बढ़ाया जाएगा ताकि वे अधिक मात्रा में दूध की व्यवस्था कर सकें। गांव के इलाकों से दूध आने की व्यवस्था में मुख्य रूप से संगठनात्मक कठिनाइयां ही बाधक है। और इस दिशा में राज्यों की योजनाओं में जो कार्यक्रम निर्धारित किए गए है, वे कम से कम है जिन्हें पूरा करना ही है। जैसे-जैसे कार्यक्रम पूरे होते जाएंगे, निश्चय ही अन्य क्षेत्रों के लिए ऐसे ही कार्यक्रम बनाए जा सकेंगे, विशेषकर उन इलाकों में जहां क्षेत्रीय संगठन का भार उठाने के लिए आवश्यक कर्मचारी मौजूद हों।

बीमारियों की रोकथाम

१५. मालमारी या पशु ताऊन (रिंडरपेस्ट) और छूत की दूसरी बीमारियों के कारण बहुत तादाद में मवेशी मरते रहे हैं। मरने वाले पशुओं की लगभग ६० प्रतिशत संख्या की मृत्यु का कारण मालमारी ही है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत चलाई गई एक प्रमुख योजना के द्वारा ऐसा कार्यक्रम बनाया जा सका है जिसका उद्देश्य यह है कि द्वितीय योजना काल में देश के अधिकांश भाग से मालमारी का रोग मिटा दिया जाए। राज्यों की योजनाओं में भी छूत की अन्य बीमारियों और कीड़ों की रोकथाम के तरीके अपनाए गए हैं। खुरपका, मुंहपका रोग, गलघोट रोग, जहरवाद और गिल्टी रोग पर विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में मवेशी चिकित्सालयों की संख्या २,००० से बढ़ाकर २,६५० कर दी गई थी। द्वितीय योजना काल में आशा है कि १,६०० मवेशी चिकित्सालय और खुल जाएंगे जिनमें १४५ चल चिकित्सालय भी होंगे।

भेड़-बकरियां

१६. भारत में अनुमानतः ३ करोड़ ८० लाख भेड़ें हैं, जो प्रतिवर्ष ६ करोड़ पौंड ऊन देती हैं। लगभग २ करोड़ ४० लाख पौंड देशी कच्चे ऊन का उपयोग देश में होता है और शेष का निर्यात किया जाता है। प्रतिवर्ष लगभग १ करोड़ १० लाख पौंड बढ़िया किस्म का ऊन बाहर से मंगाया जाता है। देशी भेड़ों से मिलने वाले ऊन का औसत प्रायः दो पौंड प्रति भेड़ है। बढ़िया किस्म की भेड़ें ६ पौंड तक ऊन दे सकती हैं। इसलिए विकास की काफी गुंजाइश है। ऊन की आवश्यकता मुख्यतया पांच कार्यों के लिए पड़ती है, यथा कुटीर उद्योगों में कालीन, गलीचे, कम्बल बनाने के लिए, मिलों में वस्त्रादि और बुनाई ऊन बनाने के लिए तथा अन्य उद्योगों में शाल-दुशाले, ट्वीड आदि का निर्माण करने के लिए। बाहर से मंगाए गए ऊन का उपयोग मुख्यतः मिलों में ही होता है।

१७. कई वर्षों से इस तरह के परीक्षण किए जा रहे हैं कि स्थानीय पशुओं की नस्ल में सुधार कश्मीर, मैसूर और दक्कन की मेरीनो भेड़ों से किया जाए। बीकानेरी, दक्खिनी और बेलारी भेड़ों का चुना हुआ प्रजनन हो और घटिया किस्म की स्थानीय भेड़ों को बीकानेरी भेड़ों द्वारा उन्नत किया जाए। फलस्वरूप, इस समस्या के प्रति जो रवैया लम्बे अरसे तक रखा जाएगा वह इस प्रकार है :—

(क) मैदानों में, या जहां कहीं भी सुनिश्चित नस्लें मिलती हैं, देशी नस्लों का चुना हुआ प्रजनन हो;

(ख) बीकानेरी भेड़ों द्वारा अज्ञात नसल की भेड़ों को उन्नत बनाया जाए; और

(ग) कुछ खास चुने हुए पहाड़ी इलाकों में विदेशी नस्लो की सहायता से नस्ल सुधार किया जाए। मेरीनो भेड़ो से नसल पैदा करने के परिणामस्वरूप प्राप्त ऊन की मात्रा और गुण दोनो ही में अत्यन्त वृद्धि हुई है। चुने हुए प्रजनन और और स्थानीय घटिया भेड़ों को उन्नत बनाने के परिणाम भी उत्साहप्रद सिद्ध हुए है। कश्मीरी नस्ल की औसत पैदावार १६ औंस ऊन है, जबकि दो नस्ली भेड़ो की पैदावार ३७ औस और कहीं-कहीं तो ५६ औंस तक है। अस्तु, ऊन की वर्तमान पैदावार बढ़ाने की बड़ी गुंजाइश है।

१८. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में तीन नए भेड प्रजनन फार्म खोलने की व्यवस्था है जो कि हिमाचल प्रदेश, मध्य भारत और सौराष्ट्र में होंगे। इन फार्मों का उद्देश्य यह है कि शुद्ध नस्ल और दो नस्ल दोनों के लिए अच्छे किस्म के मेढ़े तैयार किए जाएं। प्रत्येक फार्म में एक ऊन परीक्षण प्रयोगशाला और एक ऊन प्रयोग केन्द्र स्थापित किया जाएगा। विभिन्न प्रदेशों में ३९६ भेड़ एव ऊन विस्तार केन्द्र खोलने का प्रस्ताव है। योजना मे भेड़ तथा ऊन विकास के लिए १·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। देश के बहुत-से भागों मे जहां समय-समय पर अभाव की परिस्थितियां आ पडती है, ग्राम अर्थ-व्यवस्था को बल देने के लिए भेड़ पालन बहुत सीमा तक सहायक हो सकता है।

१९. बकरी को अक्सर 'निर्धन की गाय' कहा जाता है, हालाकि बकरियों की ४ करोड़ ७० लाख की संख्या का केवल पांचवा हिस्सा दूध उत्पादन के काम आता है। औसत उत्पादन बहुत कम है लेकिन खास-खास नस्लो की बकरियां १५० दिन की दूध देने की अवधि में औसतन ४०० पौंड दूध देती है। बकरिया भू-क्षरण का बहुत बड़ा कारण होती है और यदि कृषि अर्थ-व्यवस्था मे बकरी पालन का विशेष महत्व होना है तो उसे जोतने योग्य भूमियों के अन्तर्गत ही विकसित करना चाहिए। बकरियों को एक स्थान पर बांधकर खिलाने से जो भी मांस उत्पादन सम्भव हो, उसके आर्थिक पहलुओं का तथा बकरियों की खास बीमारियों का सूक्ष्म अध्ययन करना भी आवश्यक है।

मुर्गी पालन

२०. सहायक उद्योग के रूप में मुर्गी पालन का महत्व बहुत पहले से अनुभव किया जा चुका है, पर मुर्गी पालन का विकास अपेक्षाकृत धीमी गति से हुआ है। औसत देशी मुर्गी हमारे देश में ५० अण्डे प्रति वर्ष देती है, जबकि अनेक दूसरे देशों में मुर्गियां १२० तक अण्डे देती है। मुर्गी पालन के विकास के मार्ग में एक बाधा यह भी है कि मुर्गी पालने वालों को मुर्गियों की बीमारी के कारण बड़ा नुकसान उठाना पड़ता है। गांवों की बहुत-सी मुर्गियों को तो मांसभक्षी जानवर और परिन्दे ही खा डालते है। गर्मी के दिनों में होने वाले अण्डों का एक अंश तो ठंडे गोदामों आदि उचित साधनों के अभाव में यों ही खराब हो जाता है।

२१. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ४ क्षेत्रीय फार्म खोले जाने की व्यवस्था है, जिनमें से प्रत्येक में अण्डे देने वाली २,००० मुर्गियां ऐसी होंगी जो बाहर से लाकर फार्म की जलवायु के लिए अभ्यस्त बनाई जाएंगी। ३०० विस्तार केन्द्रों को शुरुआत करने के लिए इन्हीं फार्मों से मुर्गियां दी जाएंगी। प्रत्येक विस्तार केन्द्र में प्रदर्शन यूनिट और उसके साथ एक विकास क्षेत्र रहेगा। हर एक प्रदर्शन यूनिट में निजी मुर्गी पालकों को मुर्गी पालन की आधुनिक विधियों की शिक्षा देने की व्यवस्था रहेगी। प्रत्येक विस्तार केन्द्र में एक अनुत्पत्ति यूनिट भी रहेगी,

जो खास तौर से गर्मी के मौसम मे गांव के अण्डों को अधिक समय तक टिकाए रखने के लिए सुरक्षा उपचार करेगी । राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास योजना क्षेत्रों में मुर्गियों को अनेक बीमारियों से बचाने के लिए टीके लगाने का काम पहले से ही बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि देशी मुर्गियों की नस्ल सुधार अथवा उनकी उन्नति के लिए व्हाइट लेगहार्न और रोड आइलेंड रेड सबसे अधिक उपयोगी नस्लें है। ऐसा ख्याल है कि जो उपायं सोचे जा रहे है उनके फलस्वरूप समुन्नत देशी मुर्गियों का उत्पादन लगभग ५० प्रतिशत बढ़ सकेगा । अगर पर्याप्त मात्रा में अच्छी नस्ल की मुर्गियां सुलभ हो सकें तथा लोगों को प्राथमिक जानकारी आसानी से मिल सके और बाजार आदि की आवश्यक सुविधाएं भली-भांति संगठित की जा सकें तो देश के प्रत्येक गाव में एक सहायक उद्योग के रूप में मुर्गी पालन के विकास की बड़ी सम्भावनाएं है। द्वितीय योजना की समाप्ति तक प्रति व्यक्ति उपलब्धि ४ के बजाय २० अण्डे प्रति वर्ष हो जाएगी ।

अनुसंधान तथा शिक्षा

२२. जन स्वास्थ्य एवं देश की अर्थ-व्यवस्था को पशुधन से जो योगदान मिलता है, उसे अनुकूल प्रजनन, उचित भोजन, बीमारियों तथा अन्य कारणों से होने वाले नुकसानों की पर्याप्त रोकथाम और पशु पालन तथा प्रबन्ध की सामान्य दशाओ मे सुधार द्वारा कही अधिक बढ़ाया जा सकता है। विकास कार्यक्रमों को विस्तृत वैज्ञानिक अनुसधान पर आधारित होना चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय मे भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की अनुसधान योजनाओं के अतिरिक्त पशु चिकित्सा अनुसधान और पशु पालन पर यथेष्ट ध्यान नहीं दिया गया था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे पशु पालन के विकास और अनुसंधान सुविधाओं में विस्तार विषयक बहुत अधिक कार्यक्रमों की व्यवस्था की गई है। पशु पालन अनुसंधान का आयोजन राष्ट्रीय, प्रादेशिक और राज्यीय तीन स्तरों पर करना होगा। राष्ट्रीय स्तर पर भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान और राष्ट्रीय डेरी अनुसधान संस्थान जैसे केन्द्रीय संस्थानों को अखिल भारतीय महत्व की समस्याओं के विषय में मूल अनुसंधान, नई प्रणालियों जीव (उत्पादनों) तथा विशिष्ट स्नातकोत्तर शिक्षण क्रमों का संस्थापन आदि कार्यों को मुख्य रूप से करना होगा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इन संस्थाओं को सुदृढ़ बनाया जाएगा और उनका विकास किया जाएगा । भारतीय पशु चिकित्सा अनुसधान संस्थान में पशु उत्पत्ति, मुर्गी पालन, पशु आहार, रोग निदान, जीवाणु विज्ञान, परान्नपोषी विज्ञान तथा जीव उत्पादनों के लिए वर्तमान अनुसंधान विभागों को अधिक कर्मचारी तथा सामग्री दी जाएगी। विभिन्न केन्द्रों मे तैयार होने वाले टीकों और सेरा के गुण तथा प्रयोग को संचालित और नियंत्रित करने के लिए एक जीव उत्पादन मानकीकरण विभाग भी खोला जा रहा है। करनाल में खोले गए राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान ने बंगलौर के भारतीय अनुसधान संस्थान का स्थान ग्रहण कर लिया है। इसमें डेरी उद्योग, आहार, रसायन, जीवाणु विज्ञान, टेकनीकल ज्ञान और मशीनों में अनुसन्धान के लिए अलग-अलग विभाग होंगे और डेरी विस्तार कार्य के लिए एक विभाग तथा एक डेरी विज्ञान विद्यालय भी होगा। इस संस्थान का एक क्षेत्रीय केन्द्र बंगलौर में भी है, जहां विद्यार्थियों को डेरी उद्योग की प्रारम्भिक शिक्षा दी जाती है और अनुसंधान कार्य होता है ।

२३. देश के विभिन्न भागों में पशु पालन की परिस्थितियों में बड़ा अन्तर पड़ जाता है। बहुत-सी ऐसी अनुसंधानगत समस्याएं हैं जो किन्ही खास इलाकों के लिए महत्वपूर्ण है और

क्षेत्रीय संस्थाओं में ही उनका अध्ययन भली प्रकार हो सकता है। इसलिए भारत सरकार चार अनुसंधान संस्थान खोलने जा रही है। पशु पालन के अनुसंधान तथा विकास के लिए देश को जिन चार प्रदेशो मे बांटा गया है, उनमे से हर एक मे एक-एक संस्थान रहेगा। ये प्रदेश हैं—समशीतोष्ण (हिमालयी), शुष्क (उत्तरी), पूर्वी तथा दक्षिणी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने इस दिशा मे कार्य प्रारम्भ किया था। उक्त परिषद ने पशु आहार समस्याओं मे अनुसधान के लिए चारो क्षेत्रीय केन्द्रों का खर्च उठाना स्वीकार किया था। पशुओं मे बाझपन के कारणों की खोज करने के लिए और पशु चिकित्सा कालेज के विद्यार्थियों को मादा पशुओं के रोगो तथां प्रसव सम्बन्धी बातों की शिक्षा देने के लिए, इससे सम्बद्ध विषय कृत्रिम गर्भाधान की शिक्षा देने के लिए और प्रजनन सम्बन्धी दैहिक व्यापार तथा रोग निदान की जानकारी देने के लिए प्रथम योजना के अन्तर्गत विशेष कर्मचारी वर्ग नियुक्त किया गया था। द्वितीय योजना में और अधिक कर्मचारी नियुक्त किए जाएंगे।

२४. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के कार्यों के परिणामस्वरूप अधिकाश राज्यों में पशु चिकित्सा अनुसधान के लिए प्रमुख केन्द्रों की स्थापना हो चुकी है और राज्य सरकारों ने अपनी योजनाओं मे अपने वर्तमान संगठनों को और भी पुष्ट बनाने की व्यवस्था की है। यह आवश्यक है कि केन्द्रीय तथा क्षेत्रीय संस्थानो में किए गए अनुसंधानों के परिणामों को स्थानीय दशाओं के अनुरूप बनाया और लागू किया जाए। पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित तथा अनुभवी कर्मचारियों की कमी के बावजूद आशा है कि राज्यों में अनुसंधान केन्द्रों के कार्य में प्रगति होगी।

२५. राष्ट्रीय विस्तार एवं अन्य क्षेत्रों में केन्द्र ग्रामों तथा मालमारी दूर करने और शहरों तथा गांवो में दूध पहुंचाने की योजनाओं से सम्बन्धित जो भी कार्यक्रम द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बनाए गए है, उन्हें पूरा करने के लिए लगभग ५,००० पशु चिकित्सा स्नातकों की आवश्यकता होगी, जबकि वर्तमान संस्थाओं से २,७५० स्नातक प्राप्त होने की आशा है। दो वर्ष पहले ही पशु चिकित्सा कर्मचारियों की इस कमी का अनुमान कर लिया गया था और कुछ कदम भी उठाए गए थे। हिसार, हैदराबाद, पटना, बम्बई और बीकानेर के पांच पशु चिकित्सा कालेजों में दूसरी पारी शुरू की गई थी और मध्य भारत, उड़ीसा, आन्ध्र तथा तिरुवांकुर-कोचीन में चार नए कालेज खोले गए। वर्तमान पशु चिकित्सा कालेजों को भी विद्यार्थियों की प्रवेश-सख्या बढ़ाने और प्रशिक्षण की सुविधाओं को अधिक अच्छा बनाने के लिए सहायता दी जा रही हैं। इज्जतनगर में भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान में एक स्नातकोत्तर पशु चिकित्सा कालेज खोला जा रहा है। चूंकि पशु चिकित्सा की डिग्री का पाठ्यक्रम चार साल का होता है, इसलिए बीच के समय में कमी पूरी करने के लिए दो वर्षों का एक तात्कालिक पाठ्यक्रम दस ऐसे केन्द्रों में शुरू कर दिया गया है जिनमें से हर एक में लगभग १०० विद्यार्थी पढ सकेंगे। इन केन्द्रों में जो लोग प्रशिक्षित होंगे, वे पशु चिकित्सा कालेज में प्रशिक्षण प्राप्त लोगों के साथ तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति करेंगे। पशु पालकों और अन्य मातहत कर्मचारियों जैसे कंपाउंडरों और मरहम-पट्टी करने वालों की कमी को पूरा करने के लिए राज्य सरकारें कार्रवाइयां कर रहीं है। अनेक राज्यों में कृत्रिम गर्भाधान, मुर्गी पालन, मृत पशुओं को काम में लाने या खाल उतारने आदि विषयों में विशेष प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं। भारत सरकार सूअर पालने तथा उनके रोगों के बारे में शिक्षा देने के लिए एक पाठ्यक्रम चलाने वाली है।

२६. डेरी उद्योग के लिए १,००० कर्मचारियों की व्यवस्था करने के लिए करनाल में राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान के साथ ही एक डेरी विज्ञान कालेज भी खोलने का प्रस्ताव है। फिलहाल डेरी विज्ञान की शिक्षा सुविधाएं केवल डिप्लोमा स्तर तक ही हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में करनाल और बंगलौर में, आरे और हरिन घाटा की दूध बस्तियों में और इलाहाबाद के कृषि संस्थान में डेरी उद्योग के विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण के लिए कम समय वाले अनेक विशेष पाठ्यक्रम चलाए जाएंगे। पशुधन के विकास में इन संस्थाओं के साधनों का उपयोग किया जा सके, इसलिए केन्द्रीय गोसंवर्धन परिषद ने अधिक महत्वपूर्ण गोशालाओं में नियुक्त करने के लिए गोशाला कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का बारह महीने का पाठ्यक्रम चलाया है।

२. मछली पालन का विकास

२७. इधर कुछ वर्षों से ताजे पानी की मछली और समुद्री मछली दोनों का ही उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न किए गए हैं। इस दिशा में जो भी विकास हुआ है, उसे केन्द्र और राज्य सरकारों की प्रेरणा तो मिली ही है, साथ ही भारत-अमेरिकी टेकनीकल सहयोग कार्यक्रम, भारत-नार्वे मछली पालन सामुदायिक विकास कार्यक्रम और खाद्य एवं कृषि संगठन से भी उसे गति मिली है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस पर ५ करोड़ रुपए खर्च किए गए थे और द्वितीय योजना में इस पर कुल मिलाकर लगभग १२ करोड़ रुपए खर्च करने का विचार है। इसमें से लगभग ४ करोड़ रुपए खाद्य और कृषि मंत्रालय खर्च करेगा और लगभग ८ करोड़ रुपए राज्यों की योजनाओं में खर्च होंगे।

२८. प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में मछली पालन सम्बन्धी आंकड़ों की स्थिति असंतोषजनक थी। इनमें कुछ हद तक सुधार हुआ है और खाद्य और कृषि मंत्रालय का विचार है कि मछलियों के उत्पादन, प्राप्ति और बिक्री की सूचना देने वाले ठीक आंकड़े प्राप्त करने के लिए कदम उठाए जाएं। यद्यपि मछली उत्पादन के आंकड़े बिलकुल ही नाकाफी हैं, फिर भी यह अनुमान किया जाता है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में कुल मछली उत्पादन एक करोड़ मीटरिक टन था, जिसमें से लगभग २० प्रतिशत घरेलू उपयोग में आती थी और शेष समुद्री मछली या बाजार में बेचने योग्य अतिरिक्त अन्तर्देशीय मछली थी। अनुमान है कि प्रथम योजना काल में मछली उत्पादन १० प्रतिशत बढ़ा है क्योंकि १९५५-५६ में उत्पादन ११ लाख मीटरिक टन था। आशा है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना में मछली उत्पादन ३३ प्रतिशत बढ़ जाएगा, अर्थात् १४ लाख मीटरिक टन हो जाएगा। मछली का वर्तमान उपभोग प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष ४ पौंड से कुछ कम है। दस वर्षों के समय में मछली उत्पादन को ५० प्रतिशत बढ़ा देना एक ऐसा काम है जिसे पूरा करना व्यावहारिक रूप से सम्भव है।

अन्तर्देशीय मछली पालन

२९. अन्तर्देशीय मछली पालन का विकास छोटे पैमाने पर प्रथम पंचवर्षीय योजना के पहले से किया जा रहा था, लेकिन उसके बाद से इसे और भी बढ़ाया गया। पश्चिम बंगाल में प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में २,५०० एकड़ के अर्ध-त्यक्त तालाब, ३७८ एकड़ के अल्प विकसित झीलों और लगभग १३,५०० एकड़ के छोटे-मोटे जलाशय मछली पालन के लिए अपनाए और काम में लाए गए थे। उड़ीसा में लम्बे-चौड़े दलदल क्षेत्रों को मछली पालन के लिए पुन: प्राप्त किया गया और काम में लाया गया है। मछली बीजों को और अधिक

सुलभ बनाने पर विशेष बल दिया गया है। १९५४-५५ मे लगभग २६ करोड अंडों और छोटी मछलियों को जुटाया गया। पालन-पोषण करने वाले तालाबों में या लाने-ले जाने के दौरान मे जो छोटी मछलिया और आगुलिक मछलिया मर जाती है, उनकी मृत्यु दर को घटाने के प्रयत्न काफी हद तक सफल हुए है। जिन जल क्षेत्रो पर कोई ध्यान नही दिया जाता था, उन्हें मछली पालन के उपयोग मे लाने के लिए कुछ राज्यो ने कानून बना दिए है। जल क्षेत्रो का सर्वेक्षण भी किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, १९५४-५५ मे विभिन्न राज्यों में लगभग २५,००० एकड़ जल क्षेत्र का सवक्षण किया गया और उसके अतिरिक्त ६,००० एकड़ से अधिक जल क्षेत्र का 'स्टाक' किया गया। बडे-बडे जलाशयो मे मछली पालन का विकास करने का कार्य भी उठाया गया है। मद्रास मे मट्टूर जलाशय विकसित किया गया है, जहा से अब करीब हर रोज ५ टन मछली मिल सकती है। बहुत-से दूसरे जलाशयों मे भी मछली पालन का काम या तो शुरू कर दिया गया है या शुरू करने की योजना है। राज्यों में अन्तर्देशीय मछली पालन के और अधिक विकास के लिए लगभग ५ करोड़ रुपए की व्यवस्था है।

समुद्री मछली पालन

३०. यद्यपि अन्तर्देशीय मछली पालन का विकास महत्वपूर्ण है, तथापि मछली पालन के विकास कार्यक्रम का अधिकतर भाग समुद्र से मछली उपलब्ध करने से सम्बद्ध है। मछुए जिस वातावरण मे रहते है, उसे ध्यान में रखकर उनकी समस्याओं को समझना और सुलझाना होगा। इस क्षेत्र में प्रौद्योगिक विकास एवं अनुसंधान को तो काफी योग देना ही है, किन्तु विशेष बल स्वयं मछुए पर, उसके साज-सामान और साधनों पर, और उसके समाज तथा उस विधि पर होना चाहिए जिस पर उसके काम का पुनर्गठन और विकास किया जाएगा। मछुओं में सामुदायिक विकास कार्यों की विशेष समस्याएं विस्तार सगठन और प्रौद्योगिक उन्नति की है। तिरुवाकुर-कोचीन मे भारत-नार्वे मछली पालन योजना कार्य ने जो कार्य इस समय उठाए है, उनको यदि हम इस पहलू से देखें तो वास्तविक महत्व प्रकट होगा। मछली पालन विकास में उन गांवों और गांवों के समूहों के सामाजिक और आर्थिक जीवन के प्रति संगठित दृष्टि पर उत्तरोत्तर अधिक बल दिया जाना चाहिए जिनकी मुख्य आजीविका मछली पालन ही है।

३१. इन गांवो में बाजार के लिए मछली पकड़ने का काम होता है, इसलिए इन गांवों की अर्थ-व्यवस्था बहुत हद तक मछलियों को इकट्ठा करने, उन्हें एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाने तथा उनकी बिक्री की व्यवस्था से सम्बद्ध है। आज वस्तुस्थिति यह है कि अधिकतर मछुए अपनी घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति और उत्पादन सम्बन्धी साज-सामान प्राप्त करने के लिए बिचौलियों पर निर्भर करते है। अक्सर उन्हे कर्जे की अदायगी के रूप में पहले से ही उन मछलियों को देने का वायदा करना पड़ता है जो वे पकड़ेंगे। फलस्वरूप कम उत्पादन होता है और अधिकांश मछुओ को अत्यन्त दरिद्रता का जीवन बिताना पड़ता है। इसके अतिरिक्त उनके निरन्तर शोषण का रास्ता खुला रहता है। यह काम कठिन अवश्य है, पर समुद्र से मछलियां पकड़ने के काम का और स्वयं मछुआ समाज का पुनर्गठन बहुत कुछ सहकारी ढंग पर करना होगा। प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस दिशा में उपयोगी शुरुआत की जा चुकी है। मछुओं की लगभग ८०० सहकारी संस्थाएं संगठित की गई हैं। इनमें से अधिकांश ऋण से सम्बन्धित है, पर कई संस्थाएं साज-सामान की खरीद के लिए सुविधाएं देती हैं

और कुछ संस्थाए सहकारी उत्पादन तथा बिक्री भी करती है। बम्बई मे मछुओ की सहकारी संस्थाओं ने उत्साहवर्धक प्रगति की है। इन सस्थाओ को केन्द्रीय संगठन का सहयोग मिलता है, जो औसत से लगभग ८ लाख रुपए मूल्य की मछलियो की प्रति वर्ष बिक्री करवाता है। इन सस्थाओ ने सरकार की सहायता से नावों, इजनो और बर्फ के तथा ठडे गोदामों की व्यवस्था के लिए कदम उठाए है। मद्रास में २३६ सस्थाएं है। उनमे से अधिकांश ऋण देती है, लेकिन कुछेक ने अनाज, सूत, पाल, मछली मारने के काटे आदि मुहैया करने का भी प्रबन्ध किया है। उड़ीसा में मछुओं के सहकारी संगठन लगभग ३२ लाख रुपए मूल्य की मछली प्रति वर्ष बेचते है और मछुओ को जरूरी वस्तुए मुहैया करने का प्रबन्ध करते है। सौराष्ट्र के जिन गावों मे मछली पकड़ी जाती है, वहां सहकारी बिक्री का काम भी विकसित किया गया है।

३२. समुद्र से मछली पकड़ने के कार्य का विकास मुख्य रूप से इन चार शीर्षको के अन्तर्गत आता है :—(१) मछली पकड़ने के तरीकों में सुधार, (२) गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के काम का विकास, (३) मछली पकड़ने के लिए बन्दरगाहों की व्यवस्था, और (४) मछलियों को एक जगह से दूसरी जगह भेजने, उन्हें गोदामों में रखने तथा उनकी बिक्री की व्यवस्था और उनका उपयोग। आजकल मछुए जिन बजरों का प्रयोग करते है, उनसे वे अधिकतर तट से ७ से लेकर १० मील तक के इलाको मे ही मछलियां पकड़ पाते है, इसलिए अधिक दूर या अधिक गहरे पानी की मछलियों को बहुत ही कम पकड़ा जाता है। इन बजरो का यंत्रीकरण और मछली पकड़ने के तरीको मे सुधार—ये दोनों ही बाते तटवर्ती समुद्री क्षेत्र मे अधिक मछलिया पकडने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। पिछले पांच वर्षों में बम्बई मे लगभग ६०० नावो मे 'मोटर' इंजन लगा दिए गए है और बम्बई शहर में पहुंचने वाली मछली की मात्रा १०,००० टन से बढ़कर चौगुनी, अर्थात ४०,००० टन प्रति वर्ष हो गई है। सौराष्ट्र में ४० नावों मे 'इन्न बोर्ड' इंजन लगा दिए गए हैं। इनके अतिरिक्त कुछ नावो में 'आउट-बोर्ड' मोटरों का प्रयोग किया जाता है। कुछ समुद्रतटीय राज्यों में विदेशी विशेषज्ञो की सहायता से वर्तमान नावों को सुधारा जा रहा है और नए डिजाइनों का अध्ययन किया जा रहा है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे मछली पालन के उन्नत तरीकों के विकास और यंत्रीकरण से सम्बन्ध रखने वाले मौजूदा कामों को बढ़ाने की व्यवस्था है।

३३ गहरे समुद्र में मछली पकड़ने के बम्बई-स्थित केन्द्रीय स्टेशन ने मछली स्थलो के नक्शे बनाने के लिए, भारतीय दशाओ मे किस-किस तरह के बेड़े और गिग्रर उपयोगी हो सकते है यह जानने के लिए, मछली मारने के मौसमो का पता लगाने के लिए और कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए मछली पकड़ने की गवेषणात्मक कार्रवाइयां की है। बम्बई और सौराष्ट्र के समुद्र तट से ४० फैदम सीमा आगे वाले क्षेत्रो के नक्शे काफी हद तक बना लिए गए है और कुछ बहुमूल्य मछली स्थलों का पता लगाया गया है। सात जहाजों वाले बेड़े के द्वारा मछली पकड़ने के तरीकों की परीक्षा की जा रही है। पश्चिम बगाल सरकार ने इसी तरह का काम बंगाल की खाड़ी में शुरू किया है और मद्रास, तिरुवांकुर-कोचीन तथा सौराष्ट्र मे भी विभिन्न प्रकार की नावों और गियरों की सहायता से प्रयोगात्मक मछली पालन का कार्य प्रगति कर रहा है। गहरे समुद्र मे मछली पकड़ने के बम्बई-स्थित केन्द्र के कामो को द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे विस्तृत किया जाएगा और ४० फैदम सीमा से आगे मछली स्थलों के नक्शे बनाए जाएंगे। दक्षिण में तथा पश्चिमी और पूर्वी तटों पर मछली पकड़ने के

सम्बन्ध में परीक्षण कार्य किए जाएंगे और मछली स्थलों के नक्शे भी बनाए जाएंगे। कोचीन, विशाखापत्तनम और पोर्ट ब्लेयर में मछली पकडने के लिए तीन परीक्षण केन्द्र स्थापित करने की योजना है।

३४. मछली पकड़ने के तटवर्ती और यंत्रीकृत कार्यक्रमों के विस्तार के साथ-साथ मछली पकड़ने के जहाजों के लिए बन्दरगाह की सुविधाओं मे सुधार करना आवश्यक है। नए बन्दरगाह बनाने और वर्तमान बन्दरगाहों मे जहाजों के ठहरने के लिए भी प्रबन्ध करना है। इस क्षेत्र मे जो बहुत-सी कठिनाइयां है, उनका अध्ययन खाद्य तथा कृषि संगठन के विशेषज्ञों की सहायता से किया जा रहा है। समुद्रतटीय राज्यों की योजनाओं मे मछली पकड़ने के लिए बन्दरगाह की सुविधाओं मे विस्तार करने की व्यवस्था है।

३५. यद्यपि कुछ क्षेत्रों में, विशेषकर पश्चिमी तट पर मछलियां बहुतायत से मिलती है, लेकिन उन्हें एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाने और ठंडे गोदामों की सुविधाए नाकाफी हैं। इस लिए अन्तर्देशीय क्षेत्रों में मछली अपर्याप्त और अनियमित रूप से ही पहुंच पाती है। राज्यों की योजनाओं में परिवहन की सुविधाओं के सुधार पर जोर दिया गया है। बम्बई में ६० ट्रकों और ३० ढोने वाले लांचों को शहर मे मछली लाने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। केन्द्रीय सरकार का विचार है कि लम्बी यात्रा के लिए रेलवे के ऐसे २० डिब्बे प्राप्त किए जाए जो शीतानकूलित हों। अंडों और छोटी मछलियों को कलकत्ते से अभावग्रस्त क्षेत्रो में भेजने के लिए किसी हद तक वायु-परिवहन का उपयोग भी किया जा रहा है। बर्फ और ठंडे गोदामों की सुविधाओं की आवश्यकता अनुभव करके केन्द्रीय सरकार ने बम्बई में एक गोदाम स्थापित किया है। मद्रास सरकार ने दो गोदाम कोजीकोड और मंगलौर में खोले हैं और भारत-नार्वे कार्यक्रम के अन्तर्गत एक बर्फ का गोदाम तिरुवांकुर-कोचीन में स्थापित किया जा रहा है। भारत-अमेरिकी टेकनीकल सहयोग कार्यक्रम के अन्तर्गत बर्फ के कई छोटे तथा ठंडे गोदाम महत्वपूर्ण मछली केन्द्रों में स्थापित किए जा रहे हैं, जिनमें से कुछ सहकारी संस्थाओं द्वारा संचालित किए जाएंगे।

३६. अनेक स्थानों पर मछली बाजारों का नियन्त्रण या तो बिचौलियों या व्यापारियों के गुटों के हाथ में है। इसके परिणामस्वरूप, मछुए को अपने माल के लिए बहुत कम दाम मिलता है और खरीदार को अपनी खरीद के लिए अधिक ऊंचा दाम देना पड़ता है। कुछ क्षेत्रों में बिक्री के लिए काफी बड़ी मात्रा में मछली फाजिल रहती है। उदाहरण के लिए, सौराष्ट्र में पकड़ी जाने वाली कुल मछली का प्राय: ६० प्रतिशत बाहर भेजा जा सकता है। उड़ीसा में चिल्का झील क्षेत्र की स्थिति भी यही है। अपर्याप्त परिवहन सुविधाओं के कारण बहुत-सी मछली उपचार सुरक्षा केन्द्रों में भेज दी जाती है, जहां आवश्यक उपचार करने के बाद उसे सुखाई गई मछली के रूप में बेचा जाता है। राज्यों की योजनाओं में सुखाई गई मछली के सुरक्षा उपचार तथा बिक्री के अच्छे प्रबन्ध करने की व्यवस्था है। इस समय लगभग २७,००० टन मछली पड़ोसी देशों को निर्यात होती है। यह अधिकतर सुखाई हुई, सूखी नमकीन या गीली नमकीन मछली के रूप में होती है। जो खराब मछली खाने के लायक नहीं रहती, वह मछलियों के भोजन अथवा मछलियों की खाद के रूप में तैयार कर दी जाती है। कुछ राज्यों में शार्क मछली का तेल भी बनाया जाता है। शार्क मछली का तेल थोड़ा-बहुत निर्यात किया जाता है। इस बात के लिए भी कदम उठाए जा रहे हैं कि

कुटीर उद्योग के ढंग पर समुद्री घास-पात का उपयोग किया जाए और उससे समुद्री घास, जेली, सिवार पशुओं का भोजन तथा खाद बनाई जाए। मछली पालन के उप-उत्पादनो से सम्बन्धित उद्योग के विकास के लिए पर्याप्त क्षेत्र है और मछलीमार गावो मे काम करने वाली बहुधंधी संस्थाओं को इसे भी अपने काम का एक अंग समझकर करना चाहिए।

अनुसंधान और प्रशिक्षण

३७. द्वितीय पचवर्षीय योजना में अनुसंधान के विकास को बहुत महत्व दिया गया है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के पूर्व ही एक शुरुआत की गई थी, जब कि १९४७ मे केन्द्रीय सरकार ने दो मछली पालन अनुसंधान केन्द्र स्थापित किए थे—एक समुद्री मछली के लिए मंडपम में और दूसरा ताजे तथा खारे पानी की मछलियों के लिए कलकत्ते में। केन्द्रीय समुद्री मछली अनुसंधान केन्द्र, जिसके उपकेन्द्र बम्बई, कारवाड़, कालीकट, कोचीन और मद्रास में हैं, समुद्र में मछली पकड़ने की समस्याओं पर अनुसंधान कार्य करता है। इस अनुसंधान कार्य में मछली पकड़ने के स्रोतों का अनुमान लगाना, उन स्रोतों को किस हद तक काम में लाया जा रहा है, इसका पता लगाना उत्पादन बढ़ाने की सम्भावनाएं खोजना और मछली को सुरक्षित रखने के उपायों तथा उपयोगों पर विचार करना आदि बातें शामिल है। व्यावसायिक मछली पालन की जिन आर्थिक और टेकनीकल समस्याओं का विशेष रूप से अध्ययन किया गया है, वे ये हैं—मकेरल, सारडीन, प्रान, ट्राल आदि मछलियों को पकड़ने, खारी समुद्रतटीय क्षेत्र को मछली स्थल के रूप मे विकसित करने, समुद्री घास-पात का उपयोग करने आदि का विशेष रूप से अध्ययन किया गया है। छान-बीन से उन अनेक दिशाओं का पता चला है जिनमे मछली पकड़ने और अन्य सम्बद्ध कार्यों के लिए अनेक प्रकार के प्रबन्ध किए जा सकते हैं और मछलियों को सुरक्षित रखा जा सकता है।

३८. अन्तर्देशीय मछली पालन की समस्याओं का अध्ययन केन्द्रीय अन्तर्देशीय मछली पालन अनुसंधान केन्द्र, बैरकपुर (कलकत्ता) और उसके तीन उपकेन्द्रों मे किया जा रहा है। इलाहाबाद मे नदियों और झीलों की मछलियों के बारे मे, कटक मे तालाबों की मछलियो के बारे में और कलकत्ते में नदियों के दहानों की मछलियों के बारे में खोज की जा रही है। मछली पालन और परिवहन की प्रारम्भिक स्थितियों मे ही जो अण्डे और आंगुलिक मछलियां नष्ट हो जाती है, उनकी मात्रा कम करने की विधियां खोज निकालने के लिए भी अध्ययन किया गया है। मछली पालन के तरीकों मे सुधार एवं मानकीकरण करने की दिशा में भी प्रगति हुई है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए जो शोध कार्यक्रम बनाए गए है, उनमें नदी के दहानों, खारे पानी, प्राकृतिक एव कृत्रिम झीलों, तथा बड़ी-बड़ी नदियों मे मछली पालने पर, मछली केन्द्रों में जल दूषित होने के प्रभावों पर तथा अनावश्यक घास-पात को बढ़ने से रोकने के प्रश्नों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाएगा। अनेक राज्यों मे स्थानीय समस्याओं का अध्ययन किया जा रहा है और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने विशेष योजनाएं चलाई है। १९५४ में नियुक्त की गई एक समिति ने मछली पालन के अनुसधान कार्य की समीक्षा की और सलाह दी कि केन्द्रीय स्टेशनों के विस्तार कार्यक्रम बनाए जाएं। केन्द्रीय मछली पालन अनुसंधान केन्द्रों, राज्यों के मछली पालन विभागों और विश्वविद्यालयों के मछली पालन अनुसंधान कार्य को स्थायी मछली पालन अनुसंधान समिति की सहायता से समन्वित किया जाता है। एक मछली पालन प्राविधिक केन्द्र स्थापित किया जाएगा, जिसमें मछलियां पकड़ने के जाल और अन्य यन्त्रों के डिजाइन तैयार करने के

बारे मे तथा उन्हे किन वस्तुओं से तैयार किया जाए और किस प्रकार सुरक्षित रखा जाए, इस विषय मे खोज की जाएगी । इस केन्द्र मे मछलियो को ताजी, ठडी और जमी स्थिति मे गोदामों मे रखने, मछलियो और अन्य समुद्री उत्पादनों को खराब होने से बचाने की विधि एवं उनके उपयोग के बारे मे और बिक्री तथा विस्तार के हेतु उनकी किस्मे तथा वर्ग निश्चित करने के सम्बन्ध मे भी खोज की जाएगी ।

३९. कलकत्ता-स्थित केन्द्रीय अन्तर्देशीय मछली पालन अनुसंधान केन्द्र मे मछली पालन विभागों के कर्मचारियों और अनुसंधान कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण की सुविधाए दी जाती है । गहरे समुद्र मे मछली पकड़ने के बम्बई-स्थित केन्द्रीय स्टेशन के जहाजों मे और कलकत्ते मे पश्चिम बगाल सरकार के जहाजो मे शक्ति की सहायता से मछली पकड़ने का प्रशिक्षण दिया जाता है । द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ये सुविधाएं बढ़ाई जाएगी । मछुओं को प्रशिक्षित करना उतना ही जरूरी है जितना कि टेकनीशियनों और अनुसंधान कार्यकर्ताओ को । बम्बई और सौराष्ट्र की सरकारों के साथ केन्द्रीय सरकार ने यत्रीकृत मछली पालन के लिए मछुओं की खातिर एक प्रशिक्षण केन्द्र बम्बई के निकट खोला है और ऐसे ही अन्य केन्द्र तूतीकोरिन और कोचीन मे स्थापित किए जाएंगे । भारत-नार्वे योजना कार्य के अन्तर्गत तिरुवांकुर-कोचीन मे यत्रीकृत मछली पालन की शिक्षा दी जा रही है । राज्य सरकारों के वरिष्ठ अधिकारियों के लिए दो केन्द्रीय अनुसधान केन्द्रों पर कम समय वाले प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम की सुविधाएं भी है ।

४०. पिछले कुछ वर्षों में उपयोगी अनुभव प्राप्त हुए है । सुविधाओं की व्यवस्था करने से सम्बन्धित समस्याओ और मछुओं के बीच प्रसार कार्य के संगठन का और निकट से अध्ययन करना जरूरी है, ताकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में समुद्रतटवर्ती राज्यों मे मछुओं के बीच सहकारी विकास का विस्तृत कार्यक्रम आरम्भ किया जा सके ।

अध्याय १५

वन तथा भूमि संरक्षण

१. वन

भारत के वन न केवल विभिन्न विशेष गुणों वाली नाना प्रकार की इमारती लकड़ी के स्रोत है, जो कि निर्माण, प्रतिरक्षा, सचार आदि के लिए विस्तृत रूप से उपयोग मे आती है, अपितु उन उद्योगों की आवश्यकताओं के लिए भी उपयोगी है जिनका प्रमुख कच्चा माल लकड़ी ही है। शहरो के लिए वे ईधन के स्रोत है और देहातियो की लकड़ी सम्बन्धी छोटी-मोटी आवश्यकताओ को भी पूरा करते है। चराई की सुविधा, भूसा, चारा आदि भी हमें वनों से प्राप्त होता है। इन सब प्रत्यक्ष लाभों के अलावा वनों का सबसे महत्वपूर्ण काम ढलुवां भमि मे पानी द्वारा मिट्टी की काट को रोकना और समतल भूमि की आर्द्रता कायम रखना तथा वातसकाट को रोकना है। नदी के जल स्रवण क्षेत्र में बाढ़ो को सयमित करने तथा नदियो के निरन्तर एव सन्तुलित प्रवाह को कायम रखने में वन सहायक सिद्ध होते है। जलवायु को सुधारने में भी उनका काफी प्रभाव होता है। इन संरक्षक लाभो का तभी अनुभव किया जा सकता है जब कि वनों का विस्तार पर्याप्त हो। परन्तु बिखरे हुए वृक्षो तथा इनके छोटे-छोटे झुण्डो का भी काफी लाभप्रद प्रभाव होता है। उचित रूप से बनाई गई वृक्ष मेखला और वात-रक्षा पट्टी काफी हद तक कृषि की उपज वृद्धि मे सहायक सिद्ध होती है। अन्त मे, वन नाना प्रकार के जीव-जन्तुओं के लिए प्राकृतिक घर है। वनो के विनाश का अर्थ प्राकृतिक जीव जन्तुओं का विनाश है।

२. ये तो कुछ प्रकट तथ्य है, परन्तु ये सब इस बात पर जोर देते है कि कुल क्षेत्रफल का काफी भाग स्थायी वनों के रूप में रहने देना चाहिए। वन उचित अनुपात में वितरित हो और साथ ही इस बात का ध्यान भी रखा जाए कि उनका अत्यधिक उपयोग, दुरुपयोग व अतिक्रमण न हो। भारत के कुल क्षेत्रफल में से २२ प्रतिशत वनभूमि है। यह असन्तोषजनक नही दीखता, परन्तु वनों के रूप में वर्गीकृत क्षेत्रो का इमारती लकड़ी के रूप में मूल्य उनकी उत्पादन क्षमता की तुलना मे बहुत गिरा हुआ है। और हमारे देश के वनो की प्रति एकड़ उत्पादन क्षमता भी पश्चिमी देशों के वनों की उत्पादन क्षमता से कही कम है। भारत में अधिकतर वन नाममात्र को ही है और इनका विभिन्न प्रकार से दुरुपयोग किया जाता है। भारत की वन भूमि उत्तर-पश्चिम में ११ प्रतिशत से लेकर मध्यवर्ती प्रदेश में ४४ प्रतिशत तक के अनुपात मे है। इस प्रकार भारतीय वन भूमि असमान रूप से वितरित है। जहा जंगलो की अधिक आवश्यकता है, वहां वे बहुत कम है, जैसे कि भारत के सबसे सघन आबादी वाले तथा गहनतम कृषि वाले गंगा के मैदान में। शुष्कतर प्रदेशों में कम घने वन होने के कारण देश के अधिक भाग में ऊष्णदेशीय प्रकृति के वन पाए जाते है। प्रत्येक स्थान के वनों में नाना प्रकार के वृक्ष पाए जाते है जिनमें से बहुत कम की आर्थिक उपयोगिता है। इस प्रकार कीमती, मिले-जुले, तथा झड़ने वाले पत्तों के वृक्षो से परिपूरित एक एकड़ वनभूमि की उपयोगी इमारती लकड़ी का उत्पादन भी योरोपीय देशो के शुद्धतर

वनों के एक एकड़ क उत्पादन से कम है। लकड़ी काटने तथा उसे वनो से बाहर लाने में होने वाली व्यर्थता को रोकने से तथा अनुसधान द्वारा निम्न श्रेणी की इमारती लकड़ी के उपयोगो को ढूढने से इस बारे में कुछ हद तक सुधार किया जा सकता है (वास्तव में कुछ हो भी चुका है)। अमेरिका, रूस आदि प्रगतिशील देशों के कुल क्षेत्रफल मे से प्राय एक तिहाई वनभूमि होती हैं। इन बातो को तथा विशेष रूप से प्राकृतिक ऊष्णदेशीय वनो की उत्पादन क्षमता को ध्यान में रखते हुए १६५२ के राष्ट्रीय वन नीति प्रस्ताव मे यह प्रस्तावित किया गया कि धीरे-धीरे देश के कुल क्षेत्रफल मे से वनभूमि को ३३ प्रतिशत तक बढा लेना चाहिए जिसमे से ६० प्रतिशत पर्वतीय प्रदेशों मे हो तथा २० प्रतिशत समतल भू-भागों में हो।

३. यह बात स्मरणीय है कि औद्योगीकरण के विकास के लिए उठाए गए प्रत्येक कदम के साथ-साथ वन पदार्थों की मांग बढ़ती जाएगी। अनेक उद्योगो मे प्रमुख कच्चे माल के रूप मे लकड़ी इस्तेमाल होगी और जिन उद्योगों मे ऐसा नही होगा, उनमें इमारती लकड़ी न केवल कारखानों के निर्माण मे काम आएगी बल्कि उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं को पैक करने के लिए नियमित रूप से इस्तेमाल होगी। शिक्षा सम्बन्धी तथा अन्य कार्यक्रमो के लिए आवश्यक बढ़ते हुए कागज के उत्पादन के लिए कच्चा माल भी इन्ही वनो से प्राप्त करना है। यह केवल संयोग नही कि दुनिया के देश जो सबसे अधिक प्रगतिशील है उनमे प्रति व्यक्ति के पीछे लकड़ी की खपत सबसे ऊची है। भारत मे प्रति व्यक्ति के पीछे अनचीरी लकड़ी की खपत केवल १·४ घनफुट है, जबकि अमरीका मे ५८ घनफुट है। ब्रिटेन मे प्रति व्यक्ति पीछे ७८ पौड गूदे की खपत की तुलना मे भारत में केवल १·६ पौंड ही है। अमेरिका तथा रूस मे प्रति व्यक्ति पीछे क्रमशः १·८ तथा ३·५ हैक्टर वनभूमि है, जबकि भारत में केवल ०·२ हैक्टर ही है। ये आंकड़े उस भारी कमी की ओर संकेत करते है जिसको दूर करना रहन-सहन के तुलनात्मक स्तर को प्राप्त करने के लिए परमावश्यक है।

४. वन नीति ऐसी बनानी होगी जिससे एक ओर वन पदार्थो की दीर्घकालिक वृद्धि हो और दूसरी ओर निकटवर्ती भविष्य में इमारती लकड़ी की बढती हुई माग पूरी हो सके। इन दोनों दिशाओं में यथार्थ दृष्टि से योजना बननी चाहिए। कहीं-कही पर पाए जाने वाले कीमती वृक्षों के साथ, ऊष्णदेशीय वनो की मिली-जुली प्रकृति के कारण होने वाली हानियों के बारे में पहले से ही विचार किया जा चुका है। इससे मिली-जुली प्रकृति वाले वनों के प्रबन्ध तथा पुनरुत्थान में अनेक कठिनाइया है। सागवान के विषय में वनों के अनेक सघन भागों में वृक्ष काटकर गिराने तथा कृत्रिम पुनरुत्थान के अलावा इन कठिनाइयो को दूर करने का अन्य कोई चारा न था। उद्योगों में काम आने वाली आवश्यक लकड़ी को प्राप्त करने के लिए ऐसा ही कोई हल ढूढना पड़ेगा। लकड़ी पर निर्भर उद्योगों की सफलता के लिए यह आवश्यक, है कि उन्हें उचित कीमत पर तथा उचित मात्रा में निरन्तर लकड़ी मिलती रहे। अतः वनों के आगामी प्रबन्ध के लिए यह आवश्यक होगा कि औद्योगिक (तथा व्यापारिक) लकड़ी के उत्पादन के लिए कृत्रिम वन उगाने की ओर अधिक ध्यान दिया जाए। इसमे पैदा होने वाले खतरों तथा कठिनाइयों को पूरी तरह समझा जा चुका है। इन कठिनाइयों को दूर करने तथा खतरों से बचने के लिए वन-वर्द्धनीय अनुसंधान पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए।

५. वनों को विस्तृत करने तथा उनके उत्पादन को बढ़ाने के लिए काफी लम्बी अवधि चाहिए। अत. यह आवश्यक है कि कुछ ऐसे अल्पकालिक उपाय ढूढे जाएं जो कि उनके

दीर्घकालिक विकास के लिए हानिकारक न हों। घटिया तथा गौण श्रेणी की इमारती लकड़ी को उत्तम किस्म की बनाने के लिए उपाय करने चाहिए। इन इमारती लकडियो को मजबूत तथा टिकाऊ बनाने के लिए, प्लाईवुड बनाने, सुखाने तथा तख्ते बनाने आदि के ढग इस्तेमाल किए जा सकते है। सजावटी इमारती लकड़ी का उपयोग करते हुए उसे अधिक टिकाऊ बनाया जा सकता है। व्यर्थ जाने वाली तथा घटिया लकड़ी से चिपबोर्ड, हार्डबोर्ड बनाकर इमारती लकड़ी की कमी को पूरा किया जा सकता है। इमारती लकड़ी काटने तथा उसे वनों से बाहर लाने के तरीकों मे सुधार करने से कीमतों को घटाया जा सकता है और होने वाली व्यर्थता को कम किया जा सकता है।

६. १९५२ के वन नीति प्रस्ताव में वन प्रबन्ध तथा उसके विकास के बारे में मुख्य नियम निर्धारित कर दिए गए है और निम्नलिखित बातों पर जोर दिया गया है

(१) भूमि के उपयोग का एक ऐसा सन्तुलित तथा पूरक ढंग निकाला जाए जिसके अन्तर्गत प्रत्येक किस्म की भूमि का इस प्रकार से उपयोग हो जिससे उत्पादन अधिकाधिक तथा क्षय न्यूनतम हो।

(२) रोकथाम :

(क) उन पर्वतीय प्रदेशों मे वनोन्मूलन को रोकना जहा से देश की भूमि को उपजाऊ बनाने वाली सदा प्रवाहित नदियो को निरन्तर पानी मिलता है;

(ख) नदी के वृक्षहीन तटो पर बढ़ते हुए भूमि के कटाव को रोकना जो कि बेकार पड़ी हुई उबड़-खाबड़ जमीन पर खोहे बनाता है और आसपास की उपजाऊ भूमि को भी बंजर बना देता है;

(ग) समुद्र के घाटो पर बालू के तूफ़ानो को रोकना और बालू के टीलों के स्थानान्तरण को रोकना, विशेषकर राजस्थान की मरुभूमि में;

(३) भौतिक तथा जलवायु सम्बन्धी स्थितियो को सुधारने तथा जन साधारण के कल्याण के लिए जहा भी सम्भव हो वृक्ष लगाए जाएं;

(४) चारे, कृषि सम्बन्धी उपकरणो के लिए थोड़ी-बहुत लकडी और विशेष रूप से ईंधन की वृद्धि निश्चित करनी चाहिए ताकि गोबर को जलाने की जगह खाद के रूप मे इस्तेमाल करके अधिकाधिक अन्न उत्पन्न किया जा सके;

(५) प्रतिरक्षा, सचार तथा उद्योग के लिए आवश्यक इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थों की माग निरन्तर रूप से पूरी होती रहनी चाहिए; और

(६) उपरोक्त आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए प्रतिवर्ष अधिकाधिक राजस्व प्राप्त करना परमावश्यक है।

इन हिदायतों को कार्यान्वित करने के लिए तथा देश के वन साधनों को उपयोगी तथा प्रभावपूर्ण ढंग से विकसित करने के लिए निम्नलिखित उपाय आवश्यक होंगे;

(क) वन क्षेत्रों का विस्तार करके उन्हे सुधारा जाए;

(ख) निकट भविष्य में इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थों की बढ़ती हुई माग को पूरा किया जाए; और

(ग) दीर्घकालिक वन साधनों के विकास के लिए योजना बनाई जाए।

पहली पंचवर्षीय योजना मे प्रगति

७. पहली पचवर्षीय योजना में वनो के विकास के लिए ६.६ करोड़ रुपया स्वीकार किया गया था। पहली योजना की अवधि मे राज्य सरकारो द्वारा वनरोपण, वन प्रदेशों मे यातायात साधन, वन प्रशासन मे समुचित प्रबन्ध तथा गाव निर्माण सम्बन्धी अनेक योजनाएं कार्यान्वित की जा चुकी है। लगभग ७५,००० एकड़ भूमि को वन उगाकर हरा-भरा बनाया गया। लगभग ३,००० मील से भी अधिक वन प्रदेशो मे सड़के बनाई गईं या उनमें सुधार किया गया। २ करोड़ एकड़ भूमि से भी अधिक वन प्रदेश, जो कि लोगो की व्यक्तिगत सम्पत्ति थी, सरकारी प्रबन्ध मे सम्मिलित कर लिया गया और इस विशेष उत्तरदायित्व के लिए प्रशासनिक व्यवस्था को सुदृढ़ किया गया। कार्यकारी योजनाएं बनाने का काम तेजी से होने लगा और नए प्रदेश भी इन योजनाओ के अन्तर्गत सम्मिलित कर लिए गए।

८. केन्द्रीय सरकार ने दियासलाया बनाने की लकड़ी के उत्पादन के लिए एक योजना बनाई थी जिसके अन्तर्गत बड़ी सख्या में पेड लगाए गए। योजना के अन्तिम वर्षो में राज्यों में प्रतिवर्ष ३,००० एकड़ भूमि से अधिक मे ऐसे वृक्ष लगाए गए। केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाई गई मुख्य योजनाओं मे वन अनुसंधान, वन शिक्षा तथा वन्य जन्तु सुरक्षा महत्वपूर्ण थी। वन अनुसधान की दिशा मे जो प्रयत्न किए गए है, उनमे भारत मे मलाया के गन्ने की खेती, हरे बास को अधिक टिकाऊ बनाने के उपचार तथा समुद्री कीड़ो-मकोड़ों से लकड़ी की सुरक्षा से सम्बन्धित अनुसंधान महत्वपूर्ण है। वन उपयोग तथा वन विज्ञान सबधी महत्वपूर्ण एव प्रामाणिक ग्रथों को नया रूप देने तथा उनको संशोधित करने का काम आरम्भ किया गया। वन शिक्षा की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए देहरादून में अतिरिक्त स्थान रखे गए और अन्य उपकरण जुटाए गए। १९५२ मे भारतीय वन्य जीव-जन्तु बोर्ड बनाया गया जिसने जीव-जन्तुओं की सुरक्षा के लिए बड़ा उपयोगी कार्य किया है। दिल्ली मे "प्राणि-विज्ञान" सम्बन्धी तथा वनस्पति विज्ञान सम्बन्धी नया पार्क स्थापित करने का बुनयादी काम किया जा चुका है।

दूसरी योजना मे वन संबंधी कार्यक्रम

९. प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान मे आरम्भ किए गए कार्यो को आवश्यकतानुसार चालू रखने के अतिरिक्त दूसरी योजना के कार्यक्रम मे निम्नलिखित उपाय और सुझाव भी शामिल हैं :—

(१) वनरोपण और कम उपजाऊ वन प्रदेशो मे सुधार करना तथा वन विस्तार करना;

(२) व्यापारिक और औद्योगिक महत्व वाले पेड़ लगाना;

(३) निकट भविष्य के लिए इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थो की उपज बढ़ाने के लिए उन्नत ढग अपनाना;

(४) वन्य जीव-जन्तुओं की सुरक्षा करना;

(५) वनों में काम करने वाले कर्मचारियों और श्रमिकों की दशा मे सुधार करना;

(६) वन अनुसंधान पर अधिक जोर देना;

(७) अधिक से अधिक टेक्नीकल कर्मचारियो का प्रबन्ध करना; तथा

(८) देश भर की वन विकास योजनाओ को कार्यरूप देने मे केन्द्रीय सरकार के नेतृत्व और समन्वय की व्यवस्था करना ।

विभिन्न राज्यो ने समान और नियमित आधार पर अपनी स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वन विकास योजनाए बनाई । दूसरी पंचवर्षीय योजना मे वन विकास के लिए लगभग २७ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है । केन्द्रीय सरकार अनुसधान, शिक्षा, प्रदर्शन तथा समन्वय का विशेष ध्यान रखेगी और राज्य सरकारे वन विकास सम्बन्धी योजनाओ का संचालन करेंगी ।

१०. इस बात का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि निम्नतर श्रेणी के वनों का बहुत बड़ा भाग राज्य नियंत्रण के अन्तर्गत आ चुका है । प्रायः इन वनभूमियों की सीमा न तो भूमि पर ही निर्धारित की गई है और न नक्शो पर भी इनका कोई चिन्ह है । यदि वनों को भविष्य में अविवेकी ढंग से काटने और उजड़ने से बचाना है तो जितनी जल्दी हो सके वन अधिनियम के अन्तर्गत इन विस्तृत वन क्षेत्रों की सीमा नियत करके उनकी घोषणा कर दी जाए । अत. यह बात ध्यान में रखते हुए कि वनों का प्रबन्ध अधिक अच्छा हो जाए, राज्य सरकारों को इन क्षेत्रों की पैमाइश करानी चाहिए । साथ ही, इन निम्न-स्तर के उपेक्षित वनों का यथाशीघ्र पुनरुत्थान करना आवश्यक है । वृक्षों तथा अन्य वनस्पति का पुन.रोपण शायद अत्यन्त कठिन व महगा पडे । निकट भविष्य में ऐसे उत्पादक वनों से कोई विशेष लाभ होने की आशा नही है, परन्तु फिर भी उनके संरक्षक गुणो का लाभ उठाने के लिए यथासम्भव पुनःरोपण पर अविलम्ब ध्यान देना आवश्यक है । विचार है कि लगभग ३,८०,००० एकड़ भूमि पर इस ढग से काम किया जाए । इससे देश मे वनभूमि की वृद्धि होगी ।

११. अन्य कामों के उपयोग में आने वाली भूमि को (विशेष रूप से सघन आबादी वाल प्रदेशों में) विकास व विस्तार के लिए प्राप्त करना शायद अत्यधिक कठिन हो, फिर भी कुछ हद तक वनो के विस्तार के उपायों के इस्तेमाल को प्रोत्साहन देना आवश्यक है । सड़को के किनारों, और नहरों के तटों पर संरक्षक मेखलाओं के रूप में तथा गांव की बेकार पड़ी भूमि पर वृक्ष लगाए जाएंगे । आशा की जाती है कि इस प्रकार के वृक्ष अन्त में उत्पादक सिद्ध होंगे ।

१२. वनों में कार्यान्वित की जाने वाली वर्तमान कार्यकारी योजनाओं के अन्तर्गत विभिन्न वन विभागो द्वारा इमारती लकड़ी सीमित मात्रा मे ही उगाई गई है और लकड़ी उगाने के लिए उपयुक्त सभी स्थानों पर काम नही किया गया है । विशेष रूप से जब हमें यह ज्ञात है कि इमारती लकड़ी व अन्य वन पदार्थों के लिए देश की माग वर्तमान उत्पादन से बढ़ चुकी है और साथ ही अनुमान है कि उत्तरोत्तर बढ़ती जाएगी, ऐसे वृक्ष लगाकर वन प्रदेशों को विस्तृत करना लाभप्रद सिद्ध हो सकता है । लगभग ५०,००० एकड़ वन भूमि पर व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सागवान जैसी लकड़ी के वृक्ष लगाए जाएंगे । दियासलाईयां बनाने के काम आने वाली लकड़ी के वृक्ष पहली पंचवर्षीय योजना की तुलना मे अधिक मात्रा में बोए जाएंगे । अगले पाच वर्षों में ५०,००० एकड़ के लगभग भूमि में इस किस्म के पेड़ लगाने का विचार है । इसी तेजी से और पांच साल की अवधि में प्रगति होते रहने पर शायद इस दिशा में हम आत्म निर्भर बन सकते है । इसके अतिरिक्त १३,००० एकड़ भूमि में बबूल तथा गोंद उत्पन्न करने वाले पेड़

लगाए जाएंगे, जो कि कागज, चमड़ा रंगने के तथा कृत्रिम रेशम के उद्योगों के लिए मूल्यवान है। कागज बनाने में काम आने वाले एक विशेष किस्म के घास के बगान लगाने का भी विचार है।

१३. वन सुधार के लिए उपयुक्त योजनाएं दीर्घकालिक प्रकृति की है। अल्पकालिक उपायों में जो कि निकट भविष्य में उत्पादन की उन्नति मे सहायता देंगे, इमारती लकड़ी की निकासी के नए ढंग, वनो मे यातायात का विकास, चिप बोर्ड, प्लाई वुड आदि के अलावा लकड़ी को सुरक्षित करने व सुखाने की प्रक्रिया का और अधिक प्रयोग भी सम्मिलित होगा। योजना मे लकड़ी के लट्ठे बनाने के नए ढंग अपनाने की, विशेषकर वृक्ष काटने व उनकी निकासी के लिए नवीनतम उपकरणों की व्यवस्था भी है। पर्वतीय प्रदेशों में लकड़ी की निकासी के लिए तार से बने हुए रस्सों के द्वारा तथा इसी प्रकार के अन्य सस्ते उपायों से दुर्गम स्थानों के वन पदार्थो की पहले से अधिक प्राप्ति हो सकेगी। पंजाब, हिमाचल प्रदेश, जम्मू व कश्मीर, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बगाल तथा बिहार के कुछ भागों मे, मद्रास तथा मैसूर के पहाडी वनों मे इस प्रकार के उपायों द्वारा विशेष लाभ हो सकता है। नए ढंग से लट्ठे बनाने के साथ-साथ वनों मे यातायात पर भी ध्यान देना आवश्यक है। योजना के अन्तर्गत वनों में ७,४०० मील नई सडकों का निर्माण करने या उनकी मरम्मत की व्यवस्था की गई है। व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इमारती लकडी के बढ़े हुए उत्पादन के साथ-साथ वनों में प्राप्त होने वाली सब किस्म की लकड़ियों का भी पूरी तरह इस्तेमाल होना चाहिए। निस्संदेह भारतीय वनों मे निम्नतर श्रेणी की इमारती लकडी बहुलता से प्राप्त होती है, जो कि उचित प्रकार से सुखाने और सुरक्षित करने के उपचार के बाद व्यापारिक लकड़ी की मांग को पूरा कर सकती है। इसलिए योजना में केन्द्रीय सरकार द्वारा इमारती लकड़ी के सुखाने या उसे अधिक टिकाऊ बनाने तथा अन्य उपचार करने के तीन या चार कारखाने स्थापित करने की व्यवस्था है और राज्यों मे भी इसी प्रकार के छोटे पैमाने पर १० कारखाने खोल जाएंगे, ताकि निम्नतर श्रणी की इमारती लकड़ी को अधिक उत्तम बनाया जा सके और उसका पूरा उपयोग किया जा सके।

१४. अभी तक वन प्रदशों के विकास के लिए बनाई गई योजनाओं को कार्यरूप देने में और उनके विकास में सबसे बड़ी कठिनाई यह पेश आती है कि देश में इनसे सम्बन्धित आंकड़ों की जानकारी का अभाव है। वन पदार्थो, विशेषकर इमारती लकड़ी की उपज तथा इसकी वर्तमान तथा भविष्य में होने वाली खपत के रुख का अध्ययन (खाद्य व कृषि संस्थाओं के सहयोग से) करना होगा; इससे भविष्य में उपज की योजना बनाने में सहायता मिलेगी।

१५. भारतीय वन छोटे-मोटे वन पदार्थों से परिपूर्ण है। इनमें बांस, बेंत, राल तथा विशेष किस्म के तेल पैदा करने वाले पेड़, जड़ी-बूटियां, घास आदि बहुलता से मिलते है। बांस तथा लाख जैसी प्रसिद्ध वस्तुओ की खेती और उनकी खपत सन्तोषजनक है। इसलिए समस्त छोटे-मोटे वन पदार्थो के नियमित तथा पर्याप्त मात्रा में उत्पादन तथा उनके गुणों की सुरक्षा को ध्यान म रखते हुए उन्हें पैदा करने, उनका संग्रह करने तथा बिक्री के ढगों में सुधार करना सम्भव है। जड़ी-बूटियों की गहन कृषि को सुव्यवस्थित रूप से (बागानो में) यथाशीघ्र बढ़ावा देना चाहिए। दूसरी पंचवर्षीय योजना में २,००० एकड़ भूमि में ऐसी खेती करने का आयोजन है। हरे-भरे मदानों तथा जंगली चरागाहों पर ध्यान दिया जाएगा, और आशा की जाती है कि इस दौरान में १ लाख एकड़ भूमि पर काम होगा।

१६ वन प्रबन्ध का एक आवश्यक अंग वन्य जीव-जन्तुओं का संरक्षण है, विशेषकर जब कि भारत के वन्य जीव-जन्तु देश के सुरक्षित वनो मे अन्तिम शरण ले रहे है। उनकी नस्लों को समाप्त होने से बचाना अनिवार्य है। शेर, गेंडा आदि महत्वपूर्ण जानवरो का नाश होता जा रहा है। इनकी रक्षा के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत, दिल्ली में एक आधुनिक चिड़ियाघर के अलावा १८ राष्ट्रीय पार्क तथा पशु विहार स्थापित करने की व्यवस्था है।

१७. वनों या उनके आस-पास रहने वाले तथा उनमे काम करने वाले कर्मचारियों को असाधारण रूप से कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अत. वन कर्मचारियों तथा श्रमिकों के काम करने की दशा को सुधारने के लिए विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इसलिए राज्यों के वन विभाग उनके निवास स्थान, पीने के पानी, दवा-दारू, स्कूलो आदि की सुविधाओं की व्यवस्था पर विशेष ध्यान देगे। वनों में बढे हुए काम के लिए (बम्बई में प्राप्त अनुभव के आधार पर) आदिम जातियों के वन कर्मचारियो तथा वन मजदूरों की सहकारी सस्थाएं अधिकाधिक स्थापित की जा सकती है, ताकि आज जो लाभ ठेकेदार उठा रहे है, वे वन श्रमिकों को मिले। किन्तु फिर भी, इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये सहकारी सस्थाएं ऐसे व्यक्तियों के हाथों न पड़ जाए जो कि आदिम जाति के श्रमिकों का शोषण करने लगे। इसलिए, सहकारी संस्थाओ के कार्य सचालन मे वन विभागों को अधिक सक्रिय व सहानुभूतिपूर्ण ढंग से मार्गदर्शन करना चाहिए।

१८. प्रस्तावित पैमाने पर विकास कार्य करने के लिए आवश्यक है कि वन अनुसंधान पर अत्यधिक जोर दिया जाए। पहली पंचवर्षीय योजना में स्थापित किए गए देहरादून के वन अनुसन्धान संस्थान का दूसरी पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत और अधिक विस्तार किया जाएगा और इसमे लट्ठे बनाने के तरीकों, लकड़ी की इंजीनियरिंग के अध्ययन के अलावा, पौधो का परिचय, बीज सम्बन्धी अनुसन्धान तथा उद्योगों में लकड़ी के इस्तेमाल सम्बन्धी समस्याओ के बारे में भी पढ़ाया जाएगा। दक्षिण भारत में एक प्रादेशिक अनुसन्धान संस्था स्थापित की जाएगी। कोयमत्तूर में "सदर्न फारेस्ट रेंजर कालेज" के सहयोग से जीव व वन सम्बन्धी समस्याओं की खोज करने के लिए इकाइया स्थापित की जाएंगी और बंगलौर में मैसूर सरकार की अनुसंधान शाला को केन्द्र के रूप में इस्तेमाल करते हुए वन पदार्थों के अनुसंधान के लिए ३ इकाइया खोली जाएंगी। राज्य भी प्रादेशिक व स्थानीय, विशेषकर वन सम्बन्धी विषयों की समस्याओं के लिए अनुसन्धान योजनाएं आरभ करेंगे।

१९. दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में वन कर्मचारियों की आवश्यकता का अनुमान लगाया जा चुका है। देहरादून वन कालेज से निकलने वाले लगभग १५० वन अफसरों के स्थान पर २५० की आवश्यकता हो रही है। इसलिए यह प्रस्तावित किया गया है कि ४० से बढ़ाकर ८० व्यक्ति दाखिल किए जाएं। देहरादून तथा कोयमत्तूर के कालेजों से निकलने वाले ६०० वन रेंजरों के स्थान पर भविष्य में ७०० चाहिएं। यह प्रस्तावित किया गया है कि कोयमत्तूर में ४० व्यक्ति और अधिक दाखिल किए जाए। अनुमान है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत प्रस्तावित कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए लगभग २,००० वन कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी, और उनको प्रशिक्षित करने के लिए विभिन्न प्रदेशों में या स्थानीय प्रबन्ध किए जा रहे हैं। अन्य स्थानों से लोगों को भरती करके अनुसंधान करने वाले व्यक्तियों की (वनो के लिए प्रशिक्षितों के अलावा) मांग पूरी की जाएगी।

२०. समस्त देश के वन साधनों के सुयोजित विकास के लिए केन्द्र तथा राज्यों का समन्वय वांछनीय है । भारत के वनो से सबधित विभिन्न समस्याओ को हल करने के लिए वन विभाग का केन्द्रीय बोर्ड स्वय जुटा हुआ है और प्रत्येक विषय मे पथ-प्रदर्शन करता है । एक योग्य संस्था के सरक्षण मे विकास कार्य, कार्यकारी योजना की तैयारी और वन प्रबन्ध का उचित रूप मे समन्वित होना आवश्यक है । इसलिए यह आवश्यक है कि सहायता तथा टेकनीकल परामर्श देने के लिए केन्द्र मे सुसंगठित संस्था स्थापित की जाए । वन सम्बन्धी आंकड़ो, मण्डी के अध्ययन तथा आंकड़ो सम्बन्धी सूचना, इमारती लकड़ी तथा अन्य वन पदार्थो के वर्गीकरण के काम के लिए इस संस्था को जिम्मेदार होना पड़ेगा ताकि वन विभागों के समस्त काम सुचारु रूप से हो सकें । इसलिए यह प्रस्तावित किया गया है कि वन विकास तथा वन प्रबन्ध में समन्वय लाने के लिए एक वन आयोग बनना चाहिए ।

२. भूमि संरक्षण

२१. पानी व वायु के कारण जो भूमि का क्षरण होता है, उससे उपजाऊ भूमि के काफी विस्तृत भाग बेकार हो चुके है और यह प्रक्रिया निरन्तर रूप से जारी है । भूमि क्षरण के कारण जो क्षेत्र नष्ट हो चुके है या हो रहे है, उनमे से बहुत कम क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया गया है । वास्तव म कृषि योग्य भूमि के बहुत बड़े भाग में किसी न किसी भाति के क्षरण होते रहते है । ५ करोड़ एकड़ भूमि में फैले हुए मरुस्थल में भूमि क्षरण सतत रूप से जारी है । और इसी से आसपास के क्षेत्रों में इसके बढने का खतरा है । यह अनुमान किया गया है कि पर्वतीय प्रदेशों, चरागाहो, बेकार पड़ी भूमि आदि का पांचवां भाग क्षरण के कारण प्राय. नष्ट हो चुका है । अत्यधिक वन काटने से, चरागाहों का हद से अधिक उपयोग करने से तथा कृषि में अनुचित तरीकों का इस्तेमाल करने से ही मुख्यतया भूमि का क्षरण हुआ है ।

२२. पहली पंचवर्षीय योजना के दौरान मे भूमि क्षरण से छुटकारा पाने का काम सुव्यवस्थित ढंग से आरम्भ किया गया । २५० वन तथा कृषि अधिकारियों को भूमि सुरक्षा के उपायों को उपयोग में लाने के लिए प्रशिक्षित किया गया । १९५२ में मरुभूमि में वन उगाने के विषय में जोधपुर में एक अनुसंधानशाला खोली गई और प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्षों में ५ प्रादेशिक अनुसन्धान व प्रशिक्षण केन्द्र भी स्थापित किए गए । बम्बई, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, मद्रास, पजाब, सौराष्ट्र, तिरुवांकुर-कोचीन, अजमेर, कच्छ और मणिपुर मे ११ मार्गदर्शक (पाइलेट प्रोजेक्ट) योजना कार्यो को चालू किया गया । मद्रास और तिरुवांकुर-कोचीन की ये योजनाएं विकास योजनाओं मे परिवर्तित कर दी गई है । विशेषज्ञो के तत्वावधान में इन योजना कार्यों तथा कैलेघई और दामोदर घाटी में, पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग में, मच्छ-कुण्ड प्रदेश, उत्तर प्रदेश बुंदेल खण्ड क्षेत्र और यमुना की घाटियों तथा मद्रास के नीलगिरि प्रदेश में भूमि क्षरण की रोकथाम के उपायों का प्रदर्शन किया जा चुका है। अराकू घाटी में एक योजना के अन्तर्गत उत्तलन (टैरेसिग) तथा समोच्च (कन्टूर) बांध बनाने का तरीका प्रदर्शित करके आदिम जातियों की आर्थिक स्थिति को सुधारने का काम किया जा रहा है । प्रायः प्रदर्शन कार्यक्रमों को आयोजित करने में तथा उन्हें कार्यरूप देने में स्थानीय किसान भाग लेते है । ऊपरी टीस्टा नदी की घाटी का निरीक्षण किया गया और रोकथाम के उचित प्रस्ताव पेश किए गए । इस सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि समस्त नदियों के पर्वतीय क्षेत्रों में भूमि संरक्षण के लिए उपाय

करने की सख्त जरूरत है। भूमि सरक्षण के लिए भाखडा के जल स्रवण क्षेत्र में १६५१-५२ से वनरोपण मे प्रगति हो रही है और ४,३८२ एकड़ भूमि के लिए खन्दकें तथा रोकथाम के लिए बाध बनाए गए है। ५,१२४ एकड भूमि मे वृक्ष लगाए जा रहे है। पहली पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राज्यो मे समोच्च (कन्टूर) बाध बनाना, समोच्च खन्दके बनाना, पानी की निकासी के स्थान को बन्द करना, चबूतरे बनाना, घाटियों और नदियों के बहने के स्थान को नियमित करना आदि भूमि सरक्षण के उपायो को ७,००,००० एकड भूमि में कार्यरूप दिया गया जिसमे से दो-तिहाई से अधिक भाग केवल बम्बई प्रदेश में था।

२३. प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान मे राजस्थान की मरुभूमि को सीमित रखने की समस्याओं का विस्तृत रूप से अध्ययन किया जा चुका है। जोधपुर में मरुभूमि वनरोपण तथा अनुसधानशाला स्थापित की गई है। पश्चिमी राजस्थान में लगभग १५० मील लम्बी सड़को के किनारों पर पेड़ बोए जा चुके हैं। चरागाहो को सुधारने तथा प्रयोग के लिए वनस्पति उगाने के निमित्त १०० वर्गमील भूमि निश्चत कर दी गई है।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए कार्यक्रम

२४. जिन क्षेत्रों मे भूमि क्षरण सबसे अधिक हुआ है, वहां लगभग ३०,००,००० एकड़ भूमि को दुबारा खेती या अन्य वनस्पति उगाने के योग्य बनाने की योजना है। इन क्षेत्रों के लिए जो कार्यक्रम बनाए गए है, उनके द्वारा भूमि क्षरण की सब प्रकार की समस्याओ को सुलझाने का प्रयत्न किया जाएगा—उदाहरणार्थ, कृषि योग्य भूमि की, हवा के जोर से बढ़ने वाले मरुभूमि के तथा समुद्री किनारो के बालू के टीलों की, नदी घाटी योजनाओं की, पर्वतीय प्रदेशों की, नदी तटवर्ती भूमि की बेकार पड़ी भूमि की, तथा समुद्र से क्षरित भूमि की। योजना में भूमि के संरक्षण को कार्यरूप देने के लिए २० करोड़ रुपए की रकम रखी गई है।

२५. **कृषि भूमि**—वर्षों के पानी के तेज प्रवाह तथा छोटी धाराओ से ढलानो तथा ऊबड-खाबड़ भूमि मे बने हुए खेतों को बहुत हानि पहुंची है। बम्बई के उन प्रदेशों का सर्वेक्षण किया गया जिनमें खाद्य वस्तुओं की कमी प्राय: रहती है। इससे ज्ञात हुआ कि दो-तिहाई से अधिक कृषि योग्य भूमि बुरी तरह से क्षरित हो चुकी है और लगभग एक चौथाई भूमि कृषि उत्पादन के योग्य नही रही। मद्रास, मैसूर, हैदराबाद, आन्ध्र, उड़ीसा, मध्य भारत, भोपाल और सौराष्ट्र के कुछ भागो की भी ऐसी ही स्थिति है। यदि भूमि सरक्षण के उपायो को यथा समोच्च कृषि करना, लम्बी क्यारियों में बोना, बांध बनाना, चबूतरे बनाना, उत्तलन, पानी को बाहर निकलने से रोकना आदि, उचित रूप से कार्यरूप दिया जाए तो भूमि को नष्ट होने से रोका जा सकता है और उपज को बढ़ाया जा सकता है। दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान म २० लाख एकड़ कृषि योग्य भूमि पर ऐसे उपाय किए जाएंगे।

२६. **मरुभूमि व समुद्री तट में बालू के टीले**—पशुओ और मनुष्यों की आबादी बढने के कारण कच्छ और राजस्थान की मरुभूमि के कुछ भागों में वनस्पतियां समाप्त होती जा रही है और इसी कारण रेगिस्तान अधिक होता जा रहा है। उत्तर प्रदेश, पंजाब और राजस्थान के कुछ भागों में उपजाऊपन पर इसका प्रभाव पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त, वहां पर स्थानीय बालू के टीले है जिनकी रोकथाम करने की अत्यन्त आवश्यकता है। ३,५०,००० एकड़ भूमि में हवा के जोर से जगह बदलने वाले बालू के टीलों को रोकने के लिए कुछ उपाय-करने आवश्यक है, उदाहरणार्थ, वनस्पति विस्तार केन्द्र स्थापित करना, पशु पाल

ऐसे पेड़ लगाना जो शुष्क प्रदेशो मे उगाए जा सकें, बाड़े लगाना, चरागाहों में स्थानों को अदल-बदल करके पशुओं को चराना, वनरोपण, गावों में ईधन तथा चारे के लिए वृक्ष आदि लगाना ।

२७. **नदी घाटियां**—स्थानपरिवर्ती (स्थान बदल-बदलकर) खेती करने से छोटा नागपुर, उडीसा, असम तथा नीलगिरि के वनो को हानि पहुंची है जो कि महत्वपूर्ण नदी घाटी योजनाओं के लिए जल स्रवण क्षेत्र है । नदियों तथा बाधो मे मिट्टी को जमने से रोकने के लिए उनके पहाड़ी हिस्सो के आसपास के स्थानो की भूमि का संरक्षण आवश्यक है । नए पेड़ लगाना तथा जगलों और बेकार भूमि को आग से बचाना, चरागाहो का प्रबन्ध करना, समोच्च बाध बांधना, समोच्च कृषि करना, लम्बी क्यारियों में बोना, तीव्र धारा के रूप मे पानी को बाहर निलकने से रोकना, स्रोतो के किनारो के कटाव की रोकथाम करना, बाध बनाकर वर्षा के पानी को मैदानों में जाने से रोकना, उत्तलन करना आदि उपायों द्वारा दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ३,३०,००० एकड़ भूमि को नष्ट होने से बचाया जाएगा ।

२८. **पर्वतीय प्रदेश**—पंजाब से असम तक, नीलगिरि में, पूर्वी तथा पश्चिमी घाटों तथा अन्य पहाड़ी इलाको की तलहटियो मे घनी आबादी तथा पशुओ, विशेषकर भेड़-बकरियों के अत्यधिक चरने के कारण वन धीरे-धीरे नष्ट होते जा रहे है । पंजाब, हिमाचल प्रदेश, तथा पेप्सू की शैवालिक पहाड़ियों के गावो की पंचायती भूमि के वनों पर बहुत समय से कुप्रभाव पड़ रहा है । इन उजाड़ और बियाबान पहाड़ियों से बरसाती पानी के रेलो के साथ-साथ बालू बह-बहकर आता है और मैदानो की हजारो एकड़ उपजाऊ भूमि का सत्यानाश कर देता है । स्थान बदल-बदलकर खेती करने के कारण असम की पहाडियों की उपजाऊ भूमि का बृहद भाग उजड़ गया है । नीलगिरि में ढलानों के वनों को काट-काटकर आलू की खेती के लिए स्थान बनाया गया । इससे वन बहुत बुरी तरह उजड़ गए है । तिरुवाकुर-कोचीन के कुछ वनो को टैपिओका बोने के लिए काटा गया है । इन कारणों से भूमि क्षरण आरम्भ हो चुका है और यह आशंका है कि बांधों, जल प्रणालियो तथा नदियों के तलों पर भी इसका प्रभाव पड़े बिना नही रहेगा । दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में पहाड़ी प्रदेशों की १,७०,००० एकड़ भूमि पर संरक्षण उपाय किए जाएंगे ।

२९. **खड्डों और कन्दराओं वाली भूमि**—यमुना, चम्बल, साबरमती, माहे नदियों तथा इनकी शाखाओं के किनारो की भूमि धीरे-धीरे कटती जा रही है । यह आवश्यक है कि ऐसी भूमि को वनरोपण, रोकने वाले बाध, उत्तलन तथा भूमि संरक्षण के अन्य उपायों से पुनः खेती योग्य बनाना चाहिए । वर्षा का पानी रोकने के लिए बड़े पैमानों पर बांध बनाना आवश्यक है । खड्डों एव कन्दराओं वाली १,५०,००० एकड़ भूमि के सरक्षण के उपाय किए जाएंगे ।

३०. **बंजर भमि**—इस समय बंजर भूमि के बहुत बड़े भाग में दुरुपयोग के कारण भूमि क्षरण बहुत तेजी से हो रहा है । यह देखा गया है कि इस प्रकार की भूमि में प्रायः वृक्षों की अनावृत जड़ें और झाड-झखाड़ पाए जाते है । ऐसी भूमि के कुछ भागों पर पेड़ लगाने चाहिएं ताकि उनसे चारा और ईंधन मिल सके और शेष भाग को चरागाहों के साथ सुधारना चाहिए । योजना की अवधि मे लगभग १,००,००० एकड़ बंजर भूमि पर भूमि संरक्षण के उपाय किए जाएंगे ।

३१. **समुद्र क्षरित भूमि**—उस योजना का उल्लेख भी आवश्यक है जो कि तिरुवांकुर-कोचीन में समुद्री तट के क्षेत्रों की भूमि के संरक्षण मे सहायता देगी, यद्यपि यह भूमि संरक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत नही आती । इस राज्य मे समुद्री तट के क्षेत्र का कुछ भाग समय-समय पर आने वाली समुद्री बाढो से ग्रसित है, जिसके कारण यहा भूमि क्षरण हो रहा है। अत. प्रस्तावित किया गया है कि बाढो द्वारा ग्रसित प्रदेश में भूमि सरक्षण के उपाय किए जाने चाहिएं। दूसरी योजना के अन्तर्गत लगभग ४५ मील तक समुद्र तट पर काम किया जाएगा । समुद्र के समानान्तर एक समुद्री दीवार बनाने का काम, जिसमे ६६० फुटो के अन्तर पर एक २०० फुट लम्बा जलतोड़ बनेगा, आरम्भ किया जा चुका है ।

३२. **भूमि संरक्षण बोर्ड**—पहली पंचवर्षीय योजना की सिफारिश के अनुसार १९५३ में राष्ट्रीय भूमि सरक्षण कार्यक्रम को संगठित करने के लिए एक केन्द्रीय भूमि सरक्षण बोर्ड स्थापित किया गया । लगभग सभी राज्यों में राज्य स्तर पर भूमि संरक्षण बोर्ड स्थापित किए गए । केन्द्रीय भूमि सरक्षण बोर्ड का मुख्य कार्य अनुसंधान व टेकनीकल प्रशिक्षण का प्रबन्ध करना, राज्य में सहकारिता का संगठन करना तथा नदी घाटियो और राज्यों में आरम्भ की गई योजनाओं के लिए टेकनीकल तथा वित्तीय सहायता देना है ।

३३. **भूमि संरक्षण कानून**—पहली पंचवर्षीय योजना में इस बात की सिफारिश की गई थी कि भूमि सरक्षण के लिए राज्यों के द्वारा उचित कानून बनाए जाने चाहिए । ऐसे कानूनों का मुख्य ध्येय (क) विशेष सुधार करने तथा राज्य सरकारों और कृषकों के बीच उसकी लागत का हिस्सा बाटने का अधिकार, (ख) भूमि संरक्षण के कार्य के लिए कृषकों की सहकारी समितियों की स्थापना, तथा (ग) "सरक्षित" निर्धारित किए जा सकने वाले क्षेत्रों के उपयोग पर प्रतिबन्ध लगाने के अधिकार की व्यवस्था करना है। उत्तर प्रदेश, बम्बई, तथा सौराष्ट्र में पहले से ही ऐसे कानून बन चुके है। कुछ अन्य राज्यों में कानून बनाने के विषय पर विचार किया जा रहा है। केन्द्रीय भूमि संरक्षण बोर्ड ने विभिन्न प्रदेशो में पहले से बने कानूनों तथा विचाराधीन कानूनों का अध्ययन किया और राज्यों के उपयोग के लिए एक आदर्श विधेयक बनाकर भेजा । इस विधेयक में भूमि सुधार योजनाओं को बनाने और उन्हे क्रियान्वित करने की व्यवस्था है । इसमें भू सम्पत्ति का विकास और उसके सरक्षण व भूमि क्षरण को रोकने, भूमि को वर्षा या बाढ़ से ग्रसित होने से बचाने, बजर भूमि को पुनः खेती योग्य बनाने, किसानों को हरजाने की कीमत देने, सरकारी पैसे की वसूली करने आदि की व्यवस्था है।

३४. **भमि संरक्षण सम्बन्धी अनुसंधान तथा सर्वेक्षण**—भूमि संरक्षण का विकास कार्य जलवायु तथा मिट्टी की विभिन्न दशाओं की खोज पर आधारित होता है । भारत सरकार ने निम्नलिखित स्थानों पर भूमि संरक्षण सम्बन्धी ६ अनुसंधान प्रशिक्षण केन्द्र खोले है:—

(१) देहरादून केन्द्र—चण्डीगढ में बरसाती नालों सम्बन्धी एक प्रशिक्षण उपकेन्द्र उसके साथ होगा और वह शैवालिक की पहाड़ियों तथा तलहटी के क्षेत्रों में भूमि संरक्षण तथा वनरोपण की समस्याओं के अध्ययन के लिए होगा ।

(२) कोटा केन्द्र—आगरा में स्थित उपकेन्द्र उसके साथ होगा और वह यमुना और चम्बल के खड्डों और कन्दराओं में भूमि संरक्षण और भूमि को पुनः खेती योग्य बनाने के लिए होगा ।

(३) वसाड केन्द्र (उत्तरी गुजरात)—नदियो के जल स्रवण क्षेत्रों के निचले भागों में गहरे खड्डों वाली भूमि में भूमि संरक्षण के उपायों के लिए होगा।

(४) बेलारी केन्द्र—काली मिट्टी वाले क्षेत्रों में भूमि संरक्षण सम्बन्धी समस्याओं के लिए होगा।

(५) ऊटकमण्ड केन्द्र —नीलगिरि तथा अन्य पर्वतीय प्रदेशों में आलू की खेती के वास्ते भूमि को सुरक्षित रखने के निमित्त लम्बी समतल जमीनें तैयार करने के लिए होगा।

(६) जोधपुर केन्द्र— पशु तथा भेड़-बकरियों के पालन-पोषण के लिए राजस्थान की चरागाहों के सुधार तथा राजस्थान की मरुभूमि में वनरोपण के लिए होगा।

अनुसंधानशालाएं कुछ राज्यों ने भी खोली हैं—बम्बई राज्य ने शोलापुर में, हैदराबाद ने साहिबनगर में, उत्तर प्रदेश ने रहमान खेडा में, तथा उड़ीसा ने राजगंगपुर में।

३५. ये अनुसन्धानशालाएं ऐसी प्रभावपूर्ण खोजे कर रही है जो कि किसानों द्वारा अपनाए जाने योग्य हो और साथ ही आवश्यक टेकनीकल स्तर की भी हों। जोधपुर स्थित मरुभूमि वनरोपण अनुसंधानशाला मे स्वदेशी किस्मों के वनस्पति विज्ञान, शुष्क स्थान पर पैदा होने वाले विदेशी वृक्षों की किस्मों को उगाने के प्रयत्न तथा आर्द्र जलवायु, वर्षा, वायु गति तथा अन्य प्रासंगिक विषयों की खोज करने का काम आरम्भ किया गया है। उचित किस्मों के बीजों को बांटने के लिए बीज भण्डार की भी व्यवस्था है जो मरुभूमि के विस्तार को रोकने के तरीकों, जैसे तहसील के दफ्तरों तथा थानों के इर्द-गिर्द वनस्पतियां लगाना, मुख्य सड़कों तथा वायु वेग के सम्मुख आड़ी जाने वाली रेल की पटरियो के साथ-साथ संरक्षण मेखलाओं के रूप मे वृक्ष लगाना तथा विभिन्न किस्म के रेतीले मैदानों पर वृक्षों को लगाने के ढंग का भी प्रदर्शन करता है। दूसरी योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय भूमि संरक्षण बोर्ड द्वारा मरुभूमि को फैलने से रोकने के लिए घास के मैदान और वन लगाने के निमित्त इस अनुसन्धानशाला में कार्रवाइयां विस्तृत की जाएंगी।

३६. भूमि संरक्षण के उपायों की योजना बनाने के लिए प्रादेसिक आधार पर निरीक्षण आवश्यक है। इससे मिट्टी के वर्तमान उपयोग, उसके गुण, क्षरण व जलवायु सम्बन्धी स्थिति आदि की आवश्यक जानकारी प्राप्त होगी। इस सर्वेक्षण के आधार पर उचित कार्यक्रम बनाया जा सकता है। विशेष समस्याओं वाले क्षेत्रों में एक करोड़ एकड भूमि के सर्वेक्षण व वर्गीकरण तथा उसके मानचित्र बनाने के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना में ६५ लाख रुपए की व्यवस्था की गई है।

३७. द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान में कार्यान्वित किए जाने वाले कार्यक्रमों में विभिन्न किस्मों के ४,००० विशेषज्ञों की आवश्यकता का अनुमान है। इस समय प्रशिक्षित व्यक्तियों की कमी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने देहरादून, कोटा, वसाड, बेलारी और ऊटकमण्ड की अनुसंधानशालाओं मे प्रशिक्षण केन्द्र खोल दिए है। दामोदर घाटी निगम की हजारी बाग स्थित भूमि संरक्षण अनुसंधानशाला में भी प्रशिक्षण सम्बन्धी सुविधाएं उपलब्ध हैं। इन सुविधाओं के अतिरिक्त, उत्तर प्रदेश, बम्बई तथा सौराष्ट्र की राज्य सरकारों ने क्रमशः रहमान खेड़ा, शोलापुर तथा मोरवी में स्वयं अपने प्रशिक्षण केन्द्र खोले है। किसानो के लिए भूमि संरक्षण सम्बन्धी उपायों का प्रदर्शन करने के लिए देश के विभिन्न भागों में नमूने के तौर पर अनेक प्रदर्शन केन्द्र खोले जाएंगे।

३८. भूमि संरक्षण के टेकनीकल पहलू के अनुसधान के साथ ही साथ यह भी आवश्यक है कि इस कार्य में उठने वाली मानवीय समस्याओ व तरीकों और उन सस्थाओं के विकास पर ध्यान दिया जाए जिनके द्वारा गाव वालों को भूमि सरक्षण के उपायो का ज्ञान कराया जाना है और उन्हे इनको कार्यान्वित करने में सहायता दी जा सकती है। अदल-बदल कर खेती करने व पशुओ को चराने पर प्रतिबन्ध लगाने जैसे भूमि क्षरण की रोकथाम के कार्यक्रमों को कार्यरूप देने से देहातों की अर्थ-व्यवस्था तथा रहन-सहन के ढंग पर काफी बड़ा प्रभाव पड़ेगा। अत. लोगों को नई स्थिति के अनुसार अपने-आपको बदलना पड़ेगा। इसलिए भूमि क्षरण की रोकथाम के कार्यक्रमों को कार्यरूप देने के साथ-साथ शिक्षा तथा पुनसस्थापन का कार्यक्रम भी कार्यान्वित होना चाहिए। जहा पर सम्बन्धित लोग आदिवासी हों, जैसा कि अदल-बदलकर खेती करने वालों के मामले में है, उनके सामाजिक और आर्थिक संगठन की पूरी जानकारी कर लेनी चाहिए, क्योंकि जब समूहों में उनको बसाया जाएगा तो उनके वर्तमान समूह संगठन और नेतृत्व को इस्तेमाल करना पड़ेगा।

३९. लोगों के पुनस्सस्थापन, शिक्षा और पुनर्वास में सक्रिय सहायता देने के लिए ये समस्त उपाय राष्ट्रीय विस्तार सेवा जैसे माध्यम द्वारा ही अत्युत्तम ढग से कार्यान्वित किए जा सकते है। इसी तरह, जोती जाने वाली भूमि के उपजाऊपन के संरक्षण के उपाय भी विस्तार सेवा द्वारा संगठित करने पड़ेगे। विस्तार सेवा के काम के लिए भूमि सरक्षण के उपायों का महत्व इस बात से स्पष्ट होता है कि देश के कृषि योग्य क्षेत्र के ५० से ६० प्रतिशत भाग में, जिसमें सिचाई का प्रबन्ध नही होगा, ये उपाय कृषि की उपज बढ़ाने के सर्वाधिक आशा-जनक साधन सिद्ध हो सकते है। किसानो की जमीन पर भूमि सरक्षण के कार्य के लिए विस्तार सेवा को मार्गदर्शन करना होगा तथा देखभाल करनी होगी और ऋण के रूप में वित्तीय सहायता देनी होगी। भूमि संरक्षण के ऐसे उपाय, जिनका लाभ पूरे जनसमुदाय को हो, जैसे कि पंचायती भूमि के क्षरण की रोकथाम, गाव के लिए ईंधन और चारे की व्यवस्था आदि, उनके लिए स्थानीय नेतृत्व में सामूहिक प्रयत्न करने पड़ेंगे। कुछ स्थानीय संस्थाओं का विस्तार भी करना पड़ेगा ताकि लोग इन कार्यक्रमो को कार्यरूप देने की जिम्मेदारी स्वयं ले सके। जैसा कि पहले अध्याय में प्रस्तावित किया गया है, भूमि संरक्षण के उपायों तथा प्रत्येक व्यक्ति द्वारा भूमि के उचित प्रबन्ध की जिम्मेदारी ग्राम पंचायत पर होनी चाहिए। उनकी आवश्यकताओं के अनुसार उनको वित्तीय तथा टेकनीकल सहायता भी मिलनी चाहिए।

अध्याय १९

खेतिहर मजदूर

समस्या के प्रति दृष्टिकोण

पहली पचवर्षीय योजना मे, १९५१ मे हुई जनगणना द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर खेतिहर मजदूरों की समस्या के महत्व को स्पष्ट किया गया था और शेष योजना को दृष्टि में रखते हुए इस समस्या के प्रति दृष्टिकोण को सक्षिप्त रूप से बतलाया गया था। उसमे भूमिहीन मजदूरो के हित में सोचे गए कुछ उपायो, तथा मजदूरी की न्यूनतम दर निश्चित करना, उनको घर बनाने के लिए भूमि देना, भूमिहीन मजदूरो के लिए जमीने देने की योजनाएं बनाना और श्रम सहकारी संस्थाएं खोलना आदि का भी वर्णन किया गया था। पिछले दो या तीन साल के दौरान मे भूमिहीन मजदूरों की समस्या और अर्थ-व्यवस्था मे उनके स्थान पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है। इसके साथ ही पहली पचवर्षीय योजना मे पेश किए गए प्रस्तावों को कार्यान्वित करने मे पैदा होने वाली समस्या की यथार्थ कठिनाइयों पर भी पहले से अधिक ध्यान दिया गया है।

२. जब पहली पंचवर्षीय योजना प्रस्तुत की गई थी, तब केवल १९५१ की जनगणना से प्राप्त सूचना ही उपलब्ध थी। इससे पता चलता है कि कुल २९,५०,००,००० देहाती जन-संख्या में से २४,९०,००,००० लोगों का पेशा कृषि था और इसमें से २० प्रतिशत खेतिहर मजदूर और उनके आश्रित थे। खेतीहर मजदूरों की कुल संख्या ४,९०,००,००० थी। देश के पूर्वी तथा दक्षिणी भागों के राज्यों में कुल कृषिजीवी जनसंख्या ११,७०,००,००० है, जिसमे से २,७०,००,००० या ५५ प्रतिशत खेतीहर मजदूर है। हाल में की गई १९५०-५१ की कृषि श्रम जाच के परिणामों की रिपोर्ट उपलब्ध है। इस जांच ने समस्या पर ग्राम जनगणना से अधिक प्रकाश डाला है। समस्या की जटिलता को निश्चत करने के लिए जो परिभाषाएं अपनाई गईं, वें काफी महत्वपूर्ण है। जनगणना के उद्देश्य के लिए कृषक को खेतिहर मजदूर से भिन्न परिभाषा दी गई। इस परिभाषा के अनुसार कृषक वह है जो ऐसे जिम्मेदारी पूर्ण निर्णय करता है जिनसे कृषि कार्य को दिशा मिलती है। मोटे तौर पर सारे खेतिहर मजदूर कृषकों के नौकर है। देहातियों को, चाहे वे किसान है या कारीगर या मजदूर, सबको एक से अधिक धंधे करके अपनी जीविका अर्जित करनी पड़ती है। एक मनुष्य कृषक होने के साथ मजदूर भी हो सकता है और एक कारीगर को मजदूर का काम भी करना पड़ सकता है। वर्ष के विभिन्न समयों पर मिलने वाले कार्य जो भी उनके सामने आएं वे कर लेते है। इस दृष्टि से खेतिहर मजदूर की जो परिभाषा कृषि श्रम जांच द्वारा स्वीकार की गई है वह कठिनाइयों से परे तो नहीं है, परन्तु उससे वास्तविक स्थिति पर बहुत हद तक ठीक प्रकाश पड़ता है। इस परिभाषा के अनुसार खेतिहर मजदूर वह व्यक्ति है जो साल के दौरान मे उन दिनों की, जिनमें उसे वास्तव में काम मिला है, कुल संख्या में से आधे से अधिक दिनो में खेतिहर के रूप में काम करता है।

३. कृषि श्रम जांच द्वारा अपनाई गई इस परिभाषा के अनुसार पता चला है कि ग्राम परिवारों में से ३०.४ प्रतिशत लोग कृषि मजदूर थे और उनमें से भी आधे बिना भूमि के थे

और शेष के पास बहुत कम भूमि थी। निम्नलिखित तालिका से पता चलता है कि कुछ राज्यों मे विशेष रूप से बिहार, उडीसा, मद्रास, मैसूर, तिरुवाकुर-कोचीन, हैदराबाद, मध्य भारत तथा मध्य प्रदेश मे खेतिहर मजदूरों की समस्या शोचनीय है।

जनगणना के क्षेत्र तथा मुख्य राज्य	आबादी का घनत्व	कुल जनसख्या से देहाती जनसख्या का प्रतिशत	ग्रामीण जनसख्या में खेतिहर मजदूरो का प्रतिशत		
			कुल भूमि	भूमिवाले	भूमिहीन
१	२	३	४	५	६
*सारे भारत में	३१२	८८·७	३०·४	१५·२	१५·२
उत्तरी भारत	५५७	८६·३	१४·३	५·७	८ ६
उत्तर प्रदेश	५५७	८६·३	१४·३	५ ७	८·६
पूर्वी भारत	३४४	९० ०	३२ ७	१९·०	१३·७
असम	१०६	९५·०	१०·७	६ ७	४·०
बिहार	५७२	९३ १	३९ ९	२५·६	१४·३
उड़ीसा	२४४	९५ ९	४३ ०	२३·८	१९·२
पश्चिम बगाल	८०६	७५·०	२३ ८	१०·५	१३ ३
दक्षिण भारत	४५०	८०·०	५०·१	२७ ३	२२·८
मद्रास	४४६	८०·०	५३·०	२८·३	२४ ७
मैसूर	३०८	७६·०	४२·०	२७·४	१४·६
तिरुवाकुर-कोचीन	१०१५	८४·०	·३९·५	२०·८	१८·७
पश्चिम भारत	२७२	६५.०	२०.४	८.८	११.६
बम्बई	३२३	६९.०	२०.४	९.६	१०.८
सौराष्ट्र	१९३	६६ ३	२०.०	२ २	१७.८
मध्यवर्ती भारत	१८१	८०.०	३६.७	१४.६	२२.१
मध्य प्रदेश	१६३	८६.५	४०.१	१४.९	२५.२
मध्य भारत	१७१	८१.९	१९.९	७.५	१२.४
हैदराबाद	२२७	८१.०	४२.१	१९.५	२२.६
उत्तर-पश्चिम भारत	१२३	८०·०	९·०	२·७	७·१
राजस्थान	११७	८३·०	९·३	३·७	५·६
पंजाब	३३८	८१·०	१०·१	१·६	८·५
पेप्सू	३४७	८१·०	१३·२	०·६	१२·६
जम्मू व कश्मीर	५२२	८९·०	·३·४	२·७	०·७

*जम्मू और कश्मीर को मिलाकर

४. खेतिहर मजदूरों में से लगभग ८५ प्रतिशत को कटाई-बुवाई, जमीन तैयार करना तथा हल चलाने का काम केवल कभी-कभी मिलता था। समस्त आय साधनों से एक परिवार की औसत वार्षिक आय ४८७ रुपए थी और प्रत्येक व्यक्ति की औसत आय १०४ रुपए थी, जबकि उसी वर्ष राष्ट्रीय आय की औसत २६५ रुपए थी। देश के विभिन्न प्रदेशो की भिन्न-भिन्न स्थितियों के अन्तर्गत रोजगारी के विस्तार मे अन्तर था। साल भर मे काम मिलने का औसत हिसाब २१८ दिन थे जिसमे से १८९ दिन खेती का काम और २९ दिनों में कृषि के अलावा अन्य काम मिलते थे। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि साल भर में लगभग ७ महीने काम मिलता था। अपने आप किसी अन्य काम मे केवल दो मास से भी कुछ कम ही लगा जा सकता था और शेष ३ महीने बेरोजगार ही रहना पडता था। खेतिहर मजदूरो में लगभग १५ प्रतिशत को जमीदारों के काम मे ही लगना पड़ता था, जो लगभग ३२६ दिन होते थे । इन खेतिहर मजदूरो के मुकाबिले में आकस्मिक काम करने वाले मजदूरों में "काम के अभाव" को ही काम न मिलने का कारण बतलाया जाता था। १६ प्रतिशत खेतिहर मजदूरों को वर्षपर्यन्त मजदूरी बिल्कुल नही मिलती थी।

५. कृषि श्रम जाच के परिणामों के अलावा देहाती बेरोजगारी या अर्द्ध रोजगारी के सम्बन्ध मे अभी तक कोई अन्य ठीक सामग्री उपलब्ध नही है। फिर भी, इस दिशा मे किए गए अध्ययन से इसमे कोई सदेह नही रह जाता कि खेतिहर मजदूर की समस्या बडी व्यापक और जटिल है जिसकी उलझनों का प्रभाव केवल देहात की अर्थ-व्यवस्था पर ही नही बल्कि आर्थिक एवं सामाजिक विकास प्रक्रिया पर भी पड़ता है, जिसकी १५ से २० साल के दौरान मे पूरा होने की आशा की जा सकती है। इन पहलुओं को देखते हुए निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी हैं:—

(१) देहातों में बेरोजगारी तथा अर्द्ध-रोजगारी मे कोई अन्तर नहीं है। कृषि श्रम जाच से प्राप्त सामग्री के आधार पर अनुमान किया गया है कि देहातो मे कुल २८,००,००० खेतिहर मजदूर बेरोजगार हैं। बहुत-से अन्य तखमीने भी बनाए गए है, यद्यपि उनके द्वारा अपनाई गई परिभाषाओं में काफी अन्तर है। परन्तु इस बात को सब स्वीकार करते है कि वर्तमान स्थितियों मे आजकल के खेती-बारी के तरीकों के इस्तेमाल को जारी रखते हुए भी एक परिवार की जोत की भूमि को एक पूरे परिवार के सब व्यक्तियों का पूरे समय का काम समझा जाए तब भी ६५ से लेकर ७५ प्रतिशत खेतिहर मजदूरों से इतनी ही उपज की जा सकती है। दूसरे शब्दों में, इन कुछ स्वीकृत बातों के आधार पर कृषि में वर्तमान श्रम शक्ति का एक-चौथाई से लेकर एक-तिहाई भाग कृषि की आवश्यकताओं से अधिक है। इसमें कोई सन्देह नही कि अन्य देशों की भांति फसल की कटाई के मौके पर मजदूरों की माग अधिक हो जाती है।

(२) बढ़ती हुई आबादी ने खेतिहर मजदूरों की समस्या को अधिक विकट कर दिया है। हाल ही में हुए एक अध्ययन मे विभिन्न जनगणनाओं के द्वारा लोगों के व्यवसायों की तुलना का प्रयत्न किया गया है। बहुत-से कार्य करने के ढंगों और परिभाषाओं जैसे जटिल प्रश्नों को भी हल करना है। इसमें कोई शक नहीं कि उपलब्ध सामग्री से बहुत-सी बातें स्पष्ट होती हैं। १९०१ से १९५१ तक की ५० साल की अवधि में कुल श्रम शक्ति २ करोड़ ५० लाख बढी है, अर्थात ११ करोड़ ७० लाख से बढ़कर १४ करोड़ २० लाख हो गई है। कृषि की

श्रम शक्ति ७ करोड़ ३० लाख से लेकर ६ करोड़ ८० लाख तक पहुंच गई है, जबकि कृषि को छोड़कर अन्य धंधों मे श्रम शक्ति उतनी ही है जितनी कि इस शताब्दी के आरम्भ में थी। इस भाति शहरी क्षेत्रो की कृषि श्रम-इतर शक्ति उतने ही अनुपात मे बढी है जितनी कि देहाती क्षेत्रों की कम हुई है। इस शताब्दी के आरम्भ मे श्रम शक्ति मे से ६२ ५ प्रतिशत भाग कृषि मे लगा था जो १९५१ मे बढ़कर लगभग ७० प्रतिशत हो गया। इस तरह, अभी आम झुकाव बढ़ती हुई कृषि निर्भरता की ओर ही है। जनसंख्या में वृद्धि आधुनिक उद्योग व व्यवसाय के विकास और देहाती जीवन के परम्परागत आर्थिक आधार के अधिकाधिक विशृंखल होने के कारण पिछले कुछ दशकों मे खेतिहर मजदूरो की समस्या ने दो पहलुओं को उभारा है—सामाजिक व्यवस्था में उनका स्थान और रोजगार के अवसर। अनुसूचित तथा पिछडे वर्गों के खेतिहर मजदूरों की सामाजिक बाधाएं क्रमशः या तो हट रही है या तेजी से कम हो रही है, परन्तु पर्याप्त काम-धंधा प्राप्त करने की समस्या अधिक गम्भीर हो गई है। यह स्थिति काफी हद तक कृषकों और खेतिहर मजदूरों के लिए एक-सी है, यद्यपि यह सच है कि खेतिहर मजदूरों में से कइयो का आय व व्यय का स्तर राष्ट्रीय औसत से कहीं कम है।

६. मुख्यतया आर्थिक स्थिति की इन्ही बुनियादी बातो की पृष्ठभूमि को ध्यान मे रखते हुए खेतिहर मजदूरों के पुनस्संथापन के तरीके सोच निकालने होंगे। निस्संदेह जागीरदारी के अधिकार, भूमि विभाजन मे विषमता, मजदूरी की शोषणकारी दरें और सामाजिक बाधाओं को दूर करना अनिवार्य है और इस ओर काफी प्रगति हो रही है। भूमि सुधार, खेती सम्बन्धी पुनर्गठन तथा पिछड़ी हुई जातियों के कल्याण सम्बन्धी अध्यायो में समस्या के इन पहलुओं पर प्रकाश डाला जा चुका है। भविष्य के लिए सोची गई ग्राम विकास की योजनाओं से स्पष्ट है कि गांव के जन-समुदाय में भूमि वाले तथा भूमिहीन कृषको की विषमता को अवश्य दूर करना होगा और अवसर तथा अधिकारों में समानता लानी होगी। फिर केवल भिन्न-भिन्न कृषि व कृषि-इतर व्यवसायों में लगे हुए लोगों की काम करने की योग्यता में विषमता रह जाएगी। यह भी मानी हुई बात है कि ग्राम विकास योजनाओं को कार्यरूप देते हुए सबसे पहले यह निश्चित कर देना होगा कि कम आय वालों तथा जिनको पूरे अधिकार नही मिलते उनको अधिकतम लाभ पहुंचे। कृषि भूमि की सीमा को निश्चित करना तथा भूमि व गांव के अन्य साधनों का, जो सबके लिए लाभकर है, विकास करना स्वीकृत नीति है। कुछ हद तक जब भूमि वाले कृषकों का अनुपात बढ़ेगा तो निस्संदेह उनको अपने समाज में स्थान तथा आर्थिक अवसर प्राप्त करने के अधिकार प्राप्त होंगे। इसके साथ ही, कृषि श्रम जांच से प्राप्त आंकड़ों से पता चलता है कि ५० प्रतिशत खेतिहर मजदूरों के पास लगभग ३ एकड़ भूमि प्रति परिवार के हिसाब से है और भूमि वाले और भूमिहीन खेतिहर मजदूर परिवारों के रहन-सहन के स्तर में कोई विशेष अन्तर नही है। इससे यह परिणाम निकलता है कि सामाजिक तथा आर्थिक रोजगार परिवर्तन के लिए भूमिहीन खेतिहरों को भूमि देना आवश्यक है। परन्तु इनके रहन-सहन के स्तर को ऊंचा उठाने व पूर्ण रोजगार उपलब्ध करवाने पर इसका प्रभाव सीमित रूप से ही पड़ेगा। अतः समस्या यह ह कि :

(क) पशु-पालन, बागबानी आदि के समेत कृषि उत्पादन में भारी वृद्धि की जाती है;

(ख) देहात की अर्थ-व्यवस्था की सीमा के अन्दर-अन्दर विशेषकर ग्रामोद्योगों, छोटे-मोटे उद्योगो तथा कृषि के विकास के द्वारा काम प्राप्त करने के अवसरो का विस्तार किया जाना है,

(ग) भूमि के पुर्नविभाजन, रियायतो तथा शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओ के उपायो के द्वारा उनके सामाजिक स्तर को ऊचा उठाना है तथा उन्हे इस योग्य बनाना है कि उनमें विश्वास, आर्थिक अवसरो से लाभ उठाने की क्षमता तथा नए कामों में हाथ डालने का उत्साह पैदा हो; और

(घ) खेतिहर मजदूरो के रहन-सहन की दशा को सुधारना है ।

७. आशा की जाती है कि काम करने की कुल शक्ति १९५१–६१ के बीच १ करोड़ ९० लाख तथा १९६१–७१ तक २ करोड़ ३० लाख बढ़ जाएगी, अर्थात २० वर्ष की अवधि मे ४ करोड़ २० लाख या अगली तीन योजनाओ की अवधि में ३ करोड़ ३० लाख बढेगी। यदि प्रथम अध्याय में इंगित गति से अर्थ-व्यवस्था की प्रगति होती रही तो अनुमान है कि बीस साल बाद कृषि में लगे हुए लोगों का प्रतिशत जो इस समय ७० है शायद ६० प्रतिशत के लगभग रह जाएगा । इस बिन्दु पर पहुंचकर खेतिहर मजदूरो की समस्या समस्त राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था के विकास की शैली तथा गति की व्यापक समस्या मे मिल जाती है । इस रिपोर्ट में इस विषय पर पहले ही विचार किया जा चुका है ।

कार्यक्रम

८. जब एक बार आर्थिक स्थिति का ढांचा बदलना आरम्भ हो जाए और यह प्रक्रिया तीव्रता से बढ़े तो राष्ट्र के सब वर्गों का हित व कल्याण एक-दूसरे पर निर्भर तथा परस्पर सम्बन्धित हो जाता है । दूसरे शब्दो मे, कृषि उत्पादन मे उन्नति, आर्थिक अवसरो का विस्तार, भूमि का पुर्नविभाजन, खेतिहर मजदूरो के लिए सामाजिक सुविधाओं की व्यवस्था आदि गरीबी की बुनियादी समस्या को दूर करने के सगठित प्रयत्न के विभिन्न पहलू जान पड़ते है । पर्याप्त समय के लिए यह आवश्यक है कि खेतिहर मजदूरों के समान जाति के निर्बल वर्गो पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और उनके लाभार्थ विशेष रूप से कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिएं । इस प्रकार अधिक गहन व विभिन्न किस्मो के कृषि उत्पादन के विकास तथा देहाती क्षेत्रो में अधिक विविध व्यवसायो की उपलब्धि से देहात की रोजगारी का आकार बढ़ता चला जाएगा और खेतिहर मजदूरो को अधिक अवसर प्राप्त होंगे । दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान में राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक योजना के क्षेत्रो मे जनसमुदाय के निर्बल वर्गो, विशेषकर छोटे-छोटे कृषकों, भूमिहीन असामियों, खेतिहर श्रमिकों तथा कारीगरों को सहायता देने के कार्यक्रम संगठित करने को अधिक प्राथमिकता दी गई । गांव तथा छोटे-मोटे उद्योगो के लिए योजना में २०० करोड़ रुपए की व्यवस्था है । पिछड़ी जातियों के कल्याणार्थ ९० करोड़ रुपए सुरक्षित रखे गए है । खेतिहर मजदूरों और जनसमुदाय के अन्य निर्बल वर्गों को शिक्षा तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं के विस्तार कार्यक्रम शक्ति देंगे और उन्हें इस योग्य बना देंगे कि वे मिलने वाले नए अवसरों का पूर्ण लाभ उठा सकें । प्रत्येक क्षेत्र मे इस बात का पूरा प्रयत्न होना चाहिएं कि योजना के अन्तर्गत उपलब्ध साधनो को उचित अनुपात मे खेतिहर मजदूरों तथा अल्पाधिकार प्राप्त वर्गों के कल्याणार्थ लगाया जाए । मुख्य बात तो यह है कि स्थितियों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विस्तृत योजनाएं बनाकर इस लक्ष्य को प्राप्त करना

होगा। इसके साथ ही पुनस्संस्थापन योजनाए, श्रम सहकारी संस्थाओं का निर्माण, निवास स्थानो के लिए भूमि देने, मजदूरी की न्यूनतम दरो को निश्चित करने जैसे उपायो पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए ।

९. पहली योजना में भूमिहीन कृषकों के पुनस्सस्थापन के लिए १·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था थी। अनेक योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं, जैसे आन्ध्र तथा मद्रास में नई बस्तिया बसाना, तथा अनेक राज्यों मे हरिजनों को बसाने के लिए भूमि बांटना आदि। केन्द्रीय सरकार ने भोपाल में १०,००० एकड़ का एक फार्म खोलने की योजना बनाई है जिसमें भूमिहीन श्रमिक इस विचार से चुने गए है कि वे अन्ततः भूमिदारों के रूप में बस जाएगें। दूसरी पचवर्षीय योजना में केन्द्रीय सरकार की व्यवस्था के अलावा १४ राज्यों में ५ करोड़ की अनुमानित लागत की योजनाए बनाई गई है जिनके अन्तर्गत भूमिहीन श्रमिकों के बीस हजार परिवारों को १,००,००० एकड़ भूमि पर बसाया जाएगा।

१०. भूमि की उच्चतम सीमा निश्चित करने से पुनस्संस्थापन के लिए कुछ भूमि उपलब्ध होगी। भूमि सुधार और भूमि पुनर्गठन के अध्याय में यह प्रस्तावित किया जा चुका है कि प्रत्येक राज्य मे कृषि तथा भूमि की जोत की गणना सम्बन्धित सामग्री का अध्ययन तथा उन क्षेत्रों की, जिनकी गणना होने की सम्भावना है, गणना होने के पश्चात भूमिहीन श्रमिकों को भूमि देकर पुन. बसाने के लिए व्यापक योजना बनाई जानी चाहिए। भूदान में यथासम्भव प्राप्त भूमि को भी अतिरिक्त भूमि पर पुनस्संस्थापन के लिए बनाई गई योजना में मिला लेना चाहिए। उन असामियों को जो कि इस कारण बेदखल होंगी कि मालिक जमीन पर खुद काश्त करना चाहता है, और साथ ही उन लोगों को भी जिनके पास अलाभकर खेत हैं जमीन देने का विचार करना होगा। इस स्थिति मे प्राप्त भूमि का कम पड़ना अनिवार्य है। जैसा कि बताया जा चुका है, भूमिहीन मजदूरो के पुनस्संस्थापन को संगठित करने के लिए विशेष कर्मचारियों की सेवाओं की आवश्यकता पड़ेगी। विकास के लिए आवश्यक साधनों की व्यवस्था कृषि, राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास, ग्रामोद्योग तथा अन्य कार्यक्रमों द्वारा करनी होगी जिनका योजना में समावेश है। भूमिहीन खेतिहर मजदूरों के पुनस्सस्थापन की योजनाओं के लिए परामर्श देने के लिए गैर-सरकारी सदस्यों को मिलाकर राष्ट्रीय स्तर पर और राज्यों के स्तर पर बोर्ड स्थापित करने की और समय-समय पर होने वाली प्रगति पर विचार-विमर्श करने की भी सिफारिश की गई है। इन बोर्डों को खेतिहर मजदूरों के पुनस्संस्थापन की समस्याओं के सब पहलुओं पर ध्यान देना चाहिए ।

११. दूसरी पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत लागत का काफी बड़ा भाग छोटे-बड़े निर्माण कार्यों पर खर्च किया जाएगा। इस बात की सिफारिश की गई है कि यथासम्भव मात्रा में ठेकेदारो की जगह श्रम तथा निर्माण सहकारी संस्थाओ का इस्तेमाल होना चाहिए। विस्तार सेवा कर्मचारियों की ऐसी सहकारी संस्थाओ का संगठन करने की विशेष जिम्मेदारी होगी। प्रत्येक विकास खण्ड में एक श्रम सहकारी संघ होना चाहिए जिससे प्रत्येक गांव की सहकारी समितिया सम्बद्ध हों। सामान्य तथा बृहदाकार योजनाओं क बारे में खण्ड या ताल्लुका संघ को प्रामाणिक शर्तो पर काम प्राप्त करने में सहायता मिलनी चाहिए और उधर इन सघों को गावों से स्थानीय श्रमिकों को जुटाना चाहिए । छोटे-मोटे काम के ठेके श्रम सहकारी समितियों को सीधे मिलने चाहिएं और साथ ही उनके पूरा करने में सहायता मिलनी चाहिए। भूमिहीन मजदूरों की आय तथा देहाती क्षेत्रों में काम प्राप्त करने के

अवसरों को बढ़ाने में श्रम तथा निर्माण सहकारी सस्थाओं के विकास से काफी सहायता मिल सकती है। यदि आवश्यक संगठन किया जाए तो कोई कारण नही कि अल्प काल में ही शक्तिशाली सहकारी सघ, जिनके अपने यन्त्र तथा उपकरण आदि यहा तक कि यातायात के साधन भी हों, बनाए न जा सकते हों। प्रारम्भिक स्थिति मे टेकनीकल मार्ग-दर्शन तथा प्रबन्ध में सहायता देने के अलावा आवश्यक उपकरण खरीदने के लिए खण्ड या ताल्लुका श्रम सहकारी संघों को ऋण मिलना चाहिए। इस सम्बन्ध मे यह भी बताया जा सकता है कि वनो मे सहकारी संस्था के काम करने से जो अनुभव प्राप्त हुआ है वह उत्साहजनक है।

१२. अनेक राज्यों में कृषि मजदूरों के लिए घर बनाने के स्थानो की व्यवस्था के लिए कानून और नियम बना दिए गए हैं। यह गांव के समस्त जनसमुदाय की जिम्मेदारी होनी चाहिए कि भूमिहीन मजदूरों को घर बनाने के लिए स्थान मिले। कुछ मामलों में स्थानीय सामग्री से सस्ते घर बनाने मे सहायता मिलने की सम्भावना है। खेतिहर मजदूरों के लिए घर बनाने के स्थान मुफ्त में उपलब्ध होने चाहिएं।

१३. पहली पंचवर्षीय योजना में पंजाब, राजस्थान, अजमेर, कुर्ग, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, कच्छ तथा त्रिपुरा के समस्त प्रदेशों में मजदूरी की न्यूनतम दरें निश्चित कर दी गई हैं। असम, बिहार, बम्बई, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मैसूर तथा विध्य प्रदेश के उन स्थानों पर मजदूरी की न्यूनतम दरें निश्चित कर दी गई है जहां पहले बहुत कम थी। अनेक अन्य राज्यों में मजदूरी की न्यूनतम दरे निश्चित करने से सम्बन्धित कानून अभी लागू नहीं किए गए है। यह अनुभव किया जा रहा है कि भूमि पर बढ़ती हुई आबादी का दबाव होने के कारण और मजदूरों की बहुलता के कारण मजदूरी की न्यूनतम दरों के कानूनों को लागू करने में कठिन समस्याएं पैदा होती हैं। फिर भी देहाती क्षेत्रों में मजदूरी की न्यूनतम दरों की निश्चित करने के कानूनों को मजदूरी का स्तर ऊंचा उठाने के लिए जारी करना ही है। अतः यह सिफारिश की जाती है कि सब राज्यों में और समस्त इलाकों में मजदूरी की न्यूनतम दरें निश्चित होनी चाहिए, और सीमाएं होते हुए भी निश्चित की गई मजदूरी की दरों को लागू रखने का निरन्तर प्रयत्न रहना चाहिए।

१४. थोड़ा-थोड़ा समय देकर नियमित रूप में खेतिहर मजदूरों के लिए उपभोक्ता मूल्य देशनांक बनाने की ओर कदम उठाए जा रहे है। इन देशनांकों से समय-समय पर मजदूरी की न्यूनतम दरो को निश्चित करने तथा इनका संशोधन करने मे आसानी रहेगी। योजना में फिर से एक बार कृषि श्रम जांच करवाने का भी प्रबन्ध है जिससे खेतिहर मजदूरों की दशा पर पड़े हुए पहली पंचवर्षीय योजना के प्रभाव का मूल्यांकन हो सके।

अध्याय १७

सिंचाई और बिजली

१ सिंचाई

जल साधन

देश की अर्थ-व्यवस्था के लिए जल और भूमि साधनों के संयुक्त विकास का महत्व आधारभूत है, इसलिए योजना के कार्यक्रमो मे इसे उच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है। जैसा कि प्रथम पचवर्षीय योजना मे बतलाया गया है, जल साधनों के विकास की योजना राष्ट्रीय स्तर पर बनाई जानी चाहिए।

२. कुछ वर्ष हुए, अन्दाजा लगाया गया था कि भारत के समस्त जल साधन १३५ करोड़ ६० लाख एकड़ फुट के है। अब इन साधनों के ठीक-ठीक परिमाण का पता लगाने का कार्य आरम्भ किया जा चुका है और उसे द्वितीय योजना काल मे जारी रखा जाएगा। किसी नदी के पानी का सिचाई के लिए प्रयुक्त हो सकना, जिस प्रदेश मे से नदी बहती है उसके धरातल, प्रवाह की विशेषताओ और मिट्टी की किस्म पर निर्भर करता है और ये सब बाते हर नदी मे भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। अनुमान है कि हमारे देश के उपलब्ध जल साधनो में से करीब ४५ करोड़ एकड़ फुट का लाभदायक उपयोग किया जा सकता है।

३. इसमें से १९५१ तक लगभग केवल ७ करोड़ ६० लाख एकड़ फुट का उपयोग किया गया था। यह देश की नदियों में प्रवाहित जल का केवल ५.६ प्रतिशत था। प्रथम योजना के समय जो योजना कार्य शुरू किए गए उनके द्वारा अधिक जल का उपयोग होने लगा; १९५६ के अन्त तक यह परिमाण बढ़कर १० प्रतिशत हो गया होगा। देश की प्रधान नदियों के जल के उपयोग की स्थिति लगभग इस प्रकार होने की सम्भावना है :

नदी-वर्ग	अनुमानित औसत प्रवाह	१९५१ तक उपयोग	प्रथम योजना में शामिल योजनाओ द्वारा अतिरिक्त उपयोग (पूर्ण विकास पर)	द्वितीय योजना में शामिल योजनाओ द्वारा अतिरिक्त उपयोग (पूर्ण विकास पर)
		(परिमाण लाख एकड़ फुट में)		
१. सिन्धु	१,६८०	८०	११०	१२
२. गंगा	४,०००	२००	२१५	१४५
३. ब्रह्मपुत्र	३,०००	कुछ नही	कुछ नही	कुछ नही
४. गोदावरी	८४०	१२०	१०	१५
५. महानदी	८४०	६	१०५	२
६. कृष्णा	५००	९०	१५६	२६
७. नर्मदा	३२०	२	कुछ नही	१०१
८. ताप्ती	१७०	२	७	३५
९. कावेरी	१२०	८०	१३	६

इसके पश्चात भी बहुत बड़ी मात्रा में जल उपलब्ध रहेगा। इसलिए इन साधनों का उपयोग करने की योजना बनाते रहने की आवश्यकता रहेगी ही।

४. भूमि के गर्भ में से बड़ी मात्रा में पानी मिल सकता है। इन साधनों की कोई सूची तो अभी तक तैयार नहीं की गई है परन्तु परीक्षण के लिए जो नलकूप लगाए गए हैं, उनसे देश के कुछ भागों के भूगर्भस्थ जल के विषय मे विश्वसनीय जानकारी अवश्य मिल सकेगी। इस पानी का उपयोग सिंचाई के लिए उन इलाकों में किया जाएगा जिनमें नहरों से सिंचाई करना महंगा पड़ता है अथवा जिनकी जमीन मे पानी भर जाता है। ऐसे इलाकों में नलकूपों की सिंचाई नहरी सिंचाई से अच्छी रहती है।

विकास के वर्तमान कार्य

५. सिंचाई का उपयोग भारत में प्राचीन काल से होता आया है। उन्नीसवीं शताब्दी मे उत्तर प्रदेश मे गंगा और यमुना नदियो से, पजाब मे रावी और सतलुज से, मद्रास में गोदावरी, कृष्णा और कावेरी से और बिहार में सोन नदी से बढ़िया और बड़ी-बड़ी नहरें निकाली गई थी। विगत कुछ दशकों मे पंजाब में सतलुज नदी से, उत्तर प्रदेश में बेतवा और शारदा से, मध्य प्रदेश और उड़ीसा में महानदी से, बम्बई और हैदराबाद में गोदावरी से, आन्ध्र में कृष्णा से और मैसूर और मद्रास में कावेरी नदी से और भी नहरें निकाली गईं। प्रथम योजना काल मे कई बड़ी-बड़ी सिंचाई योजनाओं को आरम्भ किया गया, जिनमें से कई तो बहूद्देशीय थी। कइयों को पूरा करने के लिए बड़े बांध और जलाशय बनाने पड़े, ताकि उनमें वर्षा ऋतु का पानी एकत्र किया जा सके। कइयों में काम अब भी जारी है। वह अधिकतर द्वितीय योजना काल में पूरा हो जाएगा। इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के प्रथम विवरण में देश के बड़े-बड़े सिचाई कार्यो का विवरण दिया गया है।

६. १९५४-५५ में देश की भूमि के वर्गीकृत उपयोग का निम्न विवरण तैयार किया गया था:—

	करोड़ एकड़ (लगभग)
समस्त क्षेत्रफल	८१·१
वर्गीकृत भूमि का क्षेत्रफल	७२·२
जंगल	१३·३
खेती के लिए अनुपलब्ध	१२·२
पड़ती के अतिरिक्त अनबोई भूमि	९·५
चालू पड़ती	२·८
चालू पडती के अतिरिक्त पड़ती	२·९
बोई हुई भूमि का क्षेत्रफल	३१·५
बोने योग्य भूमि का क्षेत्रफल	४६·७
बोई हुई भूमि	३४·३

परिशिष्ट के विवरण २ में कृषि और सिंचाई के विषय में राज्यो द्वारा दिए गए महत्वपूर्ण आंकड़ों का संग्रह किया गया है।

७. १९५०-५१ में सब मिलाकर ५ करोड़ १५ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होती थी। इसमे से १ करोड़ ७९ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई सरकारी नहरों से, २८ लाख एकड़ की निजी नहरों से, ८८ लाख एकड़ की तालाबों से, १ करोड़ ४७ लाख एकड़ की कुओं से, और ७३ लाख एकड़ की अन्य साधनों से होती थी। यह देश में खेती की समस्त भूमि का १७·५ प्रतिशत भाग था। प्रथम योजना के समय सिचाई के जो बड़े और मध्यम कार्य आरम्भ किए गए, उनसे १९५६ के अन्त तक और भी कोई ६३ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होने लगी होगी। इनके पूरा हो जाने पर सिंचाई का नया क्षेत्र लगभग २ करोड़ २० लाख एकड़ हो जाएगा। इससे किस राज्य को कितना लाभ पहुचेगा, इसका विवरण इस प्रकार है —

राज्य	१९५६ तक सिंचाई का क्षेत्र	नए काम पूरे हो जाने पर सिचाई का क्षेत्र
	(हजार एकड़)	
आन्ध्र	८९	१,९६०
असम	१५२	२३४
बिहार	६८९	२,५७६
बम्बई	३०९	१,५०५
मध्य प्रदेश	१०	२४४
मद्रास	२४०	३९६
उडीसा	९०	१,८७५
पंजाब	१,५२०	३,२८०
उत्तर प्रदेश	१,६७४	१,९२०
पश्चिम बंगाल	६३९	२,१४४
हैदराबाद	७२	१,५१७
मध्य भारत	१२०	७०६
मैसूर	३९	३८४
पेप्सू	२०४	१,०११
राजस्थान	१८२	१,७५८
सौराष्ट्र	११६	२७०
तिरुवांकुर-कोचीन	३८	१३८
जम्मू व कश्मीर	३५	१७०
अजमेर	१	१०
हिमाचल प्रदेश	२४	१००
कच्छ	२४	४८
विन्ध्य प्रदेश	—	३७
योग	६,२६७	२२,२८३

८. आशा है कि प्रथम योजना में आरम्भ किए गए सिंचाई के छोटे कामों से भी १ करोड़ अतिरिक्त एकड़ भूमि में सिंचाई होने लगेगी। पहले जिन क्षेत्रों की कुओं और तालाबों आदि छोटे

साधनो से सिंचाई होती थी, उनमे से कुछ अब बड़े साधनों द्वारा सीचे जाने लगेगे और इससे क्षेत्रों मे निर्विघ्न सिचाई होने लगेगी। इस कारण प्रथम योजना मे आरम्भ किए गए कार्यो द्वारा हुई अतिरिक्त सिचाई का परिमाण १ करोड़ ५० लाख एकड़ माना जा सकता है। १९५१ मे खेती की समस्त भूमि मे सिचाई वाली भूमि का भाग १६ प्रतिशत था। प्रथम योजना की समाप्ति तक वह २० प्रतिशत हो चुका होगा।

विकास के भावी कार्य

९. **सिंचाई**—सिचाई का अन्तिम लक्ष्य क्या रखा जाए अथवा देश मे उपलब्ध साधनो से सब मिलाकर कितनी सिचाई की जा सकती है, इसका निश्चय करने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध नही है। परन्तु मोटा अन्दाजा यह किया गया है कि बहूद्देशीय बडे और मध्यम सिंचाई कार्यो से कोई ७ करोड़ ५० लाख एकड भूमि मे सिचाई की जा सकती है। अन्य साधनो से भी लगभग इतनी ही सिचाई हो सकती है। इस प्रकार समस्त साधनो से कोई १५ करोड एकड़ भूमि मे सिचाई हो सकेगी। सिचाई आयोग ने सिचाई की सम्भावनाओ का एक अखिल भारतीय सर्वेक्षण ५० वर्ष से भी पहले किया था। तब से अब तक परिस्थितियो मे बहुत परिवर्तन हो गया है। प्रथम तो बांध बनाने के तरीकों मे और सिचाई की इजीनियरी मे बहुत सुधार हो गए है। जिन कामो को उस समय असम्भव समझा जाता था वे अब व्यावहारिक बन गए है। द्वितीय, हाल के वर्षों मे शुष्क खेती करने, समोच्च बाध बनाने और भूमि सरक्षण करने आदि मे बहुत उन्नति हो चुकी है। इसलिए अब इन दोनो दृष्टियो से विचार करके सिचाई की सम्भावनाओं का अन्दाजा बदल लेना आवश्यक हो गया है। हमारी सिफारिश यह है कि केन्द्र और राज्यों की सरकारें मिलकर इस बात का सर्वेक्षण सावधानीपूर्वक करे कि सिचाई की बड़ी और मध्यम योजनाओ से और कुओ तथा तालाबो आदि छोटे साधनों से कुल कितने क्षेत्र मे सिचाई की जा सकती है। इस प्रश्न का भी प्रत्येक प्रदेश मे पृथक-पृथक अध्ययन करना चाहिए कि किन स्थितियो में वहां सिंचाई करना लाभप्रद नही रहेगा और बिना पानी की खेती करना आवश्यक हो जाएगा। जो-जो अनुसन्धान करने के सुझाव हमने यहां दिए है, उनसे उपर्युक्त तीनो दिशाओ मे विकास की सम्भावनाओ का ठीक-ठीक ज्ञान हो जाएगा, अर्थात सिचाई के बड़े और मध्यम कामों से कितनी सिचाई हो सकती है, कुओं, तालाबों आदि सिचाई के छोटे-छोटे कामो से सिचाई का कितना विकास किया जा सकता है, और तीसरे, शुष्क खेती करने, समोच्च बाध बना देने और जमीन मे नमी को कायम रखने आदि की क्या सम्भावनाएं है? सिचाई के विकास की भावी योजनाए बनाने के लिए इन अनुसंधानों का किया जाना आवश्यक है।

१०. यह भी आवश्यक है कि नहरों द्वारा पानी का उपयोग करने की योजनाएं बनाते हुए, जो फसले बिना पानी की खेती से उत्पन्न की जाएगी, उनके लिए पानी की आवश्यकताओ का ध्यान रख लिया जाए। यदि नदियों के जल स्रवण क्षेत्रो का सारा पानी नहरों अथवा संग्राहक जलाशयों द्वारा निम्न क्षेत्रों मे खीच लिया गया तो आशंका है कि जो क्षेत्र नहरी सिचाई से लाभ नही उठा सकते वे शुष्क खेती की प्रणाली द्वारा भी पानी के लाभ उठाने से वंचित हो जाएगे। इसलिए संग्राहक जलागार इस प्रकार नही बनाने चाहिएं कि वे नदियो के जलस्रवण क्षेत्रो का सारा पानी खींच लें, और ऊपर की जमीनों के जिन क्षेत्रों की स्थिति घाटे की है, उनकी पानी की आवश्यकताओं का ध्यान बिल्कुल न रखा जाए। इसी प्रकार यदि जलागार नदियो के ऊपरी भागों में बनाए जाएं तो निचले भागो में स्थित क्षेत्रो की भी आवश्यकताओं का ध्यान रखना चाहिए।

११. **नौ परिवहन**—नदियों का उपयोग सिचाई, बिजली उत्पादन, जल उपलब्धि और मल-प्रवाह के अतिरिक्त नौ परिवहन के लिए भी किया जा सकता है। यह परिवहन का एक सस्ता साधन है, इसलिए यह सचार और परिवहन की बढती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने मे अधिकाधिक उपयोगी और सहायक हो सकता है। अभी तक नौ परिवहन का विकास असम, पश्चिम बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश के ही कुछ भागो तक सीमित है। प्रथम योजना मे भी इस दिशा मे अधिक प्रगति नही हुई है। परन्तु अब विकास की आवश्यकताएं बढ़ती जा रही हैं, इसलिए अब नदियो का उपयोग यातायात के लिए करने पर अधिक ध्यान देना पडेगा और द्वितीय योजना मे परिवहन के लिए जलमार्गो का आर्थिक विकास करने का अनुसन्धान अधिक पूरी तरह किया जाएगा। नदी घाटी योजनाओ के प्रसग मे भी इस समस्या पर विशेष ध्यान देना पडेगा ।

१२. **भूमि संरक्षण**—प्रथम योजना मे भूमि संरक्षण की समस्याओं और उन्हें हल करने के उपायो पर विचार किया गया था। इस समस्या पर उन क्षेत्रों मे और भी अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है जिनमे कि बडे-बड़े जलागार बनाए गए है और जहां उनके कारण नदियो और सहायक धाराओं के प्रवाह के रूप और दिशा आदि बहुत बदल गए है। यदि नदियो के जल स्रवण क्षेत्रो मे भूमि संरक्षण के आवश्यक उपाय न किए गए तो पानी का प्रवाह अपने साथ गाध और कीचड आदि लाकर और इन जलागारो और नीचे की प्रणालियों मे एकत्र करके इनकी सामर्थ्य को क्षतिग्रस्त कर देगा। जलागारों से नीचे की ओर बांध बन जाने के कारण नदियो के प्रवाह की व्यवस्थाए भी बदल जाती है। इसका प्रभाव उसकी अनेक धाराओं पर भी पड़ता है। इसका परिणाम यह होता है कि नीचे की घाटी मे भूमि के कटाव की समस्या गम्भीर रूप धारण कर लेती है। इसलिए नदी घाटी योजनाओं से लाभान्वित होने वाले क्षेत्रो मे भूमि संरक्षण के उपायो पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और उन्हें भूमि संरक्षण के कार्यक्रम मे विशेष स्थान मिले। इसके साथ ही, नदी घाटी योजनाओं से सम्बद्ध कार्यो की रक्षा के लिए रक्षक बाध बनाने पर ध्यान देना चाहिए और उन्हें प्रत्येक बड़ी नदी घाटी योजना का अग बना लेना चाहिए ।

द्वितीय योजना के कार्यक्रम

१३. **भौतिक लाभ**:—प्रथम योजना बनाते हुए यह लक्ष्य सामने रखा गया था कि १५ से २० वर्ष में सिचाई के सरकारी साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र दुगना हो जाएगा। १९५१ मे सभी साधनो द्वारा सिंचित प्रदेश लगभग ५ करोड़ १० लाख एकड़ था। प्रथम योजना के समय मे १ करोड़ ६३ लाख एकड़ अतिरिक्त क्षेत्र मे सिंचाई होने लगी होगी—६३ लाख एकड़ मे तो सिचाई के बडे और मध्यम कार्यो से और १ करोड़ एकड मे छोटे-छोटे कार्यो से। द्वितीय योजना में और भी २ करोड १० लाख एकड़ जमीन मे सिंचाई होने लगेगी—१ करोड़ २० लाख एकड में तो बड़े और मध्यम कार्यों के द्वारा और ९० लाख एकड़ मे छोटे-छोटे कार्यों द्वारा। इस १ करोड २० लाख एकड़ क्षेत्र में से ९० लाख एकड़ क्षत्र तो पहले से हाथ में लिए हुए कार्यों द्वारा सीचा जाएगा और ३० लाख एकड़ नए कार्यो द्वारा। नए कार्यों का अन्तिम लक्ष्य लगभग १ करोड़ ५० लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिचाई करने का है। आशा है कि ये नए कार्य द्वितीय योजना के पहले ३ वर्षो में तो प्रति वर्ष बीस-बीस लाख एकड़ और अन्तिम दो वर्षों मे प्रतिवर्ष तीस-तीस लाख एकड़ भूमि मे नई सिचाई कर सकेंगे ।

१४. **वित्तीय विनियोग** :—प्रथम योजना के समय और उससे ठीक पहले के कुछ वर्षों मे देश के सभी भागो मे सिंचाई के कामो पर बहुत परिश्रम किया गया था। सिंचाई और बिजली

के जो काम पहले-पहल प्रथम पंचवर्षीय योजना में सम्मिलित किए गए थे, वे लगभग ९७० करोड़ रु० की लागत के थे। इसमें से केवल सिंचाई के कामों की लागत कोई ६२० करोड़ रु० थी। पीछे इनमें सिंचाई के कुछ मध्यम काम कमी वाले क्षेत्रों को स्थायी लाभ पहुंचाने के लिए बढ़ाए गए। वे लगभग ४० करोड़ रु० की लागत के थे। कई कार्यों का क्षेत्र बढ़ा दिया गया और इसलिए उनमें से कइयों के व्यय का अन्दाजा दोबारा लगाया गया। इस प्रकार प्रथम पंचवर्षीय योजना के सिंचाई कार्यों की सारी लागत कोई ७२० करोड़ रु० तक पहुंच गई। इसमें से ८० करोड़ रु० योजना आरम्भ होने से पहले के वर्षों में व्यय हो चुके थे। अन्दाजन ३४० करोड़ रु० प्रथम योजना काल में व्यय हो गए होंगे। शेष राशि द्वितीय और तृतीय योजनाओं की अवधि मे व्यय की जाएगी। यह आवश्यक है कि जो काम हाथ में लिये हुए है वे शीघ्र पूरे कर लिए जाएं, जिससे कि उन पर जो व्यय हो चुका है उससे उत्पादन होने लग जाए और उनके लाभ यथाशीघ्र मिलने लगें। द्वितीय योजना काल मे इन कार्यो पर लगभग २०९ करोड़ रु० व्यय करने पड़ेंगे।

१५. द्वितीय योजना मे सिचाई के जो नए कार्य आरम्भ किए जाएगे, उनकी लागत लगभग ३८० करोड़ रु० होगी। इसमें से १७२ करोड़ रु० तो द्वितीय योजना के समय ही व्यय हो जाने की सम्भावना है। शेष राशि तृतीय और अगली योजनाओ के समय व्यय की जाएगी। द्वितीय योजना के समय सिचाई के बडे और मध्यम कार्यो पर व्यय करने के लिए सब मिलाकर ३८१ करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। ३५ करोड़ रु० की अतिरिक्त राशि की व्यवस्था इसलिए की गई है कि सिन्धु नदी-वर्ग के पानी मे से जो भाग भारत को मिलने की आशा है उससे सम्बद्ध तथा कुछ अन्य कार्यों को आरम्भ किया जा सके। इन सबके सम्बन्ध मे निर्णय होना अभी शेष है।

१६. द्वितीय योजना मे सिचाई के नए कामों की संख्या १९५ है। इनमे से दस का व्यय लगभग १० और ३० करोड़ रु० के मध्य में, सात का ५ और १० करोड़ रु० के मध्य में और शेष का ५ करोड़ रु० से कम है। इस प्रकार द्वितीय योजना मे मध्यम कार्यो की प्रधानता है। द्वितीय योजना में सम्मिलित सिचाई के नए कार्यो की संख्या, उनके व्यय और पृथक-पृथक लाभों का विवरण नीचे की तालिका मे दिया गया है :—

अनुमानित व्यय	कार्यों की संख्या	कुल अनुमानित व्यय (करोड़ रुपए)	कार्य पूरा हो जाने पर सिचाई के अनुमानित लाभ (लाख एकड़)
१० और ३० करोड़ रु० के बीच में ..	१०	१९१	८४
५ और १० करोड़ रु० के बीच में	७	५४	१५
१ और ५ करोड़ रु० के बीच में ..	३५	८५	३४
१ करोड़ रु० से कम ...	१४३	४६	१५
योग ...	१९५	३७६	१४८

द्वितीय योजना के महत्वपूर्ण सिचाई कार्यों का विवरण इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के विवरण ३ में दिया गया है ।

१७. किसी भी कार्य को योजना में सम्मिलित कर लेने का अर्थ यह नहीं है कि उसका प्रत्येक दृष्टि से अनुसन्धान कर लिया गया है । प्रत्युत वस्तुस्थिति यह है कि कई कार्यो को आरम्भ करने से पहले उनका प्रौद्योगिक दृष्टि से अनुसन्धान और उनकी आर्थिक सम्भावनाओं पर विचार करना पड़ेगा । इन कार्यों के सम्बन्ध मे आरम्भिक कार्रवाई, सर्वेक्षण अथवा उनके अनुसंधान की रिपोर्ट पूरी करने अथवा कुछेक मामलों में सड़कें आदि बनाने तक ही सीमित रहेगी । सम्भव है कि विस्तृत अनुसंधान के पश्चात कई कार्यों के प्रौद्योगिक, आर्थिक और वित्तीय रूपों को बहुत बदल देना पड़े और उनके क्षेत्र तक पर पुर्नविचार करना पड़े । जैसा कि प्रथम पंचवर्षीय योजना में जोर देकर कहा गया था, प्रत्येक कार्य को पूरा करते हुए कुछ निश्चित मंजिलों पर पहुंचकर, उस कार्य के समग्र रूप और उसके विविध अंगों के वित्तीय तथा आर्थिक पहलुओं पर सावधानी से विचार कर लेना चाहिए ।

१८. सिंचाई के कार्यों को पूरा करते हुए यह बहुत आवश्यक है कि राज्य सरकारें उनका क्रम निश्चित कर देने पर सूक्ष्मता से ध्यान दे । वित्तीय विचारों के अतिरिक्त इन कार्यों का क्रम अन्य कुछ विचारों के द्वारा भी निर्धारित किया जाएगा, जैसे कि प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की उपलब्धि, कुछ कार्यों का फल शीघ्र निकल आने की आवश्यकता, कुछ कार्यों की तुलना मे अन्य कार्यो को पहले पूरा करने की आवश्यकता और एक ही राज्य के विविध स्थानों की आवश्यकताओं मे प्रतिस्पर्धा आदि । इस प्रकार योजना मे सम्मिलित अनेक बड़े कार्यो को पीछे जाकर पूरा किया जाएगा, पहले नही । जिन कुछ कार्यो का अनुसधान अभी अधूरा पड़ा है उनके अतिरिक्त, आन्ध्र में वंशधारा, बिहार में कन्साई, बम्बई में उकाई, नर्मदा, माही, खडगवासला, गिरणा और बनास, मध्य प्रदेश में तवा और पश्चिम बंगाल मे कंसबाटी योजना कार्य इसी प्रकार के हैं । इनमे से कइयों के क्षेत्र और लाभों को निर्धारित करना शेष है । इन सब पर व्यय २०० करोड़ रु० से ऊपर होगा, परन्तु द्वितीय योजना में इनके लिए लगभग ५०' करोड़ रु० रख लिए गए है ।

१९. विभिन्न राज्यों की योजनाएं तयार करते हुए उनकी सिंचाई की अतिरिक्त आवश्यकताओं और उनमें अब तक हुए विकास को देखने के साथ-साथ यह भी देखा गया है कि प्रस्तावित कार्यो को पूरा करने की उनकी सामर्थ्य कितनी है । द्वितीय योजना में विभिन्न राज्यो मे कितना-कितना काम किया जाएगा, यह इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के विवरण ४ मे बतलाया गया है ।

२०. **सिंचाई के बड़े और छोटे कार्य** :—सिंचाई के कार्यक्रम बनाते हुए उन बड़े और छोटे कामों में सन्तुलन रखने की सावधानी बरतनी पड़ती है जो कि अपने कार्य और क्षेत्र की दृष्टि से एक-दूसरे के पूरक हों । हरेक इलाके में वही काम करने चाहिएं जिनके करने की सहूलियतें वहा मौजूद हों । प्रथम पंचवर्षीय योजना में सिंचाई के ७ कार्य ऐसे थे जिनकी लागत ३० करोड रु० से ऊपर बैठती थी, ६ ऐसे थे जिनकी लागत १० और ३० करोड़ रु० के बीच बैठती थी, ४ की ५ और १० करोड़ रु० के बीच में, ५० में से प्रत्येक की १ और ५ करोड़ रु० के बीच में और २०० की १ करोड़ रु० से कम बैठती थी । यद्यपि प्रथम योजना के समय ३४० करोड़ रु० व्यय हो गए होंगे, परन्तु १९५६ के अन्त तक अतिरिक्त सिंचाई केवल ६३ लाख एकड़ भूमि में हो पाई होगी । इसकी तुलना में, जिस क्षेत्र में अतिरिक्त सिंचाई की जा सकती है, उसका क्षेत्रफल २ करोड

२० लाख एकड़ है। प्रथम योजना से बचे हुए जो कार्य द्वितीय योजना मे पूरे करने पड़ेंगे, उन पर व्यय २०६ करोड़ रु० करना पड़ेगा और यह राशि द्वितीय योजना मे सिचाई के लिए रखे गए ४१६ करोड़ रु० के समस्त व्यय मे से लेनी पडेगी। सिचाई के लाभों की निरन्तरता और वित्तीय तथा आर्थिक आवश्यकता, दोनों दृष्टियों से यह उचित समझा गया कि द्वितीय योजना मे सिंचाई कार्यो का चुनाव करते हुए प्राथमिकता मध्यम कार्यो को दी जाए। इसके साथ ही, सिचाई के छोटे कार्यो को सिचाई के समस्त कार्यक्रम मे प्रमुख स्थान दिया जाता रहेगा।

२१ सिचाई के बडे और छोटे, दोनो कार्यो के अपने-अपने लाभ है। बडे कार्यो के लाभ ये है कि नदियो का जो पानी बेकार चला जाता, उसका उनमें उपयोग हो जाता है, उनसे बडे-बड़े क्षेत्रों मे सिचाई हो सकती है, कमी के वर्षो मे उनसे सहायता मिलने का निश्चय रहता है और उनकी योजना प्राय. अनेक उद्देश्यो के लिए की जा सकती है। छोटे कार्यो मे पूजी कम लगती है, उनका फल जल्दी निकल आता है और उन्हे स्थानीय साधनो द्वारा ही शीघ्र पूरा किया जा सकता है। परन्तु उनसे सहायता भी सीमित ही मिलती है और उनको कार्य-क्षम अवस्था मे रखने का बहुत ध्यान रखना पडता है। १९५२ मे अधिक अन्न उपजाओ जाच समिति ने लिखा था कि सिचाई के छोटे कार्य बार-बार बेकार हो जाते है। इन कार्यो पर इस समय बडी-बडी धनराशियां व्यय की जा रही है, इसलिए इन्हें सन्तोषजनक अवस्था मे चालू रखने के लिए विशेष उपाय करने की आवश्यकता है। उचित तो यह है कि इनको ठीक अवस्था मे रखने की जिम्मेदारी वही लोग उठावे जो इनसे लाभ उठाते हैं। जिन कार्यो से देहाती जनता के बड़े भाग को लाभ पहुंचता हो उनको ठीक रखने की जिम्मेदारी स्थानीय जनता को सम्मिलित रूप मे उठानी चाहिए। हम सिफारिश करते है कि राज्य सरकारों को एक विशेष कर लगाने का अधिकार होना चाहिए। उसकी आमदनी से गाव पचायतें अलग-अलग अथवा मिलकर, सिचाई के इन कार्यो की जरूरी मरम्मत और पुर्जे-बदलवाई आदि का काम कर सकती हैं।

२२. **सिंचाई के लिए पानी देने में मितव्ययिता की आवश्यकता** :—प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह बात जोर देकर कही गई थी कि अब तक उपलब्ध पानी का उपयोग करते हुए जितनी सावधानी और मितव्ययिता की जाती थी, उससे अधिक की जाने की आवश्यकता है। उपलब्ध पानी का अधिकतम उपयोग करने मे दो प्रकार की समस्याओ का सामना करना पड़ता है—कृषि सम्बन्धी और इंजीनियरी सम्बन्धी। कृषि सम्बन्धी समस्याएं ऐसी होती है जैसे कि सिचाई व्यवस्था में किस फसल को कितना पानी देना पड़ेगा, सिंचाई कितनी बार करनी पड़ेगी, खेती का ढग क्या है और खादें कैसे दी जाती है आदि। इन सबका दिल्ली स्थित भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्था मे और राज्यों के अन्य अनुसंधान केन्द्रों में अध्ययन किया जा रहा है। इसे द्वितीय योजना काल में भी जारी रखा जाएगा।

२३. इंजीनियरी सम्बन्धी समस्याओं में मुख्य है नहरो, उनकी शाखाओं, रजबहों और अन्य नाले-नालियो आदि में पानी के मर-खप जाने की। यदि इसे कम कर दिया जाए तो इस समय उपलब्ध पानी से ही अधिक बड़े क्षेत्र मे सिंचाई की जा सकती है। प्रथम पचवर्षीय योजना में सिफारिश की गई थी कि सिचाई की जल-प्रणालियो में पलस्तर करा देने की सम्भावना पर विचार किया जाए और जहां-जहां आर्थिक दृष्टि से ऐसा करना उचित प्रतीत हो वहा-वहां यह करा देखा जाए। इस दिशा में प्रगति, कुछ राज्यो को छोड़ कर, अन्यत्र अपर्याप्त ही हो पाई है। द्वितीय योजना में इस पर अधिक ध्यान दिया जाएगा। पानी की बचत जल-प्रणालियों में उचित

ताल-मेल रखने से हो सकती है। इस दिशा मे और जल-प्रणालियो को ठीक रखने मे राष्ट्रीय विस्तार सेवा से भी बहुतेरी सहायता मिल सकती है।

नल कूप

२४. १९५१ से पहले भारत मे लगभग २,५०० नल कूप थे और इनमे से कोई २,३०० अकेले उत्तर प्रदेश मे थे। इनसे लगभग १० लाख एकड़ भूमि की सिचाई होती थी। प्रथम योजना में २,६५० नल कूप तो भारत-अमेरिकी प्रौद्योगिक सहयोग कार्यक्रम के अन्तर्गत, ७०० नल कूप अधिक अन्न उपजाओ कार्यक्रम के अन्तर्गत और २,४८० नल कूप राज्यों की विकास योजनाओं के भाग के रूप में लगाने का कार्यक्रम था। १९५५ के अन्त तक विभिन्न राज्यों मे लगाए जाने वाले नल कूपों और उनसे हुए लाभों का विवरण इस प्रकार है :—

राज्य	भारत-अमेरिकी प्रौद्योगिक सहयोग कार्यक्रम के अन्तर्गत		अधिक अन्न उपजाओ कार्यक्रम के अन्तर्गत		राज्यो की योजनाओं के अन्तर्गत	
	निर्धारित संख्या	पूरी की हुई संख्या	निर्धारित संख्या	पूरी की हुई संख्या	निर्धारित संख्या	पूरी की हुई संख्या
बिहार ..	३८५	३७८	—	—	४२४	४२४
उत्तर प्रदेश	१,२७५	१,०९४	४२०	९३	१,४००	१,१६५
पंजाब	५३०	४४५	१५०	—	२५६	२५६
पेप्सू ..	४६०	३६९	१३०	—	—	—
बम्बई	—	—	—	—	४००	१९८
योग ..	२,६५०	२,२८६	७००	९३	२,४८०	२,०४३

इन नल कूपों के लग चुकने और इनका विकास हो जाने पर इनसे २० लाख एकड़ अतिरिक्त भूमि में सिंचाई हो सकेगी।

२५. नल कूप लगाने की इंजीनियरी में जो प्रौद्योगिक उन्नति हुई है उससे भूगर्भस्थ पानी के उपयोग की सम्भावनाएं बहुत बढ़ गई हैं। प्रथम योजना काल में ३५० गहरे नल कूप लगाकर भूगर्भस्थ पानी का सिंचाई के लिए उपयोग करने की सम्भावनाएं पता लगाने का एक कार्यक्रम आरम्भ किया गया था। अब तक यह परीक्षण २२ स्थानों पर करके देखा गया है। इसे द्वितीय योजना काल में भी जारी रखा जाएगा।

२६. द्वितीय योजना काल में ३,५८१ नल कूप लगाने का कार्यक्रम है। इन सब नल कूपों पर लगभग २० करोड़ रु० की लागत आएगी। इसे सिंचाई के छोटे कार्यक्रमों के व्यय में सम्मिलित कर लिया गया है, जो कि योजना के कृषि विभाग का एक अंश है। इन नल कूपों से ९,१६,००० एकड़ भूमि में सिंचाई हो सकने की आशा है। राज्यों में इन नल कूपों का वितरण इस प्रकार किया जाएगा :

राज्य	नल कूपो की संख्या	अनुमानित लागत (लाख रु०)	सिंचित क्षेत्र (हजार एकड़)	नल-कूप लगाने के लिए जिन स्थानों पर परीक्षणार्थ बर्मा लगाया जाएगा, उनकी संख्या
आन्ध्र	—	—	—	२५
असम	५०	३०	१५	१५
बिहार	१५०	१०	१५	१
बम्बई	३३०	१५०	६६	१५
मध्य प्रदेश व भोपाल	६८	७०	३९	३०
मद्रास	३००	७५	६	५०
उड़ीसा	२५	२०	७	२०
पंजाब	४६६	२८०	७७	४६
उत्तर प्रदेश	१,५००	१,०५०	४८५	४७
पश्चिम बंगाल	१५०	१००	३२	३७
पेप्सू	२९२	१५०	१३३	५
राजस्थान	५०	३५	१६	५
सौराष्ट्र	७०.	२५	१४	१०
तिरुवांकुर-कोचीन	—	—	—	५
दिल्ली	५०	२१·५	८	—
कच्छ	—	—	—	१०
पाण्डिचेरी	५०	१२·५	३	—
अन्य क्षेत्र	—	—	—	१४
योग ...	३,५८१	२,०२९	९१६	३५०

२७. पंजाब, पेप्सू, उत्तर प्रदेश, बिहार और बम्बई मे गुजरात के उत्तरी भाग के अतिरिक्त अन्य अधिकतर क्षेत्रों में भूगर्भस्थ पानी की अवस्था का पता लगाने की आवश्यकता है। जमीन में परीक्षणार्थ बर्मा लगाकर देखने का उद्देश्य यही है। विभिन्न राज्यों में नल कूप लगाने के जो कार्यक्रम बना लिए गए हैं उनमें इन अनुसधानों के परिणाम के अनुसार परिवर्तन करने की आवश्यकता हो सकती है।

२८. नल कूपों द्वारा सिंचाई करने मे प्रायः नहरों की अपेक्षा अधिक व्यय बैठता है। योजना आयोग के सुझाव पर राज्यों ने नल कूपों की सिंचाई के आर्थिक पहलू का अध्ययन करना आरम्भ किया है। इसे व्यवस्थित रूप में जारी रखकर इसके परिणामों को प्रकाशित कर देना होगा, क्योंकि जिन प्रदेशों में नहरों द्वारा सिंचाई नहीं हो सकती उनमें नल कूपों द्वारा सिंचाई करने का महत्व बढ़ जाएगा।

२. बिजली

बिजली के स्रोत

२६. देश मे पानी से कितनी बिजली उत्पन्न की जा सकती है, इसका प्रारम्भिक अन्दाजा लगाने में प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय कुछ प्रगति हुई थी, परन्तु अभी तक इसका पूरा-पूरा सर्वेक्षण नही किया गया। दक्षिण भारत में पूर्व और पश्चिम की ओर बहने वाली नदियों से और मध्य भारत की नदियों से कितनी बिजली पैदा की जा सकती है, इसका केवल मोटी दृष्टि से हिसाब लगाया गया है। इसी प्रकार का काम हिमालय की और उत्तरी भारत की अन्य नदियों पर आरम्भ किया जा चुका है। अन्दाजा लगाया गया है कि विभिन्न स्थानों पर पानी से जो बिजली पैदा की जा सकेगी, उसका परिमाण लगभग ३ करोड़ ५० लाख किलोवाट होगा। इसमें लगभग ४० लाख किलोवाट दक्षिण भारत की पश्चिम की ओर बहने वाली नदियों से, लगभग ७० लाख किलोवाट पूर्व की ओर प्रवाहित होने वाली नदियो से, लगभग ४० लाख किलोवाट मध्य देश की नर्मदा, ताप्ती, महानदी, ब्राह्मणी और वैतरणी जल धाराओं से और लगभग २ करोड़ किलोवाट उत्तरी और उत्तर-पूर्वी प्रदेश के गंगा, ब्रह्मपुत्र और सिन्धु आदि हिमालय से निकलने वाली नदियों से मिलेगी। दक्षिण और मध्यवर्ती प्रदेशो की बिजली का अन्दाजा उपलब्ध जानकारी और धरातल के नक्शों के आधार पर लगाया गया है। हिमालय की नदियों का अन्दाजा केवल मोटा-मोटा किया जा सकता है, क्योकि इस प्रदेश का निरीक्षण और अध्ययन अभी किया ही जा रहा है। इस विषय का अध्ययन अन्य अनेक दृष्टियों से फिर किये जाने की आवश्यकता है। आशा है कि वह द्वितीय योजना के समय आरम्भ किया जा सकेगा। ये दृष्टिया है : विकास का आर्थिक पहलू, निर्माण में लगने वाला समय, बिजली की मांग कितनी होगी और इसी प्रकार की अन्य स्थानीय बातें जिनके कारण काम को सीमित रखना आवश्यक हो सकता है।

३०. पन बिजली के साथ साथ, कोयला जलाकर बिजली उत्पन्न करने वाले तापीय बिजली घर यानी थरमल बिजलीघर, इस देश मे काफी समय तक बिजली का महत्वपूर्ण स्रोत बने रहेंगे। अभी तक खानों में उपलब्ध स्टीम कोयले और गैर कोक कोयले (जो कोक बनाने के काम नही आता) का ज्ञात परिमाण ४,००० करोड़ टन है। इसके अतिरिक्त लिगनाइट कोयला बहुत बड़ी मात्रा में मिलने की सम्भावना है, इसलिए भविष्य मे जहा तक दृष्टि जा सकती है, वहां तक बिजली पैदा करने के लिए कोयला मिलने में कोई कठिनाई नहीं होगी। इस समय जितना कोयला खानों से निकलता है उसका केवल १० प्रतिशत बिजली उत्पन्न करने के काम आता है। भविष्य मे कोयले की खुदाई बढ़ती ही जाएगी। इसलिए बिजली के उत्पादन में खर्च होने वाले कोयले का अनुपात १० प्रतिशत से बढ़ने की सम्भावना नही है। डीजल तेल से बिजली का उत्पादन इस समय केवल कही-कही छोटे कारखानों मे किया जाता है। आगामी वर्षों में डीजल से बिजली का उत्पादन बड़े परिमाण में होने की सम्भावना नहीं है।

३१. इस प्रकार अगले कुछ दशको तक बिजली की हमारी सारी आवश्यकता पूरी करने के लिए कोयले और पानी के स्रोत पर्याप्त है, फिर भी कुछ प्रदेश ऐसे हैं जिनमें औद्योगिक उन्नति तो शीघ्रता से हो रही है, परन्तु कोयले की खानें वहां से दूर है। वहां पानी की शक्ति या तो उपलब्ध ही नही होगी या शायद उसका विकास किया जा चुका होगा। इन प्रदेशो में बिजली पैदा करने के लिए ताप के अतिरिक्त अणु शक्ति का उपयोग भी लाभदायक हो सकता है, क्योकि उसमे

ईंधन का खर्च बहुत कम होगा। अणु शक्ति में पूजी का व्यय अब भी थरमल बिजलीघरों की अपेक्षा कुछ अधिक होता है, परन्तु इस अधिकता को अन्य अनेक तरह किफायत करके कम किया जा सकता है। अणु शक्ति उत्पन्न करने के लिए देश में यूरेनियम और थोरियम के स्रोत पर्याप्त है। आशा है कि आगामी कुछ वर्षो मे अन्य सूत्रों के अतिरिक्त अणुशक्ति से भी बिजली मिलने लगेगी ।

विकास के वर्तमान कार्य

३२. प्रथम पचवर्षीय योजना आरम्भ होने के समय देश मे लगे हुए बिजलीघरो की क्षमता २३ लाख किलोवाट थी। इसमे से १७ लाख किलोवाट बिजली तो उन सरकारी और निजी बिजलीघरों मे उत्पन्न होती थी जो काम ही बिजली देने का करते थे और शेष ६ लाख किलोवाट उन औद्योगिक कारखानों में होती थी जो अपने लिए बिजली आप ही पैदा करते थे। प्रथम योजना में नए उत्पादन का लक्ष्य १३ लाख किलोवाट रखा गया था, जिसमें से ११ लाख सरकारी कारखानों को और शेष दो लाख निजी बिजली कम्पनियों को उत्पन्न करनी थी। सरकारी कारखाने ८ लाख किलोवाट उत्पन्न करने लगे है और निजी कंम्पनिया २ लाख। इसके अतिरिक्त, लगभग २ लाख किलोवाट क्षमता के सरकारी कारखानों मे काम पूरा हो चुका था और १९५६ की समाप्ति से पूर्व उनमें उत्पादन होने लगने की सम्भावना थी। औद्योगिक कारखानो के लिए बिजली के उत्पादन का लक्ष्य कोई निर्धारित नही किया गया था। उनमें से कइयों ने अपने महंगे बिजलीघर बन्द करके सरकारी बिजली संगठनों से बिजली लेना शुरू कर दिया है। फिर भी सब मिलाकर प्रथम योजना के समय निजी औद्योगिक कारखानों की बिजली उत्पन्न करने की क्षमता १ लाख किलोवाट बढ़ गई थी और मार्च १९५६ तक वह ७ लाख किलोवाट हो चुकी थी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के आरम्भ और अन्त मे लगे हुए बिजलीघरों की क्षमता और उनसे उत्पन्न हुई बिजली का विवरण नीचे की तालिका में दिया गया है :—

——	१९५०-५१	१९५५-५६	प्रथम योजना में वृद्धि का प्रतिशत
(१) कारखानों की क्षमता—लाख किलोवाट में			
जनोपयोगी बिजलीघर :			
(क) राजकीय ...	६	१४	१३३
(ख) निजी ...	११	१३	१८
अपनी बिजली उत्पन्न करने वाले औद्योगिक कारखाने ...	६	७	१७
योग ...	२३	३४	४८

(२) उत्पन्न बिजली— करोड़ किलोवाट आवर में
जनोपयोगी बिजलीघर :

(२) बिजली को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए विशेष डिज़ाइनों के बड़े और ऊंचे स्तम्भों का निर्माण, विकास और उनका परीक्षण (लकड़ी की बल्लियों समेत);

(३) देहातों में बिजली पहुचाने के लिए उपयोगी सामान और डिजाइनो का निर्माण और विकास;

(४) डी० सी० बिजली को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की विधियों का विकास;

(५) पानी की तामीरों मे छेद हो जाने के कारण,

(६) एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिजली ले जाने वाले तारों को आसमान से गिरने वाली बिजली से बचाने की व्यवस्था करना;

(७) इम्पल्स स्थितियों के अंतर्गत कौरोना;

(८) एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिजली ले जाने वाले ट्रांसमीशन तारों और बिजली वितरक सब-स्टेशनों के यन्त्रों में सामंजस्य की स्थापना;

(९) पावर बिजली और वितरण ट्रांसफारमरों के भार और ताप की परिस्थितियां; और

(१०) उच्च वोल्टेज स्विचगीयर परीक्षण और नए स्विचगीयर डिज़ाइनों का विकास।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बिजली की इंजीनियरी की एक अनुसन्धानशाला भी इस योजना की अवधि मे ही खोल देने की व्यवस्था है। इसके साथ ही, बहुत उच्च वोल्टेज के स्विचगीयरों के परीक्षण का एक केन्द्र भी खोला जाएगा।

७६. **अन्य कार्यक्रम** :—खोज, सर्वेक्षण और अनुसन्धान के अतिरिक्त, सिचाई और बिजलो मन्त्रालय के कार्यक्रमों में ये तीन काम भी सम्मिलित रहेंगे : (१) दिल्ली में एक इंजीनियरिंग संग्रहालय खोला जाएगा, जिसमे जनता के देखने के लिए विभिन्न योजना कार्यों के नमूने रखे रहेंगे; (२) मिट्टी खोदने और उठाने के भारी यन्त्रों का काम सिखाने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना, और (३) बिजली को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने तथा उसका वितरण करने वाले तारों को ठीक रखने और चूकि अन्य वैद्युतिक यन्त्रों के प्रयोग के अनुभवी जानकार अभी तक हमारे देश मे नहीं मिलते, इस कारण बिजली की नई 'हौट लाइन वर्क' प्रणाली के सम्बन्ध में प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया जाएगा। बिजली और सिंचाई के कार्यों की खोज, सर्वेक्षण और अनुसन्धान करने के लिए द्वितीय योजना में ६ करोड़ रु० रखे गए हैं। इसके अतिरिक्त ५·६ करोड़ रु० राज्यों की अनेक योजनाओं के लिए भी वितरित किए गए हैं।

५. योजना और संगठन

७७. **संगठित विकास** :—विभिन्न राज्यों की विकास योजनाओं से अधिकतम लाभ उठाना हो तो उन सबमें घनिष्ठ सामंजस्य का होना आवश्यक है। एक राज्य के जलाशय में एकत्र पानी से पड़ोस के राज्यों में सिंचाई करके लाभ उठाया जा सकता है। इसी प्रकार, एक राज्य में उपलब्ध बिजली का वितरण अन्य राज्यों में किया जा सकता है। कहीं-कही एक नदी की धारा का पानी दूसरी नदी में डालकर सारे प्रदेश को लाभ पहुंचाया जा सकता है। इस कारण खोज, पानी के बंटवारे और व्यय में साझा करने के लिए राज्यों में परस्पर सहयोग का रहना बहुत आवश्यक है। परन्तु व्यय और लाभों के बंटवारे

पर राज्यों मे बहुधा मतभेद उठ खड़े होते है। इस प्रकार के झगड़ों को सुलझाने के लिए सरकार ने संसद के समक्ष दो विधेयक रखे। एक का नाम है नदी बोर्ड विधेयक, १९५५ और दूसरे का नाम है अन्तर्राज्यीय पानी विवाद विधेयक, १९५५। प्रथम विधेयक से भारत सरकार को यह अधिकार प्राप्त हो गया है कि वह कई राज्यों में बहने वाली नदियो और कई राज्यों को लाभ पहुचाने वाली नदी घाटी योजनाओ के लिए सम्बद्ध राज्यों की सलाह से बोर्ड नियुक्त कर सकती है। इन नदियो की योजनाए बनाने, उनके व्यय और लाभ का बटवारा करने और राज्य सगठनो के कार्यो मे सामंजस्य रखने का काम ये बोर्ड ही करेंगे। दूसरे विधेयक के अन्तर्गत आवश्यक अधिकारो से सम्पन्न ऐसे न्यायाधिकरण संगठित करने की व्यवस्था है, जो कि नदी घाटी योजनाओं और उनके लाभो के विषय में दो या अधिक राज्यों में विवाद खड़ा हो जाने पर उनका निपटारा किया करेंगे।

७८. **योजनाओं से अधिकतम लाभ की प्राप्ति:**—सिचाई और बिजली की योजनाओं का और उनकी पूर्ति का क्रम ऐसी सावधानी से बनाना चाहिए कि उन पर जो व्यय किया जाए, उससे अधिकतम लाभ की प्राप्ति होती चली जाए। यदि संगठन और योजनाएं भली प्रकार बनाई जाए तो किए हुए व्यय से लाभ सदा ही अधिक मिल सकता है।

७९. प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय योजना कार्यो को कार्यान्वित करते हुए इस लक्ष्य को सदा सामने नही रखा गया। ऐसी भूले बार-बार होती रही कि जलाशय तो बनकर पूरा हो गया और उसके पानी को ले जाने वाली नहरे खोदी नही गई, नहरें बन गई परन्तु उनसे सींची जाने वाली जमीन तैयार नही हुई, बिजलीघरों मे बिजली उत्पन्न होने लगी और उपभोक्ता भी बिजली की मांग करने लगे, परन्तु न तो बिजली सब-स्टेशन मे आवश्यक यन्त्र पहुंचाए गए और न बिजली को ले जाने वाली तारें डाली गई, नल कूप तो खोद लिए गए, परन्तु उन्हे चलाने के लिए बिजली का बन्दोबस्त नही किया गया। योजनाएं बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने मे इस प्रकार के दोष रह जाने पर पूजी फंस जाती है और साधनो की बरबादी होने लगती है। ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिए कि द्वितीय योजना में ये भूले न हों।

८०. प्रयत्न और पूजी का अधिकतम लाभ उठाना हो तो लाभों की उपलब्धि और उनके उपयोग मे समय का व्यवधान नही होना चाहिए। परस्पर सम्बद्ध सब कार्रवाइयों मे सामंजस्य बड़े ध्यान से रखना चाहिए। किसी भी योजना कार्य को आरम्भ करने से पूर्व, उसकी विस्तृत खोज कर लेनी चाहिए और उसके कार्यो का क्षेत्र स्पष्ट निर्धारित कर लेना चाहिए। योजना कार्य के विवरण, खर्चों के अन्दाजे और वित्तीय भविष्यवाणिया, सब पूरे-पूरे तैयार होने चाहिएं और उनमें परिवर्तन करने की आवश्यकता विशेष कारणो से ही होनी चाहिए। हाल में कई बड़े योजना कार्यो के अन्दाजों मे वृद्धि करनी पड़ी थी और उसकी बड़ी प्रतिकूल आलोचना हुई थी। वित्तीय व्यवस्था पहले से कर लेनी चाहिए और यह हिसाब होशियारी से लगाकर कि किस योजना कार्य मे कब कितने कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी, उनकी भरती का प्रबन्ध ठीक समय कर रखना चाहिए।

८१. योजना कार्यों को किस क्रम से हिस्सों में बांटकर पूरा करे, उसकी ओर ध्यान खींचना एक और दृष्टि से भी आवश्यक है। ज्योंही जलाशयो मे पानी एकत्र हो जाए, त्योंही

उसका उपयोग सिचाई के लिए होने लगना चाहिए। यह अत्यन्त आवश्यक है। इसका अभिप्राय यह है कि नहरों और खेतों तक जाने वाले रजबहो की खुदाई, जलाशय बनने के साथ-साथ ही हो जानी चाहिए। यह हुई पहली बात। दूसरी बात यह है कि इसके बाद, ज्योंही पानी मिलने लगे, त्योंही किसानों के खेत सिचाई के लिए तैयार रहने चाहिएं। बिजली के योजना कार्यों पर भी ये दोनों बातें लागू होती है। पहली बात का सम्बन्ध बहुत कुछ कार्यो की योजना बनाने और जिस क्रम से उन्हें पूरा किया जाएगा, उसका निश्चय करने से है। दूसरी बात का सम्बन्ध लोगों को पानी और बिजली का उपयोग करने के लिए तैयार रखने के उपायों के साथ है। उन्हें उनका उपयोग वैज्ञानिक ढंग से करना सिखलाना चाहिए, जिससे अधिकतम उत्पादन करने का लक्ष्य पूरा हो सके। कुछ चुने हुए स्थानों पर नमूने के खेतों का प्रदर्शन करना चाहिए, और जिन जमीनो को सिचाई का लाभ पहुचने वाला हो, वे पानी मिलने के समय तक सिचाई के लिए तैयार हो जानी चाहिए। इस दिशा मे राष्ट्रीय विस्तार आन्दोलन से बहुत काम लिया जा सकता है। उसका उपयोग किसानो को यह बतलाने के लिए करना चाहिए कि सिचाई का पानी जाने से पहले वे अपने खेतो में सब तैयारियां करके रखे। इसी प्रकार, बिजली के योजना कार्यो के क्षेत्रो में इस आन्दोलन के कार्यकर्तांओं को बिजली की खपत का क्षेत्र तैयार करना चाहिए और उसके लगने से पहले ही उसके उपयोग की तैयारियां पूरी रखनी चाहिएं।

८२. **जनता का सहयोग:**—योजना कार्यो की पूर्ण सफलता के लिए जनता का सहयोग भी बड़ी मात्रा में आवश्यक है। जो कार्य औसत नागरिको के समीप हो रहा है या जिसका उनके जीवन और सुख-सुविधाओ पर गहरा प्रभाव पडने वाला है, उसे वे स्वयं देखकर उसकी पूर्ति मे सक्रिय सहायता कर सकते है। सिचाई और बाढ नियत्रण के कार्यों में जन सहयोग प्राप्त करने का अच्छा अवसर मिल सकता है, और राष्ट्रीय विकास के इस विस्तृत क्षेत्र में स्वयंसेवको के लिए भी काम करने की बड़ी गुजाइश है। इस महत्वपूर्ण बात की ओर राज्य सरकारों का ध्यान प्रथम योजना में ही खीच दिया गया था, और सिफारिश की गई थी कि नहरों की खुदाई सरीखे जो काम प्राय: अनसीखे श्रमिको द्वारा ही सम्पन्न हो सकते है वे ठेकेदारों की मार्फत न करवाकर ग्रामीण जनता के सुपुर्द कर देने चाहिए और प्रत्येक ग्राम या ग्राम-समूह मे जो लोग अपने इलाके की नहर खुदाई के काम का जिम्मा ले उनकी सहकारी समितिया संगठित कर देनी चाहिएं। इससे खर्च की बचत होने के अतिरिक्त ये लाभ होते है :—

(१) नहरो की खुदाई पर जो बड़ी-बड़ी रकमे खर्च की जाएंगी, उनका लाभ गावों को ही मिलेगा, क्योकि वे सहकारिता आन्दोलन के अन्तर्गत आ जाएंगे और कृषि सुधार के लिए उपलब्ध होगे।

(२) यदि व्यापक क्षेत्र में गाव वाले इतने बड़े-बड़े काम सहकारिता से कर लेंगे तो वे अन्य कार्यों मे भी सहकारिता करने लगेंगे, जिससे उनके जीवन का स्तर ऊंचा उठ सकेगा।

(३) नहरों की खुदाई के समय जो संगठन बन जाएगा, वह पीछे नहरो को ठीक रखने, पानी के बंटवारे और पानी के प्रयोग में रियायत करने में भी सहायक हो सकेगा।

परन्तु इस विचार पर अमल बहुत ही थोडा हुआ है। गगापुर, घाटप्रभा, माही और बम्बई के काकड़ापार मे श्रमिको की सहकारी समितिया बनाकर इसका प्रारम्भ मात्र किया जा सका था। पूर्वी उत्तर प्रदेश मे गावो की बस्ती की जमीने ऊची करने और असम में डिब्रूगढ़ की रक्षा के लिए बाध बनाने में भी जनता ने कुछ उत्साह प्रकट किया था। केवल कोसी नदी योजना में भारत सेवक समाज की सहायता से जनता द्वारा सन्तोषजनक कार्य होने का समाचार मिला था। शेष सब स्थानो पर परिणाम बहुत निराशाजनक रहा। फिर भी, जन सहयोग के इन उदाहरणों से इस पद्धति की उज्ज्वल सम्भावनाएं प्रकट होती है।

८३. द्वितीय योजना में इस जन सहयोग की गुजाइश और भी अधिक है, क्योंकि उसमे मध्यम योजना कार्यों की बहुत बड़ी सख्या देश के अनेक स्थानों पर पूरी करने की व्यवस्था की गई है। आशा है कि इनकी पूर्ति मे आरम्भ से ही जनता का सहयोग प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाएगा। द्वितीय योजना के इन कार्यो में जनता का अभीष्ट सहयोग प्राप्त करने के लिए एक करोड़ रु० की राशि रखी गई है।

८४. **सुधार उपकर**:—सबसे महत्वपूर्ण परन्तु कठिन प्रश्न द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए पूंजी एकत्र करने का है। इस कारण पूजी में वृद्धि करने के लिए सब उपाय किए जाने चाहिए। एक न्यायोचित उपाय यह है कि जो क्षेत्र सिचाई के योजना कार्यो से लाभान्वित हों उनमे सुधार उपकर लगा दिया जाए। आशा है कि प्रथम योजना के बडे और मध्यम सिचाई योजना कार्यो से लगभग ६३ लाख एकड़ जमीन को लाभ पहुंचा होगा और द्वितीय योजना से लगभग १ करोड २० लाख एकड़ के सीचे जाने की आशा है। यदि इन सब क्षेत्रों मे सुधार उपकर लगा दिया जाए तो उससे पूजी मे लाभदायक वृद्धि हो सकेगी।

८५. सुधार उपकर के सिद्धान्त का समर्थन राष्ट्रीय विकास परिषद ने भी कई बार किया है, और अब यह देश की स्वीकृत नीति का अग बन चुका है। असम, आन्ध्र, बम्बई, मद्रास, पंजाब, हैदराबाद, मैसूर, पेप्सू, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और उड़ीसा मे तो यह उपकर लगाने के कानून बन भी चुके है। मध्य प्रदेश, मध्य भारत, त्रिरुवांकुर-कोचीन, बिहार, पश्चिम बंगाल और सौराष्ट्र में इसके विधेयक तैयार है। यद्यपि भाखड़ा-नगल, काकड़ापार और मयूराक्षी आदि कई योजनाओं से कई राज्यों मे सिचाई होने लगी है, परन्तु सुधार उपकर अभी कही वसूल नहीं किया गया है। इसलिए जिन राज्यो मे इस उपकर की वसूली के कानून नही बने वहां उन्हें बनाकर, उसकी वसूली यथाशीघ्र आरम्भ कर दी जानी चाहिए।

८६. नल कूप भी जमीन की सिंचाई का एक सुरक्षित साधन है। द्वितीय योजना की अवधि में इस साधन द्वारा २० लाख एकड़ से अधिक भूमि में सिचाई होने की आशा है। इसलिए उचित होगा कि जिन भूमियों को नल कूपों और इसी प्रकार के अन्य सुरक्षित छोटे साधनों द्वारा सिंचाई का लाभ पहुंचे उन्हें भी सुधार उपकर देने वाले क्षेत्रों में सम्मिलित कर लिया जाए।

८७. सुधार उपकर, सिंचित भूमि के मूल्य मे हुई वृद्धि के अनुसार लगाया जाना चाहिए और, यह चूंकि एक प्रकार का पूजी उपकर है, इसलिए इसकी वसूली या तो यकमुश्त रकम में कर लेनी चाहिए या किस्तों में फैलाकर, परन्तु किस्तों की मियाद १५ वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। राज्य को यह वसूली भूमि के रूप में भी करने का अधिकार होना चाहिए।

इस अधिकार का उपयोग सामाजिक कार्यो, चकबन्दी, विस्थापिन लोगों के पुनर्वास और भूमिहीन श्रमिको के लिए भूमि प्राप्त करने के प्रयोजन से भी किया जा सकेगा।

८८. **पानी और बिजली की दरें**:—योजना कार्यो की पूर्ति का व्यय अब पहले से बहुत अधिक बढ चुका है। उन्हे ठीक और चालू हालत मे रखने का व्यय भी पहले से बढ़ गया है। सिचाई के द्वारा उत्पादन मे बहुत वृद्धि हो जाती है, इसलिए बढ़े हुए उत्पादन का कुछ अंश सिंचाई कार्यो को ठीक तथा चालू रखने के लिए वापस मिल जाना उचित है। आज प्रचलित पानी की दरें (आबियाना) बरसो पहले निश्चित की गई थी। तब से अब पैदावार की कीमतों मे बहुतेरी बढ़ोतरी हो चुकी है इसलिए पानी की दरों में भी वृद्धि करना उचित है और राज्य सरकारों को इसकी सम्भावना पर तुरन्त ही विचार करना चाहिए। तिरुवाकुर-कोचीन, मध्य भारत, राजस्थान, आन्ध्र, पंजाब, उत्तर प्रदेश और बिहार मे आबियाना मे परिवर्तन किया जा चुका है और उडीसा, असम, मद्रास और मैसूर मे यह प्रश्न विचाराधीन है। इसी प्रकार का युक्तिसगत विचार बिजली की दरों को भी सुधारने के लिए करना चाहिए, जिससे कि बिजली के कारखाने स्वावलम्बी हो सकें। इस प्रश्न पर अभी और भी विचार करने की आवश्यकता है। इस पर सब राज्यों में, विशेषकर उनमे जिनमे अभी तक कोई कार्रवाई नहीं की गई है शीघ्र ही कार्रवाई की जाने की आवश्यकता है।

८९. **योजना कार्यों का चुनाव**:—अक्तूबर १९५३ मे योजना आयोग ने एक टेकनीकल सलाहकार समिति, राज्य सरकारो द्वारा सुझाए हुए योजना कार्यों पर विचार करके, आयोग को यह बतलाने के लिए नियुक्त की थी कि टेकनीकल और वित्तीय दृष्टियों से उनमें किन योजना कार्यो की नीव मजबूत है और किनकी नही। इस समिति की सिफारिशो के अनुसार जो योजना कार्य अस्थायी रूप से द्वितीय योजना में सम्मिलित कर लिए गए हैं और जिनके विषय में समिति ने अपना प्रतिवेदन दे दिया है उनकी सख्या इस प्रकार है :—

——	सिंचाई		बिजली	
	योजना कार्यों की संख्या	अनुमानित व्यय करोड रुपए में	योजना कार्यों की संख्या	अनुमानित व्यय करोड रुपए में
१. द्वितीय योजना मे अस्थायी रूप से सम्मिलित योजना कार्यों की समस्त संख्या .	१९५	३७६	१८१	४२३
२. जिन योजना कार्यों पर प्रतिवेदन मिल गया, उनकी संख्या (इसमें खोज के योजना कार्य शामिल नही हैं)	७०	२७७	११७	३८६

समिति ने इस बात की ओर विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट किया है कि न तो योजना कार्यों की खोज सन्तोषजनक रीति से की गई और न उन्हें अन्तिम रूप ही दिया गया। जिन कई

योजना कार्यों को कार्यान्वित करने के लिए कहा गया था और जिन पर समिति ने विचार किया, उसके सम्बन्ध मे पता लगा कि उनकी खोज पूरी की ही नही गई थी, और उनका पूरा विवरण भी नही दिया गया था, जो कि टेकनीकल और वित्तीय परीक्षा के लिए नितान्त आवश्यक था। फिर भी इस प्रकार के कई योजना कार्यो को, प्रादेशिक तथा अन्य कारणों से, अस्थायी रूप से द्वितीय योजना में सम्मिलित कर लिया गया है और आशा है कि भविष्य मे इनकी अधिक खोज करके इनके क्षेत्र और व्यय का अन्दाजा लगाया जा सकेगा। जो समिति इन योजना कार्यों की परीक्षा करेगी, उसका गठन योजना आयोग, सिचाई तथा बिजली और वित्त मंत्रालयो के प्रतिनिधियों तथा सम्बद्ध क्षेत्रों के विशेषज्ञो को मिलाकर किया जाएगा। ये विशेषज्ञ समय-समय पर समिति के कार्य मे सहायता करते रहेंगे।

९०. **आधारभूत सामान** :—द्वितीय योजना के सिचाई, बिजली और बाढ़ नियंत्रण कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए नितान्त आवश्यक जिन आधारभूत सामानों की आवश्यकता पड़ेगी, उनकी सूची आरम्भिक अन्दाजों के अनुसार नीचे दी जा रही है :—

पाच वर्ष की आवश्यकता	सिचाई और बाढ़ नियंत्रण	बिजली	पांच वर्षो का योग
इस्पात (लाख टनों में) ..	१ ·५	६ ·०	७ ·५
सीमेंट (लाख टनों में)	४८ ·०	१७ ·०	६५ ·०
कोयला (लाख टनों में)	५ ·०	२४५ ·०	२५० ·०

९१. यह सब सामान निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार मिलता रहे, इसके लिए नितान्त आवश्यक है कि योजना कार्यो के अधिकारी और राज्य सरकारें अपनी जरूरतों का अन्दाजा पर्याप्त समय से पहले से लगाकर, उसे समन्वय-कर्ता अधिकारियों के पास भेज दें। केन्द्रीय जल और विद्युत् आयोग भी सब योजना कार्यों की प्रगति के साथ निरन्तर सम्पर्क रखकर समय-समय पर उनकी आवश्यकताओं का अन्दाजा लगाता और आवश्यक सिफारिशे करता रहेगा।

९२. इन आधारभूत सामानों की भारी कमी है, इसलिए कहने की आवश्यकता नही होनी चाहिए कि इनके प्रयोग में मितव्ययिता करने के उपायों का ध्यान सदा रखना कितना आवश्यक है। नक्शे बनाने और तामीर के काम इस प्रकार करने चाहिए कि इन वस्तुओं का अनावश्यक व्यय बिल्कुल न होने पावे। उदाहरणार्थ, (१) इस्पात के बने ढांचों की जगह कंकरीट से, (२) कंकरीट की जगह चिनाई से और (३) चिनाई में सीमेंट की जगह चूने के मसाले से काम निकाला जाए। इसी प्रकार के अन्य उपायों पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। इस्पात और सीमेंट द्वितीय योजना के समय अधिकाधिक मात्रा में विदेशों से मंगाने पड़ेंगे, इसलिए जहां-कहीं सम्भव हो वहां इनका प्रयोग कम करके, इनके स्थान पर लकड़ी आदि स्वदेशी सामान का प्रयोग करना चाहिए।

९३. **बिजली का भारी सामान**:—बिजली के योजना कार्यों में जिन संयंत्रों और मशीनो आदि की आवश्यकता पड़ेगी, उनके लिए हमारे देश को अधिकतर विदेशों पर निर्भर

रहना पड़ेगा। देश में केवल ट्रांसफार्मर, छोटी मोटरें, कडक्टर, तार और लैम्प (बल्ब) आदि बिजली का हलका सामान बनता है। इनकी भी सारी आवश्यकता स्वदेशी सामान से पूरी नहीं होती। गत दो वर्षों मे विदेशों से मंगाए गए बिजली के सामान का मूल्य ३० करोड़ रु० वार्षिक था, इसमे भी बिजली के भारी सामान का मूल्य लगभग २० करोड़ रु० वार्षिक बैठता था। द्वितीय और तृतीय योजनाओ में बिजली के सामान की आवश्यकता बहुत बढ़ जाएगी। इसलिए देश में ही बिजली का सामान बना सकने की सामर्थ्य में वृद्धि करना तात्कालिक आवश्यकता की बात हो गई है। इसलिए निश्चय किया गया है कि पनबिजली के टर्बाइन, आल्टर्नेटर, मोटर ट्रान्सफार्मर और स्विचगीयर आदि बिजली का भारी सामान देश में ही बनाने का एक कारखाना खोल दिया जाए। इसके लिए आरम्भिक कार्य किया जा रहा है। आशा है कि इस कारखाने में १९६१ से माल तैयार होने लगेगा और देश की आवश्यकता का एक भाग यही पूरा होने लग जाएगा।

९४. **विदेशी मुद्राः**—द्वितीय योजना में सिंचाई और बिजली के जो काम करने की बात सोची गई है उनमे से बिजली के कामों के लिए अगले पांच वर्षों में लगभग १५० करोड़ रु० और सिंचाई के कामों के लिए लगभग २० करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु विदेशी मुद्रा का व्यय घटाने की अनिवार्य आवश्यकता है, इसलिए योजना कार्य अधिकारियों को चाहिए कि वे विदेशी मशीनों का प्रयोग जितना टाला जा सके उतना टालने का प्रयत्न करें।

९५. **कार्यकर्ता और रोजगारः**—द्वितीय योजना के निर्माण कार्यों को पूरा करने के लिए टेक्नीकल कार्यकर्ताओं की आरम्भ में ही आवश्यकता पड़ेगी. और वह प्रथम योजना की तुलना में ५० प्रतिशत अधिक होगी। उचित रूप से प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं की आवश्यकता का अनुभव प्रथम योजना काल में भी पग-पग पर हुआ था। १९५४ में सिंचाई और बिजली मत्रालय ने एक नदी घाटी योजना टेकनीकल कर्मचारी समिति इसलिए नियुक्त की थी कि वह जांच करके बतलावे कि आगामी वर्षों में कितने कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ेगी, कितने मिल सकेंगे और कर्मचारियो को आवश्यक संख्या में प्रशिक्षित करने के लिए क्या व्यवस्था करनी होगी। इस समिति ने बतलाया था कि द्वितीय योजना के आरम्भिक काल में टेकनीकल कर्मचारियों की बहुत कमी रहेगी। इस समिति का विचार क्षेत्र क्योंकि केवल नदी घाटी योजनाओं तक ही सीमित था, इसलिए योजना आयोग ने अधिक विचार के पश्चात, एक अधिक बड़ी इंजीनियरी कर्मचारी समिति नियुक्त की ताकि वह उद्योगों, रेलों और सड़कों आदि सभी विकास कार्यो के लिए इंजीनियर कर्मचारियों की आवश्यकता का अन्दाजा लगावे। इस समिति का अन्दाजा है कि सिंचाई और बिजली के योजना कार्यों के लिए अतिरिक्त इंजीनियरों और सुपरवाइजरों की आवश्यकता इस प्रकार होगी :—

अधिकारी	नागरिक (सिविल)	बिजली और यान्त्रिक
इंजीनियर ग्रेज्युएट	२,१००	१,६००
सुपरवाइजर (डिप्लोमा वाले) ..	६,०००	४,०००

योजना के लिए इतने इजीनियर कर्मचारी प्रशिक्षित करने के लिए सरकार को आवश्यक व्यवस्था करनी पड़ेगी। नए इजीनियरों को विशिष्ट प्रशिक्षण देने, काम करते हुए इंजीनियरो को अभ्यासार्थ दोबारा प्रशिक्षित करने और काम मे लगे हुए आपरेटरो और मिकैनिकों आदि को मौके पर ही सिखाने के लिए सरकार ने सीमित मात्रा में कार्यक्रम आरम्भ भी कर दिए हैं। इस कार्यक्रम को आगे बढाने के लिए, यदि सिचाई और बिजली के विभाग विभिन्न प्रकार के टेकनीकल कर्मचारियों के विशिष्ट प्रशिक्षणार्थ, कारखानों में ही नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम आरम्भ कर दे, तो वह बहुत उपयोगी होगा।

९६. अनुमान है कि आगामी पाच वर्षों में सिंचाई और बिजली योजना के निर्माण कार्यों में जितने लोगो को निरन्तर काम मिलेगा उनकी सख्या का अदाजा इस प्रकार है :—

——	सिचाई और बाढ़ नियंत्रण	बिजली	योग
प्रशासन ...	८,०००	७,०००	१५,०००
टेकनीकल (निरीक्षण विषयक)	१५,०००	१०,०००	२५,०००
कुशल	३०,०००	३०,०००	६०,०००
अकुशल	१,८०,०००	१,००,०००	२,८०,०००
योग ...	२,३३,०००	१,४७,०००	३,८०,०००

द्वितीय योजना में सम्मिलित कार्यों के पूरा हो चुकने पर, सब स्तरों पर मिलाकर ५०,००० अतिरिक्त कर्मचारियों को (३५,००० को बिजली में और १५,००० को सिंचाई में) स्थायी काम मिल जाएगा। सिंचाई और बिजली के इन कार्यों के कारण जिन लोगो को परोक्ष रूप से काम मिलेगा, उनकी संख्या इस गणना मे शामिल नहीं की गई है।

९७. नदी घाटी योजनाओं के निर्माण कार्यों मे मशीनों का प्रयोग करने से पूर्व यह विचार कर लेना चाहिए कि इस देश मे कितना विशाल जन-बल पड़ा हुआ है और उसे तुरन्त ही कोई काम देने की कितनी आवश्यकता है। मशीनों का अधाधुन्ध और सर्वत्र प्रयोग करने से देश के विदेशी मुद्रा कोश पर भी भारी बोझ पड़ता है। आशा है कि राज्य सरकारें और योजना अधिकारी इस समस्या पर अधिकतम ध्यान देंगे और मितव्ययिता तथा शीघ्र फल प्राप्ति की उपेक्षा न करते हुए निर्माण कार्य में मशीनों का न्यूनतम प्रयोग करेंगे।

९८. **संगठन:**—सिंचाई और बिजली की योजनाओं को पूरा करने का प्राथमिक उत्तरदायित्व राज्य सरकारों का है। कुछ राज्यों मे, विशेषत: उनमे जिनमे कि विगत कुछ दशकों से विकास कार्य किए जा रहे हैं, किसी हद तक टेकनीकल और प्रशासनिक कुशलता आ भी गई है। अन्य राज्यों को बड़े-बड़े कार्यक्रम हाथ में लेने से पहले अपने वर्तमान संगठन दृढ़ बनाने पड़ेंगे। जिन राज्यों को आवश्यकता है उनकी टेकनीकल सहायता केन्द्रीय जल और बिजली आयोग कर भी रहा है। सिंचाई और बिजली कार्यक्रमों की सफलतापूर्वक क्रियान्विति के लिए यह आवश्यक है कि राज्यों के संगठन और केन्द्रीय जल और बिजली आयोग घनिष्ठ सहयोग से कार्य करें।

६६. नदी घाटी योजनाओं का प्रबन्ध करने और उन्हे कार्यान्वित करने के लिए कैसा संगठन सर्वाधिक उपयुक्त रहेगा, यह प्रश्न बड़े महत्व का है। राज्यों के सिचाई तथा बिजली विभागो ने कई मामलों मे आवश्यकतानुसार कार्य नही किया। लक्ष्य यह है कि काम शीघ्र भी हो और मितव्ययिता से भी, इसलिए प्रबन्ध संगठन को इतने पर्याप्त अधिकार होना चाहिए कि वह किसी भी प्रश्न का निर्णय शीघ्रता से कर सके। अब बड़े योजना कार्यों का अधिकतर व्यय केन्द्रीय सरकार से वित्तीय सहायता लेकर पूरा किया जाता है। इसलिए इन योजना कार्यो के कुशलता तथा मितव्ययिता से पूरा होने में केन्द्रीय सरकार की सीधी दिलचस्पी है और इसीलिए यह मान लिया गया है कि नीति का निश्चय करने और योजना कार्यो की पूर्ति का साधारण निरीक्षण करने के लिए केन्द्रीय और सम्बद्ध राज्य सरकारों के प्रतिनिधियो का एक उच्च अधिकारों से सम्पन्न बोर्ड उपयुक्त संगठन का काम दे सकेगा। विगत कुछ वर्षों मे, भाखडा-नंगल, हीराकुड, रिहन्द, चम्बल, कोयना, कोसी, नागार्जुनसागर और तुगभद्रा नदी घाटी योजना कार्यों के लिए नियंत्रक बोर्ड बनाए जा चुके है। केवल दामोदर घाटी निगम ही ऐसी योजना है जो कई राज्यों मे फैली होने के कारण उसके लिए कानून द्वारा एक पृथक निगम संगठित किया गया है। अब तक का अनुभव बतलाता है कि बडी-बड़ी नदी घाटी योजनाओं को पूरा करने के लिए उक्त प्रकार के बोर्ड ही सर्वाधिक उपयुक्त संगठन है।

१००. अधिकतर राज्य सरकारें अपने बिजली प्रतिष्ठानों का प्रबन्ध अपन सरकारी निर्माण विभागों के द्वारा कर रही है। परन्तु मध्य प्रदेश, पश्चिम बगाल, बम्बई, दिल्ली और सौराष्ट्र ने बिजली उपलब्धि अधिनियम के अनुसार पृथक राजकीय बिजली बोर्डों का संगठन कर दिया है। आशा है कि निकट भविष्य में अन्य कुछ राज्य भी बिजली बोर्डों का संगठन कर देंगे। इन बोर्डों को स्वशासन के आधे अधिकार प्राप्त होते हैं, इसलिए बिजली की मध्यम तथा छोटी योजनाओं का निर्माण और संचालन करने के लिए ये उपयुक्त हैं परन्तु बड़ी-बड़ी योजनाओं का निर्माण कार्य, ऊपर के पैरे में वर्णित विधि से, विशिष्ट संगठनों के सुपुर्द किया जा सकता है।

१०१. सिंचाई और बिजली के विकास के जो कार्यक्रम देशभर में पूरे किए जाएंगे, वे बहुत बड़े है, और देश के पिछड़े हुए भागों पर तुरन्त ही विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, इसलिए सिंचाई और बिजली की महत्वपूर्ण योजनाओं को कार्यान्वित करने और उन्हे आगे बढ़ाने में केन्द्र और राज्य सरकारों को मिलकर अधिक सहयोग से कार्य करना चाहिए। इसीलिए यह नितान्त आवश्यक है कि इंजीनियरों की भरती और प्रशिक्षण सामान्य आधार पर किए जाएं। उनकी योग्यता का स्तर एक-सा हो और वे यह समझे कि हमारी नौकरी सब सरकारों के लिए सामान्य तथा महत्वपूर्ण है। इस सबके लिए इंजीनियरों का एक कुशल और सुसंगठित कर्मचारी वर्ग शीघ्र ही तैयार किए जाने की आवश्यकता है। इस कर्मचारी वर्ग में ही ऐसे इंजीनियरों की एक श्रेणी तैयार हो जाएगी, जिन्हें विशेष कार्यो का अनुभव होगा और जो अवाश्यकता पड़ने पर नए योजना कार्यों का काम आरम्भ करने के लिए भेजे जा सकेंगे। राज्य पुनर्गठन आयोग ने भी इंजीनियरों का एक अखिल भारतीय कर्मचारी वर्ग संगठित करने की सिफारिश की थी। योजना आयोग की सिफारिश है कि राज्य सरकारों को केन्द्रीय सरकार के साथ मिलकर इस प्रकार के कर्मचारी वर्ग का संगठन यथाशीघ्र कर लेना चाहिए।

परिशिष्ट

विवरण १

सिचाई के प्रधान कार्यक्रमों की सूची

(इस अध्याय के पैरा ५ के अनुसार)

कार्यक्रम का नाम	पूर्ति का वर्ष	समस्त पूजी गत परिव्यय लाख रु० मे	सिचित क्षेत्रफल (हजार एकड़ो में)
(१)	(२)	(३)	(४)
आन्ध्र—			
रोम्पेरू जल-प्रणाली ..	१९५६	१५३	१०
तुगभद्रा . .	१९५६	२,५४४	१६७
गोदावरी डेल्टा जल प्रणाली	१८९०	२१०	१,२९९
कृष्णा डेल्टा	१८९८	२२७	१,००२
रल्ला पाड	१९५६	९०	८
बिहार—			
सोन नहरे	१८७५	२६८	६५५
त्रिवेणी नहर विस्तार ...	१९५७	११३	६२
बम्बई—			
नीरा बाएं किनारे की नहर ...	१९०६	१४८	९०
परावरा नहरे	१९२६	१५१	९०
गंगापुर जलाशय ..	१९५७	३३४	४५
नीरा दाएं किनारे की नहरें ..	१९३८	४१२	८९
घाटप्रभा बाएं किनारे की नहरें	१९५७	५४५	१३८
काकड़ापार नहरे (निचली तापी)	१९५७	१,१०१	५६२
मध्य प्रदेश—			
तण्डुला नहरे	१९२५	१२०	१५८
महानदी नहरे ...	१९२७	१५९	१९९
मद्रास—			
पेरियार जल प्रणाली ...	१८९७	१०८	२०२
कावेरी मेट्टूर	१९३४	६४६	२३२
निचली भवानी	१९५५	९६१	२०७
मालमपुझा	१९५७	५२८	४६
अरण्यार जलाशय ...	१९५७	१०४	३
वालायार जलाशय ...	१९५७	११३	७
उड़ीसा—			
उड़ीसा की नहरें ...	१८९५	३८०	४०
पंजाब—			
पश्चिमी यमुना नहरें ...	१८२०	२०४	१,०१८
ऊपरी बारी दोआब नहर ...	१८७९	—	७८३
सरहिन्द नहर ...	१८८४	२६७	२,३१२

(१)	(२)	(३)	(४)
पूर्वी नहर ..	१९२८	११४	१९०
नंगल बांध ..	१९५४	४०६	—
उत्तर प्रदेश—			
गंगा नहर ...	१८५६	४८६	१,६२०
आगरा नहर ...	१८७५	१२९	३४३
निचली गंगा नहर .	१८८०	४६७	१,२५१
शारदा नहर ...	१९३०	१,१५७	१,२९७
शारदा नहर का विस्तार .	१९५५	११०	१७६
शारदा नहर का जलाशय ... (प्रथम चरण)	१९५७	४८०	१७२
माता टीला (प्रथम चरण) .	१९५६	४८८	२६५
पश्चिम बंगाल—			
दामोदर नहरें ...	—	१२८	१८४
मयूराक्षी	१९५८	१,६११	६००
हैदराबाद—			
निज़ाम सागर	१९४०	४७२	२७५
गोदावरी (प्रथम चरण)	१९५७	४४१	६७
मैसूर—			
कृष्णराजसागर नहरें .	१९३२	२६०	९२
तुग ऐनिकट	१९५७	२३१	२२
नुगु	१९५७	२४४	२०
तुगभद्रा	१९५६	१,०२२	९३
राजस्थान—			
जवाई योजना कार्य ...	१९५६	३००	४५
पार्वती योजना कार्य ...	१९५६	८०	१५
मेजा योजना कार्य ...	१९५६	५९	४३
त्रिरुवांकुर-कोचीन—			
कुट्टनाड	१९५६	१०१	२१
पीची	१९५६	२०५	४६
पेरिंचानी	१९५५	६७	६
नेय्यार	१९५६	१४३	३१
जम्मू व कश्मीर—			
सिन्धु घाटी	१९५६	१२४	१८
सौराष्ट्र—			
रंगोला	१९५२	६२	—
ब्राह्मणी ...	१९५६	१००	२७
मौज	१९५४	८१	१५
आजी	१९५५	८०	६
माच्छू	१९५६	१२५	२२

विवरण २

जोते हुए और (कुल) सींचे हुए क्षेत्र १९५४-५५ की सूची (अस्थायी)

(इस अध्याय के पैरा ६ के अनुसार)

राज्य का नाम	समस्त क्षेत्र	वर्गीकृत क्षेत्र	खेती योग्य क्षेत्र	खेती का क्षेत्र	बोया हुआ क्षेत्र	सिंचाई के साधन	
						सरकारी नहरें	तालाब
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)
आन्ध्र	४०,७११	४०,५७२	२४,५७०	१८,४९५	१६,२०४	२,८०५	१,४९८
असम	५४,४०८	३५,७१४	७,६८५	५,६७०	५,०३१	१८२	(क)
बिहार	४५,०११	४४,७९०	२९,६८५	२४,१०६	१९,८०५	७४८	८०३
बम्बई	७१,२१३	७१,१३९	५२,६९१	४४,३७०	४३,१८६	४७६	१८८
मध्य प्रदेश	८३,३७५	८२,९२४	४५,१२९	३२,३४९	३१,०१७	८७६	७२४
मद्रास	३८,६३२	३८,४५२	२५,९५१	१९,०५१	१६,६३६	१,९३९	२,०४०
उडीसा	३८,४८७	३८,४०१	२२,९८४	१६,२०६	१३,८२५	४७१	६८६
पंजाब	२३,९२२	२३,९१९	१५,८४९	१३,९१७	१३,३०७	३,२४५	७
उत्तर प्रदेश	७२,५९७	७४,७७४	५२,८३७	४२,०५७	४१,६५२	४,४२६	१,०३५
पश्चिम बंगाल...	१९,६९३	१९,८४६	१४,६७५	१३,१०५	११,८६०	४२०	८७०
हैदराबाद	५२,५७२	५१,०४५	४०,८३९	३३,९००	२९,४६३	२५४	१,०६८
मध्य-भारत	२९,७८५	२८,२९४	१९,७०७	१२,२५७	१२,०३१	१५९	२५

मसूर	२१,३१६	१६,५८४	१४,६१३	६,१३०	७,६२६	३०६	५६१
पेप्सू	६,४३१	६,३७१	५,८६६	५,१३६	४,६७५	१,६१६	—
राजस्थान	८३,३२७	८३,१६०	५८,६८७	२८,६५२	२५,८०५	८१८	१४०
सौराष्ट्र	१३,६५५	१२,६६६	६,१८७	८,४१७	८,१८७	४७	—
तिरुवांकुर-कोचीन	५,८५२	५,६५८	३,२५७	२,८६५	२,८२१	३४६	११३
जम्मू व कश्मीर	५६,३७६	५,५०७	२,८१३	१,६४३	१,६८१	२००	—
अजमेर	१,५४७	१,५४६	६६७	५७७	३६६	—	१८
भोपाल	४,४०२	४,४०६	२,७१४	१,८२८	१,८०२	४	३
कुर्ग	१,०१५	१,०१२	४३१	२०५	२०४	५	३
दिल्ली	३६६	५६६	२८७	२३०	२३०	४४	६
हिमाचल प्रदेश	६,६८२	२,३१३	१,७५६	७१६	६७६	—	—
कच्छ	१०,८६४	१०,८६४	२,७१६	१,६३४	१,२०६	१४	२
मणिपुर	५,५२२	३४६	३११	२१८	२१८	अनु०	—
त्रिपुरा	२,५८०	२,६३४	६६४	५०३	४७६	—	—
विन्ध्य प्रदेश	१५,१०४	१४,८४८	६,२७८	५,५६६	४,६०२	४	२७
अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	२,०५८	८२	२६	१३	१२	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी	अनु०	अनु०	अनु०	अनु०	अनु०	—	—
पांडिचेरी	७३	अनु०	५७	५७	५४	१६	—
योग	८,१०,८७६	७,२१,७३६	४,६६,८६८	३,४३,१७६	३,१४,६७०	१६,४३०	६,८१७

विवरण २

जोते हुए और (कुल) सींचे हुए क्षेत्र १९५४-५५ की सूची (अस्थायी)

(इस अध्याय के पैरा ६ के अनुसार)

	सिचाई के साधन				६ से ४ तक के कालमों का प्रतिशत	१२ से ६ तक के कालमों का प्रतिशत	१२ से ५ तक के कालमो का प्रतिशत	१२ से ४ तक के कालमों का प्रतिशत
	निजी नहरें	कुएं	अन्य साधन	योग				
	(९)	(१०)	(११)	(१२)	(१३)	(१४)	(१५)	(१६)
आन्ध्र ..	६३	४२१	१८१	४,९६८	६६·०	३० ६	२६·९	२०·२
असम .	७६७	—	७३३	१,६८२	६५·५	३३ ४	२९·७	२१·९
बिहार	३०२	४५४*	१,८८९	४,१९६	६६·७	२१·१	१७·४	१४·१
बम्बई . .	६९	१,५९०*	९३	२,४१६	८१·९	५·६	५·४	४·६
मध्य प्रदेश	(क)	२३९	९७	१,९३६	६८·७	६·२	६·०	४·३
मद्रास .	५	१,१८७	१३७	५,३०८	६४·१	३१·९	२७·८	२०·६
उड़ीसा ..	७६	७०	६३२	१,९३५	६०·१	१३·९	११·९	८·४
पंजाब ..	१४१	१,८६१*	२४	५,२७८	८३·९	३९·६	३७·९	३३·३
उत्तर प्रदेश	३७	५,९९९*	७३८	१२,२३५	७८·८	२९·४	२९·१	२३·२
पश्चिम बंगाल . .	९५०	४०	५७०	२,८५०	८०·८	२३·२	२०·९	१८·७
हैदराबाद ..	८	६३८	५९	२,०२७	७२·१	६·८	६·०	४·९
मध्य भारत .	—	३६८	१०	५६२	६१·१	४·७	४·६	२ ९

मैसूर	६	१२३	१४०	१,१३६	५३·२	१४·४	१२·५	७·६
पेप्सू	—	७४३*	२३	२,३८५	७६·६	५१·०	१४·५	४०·६
राजस्थान	७	१,८८१	६८	२,६१४	४३·६	११·३	१०·२	४·६
सौराष्ट्र	—	३६०	३	४४०	८६·१	५·४	५·२	४ ७
तिरुवाकुर-कोचीन	६८	२६	३६८	६२१	८६·६	३२·६	३२·१	२८·३
जम्मू व कश्मीर	४२१	—	४६	६७०	५६·६	३६·८	३४·५	२३·८
अजमेर	—	११२	१	१३१	३८·८	३५·८	२२·७	१३·६
भोपाल	(क)	१६	४	२७	६६·४	१·५	१·४	१·०
कुर्ग	(क)	—	१	६	४७·३	४·४	४·४	२·१
दिल्ली	—	४७	—	६७	८०·१	४२·२	४२·२	३३·८
हिमाचल प्रदेश	—	(क)	६५	६५	३८·७	१४·१	१३·२	५·४
कच्छ	—	८३	—	६६	४४·५	८·१	६·१	३·७
मणिपुर	१४५	—	—	१४५	६६·८	—	—	—
त्रिपुरा	—	—	—	—	४८·२	—	—	—
विन्ध्य प्रदेश	—	१६६	२	२०२	४६·०	४·४	३·६	२·२
अंडमान और नीकोबार द्वीपसमूह	—	—	—	—	४१·४	—	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमान्त ऐजेन्सी	—	—	—	—	—	—	—	—
पांडिचेरी	—	—	—	१६	६०·४	३ ५	३·३	३·३
योग	३,०६५	१६,४५७	५,६१७	५४,६८६	६७·५	१७·३	१५·६	११·७

टिप्पणी—राज्यानुसार दी हुई संख्याए अस्थायी हैं और मणिपुर की संख्याओं का प्रमाणित होना शेष है।

अनु०—अनुपलब्ध

(क) ५०० एकड़ से भी कम क्षेत्र।

*इन संख्याओं में राज्यों के नलकूपों द्वारा सींचा गया प्रदेश भी सम्मिलित है।

खेती योग्य क्षेत्र—वर्गीकृत क्षेत्र–(जंगल+खेती के लिए अनुपलब्ध)

खेती का क्षेत्र—बोया हुआ कुल क्षेत्र+चालू पडती जमीन।

विवरण ३

द्वितीय योजना की मुख्य-मुख्य सिंचाई योजनाएं

(इस अध्याय के पैरा १६ के अनुसार)

योजना और राज्य का नाम	समस्त व्यय (लगभग) (लाख रु०)	द्वितीय योजना में सिंचाई पर व्यय (लाख रु०)	प्राप्त लाभ (हजार एकड़ों में)	
			पूरा होने पर	द्वितीय योजना के समय
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)
पहले से चलते हुए कार्यक्रम				
१. भाखड़ा-नंगल (पंजाब-पेप्सू और राजस्थान) ...	१६,०००†	२,८२३	३,६०४	२,३४७
२. दामोदर घाटी (पश्चिम बंगाल और बिहार)	८,६००†	९९३	१,१४१	७५०
३ हीराकुड (प्रथम चरण) महानदी के डेल्टा को मिलाकर (उड़ीसा) ...	८,५७०†	२,१९४	१,७८५	१,२८८
४. चम्बल (प्रथम चरण) (राजस्थान और मध्य भारत) ...	४,८०३†	२,१०५	१,१००	४८०
५ तुंगभद्रा (हैदराबाद, आंध्र और मैसूर) ..	६,०००†	५५०	७००	३७०
६. मयूराक्षी (पश्चिम बंगाल) ...	१,६११†	२१२	६००	६००
७. भद्रा (मैसूर) ..	१,७७५†	१,१०२	२२४	१७९
८. कोसी (बिहार) ...	४,५९५	१,७००	१,६००	—
९. नागार्जुनसागर (प्रथम चरण) (आन्ध्र और हैदराबाद) ..	७,५०८	३,४००	१,९१०	—
*१०. तुंगभद्रा (ऊंची सतह की नहर) (आंध्र और मैसूर)	१,८९६	६२०	३८०	२४
११. काकड़ापार नहर (निचली तापती) (बम्बई) ...	१,१०१	३८६	५६२	३०९

†इसमें बिजली के लिए किया हुआ व्यय भी सम्मिलित है ।

*ये अंक अभी अन्तिम रूप से नहीं माने गए ।

योजना और राज्य का नाम	समस्त व्यय (लगभग) (लाख रु०)	द्वितीय योजना मे सिंचाई पर व्यय (लाख रु०)	प्राप्त लाभ (हजार एकड़ो मे)	
			पूरा होने पर	द्वितीय योजना के समय
१	२	३	४	५
नई योजनाएं				
*१. उकाई (बम्बई)	६,०००†	६५०	६१४	—
*२. तवा (मध्य प्रदेश)	१,८३९†	७११	५९०	—
३. पूर्णा (हैदराबाद)	७७३†	५००	१५७	६०
*४. वंशधारा (आन्ध्र)	१,२५६	१००	३०६	—
५. नर्मदा (बम्बई)	२,५००	४००	१,१५७	—
*६. बनास (बम्बई)	७३७	३००	१२०	—
७. मूला (बम्बई)	८३९	३५०	२०४	—
८. गिरना (बम्बई)	८०८	५५०	१८४	२०
९. खड्गवासला (बम्बई)	१,१८२	४००	२०४	—
१०. न्यू कट्टालाई (मद्रास)	१४९	१४८	२१	१२
११. सलन्दी (उड़ीसा)	४४५	४२५	३५३	१७२
१२. गुड़गांव नहर (पंजाब)	२३०	१५४	१०६	५०
*१३. कंस बाटी (प० बंगाल)	२,५१४	५००	९५०	—
१४. चन्द्रकेशर (मध्य भारत)	७५	७५	१५	१५
१५. काबिनी (मैसूर)	२५०	२५०	३०	६
*१६. बनास (राजस्थान)	४८०	२८०	२५०	१०
१७. भादर (सौराष्ट्र)	४००	१०६	९०	—
१८. बूथायंकेटू (तिरुवांकुर-कोचीन)	३४८	३४८	६३	३२
१९. लिद्दर नहर (जम्मू व कश्मीर)	७५	५८	१५	३
*२०. बरणा या कोलार (भोपाल)	४००/५००†	२३०	२५०	—
२१. लक्ष्मनतीर्थ (कुर्ग)	२५	२५	३	३
२२. कसयारी (विन्ध्य प्रदेश)	१६०	२५	४०	—
२३. विदुर (पांडिचेरी और मद्रास)	६१	६१	४	४

*ये अंक अभी अन्तिम रूप से नहीं माने गए।

†इसमें बिजली के लिए किया हुआ व्यय भी सम्मिलित है।

M26MofI&B—22

विवरण ४

सिंचाई योजना कार्यों में लगाई हुई पूंजी और उससे प्राप्त लाभों का संक्षिप्त विवरण

(इस अध्याय के पैरा १६ के अनुसार)

राज्य का नाम	समस्त अनुमानित व्यय				द्वितीय योजना के वे कार्यक्रम जो आगे चलते रहेंगे और नए कार्यक्रम	द्वितीय योजना के कायक्रमो से प्राप्त लाभ (हजार एकड़ो में)			मार्च १९६१ के बाद	
	प्रथम योजना के कार्यक्रम	प्रथम योजना से द्वितीय में चले आए कार्यक्रम	द्वितीय योजना के नए कार्यक्रम	३ और ४ कालमों का योग		प्रथम योजना के कार्यक्रम	द्वितीय योजना के नए कार्यक्रम	७ और ८ कालमों का योग	व्यय लाख रु० में	लाभ हजार एकड़ों में
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
				लाख रुपए						
आन्ध्र	९,०८६	६,८७२	१,५१८	८,३९०	३,२३०.९	४७५	२०	४९५	४,१६९	१,७०६
असम	२५१	—	६७	६७	६३.७	८२	—	८२	—	—
बिहार	५,७४७	३,८४०	६,२९०	१०,१३०	३,३५३.५	२८७	३००	५८७	७,०८५	५,२७२
बम्बई	३,८५३	३,७८५	१२,८५१	१६,६३६	६,७९०.०	७८३	३८७	१,१७०	६,१६२	३,६२९
मध्य प्रदेश	३८३	३५५	१,७६४	२,११९	१,१८७.५	२३४	११०	३४४	६८३	५९४
मद्रास	३,६२०	२,६३९	४६९	३,१०८	१,३६५.२	१५६	३३	१८९	२	१६
उड़ीसा	७,१२७	६,७२०	६७१	७,३९१	२,६५४.३	१,०३८	२०४	१,२४२	१४७	१,००७
पंजाब	८,३८६	८,१०२	७५५	८,८५७	२,९९४.१	१,६५०	२२८	१,८७८	३०२	४८६
उत्तर प्रदेश	४,८२१	१,७६६	४,३७०	६,१३६	२,५८०.०	२४६	७५१	९९७	१,९३०	९६३
पश्चिम बंगाल	५,३०१	५,१२०	२,६४३	७,७६३	१,७७१.०	१,१९६	४८	१,२४४	२,०२९	१,२६९
हैदराबाद	७,३११	७,१११	१,०९०	८,२०१	३,०३१.५	६४०	१४०	७८०	१,९५१	२३

मध्य भारत	२,०७६	१,८९४	६१७	२,५११	१,७९६·७	१७८	१०९	२८७	३९९	५५९
मैसूर	३,०८१	२,८५०	४७८	३,३२८	१,६५३·८	१३८	५०	१८८	४१४	२१२
पेप्सू	२,३६४	२,३३३	४	२,३३७	५९३·०	६३४	—	६३४	—	१७३
राजस्थान	५,३३१	४,३४२	१,३७५	५,७१७	२,४५०·०	८८०	२५५	१,१३५	१,२३७	१,१९५
सौराष्ट्र	१,३८२	८१३	६८४	१,४९७	९१८·६	१००	४१	१४१	२९४	११४
तिरुवांकुर-कोचीन	७९७	५९९	५६४	१,१९३	६१७·४	१००	७५	१७५	—	३१
जम्मू व कश्मीर	५०९	१५८	३०१	४५९	२८२·७	९७	६०	१५७	१००	५६
अजमेर	५०	४२	८३	१२५	९५·३	९	१२	२१	२१	६
भोपाल	१०	—	५६५	५६५	२८०·३	—	१२	१२	२७०	२५०
कुर्ग	—	—	२५	२५	२३·८	—	३	३	—	—
दिल्ली	—	—	१५	१५	१६·६	—	२१	२१	—	—
हिमाचल प्रदेश	८०	—	—	—	—	७६	—	७६	—	—
कच्छ	१४५	१३७	४७	१८४	९२·३	२४	१७	४१	—	९
मणिपुर	—	—	१०	१०	९·५	—	—	—	—	—
त्रिपुरा	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
विन्ध्य प्रदेश	८१	८१	३५५	४३६	२२३·५	२५	६८	९३	१३६	८४
अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
पांडिचेरी	—	—	३३	३३	२२·५	—	२	२	—	—
योग	७१,७६२	५९,५५९	३७,६४४	९७,२०३	३८,०९७·७	९,०४८	२,९४६	११,९९४	२७,३३१	१८,८५४

विवरण ५

द्वितीय योजना के बिजली उत्पादन के मुख्य कार्यक्रम

(इस अध्याय के पैरा ३३ और ४१ के अनुसार)

(१) सरकारी क्षेत्र

कार्यक्रम और राज्य का नाम	समस्त व्यय लाख रु० मे	द्वितीय योजना में बिजली के लिए किया हुआ व्यय (लाख रु० में)	प्राप्त लाभ हजार किलोवाट में	
			पूर्ण हो चुकने पर	द्वितीय योजना के समय में
१	२	३	४	५
जारी योजनाएं				
१. तुगभद्रा (आन्ध्र, हैदराबाद और मैसूर)	६,०००*	७६५	५४	५४
२. भाखड़ा-नंगल (पंजाब, पेप्सू और राजस्थान)	१६,०००*	२,७६६	५६४	५४६
३. हीराकुड (प्रथम चरण) (उड़ीसा)	८,५७०*	८०३	१२३	१२३
४. दामोदर घाटी निगम (बंगाल और बिहार)	८,६००*	१,०६२	२५४	१००
५. चम्बल, (प्रथम चरण) (मध्य-भारत और राजस्थान)	४,८०३*	१,३३०	६९	६९
६. मच्छकुण्ड (आन्ध्र और उड़ीसा)	२,७३२	६११	८५	५१
७. उम्त्रू (असम)	१५८	५३	७·५	७·५
८. कोयना (बम्बई)	३,३२२	२,९००	२४०	२४०
९. परियार (मद्रास)	१,०४८	७९८	१०५	१०५
१०. मद्रास, तापीय बिजलीघर का विस्तार (मद्रास)	१,०४३	२७१	६०	३०
११. रिहन्द (उत्तर प्रदेश)	४,५२६	२,६००	२५०	१५०
१२. रामगुण्डम (हैदराबाद)	४०६	५२	३८	३८
१३. तापीय बिजलीघर (राजस्थान)	३१०	२१६	२४	२४
१४. नेर्यामंगलम (तिरुवांकुर-कोचीन)	२९०	२६०	४५	४५
१५. पोरिंगलकुथु (तिरुवांकुर-कोचीन)	३४६	२०	३२	३२

*इस व्यय में सिंचाई के लिए किया गया व्यय भी शामिल है।

१	२	३	४	५
नई योजनाएं				
१. उकाई (बम्बई)†	६,०००*	—	१६०	—
२. तवा (मध्य प्रदेश)	१,८३६*	—	३०	—
३. पूर्णा (हैदराबाद)	७७३*	२१८	१०	१०
४. चम्बल (द्वितीय चरण) (मध्य भारत और राजस्थान)	१,३५६*	५००	६२	२३
५. सिलेरू (आन्ध्र)	२,४५३	५०	७५	—
६ मच्छकुण्ड का विस्तार (आंध्र और उड़ीसा)	२८०	२५०	१७	१७
७. तुगभद्रा, नेल्लोर योजना (आन्ध्र और मैसूर)	७७०	७२५	६६	६६
८ उम्त्रू, (द्वितीय चरण) (असम)	१००	१००	५	५
९. चरापूंजी भाप बिजलीघर (असम)	७०	६०	५	५
१० बरौनी भाप बिजलीघर (बिहार)	४८४	४८४	२०	२०
११. दक्षिणी गुजरात बिजली का ग्रिड (द्वितीय चरण) (बम्बई)	४५०	४००	४५	४५
१२ कोरबा तापीय बिजलीघर (मध्य प्रदेश)	१,२३४	१,१७६	९०	९०
१३. दक्षिणी ग्रिड का विस्तार (मध्य प्रदेश)	७७७	७७७	६०	६०
१४. कटनी का बिजलीघर (मध्य प्रदेश)	२७०	२७०	२०	२०
१५. कुण्डा (मद्रास)	३,५४४	२,३००	१८०	१४५
१६. पाइकाड़ा बाध (मद्रास)	३०	३०	३	३
१७. पापनाशम बांध (मद्रास)	४१	४१	४	४
१८. हीराकुड, (द्वितीय चरण) (उड़ीसा)	१,४३२	१,२५०	१०९	१०९
१९. यमुना पन-बिजली योजना (उत्तर प्रदेश)	२,०८३	९९०	२०१	५१

*इस व्यय में सिंचाई के लिए किया हुआ व्यय भी शामिल है।

†ये अंक अभी तक अन्तिम रूप में नहीं माने गए ।

१	२	३	४	५
२०. पश्चिमी उत्तर प्रदेश की एक योजना	१,१००	५०	७५	—
२१. हरदुआगंज के भाप-बिजली-घर का विस्तार (उत्तर प्रदेश)	३००	३००	३०	३०
२२. माताटीला नहर योजना (उत्तर प्रदेश)	४५३	३७७	१५	१५
२३. कानपुर के बिजलीघर का विस्तार (उत्तर प्रदेश)	१८६	१८६	१५	१५
२४. जलढाका पन-बिजली योजना (पश्चिम बंगाल)	३५०	१५०	१७	—
२५ कोनार पन-बिजली योजना अथवा उसका कोई विकल्प (दामोदर घाटी निगम, पश्चिम बगाल और बिहार)	४४६	*	४०	—
२६. दुर्गापुर का तापीय-बिजलीघर (दामोदर घाटी निगम, पश्चिम बंगाल और बिहार)	१,४८०	१,४८०	१५०	१५०
२७. बोकारो बिजलीघर का विस्तार, दामोदर घाटी निगम (पश्चिम बंगाल और बिहार)	४५६	४५६	५०	५०
२८. तुगभद्रा का विस्तार (हैदराबाद)	५०	५०	९	९
२९. गधरबल का बिजलीघर (जम्मू व कश्मीर)	४६	४६	६	६
३०. मोहोरा बिजलीघर (जम्मू व कश्मीर)	८९	८९	६	६
३१. भद्रा (मैसूर)	२४२	८२	३३	३३
३२. शरावती (मैसूर)	२,२९७	१,३००	१४२	—
३३. जोधपुर (राजस्थान)	३०	३०	३	३
३४. राजकोट (सौराष्ट्र)	२०	२०	२	२
३५. पोरबन्दर (सौराष्ट्र)	१५०	१५०	१५	१५
३६. जामनगर (सौराष्ट्र)	९५	९५	१०	१०
३७. मौरवी-वांकानेर (सौराष्ट्र)	६४	६४	४	४

*द्वितीय योजना के समय व्यय करने का प्रश्न विचाराधीन है।

१	२	३	४	५
३८ भावनगर (सौराष्ट्र)	५०	·५०	८	८
३९. सुरेन्द्रनगर (सौराष्ट्र)	७२	७२	४	४
४०. बीरावल (सौराष्ट्र)	१००	१००	१०	१०
४१. पन्नियार (तिरुवांकुर-कोचीन)	२९५	२९५	३०	३०
४२. शोलायार (तिरुवांकुर-कोचीन)	४२५	३९१	५४	५४
४३. पाम्बा अथला पोरिंगलकुथु (तिरुवांकुर-कोचीन)	१,०००	४००	७५	—
४४. बढार और सतना के बिजलीघरों का विस्तार (विन्ध्य प्रदेश)	२६०	२४०	२०	२०

(२) निजी क्षेत्र

संस्थान का नाम	बढ़ाई जाने वाली क्षमता का परिमाण (किलोवाट में)	बिजली उत्पादक संयंत्र की लागत (लाख रु० में)
१	२	३
१. कलकत्ता का बिजली निगम (बंगाल)	५०,०००	४७०
२. अहमदाबाद बिजली कम्पनी लि० (बम्बई)	४५,०००	२७८
३ टाटा के बिजली कारखाने (बम्बई)		
(क) ट्राम्बे तापीय-बिजलीघर	१,००,०००	१,४००
(ख) भिड़ा के पन-बिजलीघरों का विस्तार	६०,०००	५५०
४. शोलापुर (बम्बई)	३,०००	३०
५. जबलपुर बिजली कम्पनी (मध्य प्रदेश)	४,०००	३५
६ आगरा बिजली कम्पनी (उत्तर प्रदेश)	४,०००	२५
७ बनारस बिजली और शक्ति कम्पनी लि० (उत्तर प्रदेश)	४,०००	२५
८. यूनाइटेड प्राविन्सेज इलेक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी लि० (उत्तर प्रदेश)	४,०००	३५
९. भावनगर बिजली कम्पनी लि० (सौराष्ट्र)	८,०००	५०
१०. छोटे कार्यक्रम	५,०००	२३
योग	२,८७,०००	२,९११

विवरण ६

बिजली योजनाओं में लगी हुई पूंजी और उससे प्राप्त लाभों का संक्षिप्त विवरण

(इस अध्याय के पैरा ४२ के अनुसार)

राज्य का नाम	समस्त अनुमानित व्यय लाख रु० में			द्वितीय योजना के कार्यक्रमो को आगे जारी रखने का और नए कार्यक्रमों का व्यय लाख रु० में	द्वितीय योजना के समय प्राप्त लाभ—स्थापित क्षमता हजार किलोवाट मे			पीछे से द्वितीय योजना में आए हुए आर्यक्रम	
	प्रथम योजना मे शुरू होकर द्वितीय योजना में आए हुए कार्यक्रम	द्वितीय योजना के नए कार्यक्रम	२ और ३ कालमों का योग		प्रथम योजना के चलते हुए कार्यक्रमो द्वारा	द्वितीय योजना के नए कार्यक्रमों द्वारा	६ और ७ कालमो का योग	व्यय लाख रु० मे	प्राप्त लाभ हजार किलोवाट मे
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
आन्ध्र	३,१६१·०	४,०९१·५	७,२५२·५	२,०९९·५	६४·५	७०·७	१३५·२	२,४७८	७५·०
असम	२००·०	३३६·०	५३६·०	३८०·०	७·५	८·१५	१५·६५	—	—
बिहार	२,४०६·५	२,५२९·०	४,९३५ ५	२,७००·०	५२·२५	१२०·०	१७२·२५	—	—
बम्बई	३,९७६·०	५,३८९·०	९,३६५·०	४,१००·०	२४८·०	४६·०	२९४·०	३,८३९	१६०·०
मध्य प्रदेश	—	३,०१८·३	३,०१८·३	२,३९३·२	२३·०	१७०·०	१९३·०	५१८	३०·०
मद्रास	४,६७३·०	५,८६७·०	१०,५४०·०	५,७५९·८	१३५·०	१५२·०	२८७·०	१,२४४	३५·०
उड़ीसा	३,४६८·०	१,८०८·०	५,२७६·०	२,५५२·६	१३८·३	११९·४	२५७·७	—	—
पंजाब	४,६९८·०	५८२·०	५,२८०·०	२,७४३·६	५४६·०	—	५४६·०	—	—
उत्तर प्रदेश	६,७९९·०	५,१६०·४	११,९५९·४	५,४६२·५	१९०·६	१११·०	३०१·६	३,००७	३२५·०
पश्चिम बंगाल	१,८३३·०	१,६३३·७	३,४६६·७	१,२९९·०	५४·०	१००·८४	१५४·८४	२३०	१७·०

हैदराबाद	७१७·६	१,०८२·८	१,८००·७	१,२५८·८	५६·०	१६·०	७५·०	१३६	६·०
मध्य भारत	१,००५·०	८००·४	१,८०५·४	१,१५५·३	३६·५	१८·५	५८·०	२०८	३७·५
मैसूर	७०४·६	२,६५१·६	३,६५६·५	२,१३७·५	७·२	४०·४	४७·६	१,००१	१४२·०
पेप्सू	१,३६८·०	२०७·०	१,६०५·०	८८६·०	—	—	—	—	—
राजस्थान	२,१६३·०	६५४·०	२,८४७·०	१,६००·०	५८·३	२०·७	७६·०	२१८	३७·५
सौराष्ट्र	२१२·०	७५६·२	९७१·२	४७५·०	३·०	५६·५५	५६·५५	१०६	१०·०
तिरुवाकुर-कोचीन	६३८·०	२,६२०·०	३,२५८·०	२,१८५·०	७७·०	८४·०	१६१·०	६००	७५·०
जम्मू व कश्मीर	१८२·०	३२६·२	५११·२	३२६·१	०·३	१५·७५	१६·०५	३०	—
अजमेर	७·५	१०५·०	११२·५	६६·५	—	०·१७	०·१७	—	—
भोपाल	७१·०	१६१·०	२३२·०	१६८·१	—	६·०	६·०	—	—
कुर्ग	—	४३·०	४३·०	३६·०	—	०·३६	०·३६	—	—
दिल्ली	—	४२५·०	४२५·०	४०३·८	—	—	—	—	—
हिमाचल प्रदेश	७१·०	२०६·३	२८०·३	२१३·८	१·०	२·१	३·१	३४	—
कच्छ	९४·०	११७·५	२११·५	१७४·१	६·३	—	६·३	१३	—
मणिपुर	—	१००·०	१००·०	९५·०	—	—	—	—	—
त्रिपुरा	—	४५·०	४५·०	४२·८	—	२·३	२·३	—	—
विन्ध्य प्रदेश	१०२·०	३३०·०	४३२·०	३२८·६	३·८४	२०·०	२३·८४	२०	—
अंडमान और नीकोबार द्वीप समूह	—	२·५	२·५	२·५	—	—	—	—	—
उत्तर-पूर्वी सीमांत एजेन्सी	—	१६ ०	१६ ०	१६ ०	—	०·७६	०·७६	—	—

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पांडिचरी	१३ ०	४८·३	६१·३	६० ०	—	—	—	१	—
दामोदर घाटी निगम—अति-रिक्त कार्यक्रमों मे केन्द्र का भाग	१,८३३ ०	८८७ ०	२,७२०·०	१,२२० ०	—	—	—	८५६	—
योग	४०,४५६·५	४२,३१२ ०	८२,७६८·५	४२,६८७·३	१,७११ ५९	१,१८४ ७१	२,८९६ ३	१४,५४२	९५३

अध्याय १८

खनिज साधनों का विकास

प्रथम योजना में प्रगति

प्रथम योजना मे इस बात की व्यवस्था की गई थी कि देश मे महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों की निधि का उसके गुण और परिमाण के अनुसार लेखा-जोखा करने के लिए ब्योरेवार और प्रणालीबद्ध जांच-पड़ताल की जाए। यह कार्य भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग, भारतीय खान विभाग और राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं के जिम्मे रखा गया। भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग और भारतीय खान विभाग के विस्तार के लिए १ करोड़ रुपए की रकम भी नियत की गई थी जो बाद में बढ़ाकर २ ५ करोड़ कर दी गई, ताकि विस्तार का काम अधिक शीघ्रता से हो सके। योजना म कुछ विशेष सिफारिशे की गई थी, जिनमे ये बाते शामिल थी —

(क) कोयला :

१. धातुकर्मक कोयले के संरक्षण के लिए उपाय करना, उत्पादन का नियत्रण करना, धुलाई और मिश्रण लागू करना और सरक्षण के लिए ठीक-ठीक चिनाई करना;
२. महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्रों के ब्योरेवार नक्शे बनाना और ठीक चिनाई के योग्य माल की निधि का लेखा-जोखा करना;
३. कोयले के कलरी मान, राख, नमी, और कोक तत्व की मात्रा के अनुसार उसका वैज्ञानिक वर्गीकरण निश्चित करना,
४. फुटकर कोयला क्षेत्रों का उत्पादन बढ़ाना,
५. कोयले की धुलाई, मिश्रण और कार्बनीकरण पर खोज कार्य करना,
६. सरक्षण के लिए ठीक चिनाई, कोयले की धुलाई, मिश्रण और उपकरों के समन्वय आदि के लिए व्यवस्था करना और कोयले सम्बन्धी सभी समस्याओं को समन्वित ढंग से निपटाने के लिए एक व्यवस्था करना, और
७. गोबर को खाद इत्यादि कामों के लिए बचाने के उद्देश्य से मुलायम साफ्ट कोक का प्रयोग घरेलू कामो मे बढ़ाना ।

(ख) अन्य खनिज पदार्थ :

१. खनिज लोहे, खनिज मैंगनीज, क्रोमाइट, खनिज तांबा, बाक्साइट, जिप्सम और पाइराइट के और अधिक महत्वपूर्ण निक्षेप का उसके गुण और परिमाण के अनुसार ठीक-ठीक लेखा-जोखा करने के लिए ब्योरेवार जांच करना; और
२. निचली कोटि की खनिज धातुओं, विशेषकर खनिज और मैंगनीज क्रोमाइट को सुधारने की दिशा मे जांच करना, और
३. प्रणालीबद्ध तरीकों से खुदाई कराना ।

२. ऊपर दी गई सिफारिशों पर नीचे लिखी कार्रवाई की गई है :

(क) **कोयला :**

१. धातुकर्मक कोयले के संरक्षण के लिए कोयला खान (संरक्षण और सुरक्षा) अधिनियम, १९५२ पास किया गया जो कि इस दिशा में एक निश्चित कदम था। इस अधिनियम के अंतर्गत मिली शक्तियों के आधार पर कच्चा कोयला देने वाले कोयले का उत्पादन १९५२ से सीमित कर दिया गया। शुरू मे यह अधिनियम क और ख कोटियों पर ही लागू किया गया लेकिन १९५३ मे १ और २ कोटियों के कोक कोयले पर भी लागू किया गया। इस अधिनियम मे संरक्षण के लिए ठीक चिनाई और कोयले की धुलाई के बारे में भी अधिकार प्राप्त कर लिए गए ।

गत चार वर्षों में कोक कोयले के उत्पादन की निर्धारित सीमाए और वास्तविक उत्पादन का ब्योरा नीचे दिया जा रहा है :—

(आकड़े लाख टन में)

वर्ष	चुनी हुई कोटिया		कोटी १ और २	
	निर्धारित सीमा	उत्पादन	निर्धारिना सीमा	उत्पादन
१९५२	७९·०	७७·०	—	६४
१९५३	७४·०	७१·७	६४.०(क)	६६
१९५४	७४ ०	७२ ०	६४.०(क)	६४
१९५५	७३ २	७२ ०†	७०	६३†

२. रानीगंज, झरिया और बोकारो के कोयला क्षेत्रों की दुबारा की गई पड़ताल के अनुसार यह पता चला है कि रानीगंज और झरिया क्षेत्रों में काफी अधिक मात्रा मे कोयला है। करणपुर कोयला क्षेत्र की दुबारा पड़ताल से, जो अभी हो रही है, कोयले की कई नई जगहों का पता लगा है। कहा जाता है कि झिलीमिल्ली कोयला क्षेत्र मे कोक कोयला है। उसकी अच्छी तरह छानबीन हो रही है। बंगाल-बिहार के कोयला क्षेत्रों वाले भूभागों में ठीक चिनाई योग्य कितना माल उपलब्ध है, उसका अध्ययन करने के लिए एक समिति बनाई गई है जो अपनी रिपोर्ट देगी,

३ भारतीय मानक संस्था की एक समिति—ठोस खनिज ईंधन अनुभागी समिति—ने कोयले का भारतीय मानक सामान्य वर्गीकरण मसविदा तैयार किया है जो स्वीकार किए जाने के लिए सस्था के विचाराधीन है,

४. सिगरेनी की कोयला खानों का उत्पादन बढ़कर १५ लाख टन हो गया है। मध्य भारत की भी कई कोयला खानों मे उत्पादन बढ़ाने की गुजाइश है, लेकिन परिवहन सीमित होने की वजह से उत्पादन बढाया नही जा सकता;

५. ईंधन अनुसंधानशाला ने कोयले की धुलाई, मिश्रण और कार्बनीकरण के बारे में प्रयोगशाला में जो अध्ययन कार्य किया है उसके अच्छे परिणाम निकले हैं। यह छानबीन एक मार्गदर्शक संयत्र की सहायता से जारी रहेगी,

†अनुमानित उत्पादन ।

(क) उत्पादन १९५२ की मात्रा पर निर्धारित कर दिया गया था ।

६. कोयला खान (संरक्षण और सुरक्षा) अधिनियम, १९५२ केन्द्रीय सरकार को संरक्षण सम्बन्धी उपाय लागू करने का अधिकार देता है। एक कोयला बोर्ड स्थापित किया गया है जिसके लिए कई सलाहकार समितियां है तथा अधिनियम के अनुभाग १७ के अधीन नियम जारी किए गए है, और

७. ईंधन के रूप मे साफ्ट कोक का महत्व माना तो गया है, लेकिन परिवहन की कठिनाइयों के कारण उस दिशा मे विस्तार सीमित रहा।

३. हालाकि कोयले के उत्पादन का कोई लक्ष्य निर्धारित नही किया गया था, फिर भी आशा यह थी कि प्रथम योजना मे दिए विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप मांग में जो वृद्धि होगी उसके हिसाब से उत्पादन १९५० के ३ करोड़ २३·१ लाख टन से बढ़कर १९५५-५६ में ३ करोड़ ९० लाख टन हो जाएगा। सिर्फ १९५३ मे निर्यात के लिए मांग में कमी हो जाने की वजह से जो भडार इकट्ठा हो गया था उसी से उत्पादन कुछ गिर गया था। उसको छोड़कर उत्पादन १९५१ से लगातार बढ़ता ही आया है और १९५५ में ३ करोड़ ८२ २ लाख टन हो गया। नीचे १९५० से १९५५ तक कोयले के उत्पादन में वृद्धि, भेजे हुए माल की मात्रा और निर्यात सम्बन्धी आंकड़े दिए जा रहे है :—

(आंकड़े लाख टन में)

वर्ष	उत्पादन मे वृद्धि	भेजे हुए माल की मात्रा	निर्यात
१९५०	३२३·१	२६८·०	९·५०
१९५१	३४३·०	२९१·०	२७ ३१
१९५२	३६३·०	३१०·०	३२·९८
१९५३	३५९·७	३०६·०	१९·९१
१९५४	३६७·७	३१९·४	२०·२२
१९५५	३८२·२	३२९·६	१५·७४

छानबीन

४. भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण और भारतीय खान विभाग का विस्तार आशानुरूप शीघ्र, विशेषकर योजना के प्रथम वर्ष मे, न हो सका। कारण यह हुआ कि टेकनीकल कर्मचारियों की भरती और साज-सामान जुटाने मे देरी हुई थी। फलस्वरूप जितना काम हो सका वह निर्धारित काम से कम है। लेकिन फिर भी जो भी कर्मचारी और साज-सामान उपलब्ध थे, उनकी सीमाओं को देखते हुए लाभदायक काम तो हुआ ही है। इन दोनों विभागों के विस्तार मे खर्च जिस हिसाब से हुआ है वह नीचे दिया जा रहा है :—

(लाख रुपए)

	१९५१-५२		१९५२-५३		१९५३-५४		१९५४-५५		१९५५-५६	
	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०	भा० भू० स०	भा० खान वि०
योजना	८·३०	२ २९	१३·२३	६ १९	१४·३०	८ ६४	१६ ३०	१०·१५	५२·१३	२८ ००
वास्तविक	१·०९	०:२९	४·७३	१·१०	५·३०	३·३९	९·७७	१४·९५	२०·८९	१९·६३

५. भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग ने नियमित रूप से उन्नतिशील खनिज खानो के भूगर्भ सम्बन्धी नक्शे बनाने और ब्योरेवार छानबीन करने के अलावा मध्य प्रदेश की खनिज मैंगनीज की पट्टी पर विशेष ध्यान दिया। इस क्षेत्र के नक्शे की जो बड़े पैमाने पर तैयारी हुई, उससे पता चला कि यहां खनिज मैंगनीज की निधि जितनी पहले आंकी जाती थी उससे कही ज्यादा है। इसी प्रकार जबर सीसा जस्ता निक्षेप के बारे में भी जाच हो रही है। भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के भू-भौतिकी अनुभाग का काम काफी बढ़ गया है। विशेष रूप से इन भू-भौतिक जांचों की चर्चा की जा सकती है : (क) कैम्बे के उत्तर-पश्चिम मे सम्भावित तेल धारक आगारों के स्थान, (ख) नीचे गहराई में खनिज धातुशालाओं के स्थान के लिए मध्य प्रदेश की खनिज मैंगनीज पट्टी; और (ग) सिंहभूम (बिहार) एव चित्रदुर्ग (मैसूर) में खनिज सल्फाइड का विस्तार निश्चित करने के लिए सल्फाइट शालाएं। इस भू-भौतिकी जांच के बाद चित्रदुर्ग क्षेत्र में विस्तार से भू-छेदन कार्य (ड्रिलिंग) शुरू किया गया। अमजोर पाइराइट संचय की जो खोज-खुदाई की गई उससे निक्षेप के एक छोटे-से हिस्से मे से ही, जिसकी जांच की गई थी, लगभग ७५,००० टन निक्षेप का पता लगा है।

६. भारतीय खान विभाग ने खनिज मैंगनीज, क्रोमाइट और अबरक की अधिकांश प्रमुख चालू खानों का निरीक्षण करके उनके कामों के बारे मे महत्वपूर्ण आंकडे इकट्ठे किए हैं। खुदाई के ऐसे तरीकों को जिनमें बरबादी होती है, ठीक करने के लिए उपाय किए जा रहे हैं। निम्नलिखित खनिज निधियों की सविस्तर जांच हुई है—अंडमान में जिप्सम, आन्ध्र मे अस्बेस्टास, शिमला में पाइराइट, पन्ना में हीरे, आंध्र और मैसूर में क्रोमाइट और लद्दाख में गंधक। इसके अलावा यह विभाग भिलाई और राउरकेला इस्पात संयंत्रों के लिए जरूरी कच्चा माल ढूंढने के बारे में जांच पड़ताल कर रहा है।

निचली कोटि की खनिज मैंगनीज को काम के लायक बनाने के बारे में जो प्रारम्भिक जांच हुई थी उससे अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं और अब यह जांच आदि संयंत्र के आधार पर की जानी है। मध्य प्रदेशीय खनिज मैंगनीज सिंडिकेट द्वारा गुरुतर माध्यमी विभाजक संयंत्र का लगाया जाना खनिज मैंगनीज का उपयोग करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा। कम्पनी जल्दी ही एक और धुलाई संयंत्र लगवाने का विचार कर रही है।

७. केन्द्रीय कांच और मृच्छिल्प (सिरेमिक) अनुसन्धानशाला ने भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के सहयोग से चिकनी मिट्टी के कच्चे सामान के विषय में सविस्तर जांच की है। बेकार अबरक की उपयोगिता के सम्बन्ध में भी जांच की गई है, जिसके परिणाम अच्छे रहे हैं।

८. राष्ट्रीय धातुकर्मक प्रयोगशाला के खनिज धातु परिष्कार अनुभाग ने क्रोमाइट, खनिज मैंगनीज और क्यानाइट पर सुधार परीक्षण किए हैं। परिणाम उत्साहवर्धक रहे हैं और नौरजाबाद की कोयला खानों के कोयला धोने से पाइराइट निकालने के बारे में की गई जांच भी सफल रही है। इसके अलावा इस प्रयोगशाला ने देशी रेत को लेकर तमाम परीक्षण इसलिए किए हैं कि भट्ठियों में सांचों द्वारा ढलाई के काम योग्य रेत की उपयोगिता निश्चित की जा सके।

९. पश्चिम बंगाल में पैट्रोलियम की खोज करने के उद्देश्य से भारत सरकार ने स्टैन्डर्ड वैक्यूम आयल कम्पनी लिमिटेड से एक करार किया है। इसके अलावा राजस्थान के

जसलमेर इलाके मे तेल की विभागीय खोज १९५५-५६ में शुरू की गई थी और प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसन्धान मंत्रालय ने एक तेल और प्राकृतिक गैस विभाग स्थापित किया था जो इस दिशा मे विस्तृत खोज करने के लिए तेल और प्राकृतिक गैस के एक अलग निदेशालय का रूप ग्रहण कर चुका है।

खनिज उत्पादन

१०. योजना के पहले तीन वर्षों मे खनिज उत्पादन मात्रा और मूल्य दोनों दृष्टियों से सामान्य रूप से बढ़ा, लेकिन खनिज मैंगनीज और अबरक के बाजार में एकाएक मन्दी आ जाने की वजह से १९५४ में उसकी मात्रा और मूल्य काफी गिर गए। अधिक महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों के उत्पादन अंक नीचे दिए जा रहे है :

		१९५०	१९५१	१९५२	१९५३	१९५४
कोयला	००० टन	३२,३०७	३४,४३२	३६,३०४	३५,९८०	३६,८८०
	लाख रुपया	४,६६८	५,०४८	५,३६२	५,२७६	५,३९०
खनिज लोहा	००० टन	२,९६५	३,६५७	३,९२६	३,८५५	४,३०८
	लाख रुपया	१५४	२१०	२६८	२८१	२८९
खनिज मैंगनीज	००० टन	८८३	१,२९२	१,४६२	१,९०२	१,४१४
	लाख रुपया	८४८	१,७८३	२,२४५	२,९४८	१,९५४
क्रोमाइट	००० टन	१७	१७	३५	६५	४६
	लाख रुपया	६	९	१८	२६	१४
इल्मनाइट	००० टन	२१३	२२४	२२५	२१५	२४१
	लाख रुपया	३३	४०	३७	९२	८०
बाक्साइट	००० टन	६४	६७	६४	७१	७५
	लाख रुपया	८	८	८	८	८
क्यानाइट	००० टन	३५	४३	२७	१५	४२
	लाख रुपया	३३	५९	६३	२४	८८
सलीमेनाइट	००० टन	१	४	५	५	३
	लाख रुपया	०·८	२	४	५	१
मैग्नेसाइट	००० टन	५३	११७	८९	९३	७१
	लाख रुपया	११	१९	१६	१८	१५
जिप्सम	००० टन	२०६	२०४	४११	५८६	६१२
	लाख रुपया	१४	१३	३१	३९	४२
खनिज तांबा	००० टन	३६०	३६९	३२५	२३८	३४३
	लाख रुपया	१२०	१९४	१६३	११४	१८७
सारकृत सीसा	००० टन	—	२	२	३	३
उत्पादित सीसा धातु	००० टन	—	०·९	१.१	२	२
	लाख रुपया	—	१५	१७	१८	२३
सारकृत जस्ता	००० टन	—	२	४	४	४
समस्त खनिजों का मूल्य	लाख रुपयों में	८,३४१	१०,५५५	१०,८०४	११,२७८	१०,२५२

दूसरी योजना के कार्यक्रम

११. दूसरी पचवर्षीय योजना में जो औद्योगिक विकास पर जोर दिया गया है उसके परिणामस्वरूप खनिज विकास के कार्यक्रमो पर विशेष रूप से ध्यान देना पड़ेगा। इस्पात इन्गौट की मात्रा ६० लाख टन बढ़ा देने के लिए आवश्यक होगा कि खनिज लोहे, कोयले, चूना पत्थर और डालोमाइट तथा ऊष्मसह पदार्थों का उत्पादन बड़े पैमाने पर बढ़ाया जाए। अल्यूमिनियम उद्योग के विकास से बाक्साइट की और सीमेंट उद्योग के विकास से चूना पत्थर, जिप्सम और चिकनी मिट्टी की मांग बढ़ेगी। हालांकि आने वाले वर्षों में जो औद्योगिक विकास होना है उसके प्रसंग में खनिज प्रदेशों का सर्वेक्षण किया जा चुका है और मुख्य-मुख्य खनिज क्षेत्र निर्धारित हो गए है, फिर भी देश की खनिज सम्पत्ति कैसी और कितनी है—इस बारे में और सविस्तर जानकारी पा लेना जरूरी है। इसके लिए नियमानुसार नक्शे बनाना और जहां आवश्यक हों, वहां बड़े पैमाने पर नक्शे बनाना, खनिज खोज के लिए भू-भौतिक और भू-रसायनिक तरीकों का और ज्यादा अपनाना तथा पड़ताल के लिए कुछ भू-छेदन कार्य करना आवश्यक होगा।

कोयला

१२. कोयले पर हमारा ध्यान सबसे पहले जाना चाहिए क्योकि एक तो यह मूलतः अनेक उद्योगों के लिए ईंधन के रूप मे आवश्यक है और दूसरे, लोहा और इस्पात कोयले के कार्बनीकरण जैसे उद्योगों के लिए कच्चे माल के रूप मे जरूरी है।

१३. १९५५ मे कोयले का उत्पादन ३ करोड़ ८० लाख टन तक पहुंच गया था। उसके वर्तमान उत्पादन का अधिकांश भाग निजी क्षेत्र की खानों से ही आता है, सार्वजनिक क्षेत्र से तो सिर्फ ४५ लाख टन ही है। दूसरी योजना में रखे गए औद्योगिक लक्ष्यों और तापीय बिजली शक्ति उत्पादन के कार्यक्रमों तथा रेलवे के विकास के आधार पर दूसरी योजना के अंत तक कोयले की माग ६ करोड़ टन हो जाएगी।

इसका मतलब यह हुआ कि १९५५ में जो उत्पादन था उस पर २ करोड़ २० लाख टन की और १९५४ के उत्पादन पर २ करोड़ ३० लाख टन की वृद्धि की जाए और इसके लिए विशेष रूप से प्रयत्न भी करने पड़ेंगे। आजकल जितनी खानों में काम हो रहा है, उनमें कुछ वृद्धि अवश्य की जा सकती है लेकिन इतनी वृद्धि के लिए कई नए कोयला क्षेत्रों में काम शुरू करना पड़ेगा।

१४. १९४८ के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में उल्लिखित था कि कोयले के सम्बन्ध में जो भी नए क्षेत्र खोले जाएंगे वे सभी सार्वजनिक क्षेत्र के अंतर्गत होंगे, लेकिन जहा सरकार राष्ट्रीय हित को देखते हुए निजी क्षेत्र का सहयोग पाना चाहे वहां ऐसा न होगा। इस नीति के अनुसार पिछले सालों में कुछ छूटें दे दी गई थी, लेकिन तय हुआ है कि भविष्य में कोयले के नए क्षेत्रो को सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत रखने की नीति पर सख्ती से अमल होगा और दूसरी योजना की बढ़ी हुई मांगों को पूरा करने के वास्ते कोयले का अतिरिक्त उत्पादन अधिक से अधिक मात्रा में सार्वजनिक क्षेत्र में ही होगा। इसी के अनुसार फिलहाल यह तय पाया गया है कि १९६०-६१ में जो २ करोड़ २० लाख टन कोयले की मांग में वृद्धि होगी, उसका १ करोड़ २० लाख टन सार्वजनिक क्षेत्र से आएगा। यह चाहे वर्तमान कोयला क्षेत्रों से हो चाहे नए खोले गए कोयला क्षेत्रों से, और बाकी निजी क्षेत्र के वर्तमान और उनके सन्निकट कोयला क्षेत्रों से निकाला जाएगा। उत्पादन बढ़ाने के लिए कोयले की नई खाने सार्वजनिक क्षेत्र में ही चालू की जाएंगी। सार्वजनिक क्षेत्र में अतिरिक्त उत्पादन कुछ इस प्रकार होगा: वर्तमान खानों से २० लाख टन जिसमें

५ लाख टन मुख्यतया बोकारो की मौजूदा खानों से ही होगा, सिंगरेनी की खानों से १५ लाख टन और प्रस्ताव है कि कोरबा कोयला क्षेत्रो का विकास करके ४० लाख टन प्राप्त किया जाए। बाकी ६० लाख टन किन क्षेत्रों से आएगा, इसके बारे में भी मोटे तौर पर निर्णय कर लिया गया है, लेकिन किस क्षेत्र से कितना रखा जाए, इसके ब्योरे तय किए जा रहे हैं। इसमें सबसे अधिक विचार इस बात का रखा गया है कि दूरस्थ क्षेत्रों मे ही नई खानों का विकास हो। राजकीय क्षेत्र में १ करोड़ २० लाख टन अतिरिक्त कोयला निकालने के लिए कुल खर्च अनुमानतः ६० करोड़ रु० आएगा जिसमे १२ करोड़ आवास के लिए भी शामिल है। फिलहाल इसके लिए ४० करोड़ रुपया रखा गया है।

सार्वजनिक क्षेत्र में कोयले का उत्पादन करना आवश्यक होगा ही, इसलिए सरकार ने कोयला उत्पादन तथा विकास कमिश्नर के अधीन एक संगठन स्थापित किया है जो राज्यों की वर्तमान खानों और योजना काल में खोली जाने वाली नई खानो का प्रमुख प्रबंधक अधिकारी होगा। कोयले का नियंत्रण, जो कोयला खान नियंत्रण आदेश के अंतर्गत वितरण, मूल्य इत्यादि के बारे में होगा, और निजी उद्योग का नियंत्रण कोयला नियंत्रक नामक एक अलग अधिकारी के हाथ में रहेगा।

राज्यों की कोयला खानों का प्रशासन अभी तो विभाग के हाथ मे है, लेकिन प्रस्ताव है कि इन खानों और योजना काल में खोली गई नई खानों का स्वामित्व और उनका प्रबन्ध करने के लिए एक कम्पनी बना दी जाए।

कोयले के उत्पादन में वृद्धि के लिए आवश्यक टेकनीकल कर्मचारियों के प्रशिक्षण के सिलसिले मे पहले कदम के रूप में चार प्रशिक्षण केन्द्र करगली, गिरडीह, तलचर और कुरसिया में खोले जाएंगे जो माध्यमिक और निचली श्रेणी के टेकनीकल कर्मचारियो जैसे पर्यवेक्षक, ओवरसियर, विद्युत और मशीनी अधीनस्थ कर्मचारी इत्यादि प्रशिक्षित करेंगे। योजना काल में टेकनीकल कर्मचारियों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए और भी केन्द्र खोले जाएंगे।

१५. कोयले की ढुलाई रेलवे के ऊपर बड़ा भारी भार है, क्योंकि कोयले की मांग तो देश भर में होती है परन्तु यह कोयला पश्चिम बंगाल और बिहार राज्यों में ही निकाला जाता है। कोयला भेजने में रेलवे में वैज्ञानिकन तो हुआ है, लेकिन मांग में इतनी अधिक वृद्धि को देखते हुए उत्पादन मे भी वैज्ञानिकन की आवश्यकता है। भिन्न-भिन्न राज्यों में कोयला खानों के विकास के लिए कोयला उत्पादन के कार्यक्रम बनाए गए हैं। नीचे दिए गए विवरण में दूसरी योजना के अन्त में कोयले के उत्पादन का सम्भावित वितरण १९५४ के वितरण के साथ दिया जा रहा है:—

(आंकड़े लाख टन में)

	१९५४ में उत्पादन	१९६०-६१ में उत्पादन	वृद्धि
असम	५.०	५.०	—
पश्चिम बंगाल			
दार्जिलिग	०.३	०.३	—
रानीगंज	१२२.२	१८१.६	५९.४

बिहार			
झरिया	१३१·६	१६६·६	३५·०
करनपुर	१४·४	६०·०	४५·६
बोकारो	२३ ८	२८·८	५·०
गिरडीह	२·६	२·६	—
बिहार के अन्य छोटे क्षेत्र	१·४	१·४	—
मध्य प्रदेश			
छिदवाडा और चंडा	२२·५	२२·५	—
कोरबा	—	४०·०	४०·०
सस्ती	०·७	०·७	—
मध्य भारत की कोयला खाने	२३·१	५३·१	३०·०
उड़ीसा	५·२	५·२	—
हैदराबाद			
सिगरेनी	१४·३	२६·३	१५·०
राजस्थान			
बीकानेर	०·३	०·३	—
योग	३६७·७	५९७·७	२३०

१६. ६ करोड़ टन के लक्ष्य में लोहा और इस्पात उद्योग तथा अन्य आवश्यक उपभोक्ताओं के लिए कच्चा कोयला देने वाले कोयले की जरूरत भी शामिल है। इस प्रकार के कोयले का उत्पादन १ करोड़ ४० लाख टन निर्धारित कर दिया गया है और वास्तविक उत्पादन इससे कुछ ही कम है। इसके विपरीत आवश्यक उपभोक्ताओं की माग सिर्फ करीब ३५ लाख टन है। बाकी कोयला रेलवे और उद्योगों के काम आता है। थोड़े कोयले का निर्यात भी होता है। दूसरी योजना में इस्पात उत्पादन में वृद्धि के लिए ६७·३ लाख टन कोक कोयले की जरूरत होगी, जबकि अन्य आवश्यक उपभोक्ताओं की मांग का अनुमान १६ ८ लाख टन है। इस प्रकार १ करोड १४ १ लाख टन धुला हुआ साफ या करीब १ करोड ६५ लाख टन कच्चा कोयला कुल मात्रा में जरूरी होगा, जबकि वर्तमान उत्पादन लगभग १ करोड़ २५ लाख टन है। १६६०-६१ तक आवश्यक उपभोक्ताओं की माग काफी बढ जाएगी। उसको पूरा करने के लिए इस प्रकार के कोयले का उत्पादन धीरे-धीरे बढ़ाना होगा और सीमित निधियों के सरक्षण के उद्देश्य से धीरे-धीरे इस बात के लिए भी उपाय करने पड़ेंगे कि रेलवे जैसे अनावश्यक उपभोक्ताओं के लिए कोक कोयले की जगह उपयुक्त गैर-कोक कोयला दिया जाए। रेलवे ने इस उद्देश्य से एक कार्यक्रम का सुझाव दिया है।

१७. संरक्षण की दृष्टि से और इस्पात उद्योग को एक समान कोटि का कोयला देने की आवश्यकता को भी देखते हुए धातुकर्मक कोयले की धुलाई जरूरी हो जाती है। सरकार ने कोयला धुलाईखाना समिति बनाई थी। उसने भारतीय कोयले के धोने और धुलाईखाने

स्थापित करने के सवाल पर विचार किया था। इस समिति की रिपोर्ट और उस पर कोयला बोर्ड की सिफारिशों के आधार पर केन्द्रीय सरकार ने ये निर्णय किए है :—

(१) सामान्य रूप से कोती-कांती तक के धातुकर्मक कोयले की धुलाई हो;

(२) मौजूदा और प्रस्तावित इस्पात संयत्रों की जरूरतो को पूरा करने के लिए निजी कोयला खानों को धुलाईखाने स्थापित करने का विकल्प दे दिया जाए। अगर निजी कोयला खानों द्वारा स्थापित धुलाईखानों से अपेक्षित परिमाण मे धुला कोयला नही मिल पाता, तो सरकार स्वय सब जरूरतों के हिसाब से धुलाईखाने स्थापित करेगी; और

(३) धुलाई की औसत लागत कोयला खानो की कीमतों में परिवर्तन करके या धुले कोयले के लिए तय कीमत द्वारा, या उचित उत्पादान द्वारा जैसा भी उपयुक्त अवस्था पर ठीक समझा जाए, पूरी कर दी जाएगी।

जमदोबा, पश्चिमी बोकारो और लोडना कोयला खानों के निजी क्षेत्र में तीन धुलाईखाने पहले से ही काम कर रहे हैं। ये कोयला खाने टाटा लोहा और इस्पात कम्पनी और भारतीय लोहा और इस्पात कम्पनी को धुला कोयला प्रदान कर रही हैं। बोकारो/करगली में प्रति वर्ष २२ लाख टन कोयले की धुलाई करने की क्षमता वाला एक धुलाई संयत्र लगाने का निर्णय किया जा चुका है। इस धुलाईखाने से धुला कोयला राउरकेला और भिलाई संयंत्रों को दिया जाएगा। एक जापानी फर्म को इस धुलाई सयंत्र के बनाने और लगाने के लिए आर्डर दिया जा चुका है। दूसरा धुलाईखाना दुर्गापुर में बनाने का प्रस्ताव है। इस्पात संयंत्रों की जरूरतों को पूरा करने के लिए और धुलाईखाने खोलने के प्रस्तावो पर अभी विचार किया जा रहा है। योजना में कोयले के धुलाईखाने खोलने के लिए ६ करोड़ की रकम रखी गई है।

१८. जैसा कि पहले संकेत किया जा चुका है, परिवहन की सीमाओं की वजह से घरेलू कामों मे कच्चे कोक का उपभोग ज्यादा नही बढ़ा है। १९५० में इसका उपभोग ११ लाख टन था, जो १९५५ में बढ़कर लगभग १६ लाख टन हो गया, हालांकि १९५५ में अतिरिक्त उपभोग के लिए १० लाख टन का लक्ष्य रखा गया था। दूसरी योजना के अन्त में होने वाली कोयले की जरूरतो का अनुमान करने में यह मान लिया गया था कि राज्य के अथवा 'ज़ेड' श्रेणी के उपभोक्ताओ के लिए ३५ लाख टन कोयले की जरूरत होगी, जिसका अधिकाश कच्चा कोक तैयार करने के लिए हुगा। इस समय अधिकाश कच्चा कोक झरिया की कोयला खानो में निचली कोटि के धातुकर्मक कोयले से तैयार किया जाता है और खोज कार्य से यह पता लगा है कि यह कोयला धातुकर्मक कार्यो के लिए सुधारा जा सकता है। लेकिन जब तक गैर-कोक कोयले के लिए आधुनिक ढंग के बड़े पैमाने के निम्नतापीय कार्बनीकरण यूनिट स्थापित नही हो जाते, कच्चे कोक के लिए उत्पादन में जो वृद्धि निर्दिष्ट है उसे मौजूदा तरीके से ही पूरा करना पड़ेगा। इसमें धातुकर्मक कोयले को लेकर विकेन्द्रित रूप मे उत्पादन किया जा रहा है, हालाकि इससे बचा जा सकता है।

दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य के सम्बन्ध में प्रस्ताव यह है कि ७,१४,००० टन कोयले के चूरे की छोटी-छोटी ईंटें बनाने के लिए एक संयंत्र लगाया जाए। इन ईंटों के कार्बनीकरण मे ३,८०,००० टन अर्द्धकोक प्राप्त होगा।

साफ्ट कोक के महत्व के विचार से योजना को संशोधित करते समय अथवा तीसरी योजना मे इस उद्योग को उच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

छानबीन के कार्यक्रम

१९. द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विभिन्न उद्योगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कुछ अधिक महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों के उत्पादन के लक्ष्य नीचे दिये गए है। इन लक्ष्यो में देश की अपनी जरूरतों के साथ कही-कही निर्यात की आवश्यकताओं का भी समावेश है।

खनिज	मात्रा	उत्पादन			निर्यात	
		१९५०	१९५४	१९६०-६१	१९५४-५५	१९६०-६१ के लिए लक्ष्य
१	२	३	४	५	६	७
खनिज लोहा	लाख टन	२९·७	४३·१	१२५	९	२०
खनिज मैंगनीज	,,	८·८	१४·१	२०	९·४	१५
चूना पत्थर	,,	अप्राप्य	अप्राप्य	२३३†	—	—
जिप्सम	,,	२·१	६	१९·७†	—	—
बाक्साइट	हजार टन	६४	७५	१७५	२	—

२०. दूसरी योजना में खनिज सम्पत्ति की जाच और सर्वेक्षण को और अधिक परिश्रम के साथ आगे बढ़ाना होगा। सरकारी क्षेत्र मे कोयले के उत्पादन में जो वृद्धि बड़े पैमाने पर होनी है वह नए क्षेत्रों से ही होनी है और उसके लिए चुने हुए कोयला क्षेत्रों में व्यापक कोयला खोज पर शीघ्र ही ध्यान देने की आवश्यकता है। इसी प्रकार चूकि राज्यो का हिस्सा लोहा और इस्पात जैसे मूल उद्योगों में बढ़ता ही जा रहा है, इससे कच्चे खनिज माल जैसे खनिज लोहा, खनिज मैंगनीज, चूना पत्थर और ऊष्मसह खनिजों के निक्षेप की ब्योरेवार जांच करनी आवश्यक होगी। इसका अर्थ यह है कि भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग और भारतीय खान विभाग का काफी विस्तार किया जाए और इस काम के लिए उपयुक्त साज-सामान में भी वृद्धि की जाए। दूसरी पंचवर्षीय योजना की आवश्यकताओं को दृष्टि में रखते हुए अन्तरिम प्रस्तावों को १९५५ के पूर्वार्द्ध में स्वीकार कर लिया गया था। विस्तार सम्बन्धी अन्य प्रस्तावों पर अभी विचार किया जा रहा है। फिलहाल अनुमान से ५ करोड़ रुपया भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के लिए और १ करोड़ रुपया खान विभाग के लिए जरूरी होगा।

२१. भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के प्रस्तावों में ये बातें है :

(१) भूगर्भ सम्बन्धी नक्शे बनाने के लिए सुविधाओ में विस्तार किया जाए ताकि नक्शों के अन्तर्गत मूल क्षेत्र को शीघ्र ही बढ़ाया जा सके। (खनिज पदार्थों का

†ये आकड़े इन खनिजो का उपभोग करने वाले उद्योगों की निर्धारित क्षमता पर आधारित हैं। इनमें ऐसे फुटकर उपभोक्ताओ की जरूरते शामिल नही है जिनके आकड़े उपलब्ध नहीं है।

आकलन और विकास पूर्ण और सही नक्शे होने पर ही निर्भर करता है; इसलिए उसके अन्तर्गत क्षेत्र को यथाशीघ्र बढ़ाने की जरूरत है। अब तक १ इंच १ मील के पैमाने के हिसाब से देश के सिर्फ पांचवे हिस्से का ही नक्शा बनाया जा सका है।)

२) आर्थिक भू गर्भ, भूभौतिकी, इंजीनियरी और भूगर्भस्थ जल प्रभागों का विस्तार और उनका संवर्धन किया जाए। भूगर्भ और भूभौतिकी ढंगों से महत्वपूर्ण खनिजों की सविस्तर जांच के अलावा यह विभाग नदियों के मैदानों में विधिपूर्वक जलगति विज्ञान सम्बन्धी परिस्थितियों का भी अध्ययन करेगा। प्रस्ताव है कि शुरुआत गंगा और गोदावरी-कृष्णा नदियों के मैदानों से की जाए। देश की जल सम्पत्ति का लाभ उठाने के लिए जलगति विज्ञान सम्बन्धी इस प्रकार की ब्योरेवार जानकारी आवश्यक है।

(३) अच्छी तरह साज सामान से युक्त भू-छेदन प्रभाग का संगठन किया जाए जिससे खनिज पदार्थों की जांच का काम अब तक जितना संभव था उससे एक अवस्था और आगे बढ़ाया जा सके। क्षेत्रीय आधार पर निक्षेपों का अध्ययन करने के अलावा जमीन के अन्दर गहराई में भी उनके बारे में जांच की जाएगी ताकि निधि का गुण और परिमाण दोनों दृष्टियों से अधिक सही लेखा-जोखा हो सके।

जहां तक भारतीय खान विभाग का सवाल है, अनुसन्धान, खनिज खोज, खान खुदाई और भू-छेदन प्रभागों को मजबूत करने की जरूरत है ताकि यह विभाग चुने हुए क्षेत्रों में व्यापक अन्वेषण के अतिरिक्त उनमे कुछ को खुदाई के लिए उपयुक्त सिद्ध करने के लिए उनकी आरम्भिक खुदाई का काम कर सके।

२२. भूगर्भ सर्वेक्षण और खान विभाग के कार्यक्रमों के अन्तर्गत क्षेत्र प्रधान और श्रम प्रधान दोनों प्रकार की जांचें आती हैं। इनमें जो मदें शामिल हैं जिनमें से प्रमुख यहां दी जा रही हैं :—

कोयला—कोरबा, दक्षिणी करनपुरा, रानीगंज, चिरमिरी, रामगढ़, झिलीमिल्ली, और उत्तरी करनपुरा (राजकीय क्षेत्र मे कोयले के उत्पादन के सम्बन्ध में) और कोटा, सिंगरौली, उमरिया, सोहागपुर, कनहन और पेंच घाटियां, हैदराबाद, तलचर, गोदावरी घाटी और असम की कोयला खानों (गुण और परिमाण के आकलन के लिए) के भू-छेदन कार्य के साथ सविस्तर भूगर्भ जाचें।

तांबा—खेत्री, दरिबो (राजस्थान) के तांबे के निक्षेपों के ब्योरेवार नक्शे बनाना तथा अन्वेषण और आन्ध्र के कुर्नूल जिले में गनी की पुरानी खानों की ब्योरेवार पड़ताल।

मैंगनीज—मध्य प्रदेश की खनिज मैंगनीज पट्टी में भू-छेदन कार्य और उसके साथ ही ब्योरेवार नक्शे बनाने का काम जारी रखना।

क्रोमाइट—दक्षिणी मैसूर के क्रोमाइट क्षेत्रों और उड़ीसा में नौसाई के क्रोमाइट निक्षपो की ब्योरेवार जांच।

जिप्सम—नागपुर (जोधपुर) और बीकानेर (राजस्थान) में जिप्सम निक्षेपों की भ-छेदन द्वारा ब्योरेवार पड़ताल।

सीसा-जस्ता—जवार (राजस्थान) के सीसा-जस्ता निक्षेप की भू-छेदन द्वारा पड़ताल।

टीन—बिहार क ज्ञात स्थानों की ब्योरेवार पड़ताल।

दूसरी पंचवर्षीय योजना मे यह प्रस्ताव है कि ये संगठन अन्य कई जांच-पडतालों का काम शुरू करेगे। इनमे कई अधात्वीय खनिज निक्षेपो, जैसे चूना पत्थर, डालोमाइट, संगमरमर, काच, रेत, ग्रेफाइट, गेरू, चिकनी मिट्टी, फुलर मिट्टी, साबुन, पत्थर, जिप्सम इत्यादि की ब्योरेवार परीक्षा भी शामिल होगी। ये निक्षेप सारे भारत मे है और इनके लिए जो पडतालें की जाएगी, वे कुछ अंशों में प्रादेशिक स्तर पर और कुछ अंशों में एक-एक निक्षेप को लेकर होंगी।

ऊपर दिए गए कार्यक्रम के अतिरिक्त, जिसे केन्द्र कार्यान्वित करेगा, योजना में खनिज विकास योजनाओं के लिए २ करोड़ रुपए की व्यवस्था है जिसे राज्य सरकारें कार्यान्वित करेंगी। राज्यो द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली योजनाओं मे से प्रमुख हैदराबाद की हट्टी सोना खानों का विकास है, जिसके लिए फिलहाल ५० लाख रु० की रकम रखी गई है।

२३. देश के औद्योगिक विकास में खनिजो के महत्वपूर्ण योग को देखते हुए ऐसा विचार है कि राज्य ही उनकी खुदाई का काम करेगा। जिन खनिज पदार्थों का विकास भविष्य मे केवल सार्वजनिक क्षेत्र में ही होगा, वे है कोयला और खनिज तेल। लेकिन औद्योगिक नीति सम्बन्धी नए प्रस्ताव के अनुसार कई और महत्वपूर्ण खनिज सूची (देखो अध्याय २ का परिशिष्ट) में जोडे जा रहे है। इस नीति के परिणामस्वरूप योजना काल मे सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत हीरे की खुदाई और ताबे की एक खान चालू करने की योजनाएं प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसधान मंत्रालय मे बनाई जा रही है। इन योजनाओं के लिए आवश्यक वित्त के विषय में उचित व्यवस्था करने पर विचार किया जाएगा।

२४. देश के तेल साधनो का अन्वेषण और उनके विकास का काम भी दूसरी पंचवर्षीय योजना मे महत्वपूर्ण स्थान रखता है। सरकार ने जैसलमेर इलाके में जो खोज का काम पहले शुरू किया था वह जारी रहेगा और उसमे जमीन का भूगर्भीय सर्वेक्षण, भूभौतिकी पडतालें और अन्वेषक भू-छेदन कार्य के साथ ही वातचुम्बकीय सर्वेक्षण भी शामिल होगा। इसके अलावा एकत्र किए गए प्रारम्भिक आकड़ों के आधार पर ज्वालामुखी और कैम्बे में तेल मिलने की सम्भावनाए है। इसलिए कैम्बे मे उल्लेख्य भू-छेदन और ज्वालामुखी में परीक्षार्थ भू-छेदन का काम किया जाएगा। जैसलमेर के वातचुम्बकीय सर्वेक्षण के लिए इस काम के अति विशिष्ट होने तथा देश में सुविधाएं न होने के कारण, कोलम्बो योजना के अन्तर्गत कैनेडा से सहायता ली गई थी। सर्वेक्षण का काम पूरा हो चुका है और वातचुम्बकीय आंकड़ों के आधार पर जमीन की पड़ताल और अच्छी तरह की जाएगी। कैनेडा और अधिक क्षेत्रों के वातचुम्बकीय सर्वेक्षण के लिए सहायता देने को तैयार हो गया है और इस सहायता का उपयोग पजाब, उत्तर प्रदेश और बिहार के कुछ हिस्सों के सर्वेक्षण में किया जाएगा।

२५. दूसरी योजना में तेल की खोज के बढे हुए कार्यक्रम को देखकर पैट्रोलियम की खोज के सम्बन्ध में कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए भी उपाय किए गए है। योजना के अनुसार तेल की खोज के लिए अपेक्षित भिन्न-भिन्न श्रेणियों के कर्मचारियों को विदेशों में तथा देश में बाहर से बुलाए गए टेकनीकल परामर्शदाताओं और विशेषज्ञों की सहायता

से प्रशिक्षण देने का कार्यक्रम भी है। खान और व्यावहारिक भूगर्भशास्त्र विद्यालय भारत में तेल टेकनोलौजी और भू-छेदन का विशेष पाठ्यक्रम चालू करने के बारे में अभी विचार किया जा रहा है।

२६. फिलहाल तेल की खोज के लिए ११·५ करोड़ रुपया रखा गया है जो जैसलमेर मे अब तक आयोजित कार्यचालन, कैम्बे और ज्वालामुखी में भू-छेदन कार्य तथा टेकनीकल प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए है। तेल की खोज के लिए और भी प्रस्ताव तैयार किए जा रहे हैं और समय-समय पर कार्यक्रमों के अनुमोदन के साथ ही अतिरिक्त धन भी दिया जाएगा।

सरकार खुद तो तेल की खोज करेगी ही, साथ ही वह स्टैण्डर्ड वैक्यूम आयल कम्पनी के साथ पश्चिम बंगाल के मैदान मे भी तेल खोजने का कार्य करेगी। इसके अलावा इस प्रस्ताव पर भी विचार हो रहा है कि असम आयल कम्पनी के साझे में असम क्षेत्र में मिलकर तेल खोजने का काम किया जाए। कम्पनी इस बात पर राजी हो गई है कि वह सरकार के साथ काम करेगी और इस सिलसिले में नाहरकटिया के आसपास, जहां १९५३ में तेल निकाला गया था, कुछ इलाकों के लिए खोज लाइसेन्स कम्पनी को दे दिए गए हैं। निजी फर्मों के साथ मिलकर काम करने में सरकार की लागत क्या होगी, यह अभी निश्चित नही किया जा सका है। उचित मौके पर इसके लिए धन की व्यवस्था की जाएगी।

भारतीय सर्वेक्षण विभाग

२७. यद्यपि भारतीय सर्वेक्षण विभाग का काम अनेक क्षेत्रो मे फला हुआ है, तथापि खनिज सम्पत्ति के विकास में भी उसका बहुत महत्व है। खनिजो, खनिज तेलों और इंजीनियरी के तलजल तथा भूगर्भ पक्षों आदि सब की भूगर्भीय और भूभौतिकी पड़त ल करने के लिए नक्शे जरूरी होते है। उनकी जरूरत वन सम्पत्ति, रेलों और सड़कों, सिचाई, बिजली के योजना कार्यों के विकास जैसे कामो के लिए भी पड़ती है। भारतीय सर्वेक्षण विभाग भारत सरकार का बहुत पुराना विभाग है, पर पिछले महायुद्ध के समय मे उसका कार्य बहुत अस्त-व्यस्त हो गया था। इसी के फलस्वरूप तमाम काम बाकी पड़ा हुआ है। युद्धोत्तर वर्षों में इसी संगठन पर कई अतिरिक्त कामों का बोझ पड़ा। इस स्थिति मे उसके विस्तार और मशीनी-करण के एक कार्यक्रम को १९५३ मे स्वीकार किया गया। मशीनीकरण का कार्यक्रम तो पूरा होने वाला है। दूसरी योजना काल में आने वाले काम के भार को ध्यान मे रखते हुए १ करोड़ ४० लाख लागत की विस्तार और मशीनीकरण की एक योजना अनुमोदित की गई। भारतीय सर्वेक्षण विभाग की ज्यामिति तथा अन्वेषण शाखा के पुनर्गठन की भी व्यवस्था है। यह शाखा समतलन और त्रिकोण मापन कार्य और चुम्बकीय सूचना संग्रह कार्य करती है और वेलीय (टाइडल) तथा भूम्याकर्षण (ग्रेविटी) सर्वेक्षण भी करती रहती है।

अध्याय १६

औद्योगिक विकास का कार्यक्रम

प्रथम योजना में प्रगति

अगर औद्योगिक उत्पादन के देशनांकों को ही देखा जाए तो प्रथम योजना के दौरान में उद्योग की जो उन्नति हुई है वह सन्तोषप्रद प्रतीत होती है, लेकिन प्रथम योजना बनाते समय रखे गए विभिन्न उद्योगों के ध्येयों, प्राथमिकताओं और क्षमता व उत्पादन के स्तरों की पृष्ठ-भूमि में वह उन्नति समान रूप से सन्तोषप्रद नहीं मालूम होगी। १९५५-५६ के अन्त में हमारे सामने आने वाले रूप का विवरण नीचे दिया जा रहा है।

सार्वजनिक क्षेत्र में प्रगति

२. सिन्दरी खाद कारखाना, चित्तरंजन इंजन कारखाना, भारतीय टेलीफोन उद्योग, इंटीगरल कोच फैक्टरी, केबल फैक्टरी और पेनीसिलीन फैक्टरी के उत्पादन और उनकी क्षमता वृद्धि के बारे में कहा जा सकता है कि प्रगति सन्तोषप्रद है। इसके अलावा कुछ केन्द्रीय और राज्यीय योजनाओं की प्रगति कुछ पिछड़ गई है। उनके पूरे होने में और उत्पादन शुरू करने में भी अनुमानित समय से ज्यादा समय लगा है। यह बात मशीनी औजार कारखाना, उ० प्र० सीमेन्ट कारखाना, नेपा कारखाना और बिहार सुपरफास्फेट कारखाने के बारे में लागू होती है। लोहे और इस्पात के लिए एक नया संयंत्र केन्द्रीय सरकार द्वारा लगाया जाना था जिसके द्वारा १९५५-५६ तक ३,५०,००० टन कच्चा लोहा मिलने की आशा थी। इसके अतिरिक्त लोहा और इस्पात कारखाने का विस्तार करके ६०,००० टन और अधिक तैयार इस्पात पाने की उम्मीद थी। प्रथम योजना के अन्त तक इन लक्ष्यों की पूर्ति नहीं हो सकी। परन्तु प्रथम योजना की अवधि में ही १० लाख टन इन्गाट तैयार करने वाले तीन इस्पात कारखानों के प्रारम्भिक काम पूरे हो चुके है और अगले वर्षों में होने वाली लोहा और इस्पात उद्योग की उन्नति की नींव डाली जा चुकी है। योजना के अन्तिम वर्षों में एक भारी विद्युत्संयंत्र स्थापित करने के सुझाव को कार्यान्वित करने का भी प्रयत्न किया गया और अधिकांश समय उसकी जरूरतों का अनुमान लगाने तथा सरकारी और निजी क्षेत्रों के लिए उत्पादन के क्षेत्र निर्धारित करने में ही लग गया, इसलिए योजना काल में इस योजना कार्य पर कोई उल्लेख-नीय खर्च नही किया गया। फिर भी बहुत-सा प्रारम्भिक काम हो चुका है और इस योजना कार्य के कार्यान्वित होने के लिए एसोशियेटेड एलेक्ट्रिकल इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड से करार भी किया जा चुका है।

३. सार्वजनिक क्षेत्र में औद्योगिक योजना कार्यों पर ९४ करोड़ रुपया खर्च करने का विचार था परन्तु लगता ह कि अब इस क्षेत्र म ५७ करोड़ रु० व्यय होगा। शुरू-शुरू में रखे गए उत्पादन के लक्ष्यों और १९५५-५६ के लिए अनुमानित उत्पादन के आंकड़े नीचे दिए जा रहे हैं :–

		१९५५-५६	
		प्रथम योजना के अन्तर्गत लक्ष्य	वर्तमान अनुमान के अनुसार सम्भावित उत्पादन
(क) कच्चा लोहा (क्षमता)	टन	३,५०,०००	कुछ नही
(ख) तैयार इस्पात (क्षमता)	टन	१,००,०००	३५,०००
(ग) इंजन	संख्या	९२	१२५
(घ) रेलगाड़ी के जोड़हीन डिब्बे	संख्या	५०	२०
(च) समुद्री जहाज	जी० आर० टी०	२०,०००	१३,०००
(छ) डी० डी० टी०	टन	७००	२८४
(ज) पेनीसिलीन	लाख मेगा यूनिट	४८	६६
(झ) रासायनिक खाद			
(१) अमोनियम सल्फेट	टन	३,१५,०००	३,२६,०००*
(२) सुपरफास्फेट (बिहार सरकार का कारखाना)	टन	१६,५००	कुछ नही
(ट) अखबारी कागज	टन	३०,०००	४,२००
(ठ) केबल	मील	४७०	५२५
(ड) टेलीफोन	संख्या	२५,००० (५०,०००)†	५०,०००
(ढ) एक्सचेंज लाइने	संख्या	२०,००० (३५,०००)†	३५,०००
(त) सीमेट (उत्तर प्रदेश सरकार का सीमेंट कारखाना)	टन	२,००,०००	१,८०,०००
(थ) मशीनी औजार	खरादें	१,६०० (२००)†	१२

लोहे और इस्पात के योजना कार्यों पर अमल किए जाने में जो देरी हुई उससे बचना मुश्किल ही था, क्योंकि एक तो वे जटिल थे, दूसरे उनके लिए बहुत अधिक धन की जरूरत थी और टेकनीकल तथा वित्तीय सहायता के लिए विदेशों से बातचीत की जा रही थी।

निजी क्षेत्र में विनियोग

४. यह समझा गया था कि पहली योजना के दौरान में निजी क्षेत्र के विस्तार सम्बन्धी कार्यक्रमों के लिए २३३ करोड़ रुपए लगाने पड़ेंगे। बहुत-से ऐसे उद्योग जिनका पिछला ह्रास

*सिन्दरी में हाल ही में खोला गया कोक भट्ठी कारखाना, जो खाद कारखाने का एक अभिन्न भाग है। इसमे २,००,००० टन कोक अमानिया सिंथेसिस और कायला कार्बनीकरण के उप-उत्पादों का उत्पादन किया जाएगा।

†संशोधित अनुमान।

बहुत बड़ी मात्रा मे पूरा किया जाना था, उनके संयंत्रों और मशीनों को बदलने और आधुनिक बनाने मे अनुमान किया गया था कि २३० करोड़ रुपए का खर्च आएगा, जिसमें से लगभग ८० करोड़ रुपया इस बात के लिए था कि वह आरम्भिक वर्षो की अपेक्षा योजना की अवधि में संयंत्रों और मशीनों आदि की बढ़ी हुई कीमत के कारण खर्च होगा। इस प्रकार इस योजना मे नए योजना कार्यो, मशीनो की अदला-बदली और उनको आधुनिक बनाने मे कुल खर्च ४६३ करोड़ रखा गया था। इसके विपरीत, अब अनुमान किया जाता है कि योजना की अवधि में निजी क्षेत्र की नियत पूजी मे कुल ३४० करोड़ रुपया लगा हुआ था। सबसे अधिक धन इनमे लगा रहा . सूती वस्त्र (८० करोड़ रु०), पैट्रोलियम सफाई (४५ करोड़ रु०), लोहा और इस्पात (४६ करोड़ रु०), भारी और हलके इंजीनियरी उद्योग (२५ करोड़ रु०), रसायन, खादे, औषधिया, रगाई सामान और प्लास्टिक (१५ करोड रु०), सीमेट और ऊष्मसह ईंटें (१८ करोड़ रु०), कागज और गत्ता (११ करोड़ रु०), चीनी (१५ करोड़ रु०), विद्युत शक्ति जनन (३२ करोड़ रु०), जूट के वस्त्र (१५ करोड़ रु०), रेयन और स्टैपल तन्तु (८ करोड़ रु०) और अन्य (२७ करोड़ रु०)। अब तक प्राप्त सामग्री के अनुसार नए यूनिटों और विस्तार पर १९५१–५३ मे ५३ करोड़ रु०, १९५३-५४ मे ४४ करोड़ रु०, १९५४-५५ मे ५० करोड रु० और १९५५-५६ मे ८५ करोड रु० लगाया गया था। १९५५-५६ के विनि-योग अनुमानों मे इस्पात कार्यक्रमों के लिए २२ करोड़, ट्राम्बे और बिजली की अन्य योजनाओं के लिए ११ करोड, सूती वस्त्र उद्योग के लिए ७ करोड़, सीमेट और ऊष्मसह ईंटों के लिए ५ ५ करोड़ तथा चीनी योजना कार्यो के लिए ५ करोड प्रत्याशित खर्च भी शामिल है।

५. कुछ उद्योगों में विनियोग की कमी पड़ जाने के मुख्य कारण ये थे : (क) योजना के पहले दो वर्षो मे कुछ अनुपयुक्त परिस्थितियो का पैदा हो जाना; (ख) विशाखापत्तनम के काल्टेक्स तेल-शोधन कारखाने के संयंत्र के आकार और निर्माण तिथि मे परिवर्तन होना; (ग) योजना मे निर्धारित एफ० ए० सी० टी०, एल्यूमीनियम, जिप्सम-सल्फर और रासायनिक गूदे सम्बन्धी योजनाओं के सम्बन्ध मे देरी होना। मोटे तौर पर निजी क्षेत्र मे रुपया लगाने में यह देरी उन्ही उद्योगो मे हुई है जिनके लिए अधिक पूजी की जरूरत थी और लाभ अपेक्षाकृत कम था। राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम की स्थापना अभी १९५४-५५ मे हीं हुई। १९५४ मे तत्सम्बन्धी विधान के दुहराए जाने के पहले तक, भारत का औद्योगिक वित्त निगम ५० लाख रु० से अधिक कर्ज उद्योगों को नही दे सकता था। फिर भी नई यूनिटों में और विस्तार मे लगी हुई पूजी २३३ करोड़ रु० के करीब है और सूती वस्त्र और बिजली उत्पादन जैसे क्षेत्र में अनुमान से भी अधिक रुपया लगाया जा चुका है।

६. मशीनों को बदलने और उनको आधुनिक बनाने के कार्यक्रमों में चीनी उद्योग को छोड़कर प्रगति सन्तोषप्रद रही है, लेकिन उसे आवश्यकताओं के अनुरूप किसी भी तरह नहीं कहा जा सकता। पुराने उद्योगो के लिए भी अगर वे चाहे कि अगले कुछ सालों मे प्रतियोगिता में ठहर जाएं तो तमाम मशीनें बदलनी पड़ेंगी। वाणिज्य और उद्योग मन्त्रालय ने हाल ही में जो पड़ताल की उसके अनुसार यह पता चला है कि इंजीनियरी प्रतिष्ठानों में मशीनी औजारों की बदली कितनी मात्रा में होना बाकी है। चीनी, सूती वस्त्र और जूट उद्योगों के टेकनीकल साज-सामान की भी हाल में की गई पडताल से मालूम हुआ है कि इनमें भी यह बदली बहुत अधिक मात्रा में होनी चाहिए।

विभिन्न उद्योगों में उत्पादन का स्तर

७. योजना मे इस बात पर बल दिया गया था कि मौजूदा सामर्थ्य का परिश्रम के साथ उपयोग करके उत्पादन के स्तर को बढाया जाए। यह लक्ष्य मोटे तौर पर पूरा हो चुका है और सूती वस्त्र (मिल क्षेत्र), चीनी और वनस्पति तेलों के उत्पादन लक्ष्यों तक पहुंच चुके है। सीमेंट, कागज, सोडा ऐश, कास्टिक सोडा और अन्य रसायन, रेयन, साइकिल और कुछ अन्य उद्योगों मे अप्रयुक्त सामर्थ्य तथा उत्पादन बढाने के लिए जो विस्तार किया गया था, उसकी सहायता से उत्पादन लगभग निर्धारित लक्ष्यो तक बढ गया है। इसके विपरीत निजी क्षेत्र मे विनियोग कार्यक्रम पूरा न हो पाने के कारण अल्यूमीनियम और नाइट्रोजनीय खादों के उत्पादन लक्ष्यों से पीछे रह गए है। उद्योगों का एक समूह तो ऐसा था जिनका उत्पादन घरेलू कामों में काफी मांग न होने के कारण कम हो गया। उन्ही के अन्तर्गत कुछ हलके इजीनियरी उद्योग, जैसे डीज़ल इंजन और पम्प, रेडियो, बैटरियां, बिजली के लैम्प और लालटेनें आती है। कुछ उद्योगो का उत्पादन इसलिए कम रहा कि उनकी (जूट की वस्तुएं) निर्यात मांग घट गई या देशीय उद्योग जो निर्यात सम्बन्धी चीजें (चाय बक्सो की प्लाईवुड) देते हैं उनकी माग कम रही। सुपर-फास्फेट का उत्पादन आयोजित स्तर से लगभग ५० प्रतिशत बढ गया। व्यापक रूप से कहा जा सकता है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना के परिणाम सन्तोषप्रद रहे हैं। इस सफलता के मुख्य कारण हैं, कृषि कार्यक्रमों का सफल होना, कच्चा माल पाने में सुधार, और समय-समय पर नवजात उद्योगों का सरक्षण, आयात और निर्यात शुल्क में संशोधन इत्यादि के अवसर पर आवश्यकतानुसार राज्य द्वारा की गई उचित वित्तीय और अन्य बातो की सहायता।

८. भिन्न-भिन्न खनिजों और कृषि के कच्चे माल के उपयोग सम्बन्धी पहले रखे गए अनुमान की तुलना से यह आशा है कि योजना के आखिरी साल में प्रकृत (क्रूड) पेट्रोलियम की असल जरूरत काफी ज्यादा हो जाएगी क्योकि पेट्रोलियम साफ करने के कारखानो ने अपने काम अनुमानित समय से पहले प्रारम्भ कर दिए थे। जहां तक संघात (राक) फास्फेट, जूट, खनिज लोहा, और कांच रेत (ग्लास सैंड) का सम्बन्ध है, चूकि उपभोक्ता उद्योगों मे इनका उत्पादन कम रहा है इसलिए इनकी खपत भी जितना अनुमान किया गया था उससे कम ही रहेगी।

औद्योगिक संयंत्र, मशीनें और पूंजीगत सामान

९. प्रथम योजना के दौरान में औद्योगिक सयंत्र और मशीनों के निर्माण तथा पूंजी माल के उत्पादन की दिशा में जो अनुभव और जानकारी प्राप्त हुई है वह बहुमूल्य है। भारतीय उद्योग ने एक नई फुकवा भट्ठी और एक सम्पर्क सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्र का पूरा-पूरा डिजाइन तैयार करके उसका निर्माण किया है। औद्योगिक मशीनों के निर्माण मे प्रगति के विषय में अनुमान किया गया है कि भारत मे वस्त्र उद्योग की मशीनो की भिन्न-भिन्न वस्तुओं के उत्पादन की कीमत १९४९-५० के ४ करोड़ रुपये से बढ़कर १९५१-५६ मे लगभग ११ करोड रुपये हो गई है। सीमेंट सम्बन्धी मशीनो आदि के निर्माण की दिशा में उद्योग के लिए आवश्यक कुछ चीजो के उत्पादन की शुरुआत हो गई है। जूट मिल की मशीनों के लिए एक इजीनियरी कारखाने ने हाल ही में कातने की मशीन का विकास किया है। बिजली के सामान में दो जरूरी मदों, जैसे बिजली की मोटरो और ट्रान्सफार्मरों के उत्पादन का मूल्य १९५०-५१ के १ करोड़ ५० लाख

रुपए से बढकर १९५५-५६ में ४ करोड़ ५० लाख रुपए हो गया है। पहली योजना के शुरू मे प्राय: नगण्य संख्या से बढ़कर निजी क्षेत्र में इजनों का उत्पादन १९५५-५६ मे ५० तक हो जाएगा, जिसका मूल्य लगभग ३ करोड़ रुपए होगा। देशी मशीनी औजार उद्योगों का उत्पादन १९५०-५१ के ४० लाख के मूल्य से बढ़कर लगभग १ करोड़ का हो जाएगा। नए प्रकार के मशीनी औजार भी निकाले गए है। पूजीगत सामान क्षेत्र के लिए कह सकते है कि वह अपने विकास की आरम्भिक अवस्था से गुजर चुका है और उसे इतना अनुभव हो चुका है कि दूसरी योजना मे काफी काम करे। इस उद्देश्य से कुछ फर्मो ने योजनाएं बनाई है जिससे वे संयंत्र और मशीनो आदि जैसी अपेक्षाकृत अधिक जटिल चीजों का विकास विदेशी फर्मो के टेकनीकल सहयोग से कर सके।

उद्योगों का नियमन

१०. योजना मे जो लक्ष्य रखे गए थे उनके अनुरूप उद्योगों का विकास करने के लिए उद्योग (विकास और नियमन) अधिनियम, १९५१ ने दो प्रमुख अधिकार दिए हैं; एक है अलग-अलग उद्योगो को लाइसेस देने का और दूसरा है उनके लिए विकास परिषदों का संगठन करने का। १९५३ में इसकी अनुसूची मे अधिक उद्योगों को शामिल करने की दृष्टि से इस अधिनियम का संशोधन भी किया गया था। इस अधिनियम के उपबन्धो के अनुसार जो लाइसेस देने वाली समिति बनाई जाती है वह अनुसूचित उद्योगों की नई यूनिटों और विस्तार सम्बन्धी आवेदनपत्रों की जाच करने के काम मे वाणिज्य और उद्योग मन्त्रालय के सलाहकारी निकाय के रूप में काम करती है। अनुमोदित योजना कार्यों पर जो काम किया गया है, उसकी समीक्षा से यह निष्कर्ष निकला है कि 'प्रभावकारी उपायो' की—जो कि लाइसेंसग्राही को पेशगी बताए समय के भीतर करने चाहिए—कोई अच्छी परिभाषा की जानी चाहिए।

११. १९५२ से अब तक इन १० उद्योगों के लिए विकास परिषदे स्थापित हुई है : भारी रसायन (अम्ल और खादे), भारी रसायन (क्षार), अन्तर्दाही इजन और पम्प, साइकिल, चीनी, भारी विद्युत उद्योग, हलके विद्युत उद्योग, औषध द्रव्य और औषधियां, कृत्रिम रेशम और ऊनी सामान। इन परिषदो को दूसरी पंचवर्षीय योजना के विकास कार्यक्रम की तैयारी मे भी लगाया गया है।

दूसरी योजना के कार्यक्रम

१२. प्रथम योजना को निश्चित रूप से देश में बड़े पैमाने पर औद्योगिक विकास की तैयारी का समय समझा गया था। भारी उद्योगों की स्थापना के लिए तमाम प्रारम्भिक काम की, तथा बाजारों, कच्चे सामान और ईंधन की प्राप्ति, तरीकों का चुनाव, उत्पादन की लागत तथा भिन्न-भिन्न अवस्थाओं पर उद्योगों को चलाने के लिए आवश्यक टेकनीकल और प्रबन्ध सम्बन्धी अनुभव जुटाना इत्यादि बातों से सम्बन्धित सवालो के विस्तारपूर्वक अध्ययन की आवश्यकता होती है। बहुत-से औद्योगिक योजना कार्यो के विकास के लिए विदेशी टेकनीकल सहायता की जरूरत पड़ती है। अन्त में इन सभी आरम्भिक सवालों पर विचार करते समय इस बात का निश्चय करना जरूरी होता है कि इन योजना कार्यों के लिए इतने अधिक धन का प्रबन्ध कैसे होगा। जहां तक दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बड़े-बड़े योजना कार्यों का सवाल है, उनके बारे में जितने भी आरम्भिक काम सार्वजनिक और निजी क्षेत्र में समझे जा सकते थे पूरे किए जा चुके हैं। इस प्रकार अब आशा है कि अगले पांच वर्षों में औद्योगिक क्षेत्र में काफी प्रगति होगी।

औद्योगीकरण के प्रसग में विचारार्थ महत्वपूर्ण प्रश्न ये है : (१) सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों के लिए नियमों का विशेष रूप से उल्लेख करते हुए औद्योगिक नीति, और (२) औद्योगिक प्राथमिकताएं ।

औद्योगिक नीति

१३. आठ साल पहले ६ अप्रैल, १६४८ के प्रस्ताव में भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति घोषित की थी। उसके पश्चात कुछ आधारभूत अधिकारों की गारटी देते हुए तथा राज्य नीति के निदेशात्मक सिद्धान्त निर्धारित करते हुए भारत का संविधान लागू हुआ और संसद ने लक्ष्य के रूप मे समाज के समाजवादी रूप को स्वीकार किया है। इन बातों के घटित हो जाने से आवश्यकता इस बात की उठी है कि संविधान में निहित सिद्धान्तों तथा समाजवाद के लक्ष्यों के अनुरूप नई औद्योगिक नीति की घोषणा की जाए। इसका अर्थ यह होता है कि अब राज्य को देश के भावी औद्योगिक विकास के लिए पहले से अधिक क्षेत्र पर अपनी सीधी जिम्मेदारी माननी चाहिए। लेकिन कुछ ऐसे सीमित करने वाले तत्व भी हैं जिनकी वजह से जिन क्षेत्रों में राज्य की पूरी जिम्मेदारी होगी अथवा उसका प्रमुख योग होगा, उसका स्पष्ट कर देना इस अवस्था में जरूरी हो गया है। इस प्रकार सभी संगत बातों पर विचार करके भारत सरकार ने ३० अप्रैल, १६५६ को नई नीति की घोषणा की है। यह नीति औद्योगीकरण और विशेषकर भारी उद्योगों और मशीन निर्माण उद्योगों को गति देने, सरकारी क्षेत्र को बढ़ाने और एक बड़ा सहकारी क्षेत्र तैयार करने के काम में सहायक होगी। इस संशोधित नीति के अनुसार अनुसूची 'क' में दिए हुए उद्योगों के लिए राज्य पूरी तरह जिम्मेदार होंगे और अनुसूची 'ख' में वे उद्योग है जो क्रमिक रूप से राज्याधीन होंगे, लेकिन इनमे निजी उद्योग से भी आशा की जाएगी कि वह राज्य के प्रयत्नो से सहयोग करे। लेकिन जो उद्योग इन अनुसूचियों से बाहर है उनका भविष्य आम तौर पर निजी क्षेत्र के प्रयत्नों और उद्यम पर ही निर्भर करेगा। हालांकि ये विभाजन रेखाएं खीच दी गई हैं, लेकिन अगर राज्य चाहे तो किसी भी प्रकार के उद्योग का उत्पादन कार्य स्वयं कर सकता है। संशोधित नीति के अन्तर्गत इन सभी तथा अन्य और पहलुओं पर अध्याय २ में काफी विस्तार से चर्चा की गई है। अन्य अनुसूचियो के साथ नीति का विवरण भी अध्याय २ के परिशिष्ट मे दिया हुआ है।

औद्योगिक प्राथमिकताएं

१४. नीति सम्बन्धी जो ढांचा ऊपर दिया गया है, उसके अनुसार औद्योगिक सामर्थ्य के विस्तार का अगला कदम इन प्राथमिकताओ को रखते हुए उठाना होगा :

(१) लोहा, इस्पात और नाइट्रोजनीय खादों के साथ भारी रसायनों के उत्पादन में वृद्धि, भारी इंजीनियरी तथा मशीन निर्माण उद्योगों का विकास;

(२) विकास सम्बन्धी अन्य वस्तुओं तथा उत्पादन माल जैसे अल्यूमिनियम, सीमेंट रासायनिक गूदा, रंगाई सामान और फास्फेटी खादें तथा आवश्यक औषध द्रव्यों की सामर्थ्य का विस्तार;

(३) उन महत्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्योगो का आधुनिकीकरण और उनको उन साज-सामान से युक्त करना जो पहले से स्थापित हैं, जैसे जूट, सूती वस्त्र और चीनी;

(४) उद्योगों में वर्तमान स्थापित सामर्थ्य का और अधिक उपयोग जहां उनकी सामर्थ्य और उनके उत्पादन में अधिक अन्तर हो; और

(५) उत्पादन के सामान्य कार्यक्रमों की जरूरतों और उद्योग के विकेन्द्रीकृत क्षेत्र के उत्पादन लक्ष्यों का ध्यान रखते हुए उपभोग वस्तुओ की सामर्थ्य का विस्तार।

इन प्राथमिकताओं के निर्धारण में जो बाते है वे और विस्तार से नीचे दी जा रही है।

१५. लोहा और इस्पात उद्योग को प्रत्यक्ष ही सबसे अधिक प्राथमिकता दी गई है क्योंकि दूसरे औद्योगिक उत्पादनो की अपेक्षा इनके उत्पादन के स्तर से ही देश की आर्थिक प्रगति का रूप निश्चित होता है। भारत में ऐसी परिस्थितिया है कि अधिकाश दूसरे देशों की तुलना मे यहा कम लागत पर ही लोहे और इस्पात का उत्पादन उन्ही स्तरों तक हो सकता है।

१६. भारी इजीनियरी उद्योग लोहे और इस्पात कारखानों पर स्वाभाविक रूप से आश्रित होते है। इन चीजो को जो उच्च प्राथमिकता दी गई है वह इसलिए कि वे देश के भीतर ही अनेक प्रकार की औद्योगिक मशीनें आदि और पूजीगत सामान, जैसे रेल के इंजन तथा विद्युत जनन के लिए विद्युत संयंत्र जुटा सकेंगे। अगर उनका निर्माण यहा न हो तो देश की विकासशील अर्थ-व्यवस्था के लिए उनको विदेशों से मंगाना ही पड़ेगा जिसमें कठिनाइयां तो है ही, साथ ही कोई बात निश्चित भी नही रहती। इस्पात तैयार करने के लिए संयंत्र के तमाम पुर्जो और अन्य मदो के उत्पादन के लिए सुविधाएं देने के लिए अनेक सस्थानों में निर्माण के तमाम तरह के सुभीते जुटाने ही पड़ेगे। दूसरे शब्दो में, इस्पात, संयंत्र, खाद फैक्टरिया इत्यादि बनाने जैसे काम उठाने के लिए देश के भारी इंजीनियरी उद्योगों और कारखानों को सामान्य रूप से सुदृढ़ बनाना पड़ेगा। इसी प्रसंग में कुछ बुनियादी सहूलियतो, जैसे भारी फाउन्ड्रियों, भट्ठियो और संरचना कारखानो की स्थापना भी अत्यन्त आवश्यक है। इसीलिए ऐसा प्रस्ताव है कि इन सुभीतो के जुटाने का काम, जो कि देश मे भारी औद्योगिक मशीनो के निर्माण कार्यो के लिए आवश्यक है, जल्दी से जल्दी किया जाए। इसको इस्पात उद्योग के विस्तार के बाद ही स्थान दिया गया है।

भारी औद्योगिक मशीनों के उत्पादन के लिए आवश्यक एक महत्वपूर्ण बात यह है कि भारी उद्योगो के लिए आवश्यक साजसामान और संयंत्रो के डिजाइन बनाने के लिए संगठनों की स्थापना की जाए। खाद उद्योग के लिए संगठन की स्थापना के लिए शुरुआत कर दी गई है। इन सुभीतों को आम तौर पर जुटाने के लिए जो भी दूसरी कार्रवाइयां की जाएं, उनके अलावा यह जरूरी है कि भारतीय कर्मचारियों को सरकारी क्षेत्र के योजना कार्यो से सम्बन्धित विकास कार्य के सभी पहलुओ से अवगत होना चाहिए, ताकि जितनी भी जल्दी हो सके देश में डिजाइन बनाने और निर्माण का काम शुरू किया जा सके।

१७. नाइट्रोजनीय खादोंके उत्पादन की सामर्थ्य की विस्तार को प्राथमिकता इसलिए दी गई है कि कृषि के कार्यक्रमों के लिए खाद की मांग बढ़ती ही जा रही है और ये कृषि कार्यक्रम देश के आर्थिक विकास के लिए बुनियादी महत्व रखते है।

१८. विकास सम्बन्धी वस्तुओ मे लोहे और इस्पात के बाद सीमेंट का नम्बर आता है, इसलिये इसको भी प्राथमिकता दी गई है।

१९. जट और सूती वस्त्र मिलों को आधुनिक बनाने तथा उन्हें और भी साजसमान से युक्त करने के काम में कुछ प्रगति प्रथम योजना में हो चकी है। लेकिन इनमें मशीनों आदि की

वस्तुएं मिल सकेंगी, जिनमें अनुवेल्लन (रि-रोलिंग) उद्योग के लिए १,४०,००० टन गढे पिंडक (बिलेट) भी शामिल है ।

तीसरा संयंत्र दुर्गापुर (पश्चिम बंगाल) में स्थापित होगा । आशा है उस पर ११५ करोड़ रुपए* लागत आएगी । इसमें इतने सामान का प्रबन्ध होगा कि साल में ७,६०,००० टन हलके और मध्यम इस्पात के अनुखण्ड और गढे पिण्डक (बिलेट) तैयार हो सकेंगे ।

२३. इस्पात संयंत्रों के भिन्न-भिन्न अनुभागों की सामर्थ्य इस प्रकार है :—

इस्पात कारखाने	कोयला कार्बनीकरण		कच्चा लोहा	इस्पात इन्गाट	तैयार इस्पात	बिक्री के लिए अतिरिक्त कच्चा लोहा	विद्युत कारखाने (किलोवाट में)
	कार्बनी-कृत कोयला	उत्पादित कोक					
१	२	३	४	५	६	७	८
			लाख टनों में				
राउरकेला	१६·००	१०·४५	६·४५	१०	७·२०	०·३०	७५,०००
भिलाई	१६·५०	११·४५	११·१०	१०	७·७०	३·००	२४,०००
दुर्गापुर	१८·२५	१३·१४	१२·७५	१०	७·६०	३·५०	१५,०००

२४. तलडीह और धल्ली राझर के खनिज लोहे का विकास राउरकेला और भिलाई योजना कार्यों का ही एक निजी अंग समझा जाता है । दुर्गापुर इस्पात संयंत्र के लिए खनिज लोहा पाने के बारे में सुझाव है कि निजी उद्यम की साझीदारी में गुआ के निक्षेप की खुदाई कराई जाए । मैसूर के लोहा और इस्पात कारखाने की ही तरह भिलाई इस्पात सयंत्र मे भी एक ऐसे सामूहिक संयंत्र की स्थापना की व्यवस्था है जो महीन खनिज लोहे का उपयोग कच्चे लोहे के उत्पादन में कर लेगा । इसी तरह का दूसरा संयंत्र राउरकेला में भी खोले जाने की सम्भावना है, पर यह बात तलडीह के खनिज लोहे पर निर्भर करती है ।

२५. इन इस्पात सयंत्रों को कोयला पहुंचाने के लिए प्रस्ताव यह है कि दुर्गापुर मे कोयले का एक धुलाई कारखाना स्थापित किया जाए जिसकी प्रति घण्टा सामर्थ्य ३६० टन हो । इससे कोयले का राख वाला हिस्सा घटकर १५ प्रतिशत रह जाएगा । राउरकेला और भिलाई म उपयोग म आने वाले कोयले की धुलाई के लिए दूसरा धुलाई कारखाना बोकारो मे स्थापित किया जाएगा । इस्पात संयंत्र के लिए आवश्यक राख वाले धातुकर्मक कोयले की जरूरतों को पूरा करने के लिए इसी प्रकार के अन्य धुलाई कारखाने निजी क्षेत्र म खोलने के लिए विचार किया जा रहा है ।

२६. हर इस्पात संयंत्र की फुकवां भट्ठी की दैनिक क्षमता १,००० टन कच्चा लोहा होगी । प्रस्ताव है कि इनमें से कुछ में उत्पादन बढ़ाने के लिए ऊपरी दबाव तथा संयंत्र के डिजाइन म अन्य नई विशेषताओं का उपयोग किया जाए । इस्पात के उत्पादन की योजना कुछ ऐसी है कि कच्चे लोहे के साथ संयंत्र मे जो खुरचन निकले उसका भी उपयोग हो जाए ।

*संयंत्र की अनुमानित लागत मात्र ।

राउरकेला के इस्पात कारखाने के परिवर्तकों मे आक्सीजन फुकाई पद्धति का प्रयोग किया जाएगा जिससे उनकी वार्षिक क्षमता ७,५०,००० टन होगी।

राउरकेला मे एल० डी० पद्धति भी अपनाने का निर्णय किया गया है, पर इसके पहले इन दिनों जर्मनी, कैनेडा, और अमेरिका मे जो सयत्र इस पद्धति से काम कर रहे है, उनका अच्छी प्रकार अध्ययन कर लिया गया है।

२७. सरकारी क्षेत्र में इन तीनों संयंत्रो की बनावट आदि की योजनाओं में उनके आगामी विकास की सम्भावना को भी ध्यान मे रखा गया है। इस प्रकार, भिलाई संयत्र मे २५ लाख टन इन्गाट प्रति वर्ष तक के विस्तार की ओर राउरकेला और दुर्गापुर संयत्रों में से हर एक में लगभग १२·५ लाख टन के विस्तार की व्यवस्था है। इस्पात उत्पादन के कार्यक्रम में भिलाई और दुर्गापुर के इस्पात सयत्रों के लिए लगभग १,४०,००० टन गढ़े पिंडको और इस्पात अर्द्धक रखे गए हैं। इससे अनु-उत्पादकों और अनुवेल्लको के लिए आवश्यक कच्चे माल की भी व्यवस्था कर दी गई है।

२८. सामर्थ्य के अनुसार अधिकतम उत्पादन के लिए जितना खनिज सम्बन्धी कच्चा माल लगेगा, उसका अनुमान नीचे दिया जा रहा है :—

(लाख टन)

	राउरकेला	भिलाई	दुर्गापुर
कोयला	१६·००	१७·९०	१८·३०
खनिज लोहा	१७·००	१९·४०	१९·४०
खनिज मैंगनीज	१·१२	०·३३	०·६४
चूना पत्थर	५·२३	५·५१	६·१७
डौलोमाइट	०·२८	३·०९	०·४२

२९. इसकी भी व्यवस्था कर दी गई है कि मैसूर लोहा और इस्पात कारखाने का इस्पात उत्पादन १९६०-६१ तक बढ़कर १ लाख टन हो जाए। अनुमान है कि जब ये योजना कार्य पूरे हो जाएंगे तो सरकारी क्षेत्र मे आज जो इस्पात का उत्पादन १ करोड़ रुपए मूल्य का ही होता है तब तक बढ़कर १२० करोड़ रु० का हो जाएगा। इसके अलावा लगभग ३ लाख टन इस्पात निर्यात के लिए भी बच रहेगा। दूसरी योजना में केन्द्रीय सरकार के तीनो इस्पात योजना कार्यों और मैसूर लोहा इस्पात कारखाने के विस्तार के लिए क्रमशः ३५० करोड़ रुपए और ६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। योजना के आखीर तक इन संयंत्रों से संबंधित नगरों के निर्माण के लिए भी कुछ और धन की आवश्यकता पड़ेगी। इन सयंत्रों के लिए कुल विदेशी सहायता ७५ करोड़ रुपए मिल रही है जो पूंजी में संयंत्र और मशीनों के लिए समय-समय पर दी जाने वाली रकम और कर्ज के अन्य रूपों में होगी। सार्वजनिक क्षेत्र में जो संयंत्र है, आशा है कि उनसे १९६०-६१ में कुल मिलाकर लगभग २० लाख टन तैयार इस्पात मिलेगा।

३०. भारी फाउंड्रियों, भट्ठियों और संरचना कारखानों तथा औद्योगिक मशीनों के निर्माण की सुविधाएं :—चित्तरंजन रेल इंजन कारखाने ने इंजन उत्पादन की सामर्थ्य १२० से बढ़ाकर ३०० करने की योजना बनाई है। उसके विकास कार्यक्रम में एक भारी इस्पात फाउंड्री की स्थापना भी शामिल है, ताकि रेलवे के लिए आवश्यक ढली हुई भारी चीजें देश के

भीतर ही मिल जाया करें। इसी प्रकार राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम ने दी गई रकम में से १५ करोड़ भारी रुपए फ्राउंड्रियों, भट्ठी कारखानों और भारी सरचना कारखानो के लिए निकालकर अलग रख दिए है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि दूसरी योजना के अधीन मशीन निर्माण के कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए ये विकास कार्य बहुत ही आवश्यक है।

३१. दूसरी योजना के सार्वजनिक क्षेत्र मे भारी मशीनों आदि के ये उद्योग शामिल हैं :

	१९५६-६१ के लिए व्यवस्था
बिजली के साज-सामान का निर्माण	२० करोड रु० (२५ करोड़ रु० पूरे होने के लिए)
हिन्दुस्तान मशीन टूल्स का विस्तार . .	२ करोड़ रु०
औद्योगिक मशीनों और मशीनी औजारों का निर्माण . . .	१० करोड़ रु०

इनके अलावा गवर्नमेंट इलेक्ट्रिक फैक्टरी, बंगलौर के विस्तार के लिए १·२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस समूह के अन्तर्गत जो अन्य उद्योग आते है, उनमें हवाई इंजन योजना कार्य और इलेक्ट्रानिक और बेतार के सामान के योजना कार्य का उल्लेख किया जा सकता है।

३२. बिजली का भारी विद्युत सामान निर्माण करने की योजना के विकास के लिए ब्रिटेन की एसोशिएटेड इलेक्ट्रिकल इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड के साथ एक परामर्श करार हो चुका है। निश्चय हुआ है कि सयत्र भोपाल मे लगाया जाए। इस योजना कार्य के पूरे होने में सात या आठ साल लगेंगे और अनुमान है कि लगभग २५ करोड रुपया खर्च आएगा। संयंत्र के कुछ हिस्से १९६० तक उत्पादन शुरू कर देंगे। भारी ट्रान्सफार्मर, औद्योगिक मोटर और स्विच गियर दूसरी योजना के अन्त तक तैयार होने लगेंगे और हाइड्रालिक टरबाइन जैनरेटर तथा डीज़ल सेटों के जैनरेटर जैसे अन्य बुनयादी सामान का उत्पादन तीसरी योजना के आरंभिक वर्षों में शुरू होगा।

३३. हिन्दुस्तान मशीन टल्स लिमिटेड के विकास और विस्तार के कार्यक्रम का उद्देश्य बड़ी संख्या मे और अधिक प्रकार की नापो तथा किस्मों के मशीनी औजार तैयार करना है। इस कार्यक्रम के अधीन ८½" वाली अधिक गति की खरादो का उत्पादन ४०० तक बढ़ा दिया जाएगा और इससे भी बडे नाप की खरादों और पिसाई मशीनों तथा भू-छेदन मशीनों के निर्माण का काम भी शुरू किया जाएगा। हिन्दुस्तान मशीन टूल्स की दूसरी योजना के लिए २ करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। सरकार ने अभी एक समिति बनाई है जो इस विकास कार्यक्रम का अध्ययन मशीनी औजार उद्योग के समस्त विकास के एक हिस्से के रूप में कर रही है। इस समिति की सिफारिशों को अभी अन्तिम रूप नहीं दिया गया है।

३४. राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम भारी औद्योगिक मशीनों के विकास को विशेष रूप से बढ़ावा देगा। भारी फाउंड्रियों, भट्ठियों और संरचना कारखानो में जो विकास सम्भव होगा, ऐसा सोचा जाता है कि उसके आधार पर औद्योगिक मशीनों के उत्पादन में दूसरी योजना के दौरान में सन्तोषप्रद प्रगति होगी।

३५. दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य:—दक्षिण भारत में कोयले के निक्षेप में कमी होने की वजह से नैवेली के बहुमुखी दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य के विकास पर ज्यादा से ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। फिलहाल रखे गए अनुमानों के आधार पर इस योजना कार्य

मे कुल ६८·८ करोड़ रुपए लगाए जाएगे। इस विकास कार्यक्रम में हर साल ३५ लाख टन लिगनाइट निकालना भी शामिल है। यह लिगनाइट इन कामो मे आएगा :

(क) २,११,००० कि० वा० सामर्थ्य के स्टेशन में बिजली पैदा करना,

(ख) लगभग ७,००,००० टन कच्चा कोयला चूर्ण ढोकों की वार्षिक सामर्थ्य वाले कार्बनीकरण संयत्र द्वारा कार्बनीकृत कोयला चूर्ण ढोकों का उत्पादन (कार्बनीकृत कोयला चूर्ण ढोकों की सामर्थ्य ३,८०,००० टन वार्षिक होगी), और

(ग) यूरिया और सल्फेट नाइट्रेट के रूप में ७०,००० टन स्थिर नाइट्रोजन का उत्पादन।

इस योजना कार्य के लिए योजना में ५२ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इस बहुमुखी योजना कार्य के भिन्न-भिन्न हिस्सों के पूरे होने के बारे में निश्चित कार्यक्रम तो तभी बनाया जा सकेगा जब जल पम्प करने के परीक्षण, जो इन दिनों किए जा रहे है, पूरे हो जाएगे। इसके लिए अगर और साधनों की आवश्यकता होगी तो उनकी व्यवस्था इस योजना कार्य को कार्यरूप देने की प्रगति की वार्षिक समीक्षा के आधार पर की जाएगी।

३६. खाद उत्पादन :—अनुमान है कि स्थिर नाइट्रोजन के रूप में नाइट्रोजनीय खादों का उपयोग १९६०-६१ तक ३,७०,००० टन हो जाएगा। इस समय वार्षिक सामर्थ्य ८५,००० टन है। इस प्रकार वर्तमान सामर्थ्य और प्रत्याशित आवश्यकताओं के बीच काफी अन्तर है। प्रथम योजना में ही खाद उत्पादन को ४७,००० टन स्थिर नाइट्रोजन (यूरिया और नाइट्रेट सल्फेट के रूप में) बढ़ाने के लिए प्रयत्न किए गए थे। इसके लिए सिन्दरी खाद कारखाने को उसकी कोक-भट्ठी की गैस के उपयोग द्वारा विस्तृत किया गया था। दूसरी योजना में प्रस्ताव यह है कि खाद उत्पादन समिति की सिफारिशों के आधार पर दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य के अन्तर्गत स्थापित यूनिट के अलावा दो और खाद फैक्टरियां स्थापित की जाएं। इनमें से एक संयंत्र नंगल (पंजाब) में होगा जो ७०,००० टन स्थिर नाइट्रोजन से मिश्रित अमोनियम नाइट्रेट तैयार करेगा। इस संयंत्र में भारी जल तैयार करने का प्रबन्ध भी किया जाएगा। इसमें १,६०,००० किलोवाट बिजली खर्च होगी। तीसरा कारखाना राउरकेला में. बनेगा जो प्रतिवर्ष ८०,००० टन स्थिर नाइट्रोजन के बराबर नाइट्रो-चूना पत्थर का उत्पादन करने के लिए होगा। इस योजना कार्य के लिए फिलहाल ८ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इसके लिए उपयुक्त समय पर पूरक व्यवस्था भी करनी पड़ेगी।

३७. भारी इंजीनियरी उद्योग .—योजना में हिन्दुस्तान शिपयार्ड और चित्तरंजन लोकोमोटिव फक्टरी को और अधिक विस्तृत करने की व्यवस्था रखी गई है। इन विस्तार कार्यों का परिणाम यह होगा कि विशाखापत्तनम में पहले पुराने प्रकार के जलयानों की उत्पादन दर ६ या नए प्रकार के जलयानों की उत्पादन दर ४ तक हो जाएगी। चित्तरंजन लोकोमोटिव फैक्टरी के बारे में पहले ही कहा जा चुका है कि रेल के इजनों का उत्पादन दूसरी योजना के अन्त तक ३०० प्रतिवर्ष हो जाएगा। जलयान निर्माण उद्योग के विकास कार्यक्रम में यह भी अन्तर्निहित है कि विशाखापत्तनम में एक शुष्क गोदी बनाई जाए और एक दूसरे जलयान क्षेत्र के निर्माण के प्रारम्भिक कार्य, जैसे जगह का चुनाव और प्रशिक्षण सुविधाओं की व्यवस्था आदि के लिए ७५ लाख रु० की भी उसमें व्यवस्था है। भारी समुद्रीय डीजल

इंजन बनाने के बारे मे भी विचार किया जा रहा है जिसके लिए आर्थिक व्यवस्था उचित मौके पर की जाएगी ।

एक अवस्थागत निर्माण कार्यक्रम के अनुसार १९५९ के बाद से ३५० डिब्बे तैयार करने के आधार पर पेराम्बूर की इंटैगरल कोच फैक्टरी मे जो बाकी काम होगा वह दूसरी योजना के आखीर तक पूरा कर लिया जाएगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि मे रेल योजना के अन्तर्गत छोटी लाइन के डिब्बे तैयार करने का कारखना स्थापित करने के लिए ८·५ करोड़ रुपए की और फालतू पुर्जे बनाने के निमित्त दो इजीनियरी कारखानों के लिए ७·० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है ।

३८. सरकारी क्षेत्र के हलके और मध्यम उद्योगो मे मौजूदा डी० डी० टी० और कीटाणुनाशक फैक्टरियों के विस्तार और तिरुवाकुर-कोचीन मे एक नई डी० डी० टी० फैक्टरी की स्थापना के लिए योजना में व्यवस्था है । हिन्दुस्तान एंटीबायोटिक्स लिमिटेड के विस्तार कार्यक्रम मे पेनीसिलीन की उत्पादन सामर्थ्य बढ़ाने के लिए स्ट्रेप्टोमाइसीन जैसी कीटनाशक औषधियों का उत्पादन बढ़ाने की योजनाएं भी शामिल है। आरम्भिक कच्चे पदार्थो से बुनियादी दवाए तैयार करने के सवाल पर भी विचार किया जा रहा है। इसी प्रकार हिन्दुस्तान केबल्स लिमिटेड, नेशनल इंस्ट्रूमेंट्स फैक्टरी और इडियन टेलीफोन इंडस्ट्रीज का भी विस्तार किया जाएगा। दूसरी पचवर्षीय योजना मे जमानती कागज की एक मिल की स्थापना भी शामिल है जिससे हम लोग देश भर के लिए जमानती और बांड कागज का उत्पादन यही कर सके। दूसरी योजना के शुरू के सालों मे रजत शोधशाला का भी उत्पादन शुरू हो जाएगा। यह शोधशाला अभी तैयार की जा रही है।

३९. राज्य सरकारों के औद्योगिक योजना कार्यों मे मैसूर लोहा और इस्पात कारखाने के विस्तार कार्यक्रम का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। एक अन्य महत्वपूर्ण योजना के अन्तर्गत दुर्गापुर मे पश्चिम बंगाल सरकार फाउड्री-कोक, कोयला कार्बनीकरण के उप-उत्पादन और बेकार गैसों के आधार पर बिजली पैदा करने का आयोजन करेगी। राज्यों मे जिन मध्यम आकार वाले उद्योगों का विकास होना है उनमें मैसूर और बिहार राज्यों में पोर्सिलेन के विद्युत इन्सुलेटरों का निर्माण, हैदराबाद में प्राग औज़ार फैक्टरी का पुनर्गठन, साथ ही वायु दाबकों के निर्माण, आन्ध्र की कागज मिल का विस्तार और उत्तर प्रदेश सीमट फैक्टरी और बिहार सुपरफास्फेट फैक्टरी की सामर्थ्य में वृद्धि का उल्लेख विशेष रूप से किया जा सकता है। दूसरी योजना के अन्तर्गत केन्द्र और राज्य सरकारों के औद्योगिक योजना कार्यों का ब्योरा परिशिष्ट १ में दे दिया गया है।

४०. भारी रासायनिक तथा उप-उत्पाद विधायन योजना कार्य:—इस्पात सयंत्रों को कोक भट्ठी गैसों से अमोनिया निकालने के लिए सल्फ्यूरिक अम्ल की बहुत अधिक मात्रा मे जरूरत होगी। दुर्गापुर और भिलाई इस्पात संयत्रों से कुल मिलाकर लगभग ३५,००० टन अमोनियम सल्फेट प्रति वर्ष निकलेगा। अमोनियम सल्फेट के उत्पादन तथा कारखाने की और दूसरी मांगों के लिए आवश्यक सल्फ्यूरिक अम्ल की जरूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से दो सम्पर्क सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्रों के लगाए जाने का प्रस्ताव है, जिनकी दैनिक सामर्थ्य ५० टन होगी। ऐसा प्रस्ताव है कि राउरकेला इस्पात संयंत्र में उप-उत्पाद अमोनिया को द्रव अमोनिया के रूप में निकाला जाए। इस फैक्टरी में इस्पात मार्जक क्रियाओं में जो सल्फ्यूरिक अम्ल लगेगा उसको बाहरी साधनों से प्राप्त किया जाएगा। इसके लिए सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्र लगाने

का कोई विचार नही है। पश्चिम बंगाल सरकार के दुर्गापुर कोक चूल्हा सयंत्र में उप-उत्पादों के निकालने का जो प्रस्ताव है, उसी मे ३,३०० टन सल्फ्यूरिक अम्ल और १,५०० टन अमोनिया के वार्षिक उत्पादन की भी व्यवस्था है ।

४१. औषधियो, प्लास्टिक और रगाई पदार्थ के उद्योगो का विकास अभी तक रुका रहा है। इसके दो कारण थे : एक तो दामो का अधिक होना और दूसरे, बेनज़ीन, टोलीन, जाइ-लीन, नेफ्थालीन, फिनाइल और ऐन्थासीन जैसे प्रारम्भिक आरगेनिक रसायनो का कम मात्रा मे मिलना। जैसा कि इस अध्याय में आगे बताया गया है, दूसरी पचवर्षीय योजना मे इन क्षेत्रो में विस्तृत रूप से विकास की व्यवस्था की गई है। इस बात को पक्का करने के लिए कि इन उद्योगों के लिए कच्चा माल देश के भीतर ही मिल जाया करेगा, यह व्यवस्था की गई है कि इस्पात संयत्रों, दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य और दुर्गापुर कोक-भट्ठी योजना कार्य की कोक-भट्ठी गैसों से प्रकृत बेनजोल निकाला जा सके। भिलाई और दुर्गापुर में बेनज़ीन, टोलीन, जाइलीन और अन्य जलीय कार्बन तत्वों के उत्पादन के लिए प्रकृत बेनज़ीन को तोड़ने की व्यवस्था रखी गई है। भिलाई मे और दुर्गापुर कोक-भट्ठी योजना कार्य में कोलतार के आसवन के लिए संयत्र लगाए जाने की भी व्यवस्था की गई है। इसी प्रकार के कार्य राउरकेला में भी किए जाने पर विचार किया जा रहा है। कार्बनीकरण संयत्रों के उप-उत्पादों के द्वारा इस प्रकार रासायनिक कच्चा सामान प्राप्त करने की इन योजनाओं से इतना जरूर होगा कि कुछ रासायनिक और फलित उद्योगों के शीघ्र विकास के लिए पक्की नींव मिल जाएगी। अब तक अन्तिम रूप दी गई योजनाओं के आधार पर सार्वजनिक क्षेत्र मे कोलतार का आसवन ६२,५०० टन प्रतिवर्ष हो जाएगा। लगभग ५० लाख गैलन बेनज़ीन और १४ लाख गैलन टोलीन के उत्पादन की सुविधाओं के अलावा क्रमश: १,८०० तथा ३,४०० टन फिनोल और नैफ्थालीन प्रतिवर्ष की सामर्थ्य भी उसी प्रकार पैदा कर ली जाएगी। इन संयंत्रों के लिए लगने वाले धन की व्यवस्था उन प्रमुख योजना कार्यों के साथ की गई है जिनसे ये सम्बद्ध हैं।

टेक्नीकल जनशक्ति की समस्या

४२. दूसरी योजना के अन्तर्गत सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में जो औद्योगिक विकास की प्रगति और तैयार उत्पादों और विधयनों में जो विभिन्नता रखी गई है उसके लिए आम तौर से देश में इस समय जितने भी प्रशिक्षित टेक्नीकल आदमी मिल सकते हैं उनसे कहीं अधिक मात्रा मे भिन्न-भिन्न स्तरों पर उनकी आवश्यकता होगी। अभी-अभी तीनों इस्पात संयत्रों की आवश्यकताओं का जो लेखा-जोखा तैयार किया गया है, उसके अनुसार उत्पादन शुरू होने पर फोरमैन श्रेणी से नीचे के लगभग १५,००० दक्ष कामगरों और फोरमैन श्रेणी से ऊपर के लग-भग २,१९९ टेक्नीशियनों की जरूरत होगी। इन टेक्नीशियनों मे से ज्यादातर अनुभवप्राप्त आदमी होने चाहिएं। इस समस्या को सुलझाने के लिए जर्मनी, सोवियत रूस, ब्रिटेन और आस्ट्रेलिया में चुने हुए कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिलाने के लिए कार्रवाई की जा रही है। अन्य श्रेणी के कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने की योजना बनाने के लिए लोहा और इस्पात मंत्रालय ने एक समिति बनाई है जो वर्तमान सुविधाओं की जाच-पडताल करेगी और उपयुक्त उपायों की सिफारिश करेगी।

भारी विद्युत संयंत्र योजना कार्य ही ऐसी दूसरी योजना है कि उपलब्ध टेक्नीकल आद-मियों की एक बड़ी संख्या उसी में खप जाएगी। टेक्नीकल सलाहकारों की रिपोर्ट में भिन्न-भिन्न श्रेणियों के लिए आवश्यकताओं के ये अनुमान दिए गए है : प्रशासकीय ७३५, सुपर-

वाइजर या प्रशिक्षित टेक्नीकल ७१५, दक्ष टेक्नीकल ४,५५० और अर्ध दक्ष तथा अदक्ष ६,२००। इस रिपोर्ट मे कुछ और बाते भी शामिल है, जैसे वर्तमान कारखानों मे प्रशिक्षण के लिए प्राप्त सुविधाओ के आधार पर भारतीय कर्मचारियो के प्रशिक्षण की योजना बनाना तथा एक प्रशिक्षण केन्द्र खोलने के विषय में सलाह देना।

सिन्दरी खाद कारखाने मे प्रशिक्षण की सुविधाओं का प्रबन्ध कर देने से सरकारी क्षेत्र में खाद कारखानों के लिए प्रशिक्षित आदमियो की आवश्यकताएं कुछ हद तक पूरी हो जाएंगी।

मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि टेक्नीकल प्रशिक्षण-प्राप्त आदमियों की आवश्यकता बहुत अधिक महत्व की है और इसीलिए सार्वजनिक क्षेत्र मे योजना कार्यो मे टेक्नीकल सहयोग के लिए विदेशों से जो करार हुए है उनमे कर्मचारियों के प्रशिक्षण के सम्बन्ध मे विशेष रूप से व्यवस्था की गई है। इजीनियरी कर्मचारी समिति ने इस विषय पर व्यापक दृष्टिकोण से विचार किया है।

४३. केन्द्रीय सरकार के औद्योगिक योजना कार्यो पर (राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के लिए निर्धारित धन को छोड़कर) दूसरी योजना की अवधि में नया विनियोग ५०२ करोड़ रुपये का होगा (देखिये परिशिष्ट १)। राज्यो में औद्योगिक योजना कार्यो के लिए ३२ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। इसमे भिन्न-भिन्न राज्यों में सहकारी चीनी कारखानों की स्थापना के लिए ५ करोड़ रुपये की सहायता भी शामिल है। इसमे असम और पाडीचेरी जैसे क्षेत्रों के कुछ उद्योगों के विकास के लिए सहायता की भी व्यवस्था की गई है।

राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम

४४. उद्योगों को सीधे सहायता देने और इंडियन एक्स्प्लोसिव्ज लिमिटेड की पूजी में साझा करने के लिए जिनके लिए भारत सरकार वायदा कर चुकी है, तथा राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के कार्यों के लिए वाणिज्य और उद्योग मत्रालय की योजना* मे ६० से ६५ करोड़ रुपये तक की व्यवस्था की गई है। रा० औ० वि० निगम के कार्यकलापों के लिए ५५ करोड़ रुपये की व्यवस्था है। इस राशि का एक भाग (फिलहाल लगभग २०–२५ करोड़ रुपये) सूती और जूट वस्त्र उद्योगों को आधुनिक बनाने में सहायता देने के लिए है। इन उद्योगों को जिन कारणों से प्राथमिकता दी गई है वे पहले बताए जा चुके हैं। रा० औ० वि० निगम के लिए दी गई राशि का शेष भाग, लगभग ३५ करोड़, नए बुनियादी और भारी उद्योगों को चलाने के लिए होगा। रा० औ० वि० निगम ने जिन योजना कार्यों की जांच-पडताल की है उनमें फाउन्ड्री और भट्ठी के कारखाने, तामीरी ढाचे, ऊष्मसह ईंटें, रेयन के लिए रासायनिक लुगदी, अखबारी कागज इत्यादि, तथा रंगाई पदार्थो और दवाओं के लिए माध्यम, कार्बन ब्लैक इत्यादि शामिल हैं। आशा है कि इन योजना कार्यों के अलावा रा० औ० वि० निगम अल्यूमीनियम उद्योग और मिट्टी हटाने और खान खोदने इत्यादि के लिए भारी सामान के निर्माण और लौह और अलौह उद्योगों के लिए आवश्यक वेल्लन और वेल्लन मिल के साज-सामान के लिए एक नई यूनिट स्थापित्त करने की दिशा में प्रयत्न करेगा। वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय ने हाल ही में एक समिति नियुक्त की है जो दूसरी योजना में अल्यूमीनियम उद्योग के लिए निर्धारित ३०,००० टन की सामर्थ्य के लक्ष्य को पूरा करने के लिए एक नए अल्यूमीनियम प्रद्रावक

*वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय की योजनाओं के लिए कुल ७० करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इसमे से ५ से १० करोड़ रुपए उन योजनाओं के लिए है जो निर्माण उद्योगों के बाहर हैं

(स्मेल्टर) स्थापित करने के लिए उपयुक्त स्थान के बारे में सलाह देगी। भारी फाउन्ड्रियों, भट्ठियों और संरचना कारखानों के योजना कार्यों के लिए रिपोर्ट तैयार करने की तैयारी की जा रही है। आशा है कि इन योजना कार्यों के सम्बन्ध में डिजाइनो और विकास कार्य की सुविधाओ का इंतजाम किया जाएगा।

ऊपर बताए गए कार्यक्रम पर अमल करने के लिए रा० औ० वि० निगम को जितना धन दिया गया है, हो सकता है उससे ज्यादा की जरूरत पड़े। वास्तव में आवश्यक धन और इस समय प्रस्तावित निधि मे अन्तर दो बातों से पड़ेगा : एक तो धन देने का अपनाया हुआ तरीका और दूसरे विभिन्न योजना कार्यो मे लगी हुई पूरी पूजी मे सरकार का भाग। अगर वित्तीय साधनों की कमी की वजह से रा० औ० वि० निगम के योजना कार्यों को कार्य रूप देने में प्राथमिकता निर्धारित करने का सवाल आता है, तो सर्वोच्च प्राथमिकता उन योजनाओं को देनी पड़ेगी जिनका सम्बन्ध भारी मशीनों आदि अथवा तत्सम्बन्धी मशीनों आदि के निर्माण से इस दृष्टि से हो कि तीसरी योजना के लिए आवश्यक भारी मशीनें आदि देश के भीतर ही तैयार करने के लिए परिस्थितिया पैदा की जा सकेंगी।

विनियोग पूंजी और वित्तीय साधन

४५. रा० औ० वि० निगम और निजी क्षेत्र (खान खोदना, बिजली उत्पादन और वितरण, बागान और छोटे पैमाने के उद्योगों के अलावा) के अन्तर्गत दूसरी योजना में निर्धारित समूचे विकास के कार्यक्रम पर कुल ७२० करोड़ रुपए की पूंजी लगेगी जिसमे से ५७० करोड़ रुपए नए विनियोगों पर और १५० करोड़ रुपए मशीनों की बदलाई तथा आधुनिकीकरण के लिए होंगे। जैसे कि पहले कहा जा चुका है, फिलहाल रा० औ० वि० निगम के लिए ५५ करोड़ रु० की व्यवस्था की जा रही है। इस आधार पर कार्यक्रम की पूर्ति के लिए लगभग ६६५ करोड़ रुपए की पूजी की और आवश्यकता पड़ेगी। इन अवश्यकताओं के बावजूद निजी क्षेत्र के लिए जितना भी धन मिल सकने का इस समय अनुमान लगाया गया है वह ६२० करोड़ रु० बैठता है। नीचे की तालिका में विभिन्न स्रोतों से प्रत्याशित और १९५१-५६ की अवधि के लिए अनुमानित रकमें दी गई हैं :

	(करोड़ रुपए)	
	१९५१-५६	१९५६-६१
१. औद्योगिक वित्त निगम, और राज्य वित्त निगम और औद्योगिक ऋण तथा विनियोग निगम से ऋण	१८	४०
२. प्रत्यक्ष ऋण, समीकरण निधि से अप्रत्यक्ष ऋण, तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्यांश—और निजी प्रतिष्ठानों की शेयर पूजी में राज्य सरकारों का अंशदान तथा ऋण	२६	२०
३. संभरणकर्ताओं के प्रत्ययों सहित विदेशी पूंजी	४२ से ४५	१००
४. नई मदे	४०	८०
५. विनियोग के लिए उपलब्ध आंतरिक सम्पत्ति (नई यूनिटों में तथा बदलाई के लिए)	१५०	३००
६. प्रबन्ध एजेन्टों से पेशगी ई० पी० टी० प्रत्यर्पण इत्यादि जैसे अन्य स्रोत	६१ से ६४	८०
	३४०	६२०

नोट—ऊपर दी हुई तालिका की १ और २ मदों में दिखाई गई रकमें योजना में सरकारी क्षत्र के उद्योग और खनिज शीर्षक के अंतर्गत भी दी गई हैं।

यह नही कहा जा सकता कि ऊपर दिए गए अनुमान एकदम सही ही होंगे, क्योकि ये कई ऐसी बातों पर निर्भर है जिनका अभी से कुछ अंदाजा लगा सकना कठिन है ।

४६. अनुबन्ध २ मे दिए गए विकास कार्यक्रमों मे दूसरी पचवर्षीय योजना के १९६०-६१ तक पूरे किए जाने वाले लक्ष्य बताए गए है । इन लक्ष्यो को निश्चित करते समय इन बातों को ध्यान में रखा गया था :—

(क) २२ उद्योगों के कार्यक्रमो और नीतियो पर विचार करने के लिए १९५५ मे योजना आयोग द्वारा आयोजित सभाओं मे भिन्न-भिन्न लोगो द्वारा प्रगट किए गए मत;

(ख) वाणिज्य और उद्योग तथा खाद्य और कृषि मन्त्रालयो के अधीन काम करने वाली विकास परिषदों की सिफारिशें और वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय द्वारा की गई सिफारिशें;

(ग) प्रथम पंचवर्षीय योजना में वित्त विनियोग की वास्तविक दर, और

(घ) भिन्न-भिन्न उद्योगों के सामर्थ्य सम्बन्धी प्रस्ताव जिनका सरकार ने पहली योजना के अन्त में अनुमोदन किया था ।

इनमें से कुछ लक्ष्यों को बिल्कुल सही या अंतिम नही मान लेना चाहिए । वे अगले पांच वर्षों में होने वाली मांगों के वर्तमान अनुमानों के आधार पर विकास के उस स्तर की ओर संकेत करते हैं जो वाछनीय हैं । वे स्थिर या अचल नहीं है । इससे भी कम सभावना यह है कि उनको भिन्न उद्योगों के विकास का एक स्थिर बिन्दु मान लिया जाए । अगर मांग में वृद्धि हो जाए तो औद्योगिक विकास भी काफी सुभीते के साथ और ऊंचे स्तर तक हो सकता है । लेकिन शर्त यह है कि बिजली और रेल परिवहन जैसी सुविधाएं मिलती जाएं । इसलिए इन पांच वर्षों में लक्ष्यों की हमेशा जांच करते रहना होगा ।

नीचे के पैरों में विकास कार्यक्रम की मुख्य-मुख्य बातों की रूपरेखा दी जा रही है ।

निजी क्षेत्र में विकास के रूप

४७. सार्वजनिक क्षेत्र की तरह निजी क्षेत्र के औद्योगिक योजना कार्यों में लोहा और इस्पात भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । इस क्षेत्र में ११५ करोड़ रु० लगाने के लिए रखे गए हैं । पहली योजना में निजी क्षेत्र के अधीन लोहा और इस्पात के विस्तार में तथा दूसरी योजना मे किए गए विस्तारों में जो पूंजी लगी है या लगाई जाएगी उसके फल १९५८ के मध्य से उस समय से मिलने प्रारम्भ हो जाएंगे जब कि टाटा आयरन एंड स्टील कम्पनी (टिस्को) और इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी (इस्को) की संयुक्त सामर्थ्य वर्तमान १२.५ लाख टन से बढ़कर २३ लाख टन हो जाएगी । आशा है कि माध्यमिक उत्पादकों मे दो नई कम्पनियां मैसर्स कलिंग ट्यूब्स लिमिटेड और इंडियन ट्यूब कम्पनी से ई० आर० डब्ल्यू ट्यूबों और बिना जोड़ की ट्यूबों के साथ ही साथ ट्यूबों और पाइपों के उत्पादन को बढ़ाएंगी ।

४८. जहां तक इन इस्पात विस्तार कार्यक्रमों के लिए धन का सवाल है, १९५५ में देशी उत्पादकों के लिए मूल्य एक समान रखने के उद्देश्य से जो निर्णय किया गया है उसमें आशा है कि विकास कार्यों के लिए प्राप्य धन में वृद्धि हो जाएगी । इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी लगभग १३.५ करोड़ रुपए तक का कर्ज अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से लेगी । अब तक उसमें से अनुमानतः १ करोड़ रुपया काम में लाया जा चुका है । टिस्को के विस्तार कार्यक्रम के लिए

आशा है कि विदेशी बैंकिग संगठनों से कर्ज मिल जाएगा। ये दोनों इस्पात कम्पनियां अपने लिए आवश्यक धन का एक भाग घरेलू सामान की बिक्री से प्राप्त करेंगी। इसके अलावा इंडियन आयरन एंड स्टील कम्पनी को भारत सरकार द्वारा स्वीकृत ७.९ करोड़ रुपए के कर्ज का बचा हुआ भाग भी मिल जाएगा। इस स्थिति में भारत सरकार ने कम्पनी के सचालको के बोर्ड मे अपना प्रतिनिधित्व रखने का प्रबन्ध किया है।

४९. दूसरी योजना की अवधि मे जिन धातुकर्मी उद्योगों का पर्याप्त मात्रा में विस्तार होना है, उनमें से अल्यूमीनियम और लौह मैंगनीज़ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आशा है कि अल्यू-मीनियम की मांग और चीजों के साथ विद्युत संचारण के लिए ए० सी० एस० आर० केबलों के अत्यधिक प्रयोग के कारण बढ जाएगी। इसलिए ३०,००० टन सामर्थ्य का लक्ष्य रखा गया है। जहां तक लौह मैंगनीज का सवाल है, अनुमान है कि घरेलू उपभोग और निर्यात के क्षेत्र में इसकी काफी माग बढ़ जाएगी। इसलिए इसके उत्पादन के लिए १,६०,००० टन का लक्ष्य रखा गया है।

५०. सीमेंट और ऊष्मसह ईंटें:—अगले पांच वर्षों में भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में काम की अधिकता से सीमेट की मांग काफी बढ़ेगी। इसलिए आशा है कि इसका भी काफी विकास होगा। प्रस्ताव यह है कि सामर्थ्य का विस्तार १ करोड़ ६० लाख टन* और उत्पादन १ करोड़ ३० लाख टन* तक कर दिया जाए।

उष्मसह ईंटों के उद्योग का विकास कार्यक्रम, लोहा और इस्पात उद्योग के विकास से मुख्य रूप से सम्बन्धित है और इसके लिए १९६०-६१ तक जो ८ लाख टन का उत्पादन लक्ष्य रखा गया है, उसके भीतर ही आवश्यक समानुपात से सिलिका, आग माटी, (फायर क्ले) मैंगनेसाइट और क्रोमाइट उष्मसह ईंटों का निर्माण भी होगा। इस उद्योग के लिए सामर्थ्य लक्ष्य १० लाख टन रखा गया है।

५१. लोहा और इस्पात उद्योग के विस्तार से यह स्वाभाविक ही है कि भारी और हलके इंजीनियरी उद्योगों का भी पर्याप्त मात्रा में विस्तार हो। भारत में इंजीनियरी उद्योगों के उत्पादों की जरूरतें अब भी बाहर से आयात द्वारा पूरी की जा रही हैं। ये उत्पाद दूसरी योजना में काफी मात्रा में आवश्यक होंगे, अतः विकास कार्यक्रम में इन उद्योगों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। जिन मदों के लिए ऊंचे पैमाने पर उत्पादन रखा गया है उनमें इस्पात का निर्माण, आटोमोबाइल, रेल डिब्बे आदि सामान, ढली चीज़ें, गढ़ी चीजें, औद्योगिक मशीनें आदि, साइकिलें, सिलाई मशीनें, मोटर और ट्रान्सफार्मर आदि मुख्य हैं। योजना ऐसी है कि इनमें कुछ उद्योग एक दशक के भीतर और अन्य कुछ कम समय में आत्म-निर्भर हो जाएंगे। पहले इस बात का संकेत किया ही जा चुका है कि इन क्षेत्रों में अगले वर्षों में बड़े पैमाने पर विस्तार करने के लिए जिस मूलभूत अनुभव की जरूरत होगी वह प्रथम योजना में प्राप्त हो ही चुका है।

५२. रेल डिब्बे आदि के कार्यक्रम के अन्तर्गत टाटा लोकोमोटिव एंड इंजीनियरिंग कम्पनी में रेल इंजनों के निर्माण में विस्तार करने की व्यवस्था की गई है। आशा है कि रेल इंजनों के वर्तमान उत्पादन को दुगना करके १०० कर देने के लिए १ करोड़ रुपए की राशि दी जाएगी। कम्पनी को भारी इस्पात की भारी चीजें ढालने की एक फाउन्ड्री स्थापित करने से

*इसमें सार्वजनिक क्षेत्र के ५ लाख टन भी शामिल है।

इस कार्यक्रम को तथा प्रतिवर्ष ६,००० डीज़ल गाड़ियां बनाने के प्रस्ताव को भी काफी सहायता मिलेगी। आटोमोबाइल उद्योग के विकास कार्यक्रम में ट्रकों के उत्पादन पर भी विशेष रूप से जोर दिया गया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य यह है कि इन गाड़ियों में लगी हुई भारतीय वस्तुओं की मात्रा बढ़ाकर ८० प्रतिशत कर दी जाए। इस कार्यक्रम में ये चीजें शामिल हैं :—

	१९६०-६१ के लक्ष्य
कारें	१२,०००
ट्रक	४०,०००
जीप और स्टेशन वैगन	५,०००
	५७,०००

५३. औद्योगिक मशीनें आदि :— निजी क्षेत्र की योजना में औद्योगिक मशीनो आदि के उत्पादन के विस्तार की भी व्यवस्था की गई है। दूसरी योजना की अवधि में जितना धन लगाए जाने की और कुछ विशेष दिशाओं में उत्पादन बढ़ने वाले जिस स्तर की आशा की गई है, वह नीचे दिया जा रहा है :—

	विनियोग (१९५६–६१) करोड़ रु०	उत्पादन का मूल्य (करोड़ रु०)	
		१९५५-५६	१९६०-६१
सूती कपड़ा उद्योग की मशीनें	४·५	४·०	१७·०
जूट उद्योग की मशीनें	१·३	०·०६ (१९५४)	२·५
चीनी उद्योग की मशीने	२·०	०·२८ (१९५४)	२·५
कागज उद्योग की मशीने	१·३	नगण्य	४·०
सीमेंट उद्योग की मशीनें	१·०	०·५६ (१९५४)	२·०
बिजली के मोटर २०० हार्स पावर और उससे कम ('००० हा० पा०)	...	२४०	६००
बिजली-ट्रांसफार्मर ('००० कें०-वी० ए०—३३ कें० वी० से कम)	..	५४०	१,३६०*

जिन दूसरी दिशाओं में प्रगति होनी है वे हैं : चाय की मशीनों, डेरी का सामान, कृषि की मशीनों जैसे ट्रैक्टरों इत्यादि के ट्रेलर और डीज़ल चालित सड़क कूटने के इजनों सहित सड़क बनाने की मशीनों आदि का निर्माण। इस बात का भी प्रबन्ध किया गया है कि पहले से जो कारखाने बने हुए हैं उनमें अधिक रफ्तार वाले इंजनों, जैसे भारी डीज़ल इंजनों और विद्युत

*इसमें सार्वजनिक क्षेत्र के संयंत्रो का उत्पादन भी सम्मिलित है।

चालित उपरिवाही और जहाजघाट के क्रेनों का निर्माण किया जाए। इन उद्योगो में से अधिकांश के लिए विदेशी सहायता की आवश्यकता है, और उसके लिए उचित प्रबन्ध किया जा रहा है।

५४. रासायनिक उद्योग के विकास की दिशा में निजी क्षेत्र के कार्यक्रम में सोडा ऐश, कास्टिक सोडा, फास्फेटीय खादें, औद्योगिक विस्फोटक, रंगाई पदार्थ और अन्तर्वर्ती उत्पाद महत्वपूर्ण स्थान रखते है। इसमे जहां भी आवश्यक है परिमाण की दृष्टि से विस्तार और श्रेणी के अनुसार उत्पादन मे विभिन्नता लाना, ये दोनों बातें शामिल है। रंगाई पदार्थ अन्तर्वर्तियों का उत्पादन प्रयोग के तौर पर रख लिया गया है। उसमें क्लोरो-बेंज़ीन समूह, नाइट्रो-बेंज़ीन समूह, टोलीन समूह, नैफ्थालीन समूह और ऐन्थाक्विनोन समूह आते हैं। सोडा ऐश और कास्टिक सोडा के उत्पादन में तिगुनी या चौगुनी वृद्धि की योजना बनाई गई है। सल्फ्यूरिक अम्ल के उत्पादन का विस्तार भी मुख्य रूप से लोहा और इस्पात, खानो, रेयन और स्टैपल तन्तु उद्योगों से सम्बन्धित है। रबड़ के सामान के उद्योग के लिए अत्यन्त आवश्यक कच्चे माल कार्बन ब्लैक के निर्माण का भी विकास राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम की ओर से ही होगा। इस बुनियादी रसायन के घरेलू कामो के लिए उपलब्ध हो जाने से औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था के एक महत्वपूर्ण पक्ष को बड़ा बल मिल जाएगा। दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस चीज के उत्पादन की सामर्थ्य ९,००० टन रखी गई है।

५५. खनिज तेल:—विशाखापत्तनम में काल्टेक्स रिफाइनरी १९५७ तक बनकर तैयार हो जाएगी। उस पर सारा खर्च अनुमान से १२·५ करोड़ आएगा, जिसमें से २·५ करोड़ पहली पंचवर्षीय योजना मे ही लग चुका है। पेट्रोलियम साफ करने के इन तीन कारखानो के लिए जो विधियां और प्रकृत पदार्थ चुने गए है, उनमें देश की औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था के लिए पर्याप्त महत्व रखने वाले लुब्रीकेटिंग तेलों और पेट्रोलियम कोक के उत्पादन की व्यवस्था नही है। इस उद्योग के सम्बन्ध में और अधिक विकास की योजना बनाते समय खनिज तेल उद्योग के ढांचे मे जो कमी रह गई है, उसे पूरा करना होगा।

५६. बिजली और औद्योगिक अल्कोहल:—चीनी उद्योग के विकास से, जिसका कि आगे उल्लेख होगा, सीरे के उत्पादन की मात्रा भी बढ़ेगी। इसको अच्छे ढंग से खपाने के लिए बिजली पैदा करने और औद्योगिक अल्कोहल की सामर्थ्य (१९५५-५६ के २ करोड़ ७० लाख गैलन से बढ़कर ३ करोड़ ६० लाख गैलन) भी काफी मात्रा में बढ़ाने का प्रस्ताव है। अल्कोहल का बड़े पैमाने पर औद्योगिक उपभोग बढ़ाने के लिए योजनाएं बनाई जा रही हैं। यह अल्कोहल डी० डी० टी० के उत्पादन के विस्तार, पोलीविनिल क्लोराइड और बूटाडीन के निर्माण को स्थायित्व देने जैसी दिशाओं में ही बड़े पैमाने पर खप सकेगा। इस सम्बन्ध में रा० औ० वि० निगम संश्लेषणात्मक (सिंथेटिक) रबड़ के निर्माण की एक योजना पर विचार कर रहा है।

५७. प्लास्टिक और सिंथेटिक सामान बनाने का चूर्ण:—प्रथम योजना में तैयार प्लास्टिक का सामान बनाने वालों की बढ़ती हुई जरूरतों को पूरा करने के लिए फेनोल फार्मेल्डिहाइड सिंथेटिक सामान बनाने का चूर्ण बनाने की दिशा में कुछ प्रगति हुई थी। अन्य सिंथेटिक सामान चूर्णों (जैसे पोलीविनिल क्लोराइड, सेल्यूलोज एसीटेट और पोलीस्टिरीन और पोलीइथीलीन) की भी मांग थी, लेकिन अभी उनका उत्पादन होना शुरू नहीं हुआ। दूसरी योजना में इस क्षेत्र में काफी प्रगति की जाएगी। आशा है कि आयात होने वाले मोनोमर के आधार पर पोलीस्तिरीन का उत्पादन १९५६-५७ में शुरू कर दिया जाएगा। थोड़े दिन पहले ही सल्यूलोज एसीटेट, पोलइथीलीन, पोलीविनील क्लोराइड और यूरिया फार्मेल्डिहाइड तैयार करने के बारे में कई योजनाएं

स्वीकृत की गई हैं और इस विश्वास पर कि इनको कार्यान्वित किया जाएगा, सिंथेटिक सामान बनाने के चूर्णों के उत्पादन की सामर्थ्य १९५५-५६ के १,१८० टन से बढ़कर ११,४०० टन वार्षिक हो जाएगी। पोलीविनील क्लोराइड का निर्माण कैल्शियम कार्बाइड से निकले हुए एसीटिलीन पर निर्भर करता है और इस बुनियादी रसायन के लिए जो कुल लक्ष्य रखा गया है उससे प्लास्टिक उद्योग की आवश्यकताएं पूरी हो जाएंगी।

५८. उपभोग वस्तुएं:—उपभोग वस्तुओं मे कागज और गत्ते का उत्पादन लगभग १०० प्रतिशत बढ़ जाएगा। चीनी का उत्पादन १९५५-५६ के १६·७ लाख टन से बढ़कर १९६०-६१ में २२·५ लाख टन हो जाने की आशा है। उत्पादन की इस वृद्धि में सहकारी चीनी मिलों का भाग अनुमान से ३,५०,००० टन वार्षिक होगा। इस उत्पादन लक्ष्य की पूर्ति के लिए २५ लाख टन की सामर्थ्य रखी जाने की योजना है। वनस्पति तेलों का उत्पादन १८ लाख टन से बढ़कर २१ लाख टन हो जाएगा। विकास कार्यक्रम में बिनौले के तेल और घोलक निस्सरण विधायन द्वारा खली से तेल निकाले जाने पर जोर दिया गया है। १९६०-६१ में कपड़े और सूत के उत्पादन लक्ष्य क्रम से ८५० करोड़ गज और १९५ करोड़ पौड रखे गए है। इस उत्पादन का कितना हिस्सा मिलों और विकेन्द्रित क्षेत्र (कपड़े के लिए हथकरघे और विद्युत करघे और सूत के लिए अम्बर चरखा) के लिए रखा जाए, इसका अभी निश्चय नहीं किया गया। वास्तव में जितने भी तकुवे पहले से लगे हुए है और जितनों को लाइसेंस दिए गए है वे १९५ करोड़ पौड सूत तैयार करने के लिए काफी होगे।

५९. औषधियां:—उपभोग वस्तुओ के क्षेत्र में औषध उद्योग की विशेष रूप से चर्चा की जानी चाहिए। जहां तक सिंथेटिक औषधियां, जैसे सैकरीन, क्लोरामीन-टी, एसिटिल सैलीसिलिक अम्ल और शुल्बनी, (सल्फा) औषधियों का सम्बन्ध है, उत्पादन बढ़ाने की दिशा में प्रयत्न किया ही जाएगा। साथ ही उपान्तिम (पेनअल्टिमेट) उत्पादों पर आधारित वर्तमान क्रियाओं के स्थान पर बुनियादी प्राथमिक आरगैनिक रसायन रसायनों और माध्यम उत्पादों के आधार पर विकास कार्य भी किया जाएगा। रंगाई पदार्थ माध्यमों के निर्माण को विकसित करने के लिए जो प्रयत्न किए गए है, उनसे भी इस उद्योग को काफी लाभ पहुंचने की आशा है, क्योकि इससे उसे कई तरह का कच्चा माल मिल जाएगा। विटामिनो की दिशा में देशी कच्चे माल जैसे निम्बुघास तेल से विटामिन ए के उत्पादन की सम्भावना पर अभी परीक्षा की जा रही है। जहां तक कीटाणुनाशको का सवाल है, सार्वजनिक क्षेत्र मे आयोजित विकास के अलावा निजी क्षेत्र मे पेनीसिलीन का उत्पादन सुदृढ़ करने की दिशा मे जो प्रयत्न किए गए है उसके भी अच्छे परिणाम होंगे। इसके अलावा आशा है कि इस क्षेत्र की वर्तमान इकाइयों से आज मुख्य रूप से जिन क्रियाओं को वास्तविक निर्माण का रूप दिया जा रहा है, उस दिशा में वे काफी प्रगति करेंगी। औषध उद्योग के अन्तर्गत अनेक उत्पाद आते है। लेकिन विकास के लक्ष्यों में कुछ अधिक आवश्यक उत्पादन भी शामिल हैं। आशा है कि औषध उद्योग में निजी क्षेत्र से लगभग ३ करोड़ रुपया लगाया जाएगा।

दूसरी योजना में औद्योगिक प्रगति का मूल्यांकन

६०. सामर्थ्य और उत्पादन के विकास के स्तर:—सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के जिन कतिपय प्रमुख लक्ष्यों का विवरण नीचे दिया जा रहा है, उससे यह पता चलता है कि दूसरी योजना के लिए अत्यधिक श्रम की आवश्यकता होगी और उद्योग की दिशा में बहुमुखी प्रयत्न करना होगा।

कुछ प्रमुख उद्योगों के राष्ट्रीय लक्ष्य

उद्योग	इकाई	१९५५-५६ क्षमता (अनुमानित)	१९५५-५६ उत्पादन (अनुमानित)	१९६०-६१ (लक्ष्य) क्षमता	१९६०-६१ (लक्ष्य) उत्पादन
१. लोहा और इस्पात—					
(क) तैयार इस्पात (मुख्य उत्पादक)	’००० टन	१,३००	१,३००	४,६८०	४,३००
(ख) ढलाई कारखानों के लिए कच्चा लोहा	’००० टन	३८०	३८०	९८०	७५०
२. तामीरी ढांचा सामान	टन	२,२६,०००	१,८०,०००	५,००,०००	५,००,०००
३. भारी ढलाई व फोर्जिंग दूकानें—					
(क) इस्पात ढलाईखाने	टन	.	..	१५,०००	१५,०००
(ख) फोर्जिंग दूकानें	टन	..		१२,०००	१२,०००
(ग) लौह सांचों के ढलाईखाने	टन	..		१०,०००	१०,०००
४. फेरो मैंगनीज़	टन	२८,०००	अप्राप्य	१,७१,८००	१,६०,०००
५. अल्यूमीनियम	टन	७,५००	७,५००	३०,०००	२५,०००
६. इंजन	संख्या	१७०	१७५	४००	४००
७. बाइल	संख्या	३८,०००	२५,०००	३८,०००	५७,०००
८. भारी रसायन—					
(क) सल्फ्यूरिक	’००० टन	२४२	१७०	५००	४७०
(ख) सोडा ऐश	टन	९०,०००	८०,०००	२,५३,०००	२,३०,०००*
(ग) कास्टिक सोडा	टन	४४,३००	३६,०००	१,५०,४००	१,३५,४००*
९. खाद —					
(क) नाइट्रोजन (निश्चित नाइट्रोजन)	टन	८५,०००	७७,०००	३,८२,०००	२,९०,०००
(ख) फास्फेटिक	टन	३५,०००	२०,०००	१,२०,०००	१,२०,०००
१०. जहाज निर्माण	जी-आर-टी	...	५०,००० (५१-५६)	...	९०,००० (५६-६१)
११. सीमेंट	’००० टन	४,९३०	४,२८०	१६,०००	१३,०००
१२. उष्मसह ईंटें	टन	४,४४,०००	२,८०,०००	१०,००,०००	८,००,०००
१३. पेट्रोलियम की सफाई	लाख टन	३६·२५	३६	४३·१	४३

*इनसे सकल उत्पादन का बोध होता है। चूंकि कुछ उत्पादन का उपयोग कारखानों में ही अन्य उत्पादन के लिए होगा, इसलिए बिक्री के लिए १,८५,००० टन सोडा ऐश और १,०६,६०० टन कास्टिक सोडा उपलब्ध होगा।

उद्योग	इकाई	१९५५-५६ क्षमता (अनुमानित)	१९५५-५६ उत्पादन (अनुमानित)	१९६०-६१ (लक्ष्य) क्षमता	१९६०-६१ (लक्ष्य) उत्पादन
१४. कागज और गत्ता	'००० टन	२१०	२००	४५०	३५०
१५. अखबारी कागज	टन	३०,०००	४,२००	६०,०००	६०,०००
१६. रेयन—					
(क) रेयन फिलामेंट	लाख पौंड	२२०	१५०	६८०	६८०
(ख) स्टैपल तन्तु	लाख पौंड	१६०	१३२	३२०	३२०
(ग) रासायनिक गूदा	'००० टन	.	.	३०.०	३०.०
१७. डीजल इंजन (५० हा० पा० से कम)	हा०पा०	२,००,०००	१,००,०००	२,२०,०००	२,०५,०००
१८. बाइसिकिलें	००० संख्या	७६०	५५०	८९५	१,०००*
१९. बिजली के मोटर (२०० हा० पा० से कम)	हा०पा०	२,९२,०००	२,४०,०००	६,००,०००	६,००,०००
२०. ए-सी-एस-आर कंडक्टर्स	टन	१५,३७०	९,०००	२०,४००	१८,०००

६१. संयंत्र सामर्थ्य और उत्पादन की लागत.—चूंकि १९५० से सयत्रो और मशीनों आदि के दाम बहुत ऊंचे रहे हैं, इसलिए भिन्न-भिन्न उद्योगों के उत्पादन की लागत उचित रूप से घटाने का एक मात्र यही ढंग हो सकता है कि उत्पादन खर्च को और विस्तृत उत्पादन पर फैला दिया जाए। दूसरे शब्दों में, संयंत्र सामर्थ्य का आयोजन अब की अपेक्षा अधिक बड़े पैमाने पर करना पड़ेगा। भिन्न-भिन्न उद्योगों के लिए जिन यूनिटों के स्थापित किए जाने के प्रस्ताव हैं, उनके ब्योरेवार अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि वे इतने अधिक होंगे कि पूंजीकरण की जो अधिक लागत हो वह बंट जाए। इस्पात संयंत्रों की फुंकवा भट्ठियों और कोक भट्ठियों के आकार १,००० टन और उससे ऊपर की दैनिक सामर्थ्य वाले है। नए सल्फ्यूरिक अम्ल संयंत्रों की दैनिक सामर्थ्य २५ टन और उससे ऊपर की होगी। एक नए सयंत्र की दैनिक सामर्थ्य १५० टन होगी, जबकि अब तक जितने भी संयंत्र लगाए गए है उनमें से अधिकांश की दैनिक सामर्थ्य १० टन ही रही है और किसी भी संयंत्र की दैनिक सामर्थ्य ७५ टन से अधिक नहीं रही है। इसी प्रकार भारी रसायन (क्षार) विकास परिषद ने सिफारिश की है कि इलेक्ट्रोलिटिक कास्टिक सोडे के छोटे से छोटे आकार के ऐसे संयंत्र लगाए जाएं जिनकी दैनिक सामर्थ्य २० टन हो। आशा है कि कागज मिलों के लिए दूसरी योजना के अन्त तक उनकी सामर्थ्य कम से कम २५ से ५० टन प्रतिदिन की हो जाएगी। सीमेंट संयंत्रों की कम से कम सामर्थ्य सामान्य रूप से २ लाख टन वार्षिक होगी। इस उद्योग में वितरण के खर्चे में किफायत इस तरह की जाएगी कि जहां भी संभव हो माल को बड़ी मात्रा में लाने-ले जाने की नीति ग्रहण की जाए। इस काम को और अधिक आसान बनाने के लिए रेल योजना में उन टैंक डिब्बों की संख्या विशेषकर उस प्रकार के

*आशा है कि विकेन्द्रित क्षेत्र में २,५०,००० बाइसिकिलों का उत्पादन होगा और इस प्रकार कुल मिलाकर १२,५०,००० बाइसिकिलों का उत्पादन होगा।

डिब्बों की जो क्लोरीन और अमोनिया के परिवहन के लिए आवश्यक है, बढ़ाने की व्यवस्था की गई है ।

६२. टेकनोलौजिकल प्रगति:—नए लगाए जाने वाले प्रस्तावित संयंत्रो में नवीनतर टेक्नीकों के प्रयोग किए जाने की दिशा में काफी प्रगति होगी । इस्पात विस्तार कार्यक्रमो के अधीन जिन नई टेक्नीकों और डिजाइनों के प्रस्ताव है, उनकी चर्चा पहले की जा चुकी है । दुर्गापुर कोक भट्ठी संयंत्र में कोक भट्ठी गैसों से गंधक का निकाला जाना, टिस्को कारखाने में प्रयुक्त सल्फ्यूरिक अम्ल के स्थान पर बचे हुए मार्जक (पिकलिंग) द्रव का प्रयोग करके कोक भट्ठी गैसों से अमोनियम सल्फेट, और अन्य उप-उत्पादों का निकाला जाना, ये दोनों उप-उत्पाद निष्कासन क्रियाओं के क्षेत्र में आधुनिक टेक्नीकों का विकास ही सिद्ध होंगे। पिम्परी में कीटाणुनाशक औषधियों के उत्पादन में फर्मेंटेशन टेक्नीकों का उपयोग भी काफी अधिक किया जाएगा ।

६३. दाशमिक प्रणाली और विधायनों तथा उत्पादों का मानकीकरण :—सरकार ने जो क्रमिक रूप से दाशमिक प्रणाली अपनाने का निश्चय किया है उसके अनुसार वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय में एक स्थायी समिति बनाकर कार्रवाई शुरू कर दी गई है । अगर सम्भव हुआ तो इन नए संयंत्रों में ही दाशमिक प्रणाली का प्रयोग किया जाएगा ।

विधायनों और उत्पादों के मानकीकरण के क्षेत्र में यह समझा जाता है कि भारतीय मानक संस्था ने १९५४ मे प्रथम योजना के अन्तर्गत इस्पात मितव्यय का जो कार्यक्रम शुरू किया था वह समाप्त हो जाएगा, जिसके फलस्वरूप इस्पात का उपभोग पर्याप्त मात्रा में वैज्ञानिक ढंग से होने लगेगा । दूसरी योजना मे घरेलू कामों के लिए इस्पात की बहुत-सी चीजों का उत्पादन बड़े पैमाने पर होने लगेगा, इसलिए इस क्षेत्र मे मानकीकरण से देश और विदेश दोनो के बाजारों में संभरणकर्ताओं और खरीदारों के बीच अधिक सूझबूझ और विश्वास उत्पन्न होगा । दूसरी योजना में भारतीय मानक संस्था के लिए ६०·६ लाख रुपए की व्यवस्था की गई है । उत्पादनों के परीक्षण के लिए काफी सुविधाएं होने पर ही मानकों को अमल में लाने में सफलता मिलेगी । पूंजीगत माल और उपभोग वस्तुओं का जहां तक सवाल है, इन सुविधाओ की बदौलत उनके काम सम्बन्धी मूल्याकन विवरण भी तैयार होगे । दूसरी योजना में सरकारी परीक्षणशाला (टेस्ट हाउस) के विकास से इस दिशा में और अधिक सुविधाएं हो जाएंगी । एक शोध केन्द्र खोलने के प्रस्ताव पर भी विचार किया जा रहा है । यह केन्द्र भारी विद्युत सयंत्र और सामान के परीक्षण और विकास के सम्बन्ध मे सुविधाएं प्रदान करेगा ।

कच्चे माल का विकास

६४. दूसरी योजना की अवधि मे संगठित उद्योगों के क्षेत्र में प्राथमिक खनिज और कृषि सम्बन्धी कच्चे माल की खपत काफी बढ़ जाएगी । देश में उपलब्ध खनिजों की स्थिति का विवरण खनिजों के विकास सम्बन्धी अध्याय मे दिया गया है ।

आयात किए गए कुछ खनिजों, जैसे पेट्रोलियम, गंधक और राक फास्फेट की खपत इस प्रकार होगी :—

	१९५५-५६	१९६०-६१
राक फास्फेट (हजार टनों में)	५५	४००
गंधक (हजार टनों में)	७५	२१०
अकृत पेट्रोलियम (लाख टनों में)	३२·३*	३९*

*केवल आयात ।

६५. औद्योगिक कार्यक्रम भी कृषि सम्बन्धी कच्चे माल, जैसे कच्चा जूट, रूई, ईख, तिलहन, लकड़ी, बांस और सबाई घास पर काफी मात्रा मे निर्भर करेंगे। रासायनिक गूदे और अखबारी कागज के उत्पादन के लिए रखे गए लक्ष्यों के अनुसार लकड़ी की मांग बढेगी, परन्तु दियासलाई और प्लाईवुड के अधिक उत्पादन के लिए लकड़ी की जितनी मांग बढेगी वह अपेक्षाकृत कम होगी। तेलों के उत्पादन लक्ष्यों के अनुसार लगभग ३,००,००० टन बिनौला और ८,००,००० टन खली की जरूरत पडेगी, जबकि इनकी वर्तमान खपत का अनुमान क्रमशः १,००,००० और ६०,००० टन है। कागज उद्योग और अखबारी कागज के उत्पादन के विस्तार के कारण बांस और सबाई घास की भी जरूरत पड़ेगी। इस समय यह ठीक-ठीक कहना कि बांस की जरूरत कितनी होगी मुश्किल है क्योंकि सबाई घास, फोक और कुछ अर्ध कठोर काष्ठ जैसे पदार्थ मिल ही सकते हैं। कृषि और खाद्य मंत्रालय द्वारा नियुक्त एक समिति इस बात की खोज-बीन कर रही है कि दूसरी योजना की अवधि में कोशाध्विक (सेल्यूलौसिक) कच्चे पदार्थ कितनी मात्रा में उपलब्ध हो सकेंगे। कपास और ईख की मांगों का अनुमान इस प्रकार है :—

	१९५५-५६	१९६०-६१
कपास (लाख गांठ)	५०	५९
गन्ना (लाख टन)	१६७	२२५

६६. निर्यात लक्ष्य .—कुछ क्षेत्रों में उत्पादन लक्ष्य विदेशी विनिमय मुद्रा कमाने और निर्यात बढाने की दृष्टि से नियत किए गए है। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए निर्मित माल का मानकीकरण, आयात शुल्कों में कटौती द्वारा निर्यातवर्धक नीति का अपनाना और मुख्य उद्योगों के लिए निर्यातवर्धक परिषदों की स्थापना जैसे काम किए जा चुके है। वस्तु-स्थिति को देखते हुए निर्यात के सम्बन्ध मे पक्की और लम्बे अर्से के लिए कोई नीति निश्चित कर सकना कठिन है और परिस्थितियों के अनुरूप ही नीतियां और तरीके अपनाने होगे। १९६०-६१ के लिए मुख्य निर्यात लक्ष्य ये है—

सूती कपड़ा	१०,००० से ११,००० लाख गज
जूट उत्पादन	९,००,००० टन
नकली रेशम का कपड़ा	१ करोड़ गज
बिक्री योग्य इस्पात	२,००,००० से ३,००,००० टन
फेरो मैंगनीज़	१,००,००० टन
बाइसिकिलें (संख्या)	१,५०,०००
बाइसिकिलों के अतिरिक्त इंजीनियरी सामान	मूल्य—३ से ५·० करोड़ रुपए
टाइटेनियम डाई-आक्साइड	१,००० से १,२०० टन
कोक	३०,००० टन
नमक	३,००,००० टन
वनस्पति तेल	२,१४,००० टन
स्टार्च	१०,००० टन
वनस्पति	२०,००० से २५,००० टन

६७. विभिन्न क्षेत्रों में विस्तार :—बुनियादी उद्योगों में प्रगति औद्योगिक विकास का मुख्य संकेत है। पहली योजना में सिन्दरी खाद कारखाना, चित्तरंजन रेल इंजन कारखाना, टाटा लोको इंजन और इंजीनियरी कारखाना, पेट्रोलियम शोधशालाएं और वस्त्र उद्योग संबधी मशीनों के

कारखानों की स्थापना के माध्यम से इस दिशा में कुछ प्रगति की जा चुकी है। दूसरी योजना में उद्योगों पर और अधिक जोर दिया गया है, इसलिए आशा है कि अगले पांच वर्षों में उन्नति और तेजी के साथ होगी। लोहा और इस्पात, मशीन निर्माण और अन्य बुनियादी उद्योगों के विकसित हो जाने से अर्थ-व्यवस्था और पक्की हो जाएगी। मोटे तौर पर इन पांच वर्षों में पूजी और उत्पादक माल के क्षेत्रों में उन्नति होगी, जो कि इन क्षेत्रों में अब तक जितना धन लगाया गया है उसकी अपेक्षा काफी अधिक होगी। नीचे जो विवरण दिया जा रहा है, उससे इस बात का संकेत मिलेगा कि इन पांच वर्षों में औद्योगिक उन्नति का स्वरूप क्या होगा :—

१९५६–६१ के बीच बड़े पैमाने के उद्योगों में लगे हुए प्रत्याशित धन का विभाजन

	करोड़ रु०		
	सार्वजनिक क्षेत्र, रा० औ० वि० निगम क नए विनियोगों सहित	निजी क्षेत्र	योग
उत्पादक माल	४६३	२९६	७५९
औद्योगिक मशीनें और पूजी माल	८४	७२	१५६
उपभोग वस्तुएं	१२	१६७	१७९
	५५९	५३५*	१,०९४

अनुमान है कि दूसरी योजना के अन्त तक औद्योगिक उत्पादन का देशनांक (१९५१=१००) १९५५-५६ के १३० बढ़कर १९४ हो जाएगा। क्षेत्रानुसार उत्पादन के विस्तार पर विचार करने पर १९६०-६१ तक यह आशा की जाती है कि उत्पादक माल का उत्पादन देशनांक जो १९५५-५६ में १३२ था, ७३ प्रतिशत बढ़ जाएगा। इसकी तुलना में फैक्टरियों में तैयार होने वाली उपभोग वस्तुओं के क्षेत्र में जो १९५५-५६ में १२८ था १८ प्रतिशत की वृद्धि होगी।

६८. **उद्योगों का इलाकेवार विकास**.—देश के भिन्न-भिन्न इलाकों के औद्योगिक विकास के बीच एक के बाद एक योजनाओं द्वारा पर्याप्त मात्रा में संतुलन लाना आवश्यक होगा। दूसरी योजना में इस दिशा में शुरुआत हो जाएगी। इसमें जो प्रमुख योजना कार्य शामिल हैं, वे उड़ीसा और मध्य प्रदेश के अपेक्षाकृत कम समुन्नत क्षेत्रों में खोले जाएंगे। उद्योग विस्तार को अधिक से अधिक क्षेत्रों में पहुंचाने के लिए दीर्घकालीन महत्व वाले प्रयत्न शामिल किए गए हैं, यथा छोटे धुंरे वाली फुकवां भट्टियों में कच्चे लोहे के उत्पादन की मार्गदर्शक योजना, जो यदि सफल हो गई तो उससे देश के विभिन्न भागों में पाए जाने वाले निम्न श्रेणी के कोयले के आधार पर लोहा और इस्पात उद्योग का विकास किया जा सकता है। नए क्षेत्रों में किए गए खनिज निक्षेप के सर्वेक्षणो से भी ऐसे ही परिणाम होंगे। दूसरी योजना में यह भी स्पष्ट है कि राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और निजी संस्थाओं में नए सामान और विधायनों में तथा स्थानापन्न वस्तुओं के विकास के लिए खोज कार्य पर और अधिक परिश्रम किया जाए, हालांकि इन दिनों भिन्न-भिन्न इलाकों में पाई जाने वाली असंतुलित वृद्धि की समस्या का कोई हल दूसरी योजना में नही है। फिर भी यह समस्या विचाराधीन है और खोज कार्य, खनिज सर्वेक्षण और उत्पादन के विकेन्द्रीकरण पर विशेष-कर कृषि विधायनों के सम्बन्ध में जोर देकर विकास की सही प्रवृत्तिया उत्पन्न की जा रही है।

*कुछ योजनाओं के संबंध में जिनमें कि राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के साधन लगे हैं, अभी यह निर्णय होना है कि वे सार्वजनिक क्षत्र में होंगे या निजी क्षेत्र में।

परिशिष्ट १

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

(क) सार्वजनिक क्षेत्र के औद्योगिक योजना कार्य (केन्द्रीय सरकार के रा० औ० वि० निगम की योजनाओं के अतिरिक्त)

क्रम संख्या	योजना का नाम	उत्तरदायी मंत्रालय	मार्च १९५६ के अन्त में			द्वितीय पंचवर्षीय योजना (१९६०-६१)		
			विनियोग (करोड़ रु० में)	सामर्थ्य (१९५५-५६)	अनुमानित उत्पादन (१९५५-५६)	विनियोग (करोड़ रु० मे)	सामर्थ्य (१९६०-६१)	अनुमानित उत्पादन (१९६०-६१)
१	२	३	४	५	६	७	८	९
१.	तीन इस्पात संयंत्र (राउरकेला, भिलाई और दुर्गापुर)	लोहा और इस्पात	७.७५	—	—	३५.०	फाउंड्रियों के लिए तैयार इस्पात २३ लाख टन और कच्चा लोहा ६,८०,००० टन	फाउंड्रियों के लिए २० लाख टन इस्पात और ४,५०,००० टन कच्चा लोहा
२.	दक्षिण अर्काट लिगनाइट योजना कार्य	उत्पादन	०.५	—	—	५२.० (अ)	३५ लाख टन लिगनाइट ७,१४,००० टन लिगनाइट चूर्ण ढोके और २,११,००० कि० वा० बिजली, ७०,००० टन नाइट्रोजन	३५ लाख टन लिगनाइट ७,१४,००० टन लिगनाइट चूर्ण ढोके और २११,००० कि० वा० बिजली, २०,००० टन नाइट्रोजन (ब)

३	सिन्दरी खाद कारखाना	उत्पादन	२८	७०,००० टन नाइट्रोजन	६६,००० टन नाइट्रोजन	७	१,१७,००० टन नाइट्रोजन	१,१७,००० टन नाइट्रोजन
४.	नंगल खाद और भारी पानी कारखाना	उत्पादन	—	—	—	२२	७०,००० टन नाइट्रोजन	४०,००० टन नाइट्रोजन (स)
५.	हिन्दुस्तान जहाज कारखाना	उत्पादन	९.० (१९५१-५६)	—	५०,००० जी० आर० टी० (१९५१-५६)	९.८	—	७५,०००-९०,००० जी० आर० टी० (१९५६–६१)
६.	राउरकेला खाद कारखाना	उत्पादन	—	—	—	८	८०,००० टन नाइट्रोजन	७०,००० टन नाइट्रोजन (द)
७.	भारी विद्युत् संयत्र	उत्पादन	०.२	—	—	२०.० (य)	मदें अगले पृष्ठ पर दी है	उत्पादन १९६० में शुरू होगा
८.	हिन्दुस्तान मशीनी औजार	उत्पादन	४.४	अनुपलब्ध	०.२५ करोड़ की खरादें और पुर्जे	२.०	४०० खरादें, पिसाई और भू-छेदन मशीनें	१.५ करोड़ रु० का साज-सामान
९.	डी० डी० टी० कारखाने	उत्पादन	०.५	७०० टन	२८४ टन	१.०	२,८०० टन	२,५०० टन
१०.	हिन्दुस्तान एंटी-बयोटिक्स	उत्पादन	२.१	४८ लाख मेगा यूनिट	६६.४ लाख मेगा यूनिट	१.०	२ करोड़ ४० लाख मेगा यूनिट और १५,००० से २०,००० कि० ग्रा० स्ट्रेप्टोमाइसीन	२ करोड़ ४० लाख मेगा यूनिट और १५,००० कि० ग्रा० स्ट्रेप्टोमाइ-सीन

१	२	३	४	५	६	७	८	९
११.	हिन्दुस्तान केबल्स	उत्पादन	१.६	४७० मील लम्बे केबल (एक शिफट)	५२५ मील लम्बे केबल	०.५	१,००० मील लम्बे केबल और ३०० मील कोएक्सियल केबल	१,००० मील लम्बे केबल और ३०० मील लम्बे कोएक्सियल केबल
१२.	राष्ट्रीय औजार फैक्टरी (चश्मे के शीशों की योजना भी शामिल है)	उत्पादन	०.६	४० लाख रु० मूल्य के औजार	१४.२ लाख रु० मल्य के औजार	०.६५	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
१३.	नमक विकास	उत्पादन	०.३	—	८४६ लाख मन (सार्वजनिक और निजी क्षेत्र)	२.०	—	१० करोड़ मन (सार्वजनिक और निजी क्षेत्र)
१४.	चित्तरंजन रेल इंजन कारखाना	रेल	१४.६	१२० रेल इंजन	१२५ रेल इंजन	५.०	३०० रेल इंजन	३०० रेल इंजन
१५.	इंटेग्रल डिब्बा फैक्टरी	रेल	५.२	—	२० डिब्बे		३५० डिब्बे	३५० डिब्बे
१६.	नई एम० जी० डिब्बा फैक्टरी	रेल	कुछ नहीं	—	कुछ नहीं	१०.०	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
१७.	फालतू पुर्जों के इंजीनियरी कारखाने	रेल	कुछ नहीं	—	कुछ नहीं	७.०	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
	भारतीय टेलीफोन उद्योग	संचार	४.१ (फ)	—	५०,००० टेलीफोन और ३५,००० संचार लाइनें।	०.५	—	६०,००० टेलीफोन और ४०,००० संचार लाइनें,

१९.	टेलीप्रिंटर फैक्टरी	संचार	—	—	—	०.७५	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध
२०.	जमानती कागज मिल	वित्त	—	—	—	२.५	१,५०० टन	१,५०० टन
		योग	७५.८		योग	५०१.७		

(अ) योजना कार्य की समाप्ति पर कुल लागत अनुमान से ६८.८५ करोड रु० आएगी ।

(ब) आशा है कि पूरा उत्पादन दिसम्बर १९६० से शुरू होगा ।

(स) आशा है कि पूरा उत्पादन १९५९ के अन्त तक होने लगेगा ।

(द) आशा है कि पूरा उत्पादन १९५९ के अन्त तक होने लगेगा । योजना कार्य की कुल लागत अनुमान से १६.० करोड़ रु० होगी और इस समय जो धन रखा गया है उचित मौके पर उस पर पुनर्विचार किया जाएगा ।

(य) योजना कार्य की समाप्ति पर कुल लागत अनुमान से २५ करोड़ रु० आएगी ।

(फ) इसमें मैसूर सरकार द्वारा विनियोजित ३१ लाख रु० शामिल नहीं है ।

प्रस्तावित भारी विद्युत् सामान फैक्टरी में तैयार की जाने वाली मदों की सूची

१. हाइड्रालिक टर्बाइन और जैनरेटर	१,७५,००० कि० वा० प्रतिवर्ष
२. डीजल सेटों के जैनरेटर	३४,००० कि० वा० प्रतिवर्ष
३. ट्रांसफार्मर ३३ कि० वा० और बड़े	५,००,००० के० वी० ए० प्रतिवर्ष
४. धारा और विभव ट्रांसफार्मर	उपयुक्त संख्या
५. अचल धारा नियंत्रक (स्टेटिक कैपेसिटर्स)	५४,००० के० वी० ए० प्रतिवर्ष
६. ए० सी० सर्किट ब्रेकर्स	११ के० वी० और अधिक
७. डी० सी० सर्किट ब्रेकर्स	उपयुक्त संख्या
८. स्विच बोर्ड और नियन्त्रक डेस्क	" "

९. डी० सी० मशीनें जैनरेटर और एक्साइटर वैल्डिंग जैनरेटर मोटर	७,००० कि० वा० प्रतिवर्ष वांछित यूनिटों की संख्या २,००० प्रतिवर्ष
१०. ट्रैक्शन मोटर, उपकरण और सामान	७५,०००० प्रतिवर्ष
११. ए० सी० औद्योगिक मोटर, २०० हा० पा० तथा अधिक की रेटिंग	५०,००० प्रतिवर्ष
१२. औद्योगिक मोटर नियन्त्रण	राज्य फैक्टरी के लिए मोटर रेटिंगके सीमा क्षेत्र के भीतर ही

(ख) सार्वजनिक क्षेत्र के औद्योगिक योजना कार्य (राज्य सरकारों की प्रमुख योजनाएं)

राज्य	योजना कार्य
मैसूर	१. मैसूर लोहा और इस्पात कारखाने का विस्तार २. सरकारी पोर्सिलेन फैक्टरी का विस्तार ३. मैसूर औजार फैक्टरी का विस्तार ४. सरकारी बिजली फैक्टरी का विस्तार ५. सरकारी साबुन फैक्टरी का विस्तार ६. केन्द्रीय औद्योगिक कारखाना
पश्चिम बगाल	दुर्गापुर कोक भट्ठी कारखाना
असम	१. कपड़ा मिल २. कता रेशम मिल ३. चीनी मिल

उत्तर प्रदेश	१. उ० प्र० गवर्नमेंट सीमेंट फैक्टरी का विस्तार
	२. उ० प्र० गवर्नमेंट प्रिसीजन इन्स्ट्रूमेंट फैक्टरी का विस्तार
बिहार	१. बिहार सुपरफास्फेट फैक्टरी
	२. कता रेशम मिल का विस्तार
	३. पोर्सिलेन फैक्टरी
हैदराबाद	१. प्राग औजार फैक्टरी का विस्तार
	२. हैदराबाद चमड़ा कारखाना
तिरुवाकुर-कोचीन	१. तिरुवाकुर रबड़ कारखाने का विस्तार
	२. चीनी मिट्टी योजना का विस्तार
	३. तिरुवाकुर खनिज का विस्तार
	४. सख्त बालुई ईंट फैक्टरी
आन्ध्र	१ श्री वेंकटेश्वर बोर्ड मिल का विस्तार
	२. आन्ध्र कागज़ मिल का विस्तार
	३. मृच्छिल्प (सिरमिक) फैक्टरी का विस्तार
मध्य भारत	१. सूत कताई मिल
	२. डिस्टिलरी
	३. घोलक निस्सरण फैक्टरी
	४. ग्वालियर चमड़ा और चमड़ा कमाई फैक्टरी
	५. ग्वालियर पौटरीज़ का विकास

राज्य	योजना कार्य
जम्म और कश्मीर	१. रेशम कताई संयत्र
	२. सरकारी ऊन फैक्टरी का विस्तार
	३. सरकारी औषध फैक्टरी का विस्तार
	४. रेशम बुनाई संयंत्र का विस्तार
कुर्ग	१. चन्दन तेल फैक्टरी
	२. काष्ठ जल-संशोषणालय (टिम्बर सीजनिंग किल्न)
	३. काष्ठ क्रव्यप संयंत्र (क्रेसोटिंग प्लांट)
पांडिचेरी	१ चीनी मिल
	२ कताई मिल

इसके अलावा राज्यों की योजनाओं में सहकारी चीनी फैक्टरियों, राज्य वित्त निगम, खनिज योजनाओं की स्थापना तथा औद्योगिक योजनाओं की सहायता के लिए भी व्यवस्था की गई है। द्वितीय योजना में इन योजनाओं के लिए कुल ३२ करोड़ रुपए की व्यवस्था है जिसमें से २३ करोड़ रुपए राज्यों की योजनाओं में और ९ करोड़ रुपए केन्द्रीय योजना में दिखाए गए है।

परिशिष्ट २

दूसरी योजना के अन्तर्गत निजी क्षेत्र और राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के अधीन औद्योगिक विकास

उद्योग	यूनिट	३१ मार्च १९५६ को वार्षिक सामर्थ्य का अनुमान	१९५५-५६ में अनुमानित उत्पादन	१९६०-६१ की अनुमानित जरूरतें	१९६०-६१ के लक्ष्य वार्षिक सामर्थ्य	१९६०-६१ के लक्ष्य उत्पादन	१९५६-६१ में नियत पूंजी विनियोग करोड़ रु० में	विशेष कथन
१	२	३	४	५	६	७	८	९
१. लोहा और इस्पात (अ) निजी क्षेत्र में प्रमुख उत्पादकों द्वारा विक्रय इस्पात	लाख टन	१२.५	१२.५	४५.०	२३.०	२३.०	११५	
(ब) फाउंड्रियों के लिए कच्चा लोहा	टन	३,८०,०००	३,८०,०००	७,५०,०००	—	३,००,०००	—	
२. इमारती ढांचा लोहा सामान का निर्माण (क)	टन	२,२६,०००	१,८०,०००	५,००,०००	५,००,०००	५,००,०००	२०	रा० औ० वि० निगम भी भारी इस्पाती सामान की सामर्थ्य का विकास करेगा।
३. भारी फाउंड्री तथा गढ़ाई कारखाने							१२	

(क) इसमें वैगन निर्माताओं की सामर्थ्य और उत्पादन भी सम्मिलित है।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
(अ) स्वतन्त्र इस्पात फाउंड्रियां	टन	—	—	१६,०००	१५,०००	१५,०००	—	रा० औ० वि० निगम निजी क्षेत्र मे विकसित करेगा ।
(ब) गढ़ाई कारखाने	टन	—	—	१२,०००	१२,०००	१२,०००		
(स) ढलवां लोहे की फाउंड्रियां	टन	—	—	१०,०००	१०,०००	१०,०००		
४. फैरो मैंगनीज	टन	२८,०००	अनुपलब्ध	१,६०,०००	१,७१,८००	१,६०,०००	६·५	
५. अल्यूमीनियम	टन	७,५००	७,५००	३०,०००	३०,०००	२५,००० (ख)	२२·०	नई सामर्थ्य के कुछ भाग का विकास रा० औ० वि० निगम करेगा ।
६. गाड़ियाँ, मोटर साइकिलें और सहायक उद्योग							१३·०	
(अ) गाड़ियाँ	संख्या	३८,०००	२५,०००	५७,०००	३८,०००	५७,०००		८० प्रतिशत भारतीय पुर्जे ।
(ब) मोटर साइकिले और स्कूटर	सख्या	११,०००	१,०००	११,०००	११,०००	११,०००		
७. रेल के डिब्बे आदि और अन्य साज-सामान							५.०	
रेल इंजन	संख्या	५०	५०	—	१००	१००		

८. औद्योगिक मशीनें आदि (ग)					
(अ) सूती कपड़ा	मूल्य (करोड़ रु० में)	४.०	१७.० (च)	४.५	(च) अस्थायी
(ब) जूट वस्त्र		०.०६ (१९५४)	२.५	१.३	
(स) सीमेंट	"	०.५६ (१९५४)	२.०	१.०	
(द) चीनी	"	०.२८ (१९५४)	२.५	२.०	
(य) कागज	"	नगण्य	४.०	१.३	
(फ) छपाई	"	नगण्य	२.०	१.५	
(ज) अन्य (मशीन औजार सहित भारी मशीनें आदि)				१०.०	

(ख) उत्पादन कम इस आधार पर कि हीराकुड में अतिरिक्त १०,००० टन क्षमता की या नई १०,००० टन क्षमता की एक यूनिट का उत्पादन १९६० के मध्य से आरम्भ होगा और १९६०-६१ में यह यूनिट केवल ६ माह के लिए पूर्ण क्षमता के अनुसार काम करेगी।

(ग) भारी मशीनों की कुछ वस्तुओं का विकास राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम के अंतर्गत करने का विचार है।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
१५. रंगाई पदार्थ और माध्यम रंगाई पदार्थ।	लाख पौंड	६६	४०	३२०	२७०	२२०	८.७	आंशिक रूप से रा० औ० वि० निगम के अधीन।
१६. पैट्रोलियम शोध	लाख टन साफ करके	३६.२५	३६	—	४३.१	४३	१०.०	
१७. कागज और गत्ता	टन	२,१०,०००	२,००,०००	३,५०,०००	४,५०,०००	३,५०,०००	४४.०	
१८. अखबारी कागज	टन	कुछ नहीं	कुछ नहीं	१,२०,०००	३०,०००	३०,०००	६ ०	विकास के लिए दो फैक्टरिया, जिनमे से आशा है कि एक पूरा उत्पादन देने लगेगी और दूसरी लगभग आधी तैयार हो जाएगी।
१९. रेयन और स्टेपल तंतु							२४.०	आंशिक रूप से रा० औ० वि० निगम के अधीन।
(अ) ससलसा रेशा और एसीटेट रेशा	लाख पौंड	२२०	१५०	८००	६८०	६८०		

(ब) स्टैपल तंतु	लाख पौंड	१६०	१३२	३५० से ४००	३२०	३२०		
(स) रासायनिक गूदा	टन	कुछ नहीं	कुछ नहीं	३०,०००	३०,०००	३०,०००	८.०	आंशिक रूप से रा० औ० वि० निगम के अधीन
२०. सीमेंट	लाख टन	४६(ढ)	४३(ण)	१३०	१६०(त)	१३०(ण)	८०.०	(ढ) सरकारी क्षेत्र मे ३,००,००० टन
२१. ऊष्मसह ईंटें	टन	४,४४,०००	२,८०,०००	८,६०,०००	१०,००,०००	८,००,०००	६.०	(ण) सरकारी क्षेत्र में ५,००,००० टन कुल उत्पादन
२२. जूट की चीजें	टन	१२,००,०००	१०,४८,०००	११,००,०००	१२,००,०००	११,००,०००		(त) १.५ नई यूनिट असम में बनेगी।
२३. रबड़ की चीजें							४.०	
(अ) गाड़ियों के टायर	संख्या हज़ार में	६५०	६१०	१,४२०	१,४५०	१,४२०		
(ब) साइकिल टायर	,,	६,०००	५,७५०	११,८००	११,८००	११,८००		
२४. सूती कपड़ा							३०.०	
(अ) सूत	लाख पौंड	१७,५०० (थ)	१६,३०० (१९५५)	१६,५००		१६,५००		(थ) जितना जनवरी १९५५ में था।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
(ब) मिल का कपड़ा	लाख गज	४६,२००(थ)	५१,००० (१९५५)	५०,००० अथवा ५५,०००(द)		५०,००० अथवा ५५,०००		(द) सब किस्मों की जरूरतें जिसमें ८५० करोड़ गज निर्यात के लिए भी शामिल है।
२५. चीनी	हजार टन	१,७४०	१,६७०	२,२५०	२,५००	२,२५०	५०.०	
२६. औषधियां							३.०	
(अ) पैनीसिलीन	लाख मैगा यूनिट	१५०	६६	४००	४०० (ध)	४०० (ध)		(ध) ये संख्याएं सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की सयुक्त सामर्थ्य और उत्पादन प्रकट करती हैं।
(ब) स्ट्रेप्टोमाइसीन	कि० ग्रा०	—	—	१८,०००	१८,००० (ध)	१८,००० (ध)		
(स) सल्फा औषधियां	,,	४,५०,०००	अनुपलब्ध	४,५०,०००	४,५०,०००	४,५०,०००		
(द) पी०ए०एस०	,,	३६,३२०	अनुपलब्ध	१,१३,३००	१,१३,३००	१,१३,३००		
(य) बैन्जीन हक्सालोराइड	टन	२,०००	अनुपलब्ध	२,५००	२,५००	२,५००		
२७. ऊनी कपड़ा								
(अ) ऊनी टाप	लाख पौंड	कुछ नहीं	कुछ नहीं	१८०	९०	९०	२.३५	

(ब) ऊनी और वस्टैंड धागा	लाख पौंड	३८०	२१६	२७०	४५०	२७०		
(स) ऊनी कपड़ा	लाख गज	४८०	१४६	२००	५००	२००		(न) २८ से ४२ तक की मदों के अधीन समस्त समूह के लिए अनुमानित विनियोग।
							१५.० (न)	
२८. बाइसिकलें	संख्या (हजार में)	७६०	५५०	१,२५०	८६५	१,२५०		
२९. डीजल इंजन	हा० पा०	२,००,०००	१,००,०००	२,०५,०००	२,२०,०००	२,०५,०००		
३०. विद्युत चालित पम्प	संख्या	६७,४९२	४०,०००	८६,०००	८६,०००	८६,०००		
३१. सिलाई मशीनें	संख्या	४६,५००	१,१०,०००	३,००,०००	८५,२००	२,२०,०००	(प)	(प) संगठित क्षेत्र द्वारा
३२. लालटेनें	संख्या (लाख में)	५५	५९	६०	५५	६०		
३३. ट्रांसफार्मर (३३ के० वी० और कम)	के०वी०ए०	६,७५,००० (फ)	५,४०,००० (फ)	१३,६०,०००	१३,१०,०००	१३,६०,०००	(ब)	(फ) बंगलौर की सरकारी विद्युत फैक्टरी को मिला कर।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
३४. बिजली के मोटर (२०० हा० पा० और कम)	हा० पा०	२,९२,०००	२,४०,०००	६,००,०००	६,००,०००	६,००,०००		(ब) सरकारी क्षेत्र का उत्पादन मिलाकर
३५. शुष्क बैटरियां	संख्या (लाख में)	२,२५०	१,६६०	२,२५०	२,२५०	२,२५०		
३६. स्टोरेज बैटरियां	संख्या	३,०७,५००	२,२५,०००	४,२५,०००	३,५०,०००	३,५०,००० (भ)		(भ) विकेन्द्रित क्षेत्र से ७५,००० अतिरिक्त
३७. बिजली के लैम्प जी० एल० एस०	संख्या (लाख में)	३१०	२७०	५००	५००	५००		
३८. रेडियो रिसीवर	संख्या	१,६२,०००	८०,०००	२,००,०००	१,६२,०००	२,००,०००		
३९. केबल और तार ए० सी० एस० आर० संचालक	टन	१५,३७०	९,०००	१८,०००	२०,४००	१८,०००		
४०. बिजली के पंखे	संख्या	३,७७,७००	२,७५,०००	६,००,०००	६,००,०००	६,००,०००		
४१. लेपित घर्षक	रिम	१,५०,०००	८०,०००	१,५०,०००	२,५५,०००	१,५०,०००		
४२. ग्राइंडिंग पहिए	टन	१,५२०	८५०	१,५००	२,११०	१,५००		

४३. कांच और कांच का सामान (चूड़ियों के अलावा)	टन	२,९१,०००	२५,०००	२,००,०००	३,३४,०००	२,००,०००	
४४. प्लास्टिक : सिथेटिक मोल्डिंग चूर्ण	टन	१,१८०	७२५	११,६००	११,४००	१०,६००	४.०
४५. पावर अल्कोहल और औद्योगिक अल्कोहल	लाख गैलन	२७०	१८०	३००	३६०	१८० पावर अल्कोहल १२० औद्योगिक अल्कोहल	१.०
४६. रोगन और वार्निश							
(अ) तैलीय रोगन वार्निश और इनेमेल	टन	६५,०००	३६,०००	६०,०००	६५,०००	६०,०००	
(ब) नाइट्रोकालिलीय लैकर	गैलन	८,००,०००	३,००,०००	५,००,०००	८,००,०००	५,००,०००	
४७. प्लाईवुड	लाख वर्ग फुट	१,५०६	१,१००	१,००० (केवल चाय पेटियां)	१,६७५	१,५०० (व्यापारिक प्लाईवुड को मिलाकर)	१.०

१	२	३	४	५	६	७	८	९
४८. स्टार्च और ग्लूकोज								
(अ) स्टार्च	टन	७७,६००	४७,०००	१,०००	१,००,०००	१,००,०००		
(ब) ग्लूकोज द्रव	टन	६,१००	१,०५०	५,०००	१३,०००	५,०००		
(स) ग्लूकोज चूर्ण	टन	२,६००	नगण्य	२,८००	७,७००	२,८००		
४९. वनस्पति तेल							५.०	
(अ) खली से घोलक निस्सरण	टन	८२,५०० (म)	५,०००	—	८,००,००० (म)	६४,०००		(म) जितनी खली तैयार हुई
(ब) बिनौले का तेल	टन	अनुपलब्ध	१०,०००	—	३०,०००	३०,०००		
सब साधनों का जोड़	लाख टन	अनुपलब्ध	१८	२१	—	२१		
५०. वनस्पति	टन	४,४५,०००	२,७०,०००	४,००,०००	४,४५,०००	४,००,०००		
*५१. साबुन	टन	३,४०,०००	२,००,०००	३,००,०००	३,५७,०००	३,००,०००		*विकेन्द्रित क्षेत्र को मिलाकर

५२. दियासलाई	लाख ग्रुस बक्से	३५३	३२०	३५०	३५३	३५० (य)		(य) विकेन्द्रित क्षेत्र को मिलाकर
५३. चमड़े की कमाई और जूते (सिर्फ संगठित क्षेत्र)								
(अ) जूते (पश्चिमी ढंग के)	लाख जोड़े	५९·७	३२	१,०२० (र)	५९·७	५९·७		(र) चमड़े के जूतों की कुल आवश्यकता
(ब) जूते (भारतीय ढंग के)	लाख जोड़े	—	२३	—	—	२३		
५४. नमक	हजार मन	—	८५,००० (र)	१,००,०००	—	१,००,००० (ल)		(ल) सरकारी क्षेत्र के उत्पादन को मिलाकर
५५. बिस्कुट और मिठाई								
(अ) बिस्कुट	टन	४०,०००	११,५००	१५,०००	४०,०००	१५,०००		
(ब) मिठाई	टन	४०,०००	८,०००	१०,०००	४०,०००	१०,०००		
५६. विविध उद्योग							११.५२	
						जोड़	५७०.१७	

अध्याय २०

ग्रामोद्योग और लघु उद्योग

ग्राम और लघु उद्योग अपने विभिन्न पहलुओ मे आर्थिक व्यवस्था और राष्ट्रीय आयोजन की व्यवस्था के अभिन्न तथा निरन्तर रहने वाले अग है। देहाती क्षेत्रों में लघु उद्योगो के विस्तार का पहला उद्देश्य है रोजगार के अवसर, आमदनी और रहन-सहन का स्तर बढ़ाना तथा ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को संतुलित एवं सगठित रूप देना। इस दृष्टि से पीढ़ियों से चले आते हुए उद्योगो पर अवश्य ही तुरन्त ध्यान देना पड़ेगा। ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में परिवर्तन होने के साथ ही विभिन्न क्षेत्रो मे टेकनीकल परिवर्तन भी होंगे और उसी के साथ देहातों में औद्योगीकरण का स्वरूप भी बदलेगा। तब वह आरम्भिक जरूरतों को पूरा करने वाले शिल्पों के स्तर से उठकर लघु उद्योगों के स्तर तक पहुंचेगा। लघु उद्योग दिन पर दिन उन्नतिशील टेकनीकों और अपेक्षाकृत अधिक समुन्नत प्रकार की आवश्यकताओ की पूर्ति पर ही आधारित होगे। ये विकास दीर्घकाल मे करने होंगे और इसी बीच ग्राम अर्थ-व्यवस्था की वृद्धि और स्थायित्व के लिए यह भी आवश्यक होगा कि गाव के मौजूदा उद्योगो को कानून और सगठन बनाकर सहारा तथा सहायता दी जाए। इस प्रकार ग्रामीण और लघु उद्योगों के क्षेत्र को अर्थ-व्यवस्था के स्थायी अग के रूप मे न समझकर एक प्रगतिशील और सुयोग्य विकेन्द्रित क्षेत्र के रूप में लेना चाहिए, जिसका एक ओर कृषि से और दूसरी ओर बडे पैमाने के उद्योग से घनिष्ठ सम्बन्ध है। ग्रामीण और औद्योगिक विकास कार्यक्रमो में ग्रामोद्योगों और लघु उद्योगों को जिन कारणों से प्राथमिकता दी गई है वे प्रथम पंचवर्षीय योजना मे विस्तार से दिए गए है। पिछले तीन वर्षो में जो विशेष प्रकार के सगठन बने है, उन्होने अधिक ऊंचे स्तर पर कार्यक्रमों के लिए जमीन तैयार कर दी है।

प्रथम योजना में प्रगति

२. प्रथम योजना की अवधि मे दो महत्वपूर्ण कार्य किए गए। एक तो केन्द्रीय सरकार ने ग्राम और लघु उद्योगों के लिए पर्याप्त धन निकालकर रखा, और दूसरे, हथकरघा उद्योगो, खादी और ग्रामोद्योगों, दस्तकारियों, छोटे पैमाने के उद्योगो, रेशम के कीड़े पालने तथा नारियल जटा उद्योगों की समस्याओं को हल करने के उद्देश्य से अखिल भारतीय बोर्डो का एक जाल-सा बिछा दिया। केन्द्र और राज्य सरकारो द्वारा इस ओर दिए गए ध्यान और अखिल भारतीय बोर्डों के कार्यो का परिणाम यह हुआ है कि बहुत-से उद्योगों में उत्पादन और रोजगार दोनो की वृद्धि हुई है। योजना की शुरुआत में हथकरघा उद्योग की जो खराब हालत थी, अब उसे काफी सहारा मिल गया है। हथकरघा कपड़े का उत्पादन १९५०-५१ मे ७४ करोड़ २० लाख गज से बढ़कर १९५४-५५ में १३५ करोड़ ४० लाख गज हो गया है और आशा है कि १९५५-५६ तक १४५ करोड गज हो जाएगा। खादी बोर्डों से प्राप्त आंकडों के आधार पर स्पष्ट है कि खादी का मूल्य १९५०-५१ के १·३ करोड़ से बढ़कर १९५५-५६ में ५ करोड़ हो गया, वह भी तब जब कि उसका कुल उत्पादन ३ करोड़ ४० लाख वर्ग गज था। बाकी कई उद्योगों में आरम्भिक खर्च काफी मात्रा में खोज कार्य, हाट-व्यवस्था, संगठन इत्यादि पर किया जा चुका है। चार लघु उद्योग सेवा संस्थाओ

पर भी नियंत्रण लगा दिया गया है। कपड़ा धोने वाले साबुन के उद्योग पर भी उत्पादन शुल्क लगाया गया है जो परिस्थितियों के अनुसार घट-बढ़ सकता है और साबुन बनाने मे प्रयुक्त नीम तथा अन्य अखाद्य तेलों के उद्योगो को आर्थिक सहायता दी गई है। कई अन्य उद्योगों की छोटी यूनिटों के उत्पादन मे विस्तार की भी व्यवस्था रखी गई है। इन उद्योगों में कुछ प्रकार के खेती के औजार, फर्नीचर, खेल-कूद का सामान, स्लेटे, पेंसिलें, बीड़िया, लिखने की स्याही, खडिया, रंगीन पेसिले और मोमबत्तिया बनाना शामिल है ।

५. पहली पंचवर्षीय योजना मे औद्योगिक सहकारी सस्थाए बनाने के महत्व पर दो दृष्टियो से जोर दिया गया था : वे एक तो ग्रामोद्योगों का विकास करेंगी, और दूसरे, गाव के कारीगरो को वित्तीय सहायता देने का एक आवश्यक माध्यम सिद्ध होंगी। भिन्न-भिन्न उद्योगो के बीच और भिन्न-भिन्न प्रदेशों के बीच उन्नति एक समान नहीं रही है, फिर भी हथकरघा उद्योग मे, जैसे कि पहले कहा जा चुका है, उत्साहजनक प्रगति हुई है ।

दूसरी योजना के उद्देश्य और बुनियादी नीतियां

६. **ग्राम और लघु उद्योग समिति**:—पहली योजना की अपेक्षा दूसरी योजना के अन्तर्गत ग्राम और लघु उद्योगों का कार्यक्रम काफी बड़ा है। दूसरी योजना के कार्यक्रमो और उनके क्रिया-न्वयन सम्बन्धी समस्याओं पर हाल ही में एक समिति—ग्राम और लघु उद्योग (दूसरी पचवर्षीय योजना) समिति—ने विचार किया है। इस समिति को साधारणतया कर्वे समिति कहा जाता है। इसे योजना आयोग ने जून १९५५ मे नियुक्त किया था। इस समिति के लिए प्रस्ताव करते समय इन तीन प्रमुख उद्देश्यों को ध्यान में रखा गया :—

(१) दूसरी योजना की अवधि में इस प्रकार की और अधिक टेकनोलौजिकल बेरोज-गारी से बचना, जो विशेषकर परम्परागत ग्रामीण उद्योगों में होती है,

(२) योजना की अवधि में जहा तक सम्भव हो सके, भिन्न-भिन्न ग्राम और लघु उद्योगों के द्वारा रोजगार की वृद्धि करना; और

(३) आवश्यक रूप से विकेन्द्रित समाज के ढांचे के लिए एक आधार तैयार करना और यथाशीघ्र आर्थिक विकास करना ।

समिति ने फिर भी यह कहा है कि परम्परागत ग्रामोद्योगों में भी इस समय जितना सम्भव हो, टेकनीकल दृष्टि से सुधार किया जाना चाहिए और भविष्य में अधिक अच्छी टेकनीकों को अपनाने के बारे मे एक नियमित किन्तु क्रमिक कार्यक्रम होना चाहिए। इसके साथ ही नई पूंजी समुन्नत साज-सामान पर लगाई जानी चाहिए। यहां समुन्नत का अर्थ मौजूदा साज-सामान को बढ़ाने या उसको ठीक-ठाक करने से है ।

७. यह आवश्यक नही है कि विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था की धारणा किसी निश्चित टेकनीक या चालन-प्रणाली से सम्बन्ध रखती ही हो। इसका अर्थ यही है कि टेकनीकल सुधार उसी ढंग से और उसी सीमा तक किए जाएंगे जितने कि देश भर में बिखरी या फैली हुई अपेक्षाकृत छोटी यूनिटों के लिए आर्थिक कार्यों की दृष्टि से सम्भव हो सकेंगे। इस दृष्टि से गांव के लोग समुन्नत उद्योग के रूप में जो कुछ ग्रहण कर सकते हों, उसका संगठन गांव के ही आधार पर किया जाना चाहिए। इस समिति का कहना था कि ग्रामोद्योगों का क्रमिक विस्तार और आधुनिकीकरण करने का

सबसे अच्छा ढंग यही है कि देश भर मे गांवों और छोटे-छोटे कस्बो में आवश्यक सेवाएं स्थापित करने के साथ-साथ छोटी औद्योगिक यूनिटे भी स्थापित की जाएं। अगर बडे-बड़े नगरो की सीमा पर औद्योगिक विस्तार किया जाए तो यह मुश्किल से कहा जा सकता है कि इससे उद्योग विकेन्द्रित हो सकेगा। इसलिए औद्योगिक क्रिया-कलाप के ऐसे स्वरूप की आवश्यकता है जिसमें गांवो का एक समूह अपने औद्योगिक और शहरी केन्द्र पर सहज रूप से इस प्रकार आधारित हो कि उसे एक यूनिट की संज्ञा दी जा सके अथवा, समिति के शब्दो में, यों कहा जा सके कि 'यह प्रगतिशील ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था पर व्यापक रूप से आधारित एक पिरामिड' बन गया है। इस समूह का हर एक गाव अपने प्राकृतिक औद्योगिक और नागरिक केन्द्र पर ही निर्भर करेगा। छोटी यूनिटों के लिए, गांव के सामुदायिक कार्य केन्द्रों की ही भांति, सगठित सहकारी कामों के द्वारा जिस पैमाने पर उन्हे काम करना है तथा जैसा उनका सगठन होना है उसके सम्बन्ध में निश्चय हो जाना चाहिए।

८. ३० अप्रैल, १९५६ के औद्योगिक नीति प्रस्ताव में कुटीर और ग्राम तथा लघु उद्योगों की सहायता की चर्चा की गई है जिसका पालन राज्य या तो बड़े उद्योगो पर उत्पादन नियत्रण तथा पार्थक्य शुल्क लगाकर कर रहा है या लघु उद्योगों को सीधी आर्थिक सहायता देकर। कहा यह जाता है कि बीच-बीच में जब कभी जरूरत पड़ेगी ये कार्रवाइया तो की ही जाएगी परन्तु राज्य की नीति का उद्देश्य यह देखना होगा कि विकेन्द्रित क्षेत्र में आत्म-निर्भर होने की काफी सामर्थ्य आए और उसका विकास भी बडे पैमाने के उद्योगो के साथ ही हो। इसलिए राज्य अपना सारा ध्यान उन्ही बातों पर लगा देगा जिनसे छोटे पैमाने के उद्योगों की प्रतियोगी शक्ति बढ़े। इसके लिए यह आवश्यक है कि उत्पादन की टेकनीक मे हमेशा सुधार लाया जाए तथा उसको आधुनिक बनाया जाए, परन्तु इस परिवर्तन का नियमन कुछ इस प्रकार हो कि टेकनोलौजिकल लोग बेरोजगार न हो जाएं। टेकनीक और वित्तीय सहायता का अभाव, काम करने के लिए उपयुक्त स्थान का न होना, और मरम्मत और रख-रखाव की सुविधाओ का काफी न होना, छोटे पैमाने के उत्पादको के रास्ते में यही बड़ी बाधाएं हैं। इस सम्बन्ध में प्रस्ताव में कहा गया है कि औद्योगिक बस्तियों और ग्रामीण सामुदायिक कार्य केन्द्रों की स्थापना द्वारा इन कमियों को पूरा करने की दिशा में प्रयत्न शुरू हो गए हैं। गावों में बिजली पहुंचाना और कामगारों की सामर्थ्य के भीतर दरो पर उनको बिजली देना, इसी से काफी मदद मिलेगी। प्रस्ताव में औद्योगिक सहकारी सस्थाओ की स्थापना पर जोर दिया गया है, क्योंकि इनसे छोटे पैमाने के उद्योगो के अनेक कार्यों को बहुत सहायता मिलती है। इस प्रकार की संस्थाओ को हर प्रकार से बढावा दिया जाना चाहिए तथा राज्य को कुटीर, ग्राम और छोटे पैमाने के उद्योगों के विकास का हरदम खयाल रखना चाहिए।

९. **सामान्य उत्पादन कार्यक्रम**:—प्रथम पचवर्षीय योजना मे 'सामान्य उत्पादन कार्यक्रम', शब्द इस बात का बोध कराने के लिए जोड दिए गए थे कि उद्योग की विभिन्न शाखाओ के विकास कार्यक्रम तैयार करते हुए यह विचार करने की आवश्यकता है कि छोटी और बड़ी यूनिटे समाज की कुल आवश्यकताओं को कहां तक पूरा करने में योग दे सकती है तथा छोटे पैमानों के उद्योगों को उनके लिए नियत लक्ष्य पूरा करने योग्य बनाने के लिए जो उपाय किए जाने चाहिए उन पर विचार करने की आवश्कता है। ये उपाय मुख्य रूप से दो वर्गों मे बाटे जा सकते है :—

(१) वे उपाय जिनका मन्तव्य छोटी यूनिटों को कुछ तरजीह दिलाना तथा बाजार तैयार करना है; तथा

(२) वे उपाय जिनसे कच्चे माल, टेकनीकल मार्गदर्शन, वित्तीय सहायता, प्रशिक्षण, खोज कार्य, बाजार का संगठन इत्यादि के द्वारा निश्चित सहायता मिल सकती है।

पहली योजना में यह व्यवस्था की गई थी कि सामान्य उत्पादन कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिए इन तीन उपायों में से एक या अधिक की आवश्यकता पड़ेगी :

(१) उत्पादन के क्षेत्र की सीमा निर्धारित कर देना अथवा उस क्षेत्र को केवल उसी के लिए सुरक्षित कर देना;

(२) बड़े पैमाने के उद्योगों की सामर्थ्य में विस्तार न करना; और

(३) बड़े पैमाने के उद्योगो पर उपकर लगाना।

ये प्रस्ताव परम्परागत ग्रामोद्योगों के लिए, जिनका भविष्य व्यापक नीतियो के संचालन की रीति पर ही निर्भर करता है, बड़े महत्व के है। उत्पादन के क्षेत्र की सीमा निर्धारित कर देना अथवा उस क्षेत्र को केवल उसी के लिए सुरक्षित कर देना छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए विशेष रूप से सहायक हो सकता है। पहली योजना मे इन यूनिटों का वर्गीकरण निम्नलिखित तीन श्रेणियों में कर दिया गया था :

(१) वे यूनिटे जिनमें छोटे पैमाने पर उत्पादन करने के कुछ फायदे है और जिन पर बड़े पैमाने के उद्योगों का काफी असर नही पड़ता,

(२) वे यूनिटे जिनमें छोटे पैमाने के उद्योगो का सम्बन्ध ऐसे पुर्जों के बनाने अथवा उत्पादन की ऐसी अवस्थाओं से होता है जिनमें प्रमुख योग बडे पैमानें के उद्योगो का ही है, और

(३) वे यूनिटे जिनमें छोटे पैमाने के उद्योग को तत्सम्बन्धी बड़े पैमाने के उद्योग के साथ प्रतियोगिता करनी पडती है।

आधुनिक उद्योग में टेकनीकल सम्भावनाओ की सीमाओ के भीतर ही विकेन्द्रित क्षेत्र को बल देने के लिए यह जरूरी है कि जो छोटी यूनिटें या तो बड़े उद्योगों से होड़ ले रही हों अथवा जो उत्पादन की अवस्था विशेष या सहायक पुर्जो के निर्माण की दृष्टि से बड़े उद्योगों के साथ मिला दी जानी चाहिएं, उनके लिए क्षेत्र निर्धारण काफी सहायक साबित होगा। यह चीज उपयुक्त क्षेत्रो में पैदा की ही जानी चाहिए, चाहे बडी यूनिट सरकारी क्षेत्र में हो या निजी क्षेत्र मे।

१०. बडे पैमाने के उद्योगों का विस्तार न किए जाने के प्रस्ताव पर दो दृष्टिकोणो से विचार किया जा सकता है। पहला यह कि इस उपाय द्वारा छोटी यूनिटो के लिए बाजार कहां तक बढ सकेगा। कभी-कभी ऐसा होता है कि संगठन की कमी या कुछ और कारणो से उपलब्ध बाजार का भी पूरा-पूरा फायदा नही उठाया जाता। दूसरा पहलू यह है कि अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत किसी वस्तु के कितने उत्पादन की आवश्यकता होगी, इस सम्बन्ध मे विकास की ऐसी अवधि में जिसमें कि सार्वजनिक और निजी पूजी काफी मात्रा में लगेगी, भावी माग का स्वरूप बड़ा महत्वपूर्ण हैं। बड़े पैमाने के उद्योगों की सामर्थ्य सीमित की जाए अथवा नही, या किस सीमा तक की जाए, इस बात का निर्णय दो बातो से होगा। एक तो यह है कि माल की कमी न होने पाए, और दूसरे, अधिक उपलब्ध बाजार का फायदा उठाने के लिए एक हद तक छोटी यूनिटों में उत्पादन का संगठन करने की आवश्यकता है। इन दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए जनता के लाभ के साथ संतुलन बैठाकर ही इस विषय में निर्णय किया जा सकता है। इस नीति को लागू करने के लिए समय-समय पर बदलती

हुई अर्थ-व्यवस्था के प्रकाश में उसकी समीक्षा करते रहने की आवश्यकता है। इसलिए यह आवश्यक है कि उद्योग (विकास और नियमन) अधिनियम की अनुसूची में दिए गए उद्योगों पर लागू होने वाली उद्योग लाइसेंसिग व्यवस्था धान की कुटाई जैसे कृषि कार्यों पर भी लागू कर दी जाए। इसके लिए उपयुक्त कानून भी बनाया जाना चाहिए।

११. जैसा कि ग्राम और लघु उद्योग समिति ने सकेत दिया है, बडे उद्योगो के उत्पादन पर उपकर या उत्पादन शुल्क लगाने के उद्देश्य ये हैं कि एक तो किसी उत्पादन विशेष के उपभोक्ताओ से धन इकट्ठा किया जाए; दूसरे, बड़ी यूनिटों की सामर्थ्य या उत्पादन पर कोई एक सीमा लगाने के फलस्वरूप जो उन्हे अतिरिक्त लाभ होता हो उसका एक हिस्सा हस्तगत किया जाए, और तीसरे, छोटी यूनिटो के हित में मामूली मूल्य अन्तर को नजरअन्दाज करने की व्यवस्था की जाए। उपयुक्त स्थितियों में उपकर या उत्पादन शुल्क लगाना एक सर्वमान्य वित्तीय उपाय है, लेकिन हर उद्योग पर उसकी परिस्थितियो को देखकर विचार करना पडेगा। कभी-कभी राज-सहायता देने का प्रस्ताव भी रखा जाता है, लेकिन इससे दूसरे प्रकार के प्रश्न उठ खडे होते हैं। ग्राम और लघु उद्योग समिति ने सामान्य रूप से उत्पादन पर राज-सहायता या बिक्री पर कटौती देने की शुरुआत करने के लिए नए उपायों का समर्थन नही किया। उसका खयाल था कि किसी भी उद्योग की रक्षण योजनाओं की लागत आसानी से कूती जाने योग्य होनी चाहिए और किसी साधारण आर्थिक उद्योग की रक्षण योजनाओं का निर्माण कुछ इस प्रकार होना चाहिए कि उन्हें उचित समय के भीतर बन्द भी किया जा सके। समिति ने कुछ सीमित अपवाद भी बताए है, जैसे हाथ से धान कूटने के उन्नत सामान के लिए कुछ राज-सहायता। ग्राम और लघु उद्योग समिति ने जितने भी ग्रामोद्योगो को लिया है, उन सबमे उत्पादन पर राज-सहायता कुल मिलाकर लगभग ८ करोड रुपए आंकी गई है। हथकरघा और परम्परागत खादी की बिक्री पर कटौती में अनुमान से क्रमश २० करोड और ७ करोड़ का खर्च आएगा।

१२ ऊपर सामान्य उत्पादन कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए जिन उपायों की चर्चा की गई है, वे ग्रामीण और लघु उद्योगों के विकास के लिए किए जाने वाले उपायों का एक छोटा-सा भाग हैं। वास्तव मे उनका मन्तव्य यह है कि ग्राम और लघु उद्योग क्षेत्र को अपने आप विकसित होने के लिए आवश्यक सामर्थ्य प्राप्त करने का अवसर और समय दिया जाए। जहा भी सम्भव हो सके राज्य के साझे वाले सहकारी संगठनों के द्वारा सामान्य बाजार का प्रबन्ध करके उनकी सहायता की जानी चाहिए। सगठन और सहायता के उपायों को सफल बनाने के लिए अविलम्ब ध्यान दिया जाना चाहिए।

१३ **औद्योगिक सहकारी संगठन और संस्थाएं:**—यह तो बडी सामान्य-सी बात है कि ग्रामोद्योगो और लघु उद्योगों में सहकारी संस्थाओं का अधिकतम विकास किया जाना चाहिए। जुलाहों की सहकारी संस्थाएं बनाने के काम को बढ़ावा देने में हथकरघा बोर्ड को जो अनुभव प्राप्त हुआ उसके आधार पर पता चलता है कि लघु उद्योग में सहयोग वृद्धि की कुछ परिस्थितिया पाई जाती है। सहकारी संस्थाओं मे शामिल हथकरघों की सख्या १९५०-५१ के ६,२६,११९ से बढ़कर १९५३-५४ में ७,८८,६६४ और १९५४-५५ में ८,७८,९८४ हो गई और आशा थी कि योजना के अन्त तक १० लाख हो जाएगी। सहकारी संस्थाएं बनाने के लिए हथकरघा बोर्ड ने जुलाहों को हिस्सा पूजी और कार्यचालन पूजी में सहायता दी है। हिस्सो के मूल्य का ७५ से ८७॥ प्रतिशत तक भाग सरकार कर्ज के रूप में देती है और शेष जुलाहा स्वयं जुटाता है। कार्य-

चालन चालू पूंजी २०० रुपए प्रति सूती कपड़े के लिए और ५०० रुपए प्रति रेशमी कपड़े के करघे के लिए दी जाएगी। इन जुलाहों के सहकारी सगठनों के सघो से एजेंसियां बनाई जाती हैं। जो कच्चा माल पहुंचाने, टेकनीकल सलाह देने, सहकारी स्रोतो से कर्ज का प्रबन्ध करने और हाट-व्यवस्था की अच्छी सुविधा जुटाने आदि का काम करती है। नारियल जटा उद्योग के लिए १२० प्राथमिक नारियल जटा हाट-व्यवस्था संस्थाए, २२ छाल सहकारी सस्थाएं और २ नारियल जटा हाट-व्यवस्था सहकारी संस्थाएं बनाई गई है। कुछ राज्यों मे, जैसे बम्बई, उत्तर प्रदेश और पजाब मे कर्मचारियो और चमड़े का सामान बनाने वालों तथा मद्रास में ताड़ खजूर का गुड बनाने वालो मे श्रेणी विशेष के कारीगरो मे वृद्धि हुई है।

१४. औद्योगिक सहकारी संस्थाएं स्थापित करने, उनको बनाए रखने और उनके विकास के लिए एक साथ कई बातों की आवश्यकता होती है। लगभग सब ग्राम और लघु उद्योगों मे सभरण और हाट-व्यवस्था की सहकारी सस्थाओ को अपना-अपना क्षेत्र मिल जाता है। उत्पादक सहकारी संस्थाओ के लिए अवश्य ही कुछ क्षेत्रो मे काफी अधिक सम्भावनाएं हैं। संभरण और हाट-व्यवस्था की सहकारी सस्थाएं स्वय ही छोटी यूनिटो की सहायता करने और गुण नियत्रण, भावी माग के लिए स्टाक रखने तथा कर्जे देने आदि के साथ-साथ टेकनीको में क्रमिक रूप से विकास करने के लिए एक महत्वपूर्ण साधन है। दो मे से अगर किसी भी प्रकार की सहकारी संस्थाओं की स्थापना हो जाए तो लघु उद्योग सरकार और संस्थाओ से मिलने वाली वित्तीय सहायता और टेकनीकल सेवा संस्थाओं, प्रशिक्षण केन्द्रो तथा चल टेकनीकल सेवाओं से मिलने वाले मार्ग-दर्शन का और भी अच्छी तरह उपयोग कर सकेंगे। छोटे पैमाने के उद्योगों के और विशेषकर उनके लिए जिनका संचालन छोटे-छोटे उद्यमकर्ताओं के हाथ मे है, सगठन का सामान्य रूप यही हो सकता है कि वे या तो कच्चे माल की खरीद या तैयार माल की बिक्री अथवा दोनों के लिए व्यापार सघ बना ले। यह सम्भव है कि इस तरह के संघो के सदस्य ही किसी विशेष उद्देश्य के लिए एक निश्चित समय तक काम करने के बाद सहकारी संस्थाओं के रूप मे बध जाना पसन्द कर ले। इस प्रकार ये व्यापार सघ एक प्रकार के स्वतन्त्र सगठन भी हो सकते है और सहकारी संस्थाओ की स्थापना की दिशा मे एक प्रयत्न भी। विविध ग्राम और लघु उद्योगो की सहकारी संस्थाओ के सगठन के लिए यह आवश्यक होगा कि योजना की अवधि मे लक्ष्यों की पूर्ति कर ली जाए।

१५. सभरण और हाट-व्यवस्था सहकारी सस्थाओं तथा सहकारी उत्पादक सस्थाओ के संगठन के लिए यह आवश्यक है कि राज्यों के उद्योग विभाग ऐसे विकास सगठन कार्यक्रम बनाए जिनकी पहुंच प्रमुख नागरिक केन्द्रो और ग्राम समूहों के कारीगरों तक हो सके। ऐसे देहाती इलाकों के लिए इन विकास सगठनों की विशेष आवश्यकता है, जहा कारीगरों की सहकारी सस्था बनाने की उपयुक्त परिस्थितिया हों। इसके लिए सामुदायिक उत्पादन और सामुदायिक माग में घनिष्ठ सम्बन्ध होना ही चाहिए। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत चुने हुए २५ मार्गदर्शक क्षेत्रों मे इस दिशा में शुरुआत कर दी गई है।

१६. अगर ग्राम और लघु उद्योग समिति के मतानुसार हाट-व्यवस्था निश्चित करने की योजना को आज़माना हो, तो संभरण और हाट-व्यवस्था के लिए सहकारी औद्योगिक संस्थाए आवश्यक होंगी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह है कि पूर्व निश्चित भाव पर अथवा कच्चे माल और तैयार उत्पादन के दामो के बीच कारीगर की मजदूरी के लिए काफी भाग छोड चुने हुए उत्पादनों या किस्मों के सम्पूर्ण माल को खरीद कर उत्पादन बढाने की प्रेरणा दी जाए। समिति ने यह सुझाव दिया था कि यह योजना पहले, प्रयोग के रूप में, हथकरघा कपड़े के कुछ चुने हुए केन्द्रों और कुछ चुनी हुई किस्मों के लिए लागू की जाए। इसकी कार्यप्रणाली इस प्रकार होगी कि

किसी वस्तु विशेष की समस्त माग के अनुमानों को देश के भिन्न-भिन्न प्रदेशो और केन्द्रो के उत्पादन की आवश्यकताओ के अनुसार विभाजित कर दिया जाए और इसी आधार पर उत्पादकों को कच्चा माल देने और उनका सारा उत्पादन लेने का प्रबन्ध कर दिया जाए। ये सहकारी संस्थाएं भी राज्य की ओर से तैयार उत्पादनों को खरीद लेगी और इस प्रकार खरीदा हुआ माल बिक्री के समय तक स्टाक में रखा जाएगा। राज्य ही उनके मूल्य और बिक्री के नियम तय करेगा और इन सहकारी सस्थाओ को यदि कोई हानि होती है तो वह भी पूरी कर दी जाएगी पर यह तभी होगा जब कि वह हानि व्यापार में सामान्य रूप से होने वाली हानि से ज्यादा हो। चाहे इस योजना को किसी ग्राम या लघु उद्योग के उत्पादन के सम्बन्ध में प्रयोग के रूप में ही लागू करना हो, फिर भी इसके ब्योरे तैयार करने पड़ेंगे और कुछ विशेष परिस्थितियो में कतिपय उद्योगों के लिए वर्तमान नियत कटौती वाली प्रणाली पर यह कुछ न कुछ सुधार ही सिद्ध होगी। यह वाछनीय है कि एक या दो ऐसे क्षेत्रों के चुने हुए केन्द्रों में इस योजना को चलाकर अनुभव प्राप्त किया जाए, जिससे संभाव्य नुक्सान वर्तमान कटौती पर आने वाले खर्च से बहुत ज्यादा न हो सके।

१७. औद्योगिक सहकारी सस्थाओं के माध्यम से कच्चे माल की खरीदारी और तैयार उत्पादनों की बिक्री से जो अनेक क्रियाएं सम्बन्धित है उनकी व्यवस्था के लिए स्टाक रखने के उपयुक्त प्रबन्धों के साथ-साथ बड़े पैमाने पर संगठन करने की भी आवश्यकता है। कृषि उत्पादों के सम्बन्ध में सहकारी हाट-व्यवस्था और माल संग्रहण की एक योजना तैयार की जा चुकी है और इसके लिए आवश्यक कार्यतन्त्र की स्थापना के लिए विधान तैयार किया जा रहा है। कृषि उत्पादकों और औद्योगिक सहकारी संस्थाओं को एक ही योजना के अधीन लाने के काम में कुछ अधिक कठिनाइयां हो सकती है, लेकिन फिर भी उसमे पारस्परिक सहायता के लिए जगह रहेगी ही। कृषि उत्पादनों के संग्रह और गोदामो के लिए संगठित की गई सुविधाओं का ग्रामीण और लघु उद्योगों के उत्पादनों के लिए उपयोग कर लेना कुछ हद तक संभव हो सकता है।

१८. छोटी यूनिटों की आवश्यकताओं का ध्यान रखकर माल खरीदने के लिए ग्रहण की गई नीति का विकेन्द्रित क्षेत्र के कार्यक्रमों के पूरे होने में काफी अधिक हाथ होगा। जहां भी आवश्यक हो, खरीद की प्रक्रियाओं को बदलना आवश्यक होगा, जिससे कि सरकारी खरीद के आधार पर छोटी यूनिटों के लिए सुअवसरों की प्राप्ति निश्चित हो सके और वे अपनी सक्षम सामर्थ्य का उपयोग कर सकें।

१९. हाट-व्यवस्था खोज कार्य के आधार पर ही विभिन्न उद्योगों के उत्पादन कार्यक्रमों की रूपरेखा बनाने और उनके नवीकरण के सम्बन्ध में ज्ञान और सूचना प्राप्त हो सकेगी। यह खोज कार्य या तो तदर्थ संगठित जांच-पड़तालों के द्वारा सम्पन्न हो सकता है अथवा उसे खोज कार्य अथवा हाट-व्यवस्था की योजनाओं के साथ जोड़ा जा सकता है। इन दोनों हालतों में उद्देश्य यही होगा कि उपभोक्ताओ की आवश्यकताओं और रुचियों, प्रतियोगी उत्पादनों और व्यवस्थाओं के प्रति उपभोक्ताओं के रवैये, मूल्यों में परिवर्तन और माग पर उसके असर इत्यादि का भली प्रकार अध्ययन किया जाए। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें अभी बहुत अधिक कार्य नही किया गया है। प्रस्ताव यह है कि ग्राम और लघु उद्योगों के अधिक महत्वपूर्ण उत्पादनों की हाट-व्यवस्था के सम्बन्ध में ये अध्ययन किए जाएं और प्राप्य परिणामों के आधार पर हाट-व्यवस्था सम्बन्धी अध्ययनों की गुंजाइश धीरे-धीरे बढ़ाई जाए।

२०. छोटे कस्बों और गांवों में बिजली के विस्तार के साथ काफी संख्या में लघु उद्योग विद्युत चालित हो जाएंगे और समुन्नत टेकनीको का अपनाना भी आसान हो जाएगा। सिंचाई

और बिजली के अध्याय मे छोटे कस्बों और गावों में बिजली के विस्तार के पहलुओ पर थोडे विस्तार के साथ विचार किया गया है। दूसरी योजना की अवधि में १०,००० से कम आबादी वाली जितनी जगहों मे बिजली पहुचेगी, उनकी संख्या ६,५०० से बढ़कर १६,५५६ हो जाएगी। पहले-पहल ऐसे गांवों में बिजली ले जाने का काम अत्यधिक आसानी से किया जा सकेगा जो या तो नागरिक क्षेत्रों के नजदीक बसे है या ट्रांसमिशन केन्द्र की ऐसी लाइनों के रास्ते पर है जहां से छोटी-छोटी लाइने निकाली जा सकती है। सिफारिश यह है कि नागरिक और देहाती क्षेत्रों मे बिजली ले जाने की योजनाएं कुछ इस प्रकार मिले-जुले ढंग से लागू की जाएं कि नागरिक और औद्योगिक उपभोक्ताओ से वसूल किए गए राजस्व का बचा हुआ भाग देहाती उपभोक्ताओं के लिए दरें घटाने के काम में लाया जा सके। इस बात पर भी जोर दिया गया है कि विद्युत विस्तार के वर्तमान कार्यक्रम के द्वारा अगर इस योजना का देहाती क्षेत्रों में संगठित और सहकारी ढंग से उपयोग किया जाए तो अभी जितने गांवों मे बिजली पहुंचाने का प्रस्ताव है उससे कही अधिक गावों में बिजली पहुंचाई जा सकती है। इसके अलावा यह सुझाव है कि जहां कही बिजली का उपयोग कृषि और छोटे उद्योगों के लिए किया जा सकता हो वहा डीजल चालित बिजलीघरों या पनबिजलीघरों के रूप में स्थानीय योजनाएं शुरू की जा सकती हैं। वायुशक्ति के विकास के लिए काम करने वाली कुछ छोटी यूनिटें बनाई जाने की भी आशा है।

२१. **कारीगरों के लिए मकानों की व्यवस्था**:—अक्सर कारीगर का घर ही उसके काम करने की जगह होती है। इसलिए उसके घर की स्थिति मे सुधार करना भी विकेन्द्रित क्षेत्र के कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग होना चाहिए। जहां तक सम्भव हुआ है हर उद्योग के लिए निश्चित रकम में ही इसकी भी व्यवस्था कर दी गई है, परन्तु कुटीर, ग्राम और लघु उद्योगो में लगे सारे कारीगरो की जरूरतों को देखते हुए पूरक अनुदानों की आवश्यकता पड़ेगी ही। इसलिए गांवों के लिए मकान निर्माण करने के कार्यक्रम मे गाव के कारीगरो की जरूरतों पर विशेष रूप से ध्यान रखना पड़ेगा।

२२. **ऋण और वित्त**—ग्रामोद्योग और लघु उद्योगों के विकास कार्यक्रम मे वित्त सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संतोषप्रद प्रबन्ध करना बड़ा महत्व रखता है। वित्त की जरूरत कच्चे माल की खरीद और सग्रह, तथा तैयार माल के संग्रह के लिए तो पड़ती ही है, उसकी जरूरत कारीगरों को सहकारी संस्थाओ की हिस्सा पूजी अदा करने, औजारों और सामान की खरीद और जमीन, घर, मशीनों तथा अन्य सामान में रुपए लगाने में उनकी सहायता करने के लिए भी पड़ती है। छोटे पैमाने के उद्योगों (जिनमें से कई छोटे-छोटे उद्यमकर्ताओं के हाथ में है) की हिस्सा पूजी के लिए कर्जों की उतनी जरूरत तो नही पड़ेगी जितनी कि ग्रामोद्योगों में, जहां सहकारी संगठन का अत्यधिक महत्व है। सब ग्राम और लघु उद्योगों के लिए कार्यकारी पूंजी तथा मध्यकालीन और दीर्घकालीन वित्त की आवश्यकता होती है, हालांकि जिन उद्योगों में अच्छी टेकनीकों और अच्छे साज-सामान का प्रयोग होता है, और जिन्हें विशेषरूप से बनी हुई इमारतें चाहिएं, उन्हें दीर्घकालीन वित्त की आवश्यकता अपेक्षाकृत अधिक पड़ेगी।

२३. इस समय वित्त जुटाने के लिए जो प्रबन्ध हैं, वे सतोषप्रद नही कहे जा सकते। उसका कुछ भाग राज्य सरकारें उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के अधीन देती हैं। राज्य वित्त निगमों की ओर से भी एक सीमित हद तक औसत और लम्बे समय के लिए धन दिया जाने लगा है। बैंकिंग स्रोतों से सहकारी संस्थाओं को कुछ कार्यकारी पूंजी प्राप्त हो जाती है। ग्राम और लघु उद्योगों के लिए बनाई गई वित्त सम्बन्धी किसी भी सुगठित योजना में भारतीय रिज़र्व बैंक और स्टेट बैंक का बहुत बड़ा भाग होगा। उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के अधीन दी

जाने वाली सहायता थोड़ी और बढ़ा दी गई है और स्थानीय अधिकारियों को मंजूरी के और अधिक अधिकार दिए जा रहे है, लेकिन इस साधन से भी थोड़ा ही धन मिलता है। इसमे संदेह नहीं है कि अगर ग्राम और लघु उद्योगो की कर्ज सम्बन्धी आवश्यकताएं काफी मात्रा में पूरी की जाती है तो सामान्य बैकिंग और संस्थागत एजेंसियों का अब की अपेक्षा और अधिक उपयोग करना पड़ेगा। इस दिशा में रिजर्व बैंक, स्टेट बैंक, राजकीय वित्त निगमो और केन्द्रीय सहकारी बैंकों के बीच सहयोग पर आधारित एक समन्वित नीति की आवश्यकता है। चुने हुए केन्द्रों के छोटे पैमाने के उद्योगों के लिए प्राप्य कर्ज सम्बन्धी सुविधाओं की वृद्धि और समन्वय सम्बन्धी आदर्श योजनाएं इसी दिशा में शुरू की गई है। ये योजनाएं भारतीय स्टेट बैंक के अधीन चलेंगी और उनका पर्यवेक्षण तथा नियंत्रण स्थानीय समन्वय समितियों के हाथ में होगा। तैयार की गई समन्वय योजनाएं, राज्य सरकारो की सहकारी ऋणदाता एजेंसियां, राजकीय वित्त निगम और भारतीय स्टेट बैंक, सब साथ मिलकर काम करेंगे। हर एजेंसी ऋणदान सम्बन्धी विशेष आवश्यकताओ की पूर्ति करेगी और साथ ही उनके काम का एक-दूसरे से टकराव भी न हो पाएगा। इन आदर्श योजनाओ द्वारा प्राप्त अनुभव के आधार पर ग्रामीण और लघु उद्योगो के हर समूह के लिए उसकी विशेष आवश्यकताओं के संदर्भ में इसी प्रकार की सुगठित योजनाएं तैयार की जाएगी, जैसे कुछ क्षेत्रो में हथकरघा जुलाहो की सहकारी संस्थाओं की तरह हिस्सा पूंजी के लिए वित्त व्यवस्था को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। ग्राम ऋण व्यवस्था सर्वेक्षण समिति ने अपनी रिपोर्ट में इस बात पर जोर दिया है कि भारतीय रिजर्व बैंक को औद्योगिक सहकारी संस्थाओं के लिए अल्पकालीन ऋणों की व्यवस्था करने मे सक्रिय भाग लेना चाहिए। इसके लिए आवश्यक विधान भी तैयार हो चुका है।

ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय

२४. नीचे की तालिका में प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में ग्राम और लघु उद्योगों के विकास में किया गया खर्च दिखाया जा रहा है :—

प्रथम योजना में ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय

	(करोड़ रु०)		
	१९५१-५५	१९५५-५६ (बजट)	१९५१-५६
(१)	(२)	(३)	(४)
हथकरघा	६·५	४·६	११·१
खादी	४·९	३·५	८·४
ग्रामोद्योग	१·१	३·०	४·१
लघु उद्योग	२·०	३·२	५·२
दस्तकारी	०·४	०·६	१·०
सिल्क और रेशम कीट उद्योग	०·८	०·५	१·३
नारियल जटा	...	०·१	०·१
योग	१५·७	१५·५	३१·२

२५. विभिन्न बोर्डों और राज्य सरकारो ने दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि के लिए योजनाओ के जो मसौदे तैयार किए, उन पर ग्राम और लघु उद्योग समिति ने विचार किया। इस समिति को उद्योगों ने, और जहा भी सम्भव हुआ, राज्यों ने इस दृष्टि से प्रस्ताव तैयार करने का काम सौंपा कि ग्राम और लघु उद्योगो के विकास के लिए दूसरी योजना की अवधि मे प्राप्त हो सकने वाले साधनों का उपयोग कैसे किया जाए। समिति ने लगभग २६० करोड़ रुपए की कुल लागत के कार्यक्रमों की सिफारिश की है, जिनमे चालू पूजी की भी व्यवस्था है जो अनुमान से लगभग ६५ करोड़ रुपए होगी। सूत, रेशम और ऊन सहित हथकरघा उद्योगों के लिए ८८ करोड़ रुपए, ऊन की कताई और खादी की बुनाई के लिए २·२ करोड़ रुपए, विकेन्द्रित सूती कताई और खादी के लिए २३ करोड़ रुपए, विभिन्न ग्रामीण उद्योगों के लिए ४७·४ करोड़ रुपए, दस्तकारियों के लिए ११ करोड़ रुपए, लघु उद्योगों के लिए ६५ करोड़ रुपए, रेशम कीट उद्योग के लिए ६ करोड़ रुपए, नारियल जटा की कताई और बुनाई के लिए २ करोड़ रुपए और सामान्य योजनाओं के लिए १५ करोड़ रुपए की व्यवस्था करने के भी प्रस्ताव है। जैसे कि नीचे बताया गया है, योजना में चालू पूजी की आवश्यकताओं के अलावा २०० करोड़ रुपए के व्यय की व्यवस्था है। इस लागत को भिन्न-भिन्न उद्योगो पर प्रयोग के रूप में जिस प्रकार वितरित किए जाने की योजना है वह इस प्रकार है:—

ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय का वितरण

उद्योग	(करोड़ रु०) व्यय
१. हथकरघा	
सूती बुनाई	५६·०
सिल्क बुनाई	१·५
ऊन बुनाई	२·०
	५९·५
२. खादी	
ऊन कताई और बुनाई	१·९
विकेन्द्रित सूत कताई और खादी	१४·८
	१६·७
३. ग्रामोद्योग	
धान की कुटाई (हाथ से)	५·०
वनस्पति तेल (घानी का)	६·७
चमड़े के जूते और चमड़ा कमाई (गांव में)	५·०
गुड़ और खांडसारी	७·०
दियासलाई (घरेलू उद्योग में)	१·१
अन्य ग्रामोद्योग	१४·०
	३८·८

४. दस्तकारी . . .	९ ०
५. लघु उद्योग .	५५ ०
६. अन्य उद्योग	
रेशम कीट उद्योग .	५.०
नारियल जटा कताई और बुनाई	१.०
७. सामान्य योजनाएं	१५.०
योग	२००.०

इस २०० करोड़ की रकम में अम्बर चरखे के कार्यक्रम के लिए कोई व्यवस्था विशेष रूप से नही की गई है। इस पर आगे विचार तब किया जाएगा जब किए जाने वाले परीक्षणों के परिणाम ज्ञात हो जाएगे। सरकार अनेक ग्राम और लघु उद्योगों के विकास के लिए चालू पूजी की व्यवस्था योजना की अवधि के शुरू में ही करेगी, अर्थात जब तक चालू पूजी के सामान्य रूप से बैंको अथवा सस्थाओं के माध्यम से मिलने का पूरा प्रबन्ध न हो जाएगा। चालू पूजी की यह व्यवस्था योजना द्वारा की गई २०० करोड़ रुपए की व्यवस्था के अतिरिक्त होगी। विभिन्न ग्राम और लघु उद्योगो के विकास से सम्बन्धित बोर्ड और राज्य सरकारें चालू पूंजी के बारे में अपनी आवश्यकताओं का अनुमान योजना के पहले दो या तीन वर्षों में ही कर लेंगी, और इन उद्योगो के लिए ब्योरेवार कार्यक्रम बनाते समय उनका उल्लेख अलग-अलग किया जाएगा। अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड को पूरी योजना के लिए चालू पूजी अनुमान से लगभग २८.५ करोड रुपए होगी जिसमें से ७ करोड़ रुपया खादी के लिए और शेष ग्रामोद्योगों के लिए है। यह कहा गया है कि आवश्यक चालू पूजी का अधिकाश सहकारी सस्थाओं तथा अन्य बैंकिग एजेंसियो से जल्दी प्राप्त होगा।

२६. योजना मे २०० करोड़ रुपए के व्यय की जो व्यवस्था है, उसमें उन योजनाओं की लागत शामिल होगी जिन्हे केन्द्र स्वयं पूरा करेगा। इसके अतिरिक्त राज्यों की वे योजनाएं भी जिनमे केन्द्र सहायता देगा, केन्द्र द्वारा सहायता प्राप्त योजनाएं जिनमें राज्यों का योग होगा और वह व्यय भी इस रकम मे शामिल होगा जो राज्य उन योजनाओं पर अपने साधनों से खर्च करेगा जिनको केन्द्रीय सहायता प्राप्त न होगी। इस व्यवस्था के अलावा विस्थापित लोगों के पुनर्वास कार्यक्रम में कुटीर और माध्यमिक उद्योगों और औद्योगिक कर्जों के लिए ११ करोड़ रुपए तथा व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण के लिए ७ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। पिछडे वर्गों के हित के कार्यक्रमों में भी व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण के लिए तथा चुने हुए ग्राम और लघु उद्योगो के लिए भी कुछ व्यवस्था है। सामुदायिक विकास खण्डों के कार्यक्रम बजट में भी गांव की कलाओं और दस्तकारियों के लिए लगभग ४ करोड रुपए की व्यवस्था की गई है।

२७. ग्राम और लघु उद्योगो के कार्यक्रम के एक भाग पर प्रत्यक्ष रूप से केन्द्रीय मंत्रालय अथवा उन्ही के अधीन काम करते हुए अखिल भारतीय बोर्ड अमल करेंगे। शेष कार्यक्रम पर राज्य सरकारें मंत्रालयों और बोर्डों की सलाह के अनुसार अमल करेंगी। नीचे दी गई व्यय राशियाँ केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली योजनाओं की लागत बताती हैं :—

द्वितीय योजना में ग्राम और लघु उद्योगों पर व्यय

(करोड़ रु०)

उद्योग	केन्द्र	राज्य
(१)	(२)	(३)
हथकरघा	१·५	५८·०
खादी और ग्रामोद्योग	४·०	५१·५
दस्तकारिया	३·०	६·०
लघु उद्योग	१०·०	४५·०
रेशम कीट पालन	०·२	४·८
नारियल जटा कताई और बुनाई	०·३	०·७
सामान्य योजनाए	६·०	९·०
योग	२५·०	१७५·०

इनमे से अधिकाश योजनाओं पर राज्य सरकारे अमल करेगी। खादी तथा ग्रामोद्योगों की योजनाओं पर राज्य बोर्ड और राज्यों मे काम करने वाली रजिस्टरशुदा सस्थाएं अमल करेंगी। केन्द्रीय सरकार प्रायः जिन योजनाओं पर अमल करेगी वे वही होंगी जो एक तो अखिल भारतीय हों और दूसरे जिनका सबसे अच्छा सचालन केन्द्र द्वारा ही सम्भव है। ऐसी योजनाओ का सम्बन्ध केन्द्रीय सगठनों की व्यवस्था, प्रचार, प्रशिक्षण और खोज कार्य, प्रदर्शनिया और मेले, मशीनों आदि का किस्तों की प्रणाली से खरीदना और राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम जैसी विशेष संस्थाओ के काम आदि के पहलुओं से है। इन योजनाओ का विस्तारपूर्वक वर्णन इसी अध्याय में आगे दिया गया है।

२८. राज्यो की संशोधित योजनाओं मे ग्राम और लघु उद्योगों के लिए लगभग १२० करोड़ रुपए की कुल रकम व्यय के लिए निश्चित की गई है। एक समय के बाद इन रकमों को भी इस दृष्टि से दुहराया जाएगा कि ग्राम और लघु उद्योग समिति की रिपोर्ट मे दिए गए वितरण के साथ इनका मेल अधिक से अधिक बैठ जाए। केन्द्रीय मंत्रालयों और अखिल भारतीय बोर्डों ने भी उद्योगों के लिए प्रस्तावित रकमों का राज्यों के बीच अस्थायी तौर पर वितरण कर दिया है। राज्यों की रकमों को दुहराने के सम्बन्ध में विचार करते समय इनका ध्यान रखा जाएगा। जिन 'सामान्य योजनाओं' के लिए १५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है, उनका सम्बन्ध एक से अधिक उद्योगों अथवा उद्योगों के समूहों से है—जैसे उत्पादन एवं प्रशिक्षण केन्द्र, अनुसंधान संस्थाएं, एम्पोरियम और विक्रय केन्द्र। १५ करोड़ रुपए की व्यवस्था में से ६ करोड़ रुपए की रकम अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड की सामान्य योजनाओं के लिए अलग कर दी गई है, जिनमें भूमि के श्रम प्रधान विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम और टेकनीकल खोज कार्य भी शामिल हैं। राज्यीय उद्योग विभागों मे श्रमिकों की भरती के लिए भी ३ करोड़ रुपए की रकम रखी गई है। बाकी बचे हुए ६ करोड़ में से खोज कार्य, प्रशिक्षण, एम्पोरियम, इत्यादि ऐसी योजनाओं पर व्यय किया जाएगा जिनमें से अधिकांश पर राज्य सरकारों को काम करना होगा। ग्राम और लघु उद्योग कार्यक्रमों को कार्यरूप देने की सामान्य क्रिया यह है कि राज्य के प्रस्तावों पर केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुमोदन मिलने के पहले तत्सम्बन्धी अखिल भारतीय बोर्ड विचार करें।

खादी और ग्रामोद्योगो से सम्बन्ध रखने वाली योजनाएं अलग श्रेणी के अन्तर्गत आती है क्योकि इन योजनाओं के प्रस्ताव प्राय: पहले-पहल अखिल भारतीय और राज्य खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्डो से आए है और उन योजनाओं पर कार्य उन्ही की रजिस्टर्ड अथवा मान्यता-प्राप्त सस्थाओ और सघो द्वारा मुख्य रूप मे होना है। पिछले तीन या चार सालो में वित्तीय सहायता का जो स्वरूप निर्धारित किया गया है, उसम दूसरी पचवर्षीय योजना के कार्यक्रमो के सम्बन्ध में संशोधन करने की आवश्यकता है ।

विकास कार्यक्रम

हथकरघा उद्योग :

२९. उद्योग की भिन्न-भिन्न शाखाओ—मिल, विद्युत करघा, हथकरघा और खादी—के उत्पादन कार्यक्रम दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि के लिए अभी निश्चित नही किए गए क्योकि कई पहलुओ पर अब भी विचार किया जा रहा है। लेकिन यह निश्चित है कि दूसरी योजना की अवधि में हथकरघा उद्योग को पिछले एक या दो वर्षों की बनिस्बत बहुत बडी मात्रा म उत्पादन बढ़ाना होगा ।

ग्राम और लघु उद्योग समिति के अनुमानों के अनुसार दूसरी योजना के अन्त तक हथ-करघों द्वारा बनाए हुए अतिरिक्त कपड़े का उत्पादन १७० करोड़ गज तक हो जाएगा। अनुमानित उत्पादन वृद्धि को पूरा करने के लिए संगठन सम्बन्धी काफी कार्य की आवश्यकता होगी । इसका मतलब यह होगा कि जो हथकरघे बेकार पडे है उनको साल मे ज्यादा दिनो तक काम में लाया जाए और प्रति करघा उत्पादन बढ़ाया जाए। हथकरघा उद्योग के विकास कार्यक्रम में मुख्य रूप से ऐसे हथकरघो की सहायता के लिए व्यवस्था की गई है जो सहकारी क्षेत्र के अन्तर्गत आ जाते है। सहकारी संस्थाओं मे कार्य करने वाले जुलाहो को स्वत काम करने वाले जुलाहों की अपेक्षा काफी सहायता दी जा सकती है। प्रस्ताव यह है कि सहकारी क्षेत्र के हथकरघों की सख्या १० लाख से बढ़ाकर १४·५ लाख कर दी जाए। यह भी प्रस्ताव है कि टेकनीकल और दूसरे प्रकार के सुधार लागू करके उत्पादन प्रति यूनिट ४ गज से बढ़ाकर ६ से ८ गज प्रति दिन कर दिया जाए। इस प्रकार साल के लगभग ३०० दिनों का औसत प्रति दिन ६ गज पूरा कर लिया जाएगा। जुलाहो को सहकारी संस्थाओं के सदस्य बनने में सहायता देने के लिए कर्जे दिए जाएंगे और उनके लिए चालू पूजी का भी प्रबन्ध किया जाएगा ।

विकेन्द्रित कताई और खादी :

३०. अगर हथकरघों के लिए आवश्यक कोटि वाला सूत विकेन्द्रित आधार पर गांवों में ही तैयार कर लिया जा सके तो गांवों में रोजगार की गुंजाइश काफी बढ जाएगी। विस्तृत पैमाने पर विकेन्द्रित कताई करने का प्रमुख उद्देश्य यही है कि उसके द्वारा हथकरघों की आवश्यकताएं पूरी की जा सकें जिन्हें कि मिल के सूत पर निर्भर रहना पड़ता है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखकर टेकनीकल तौर पर मजबूत और कम लागत वाले चरखो के निर्माण के लिए कई सालों तक लगातार प्रयत्न किया गया ताकि हथकरघों से उपयुक्त सूत काफी मात्रा में तैयार किया जा सके। आजकल अम्बर चरखे पर टेकनीकल दृष्टि से परीक्षण किए जा रहे हैं। अम्बर चरखा एक तीन यूनिट वाला कताई सेट है, जिसमें धुनाई मशीन, खिंचाई मशीन और चार तकुवों वाला कताई पहिया होता है और सबकी लागत लगभग १०० रुपए होती है। खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड ने अभी एक प्रारम्भिक योजना चलाई है जिसमें प्रशिक्षण केन्द्र, उत्पादन केन्द्र और अम्बर चरखा निर्माण केन्द्र शामिल हैं। इस प्रारम्भिक योजना को अंतिम

रूप अब मिलने ही वाला है। इसमे ६,००० तकुवे देश भर मे फैले १०० से भी अधिक केन्द्रों में होगे। परीक्षण और प्रयोग के कार्यक्रम के विस्तार के लिए १०,००० अतिरिक्त कताई सेट स्वीकृत किए गए है। कताई सेट के आर्थिक और टेकनीकल पहलुओं पर, जिनमे उत्पादकता, उत्पादन लागत, आवश्यक सहायता और हथकरघो के लिए सूत की स्वीकृति शामिल है, एक समिति विचार कर रही है जिसकी रिपोर्ट जल्दी ही निकलने वाली है।

आजकल एक तकुवे वाले अनेक प्रकार के चरखो पर कुछ हाथ का कता सूत तैयार किया जा रहा है। निस्सदेह सामान्य रूप से खादी विस्तार कार्यक्रम के अनुसार इस सूत की जगह अम्बर चरखे से कता हुआ सूत चलने लगेगा। देश मे बढती हुई कपड़े की मांग को विकेन्द्रित रूप से पूरा करने के लिए अम्बर चरखा और कई तकुवे वाले चरखों के प्रयोग के बडे कार्यक्रम पर तब विचार किया जाएगा जब ऊपर कहे गए परीक्षण और जांच-पड़ताल के काम खत्म हो जाएगे। इस बड़े कार्यक्रम को ध्यान मे रखकर खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड ने ५ साल में २५ लाख कई तकुवे वाले चरखो का निर्माण और प्रचार करने के लिए परीक्षार्थ एक कार्यक्रम बनाया है जिसमे लगभग ५० लाख आदमियो को पूर्णकालिक और अंशकालिक रोजगार मिलेगा।

३१. **खादी (सूती और ऊनी)**—सूती खादी जो अभी तक परम्परागत चरखों के सूत से तैयार की जाती थी, अब भविष्य मे अम्बर चरखे के सूत से बहुत अधिक मात्रा मे तैयार हुआ करेगी। गांव और स्थानीय क्षेत्र की खपत के लिए परम्परागत खादी का उत्पादन चालू रहेगा। खादी कार्यक्रम पर और पहले पैरे मे बताए गए तत्सम्बन्धी अन्य पहलुओं पर साथ ही साथ विचार करके उनको अन्तिम रूप दिया जाएगा। परम्परागत खादी का उत्पादन ३ करोड़ ४० लाख गज (जिसमे ५० लाख गज आत्मनिर्भरता के आधार पर उत्पादित खादी भी शामिल है) से बढाकर दूसरी योजना की अवधि मे ६ करोड गज कर दिया जाएगा (इसमे २ करोड़ गज आत्मनिर्भरता के आधार पर उत्पादित भी शामिल है)। इसमें चालू पूजी सहित २१ करोड रुपए खर्च आएगा, लेकिन हो सकता है कि अम्बर खादी कार्यक्रम के साथ इसका समन्वय स्थापित करने के लिए इस कार्यक्रम मे सशोधन करना पड़े।

३२. ऊनी खादी के (हाथ से कते हुए ऊनी धागे द्वारा) विकास कार्यक्रम का उद्देश्य इन उत्पादनों मे वृद्धि करना है: कम्बल का कपड़ा १९५६-५७ के २,५०,००० गज से १९६०-६१ में १० लाख गज, स्टेंडर्ड से नीचा कपड़ा ५ लाख गज से १० लाख गज और दूसरी किस्मों का कपड़ा १,२५,००० गज से १५ लाख गज कर देने का लक्ष्य है। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए प्रमुख ऊन उत्पादक क्षेत्रों में उत्पादन केन्द्रों का सगठन किया जाएगा, फिनिशिग और रगाई सयंत्रों की स्थापना की जाएगी और समुन्नत चरखों और करघो के प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाएंगे।

ग्रामोद्योग :

३३. दूसरी योजना में इन प्रमुख ग्रामोद्योगों का विकास किया जाएगा—हाथ द्वारा धान की कुटाई, वनस्पति तेल, चमड़े के जूते और चमडा कमाई, गुड़ और खांडसारी और कुटीर दियासलाइयां। हाथ के बने कागज, ताड़-खजूर का गुड, साबुन, मधुमक्खी पालन और मिट्टी के बर्तन जैसे उद्योगों की विकास योजनाएं बड़े पैमाने पर लागू की जाएंगी और गांवों में मिट्टी के बर्तन, रेशे और बांस इत्यादि के लिए विकास कार्य भी आरम्भ किए जाएंगे।

३४. **हाथ द्वारा धान की कुटाई**—इस उद्योग की विकास सम्बन्धी समस्याओं पर हाल ही में धान कुटाई समिति ने विचार किया है। ग्राम और लघु उद्योग समिति ने भी इस उद्योग के कार्यक्रम

के सम्बन्ध मे सिफारिशें की है। इन सबको ध्यान में रखकर यह प्रस्ताव है कि विद्युत चालित सभी धान की चक्कियों पर लाइसेस लगा दिया जाना चाहिए और जहा विशेष स्थितियो में सार्वजनिक हित के लिए परम आवश्यक न हो वहा न तो नए मिल खोलने की और न वर्तमान मिलों की सामर्थ्य में ही विस्तार करने की आज्ञा देनी चाहिए। ओखलियो को समाप्त करने के सवाल पर बाद मे रोजगार की स्थिति को देखते हुए विचार किया जा सकता है। सिफारिश है कि हाथ से कुटे हुए धान पर ६ आना प्रति मन की औसत दर से दी जाने वाली राजसहायता चालू रखी जाए और हाथ-कुटाई केन्द्रों मे कुटे हुए और खादी बोर्ड द्वारा प्रमाणित चावल पर बिक्री कर न लगाया जाए। चक्की-धनकी, समुन्नत (असम) धनकियों, और ओसाई पखो के निर्माण और वितरण की योजनाओ पर अमल किए जाने से एक तो टेकनीकल कार्यक्षमता का स्तर बढेगा और दूसरे हाथ से कुटे हुए सामान का उत्पादन अधिक होगा। नागरिक क्षेत्रो को हाथ से कुटा हुआ चावल नियमित रूप से पहुचाने के लिए हाट-व्यवस्था केन्द्र स्थापित करने होंगे और हाथ से कुटे हुए चावल के उपभोग को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रयत्न करने पड़ेंगे।

३५. **वनस्पति तेल (घानी)**—इस उद्योग से सम्बन्धित समस्याओं पर एक विशेष समिति ने अभी हाल मे विचार किया है। उसकी सिफारिशें जल्दी ही मिल जाएंगी। वनस्पति तेल (घानी) का विकास कुछ अश मे तो इस बात की सम्भावना पर निर्भर करता है कि खाद्य तिलहनो के अधिकतर भाग को घानी के लिए दिया जाए और तेल मिलों से ज्यादातर बिनौलों का उपयोग करने को कहा जाए। कर्वे समिति ने यह प्रस्ताव किया है कि तिल्ली, काला तिल, और कर्दी की मिलों द्वारा पिटाई को प्रोत्साहित न करने और जहा आवश्यक हो प्रादेशिक आधार पर इस पर नियत्रण लगाने के लिए कदम उठाए जाएं। चूकि घानीवालों को सहकारी संस्थाओ मे संगठित होने पर भी तिलहन पाने में बड़ी कठिनाइयां होती है, इसलिए उनके लिए मौसम पर काफी तिलहन का प्रबन्ध करने के लिए हाट-व्यवस्था सम्बन्धी व्यवस्था करना जरूरी हो जाता है। यह भी प्रस्ताव है कि सिर्फ उन क्षेत्रों को छोड़कर जहां तिलहन की पिटाई और किसी प्रकार नहीं हो सकती, वहा नई मिलें खोलने की भी आज्ञा नहीं दी जानी चाहिए और वर्तमान मिलों पर जो उपकर द्वारा निधि एकत्र हो उसका उपयोग टेकनीकल सामान और हाट-व्यवस्था संबधी सुविधाए बढ़ाने के लिए किया जाना चाहिए। यह भी प्रस्ताव है कि गांव के तेलियो को बिना ब्याज के कर्ज दिए जाने चाहिएं ताकि वे सहकारी संस्थाओं के हिस्सेदार बन सकें। कहा जाता है कि गांवों में तेल उद्योग के क्षेत्र में विद्युत चालित सामान के प्रयोग करने के लिए परिस्थितियां अनुकूल है, लेकिन शर्त यह है कि इनका चलन विकेन्द्रित आधार पर सिर्फ उन्हीं लोगो के हाथ में रहे जो स्वयं इस सामान को चला सकें और साथ ही इन्हें इस्तेमाल करने से बेकारी न फैले। दूसरी योजना की अवधि में खादी बोर्ड के कार्यक्रम की मुख्य बातें ये हैं : वर्तमान घानियो को सुधारना, ५०,००० घानियो की जगह नई सुधरी हुई घानियां या वर्धा घानियां लगाना और देश भर में ऐसे ४०० उत्पादन एवं प्रदर्शन केन्द्र खोलना जिनमें हर एक में दो घानियां और एक छन्ना प्रेस हो। भारतीय केन्द्रीय तिलहन समिति ने जो ग्रामीण तिलहन उद्योग के विकास में भी सहायता करती आ रही है, प्रस्ताव रखा है कि वह जो प्रदर्शन यूनिटें सामुदायिक योजना क्षेत्रो में स्थापित कर रही है तथा चला रही है, उनमें वर्धा घानियों की सख्या बढ़ा दी जाए।

३६. **कुटीर उद्योग के चमड़े के जूते**—चमड़े के जूतों के उद्योग के अतर्गत देश भर में फैली हुई यूनिटें, तथा कुछ शहरों जैसे कलकत्ता, आगरा और बम्बई में संगठित कुटीर यूनिटें आती है। प्रस्ताव यह है कि बड़ी यूनिटों की सामर्थ्य बढ़ाने की आज्ञा न देने की नीति को दूसरी योजना के

समय मे भी लागू रखा जाए ताकि इस सामान की बढ़ी हुई माग लघु और कुटीर यूनिट से पूरी हो सके। बडी-बड़ी फैक्टरियो को उत्पादक चमडे का ज्यादा से ज्यादा सामान बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। यह भी प्रस्ताव है कि सरकार कामगारो को कर्ज के रूप मे वित्तीय सहायता दे ताकि वे सहकारी संस्थाओं में हिस्सेदार बन सके, समुन्नत सामान ले सके और अपने काम के लिए पूजी पा सकें। खादी बोर्ड के कार्यक्रम का उद्देश्य ३५,००० मोचियो की इस प्रकार सहायता **करना है कि** उनको कच्चा माल नियमित रूप से मिलता रहे तथा उनका तैयार सामान उचित मूल्य पर खरीदा जाता रहे।

३७. **गांव में चमड़ा कमाई उद्योग**—कलकत्ते के छोटे पैमाने के क्रोम चर्म कारखानो तथा मद्रास के वनस्पति चर्म कारखानो के चर्मकर्मियो की अपेक्षा गावो के चर्मकर्मियों की स्थिति भिन्न है। प्रस्ताव है कि योजना की अवधि मे चमडे के बड़े कारखानो की सामर्थ्य मे विस्तार न होने दिया जाए ताकि आगे जो मांग में वृद्धि होगी उसके अधिकाश की पूर्ति छोटी-छोटी चमड़ा कमाई यूनिटो और चमडा कारखानो द्वारा ही हो। इस क्षेत्र मे विकास कार्यक्रम का उद्देश्य मुख्य रूप से यह होगा कि छोटे-छोटे चर्मकर्मियो को सज्जित केन्द्रो मे समुन्नत रंगाई, फिनिशिंग इत्यादि की सुविधाए देकर उनकी टेकनीकल कार्यक्षमता को, जिसका स्तर इस समय बहुत ही कम है, बढ़ाया जाए। ये केन्द्र विभिन्न इलाको मे कार्य करेंगे। सगठन का सामान्य स्वरूप कुछ इस प्रकार होगा कि ग्रामीण और नागरिक क्षेत्रों के वर्तमान निकोई (चमड़ा उतारने के) केन्द्रो और छोटे-छोटे चमड़े के कारखानो के अलावा हर क्षेत्र में एक या दो केन्द्रीय चमड़े के कारखाने रखे जाएं ताकि छोटी यूनिटो को वहा से चमड़े की फिनिशिंग की तथा अन्य सुविधाएं प्राप्त हो सके। छोटे-छोटे चर्मकर्मी इन सुविधाओ का फायदा उठाएं, इसके लिए प्रस्ताव है कि उन्हें सहकारी संस्थाओं में संगठित किया जाए। दूसरी योजना के लिए खादी बोर्ड के कार्यक्रम में अनेक मृत पशुगृह, चर्मकर्म केन्द्र, सरेस निर्माण केन्द्र और प्रशिक्षण एवं उत्पादन तथा प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था है। उसमें यह भी प्रबन्ध है कि चर्मकर्मियों को अपने घरो मे सुधार करने के लिए कर्ज दिए जाएं।

३८. **गुड़ और खांडसारी उद्योग**—गुड़ और खांडसारी उद्योग के विकास कार्यक्रम का प्रथम उद्देश्य यह होगा कि अच्छा सामान और अच्छे विधायनों के चलन द्वारा टेकनीकल कार्यक्षमता का स्तर ऊचा किया जाए। खाडसारी बनाने के वर्तमान ढग से कुछ भाग बेकार भी जाता है, इसलिए इस टेकनीक को सुधारने की दिशा में खोज कार्य किया जाएगा। खांडसारी बनाने मे वैक्यूम कड़ाही प्रणाली के विकेन्द्रित आधार पर ग्रहण किए जाने की संभावना पर विचार किया जाएगा। गुड़ उद्योग के लिए उसके टेकनीकल पक्ष पर भी ध्यान दिया जाएगा। उसमें विद्युत चालित चरखियाँ, अच्छी कड़ाहिया और भट्ठिया चालू की जाएंगी और गुड़ उत्पादको की सहकारी सस्थाएं बनाई जाएंगी ताकि गुड़ के ज्यादा दिनों अच्छा बने रहने की शक्ति, उचित संग्रह, ठीक से पैकिंग, और गुण के मानकीकरण आदि से सम्बन्धित समस्याओं को हल किया जा सके।

३९. **कुटीर दियासलाई उद्योग**—कुछ समय से 'ए' श्रेणी की बड़ी दियासलाई की फैक्टरियों का विस्तार नही होने दिया गया है। इसलिए दूसरी योजना की अवधि में बढती हुई माग की पूर्ति अपेक्षाकृत 'बी', 'सी' और 'डी' श्रेणी की छोटी फैक्टरियो के उत्पादन से ही होगी। खादी बोर्ड के कार्यक्रम में 'डी' श्रेणी की प्रतिदिन १५ ग्रुस उत्पादन वाली १,००० फैक्टरिया स्थापित करने की व्यवस्था है।

४०. **अन्य ग्रामोद्योग**—अन्य ग्रामोद्योगो में से मधुमक्खी पालन, ताड़-खजूर गुड़, कागज, साबुन और मिट्टी के बर्तनों के लिए खादी बोर्ड ने विकास कार्यक्रम बनाए हैं।

अनेक गांवों मे मधुमक्खी पालन को सहायता दी जाएगी तथा मधुमक्खी पालकों और क्षेत्र कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जाएगा। आदर्श मधुमक्खी केन्द्रों की संख्या भी बढाई जाएगी।

ताड-खजूर के गुड के विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत यह व्यवस्था है कि पेड़ो से नीरा चुआने वालो की योग्यताओं के उपयुक्त विभिन्न प्रकार की उत्पादन इकाइयां स्थापित की जाए। इसके अलावा भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के चुआने वालो को सहायता भी दी जाएगी। इस कार्यक्रम की एक महत्वपूर्ण बात यह है कि सहकारी संस्थाओं और सहकारी संस्थाओं के संघो को ताड-खजूर गुड़, ताड़-खजूर पत्ते और अन्य तत्सम्बन्धी उत्पादों के निर्माण जैसी उत्पादन की नई दिशाएं प्रारम्भ करने में सहायता दी जाए। आशा है कि अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड के संशोधित कार्यक्रम के अनुसार विकास व्यय १९५६-५७ के ५९ लाख से बढकर १९६०-६१ तक ८६ लाख हो जाएगा। सारी योजना पर कुल ५ करोड़ रुपया खर्च होगा।

प्रस्ताव है कि हाथ से बने कागज का उत्पादन १९६०-६१ तक बढाकर ४,४०० टन कर दिया जाए। इसके लिए ८० फैक्टरी यूनिटे, ४०० कुटीर यूनिटें और ४०० स्कूल यूनिटें स्थापित की जाएंगी। अखाद्य तेलों द्वारा साबुन का उत्पादन बढ़ाने के लिए तीन प्रकार के अलग-अलग केन्द्र—तेल उत्पादन केन्द्र, तेल एव साबुन उत्पादन केन्द्र और मिश्रित उत्पादन यूनिट गहन क्षेत्रों मे खोले जाएंगे।

मिट्टी के बर्तन बनाने के उद्योग की सहायता के लिए अधिक अच्छे चाकों की व्यवस्था की जाएगी, नालियों और खपरैलों इत्यादि के अच्छे साचे तैयार किए जाएंगे और अच्छी भट्ठियों की व्यवस्था की जाएगी। अन्य परम्परागत उद्योगों, जैसे रस्सी बटाई और टोकरी बुनाई को भी सहायता दी जाएगी।

४१. **खादी और ग्रामोद्योगों के लिए गहन क्षेत्र तथा हाट-व्यवस्था योजनाएं**—अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड की सामान्य योजनाओ में गहन क्षेत्र योजना उल्लेखनीय है। इस योजना का उद्देश्य है ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था के अभिन्न भाग के रूप में ग्रामोद्योगों का विकास करने की दृष्टि से चुने हुए २०,००० से ३०,००० तक की आबादी वाले समीपस्थ क्षेत्रों का सुगठित रूप से आर्थिक विकास करना। बोर्ड के संशोधित कार्यक्रम के अनुसार दूसरी योजना के अन्त तक कुल २·७७ करोड रुपए के खर्च से इन गहन क्षेत्रों की संख्या १९५५-५६ में ३५ से बढ़ाकर २०० कर दी जाएगी। खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड का यह भी प्रस्ताव है कि गाव के कारीगरों को कच्चा माल, उत्पादन के औजार और तैयार माल की बिक्री की सुविधाएं दिलाने में सहायता करने के उद्देश्य से व्यापक हाट-व्यवस्था संगठन बनाए जाएं। एक त्रिस्तरीय संगठन बनाने का भी प्रस्ताव है जिसमें प्रादेशिक हाट-व्यवस्था केन्द्र, प्रादेशिक हाट-व्यवस्था केन्द्रों के अधीन काम करने वाले विशेष केन्द्र और उपकेन्द्रों के अधीन काम करने वाली फुटकर बिक्री की दुकानें शामिल होंगी। यह भी प्रस्ताव है कि बोर्ड के केन्द्रीय दफ्तर से सम्बद्ध एक केन्द्रीय हाट-व्यवस्था सम्बन्ध सूचना केन्द्र खोला जाए जिसका काम प्रादेशिक हाट-व्यवस्था केन्द्रों के कामों में समन्वय स्थापित करना और कच्चे माल तथा उत्पादन के औजार आदि की पहले से खरीदारी करने के बारे में सलाह देना होगा।

दस्तकारियां .

४२. दस्तकारी की चीजें अपने कलात्मक डिजाइनों के कारण ही उपभोक्ताओ का मन आकर्षित करती है। यह शिल्प हमको अपने पूर्वजो से प्राप्त हुआ है और इसके विकास के लिए हाल मे किए गए प्रयत्नों को अच्छी सफलता मिली है। दूसरी योजना की अवधि मे डिज़ाइनो की उन्नति करने तथा प्रादेशिक डिजाइन केन्द्र स्थापति करने की दिशा मे योजनाए शुरू की जाएगी। इसके अलावा कला स्कूलों को डिजाइनो विषयक विकास अनुभाग खोलने मे सहायता दी जाएगी तथा काम करने वाले कारीगरों को समुन्नत शिल्प डिज़ाइन कार्य मे प्रशिक्षण देने के लिए वज़ीफे दिए जाएंगे। कारीगरों को अच्छा सामान दिया जाएगा ताकि वे अच्छी-अच्छी टेकनीको का उपयोग कर सके। देश में उनकी बिक्री बढाने के उद्देश्य से अनेक केन्द्रों मे नए एम्पोरियम और बिक्री केन्द्र तथा शिल्प संग्रहालय खोले जाएगे। देहाती बाजारो और मेलों मे बिक्री के लिए गाड़िया रखी जाएंगी, पर्यटको के आकर्षण स्थलों मे स्टेशनो तथा हवाई अड्डों इत्यादि पर बिक्री की दुकानों और शो केसों की व्यवस्था की जाएगी। दस्तकारियों की चीजो की बिक्री के लिए सहकारी सगठन स्थापित करने की ओर ध्यान दिया जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शिनियो और औद्योगिक मेलों आदि में भाग लेकर प्रचार इत्यादि द्वारा विदेशो में भी बाजार बनाए जा रहे है।

परम्परागत और नए शिल्पो के विकास के लिए दस्तकारी बोर्ड की सलाह से राज्यो को सहायता दी गई है। अनेक दस्तकारियो, यथा कलात्मक धातुकृतियां, खिलौने, ताल-पत्र और रेशे, पत्थर और संगममर पर पच्चीकारी, लेकर का काम, फीते और कशीदाकारी, बास की चीजे, दरिया, चमड़े का बढिया सामान, चमकदार मिट्टी की चीजे आदि के लिए राज्यो मे प्रशिक्षण अथवा प्रशिक्षण एवं उत्पादन केन्द्र खोले जाएगे। विशिष्ट दस्तकारियो के विकास के लिए भी कई योजनाएं है। इनके अतर्गत उत्तर प्रदेश की सीग, सोने-चांदी के सामान, हाथीदात, बिदरी, लकड़ी के खिलौने, बेत और बास की चीजे, पश्चिम बगाल की कलात्मक मिट्टी के बर्तन, माल्दा शिल्प और चटाइया हैदराबाद की लाख की चूड़ियां, हिमरू, दरिया और ऊनी फर्श, चादी की फिगरी, रगीन पत्थर और सलीमशाही तथा अप्पाशाही जूते, मध्य भारत के चमडे के खिलौने, घास की चटाइयां, कीमखाब के काम, पीतल के नक्काशीदार बर्तन और पेपियर मैशी के काम और दूसरे राज्यों की अन्य स्थानीय दस्तकारिया आती है।

छोटे पैमाने के उद्योग

४३. इस श्रेणी के अन्तर्गत विविध प्रकार के उद्योग आ जाते है किन्तु उनकी सामान्य विशेषताएं है उनकी नागरिक अथवा अर्ध-नागरिक स्थिति और मशीनों, बिजली तथा आधुनिक टेकनीकों का प्रयोग। ये उद्योग छोटे-छोटे उद्यमकर्ताओं या आत्मनिर्भर कामगारों और कही-कहीं सहकारी संस्थाओं द्वारा चलाए जा रहे है। इस क्षेत्र की कुछ यूनिटें, उदाहरणार्थ साइकिल के पुर्जे या सिलाई मशीनों के पुर्जे बनाने वाले बडे-बड़े उद्योगों के सहायक हो सकते हैं, लेकिन वे उनसे नियमानुसार सुव्यवस्थित प्रणाली से जुडे हुए नही है; वे तो उनकी सामयिक आवश्यकताओं के आर्डरों की सप्लाई भर करते हैं। कामकाज के लिए रखी गई परिभाषा के आधार पर लघु उद्योग बोर्ड ने 'छोटे पैमाने के उद्योगों' के अन्तर्गत उन सभी यूनिटों को रख दिया है जिन पर ५ लाख से कम पूजी लगी हुई है और बिजली का प्रयोग करने पर जिसमे ५० से कम आदमी काम करते है। इस क्षेत्र में विकास के लिए मुख्य आवश्यकताए है समुन्नत औजारों, मशीनों और नई टेकनीको को अपनाने के सम्बन्ध में प्रशिक्षण और टेकनीकल सलाह देना, उचित दरो पर कच्चा सामान और बिजली देना, उचित शर्तों पर पर्याप्त वित्त देना, मशीनों के आयात और उनकी खरीद के

लिए सुविधाए देना और उत्पादनों की बिक्री मे सहायता देना। लघु उद्योगो का बडे उद्योगो के सहायकों के रूप में जितना विकास किया जाता है उतनी ही हाट-व्यवस्था की समस्याए आसान हो जाती है। उद्योग के दो क्षेत्रो के बीच इस प्रकार के समन्वय के लिए यह आवश्यक है कि (क) बडी यूनिटों के उत्पादन कार्यक्रमो की योजना बनाते समय चीजो या पुर्जों की खरीद की व्यवस्था विशेष रूप से हो, और (ख) लघु उद्योगों का स्तर इतना हो जाए कि वे वाछित मानक और विवरणों के अनुसार उत्पादनो की सप्लाई बनाए रख सकें। किसी बडे उद्योग की स्थापना के लिए लाइसेंस देने समय या उसका विस्तार करते समय उचित शर्तें और आरक्षण लगाने की प्रथा हाल ही में शुरू की गई है ताकि तत्सम्बन्धी लघु उद्योगों के उत्पादनों के लिए गुजाइश हो सके।

४४. **लघु उद्योग सेवा संस्थान**—केन्द्रीय सरकार १० करोड़ रुपए की लागत से जो कार्यक्रम स्वयं शुरू करेगी उसके अन्तर्गत लघु उद्योग सेवा संस्थानो द्वारा टेकनीकल सेवाओ का और अधिक विस्तार तथा एक औद्योगिक विकास सेवा की स्थापना, मशीने आदि किस्तो पर खरीदने की एक योजना, एक हाट-व्यवस्था सेवा की स्थापना और चुने हुए केन्द्रो तथा उद्योगो में आदर्श योजना की शुरुआत आदि कार्य आते हैं। प्रस्ताव यह है कि लघु उद्योग सेवा सस्थानो की संख्या ४ से बढ़ाकर २० कर दी जाए ताकि हर राज्य के हिस्से मे कम से कम एक सस्थान आ जाए। ये सस्थान समुन्नत प्रकार की मशीनो, साज-सामान और विधायनों, कच्चे माल के प्रयोग और लागत घटाने के तरीकों के बारे में की गई सामान्य पूछ-ताछ पर टेकनीकल सलाह ही नही देंगे बल्कि उनके टेकनीकल कर्मचारी छोटी यूनिटों से सम्पर्क स्थापित करके उनकी समस्याओं पर सलाह देंगे और इस प्रकार एक उपयोगी विकास सेवा की व्यवस्था हो जाएगी। ये सस्थान अपने निजी कारखानो के सस्थानो के बाहर स्थापित केन्द्रों के आदर्श कारखानो और ट्रकों पर लगे हुए चलने-फिरने वाले कारखानों के द्वारा समुन्नत मेंकनीकल सेवाओ और मशीनों के प्रयोग के सम्बन्ध में प्रदर्शन किया करेंगे। इसके अलावा वे उद्योगपतियों को छोटी-छोटी मशीनें और साज-सामान किस्तों पर खरीदने की प्रणाली पर देने के लिए राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम की ओर से भी काम करेंगे। वे छोटे उद्योगो को वर्तमान और भावी बाजार के तथा अपने उत्पादन को ऐसे बाजार के अनुरूप बनाने के बारे में सलाह और सूचना देकर उनके लिए हाट-व्यवस्था भी करेंगे। मशीन और साज-सामान की किस्त-खरीद और हाट-व्यवस्था की योजनाएं औद्योगिक विकास सेवा के स्वाभाविक अंग हैं। इस समय सामान्य कामों की मशीनो की किस्त-खरीद की शर्तें प्रारम्भिक अदायगी के रूप में सामान्य मशीनों के लिए २० प्रतिशत और विशिष्ट मशीनो के लिए ४० प्रतिशत और ब्याज की दर ४½ प्रतिशत है, लेकिन आवश्यकतानुसार ये शर्तें घट-बढ़ भी सकती है।

हाट-व्यवस्था सेवा तीन दिशाओ में शुरू की जाएगी। प्रथम कुछ चीजो के लिए, जैसे आगरे के जूतों, अलीगढ के तालों के लिए तत्सम्बन्धी केन्द्रों में थोक बिक्री केन्द्र खोले जाएंगे और राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम इस सामान को निश्चित मानको के आधार पर खरीदेगा और आस-पास के फुटकर विक्रेताओं को बेचेगा। दूर के क्षेत्रों तथा चुनी हुई फुटकर बिक्री की दुकानो मे बिक्री के लिए चलती-फिरती बिक्री गाड़ियों की व्यवस्था की जाएगी जिनमें यह सामान बाजार भाव पर बेचा जाएगा। दूसरे, राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम संभरण और निपटान महानिदेशक से यह तय करेगा कि इन लघु उद्योगो से सामान आदि की खरीद की जाए। तीसरे, लघु

उद्योग सेवा सस्थान अपने एक पूर्णकालिक अफसर द्वारा बड़ी यूनिटों से ऐसी चीजों के आर्डर पाने की संभावना पर खोज-बीन करवाएंगे जिन्हे लघु उद्योग तैयार कर सकते है ।

जैसे-जैसे हाट-व्यवस्था सेवा और मशीनो आदि की किस्त-खरीद प्रणाली का बड़े पैमाने पर विस्तार होता जाएगा, वैसे-वैसे राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम के सहायक निगमो की स्थापना आवश्यक होती जाएगी । प्रस्ताव है कि बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और दिल्ली मे चार ऐसे निगम स्थापित किए जाए । हो सकता है कि ये निगम ऐसे छोटे उद्योगों के उपयोग के लिए आवश्यक लोहा-इस्पात तथा दूसरा कच्चा माल इकट्ठा करे और सप्लाई करे जिनको सरकार बड़ी यूनिटो के सहायक तथा अन्य ऐसे ही विकास कार्यों के लिए बढ़ावा देना चाहती है । केन्द्रीय सरकार के टेकनीकल सेवा कार्यक्रम के एक भाग के रूप मे जूते, शल्य चिकित्सा सम्बन्धी औजार, ताले, सर्वेक्षण और ड्राइंग के औजार और इलेक्ट्रोप्लेटिंग और गाल्वनाईजिंग जैसे कुछ चुने हुए उद्योगों के लिए विदेशी विशेषज्ञो की सेवाएं प्राप्त की गई है ।

४५. **औद्योगिक बस्तियां**—दूसरी पंचवर्षीय योजना मे काम करने के अनुरूप स्थितिया पैदा करने, उत्पादन के स्तर एक-से बनाए रखने और माल तथा साज-सामान का किफायतशारी से उपयोग करने की दृष्टि से औद्योगिक बस्तियां स्थापित करने के लिए १० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है । मुख्य उद्देश्य यह है कि लघु उद्योग की कई यूनिटे सामान्य सेवाओं और अन्य सुविधाओं, जैसे अच्छा स्थान, बिजली, पानी, गैस, भाप, कम्प्रेस्ड हवा, रेल साइडिंग और वाच एण्ड वार्ड इत्यादि के फायदे उठा सकें । कुछ यूनिटें एक-दूसरे के नजदीक स्थित होने की वजह से दूसरों की सेवाओं और माल का लाभ अधिक आसानी से उठा सकेंगी । इस प्रकार वे अन्योन्याश्रित और पूरक बन सकेंगी। दो प्रकार की औद्योगिक बस्तिया स्थापित किए जाने की आशा है : एक तो बड़ी बस्तिया जिन पर लागत ४० से ५० लाख रुपए तक और दूसरे, छोटी बस्तिया जिन पर २० से २५ लाख रुपए तक आएगी । प्रस्ताव यह है कि इनके निर्माण और प्रबन्ध की सारी जिम्मेदारी राज्य सरकारों पर हो और केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारों को इन बस्तियो की पूरी लागत कर्ज के रूप में दे । राज्य सरकारें इनका सचालन निगमों अथवा ऐसी एजेंसियो द्वारा करेंगी जिन्हें वे स्थापित करना चाहे । इन बस्तियों की जमीनें औद्योगिक यूनिटों को सीधे बेच दी जाएंगी या किस्त-खरीद शर्तो पर दे दी जाएंगी । कही-कहीं इमारते बनाकर अथवा किराया चुकाते-चुकाते मल्कियत प्राप्त करने के आधार पर दे दी जाएंगी अथवा अगर जरूरी हुआ तो सीधे बेच दी जाएगी । राजकोट, दिल्ली, मद्रास, पश्चिम बंगाल, मैसूर, तिरुवाकुर-कोचीन और उत्तर प्रदेश के लिए १० ऐसी बड़ी औद्योगिक बस्तिया बनाने की स्वीकृति दी जा चुकी है । लघु उद्योग बस्तियों के लिए फिलहाल आठ क्षेत्र चुने गए है ।

ग्राम और लघु उद्योग समिति ने यह मत प्रकट किया था कि औद्योगिक बस्तियां कुछ ऐसे स्थानों पर होनी चाहिएं जहा कि वे नागरिक केन्द्रो में और अधिक आबादी बढ़ाने में योग न दें । इन बस्तियों, विशेषकर छोटी बस्तियों के स्थानों का निर्णय करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि उनका विकास निश्चित रूप से अपेक्षाकृत छोटे कस्बों के निकट ही हो ।

४६. **राज्यीय योजनाओं के अन्तर्गत छोटी योजनाएं**—केन्द्र की टेकनीकल सेवा योजनाए और औद्योगिक बस्तियो की योजनाए छोटे पैमाने के उद्योगो की विकास गति और उनकी दिशा पर प्रभाव अवश्य डालेंगी, परन्तु इन उद्योगों के विकास का स्वरूप राज्यो में बनाई

जाने वाली और चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाओं को गति से निर्धारित होगा। राज्यों की योजनाए मोटे तौर पर चार प्रकार की है, जैसे—

(क) टेकनीकल सेवा और खोज योजनाएं, उदाहरणार्थ प्रशिक्षण एवं उत्पादन या प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन केन्द्र और पोलीटेकनीक विद्यालय,

(ख) विभागों द्वारा शुरू की हुई प्रारम्भिक योजनाए, जिन्हे औद्योगिक सहकारी सस्थाओ या निजी उद्यमों में बदल दिया जाएगा,

(ग) वाणिज्य से सम्बन्धित उत्पादन योजनाएं और उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के आधीन निजी कम्पनियों को कर्जे, और

(घ) बिजली देने की योजना।

४७. राज्यो के प्रशिक्षण और टेकनीकल सेवा के कार्यक्रम, केन्द्र के उस कार्यक्रम के परिपूरक होगे जिसको लघु उद्योग सेवा संस्थान पूरा करेगे। इस मामले तथा विकास के अन्य क्रिया-कलाप मे और लघु उद्योग सेवा सस्थानो और राज्यों के उद्योग विभागों के बीच समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता मानी जा चुकी है और उन दोनो कार्यों के विशिष्ट क्षेत्र तथा अपने कार्यों में समन्वय लाने की रीति निर्धारित करने के लिए भी प्रयत्न किए जा रहे है। ये संस्थान मूलत: टेकनीकल सेवा एजेंसियों के रूप में काम करेंगे और राज्यो के उद्योग विभाग उद्योग शुरू करने, उद्योगों के लिए वित्तीय तथा अन्य प्रकार की आवश्यक सहायता प्राप्त करने, औद्योगिक सहकारी संस्थाओ का सगठन करने इत्यादि से सम्बन्ध रखने वाले मामलों को निपटाएंगे। केन्द्रीय सरकार की प्रारम्भिक योजनाओ, जैसे नमूने के कारखाने, टेकनीकल विशेषज्ञो की सेवाओं का प्रबन्ध करना और भिन्न-भिन्न प्रदेशो के लिए उपयुक्त उद्योगो की सूचिया तैयार करना आदि मामलों मे सलाह-मशविरा किया जाएगा। लघु उद्योग विकास आयुक्त के दफ्तर ने कुछ उद्योगों के लिए नमूने की योजनाएं तैयार की है।

४८. भिन्न-भिन्न लघु उद्योगों की विकास योजनाएं बनाने का प्रस्ताव करने के पहले मांग, कच्चे माल की प्राप्ति, सम्बन्धित परिस्थितियों तथा अन्य बातों पर ध्यानपूर्वक विचार करना होगा। भिन्न-भिन्न प्रदेशों के लिए उन उद्योगों का चुनना लाभप्रद होगा जिनके लिए वहां उपयुक्त परिस्थितियां विद्यमान हो, और इसीलिए इनको विशेष रूप से बढ़ावा तथा सहायता दी जानी चाहिए। चुने हुए उद्योगों की सूचियों से विभागीय योजनाएं बनाने और गैर-सरकारी लोगों से कर्ज तथा अन्य सहायता पाने के लिए आई अर्जियों पर विचार करने में काफी सहायता मिल सकती है। इन योजनाओ के बनाने के लिए और बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार उनमें संशोधन करने के लिए सर्वेक्षणों की और साथ ही परिश्रम के साथ हर चीज का अन्वेषणात्मक अध्ययन करने की आवश्यकता है। लघु उद्योग बोर्ड ने जाच-पड़ताल का कार्यक्रम पहले से ही शुरू कर दिया है और एक दल ने उत्तरी क्षेत्र के चार उद्योगो, अर्थात खेल-कूद का सामान, सिलाई मशीनें और पुर्जे साइकिलें और पुर्जे, चमड़े के जूते, और एक अखिल भारतीय उद्योग, अर्थात उत्तरी क्षेत्र के लिए स्वचल बैटरियों पर अपनी रिपोर्ट पूरी कर ली है। इस प्रकार के दल पूर्वी, दक्षिणी तथा पश्चिमी क्षेत्रों के लिए भी काम कर रहे है। इन अध्ययनो के पूरे होने तक राज्य के उद्योग विभाग अपने चुनाव और सूझ के आधार पर स्वयं ही उद्योगो की सूचिया फिलहाल बना सकते हैं ताकि इस क्षेत्र में विकास के लिए निश्चित मात्रा में दिशा-संकेत तथा मार्ग-दर्शन किया जा सके।

रेशम कीट पालन :

४९. रेशम कीट पालन उद्योग मे रोजगार प्रदान करने की बहुत सम्भावनाए है और इससे देहात के बहुत-से कुटुम्बो को पूरक काम-धधा मिलता है। चूंकि रेशमी कपडा उद्योग को अन्य वस्त्र उद्योगो से होड लेनी है, इसलिए इस उद्योग मे विस्तार तथा स्थायित्व तभी आ सकेगा जब उसकी किस्म में उन्नति हो तथा लागत कम हो। शहतूती रेशम और गैर-शहतूती रेशम दोनो के सुधार और विकास की योजनाए पहली योजना की अवधि से ही चल रही है। लेकिन दूसरी योजना मे हर दिशा में व्यापक प्रयत्न किए जाएंगे। इस कार्यक्रम का अधिकाश राज्यो मे कार्यान्वित होगा, केन्द्रीय योजनाएं समन्वय और अखिल भारतीय अनुसंधान केन्द्रों तक सीमित रहेगी। शहतूती रेशम के सम्बन्ध मे विकास कार्यक्रम में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि बरसाती और सिचाई वाले दोनो प्रकार के इलाको में शहतूत के वर्तमान पेडो मे कलमें बाधकर काफी मात्रा मे पत्ती पैदा करके, अधिक पत्तियां देने वाले शहतूतों की नई-नई किस्मे पैदा करके और खेती के तरीकों, खाद आदि मे सुधार करके शहतूत की पत्तियों की लागत घटाई जाएगी। शहतूत और कोओ मे सुधार लाने मे इन तथा अन्य उपायों के साथ-साथ रेशम लिपटाई के आधुनिकीकरण, देशी चरखो के साथ अच्छी चिलमचिया लगाने और लिपटाई यन्त्रो (फिलेचर्स) को भी समुन्नत किया जाएगा, देहाती चरखों की जगह समुन्नत चिलमचियो का चलन कराया जाएगा और चिलमचियो को अनेक तारों वाली चिलमचियों में बदलने और केन्द्रीय तापन प्रणाली और प्रशीतक कोष्ठो का चलन करने इत्यादि के लिए भी उपाय किए जाएगे। बटे रेशम उद्योग मे निकलने वाले उप-उत्पादनों का उपयोग किया जाना लिपटाई उद्योग के हित में बडा आवश्यक है। बटे रेशम उद्योग की फिर से जमाने और उसके विकास के लिए भी प्रयत्न किए जाएंगे। पहली और दूसरी अवस्थाओं के कीडो को साथ-साथ जुटाने के लिए प्रयोग के रूप मे सहकारी संस्थाए स्थापित की जाएंगी और कोओ का परीक्षण और उनका श्रेणी-विभाजन किया जाएगा, साथ ही वास्तविक उपज के आधार पर कोओं के दाम अदा करने की रीति चलाई जाएगी। कलकत्ता, बंगलौर और बरहामपुर स्टेशन के अनुकूलन गृहो पर अधिक काम किया जाएगा। राज्यों के रेशम कीट पालन विभागों के कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए दो प्रशिक्षण संस्थान स्थापित किए जाएंगे।

जहा तक गैर-शहतूती रेशम का सवाल है, विकास कार्यक्रम मे बागान और एड़ी, मूगा और टसर के मूल बीज के कोओ के उत्पादन में सुधार की व्यवस्था की गई है। शहतूती रेशम उद्योग की ही भांति बीज की सप्लाई का संगठन, कताई और लिपटाई क्रिया में सुधार, हाट-व्यवस्था, प्रशिक्षण और खोज कार्य आदि भी किए जाएंगे।

नारियल जटा उद्योग

५०. इस उद्योग की दो मुख्य शाखाएं है : छिलके से सूत तैयार करना और नारियल के सूत से चटाइयां, मैटिंग, दरियां और कम्बल जैसी चीजें बनाना। दूसरी योजना के विकास कार्यक्रम का उद्देश्य मुख्य रूप से इस उद्योग की एक प्रमुख समस्या, अर्थात सहकारी संस्थाएं बनाकर उत्पादकों की स्थिति सुधारने की समस्या को हल करना होगा। छिलकों को इकट्ठा करने और उनको प्राथमिक सहकारी संस्थाओं को बांट देने के लिए ठोडू (छिलका) सहकारी संस्थाओं का संगठन किया जाएगा। छिलके भिगोने के लिए, और भिगोए हुए छिलकों को नारियल का सूत तैयार करने के लिए, सदस्यो में वितरण के लिए तथा सूत के संग्रह के लिए प्राथमिक सहकारी

सस्थाओं का सगठन किया जाएगा। प्राथमिक संस्थाओ से आए हुए सूत की बिक्री के लिए नारियल जटा हाट-व्यवस्था संस्थाए भी बनाई जाएगी। पहली योजना मे सहकारी सगठन की दिशा में अच्छी शुरुआत हो चुकी है और दूसरी योजना के लिए काफी बडा कार्यक्रम बनाया गया है। प्राथमिक संस्थाओं का पर्यवेक्षण करने और उन पर नियंत्रण रखने के लिए सघो की स्थापना की जाएगी। सहकारी संस्थाओं को उनके स्थापन व्यय के लिए अनुदान और कार्यचालन पूजी सम्बन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए कर्ज दिए जाएगे।

नारियल जटा के सामान के निर्माण सबधी विकास कार्यक्रम का मुख्य काम है कुछ छोटी फैक्टरियों और अलग-अलग निर्माताओं की चटाई और मैटिंग सहकारी संस्थाएं बनाना तथा केन्द्रीय नारियल जटा उत्पादन हाट-व्यवस्था सस्थाओं की स्थापना करना। नारियल जटा की मशीनो द्वारा बुनाई किए जाने पर प्रयोग किए जाते रहेंगे और उनका आगे भी विकास किया जाएगा, और प्रस्ताव है कि एक केन्द्रीय नारियल जटा अनुसंधान संस्था और एक प्रारम्भिक सयत्र की भी स्थापना की जाए। विदेशों मे प्रदर्शन कक्षो और माल गृहो की स्थापना करके तथा दूसरे देशो मे व्यापारिक शिष्टमंडल भेजकर नारियल और उसके उत्पादनो की विदेशो में और अधिक बिक्री की जाएगी।

प्रशासन, प्रशिक्षण और खोज कार्य

५१. ग्राम और लघु उद्योगो के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से इन कार्यों को उच्च प्राथमिकता दी जाएगी। राज्य के उद्योग विभागो के मुख्यालयों और क्षेत्र दोनों जगहों में वृद्धि की जाएगी, क्षेत्र कर्मचारियो और कारीगरों को प्रशिक्षण दिया जाएगा, कारीगरो की सहकारी संस्थाएं बनाई जाएगी और उद्योगों के उत्पादनो की हाट-व्यवस्था के लिए उचित प्रबन्ध किया जाएगा। उद्योग विभागों की वृद्धि के लिए योजना मे 'सामान्य योजनाओं' की व्यवस्था रखी गई है। छोटे पैमाने के उद्योगों में लगे हुए कर्मचारियों की तनखाहो और भत्तों के लिए १९५५-५६ से लेकर तीन साल तक कुल खर्च का ५० प्रतिशत देना शुरू कर दिया है। क्षेत्र स्तर पर अर्थात जिला उद्योग और उससे नीचे के कर्मचारियों के सम्बन्ध में इस बात को तरजीह दी जाएगी कि समस्त ग्राम समूह और लघु उद्योगों के लिए एक ही कर्मचारी वर्ग हो।

ग्राम और लघु उद्योगो के विकास सम्बन्धी सगठन का अधिकांश काम राज्यों में ही होता है। हर राज्य में ग्राम और लघु उद्योगों के कार्यक्रम को सुव्यवस्थित संगठनों द्वारा कार्यान्वित किया जाना है। इस संगठन में टेक्नीकल और विकास स्तरों के लिए तथा सहकारी एजेंसियों के सहयोग वाले कारखानों के लिए काफी कर्मचारी होंगे। पर्याप्त सलाह और पथ-प्रदर्शन के अलावा प्रत्येक राज्य के संगठन कार्य की मोटी-मोटी दो श्रेणिया है. (क) कारीगरों और छोटे उद्यमकर्ताओं के सहयोग से नागरिक क्षेत्रों या विकसित केन्द्रो के काम, और (ख) रोजगार की कमी को दूर करने के लिए ग्राम विकास कार्यक्रमो के साथ काम। इन दोनो के लिए ऐसे प्रशिक्षण विकास कार्यकर्ताओ की जरूरत है जो एक तो विशेषज्ञों से निदेश प्राप्त कर सकें, दूसरे, संख्या मे इतने पर्याप्त हो कि एक-एक कारीगर और सहकारी संस्था तक पहुचकर उनको आवश्यक सहायता दे सकें। थोड़े समय में कारीगरों के सगठन का काम सहकारी संस्थाओ के हाथ में आ जाएगा और पदाधिकारियों का अभी जो इतना अधिक योग है वह भी धीरे-धीरे खत्म होता जाएगा, लेकिन यह स्थिति लाने के लिए बहुत-सा रचनात्मक कार्य करना होगा।

कर्वे समिति ने विकेन्द्रित क्षेत्र में कामों, नीति और वित्त के बीच समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता पर जोर दिया था। इस समिति ने यह भी सिफारिश की थी कि केन्द्र मे ग्राम और लघु उद्योगों के लिए एक मंत्रालय तथा अखिल भारतीय बोर्डो के अध्यक्षों की एक समन्वय समिति बनाई जाए।

५२. दूसरी योजना के लिए अखिल भारतीय बोर्डों और राज्य सरकारों ने अपने प्रस्तावो मे प्रशिक्षण तथा अनुसंधान की अनेक योजनाए रखी है। हथकरघा उद्योग मे जुलाहों को उत्पादन की समुन्नत टेकनीकों का प्रशिक्षण देने के लिए केन्द्र स्थापित किए जाएगे। देशी रगो पर अनुसधान करने की भी व्यवस्था की गई है। खादी और ग्राम उद्योगों के लिए एक सुगठित प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाया गया है जिसमें ४ केन्द्रीय सस्थाएं और २० प्रादेशिक विद्यालय तथा साथ ही भिन्न-भिन्न ग्रामोद्योगों का सविस्तर प्रशिक्षण देने वाली अनेक प्रशिक्षण संस्थाएं होगी। अम्बर चरखा कार्यक्रम की शुरुआत १९५५-५६ मे तभी हो गई थी जब प्रशिक्षण और खोज कार्य के लिए ३० लाख रुपया स्वीकृत किया गया था। ग्रामोद्योग मे खोज कार्य के लिए एक केन्द्रीय टेकनोलौजिकल संस्था वर्धा में खोली गई है। दस्तकारियों के प्रशिक्षण और खोज कार्यक्रम में ये बातें शामिल हैं :—केन्द्रीय दस्तकारी विकास केन्द्र की स्थापना, टेकनीकल खोज कार्य संस्थाओं को दस्तकारी की टेकनीको पर विशिष्ट खोज कार्य करने के लिए सहायता, वर्तमान प्रशिक्षण कक्षाओ को विस्तार केन्द्रों में बदलना और नए केन्द्रो की स्थापना तथा प्रशिक्षण के लिए काम करने वाले कारीगरों के लिए वजीफे देना। लघु उद्योगों के लिए प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन और प्रशिक्षण एव उत्पादन केन्द्र अधिकाश राज्यों में खोले जाएंगे। बहुत-से राज्यों ने भिन्न-भिन्न उद्योगो मे प्रशिक्षण देने के लिए पोलीटेकनीक विद्यालय खोलने के प्रस्ताव तैयार किये है। ये पोलीटेकनीक विद्यालय लघु उद्योग सेवा संस्थानों और आदर्श और चल कारखानों के अलावा होंगे। रेशम कीट पालन के लिए २ प्रशिक्षण संस्थानो और प्रशिक्षण केन्द्रो की स्थापना के अलावा प्रस्ताव यह है कि उच्चतर प्रशिक्षण के लिए टेकनीकल कर्मचारियों को विदेशों में भी भेजा जाए। रेशम कीट पालन में अनुसंधान की सुविधाएं बरहामपुर और मद्रास की अनुसंधान संस्थाओं में उनका विस्तार करके प्रदान की जाएंगी। नारियल जटा उद्योग के कार्यक्रम मे ये कार्य शामिल हैं : बम्बई में ३ प्रशिक्षण स्कूलो की स्थापना, तिरुवांकुर-कोचीन में एक केन्द्रीय अनुसंधानशाला और उसकी एक अनुसंधान शाखा की कलकत्ता में स्थापना तथा मशीनों द्वारा नारियल जटा की बुनाई करने के लिए प्रारम्भिक संयंत्रों की संस्थापना। औद्योगिक सहकारी संस्थाओं मे कर्मचारियों को जो प्रशिक्षण दिया जाएगा वह सहकारी प्रशिक्षण की केन्द्रीय समिति के निदेशन में संगठित किए जाने वाले प्रशिक्षण के एक भाग के रूप में होगा। सामुदायिक योजना प्रशासन ने भी सामुदायिक योजना क्षेत्रों के लिए अनेक खण्ड विकास अफसरों (उद्योग विषयक) के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया है।

अध्याय २१

परिवहन

विषय-प्रवेश

आर्थिक विकास की किसी भी योजना की सफलता के लिए, जिसमें द्रुतगति से औद्योगीकरण पर ध्यान दिया गया हो, परिवहन और संचार की सुविकसित और समर्थ व्यवस्था बहुत जरूरी है। पहले, देश के परिवहन और सचार साधनों का विकास करने में मुख्य विचार, व्यापार और प्रशासन की आवश्यकताओ का रखा जाया करता था। द्वितीय विश्व युद्ध के समय से परिवहन के साधनों का संगठन औद्योगिक विकास की आवश्यकताएं अधिकाधिक पूरी करने की दृष्टि से किया जाने लगा। द्वितीय योजना मे इस प्रक्रिया को और भी आगे बढ़ाया जाएगा। इस योजना मे परिवहन और सचार साधनों की उन्नति के लिए १,३८५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, जो योजना के सरकारी भाग के समस्त व्यय का २९ प्रतिशत है। आगे चलकर देश के परिवहन और संचार साधनो पर जो भारी बोझ पड़ने की सम्भावना है, उसका विचार करे तो ऐसा महसूस होता है कि जो राशि इस कार्य के लिए अब नियत की गई है उससे अधिक का व्यय किया जाता तो राष्ट्र की अर्थ-व्यवस्था को और भी लाभ हो सकता था। परन्तु उपलब्ध साधनों पर अन्य बड़ी-बड़ी आवश्यकताओं का भी दबाव था, इसलिए इस राशि को सीमित कर देना पड़ा। परिवहन और संचार के लिए रखी गई १,३८५ करोड़ रुपए की समस्त राशि में से, ९०० करोड़ रुपए रेलों पर, २६६ करोड़ रुपए सड़को, सड़क परिवहन और पर्यटन पर, १०० करोड़ रुपए जहाजरानी, बन्दरों व बन्दरगाहों, प्रकाश-स्तम्भों और आन्तरिक जल मार्गों पर, ४३ करोड़ रुपए नागरिक वायु परिवहन पर, और ७६ करोड़ रुपए संचार साधनों तथा प्रसारण पर व्यय किए जाएंगे।

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना में परिवहन के क्षेत्र में प्रधान कार्य उन स्थायी परिवहन साधनों के यथाशक्ति पुनस्संस्थापन करने का था जिन पर विगत दस वर्षों में काम का अभूनपूर्व दबाव पड़ा था। रेलो के पुनस्संस्थापन का कार्य विशेष रूप से भारी था, परन्तु जहाजो, बन्दरों, बन्दरगाहों, प्रकाश-स्तम्भों और नागरिक वायु परिवहन पर भी बड़ी-बड़ी राशियां व्यय करनी पड़ी थीं। प्रथम योजना के समय ज्यों-ज्यो कृषि और उद्योगों का उत्पादन बढ़ता गया त्यों-त्यो, विशेषत: योजना के तृतीय वर्ष से, परिवहन के साधनों पर बढ़ता हुआ दबाव अनुभव होने लगा। इसका सामना करने के लिए रेलों, सड़कों, जहाजों, और नदी तथा वायु मार्गों द्वारा परिवहन के लिए अतिरिक्त धन जुटाया गया और इनके कार्यक्रमों को अधिक बढ़ा दिया गया। रेलों के लिए इंजन और डिब्बे आदि प्राप्त करने के कार्यक्रम की गति तीव्र करके, रेल मार्ग के अधिक कठिन भागो ने परिवहन के सब साधनों का समन्वित विकास करने के प्रश्नों पर विचार किया। सड़कों के परिवहन पर उसने विशेष ध्यान दिया, क्योंकि कुछ समय से वह बढ़ती हुई आवश्यकताएं पूरी करने में सफल नही हो रहा था। नए लाइसेंस देने की नीति उदार कर दी गई, और योजना के निजी भाग में जिन कारणों से सडक परिवहन का विकास होने में रुकावटें पड़ रही थी, उन्हें दूर करने के उपाय किए गए। भारतीय जहाजरानी की सहायता के लिए भी कदम उठाए गए है।

३ पुनर्निर्माण का कार्य अभी पूरा नही हुआ है, फिर भी द्वितीय योजना मे देश के परिवहन साधनो का प्रभूत विस्तार करने का कार्यक्रम है, विशेषत. रेलो का, क्योकि यातायात का सर्वाधिक भार उन पर ही रहेगा । रेल विस्तार का कार्य औद्योगिक विकास के, विशेषतः लोहा, कोयला और सीमेंट जैसे बडे उद्योगों के कार्यक्रम के साथ समन्वित करके करना होगा । द्वितीय योजना मे परिवहन के विभिन्न साधनो मे अधिक अच्छा तालमेल रखने का भी ध्यान रखा जाएगा। यह भी विचार है कि योजना के सरकारी विभाग में सडक परिवहन के कार्यों मे रेलो से सहायता ली जाए। एक ओर रेलों और समुद्र-तट की जहाजरानी मे और दूसरी ओर रेलो और आन्तरिक जल मार्गों के परिवहन मे समन्वय की समस्याओ पर भी ध्यान दिया जा रहा है। इस प्रकार योजना का लक्ष्य यह है कि देश के सभी महत्वपूर्ण परिवहन साधनो का यथासम्भव अधिकतम विकास हो जाए, और उनमे उचित समन्वय तथा सहयोग रहे, जिससे जो साधन जिस कार्य को करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है उसे वही कार्य सौंपा जा सके। साराश यह है कि आगामी पाच वर्षों मे सभी परिवहन साधनों पर भारी बोझ पडने की सम्भावना है। इसलिए विचार है कि परिवहन और सचार के कार्यक्रमो की पर्यालोचना प्रतिवर्ष की जाती रहे, जिससे कि जहा कही आवश्यकता हो वहा अतिरिक्त उपाय करके मार्ग की बाधाओं को दूर कर दिया जाए और योजना के अन्य कार्यक्रमो की पूर्ति मे विघ्न न पडे ।

१. रेलें

४. भारतीय रेलो में सब मिलाकर लगभग ९७४ करोड रुपए की पू जी लगी हुई है, और यह देश का सबसे बड़ा राष्ट्रीय उद्योग है । इसमे सन्देह नही कि यह राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के प्रधान स्तम्भो में से है। रेले जो सेवा प्रदान कर रही है उसका सुरक्षित, कुशल तथा कम खर्चीला होना आवश्यक है। रेलो के लिए यह भी आवश्यक है कि वे अपना कार्य करते हुए नवीनतम वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक प्रगति से लाभ उठाती रहें। व्यय घटाने और कुशलता बढ़ाने के लिए उन्हे डीजल तेल और बिजली की ताकत का, उन्नत प्रकार के भाप के इजनो का, माल ढोने और यात्रियो के बैठने के बढिया डिब्बों का, और सिगनल देने तथा दूर संचार के लिए नए सुधरे हुए यन्त्रो का अधिकाधिक मात्रा मे प्रयोग करना होगा। द्वितीय योजना मे इन सब दिशाओं मे सुधार किया जाएगा और उसका फल यह होगा कि रेलगाड़ियां अधिक लम्बी, भारी और आवश्यकतानुसार अधिक द्रुतगामी की जा सकेंगी । इससे बिछी हुई लाइनो की सामर्थ्य और इंजनो व डिब्बों आदि का पूरा उपयोग हो सकेगा । देश के जिन भागों मे अभी तक रेल अच्छी तरह नही आती जाती है उनमें से कइयो मे अपने साधनो के अनुसार नई लाइने भी बनाई जाएंगी ।

प्रथम योजना में हुई प्रगति

५. प्रथम पचवर्षीय योजना के पहले एक दशक से भी अधिक समय से रेलो पर काम का अत्यधिक भारी बोझ पडता रहा था। इसलिए प्रथम योजना का प्रधान लक्ष्य इजनों व डिब्बों और स्थायी साधनो का पुनस्सरथापन तथा नवीकरण करना था। इस योजना के अन्य लक्ष्य थे : उत्पादन और विकास के कार्यक्रमों की पूर्ति के कारण जो नई आवश्यकताएं हों उनको पूरा करने के लिए यथासम्भव नए साधन मुहैया करना, यात्रियो को अधिक सुख-सुविधाएं पहुंचाना और रेल कर्मचारियों के लिए अच्छे मकानों तथा कल्याण कार्यों का प्रबन्ध करना । प्रथम योजना काल में इन सब लक्ष्यों को पूरा करने का निरन्तर प्रयत्न किया जाता रहा । इस योजना के पाचो वर्षों मे रेलों के सब कार्यक्रमो पर व्यय करने के लिए पहले ४०० करोड़ रुपए रखे गए थे । इनमें, १५०

——	१९५०-५१	१९५५-५६	प्रथम योजना में वृद्धि का प्रतिशत
(क) राजकीय	२१०·४	४५०·०	११४
(ख) निजी	३००·३	४३०·०	४३
अपनी बिजली उत्पन्न करने वाले औद्योगिक कारखाने	१४६·८	२२०·०	५०
योग	६५७·५	१,१००·०	६७

३३. प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय बिजली की निम्नलिखित बड़ी-बड़ी योजनाएं पूरी की गई और इन्होने काम शुरू कर दिया :—

१. नंगल (पंजाब)	४८,००० किलोवाट
२. बोकारो (बिहार)	१,५०,००० किलोवाट
३. चोला (कल्याण, बम्बई)	५४,००० किलोवाट
४. खापरखेड़ा (मध्य प्रदेश)	३०,००० किलोवाट
५. मोयार (मद्रास)	३६,००० किलोवाट
६. मद्रास नगर के संयंत्र का विस्तार (मद्रास)	३०,००० किलोवाट
७. मच्छकुड (आन्ध्र और उड़ीसा)	३४,००० किलोवाट
८. पथरी (उत्तर प्रदेश) ..	१३,६०० किलोवाट
९. शारदा (उत्तर प्रदेश)	२७,६०० किलोवाट
१०. सेंगुलम (तिरवांकुर-कोचीन)	४८,००० किलोवाट
११. जोग (मैसूर) ...	७२,००० किलोवाट

इनके अतिरिक्त, कई बड़ी योजनाओं में बहुत प्रगति हो चुकी है, जो द्वितीय पंचवर्षीय योजना के समय पूरी हो जाएंगी। भाखड़ा, हीराकुड, कोयना, चम्बल और रिहन्द इस गणना में आते हैं और इनसे द्वितीय योजना के समय १७ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न होने की क्षमता बढ़ जाने की सम्भावना है। इन चलती हुई योजनाओं की विस्तृत तालिका इस अध्याय के अन्त में परिशिष्ट के विवरण ५ में दी गई है।

३४. देश में "ग्रिड सिस्टम" (दूर-दूर तक के स्थानो के लिए एक केन्द्र बनाकर बिजली वितरित करने की पद्धति) का विस्तार करने के लिए तार लगाने के काम में भी सन्तोषजनक प्रगति हो चुकी है। प्रथम योजना काल में ११ किलोवाट और इससे ऊपर की शक्ति के १९,००० मील लम्बे तार लगाए जा चुके थे। १९५१ की तुलना में यह वृद्धि १०० प्रतिशत थी।

३५. जिन नगरों और ग्रामों मे बिजली पहुच गई है, उनकी संख्या में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। यह निम्नलिखित तालिका से प्रकट होगा :—

आबादी	१९५०-५१*			१९५५-५६
	१९४१ की जनगणना के अनुसार संख्या	मार्च १९५१ तक बिजली लगे गांवों की संख्या	१९५१ की जनगणना के अनुसार समस्त संख्या	मार्च १९५६ तक बिजली लगे हुओ की संख्या
१ लाख से ऊपर	४९	४९	७३	७३
५० हजार से १ लाख तक	८८	८८	१११	१११
२० हजार से ५० हजार तक	२७७	२४०	४०१	३६६
१० हजार से २० हजार तक	६०७	२६०	८५६	३५०
५ हजार से १० हजार तक	२,३६७	२५८	३,१०१	१,२००
५ हजार से कम	५,५९,०६२	२,७९२	५,५६,५६५	५,३००
	५,६२,४५०	३,६८७	५,६१,१०७	७,४००

१० हजार से कम आबादी की जिन बस्तियो मे बिजली पहुंच गई, उनकी संख्या प्रथम योजना के समय दुगने से भी अधिक हो गई। ५,००० से कम आबादी के जिन गांवो को बिजली मिलने लगी, उनकी संख्या इस अवधि मे २,७९२ से उठकर ५,३०० तक पहुंच गई।

३६. १९५०-५१ में हमारे देश मे प्रति व्यक्ति पीछे बिजली का औसत खर्च १४ यूनिट था। उपर्युक्त बिजली के उत्पादन और वितरण का परिणाम यह हुआ कि १९५५-५६ मे यह औसत २५ यूनिट तक पहुंच गया।

३७. प्रथम पंचवर्षीय योजना में सब मिलाकर बिजली की योजनाओ पर खर्च करने के लिए २६० करोड़ रुपए की राशि रखी गई थी। इस राशि मे हिसाब लगाकर बिजली का वह खर्च भी शामिल कर लिया गया है जो कि बहुद्देशीय योजनाओं के समस्त व्यय का भाग था। भाखड़ा-नंगल, दामोदर घाटी, हीराकुड, चम्बल, कोयना और रिहन्द आदि जिन बड़ी-बड़ी नदी घाटी योजनाओं में तामीरी काम भारी पैमाने पर करने की जरूरत थी, उनमें शुरू-शुरू में जाच पूरी करने, योजनाओ के क्षेत्र का हिसाब बार-बार सुधारते और संगठन की आवश्यक तैयारी करने आदि में बहुत देर लग गई। इसके अतिरिक्त, बिलम्ब का एक कारण यह भी हुआ कि बिजली के उत्पादन और वितरण के सब सामान के लिए हमारा देश विदेशों पर आश्रित था, और विदेशी कारखानों ने यह सामान धीरे-धीरे और देर लगाकर भेजा। इस्पात और सीमेंट आदि मूल आवश्यकता के सामानों की प्राप्ति में भी कुछ कठिनाई का सामना करना पड़ा। इन सब कठिनाइयों के बावजूद प्रथम योजना काल में बिजली उत्पादन तथा वितरण के कार्यक्रमों की प्रगति सन्तोषजनक रही।

*नोट—१९५१ की जनगणना का परिणाम देर में प्रकाशित हुआ था, इसलिए १९५०-५१ के लिए उपलब्ध बिजली सम्बन्धी आंकड़े १९४१ की जनगणना के अनुसार ग्राम संख्या के आधार पर तैयार किए गए हैं।

विकास के भावी कार्य

३८. बिजली की योजनाएं बनाने का काम एक ऐसी प्रक्रिया है जो निरन्तर चलती रहती है। उन्हें तैयार करते हुए दीर्घकालीन लक्ष्यों पर दृष्टि रखनी पड़ती है। जब प्रथम योजना बनाई गई थी तब लक्ष्य यह माना गया था कि १५ वर्ष पश्चात ७० लाख किलोवाट बिजली की आवश्यकता पड़ेगी। परन्तु अब तक जो प्रगति हो चुकी है और जिस प्रकार उद्योगों, नगरों और ग्रामों में बिजली की माग बढ़ती जा रही है, उस सबको देखते हुए उक्त लक्ष्य को ऊंचा उठाना पड़ रहा है। इस समय द्वितीय और तृतीय योजना कालों की आवश्यकताओं का जितना अन्दाजा लगाया जा सकता है, उसके अनुसार योजना का लक्ष्य बिजली देने वाले कारखानों की क्षमता प्रतिवर्ष २० प्रतिशत वृद्धि करते जाने का रखना होगा। इस हिसाब से, हमारा कल्पित लक्ष्य यह रहना चाहिए कि १९६५ तक देश में लगे हुए सब कारखानों की क्षमता बढ़कर १ करोड़ ५० लाख किलोवाट तक पहुंच जाए। स्वभावत: यह लक्ष्य अपरिवर्तनीय नहीं हो सकता। समय-समय पर इसमें परिवर्तन करना पड़ेगा, जिससे कि यह औद्योगिक कार्यक्रमो मे किए गए परिवर्तनों, औद्योगिक कारखानों के स्थानों और बिजली की मांग व खपत में हुई वृद्धि के साथ सगत हो जाए।

द्वितीय योजना के कार्यक्रम

३९. **बिजली के संयंत्रों की क्षमता और उत्पादन**:—द्वितीय योजना में विद्युत् विकास कार्यक्रम के निम्नलिखित तीन लक्ष्य रखे गए है :—

(क) वर्तमान विद्युत् संगठनों की साधारण क्रम से बढती जाने वाली माग को पूरा करना;

(ख) वितरण के क्षेत्रो मे यथोचित विस्तार करने के लिए आवश्यक क्षमता का बढ़ाना, और

(ग) द्वितीय योजना के समय जो उद्योग स्थापित किए जाएंगे उनकी आवश्यकता पूरी करना।

४०. मध्यम तथा छोटे उद्योगो के साधारण विकास और व्यापारिक तथा घरेलू व्यय में वृद्धि के कारण अन्दाजा है कि १४ लाख किलोवाट बिजली की अधिक मांग होने लगेगी। इसके अतिरिक्त द्वितीय योजना में औद्योगिक उन्नति के जो नए कार्यक्रम सम्मिलित किए गए हैं उनके कारण भी १३ लाख किलोवाट बिजली की और मांग होने की आशा है। बिजली उत्पादन की कुछ क्षमता फालतू रखने की आवश्यकता और बिजलीघरो के जल-प्रवाह में ऋतु के कारण उतार-चढ़ाव होते रहने का विचार करके अन्दाजा लगाया गया है कि आगामी पांच वर्षों में बिजली का अतिरिक्त उत्पादन ३५ लाख किलोवाट करना पड़ेगा। ज्यों-ज्यों बिजली की खपत का नियमित सर्वेक्षण किया जाने लगेगा और औद्योगिक कार्यक्रमों के विस्तार का निश्चय होता जाएगा, त्यों-त्यों इन अन्दाजों पर पुनर्विचार करते रहना पड़ेगा। तैयार बिजलीघरों की समस्त क्षमता ३५ लाख किलोवाट रखने की आवश्यकता में से २९ लाख किलोवाट तो राजकीय कारखानों से मिलेगी, ३ लाख किलोवाट बिजली देने का व्यवसाय करने वाली कम्पनियों के कारखानों से, और शेष ३ लाख किलोवाट योजना कार्य से और इस्पात, सीमेंट तथा कागज आदि के उन कारखानों से जिनके बिजली उत्पादन के संयन्त्र अपने ही होंगे। इन सब कार्यक्रमो का परिणाम यह होगा कि देश में लगे हुए बिजली के सब कारखानों की जो सामर्थ्य मार्च १९५६ में ३४ लाख

किलोवाट थी, वह बढ़कर मार्च १९६१ तक ६९ लाख किलोवाट हो जाएगी। १९५५-५६ में लगभग १,१०० करोड़ यूनिट बिजली उत्पन्न होती थी, वह बढ़कर १९६०-६१ में लगभग २,२०० करोड़ यूनिट हो जाने की आशा है। ऊपर बिजली के विकास का जो क्रम दिखाया गया है, उसके अनुसार प्रति व्यक्ति पीछे बिजली की खपत का परिमाण, प्रथम योजना की समाप्ति के समय के २५ यूनिट से बढकर, द्वितीय योजना की समाप्ति पर लगभग ५० यूनिट हो जाएगा। उत्पादन की क्षमता और उत्पादित बिजली में वृद्धि करने का जो क्रम सोचा गया है, उसका विवरण इस प्रकार है :—

——	१९५५-५६	१९६०-६१	वृद्धि का द्वितीय योजना मे प्रतिशत
(१) स्थापित क्षमता (लाख किलोवाट मे)			
जनोपयोगी बिजलीघर :			
(क) राजकीय	१४	४३	२०७
(ख) निजी	१३	१६	२३
अपनी बिजली पैदा करने वाले औद्योगिक कारखाने	७	१०	४३
योग	३४	६९	१०३
(२) उत्पादित बिजली (करोड़ किलोवाट आवर मे)			
जनोपयोगी बिजलीघर :			
(क) राजकीय	४५०	१,३५०	२००
(ख) निजी	४३०	५३०	२३
अपनी बिजली पैदा करने वाले औद्योगिक कारखाने	२२०	३२०	४५
योग	१,१००	२,२००	१००

४१. द्वितीय योजना के सरकारी क्षेत्र में, बिजली के संयत्रों की क्षमता में २९ लाख किलोवाट की वृद्धि करने का जो विचार है, उसमें से २१ लाख किलोवाट तो पनबिजली के संयंत्रों से और ८ लाख किलोवाट तापीय संयंत्रो से उत्पन्न की जाएगी। इस ८ लाख किलोवाट में कुछ भाग डीजल के संयंत्रों का भी है। (नए संयंत्रो और पुरानों में वृद्धि को मिलाकर) द्वितीय योजना काल में पानी या भाप से चलने वाले चवालीस उत्पादक संयत्र लगाने का विचार है। इनकी सूची परिशिष्ट के विवरण ५ में दी गई है। इसमें से २५ पनबिजलीघर और १९ थरमल बिजलीघर होंगे। अधिकतर नई बिजली योजनाओं का परिणाम पांच वर्ष की अवधि में ही दिखलाई पड़ने लगेगा। परन्तु कुछ योजनाओं की जाँच और भी की जाने की आवश्यकता है। उन्हें योजना काल के उत्तरार्ध में आरम्भ किया जा सकेगा। उनके लिए वित्तीय व्यवस्था भी इसी हिसाब से की गई है। राज्यों के कार्यक्रमों पर विचार करते हुए यह ध्यान रखा गया है कि

उनमे से अधिकतर के लाभ द्वितीय योजना काल मे ही मिलने लगे और जिन क्षेत्रो मे उनसे बिजली दी जाए उनकी बढती हुई आवश्यकता उनसे पूरी होती चली जाए। योजना के निजी विभाग में, कलकत्ता, अहमदाबाद और टाटा के बड़े बिजली कारखानो मे तो विशेष वृद्धि की ही जाएगी, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और सौराष्ट्र के भी छोटे कारखानों का कुछ विस्तार किया जाएगा। इन सब वृद्धियों का योग लगभग ३ लाख किलोवाट होता है। विद्युत् व्यवसायी कम्पनियों के जिन कारखानों में विशेष वृद्धिया की जाएंगी, उनकी सूची परिशिष्ट के विवरण ५ में दी गई है।

४२. **वित्तीय व्यवस्था**—प्रथम योजना के समय जो काम आरम्भ कर दिए गए थे, उनमें से कई इस समय निर्माण की विभिन्न अवस्थाओ में है। इन्हें द्वितीय योजना की अवधि में पूरा करने के लिए १६० करोड़ रु० की आवश्यकता होगी। जो नई योजनाएं द्वितीय योजना काल मे आरम्भ की जाएंगी, उन पर २४५ करोड़ रु० व्यय करने की बात सोची जा रही है। इसके अतिरिक्त, २२ करोड़ रु० उन योजनाओं पर व्यय किया जाएगा, जो आरम्भ तो द्वितीय योजना काल मे कर दी जाएंगी, परन्तु जिनसे लाभ तीसरी योजना के समय होने लगेगा। इस समय चल रहे और नए कामों पर होने वाले व्यय का और उनके लाभो का विवरण निम्नलिखित तालिका मे दिया गया है :—

—	द्वितीय योजना मे होने वाला व्यय करोड़ रु०	द्वितीय योजना के समय होने वाले लाभ (लाख किलोवाट)	तृतीय योजना के समय मिलने वाले लाभ (लाख किलोवाट)
प्रथम योजना से बचे हुए और द्वितीय योजना में पूरे होने वाले काम	१६०	१७	—
ऐसे नए काम जिनका लाभ द्वितीय योजना के समय ही मिलने लगेगा ...	२४५	१२	—
ऐसे नए काम जिनका लाभ तृतीय योजना के समय मिलेगा ...	२२	—	६
योग ...	४२७	२६	६

उपर्युक्त तालिका में तीसरे नम्बर पर जिन कामों का उल्लेख किया गया है, उनका आरम्भ द्वितीय योजना के पिछले भाग में किया जाएगा और उन्हें पूरा करने के लिए तृतीय योजना के समय १४५ करोड़ रु० की आवश्यकता पड़ेगी। इनमें से अधिक महत्वपूर्ण के नाम इस प्रकार हैं: सिलेरू (आन्ध्र), राना प्रतापसागर (राजस्थान), उकाई (बम्बई) और पाम्बा या प्रिंगलकुथु (तिरुवांकुर-कोचीन)। द्वितीय योजना में विभिन्न राज्यों के बिजली कार्यक्रमों का विस्तृत विवरण परिशिष्ट के विवरण ६ में दिया गया है।

४३. ४२७ करोड़ रु० की जिस पूंजीगत परिव्यय की चर्चा पिछले पैराग्राफ मे हुई है, उसका विभाजन उत्पादन, वितरण के साधनों और वितरण की व्यवस्था मे लगभग इस प्रकार होगा:—

	करोड़ रु०
बिजली उत्पादन	२३५
उत्पादन केन्द्र से वितरण केन्द्र तक पहुंचाने पर ..	९२
नगरों में वितरण की व्यवस्था	२५
छोटे कस्बों और ग्रामो में वितरण पर	७५
	४२७

४४. पूंजी के व्यय की दृष्टि से द्वितीय योजना मे सम्मिलित की गई नई विद्युत उत्पादन योजनाओं का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है:—

१० करोड से ऊपर की लागत की योजनाएं	१०
५ और १० करोड़ के बीच की लागत की योजनाएं	४
१ और ५ करोड़ के बीच की लागत की योजनाए	१८
१ करोड़ से कम लागत की योजनाएं ..	१२
	४४

४५. निजी बिजली कम्पनियों द्वारा द्वितीय योजना के समय लगभग ४२ करोड़ रु० की पूंजी लगाए जाने की सम्भावना है। इसमे से २९ करोड़ रु० तो वे उत्पादक यन्त्र लगाने पर व्यय करेंगी और शेष राशि वितरण के वर्तमान साधनों और उसकी व्यवस्था का विस्तार करने पर।

४६. **पनबिजली और तापीय बिजली योजनाएं** :—किसी भी स्थान पर पनबिजली या तापीय बिजली की योजना आरम्भ करने का निश्चय यह देखकर किया जाता है कि वहा बिजली की आवश्यकता शीघ्र होगी या विलम्ब से। इस प्रकार, द्वितीय योजना मे कुछ स्थानो पर बिजली की आवश्यकता तुरन्त पूरी करने के लिए अनेक मध्यम वर्ग के तापीय बिजलीघर बनाने के कार्यक्रम सम्मिलित कर लिए गए हैं। पानी, भाप और डीज़ल तेल के बिजलीघरों की क्षमता मार्च १९५१ और मार्च १९५६ में क्या थी और मार्च १९६१ में कितनी हो जाने की आशा है, इसका विवरण निम्नलिखित है:—

बिजली घरों की स्थापित क्षमता—(लाख किलोवाट मे)

→	मार्च १९५१ में	प्रथम योजना में वृद्धि	मार्च १९५६ में	द्वितीय योजना में वृद्धि	मार्च १९६१ में
पानी ...	५·६	४·०	९·६	२१·०	३०·६
भाप ...	१०·०	५·५	१५·५	११·०	२६·५
डीज़ल	१·५	०·६	२·१	०·२	२·३
योग	१७·१	१०·१	२७·२	३२·२	५९·४*

*टिप्पणी:—इन अंकों में अपनी बिजली आप तैयार करने वाले कारखानों की क्षमता सम्मिलित नहीं की गई। उनके प्रायः सब बिजलीघर भाप से चलते हैं।

४७. द्वितीय योजना के लिए जो विकास कार्यक्रम तैयार किया गया है, उसमें पनबिजली की क्षमता तापीय बिजली से दुगनी रखने की कल्पना की गई है। आशा है कि पनबिजलीघर बनाने पर जोर अभी और भी कुछ समय तक दिया जाता रहेगा। साथ ही, तापीय बिजली बहुत-कुछ वर्तमान गति से ही बढती रहेगी। उसकी विशेष आवश्यकता दो प्रयोजनों से है: एक तो पन-बिजलीघरों के उत्पादन में ऋतु के कारण होने वाले भारी उतार-चढ़ाव का सामना करने के लिए और दूसरे, जिन प्रदेशों में पानी की ताकत नहीं मिल सकती उनकी आवश्यकता पूरी करने के लिए।

४८. इस समय जनता को बिजली देने वाले बिजलीघरों में डीज़ल तेल के संयंत्रों की क्षमता, समस्त क्षमता का लगभग ८ प्रतिशत है। इसे धीरे-धीरे घटाकर, इसके स्थान पर ग्रिड सिस्टमों (दूर-दूर तक के स्थानों के लिए एक केन्द्र बनाकर बिजली वितरित करने की पद्धति) से बड़ी मात्रा में बिजली दी जाने लगेगी। नवीन क्षमता में कुछ वृद्धि छोटे-छोटे अनेक नए बिजली-घरों से भी होगी, जो कि आरम्भिक कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए अथवा अलग-अलग स्थानों पर खोले जाएंगे।

४९. देश में अणु शक्ति से विद्युत् उत्पादन करने के आर्थिक पहलू का अध्ययन, केन्द्रीय सरकार का अणु शक्ति विभाग कर रहा है। अब तक जितना अध्ययन हुआ है उससे प्रतीत होता है कि विद्युत् उत्पादन के लिए अणु शक्ति का प्रयोग उन स्थानों पर लाभदायक सिद्ध हो सकता है जो कि कोयला खानों से बहुत दूर है या जहां जल-शक्ति उपलब्ध नहीं है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि अणु शक्ति का विकास करने के क्षेत्र में भारत आगे रहे, और अणु शक्ति विभाग ने इसके लिए विस्तृत् कार्यक्रम भी तैयार कर लिया है।

५०. **ग्रिड सिस्टम और बिजली ट्रांसमीशन लाइनें:**—गत दस वर्षों में बिजली का अधिक-तर विस्तार ग्रिड सिस्टमों से हुआ है। इनके द्वारा बिजली तो बहुत विस्तृत क्षेत्रों में दूर-दूर तक पहुंचा दी जाती है, परन्तु उसका उत्पादन केवल कुछ समर्थ और बड़े बिजलीघरों में ही होता है। ये बिजलीघर पनबिजली के हो सकते हैं, तापीय बिजली के भी और दोनों के मिले-जुले भी। ये कैसे हों, यह इस बात पर निर्भर करता है कि इनके प्रदेश में कौन-से साधन उपलब्ध हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिजली ले जाने की यान्त्रिक विधियों में उन्नति हो जाने के कारण, अब बिजली बहुत बड़ी मात्रा में, बहुत कम व्यय से, ३०० से ४०० मील की दूरी तक ले जाई जा सकती है। इसलिए अब पनबिजली की शक्ति को विभिन्न क्षेत्रों में एकत्र करके, उसका उपयोग दूर-दूर तक बिखरे हुए उद्योगों में किया जा सकता है। इसी प्रकार, कोयला खानों के क्षेत्रों में तापीय बिजली बडे पैमाने पर अल्प व्यय से—घटिया किस्म के कोयले का प्रयोग करके भी—उत्पन्न करके, उसे ग्रिड सिस्टम के तारों द्वारा सैकड़ों मील तक ले जाया जा सकता है। इससे यह भी सम्भव हो जाएगा कि बड़े-बड़े नगरों और भारी मात्रा में बिजली की खपत करने वाले औद्योगिक केन्द्रों को परस्पर जोड़ने के लिए जो तार डाले जाएं, उन्हीं के द्वारा मार्ग में पड़ने वाले देहातों को भी सस्ती दरों पर बिजली दे दी जाए। इसके अतिरिक्त, ग्रिडों को भी एक-दूसरे के साथ जोड़कर, बिजली के परस्पर आदान-प्रदान, अधिक कुशलता तथा मितव्ययिता, विशेष आवश्यकता के समय के लिए रखी हुई अतिरिक्त क्षमता में कमी कर देने और उपलब्धि अधिक विश्वसनीय हो जाने के लाभ उठाए जा सकते हैं। भारत में इस प्रकार के परस्पर सम्बन्धों के कुछ उदाहरण ये हैं:—(१) मद्रास राज्य में पाइकाड़ा, मेत्तर, पापनाशम और मद्रास नगर के बिजली घर; (२) मद्रास और त्रिवांकुर-कोचीन राज्यों के बीच में दो जुड़ी हुई तार-लाइनें; (३) जोग (मैसूर) और

तुंगभद्रा (आन्ध्र) की बिजली व्यवस्थाओं का परस्पर सम्बन्ध, (४) नंगल और दिल्ली के बिजली-घरों का परस्पर मेल, इन दोनों को भविष्य मे पश्चिमी उत्तर प्रदेश के बिजलीघरों के साथ भी जोड़ा जा सकेगा; और (५) दामोदर घाटी निगम (बिहार) के पानी और तापीय बिजलीघरो का कलकत्ता शहर के बिजलीघरों से सम्बन्ध। भविष्य में इस प्रकार के पारस्परिक सम्बन्ध और अधिक संख्या में स्थापित किए जाएंगे और हमारी सिफारिशें तो यह है कि विभिन्न राज्यों के ग्रिड सिस्टमों का आयोजन किया ही इस प्रकार जाए कि यथाशक्ति अधिक से अधिक बिजलीघरों का परस्पर सम्बन्ध जोडा जा सके, और इस प्रकार अन्त में एक अखिल भारतीय ग्रिड की स्थापना कर दी जाए।

५१. द्वितीय योजना मे २२० कें० वी० से लेकर ११ के० वी० तक की ३५,००० मील लम्बी ट्रांसमीशन और सब-ट्रांसमीशन तारें डालने की योजना बनाई गई है। ये तारें भारी और हल्की दोनों मात्राओं में बिजली पहुचाने का काम करेंगी। इससे इन तारों की लम्बाई प्रथम योजना के समय की लम्बाई से दुगनी हो जाएगी।

छोटे नगरों और देहातों में बिजली

५२. भारत मे ५८५ मध्यम और बडे नगर ऐसे है जिनमें से प्रत्येक की आबादी २०,००० से अधिक है। इनमें से प्रथम योजना की समाप्ति तक ५५० में बिजली पहुंच चुकी थी। अगले वर्ग के, अर्थात् १०,००० से २०,००० तक की आबादी वाले नगरों की संख्या ८५६ है। इनमें से अब तक ३५० में बिजली पहुंची है। १०,००० या इससे ऊपर की आबादी के शेष सब नगरों में द्वितीय योजना की समाप्ति तक बिजली पहुंचा दी जाएगी। छोटे नगरों का विकास आस-पास के देहातों की उन्नति के लिए भी आवश्यक है।

५३. १०,००० से कम आबादी के नगरों और गावो में बिजली पहुंचाने में अनेक कठिन आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, विशेष करके गांवों में। अधिकतर गांव उत्पादन केन्द्रों से दूर-दूर हैं। अन्दाजा लगाया गया है कि यदि देश के सब गांवों में बिजली पहुंचाई जाए तो प्रति गांव पीछे बिजली वितरण करने की तारें डालने और सब-स्टेशन बनाने का खर्च ही ६० से ७० हजार रु० तक बैठेगा, और इस प्रकार सारे देश में वह ३,००० करोड़ रु० से भी ऊपर जा पहुंचेगा। इसलिए देहातों में बिजली पहुंचाने का काम क्रमश ही करना पड़ेगा। द्वितीय योजना में बिजली के कार्यक्रमों के लिए ज़ो ४२७ करोड़ रु० की राशि रखी गई है, उसमें से ७५ करोड रु० छोटे नगरों और ग्रामों में बिजली पहुंचाने पर व्यय किए जाएंगे।

५४. शहरी इलाकों की तुलना में, देहातों मे बिजली पर 'बोझ का अभाव' रहता है। इस कारण देहातों तक बिजली पहुंचाने में पूंजीगत व्यय और उसका प्रबन्ध करने व उसे ठीक रखने के व्यय बहुत ऊंचे बैठते है। इस समस्या को हल करने का एक व्यावहारिक उपाय यह है कि जो गांव बिजली वाले शहरों के पड़ोस में पड़ते हैं उन तक उन शहरों से बिजली पहुंचा दी जाए। इसी प्रकार जहां कहीं हो सके वहां ग्रिडों के एक स्थान से दूसरे स्थान तक बिजली ले जाने वाले तारों से अड़ोस-पड़ोस के गांवों तक बिजली पहुंचाने के तार लगा दिए जाएं। इसके अतिरिक्त, बिजली के कार्यक्रमों का वित्तीय हिसाब लगाते हुए शहरी और देहाती कार्यक्रमों को मिला दिया जाए, जिससे कि शहरों और कारखानो के ग्राहकों से हुई आमदनी में से जो बचत हो उसका उपयोग देहात के ग्राहकों के लिए बिजली की दरें कम कर देने में किया जा सके। इस

नीति की सफलता के लिए शहरों और कारखानों के ग्राहकों के लिए दरों मे परिवर्तन कर देना उचित ही है। देहातों मे बिजली पहुचाने के कार्यक्रमों की सफलता का निर्णय करते हुए, लगाई हुई पूजी पर लाभ मिलने की साधारण कसौटी सदा लागू नही की जा सकती। कुछ विशेष मामलों में, जहां कि बिजली लग जाने पर बस्ती को बहुत लाभ पहुचने की सम्भावना हो, वहा यदि राज्य सरकारो की वित्तीय स्थिति इजाजत दे तो वे ऐसे कार्यक्रमो का भी समर्थन कर सकती है, जिनके दस वर्ष की साधारण अवधि में स्वावलम्बी हो जाने की आशा न हो।

५५. १९५४-५५ मे बिजली की सुविधाओं का विस्तार करने का एक कार्यक्रम इस उद्देश्य से शुरू किया गया था कि लोगो को रोजगार मिल सके। इस कार्यक्रम का लक्ष्य यह था कि जीविकोपार्जन के अवसर बढ़ाने के लिए इन तीन प्रकार के स्थानों पर अधिक बिजली दी जाए : (१) उन छोटे और मध्यम कस्बों मे जिनकी आबादी जल्दी-जल्दी बढ रही हो; (२) पहले से बिजली लगे हुए नगरों के उपनगरों में; और (३) सामुदायिक विकास योजना के उन क्षेत्रों में जिनमे चतुर कारीगरों और स्थानीय साधनों या नए विकास कार्यक्रमों के कारण छोटे उद्योगों के बिजली से चलने लगने पर उनमें अधिक लोगो को रोजगार मिलने की सम्भावना हो। इस काम के लिए केन्द्रीय सरकार ने २० करोड़ रु० की राशि अलग रख दी थी ताकि उसमें से राज्य सरकारों को वापसी की बहुत आसान शर्तों पर लम्बी मियाद के ऋण दिए जाएं। इस कार्यक्रम में डीज़ल तेल से चलने वाले बिजलीघर खोलना और बिजली के वितरण की वर्तमान व्यवस्थाओं का विस्तार करना आदि शामिल है। इस समय इसे क्रियान्वित किया जा रहा है और अब से १८ महीनों मे इसके पूरा हो जाने की आशा है। इस प्रकार की सहायता का देना, द्वितीय योजना काल में भी जारी रखने का विचार है।

५६. देहाती कार्यक्रमों की सफलता के लिए आवश्यक है कि राष्ट्रीय विस्तार सेवाओं के और अन्य क्षेत्र कार्यकर्ता जनता का अधिक से अधिक सहयोग प्राप्त करने के संगठित प्रयत्न करे। सामुदायिक विकास सेवाओं के कार्यकर्ताओं को चाहिए कि जिन क्षेत्रों में पम्पों से पानी खींचकर सिंचाई करने या छोटे उद्योगों को बिजली द्वारा चलाने की मांग बढाई जा सकती हो उनमे वे ग्रामीणों की सहायता से बिजली की वर्तमान और भविष्य में सम्भावित आवश्यकताओं का सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण करें और ऐसे कार्यक्रम बनावें जिनसे कि ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में बिजली का उपयोग करके अधिकतम लाभ उठाया जा सके। कई जगह लोग व्यय में कुछ हिस्सा बंटा लेने के अतिरिक्त, निर्माण के काम में श्रम द्वारा भी सहायता कर सकेंगे। इसी प्रकार, आसान शर्तों पर मोटर और पम्प आदि खरीदने और चलाने के लिए उपभोक्ताओं की सहकारिता समितियों का सगठन किया जा सकता है। द्वितीय योजना में १०,००० से ऊपर गांवों तक बिजली पहुंचा देने की व्यवस्था रखी गई है, परन्तु सहकारिता के आधार पर घनिष्ठ प्रयत्न के द्वारा वर्तमान वित्तीय साधनों से ही और अधिक फल की प्राप्ति की जा सकती है।

५७. ग्रिड सिस्टम का खासा विस्तार होते जाने पर भी, देहातों तक बिजली के तार अच्छी तरह पहुंचने में अभी बहुत समय लगेगा। जहां कहीं खेती और छोटे उद्योगों में बिजली का उपयोग करने की गुंजाइश हो, वहां डीज़ल से चलने वाले बिजलीघर लगाकर या यदि स्थान पहाड़ी हो तो छोटे पनबिजलीघर बनाकर स्थानीय योजनाएं शुरू की जा सकती हैं। यहां यह जिक्र कर देना अप्रासंगिक न होगा कि हाल में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद

ने हवाई पंखों से यन्त्र चलोकर देखने के परीक्षण आरम्भ किए है। आशा है कि समुद्र तट के जिन स्थानों मे वर्ष के कुछ समय हवा का अच्छा जोर रहता है, उनमे शीघ्र ही काम देने योग्य छोटे बिजलीघर बनाए जा सकेंगे। छोटे पैमाने पर बिजली प्राप्त करने के ये सब कार्यक्रम, यदि लोग सहकारिता के आधार पर काम करे, तो राज्य सरकारो से थोडी-बहुत वित्तीय और टेकनीकल सहायता लेकर स्वयं पूरे कर सकते है। इन योजनाओ को, इन स्थानों के चौमुखी विकास का भाग मानकर चलाना चाहिए, जिससे इन स्थानों पर उपभोग्य वस्तुओं के उद्योगों का विकास भी साथ-साथ किया जा सके। इन स्थानो पर बिजली के खर्च को देखकर ऐसी व्यवस्था भी की जा सकती है कि बिजलीघरों और बिजली के तारों को केवल कुछ नियत समय तक काम देने के लिए लगाया जाए और फालतू बिजली का प्रबन्ध न रखा जाए, जिससे अधिकतम मितव्ययिता से काम चल सके। जहां अवस्थाए अनुकूल हों, वहां इस प्रकार परीक्षण के लिए मार्ग-दर्शक योजनाएं शुरू करके देखा जा सकता है।

५८. निम्नलिखित तालिका मे यह दिखाया गया है कि आबादी के हिसाब से १९६१ तक कितने नगरों और ग्रामों मे बिजली पहुंच जाएगी —

आबादी	१९५१ की जनगणना के अनुसार कुल संख्या	मार्च १९५६ तक बिजली लगे नगरों-ग्रामों की संख्या	मार्च १९६१ तक बिजली लगे नगरों-ग्रामों की संख्या
१ लाख से अधिक	७३	७३	७३
५० हजार से १ लाख तक	१११	१११	१११
२० हजार से ५० हजार तक	४०१	३६६	४०१
१० हजार से २० हजार तक	८५६	३५०	८५६
५ हजार से १० हजार तक	३,१०१	१,२००	२,६५९
५ हजार से कम ...	५,५६,५६५	५,३००	१३,९००
योग ..	५,६१,१०७	७,४००	१८,०००

उपर्युक्त तालिका से प्रकट है कि आगामी पांच वर्षों में लगभग १०,६०० जिन अतिरिक्त नगरो और ग्रामों में बिजली लगाने का कार्यक्रम बनाया गया है, उनमें से ८,६०० ऐसे हैं जिनकी आबादी ५,००० से कम है।

बिजली का उपयोग

५९. औद्योगिक उन्नति पर अधिक बल देने का और आधारभूत उद्योगों का बड़े पैमाने पर विकास करने का फल यह होगा कि बिजली का उपयोग करने वाले वर्गों की उपयोग प्रणाली का रूप धीरे-धीरे बदलता जाएगा। यह तो अब भी दिखाई देता है कि उद्योगों में बिजली की

खपत बढ़ती जा रही है। द्वितीय योजना के अन्त तक इसके और भी स्पष्ट हो जाने की सम्भावना है। यह बात निम्नलिखित विवरण से प्रकट हो जाएगी --

—	१९५०		१९५५		१९६०	
	खपत करोड़ किलोवाट आवर में	समस्त खपत का प्रतिशत	खपत करोड़ किलोवाट आवर में	समस्त खपत का प्रतिशत	अनुमानित खपत करोड़ किलोवाट आवर में	समस्त खपत का प्रतिशत
घरेलू	५२·५	१२·७	८०	११·५	१४८·०	९·०
व्यापारिक	३०·९	७·४	५०	७·१	९८·४	६·०
सड़कों आदि पर रोशनी	६·०	१·५	११	१·६	२५·०	१·५
औद्योगिक	२६०·९	६२·७	४६०	६५·७	१२००·०	७२·०
यातायात	३०·९	७·४	४४	६·३	६५·५	४·०
सिंचाई	१६·२	३·९	२६	३·७	६५·५	४·०
शहरों में पानी की टंकियां	१८·२	४·४	२९	४·१	५७.६	३·५
योग	४१५·६*	१००·०	७००*	१००·०	१६६०·०*	१००·०

उद्योगों द्वारा बिजली की खपत मे उल्लेखनीय वृद्धि होगी। १९५५ में यह खपत ४६० करोड़ यूनिट थी। १९६० में यह बढकर १,२०० करोड़ यूनिट हो जाएगी। देहातों में बिजली की मुख्य मांग सिंचाई का पानी पम्पों द्वारा उठाने के लिए होती है। देहातों में अधिकाधिक बिजली लगते जाने के साथ-साथ वहां इस काम के लिए बिजली की खपत खासी बढ जाएगी। सिंचाई के बाद देहातों में बिजली की खपत छोटे उद्योगों में होती है। अन्दाजा है कि समस्त बिजली का ७·५ प्रतिशत देहातों में खपने लगेगा।

३. बाढ़ नियंत्रण

६०. देश के कुछ भागों में बार-बार बाढ़ आकर भारी हानि कर देती है। उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और असम के बड़े-बड़े क्षेत्र सैलाब में डूब जाते हैं और कई शहरों को प्रति वर्ष जमीन के कटाव से नुकसान उठाना पड़ता है। यद्यपि जम्मू व काश्मीर, पंजाब, पेप्सू, उड़ीसा और आन्ध्र में यह आपत्ति बार-बार नहीं आती, परन्तु इन राज्यों के भी कुछ प्रदेशों को कभी-कभी बाढ़ से हानि उठानी पड़ जाती है। दक्षिण के कुछ प्रदेश समुद्र तट की नदियों और समुद्र के पानी में डूब जाते हैं।

६१. कई नदियां कई-कई राज्यों में से गुजरती हैं इसलिए बाढ़ नियन्त्रण की समस्या अनिवार्य रूप से अन्तर्राज्यीय समस्या है। अतः १९५४ में एक केन्द्रीय बाढ़ नियन्त्रण बोर्ड का

*नोट:—इन अंकों से प्रकट होता है कि बिजली देने वाले कारखानों ने कितनी यूनिटें बेचीं। इनमें वह बिजली शामिल नहीं है जो अपनी बिजली पैदा करने वाले कारखानों में उत्पन्न हुई। वे अपनी सारी बिजली आप ही खपा लेते हैं।

संगठन इसलिए किया गया कि वह बाढ़ नियन्त्रण का एक समन्वित कार्यक्रम बनावे और राज्यों द्वारा प्रस्तुत योजनाओं पर विचार करे । इस केन्द्रीय बाढ नियन्त्रण बोर्ड की टेकनीकल मामलों मे और नदी-प्रवाह क्षेत्रो के लिए एक सम्मिलित योजना तैयार करने मे सहायता करने के लिए चार नदी आयोग बनाए गए थे, पहला, गगा के लिए, दूसरा ब्रह्मपुत्र के लिए, तीसरा उत्तर-पश्चिम की नदियों के लिए, और चौथा मध्य भारत की नदियो के लिए । केन्द्रीय जल और विद्युत् आयोग मे भी एक बाढ प्रशाखा खोल दी गई है । यह बाढ़ नियन्त्रण की योजनाए तैयार करने, सम्मिलित योजनाएं बनाने और राज्यो से आए हुए सुझावों की परीक्षा करने मे आयोग की सहायता किया करेगी ।

६२. प्रथम पचवर्षीय योजना तैयार करते समय ऐसी कल्पना की गई थी कि बाढ नियन्त्रण की योजनाए बहूद्देशीय नदी योजनाओ का ही अग रहेगी, और इसलिए उसमे बाढ नियन्त्रण कार्यक्रमो की पृथक व्यवस्था नही की गई थी। परन्तु १९५४ मे जो बाढे आई, वे बहुत भयंकर थी । उन्होंने इस आवश्यकता की ओर ध्यान आकृष्ट कराया कि बाढ नियन्त्रण की समस्या का हल एक स्वतन्त्र और समन्वित योजना के रूप मे किया जाए, और उसे सिंचाई और बिजली के विकास कार्यक्रमों के साथ न मिलाया जाए । इसलिए प्रथम पंचवर्षीय योजना के समय पूरा करने के लिए कुछ कार्यों की एक अस्थायी योजना तैयार की गई, और १६ ५ करोड़ रु० बाढ़ नियन्त्रण योजनाओं के लिए राज्य सरकारों को सहायतार्थ ऋण के रूप मे देने को पृथक रख दिए गए । अनुमान है कि इस राशि मे से लगभग ८ करोड रु० प्रथम योजना के समय खर्च हो गए होंगे ।

६३. स्पष्ट है कि बाढ़ों को पूर्णतया न तो रोका ही जा सकता है, न वैसा करना उचित ही है । बाढ के साथ बारीक मिट्टी बहकर आती है और उससे उस भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है जो बाढ़ के पानी में डूब जाती है। परन्तु कुछ वर्षों मे जब बाढ का वेग असाधारण हो जाता है तब वे भारी विनाश का कारण बन जाती है । बाढ़ों के बार-बार आगमन और उनसे होने वाली हानि को रोकने के लिए, उनकी तीव्रता को नियन्त्रित कर देना चाहिए । इसके लिए नियमित कार्यक्रम बनाना आवश्यक है । साधारणतया इन उपायों का अवलम्बन किया जाता है :—

(१) बांध बना देना,
(२) पानी एकत्र करने के लिए जलाशयों का बना देना, विशेषकर सहायक नदियो पर;
(३) निरोधक प्रवाह-स्थल बना देना, जिनमें कि बाढ़ का फालतू पानी कुछ समय के लिए रुका रह जाए,
(४) एक नदी के पानी का प्रवाह दूसरी मे मोड़ देना;
(५) नदी के मोड़ काटकर उसका ढलान बढ़ा देना;
(६) नदी के जिन भागों में गाद एकत्र हो जाने के कारण प्रवाह रुक गया हो, उन्हें खोदकर साफ कर देना,
(७) खास-खास इलाकों को कटाव से बचाने के लिए ठोकर और दीवार आदि बना देने के स्थानीय उपाय कर देना; और
(८) वन रोपण और समोच्च बांध बनाना ।

६४. कौन-सा उपाय कहा उपयुक्त होगा, इसका निर्णय बहुत-सी बातो पर निर्भर करता है और बिना सब हालात को जाने नहीं किया जा सकता। किसी भी नदी के प्रवाह-स्थल के लिए कोई सन्तुलित योजना बनाना, इजीनीयरी, आर्थिक और सामाजिक दृष्टियों से, बहुत उलझन भरी समस्या होता है। एक ही प्रकार के कार्यक्रम सब नदियों के लिए उपयुक्त नही हो सकते, प्रत्येक नदी के प्रवाह-स्थल के सब हालात देखकर प्रत्येक के लिए पृथक-पृथक कार्यक्रम बनाने पड़ते हैं, और सब दृष्टियो से उपयुक्त योजना बनाने में मुख्य कठिनाई यह होती है कि धरातल, हवा-पानी, भू-गर्भ और जल-प्रवाह के विषय में आधारभूत विवरण उपलब्ध नहीं होता।

६५. आवश्यक जानकारी न मिलने के कारण, बाढ़ नियन्त्रण की योजनाओ के लिए अब तक सब दृष्टियो से उपयोगी कोई योजना नहीं बनाई जा सकी। सर्वेक्षणों का पूरा हो जाना और आवश्यक जानकारी का सग्रह, प्रारम्भिक महत्व के काम है। इनके पश्चात ही बाढ़ नियन्त्रण के उपयुक्त कार्यक्रम बनाने मे शीघ्रता की जा सकेगी। जब तक ये काम नहीं होते तब तक तत्काल आवश्यकता पूरी करने के लिए केवल ऐसी रक्षक व्यवस्थाएं की जा सकती है, जिन्हें अन्त में सब दृष्टियों से उपयोगी योजनाओं का भाग बना लिया जाए।

६६. हाल में, सिचाई तथा बिजली मन्त्रालय ने बाढ़ नियन्त्रण के कार्यक्रमों की एक रूपरेखा तैयार की है। उसे तीन चरणों मे बाटा गया है :—

(१) **तात्कालिक**:—इसमें खोज और योजनाएं तथा उनके व्यय अनुमान बनाने का काम किया जाएगा। सम्भव है कि कुछ स्थान चुनकर, उनमें दीवारें, ठोकरें और बाध बना दिए जाएं।

(२) **अल्पकालिक** :—इसमें बांध बनाने और जल-प्रणालिया सुधारने का काम किया जाएगा। इससे जिन स्थानों पर बाढ़ें आती रहती हैं, उनके एक बड़े भाग की रक्षा हो सकेगी।

(३) **दीर्घकालिक** :—इसमें नदियों और सहायक नदियों पर पानी एकत्र करने के जलाशय बनाए जाएंगे। यह काम बहूद्देशीय नदी योजनाओं के सिंचाई और बिजली के कार्यक्रमों के साथ किया जाएगा।

६७. द्वितीय योजना में ६० करोड़ रु० तो तात्कालिक और अल्पकालिक कार्यों के लिए रखा गया है और ५ करोड़ रु० सर्वेक्षण और जानकारी एकत्र करने के लिए। भूमि संरक्षण और वनरोपण, बाढ़ नियन्त्रण के महत्वपूर्ण उपाय हैं। बाढ़ नियन्त्रण के किसी भी सुझाव पर विचार करते हुए इन पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए।

६८. बाढ़ नियन्त्रण के कामों के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ तो अनेक हैं, परन्तु साथ ही यह भी बतला देना आवश्यक है कि कुछ परिस्थितियों में इनका परिणाम उलटा भी निकल सकता है। बाढ़ के साथ बहकर जो मिट्टी आती है वह भूमि की उर्वरा शक्ति को बहुत बढ़ा देती है। बाढ़ नियन्त्रण के कार्यों से उस मिट्टी का फैलना रुक सकता है। बाढ़ नियन्त्रणों के बड़े लाभों में से एक तो यह है कि आर्थिक सुरक्षा बढ़ जाती है और दूसरा यह हैं कि विकास का कार्य निरन्तर हो सकने का निश्चय हो जाता है। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, बाढ़ से पूर्ण रक्षा करना सम्भव ही नहीं है। इसलिए किसी भी प्रदेश में बाढ़ नियन्त्रण के जो उपाय किए जाएं वे ऐसे होने चाहिए कि वे स्थानीय परिस्थितियों से संगत हों और उनसे मुनासिब खर्च पर खासी रक्षा हो जाए।

४. खोज, सर्वेक्षण और अनुसंधान

खोज

६९. सिंचाई योजना के अनेक कार्य जिस जानकारी के आधार पर द्वितीय योजना मे सम्मिलित किए गए थे, वह उन्हें अपनाने के समय अपूर्ण अथवा अपर्याप्त थी। इसलिए, खोज का कार्य आगे कई दिशाओं में निरन्तर जारी रखने की जरूरत है। इनमें से प्रथम तो जल सम्बन्धी अधिक पूर्ण और समन्वित लेखा रखा जाना चाहिए, और सब महत्वपूर्ण स्थानो पर इस विषय में निरन्तर सूचना एकत्र करते रहने का प्रबन्ध होना चाहिए कि कितने जल का निस्सादन हुआ, उसमें से कितना बह गया और कितना जमीन ने सोख लिया। द्वितीय स्थान का सम्बन्ध यद्यपि उस जानकारी से नही है जिसे एकत्र करने की सिफारिश ऊपर की गई है—प्रत्येक प्रदेश के जल-स्रोतों, अर्थात नदियों, झीलों, तालाबों और भूगर्भस्थ जल की पूर्ण तथा पर्याप्त विस्तृत सूची बना दी जानी चाहिए। तृतीय, इस बात की निरन्तर खोज करते रहना चाहिए कि किन स्थानों मे योजना कार्य आरम्भ किए जा सकते हैं और कौन-से योजना कार्य विशेष रूप से लाभदायक सिद्ध हो सकते है। सिंचाई के योजना कार्यों की खोज करने मे समय बहुत लगता है, इसलिए जल-स्रोतों के विकास का कार्य निरन्तर होता रहे, इस बात का निश्चय करने के लिए योजना कार्य और उसके क्षेत्र का स्पष्ट निर्धारण और उसका आधारभूत इजीनियरी सर्वेक्षण पहले से कर लेना चाहिए। चतुर्थ स्थान इस बात का है कि यह निश्चय कर लेने के पश्चात कि भविष्य में कौन-से योजना कार्यों को अपनाना अभीष्ट होगा, उनका विस्तृत सर्वेक्षण करके उनके ऐसे आधारभूत नक्शे बना लिए जाएं, जो आवश्यकता पड़ने पर सुधारकर काम मे लाए जा सकें। कई योजना कार्य ऐसे क्षेत्रों के लिए तैयार किए गए है, जिनमें भविष्य में बाध निश्चित रूप से बनाए जाएंगे। इसलिए कम से कम उन क्षेत्रों का ऐसा आधारभूत सर्वेक्षण कर लेना चाहिए जिससे कि यह निर्णय किया जा सके कि वहा बांध किस प्रकार के और किस स्थान पर बनाने पड़ेंगे। इस सर्वेक्षण में वहां धरातलीय नक्शे बनाना और जमीन में बर्मा लगाकर देख लेना आदि भी शामिल होंगे। पहले से किए हुए सर्वेक्षणों द्वारा उपलब्ध आधारभूत जानकारी प्राप्त रहेगी, तो पीछे पूरे नक्शे अपेक्षाकृत कम समय में बनाए जा सकेंगे।

७०. इस प्रकार के सर्वेक्षणों की आवश्यकता पर जोर तो प्रथम योजना में भी दिया गया था, परन्तु उसमें पर्याप्त प्रगति नहीं हुई। अधिकतर राज्यों में सरकारी संगठन प्रायः योजना कार्यों का निर्माण करने मे लगे रहे, और कुछ राज्यों में खोज का महत्व भली-भांति समझा ही नहीं गया। जो योजना कार्य द्वितीय योजना में बिना पूरी खोज के सम्मिलित कर लिए गए है, उनका निर्माण कार्य आरम्भ करने से पहले उनकी खोज का पूरा हो जाना और विस्तृत विवरण का तैयार हो जाना आवश्यक है। कुछ राज्यों में वैकल्पिक योजना कार्य भी तैयार कर लिए जाने की आवश्यकता है, जिससे यदि आवश्यक जान पड़े तो योजना में सम्मिलित योजना कार्यों के स्थान पर उन वैकल्पिक योजना कार्यों को रख दिया जाए। इसलिए इस कार्य का महत्व हम सर्वाधिक मानते हैं। यदि आवश्यक समझा जाए तो राज्यो को चाहिए कि वे सम्बद्ध निर्माण विभागों अथवा बिजली विभागों में इस कार्य के लिए विशेष रूप से पृथक कर्मचारी नियुक्त कर दें। राज्यों की योजनाओं में खोज और सर्वेक्षण के लिए ५·९ करोड़ रु० की राशि रखी गई है, ४·४ करोड़ रु० "सिंचाई" खाते में और १·५ करोड़ रु० "बिजली" खाते मे। खोज का महत्व इस दृष्टि से बहुत अधिक है कि यदि खोज पूरी हो चुकी होगी तो द्वितीय योजना में सम्मिलित योजना कार्य आरम्भ करने मे

विलम्ब नहीं होगा, और भविष्य में भी अतिरिक्त योजना कार्यों का चुनाव और आरम्भ बिना विलम्ब किया जा सकेगा।

सर्वेक्षण

७१. **बिजली भार का सर्वेक्षण:**—गत कुछ वर्षों में, पहले की अपेक्षा, बिजली की खपत बहुत जल्दी-जल्दी बढ़ी है। द्वितीय योजना में उसके और भी बढ़ने की सम्भावना है। भाखड़ा-नंगल, हीराकुड और दामोदर घाटी निगम जैसी योजनाओं और आन्ध्र, बम्बई, मद्रास, उत्तर प्रदेश और मैसूर के ग्रिड सिस्टमों द्वारा सेवित क्षेत्रों में बिजली का "भार" पहले की कल्पनाओं से कहीं अधिक बढ़ जाने के लक्षण दीख रहे हैं। बिजली की मांग बढ़ जाने का एक कारण किसी हद तक यह भी हुआ है कि देश के अनेक भागों में बिजली के वितरण पर लगाए हुए प्रतिबन्ध धीरे-धीरे समाप्त कर दिए गए हैं। परन्तु इससे भी बड़ा कारण प्रथम पंच-वर्षीय योजना के समय हुए आर्थिक विकास का प्रभाव है। सम्भावना यह है कि आगामी दस वर्षों में जितनी बिजली खर्च होने का अन्दाजा अब तक लगाया हुआ था उसे बहुत बढ़ाना पड़ जाएगा। इसलिए बिजली के "भार" का तुरन्त ही व्यवस्थित सर्वेक्षण किए जाने की आवश्यकता है। सिंचाई और बिजली मन्त्रालय ने यह सर्वेक्षण देश भर में करवाना आरम्भ किया है। इसके लिए जानकारी का संग्रह चार प्रादेशिक केन्द्रों द्वारा किया जा रहा है, और उसका क्रमबद्ध संकलन केन्द्रीय जल तथा विद्युत् आयोग करेगा। राज्य सरकारों के पास जो जानकारी होगी, उसका उपयोग करके देश के आन्तरिक भागों में काम उनकी ही सहायता से किया जाएगा। प्रथम सर्वेक्षण आगामी तीन वर्षों में पूरा हो जाने की आशा है।

७२. **मिट्टी का सर्वेक्षण:**—किस प्रदेश में कौन-सी फसलें बोई जाती हैं, यह बात बहुत कुछ वहां की मिट्टी और मौसम पर निर्भर करती है। सिंचाई का विस्तार हो जाने पर फसलों की किस्में बदल जाती हैं, क्योंकि सिंचाई की सहायता से विविध और अधिक लाभदायक फसलें बोना सम्भव हो जाता है। परन्तु यह परिवर्तन भी प्रत्येक प्रदेश की मिट्टी की किस्म पर बहुत निर्भर करता है। इसलिए सब राज्यों मे मिट्टी का सर्वेक्षण सब दृष्टियों से कर रखने का बड़ा लाभ यह होगा कि पहले से ही यह निश्चय किया जा सकेगा कि किस प्रदेश में कौन-सी फसल बोकर लाभ उठाया जा सकता है। सर्वेक्षण करके मिट्टियों का वर्गीकरण कर लेने का लाभ यह भी है कि कहां किस नाप की नहरें और जलाशय बनाए जाएं, इसका निश्चय किया जा सकता है, क्योंकि सिंचाई के पानी के परिमाण का अन्दाजा यह देखकर लगाया जाता है कि सिंचाई किस फसल की की जाएगी। कभी-कभी इन योजनाओं का सुझाव, इन आधारभूत आवश्यकताओं का विचार किए बिना ही कर दिया जाता है।

७३. **पानी की आवश्यकताएं:**—कहां, कैसा और कितना बड़ा सिंचाई योजना कार्य ठीक रहेगा, इसका निश्चय करने के लिए उस स्थान की सिंचाई की आवश्यकताओं का अन्दाजा साव-धानीपूर्वक कर लेने की आवश्यकता है। जिन प्रदेशों में कुओं अथवा अन्य साधनों द्वारा पहले से सिंचाई होती है उनमें साधारणतया यह जानकारी उपलब्ध रहती है कि समस्त देश की पानी की आवश्यकता कितनी है और उसमें से कितने भाग में पहले से सिंचाई हो रही है। परन्तु यह पानी की समस्त भावी आवश्यकता का अन्दाजा लगाने का केवल एक साधन है। जिस प्रदेश की सिंचाई प्रस्तावित योजना कार्य द्वारा की जानी है, उस पर प्रभाव डालने वाली और भी

अनेक बाते है । भविष्य में वहा बोई जाने वाली फसले, आर्थिक अवस्थाओ मे सुधार, योजना कार्य से और अन्य साधनों से सिचाई करने मे व्यय का अन्तर, और इसी प्रकार की अन्य अनेक बातो से पानी की आवश्यकता का परिमाण बदल सकता है । जिन प्रदेशो मे पहले से सिचाई योजना कार्यों द्वारा सिचाई हो रही है और जिनकी अवस्थाए समान है, उनसे उक्त प्रश्नों का निर्णय करने में मूल्यवान सहायता मिल सकती है । प्रत्येक राज्य के लिए सब बातों का ध्यान रखकर सिचाई की योजना बनाते हुए ऐसी सब वर्तमान जानकारी का सकलन और सम्पादन कर रखने से बड़ी सहायता मिलेगी, जिससे कि विभिन्न प्रदेशो की सिचाई और पानी की आवश्यकताओं का अन्दाजा लगाया जा सके । इस प्रकार की जानकारी उन प्रदेशों के विषय मे भी एकत्र कर लेनी चाहिए जो कि सिंचाई योजना कार्यों के प्रभाव में न आते हों ।

अनुसन्धान

७४. **सिंचाई** :—सिचाई के कार्यो से सम्बद्ध जल तथा भूमि सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन, पूना के केन्द्रीय अनुसन्धान केन्द्र में और राज्य सरकारों के १२ अन्य अनुसन्धान केन्द्रों में किया जाता है । जल-स्रोतों के विकास का कार्यक्रम बढ़ जाने के साथ-साथ इन केन्द्रो के कार्य-कलाप में भी और वृद्धि हो जाने की सम्भावना है । असम सरकार भी एक नया अनुसन्धान केन्द्र खोलने की बात सोच रही है । विचार यह है कि द्वितीय योजना के समय इन केन्द्रों में इंजीनियरी की प्रयोग सम्बन्धी समस्याओं के अतिरिक्त, मौलिक समस्याओं के अध्ययन पर भी ध्यान दिया जाए । केन्द्रीय सिंचाई और विद्युत् बोर्ड ने अनुसन्धान के लिए इस प्रकार की समस्याओ की एक योजना बनाई है, जैसे कि पानी के बांधों आदि में छेद हो जाना, मिट्टियों के इजीनियरी सम्बन्धी गुण, सीमेंट में मिलाकर "पुज्जोलोनी" पदार्थों का प्रयोग, कक्रीट मे हवा का घुस जाना, और नल कूपों के प्रदेशों में जमीन के नीचे पानी का बहाव आदि । ये कार्यक्रम उपर्युक्त विभिन्न अनुसन्धान केन्द्रों मे पूरे किए जाएंगे और बोर्ड की सहायता से इनमें समन्वय स्थापित किया जाएगा । सिंचाई और कृषि विभागों के अनुसन्धान केन्द्रों को इस प्रकार की समस्याओ का अध्ययन परस्पर सहयोगपूर्वक करना पड़ेगा, जैसे कि कैसी मिट्टी में किस पद्धति से सिंचाई करनी चाहिए, मिट्टी की उर्वरा शक्ति और सिंचाई के पानी के कुशलतापूर्वक उपयोग का एक-दूसरे पर प्रभाव, बढ़ती हुई फसलों का नाजुक समय, उपज की उत्कृष्टता और सिंचाई की विभिन्न पद्धतियों के तुलनात्मक गुण-दोष ।

७५. **बिजली** :—द्वितीय योजना में और उसके बाद की योजनाओं में बिजली के उत्पादन का बहुत विस्तार किया जाने वाला है । इसलिए, उसके उत्पादन, एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने और वितरण से सम्बद्ध समस्याओ के विषय में तुरन्त ही जांच-पड़ताल करना बहुत आवश्यक हो गया है । बिजली का सामान बनाने के उद्योग का क्षेत्र भी देश में शीघ्र से शीघ्र बढ़ने की सम्भावना है । उस दिशा मे भी अनुसन्धान की बड़ी आवश्यकता है । भारत सरकार द्वारा नियुक्त एक टेकनीकल समिति यह विचार कर रही है कि यह अनुसन्धान किस प्रकार किया जाना चाहिए । निकट भविष्य में जिन समस्याओ का अनुसन्धान करके लाभ उठाया जा सकता है, उनके कुछ उदाहरण ये हैं:—

(१) बिजली उद्योग में देशी सामान का उपयोग, विशेषत "इन्स्यूलेटिंग" (बिजली को फैलने से रोकने) के लिए,

करोड़ रुपए मूल्यह्रास के लिए भी शामिल थे। परन्तु अब खयाल है कि पाचों वर्षों में मिलकर ४३२ करोड़ रुपया व्यय हो गया होगा। इस अतिरिक्त व्यय का प्रधान कारण यह है कि अन्तिम दो या तीन वर्षों में इंजनों और डिब्बों का कार्यक्रम बढ़ा दिया गया था। इंजन और डिब्बे अधिक मंगाने के साथ-साथ वर्तमान इजनों और डिब्बो का अधिक अच्छा उपयोग करने और लाइन की सामर्थ्य बढाने के विशेष उपाय करने का फल यह निकला कि रेलें काफी अधिक माल की ढुलाई करने में समर्थ हो गईं—विशेषत. योजना के द्वितीयार्ध में। इस प्रकार १९५३-५४ और १९५४-५५ के बीच रेलों द्वारा ढोए हुए माल की मात्रा, टनों में, लगभग ८ प्रतिशत बढ़ गई, और अन्दाजा है कि योजना के अन्तिम वर्ष में यह मात्रा कोई ९ प्रतिशत और भी बढ़ गई होगी। परन्तु ढोए जाने वाले माल का परिमाण, उसे ढोने की रेलों की सामर्थ्य की अपेक्षा, अधिक द्रुत गति से बढ़ता रहा। रेलों पर लदान का दैनिक औसत अवश्य बढ़ गया, परन्तु अनलदे माल का लेखा उसकी अपेक्षा अधिक तेजी से बढा।

६. प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान मे विभिन्न खातों में जो व्यय किया गया उसका विवरण निम्नलिखित है .—

(करोड़ रुपए)

पुनस्संस्थापन और वृद्धि	योजना में रखी गई राशि	समस्त व्यय
१ इजन, डिब्बे और यन्त्र आदि .	२०७·९६	२५३·४४
२. लाइनें और पुल	७०·४७	६४·४१
३. संरचना और इंजीनियरी के अन्य काम जिनमें सवारी के डिब्बो का कारखाना, चित्तरंजन कारखाना, गंगा का पुल, कोयला खानें और बन्दर आदि शामिल हैं	४५·९०	४९·९६
४. उखाड़ी हुई लाइनों का पुनर्निर्माण, नई लाइनो का निर्माण और गाड़ियों को बिजली से चलाने की तैयारी	३४·१८	३३·२०
५ यात्रियों के लिए सुख-सुविधाएं	१५·००	१३·२९
६. कर्मचारियों के मकान और कल्याण कार्य . .	२४·०९	२०·५२
७. विविध	२·४०	−२·७५*
योग	४००·००	४३२·०७

७. **इंजन और डिब्बे**—प्रथम पंचवर्षीय योजना शुरू होने के समय भारतीय रेलों के ८,२०९ इंजन, १९,२२५ सवारी डिब्बे और २२२,४४१ माल डिब्बे चल रहे थे। इनमें से २,११२ इंजन, ७,०११ सवारी डिब्बे और ३९,५८४ माल डिब्बे इतने पुराने हो चुके थे कि उन्हें बदल देने की आवश्यकता थी। योजना में १,०३८ इंजन, ५,६७४ सवारी डिब्बे तथा ४९,१४३ माल डिब्बे उपलब्ध कराने का कार्यक्रम रखा गया था। परन्तु बाद को इंजन और

*इस घटती का कारण यह है कि पहले एकत्र सामान में कमी हो गई और जो सामान न्यस्त दिया गया उसे और अन्य वसूलियों को आय-खाते में जमा कर दिया गया।

माल डिब्बे और अधिक मंगाने का निश्चय कर लिया गया। आशा है कि प्रथम योजना की समाप्ति के समय तक नीचे उल्लिखित सामान आ चुका होगा :

	भारत मे निर्मित	विदेशो से मगाया	योग
इंजन . . .	४६६	१,०६३	१,५८६
सवारी डिब्बे ...	४३,५१	४८६	४,८३७
माल डिब्बे ...	४१,१६२	२०,५२१	६१,७१३

योजना के समय जो नया सामान आया उसका कुछ भाग उस बहुत पुराने सामान को बदलने के काम आ गया जो कि आगे काम नहीं दे सकता था। प्रथम योजना की समाप्ति पर ६,२६२ इंजन, २३,७७६ सवारी डिब्बे, और २६६,०४६ माल डिब्बे रेलवे लाइनों पर चल रहे होंगे। इनमे से २,८१३ इंजनों, ६,३०५ सवारी डब्बों और ४६,५६८ माल डब्बों की आयु पूरी होकर उन्हें बदल डालने की आवश्यकता होगी। इस प्रकार हाल के वर्षों मे इतना अधिक नया माल खरीदने पर भी पुराना माल बडी मात्रा मे बदल देने की आवश्यकता रहेगी, और उसे द्वितीय योजना काल में पूरा करना पडेगा। इजनों और डिब्बों के मामले में और अधिक स्वावलम्बी बनने के लिए बहुत प्रयत्न किया गया है। स्वदेश मे १६५१-५२ मे ३,७०७ माल डिब्बे बने थे, और १६५५-५६ में १३,५२६ बने। १६५१-५२ मे सवारी डिब्बे ६७३ बने और १६५५-५६ में १,२६०। चित्तरंजन के इजन कारखाने ने प्रथम योजना के समय मे ३३७ इंजन बनाए, जबकि पहले यह लक्ष्य २६८ रखा गया था। मीटर नाप की छोटी लाइन के इजन, टाटा लोकोमोटिव एण्ड इजिनीयरिग कम्पनी ने १६५१-५२ में केवल १० बनाए थे, १६५५-५६ में ५० बनाए। पेराम्बूर (मद्रास) की इन्टीग्रल कोच फैक्टरी योजना काल मे ही स्थापित हुई और अक्तूबर १६५५ से उत्पादन करने लगी।

८. **नई लाइनें, उखाड़ी हुई लाइनों का दोबारा बिछाया जाना और गाड़ियों का बिजली से संचालन**—योजना काल में युद्ध के समय उखाड़ी हुई ४३० मील लम्बी लाइनें दोबारा बिछाई गईं; ३८० मील लम्बी नई लाइने बनाई गईं, और ४६ मील लम्बी लाइने सकरी लाइनों (छोटी लाइनों) में बदली गईं। प्रथम योजना की समाप्ति के समय ४५४ मील लम्बी नई लाइनें बन रही थीं और ५२ मील सकरी लाइनों को बड़ी लाइनों में बदला जा रहा था। कलकत्ता के उपनगरीय क्षेत्र में बिजली से गाड़िया चलाने के लिए बिजली लगवाने का काम प्रथम योजना के समय आरम्भ कर दिया गया था और उसका प्रथम चरण १६५८ तक पूरा हो जाने की आशा है।

पुरानी बेकार लाइनो को बदलने का काम माल की कमी के कारण मन्द गति से ही किया जा सका है। पटरियों की खराबी के कारण जिन रास्तों पर गाड़ियां धीमी चाल से चलानी पड़ती थीं, उनकी लम्बाई १६५०-५१ में ३,००० मील थी। योजना की समाप्ति पर वह घटकर १,७८४ मील रह गया था।

६. **संरचना और इंजीनियरिंग के काम**—हाल के बरसों मे लाइनों की सामर्थ्य बढ़ाने पर विशेष ध्यान दिया गया है। इस कार्यक्रम मे प्राथमिकता लाइन के उन भागों को दी गई जहां आवश्यकता उपलब्ध सामर्थ्य से अधिक थी और सामर्थ्य बढ़ाने के लिए दीर्घकालिक और अल्पकालिक दोनों प्रकार के उपायों का अवलम्बन किया गया। इन उपायों में अधिक लम्बी माल गाड़ियां चला सकने के लिए क्रासिग लूप को लम्बा कर देने, क्रांसिग लूप और स्टेशनो की संख्या बढ़ा देने, जंक्शन स्टेशनों के यार्डों में अधिक सुविधाएं प्रदान कर देने, एक लाइन से दूसरी लाइन को भेजने वाले यार्डों का विस्तार करने और

सिगनल व्यवस्था सुधारने के उपाय भी सम्मिलित थे। इन उपायो का फल यह निकला है कि रेलवे लाइन के कई हिस्सो पर काम की सामर्थ्य बढ गई है। उनमे से उल्लेखनीय ये हैं :— मद्रास-विजयवाड़ा, खड़गपुर-वाल्टेयर, झाझा-मुगल सराय, इलाहाबाद-कानपुर, रतलाम-गोधरा भुसावल-सूरत, अहमदाबाद-कालोल और सीनी-गोम्हडिया। एक गाडी से निकालकर दूसरी गाड़ी मे माल लादने की सहूलियत, मण्डुआडीह, सवाई माधोपुर, साबरमती, बीरगाव, घोड़पुरी, गण्टकल, बगलौर और आर्कोणम स्टेशनों पर बढ़ा दी गई है। कई बडे स्टेशनों के यार्डों का प्रबन्ध नए ढग से कर दिया गया है। इनमें विजयवाड़ा और रतलाम का नाम उल्लेखनीय है।

द्वितीय योजना के लक्ष्य

१०. रेलों की चल और अचल दोनो प्रकार की सम्पत्ति के पुनर्निर्माण और आधुनिकीकरण का काम द्वितीय योजना के समय भी जारी रखना पड़ेगा, जिससे कि जो सामान पुराना हो जाने पर भी काम में लाया जा रहा है उसका अनुपात घट जाए और लाइन की खराबी के कारण जहा गाड़ियो की चाल पर पाबन्दी लगाई हुई है वहा उसे उठाया जा सके। साथ ही, लाइनों और इजनों व डिब्बो की सामर्थ्य बढ़ाने की योजना बनानी पड़ेगी, जिससे कि योजना के विभिन्न अगों की पूर्ति से उत्पादन बढ़ जाने पर रेल द्वारा ढुलाई की जो मांग बढ़ेगी, उसे पूरा किया जा सके। पिछले अध्यायों में बतलाया जा चुका है कि कृषि, कोयले, खनिज, कच्ची धातुओं, लोहे व इस्पात, सीमेंट, रासायनिक खाद, बडी और छोटी मशीनों और उपभोग्य वस्तुओ के उत्पादन लक्ष्य क्या-क्या रखे गए हैं। रेलों के विकास की योजना इन लक्ष्यों को ध्यान में रखकर ही बनाई गई है, फिर भी इस पर निरन्तर पुनर्विचार और आवश्यकतानुसार परिवर्तन करते रहना पड़ेगा, जिससे राष्ट्रीय योजना के विभिन्न अंग पूरे हो जाने पर जो नई परिस्थितिया उत्पन्न हों उनके साथ रेलों का मेल रह सके।

११ द्वितीय योजना के उत्पादन लक्ष्यो को ध्यान में रखते हुए अन्दाजा लगाया गया है कि माल की अतिरिक्त ढुलाई निम्न प्रकार करनी पडेगी:—

	अतिरिक्त ढुलाई (लाख टनों में)	
कोयला ..	२००.००	
इस्पात और इस्पात के कारखानो के लिए कच्चा माल	१८०.००	(कच्चे लोहे और इस्पात के उत्पादन में ५० लाख टन वृद्धि होने की सम्भावना है)
सीमेंट	*५०.००	
विशिष्ट वृद्धियों का योग	४३०.००	
विविध ढुलाइयों में वृद्धि, ५ प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से, अर्थात ५ वर्षों में २५ प्रतिशत . ..	१७८.००	
योग	६०८.००	

*सीमेंट उत्पादन मे वृद्धि का लक्ष्य बढ़ा दिया गया है। नए कारखाने के लिए स्थान चुनते समय रेल परिवहन का ध्यान रखना होगा। कुछ सीमेंट की ढुलाई तटवर्ती जहाजरानी और सड़कों के द्वारा भी संभव है।

१९५५-५६ मे करीब १२ करोड टन माल ढोए जाने की आवश्यकता पडेगी। आशा है कि रेले उसमे से ११.५ करोड़ टन ढो सकेंगी। ५० लाख टन की कमी रह जाएगी। आशा है कि वह भी उन उपायो द्वारा पूरी कर दी जाएगी जिनका अवलम्बन पहले से किया जा रहा है। द्वितीय योजना के अन्त तक अतिरिक्त ढुलाई ६ करोड़ ८ लाख टन बढ़ जाने की सम्भावना है। इस प्रकार १९६०-६१ तक सारी ढुलाई का योग १८ करोड ८ लाख टन हो जाएगा। रेलो के विकास के लिए अब तक जो धनराशिया रखी गई है उनसे रेलों के यह सब माल ढोने में समर्थ हो सकने की सम्भावना नही है। वे माल ढोने की जितनी सुविधा दे सकेंगी, उसमे अन्दाजन १० प्रतिशत कमी तो इजनों और डिब्बो मे और ५ प्रतिशत लाइनो की सामर्थ्य मे रह जाएगी। परन्तु कुछ सहायता उन इजनों और डिब्बों से मिल जाने की आशा है जो तब तक बदल तो दिए जाएगे, परन्तु जो शायद तब काम-चलाऊ अवस्था मे रहे। इस सारी परिस्थिति पर निरन्तर विचार किया जाता रहेगा, और योजना के अन्य अगो मे विकास की जैसी कुछ स्थिति होगी उसे सामने रखकर रेलो की योजना मे आवश्यक परिवर्तन किया जाता रहेगा।

१२. यात्रियों के यातायात मे द्वितीय योजना मे प्रतिवर्ष ३ प्रतिशत अर्थात पांच वर्षो में १५ प्रतिशत वृद्धि करने की व्यवस्था की गई है। यदि यात्रियों का यातायात वर्तमान गति से ही बढ़ता रहा तो उससे रेलो मे भीड़ कम करने मे कोई मदद नही मिलेगी। द्वितीय योजना के समय माल ढोने की आवश्यकता की पूर्ति का ध्यान अधिक रखना पड़ेगा, इसलिए यात्रियों की भीड-भाड़ की कठिनाई किसी हद तक सहनी ही पड़ेगी। इस सम्बन्ध मे एक सम्भावना यह अवश्य है कि यात्रियो की बहुत बड़ी सख्या सड़क परिवहन का उपयोग करने लगेंगी।

१३. कोश सीमित होने के कारण, देश के ऐसे भागो मे नई पटरिया बिछाने के लिए योजना में व्यवस्था नही है जहा आजकल रेल नही जाती। केवल उन्ही नई पटरियों के लिए योजना मे व्यवस्था है जो कि संचालन-कार्यो तथा नए औद्योगिक योजना कार्यों के लिए आवश्यक हैं।

द्वितीय योजना में व्यय

१४. रेलवे मूल्यह्रास कोश में अन्दाजन २२५ करोड़ रुपए जमा करवाने के अतिरिक्त, द्वितीय योजना मे रेलो के विकास पर ९०० करोड रुपए व्यय किए जाएगे। आशा है कि इनमें से १५० करोड़ रुपए तो रेलें ही अपनी आय मे से विकास योजनाओं पर व्यय कर सकेंगी, शेष ७५० करोड़ रु० का प्रबन्ध सामान्य राजस्व खाते से करना पड़ेगा। द्वितीय योजना में रेलो के कार्यक्रमों पर जो धन व्यय किया जाएगा, उसके परिमाण का विचार बहुत सावधानीपूर्वक कर लिया गया है। रेलवे मंत्रालय ने विकास की जो रूपरेखा योजना के अन्य भागो के विकास कार्यो को सामने रखकर तैयार की थी, उसके व्यय का परिमाण १,४८० करोड़ रुपए था। पीछे विदेशी मुद्रा की अन्य आवश्यकताओं, इस्पात मिल सकने की अनिश्चित अवस्था, रेलवे योजना की प्राथमिकताओ, और योजना के अन्य भागों के दावो का विचार करके व्यय के उक्त परिमाण को बहुत घटा दिया गया। रेलों की न्यूनतम आर्थिक आवश्यकताओं का निर्णय करते हुए मुख्य ध्यान माल ढोने की बढती हुई आवश्यकताओ का रखा गया है। माल ढोने की बढती हुई आवश्यकता पूरी करने मे रेलो की सामर्थ्य बढ़ाने के लिए कार्यक्रम में उपयुक्त परिवर्तन कर दिए गए है और यह ध्यान रखा गया है कि पूजी का विनियोग यथाशक्ति कम करना पड़े। इसी प्रयोजन से यह मान लिया गया कि कुछ लाइनों पर गाड़िया बिजली की जगह डीजल तेल से चलाई जाए। इसी प्रकार, कुछ चुने हुए भागों में यातायात के चरम सीमा तक पहुंच जाने पर भी सारी लाइन को डबल न करके केवल कुछ हिस्से को डबल किया जाएगा। पुरानी लाइनों को फिर से बनाने और अपनी

आयु बिता चुके हुए इंजनो और डिब्बो को बदल डालने के कार्यक्रम को कम करके सोचा यह गया है कि बदले हुए इजनो आदि में से जो काम चलाने लायक हो, उनसे काम लिया जाता रहे। इस प्रकार रेलों के लिए जो सीमित धनराशि रखी गई है उससे योजना के लक्ष्य पूरे करने का अधिकतम प्रयोजन सिद्ध किया जा सकेगा। अब रेलो की योजना में, १,६०७ मील लाइन को डबल करने, २६५ मील मीटर नाप की छोटी लाइन को बड़ी लाइन में बदलने, ८२६ मील लम्बी लाइन पर कई भागों में गाड़िया बिजली से और १,२९३ मील लम्बी लाइन पर डीज़ल से चलाने, ८४२ मील नई लाइन बनाने, ८,००० मील पुरानी लाइन को नया करने, और २,२५८ इंजन, ११३६४ सवारी डिब्बे और १०७,२४७ माल डिब्बे खरीदने के कार्यक्रम है। निम्न तालिका में विभिन्न कार्यों के लिए १,१२५ करोड़ रुपए की वितरण व्यवस्था दिखलाई गई है :–

	(करोड़ रु० में)
१. इजन और डिब्बे	३८०
२. कारखाने, यन्त्र और मशीनें	६५
३. पुरानी लाइनों को नया करना	१००
४. पुलों के कार्य	३३
पुर्ननिर्माण	१८
गंगा का पुल	९
नए पुल	६
५. लाइनों की सामर्थ्य बढ़ाने के काम (माल गोदामों के विस्तार को शामिल करके)	१८६
६. सिगनल लगाने और सुरक्षा के काम	२५
७. रेलगाड़ियों का बिजली से संचालन	८०
८. नई तामीरें	६६
९. रेल कर्मचारियों के कल्याण कार्य और मकान	५०
१०. स्टोर्स-डिपो (समान रखने के स्थान)	७
११. ट्रेनिंग स्कूल	३
१२. रेलों का उपयोग करने वालों के लिए सुख-सुविधाएं	१५
१३. अन्य विकास कार्य (इनमें विशाखापत्तनम का बन्दर भी शामिल हैं)	१५
१४. सड़क परिवहन के संगठनों में रेलों का भाग	१०
१५. स्टोर मे सामान	५०
१६. आयात किए हुए इस्पात* के लिए अतिरिक्त धनराशि	४०
योग	१,१२५

१५. रेलों के लिए निश्चित सारी राशि में से ४२५ करोड़ रुपए विदेशी मुद्रा के रूप में व्यय करने पड़ेंगे। किस कार्यत्रम के लिए कितनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता होगी, यह नीचे देखिए :–

	(करोड़ रु० में)
इंजन	८१
डिब्बे आदि अन्य गाड़ियां	८२
अन्य सामान	१२५
इस्पात	१३७
योग	४२५

*यह इस्पात रेलों द्वारा 'समीकरण निधि' से बाहर मगाया जाएगा

विदेशी मुद्रा की आवश्यकयता, बिजली और डीजल तेल के इजनों और विशेष माल डिब्बों आदि खास-खास वस्तुओ के लिए पड़ेगी। प्रयत्न यह किया जाएगा कि इंजन और डिब्बो की अधिकतम आवश्यकताएं यथाशक्ति देश मे ही पूरी कर ली जाए।

१६. **इंजनों और डब्बों का कार्यक्रम**—इंजनों और डिब्बो के लिए जो ३८० करोड़ रुपए रखे गए हैं, उनमें से १८३ करोड़ रुपए विकास पर और १९७ करोड रुपए पुनर्निर्माण कार्यक्रम पर व्यय किए जाएंगे। सब मिलाकर २,२५८ इंजन, ११,३६४ सवारी डिब्बे और १०७,२४७ माल डिब्बे लेने का विचार है। नीचे की तालिका में पुनर्निर्माण और विकास की आवश्यकताएं विस्तारपूर्वक पृथक-पृथक दिखलाई गई है—

	इंजन			माल डिब्बे			सवारी डिब्बे		
	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	सकरी लाइन	बडी लाइन	छोटी लाइन	सकरी लाइन	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	सकरी लाइन
विकास	५३३	३७३		६६,५७५	१६,८२०		२,१४९	२,७६८	.
पुनर्निर्माण	१,०६२	२०९	८१	१४,८७९	४,९५२	४,०२१	४,३९२	१,४२२	६३३
योग	१,५९५	५८२	८१	८१,४५४	२१,७७२	४,०२१	६,५४१	४,१९०	६३३

१७. विचार यह है कि पुनर्निर्माण का कार्यक्रम पूरा करते हुए जिन इंजनों और माल डिब्बों की आयु १९६०-६१ तक ४०-४५ वर्ष हो जाएगी, उन सबको काम में लाया जाता रहे। जिन इंजनों और माल-डिब्बों की आयु ४५ वर्ष से ऊपर हो जाएगी, उनमें से उतनी संख्या में तो चलते ही रहेंगे जितनी संख्या में मार्च १९५६ में चल रहे होंगे। ऐसा करने में पूरी से ऊपर आयु वाले इंजनों और डिब्बों का अनुपात काफी घट जाएगा। यह नीचे की तालिका में दिखाया गया है। पूरी से ऊपर आयु वाले सवारी डिब्बों का अनुपात द्वितीय योजना के अन्त तक घटाते-घटाते लगभग १० प्रतिशत रहने देने का विचार है।

चालू इंजनों और डिब्बों में अधिक आयु वालों का प्रतिशत

३१ मार्च की स्थिति	इंजन		माल डिब्बे		सवारी डिब्बे	
	बडी लाइन	छोटी लाइन	बड़ी लाइन	छोटी लाइन	बडी लाइन	छोटी लाइन
१९५१	२३·०	३१·०	१३·३	२९·४	२९·५	४५·०
१९५६	३२·५	२६·०	१६·५	१७·२	२४·०	२६·४
१९६१	१६·२	२२·५	६·६	११·९	१०·०	९·५

१८. **कारखाने, संयंत्र और मशीनें**—इंजनों और डिब्बों की संख्या बढ़ जाने पर उन सबकी मरम्मत आदि करने के लिए वर्तमान कारखानों और इंजन घरों में से कइयों में सुधार और विस्तार कर दिया जाएगा और कुछ नए कारखाने भी खोले जाएंगे। योजना का कार्यक्रम यह है कि छः नए कारखाने खोले जाएं, एक नया कारखाना छोटी लाइन के सवारी डिब्बे बनाने के लिए स्थापित किया जाए और बिना जोड़वाले सवारी डिब्बों के कारखाने में एक विभाग डिब्बों की फर्निशिंग का बढ़ा

दिया जाए। चित्तरंजन के इजन बनाने के कारखाने का और भी विस्तार किया जाएगा। इस खाते के लिए रखे गए ६५ करोड़ रुपए इस प्रकार व्यय किए जाएंगे :—

	व्यय करोड़ (रुपए में)
१. वर्तमान कारखानो मे सुधार और नए मरम्मत कारखाने ..	२८·५
२. फालतू पुर्जे बनाने के लिए दो नए कारखाने	७·०
३ छोटी लाइन के सवारी डिब्बे का नया कारखाना और बिना जोड़ के सवारी डिब्बों के कारखाने का विस्तार .	१०·०
४ चित्तरंजन के इंजन कारखाने का विस्तार . ..	५·०
५ सिविल इंजीनीयरी के कारखाने	६·०
६. इंजन घरों का सुधार	८·५
योग	६५·०

आशा है कि इस कार्यक्रम के पूरा हो चुकने पर इंजनों और डिब्बों की मरम्मत करने की सामर्थ्य में सब मिलाकर वार्षिक वृद्धि इस प्रकार हो जाएगी :—

	वर्तमान सामर्थ्य	प्रस्तावित कार्यक्रम पूरा हो जाने पर सम्भावित सामर्थ्य	वृद्धि का प्रतिशत
१. इंजन			
बड़ी लाइन के	१,८२३	२,३४७	२९
छोटी औरसकरी लाइनो के	१,२३७	२,०५२	६६
२. सवारी डिब्बे			
बड़ी लाइन के	१२,५१४	२२,३९०	७९
छोटी और सकरी लाइनों के	७,३७३	१८,४४३	१५०
३. माल डिब्बे			
बड़ी लाइन के	४८,०१४	९०,३११	८८
छोटी और सकरी लाइनो के	१४,०७७	३४,३७२	१४४

तेल की ढुलाई करने वाले माल डिब्बों और बिजली के इंजनों तथा सवारी डिब्बों की मरम्मत करने और उन्हें नया जैसा बना देने की सामर्थ्य बढा देने का भी विचार है। आशा है कि चित्तरंजन के इंजन कारखाने की उत्पादन सामर्थ्य बढ़कर औसत नाप के ३०० इंजन प्रतिवर्ष बना सकने तक पहुंच जाएगी। पेराम्बूर में स्थित बिना जोड़ के डिब्बे बनाने के कारखाने की सामर्थ्य योजना के प्रारम्भिक काल में २०० डिब्बे प्रतिवर्ष तक पहुंच जाने की आशा है जो अन्ततः बड़ी लाइन के ३५० गैर-फर्निश्ड डिब्बों तक पहुंच जाएगी।

१९ कारखानो का विस्तार और सुधार करने के कार्यक्रम बनाने के अतिरिक्त, उनका अधिकतम उपयोग करने के लिए भी विशेष उपायों पर विचार किया गया है। इनमें उत्पादन का

नियन्त्रण करने के लिए आवश्यक संगठन की स्थापना करना और कारखानों के कुछ हिस्सो में काम की कई पालियां चलाना भी शामिल है। द्वितीय योजना काल में इजनों, डिब्बों और रेलों के अन्य सामान के लिए आत्म-निर्भर हो जाने का प्रयत्न भी जारी रखा जाएगा। योजना में निजी भाग के उद्योगों का कार्यक्रम तैयार करते हुए इस उद्देश्य को भी ध्यान में रखा गया है। आशा है कि टाटा का इंजन कारखाना अपना उत्पादन १०० इजन प्रतिवर्ष तक बढ़ा सकेगा। उसे और चित्तरंजन के कारखाने को मिलाकर विस्तार के पश्चात प्रतिवर्ष ४०० इंजन बनाने में समर्थ हो जाना चाहिए। इनमे से ३०० इजन बड़ी लाइन के और १०० छोटी लाइन के होंगे। सवारी डब्बों का उत्पादन, द्वितीय योजना के अन्त तक, १,२६० प्रतिवर्ष से बढ़कर १,८०० प्रति वर्ष, और माल डिब्बों का १३,५२६ प्रति वर्ष से बढ़कर २५,००० प्रतिवर्ष हो जाने की आशा है। रेलों के अन्य सामान और इंजनों और डिब्बों के निर्माण की देश की सामर्थ्य का और अधिक विकास करने के सुझावों पर एक विशेष समिति विचार कर रही है।

२०. **लाइनों का नवीकरण**—रेल मार्ग के जिन भागों की लाइने पुरानी पड़ चुकी है, उनमें गाड़ियों की चाल पर पाबन्दिया लगा देनी पडती है, जिससे लाइनों की सामर्थ्य घट जाती है और गाड़ियों की गति मन्द हो जाती है। प्रथम योजना के अन्त में लगभग ७,००० मील लम्बे रेल मार्ग पर लाइन नही बदली जा सकी थी। प्रथम योजना आरम्भ होने के समय ३,००० मील लम्बे मार्ग पर लाइन खराब होने के कारण गाड़ियों की चाल पर पाबन्दियां लगानी पड़ती थीं। मार्च १९५६ तक यह दूरी घटकर १,७८४ मील रह गई होगी। प्रथम योजना से बची हुई और द्वितीय योजना के समय बदलने योग्य हो जाने वाली लाइनों की लम्बाई मिलकर लगभग १३,००० मील हो जाएगी। इसमे से ४,५०० मील बड़ी लाइन की और ४,१०० मील छोटी लाइन की लम्बाई रेलों के मुख्य मार्गों पर पड़ती है। शेष सारी लम्बाई शाखा लाइनों पर पड़ती है, परन्तु उसके भी कई भाग महत्वपूर्ण है। द्वितीय योजना में प्रतिवर्ष १,६०० मील अथवा पांचों वर्षों में ८,००० मील लम्बी लाइने बदलने की व्यवस्था है।

२१. **लाइनों की सामर्थ्य बढ़ाने के काम**—द्वितीय योजना काल में रेल परिवहन का जो काम बढ़ेगा, उसे पूरा करने के लिए रेलवे लाइनों की वर्तमान सामर्थ्य में लगभग ५० प्रतिशत वृद्धि कर देनी होगी। इसके लिए १,६०७ मील लम्बी लाइन तो दोहरी कर देने और २६५ मील छोटी लाइन को बड़ी लाइन में परिवर्तित कर देने की योजना बनाई गई है। इसके अतिरिक्त, आमने-सामने से आती हुई गाड़ियों को एक दूसरे की बगल में से गुजारने की व्यवस्था वाले स्टेशनों और "लप" अर्थात घूमकर जाने वाली लाइनों की सख्या बढा देने, बहुत-से स्टेशनों पर लूप लाइनों का विस्तार कर देने और बहुत-से बड़े स्टेशनों के यार्डों को सुधार कर उनका पुनर्गठन कर देने की योजनाएं भी है। निम्नलिखित स्टेशनों के बीच में रेलवे लाइन दोहरी कर दी जाएगी :—

	मील संख्या
पूर्व रेलवे	
बोकारो-बड़काकाना	३६
अण्डाल-उखड़ा . .	७
	४३

	मील संख्या	
दक्षिण-पूर्व रेलवे		
मनोहरपुर-राउरकेला	२५	
राउरकेला-नागपुर	४४६	
गढध्रुवेश्वर-ज्योचण्डीपहाड़	४	
सीनी-गोम्हड़िया	१०	
सीनी-कन्द्रा	४	
राजखरसवान-बड़ाजमदा	६०	
नरगुण्डी-खुर्दा रोड	२६	
खड़गपुर-टाटानगर*	३०	
		६०५
मध्य रेलवे		
दिल्ली-आगरा*	७७	
कटनी-जबलपुर	५७	
जबलपुर-इटारसी*	८०	
		२१४
दक्षिण रेलवे		
आर्कोणम-जोलारपेट	९०	
वाल्टेयर-राजामुन्द्री*	३०	
विजयवाड़ा-गुडूर	१८२	
जोलारपेट-इरोड*	६०	
आर्कोणम-रेनीगुण्टा	४०	
		४०२
उत्तर रेलवे		
इलाहाबाद-कानपुर*	६०	
कानपुर-लखनऊ*	११	
रेवाड़ी-दिल्ली*	३०	
मुरादाबाद-सहारनपुर*	५०	
योग ...		१५१
पश्चिम रेलवे		
गोधरा-रतलाम .	११५	
बड़ौदा-आनन्द .. .	२२	
रतलाम-नागदा	२६	
		१६३

*इन स्टेशनों के बीच मे लाइन का केवल कुछ भाग दोहरा किया जाएगा। उसकी दूरी मीलों मे दे दी गई है।

		मील संख्या
उत्तर-पूर्व रेलवे		
कटिहार-बरसोई		२४
मानसी-खगरिया	.	५
		२६
	योग	१६०७

छोटी लाइन पर इन भागों को बड़ी लाइन में बदलने का विचार है —

दक्षिण रेलवे		**मील संख्या**
भीमावरम्-गुडीवाड़ा-विजयवाड़ा-गुण्टूर	... .	१११
कुरुन्दुवाडी-मिरज-कोल्हापुर-सागली	.	१५४
	योग	२६५

२२. **सिगनलों में सुधार और सुरक्षा के काम**—रेलगाड़ियो के संचालन में सुरक्षा की व्यवस्था करने और अधिक यातायात वाले भागों में लाइन की सामर्थ्य बढ़ाने के लिए सुधरे हुए सिगनल लगाने की योजना बनाई गई है। इसमें ये काम शामिल है —

(१) मथुरा-बड़ौदा, वर्धा-विजयवाड़ा और दिल्ली-अम्बाला-कालका आदि मुख्य मार्गो पर लाइनों के इन्टरलाकिंग स्टेण्डर्ड अधिक ऊँचा कर देना, जिससे कि गाडियों की चाल अधिक तेज की जा सके;

(२) जिन भागों मे अभी तक सिगनलों का इंटरलाकिग नही हुआ है, परन्तु यातायात बढ़ गया है, उनमें भी और बड़े तथा महत्वपूर्ण स्टेशनों के यार्डों में भी इंटरलाकिंग कर देना;

(३) अधिक काम-काज वाले स्टेशनों के यार्डो में और कुरला जंकशन, दिल्ली, लखनऊ डालीगंज, सियालदा और मद्रास आदि क्षेत्रो में बिजली के आधुनिक सिगनल लगाना;

(४) दिल्ली-गाजियाबाद, मुगलसराय-बनारस, इलाहाबाद-छेउकी, सन्त्रागाछी-टिकियापाड़ा, और कुरला-थाना आदि अधिक यातायात वाले भागों में स्वचालित सिगनल लगाना;

(५) मुगलसराय पर 'हम्प यार्ड' के लिए आधुनिक ढंग की सिगनल व्यवस्था करना जिसमें गाड़ियो आदि के लिए स्वचालित प्वाइंट्स और रिटार्ड्स की व्यवस्था सम्मिलित है; और

(६) छोटी लाइन और बड़ी लाइन के एक-एक विभाग पर केन्द्रीकृत यातायात नियन्त्रण करना ।

सुरक्षा के कामो मे यह व्यवस्थाए भी सम्मिलित है : दुहरी लाइनों पर लाक और ब्लाक यंत्रो की, इकहरी लाइनों पर 'टोकन' यत्र की, महत्वपूर्ण यार्डो में 'ट्रेक सर्किट' की और 'लेवल क्रासिग', 'कैच साइडिग' और 'स्लिप साइडिग' पर इटरलाकिंग की व्यवस्था। दूर संचार की सुविधाएं बढाने के लिए ये काम किए जाएगे थोड़े और बड़े फासले के और अधिक वायरलैस लिंक लगाए जाएंगे, मार्शलिग यार्डो पर बहुत अधिक शक्तिशाली उपकरण लगाए जाएगे और नए विभाग नियन्त्रक सर्किट खोले जाएंगे।

२३. **गाड़ियों को बिजली से चलाना**—जहा लाइनों की सामर्थ्य अपनी चरम सीमा पर पहुंच चुकी है, वहा गाड़ियों को बिजली से चलाने की योजना बनाई गई है जिससे कि काम अधिक कुशलतापूर्वक हो और सामर्थ्य का विकास मितव्ययिता से किया जा सके। इस योजना के अनुसार इन भागो मे ८२६ मील लम्बी लाइनों पर गाड़ियां बिजली से चलाई जाएंगी

	मील संख्या	
पूर्वी रेलवे		
कलकत्ता क्षेत्र (नगर के चारो और की रेल छोड़कर) अर्थात हावड़ा-बर्दवान चोर्ड, बैण्डल-नाइहाटी, सियाल्दा डिवीज़न-रानाघाट तज, दक्षिणी भाग दाकुनी-दमदम ..	३४९	
बर्दवान-आसनसोल	६६	
आसनसोल-गोमोह ...	४८	
		४६३
दक्षिण-पूर्व रेलवे		
हावडा-खड़गपुर ...	७२	
		७२
मध्य रेलवे		
इगतपुरी-भुसावल	१९१	
		१९१
दक्षिणी रेलवे		
मद्रास-ताम्बरम-विल्लुपुरम		१००
योग		८२६

२४. **गाड़ियों का डीजल तेल से संचालन**—गाड़ियों का संचालन अधिक मितव्ययिता और कुशलता से करने के लिए बड़ी लाइन के १,०२० मील और छोटी लाइन के २७३ मील में

परीक्षण स्वरूप गाड़ियां डीज़ल तेल से चलाकर देखने का विचार है। जिन भागो में यह परीक्षण करके देखा जाएगा उनके नाम ये है :

	मील संख्या	
पूर्वी रेलवे		
गोमो-मुग़लसराय	२३२	
		२३२
दक्षिण-पूर्वी रेलवे		
आसनसोल-राजखरसवान	९७	
राजखरसवान-झरसनगुडा	१३८	
राजखरसवान-बड़ाडमदा	६०	
		२९५
मध्य रेलवे		
बल्हारशाह-काज़ीपेट	१४६	
काज़ीपेट-सिकन्दराबाद	८१	
		२२७
दक्षिण रेलवे		
विजयवाड़ा-मद्रास	२६६	
पूना-मिराज	१५८	
		४२४
पश्चिम रेलवे		
अहमदाबाद-आबू रोड	११५	
		११५
योग		१२९३

२५. पुल—गंगा के पुल पर आरम्भिक कार्य १९५३-५४ में शुरू किया गया था। द्वितीय योजना में इसके लिए ९ करोड़ रुपए रखे गए है। यह पुल ६,०७४ फुट लम्बा होगा। इसके ऊपर एक आधुनिक ढंग की चौड़ी सड़क रहेगी और बाएं तट पर एक बड़ा आधुनिक ट्रांशिपमेंट यार्ड रहेगा, जिसमें प्रतिदिन बड़ी लाइन के ३५० से ४०० तक माल डिब्बों से माल लादा-उतारा जा सकेगा। इस पुल पर सब मिलाकर १६ करोड़ रुपए व्यय होने का अन्दाजा है और आशा है कि यह १९६० के शुरू में ही बनकर पूरा हो जाएगा। अन्य कार्यों में प्रमुख कार्य ब्रह्मपुत्र, यमुना और गण्डक

नदियो पर भी इसी योजना काल मे एक-एक पुल बनाने का कार्य आरम्भ कर देने का कार्यक्रम रखा गया है। इसके अतिरिक्त, द्वितीय योजना काल में पुलों का पुनर्निर्माण कार्य यथापूर्व होता रहेगा ।

२६. **नई लाइनें**—इस योजना काल मे ८४२ मील लम्बी नई लाइने बिछाई जाएंगी । इन्हे बनाने के दो प्रयोजन हैं । एक तो संचालन की बहुत जरूरी आवश्यकताओं को पूरा करना और दूसरा लोहा और इस्पात तथा कोयला उद्योगो के विस्तार में सहायक होना । जो लाइनें बनाई जाएगी उनके नाम ये है :—

	मील संख्या	
पूर्व रेलवे		
बड़सेट-बसिरहाट	४४	
		४४
दक्षिण-पूर्व रेलवे		
बड़काखाना-वीरमित्रपुर	१२४	
राउरकेला-तालडीह-दुमारो	३०	
नोआमण्डी-बनसापानी	१८	
भिलाई-डल्ली राझाड़ा	६०	
गुना-मनोहरपुर	३०	
करनपुरा-रामगढ़	७५	
सेण्ट्रल इण्डिया कोलफील्ड्स	१२५	
कोरबा एक्सटेन्शन	५	
		४६७
मध्य रेलवे		
गूना-उज्जैन	१७५	
		१७५
उत्तर रेलवे		
राबर्ट्सगंज-गढ़वा रोड	१००	
		१००
उत्तर-पूर्व रेलवे		
मुजफ्फरपुर-दरभंगा	३५	
रामशाई-बिन्नागुरी	२१	
		५६
योग		८४२

२७. **कर्मचारी कल्याण कार्य**—भारतीय रेलें देश में सबसे अधिक लोगो को काम तो देती ही है, उनकी योजनाओं में अपने कर्मचारियो के लिए कल्याण कार्यों को भी ऊंची प्राथमिकता दी जाती है। द्वितीय योजना में कर्मचारियों के मकानों और कल्याण कार्यों पर यथापूर्व विशेष ध्यान दिया जाता रहेगा। रेलो का काम बढ़ जाने के कारण कर्मचारियों की संख्या भी बढ़ा देनी पड़ेगी, और इसीलिए उनके मकानों और अन्य कल्याण कार्यों पर किया जाने वाला व्यय भी खासा बढ़ा देना होगा। इस योजना मे ३५ करोड़ रुपए मकानो पर और १५ करोड रुपए अन्य सुविधाओ पर व्यय करने के लिए रखे गए है। आशा है कि लगभग ६६,००० नए मकान बनाए जाएगे। इनमें वे मकान भी शामिल है जो नए कारखानो के आसपास बसाई जाने वाली बस्तियो मे बनाए जाएगे। द्वितीय योजना में कर्मचारियो के कल्याणार्थ अन्य जो काम किए जाएंगे, उनमें १३ चिकित्सालयो और ७५ औषधालयों का खोलना भी सम्मिलित है। चिकित्सालयो मे लगभग १,६०० रोगी शैयाओ की व्यवस्था की जाएगी।

२८. **रेलों का उपयोग करने वालों के लिए सुविधाएं**—यात्रियो के लिए जो सुविधाए उपलब्ध की जाएंगी उनमे स्टेशनों को सुधार कर बनाना भी शामिल है। विश्राम-कक्ष, जलपान गृहो और दुकानो का निर्माण, प्रतीक्षालयो का विस्तार, प्लैटफार्मो को ऊंचा, चौड़ा तथा लम्बा करना, और लाइन पार करने के लिए पुलों का बनाना आदि भी इन सुधारों में सम्मिलित है। इनके अतिरिक्त स्टेशनों पर सुधरे हुए शौचाल्य बनाने, स्नान की सुविधा और पानी मिलने की व्यवस्था करने, प्रतीक्षा गृहों मे बिजली की रोशनी और पंखे लगवाने और वर्तमान यात्री गाड़ियो को अधिक आरामदेह बनाने पर भी ध्यान दिया जाएगा। इन सुविधाओं के अधिक विवरण और इन्हें पूरा करने के क्रम का निश्चय, रेल उपयोगकर्ता सलाहकार समितियो के साथ विचार-विनिमय करके किया जाएगा। उपलब्ध कोश के सीमित होने के कारण जो कार्यक्रम बनाए जाएंगे वे मितव्ययिता के आधार पर ही बनाने पड़ेगे।

२९. **सामान को उचंती में एकत्र रखने का खाता**—कोई भी काम समय पर और पर्याप्त मात्रा में सामान न मिल सकने के कारण न रुके, इसलिए यह विचार किया गया है कि उपयुक्त स्थानो पर तामीरी सामान के डिपो खोलकर, उनमे सामान का संग्रह तुरन्त उपलब्ध होने योग्य अवस्था में रखा जाए। इसका फल यह होगा कि किसी भी समय सामान पर्याप्त मात्रा में संगृहीत रहेगा, और आशा है कि द्वितीय योजना की समाप्ति पर लगभग २५ करोड़ रुपए का सामान विद्यमान होगा। इस सामान मे इंटरलाकिंग तथा सिगनल करने की चीजें और माल डिब्बे बनाने के लिए खास किस्म का इस्पात भी शामिल रहेगा। संग्रह में इस समय बचे हुए सामान का मूल्य लगभग ५६ करोड़ रुपए है। रेलों के विस्तार का कार्यक्रम बढ़ जाने के कारण उसमें कोई २५ करोड़ रुपए मूल्य तक के सामान की और वृद्धि कर देनी पड़ेगी।

३०. **प्रशिक्षण कार्यक्रम**—रेलो की विकास योजनाओ की पूर्ति के लिए कर्मचारियों की संख्या भी बहुत बढ़ानी पड़ेगी। अन्दाजा लगाया गया है कि बढ़े हुए यातायात को संभालने और नए साधनों को ठीक रखने के लिए १६५,००० नए कर्मचारियो की आवश्यकता पड़ेगी। इन नए भरती किए हुए कर्मचारियों को आरम्भ में कुछ प्रशिक्षण भी देना पड़ेगा, इसलिए द्वितीय योजना में नई भरती के साथ-साथ कर्मचारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था भी रखी गई है। इसके लिए वर्तमान प्रशिक्षण व्यवस्था को दृढ़ करने के अतिरिक्त नौ नए प्रशिक्षण स्कूल भी खोले

जाएंगे। रेलवे मंत्रालय इस विस्तार कार्यक्रम की पूर्ति के लिए अस्थायी अधिकारियों और कर्मचारियों की भरती पहले ही आरम्भ कर चुका है।

परिवहन साधनों में समन्वय

३१. रेलों की योजना बनाते हुए परिवहन के अन्य साधनो, अर्थात सडकों, आन्तरिक जल मार्गों, समुद्री और हवाई यातायात के विकास का भी ध्यान रखना पड़ता है। एक-से काम पर दोहरे व्यय से बचने के लिए आवश्यक है कि सब परिवहन साधन कार्यों की उपयोगिता को समझकर उनमे सफल समन्वय कर लिया जाए। राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन का विकास करने के लिए अब तक साधारण नीति यह रही है कि सड़क परिवहन निगम अधिनियम, १६५० के अनुसार निगमो का संगठन होने दिया जाए, क्योंकि यह कानून इन निगमों के साथ रेलो को भी सहयोग करने की इजाजत देता है। इन निगमो का सगठन हो जाने पर रेलो और सड़कों के परिवहन में समन्वय होकर दोनों मिलकर काम कर सकेंगे, जोकि देश के लिए अधिकतम लाभदायक सिद्ध होगा। सड़क परिवहन के अतिरिक्त समस्या रेल परिवहन और आन्तरिक जल मार्गों के परिवहन में समन्वय करने की भी है। इसका देश के उत्तर-पूर्वी भाग में विशेष महत्व है, क्योकि वहा ज्वाएंट स्टीमर कम्पनियां नदी मार्गों से माल और यात्रियों के यातायात के एक बड़े अंश का प्रबंध करती हैं। इसी प्रकार रेलों, और समुद्र-तट पर चलने वाले जहाजो के परिवहन मे भी समन्वय करने की समस्या है। इन दोनो का विकास भी सहयोग-पूर्वक होने की आवश्यकता है। इस समस्या पर विशेषज्ञो की एक समिति विचार कर रही है। समन्वय की इन तथा अन्य समस्याओं पर निरन्तर विचार करते रहना होगा, जिससे समय-समय पर आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके।

नीति और संगठन

३२. भारतीय रेलों का एक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वे उपलब्ध इंजनों, डिब्बों और लाइनों की सामर्थ्य का अधिक से अधिक अच्छा उपयोग करें, जिससे कार्य-कुशलता और मित-व्ययिता में निरन्तर वृद्धि होती रहे। इसके लिए आयोजित और संगठित प्रयत्न करने की आवश्यकता है, जिससे कि गाडियो को आवश्यक रूप से चक्कर काट कर जाना न पड़े और जहा दो गाड़ियों का मेल होता हो, वहा उन्हें देर न लगे। इस प्रकार अनावश्यक व्यय से बचकर ही कुशलता का स्तर ऊंचा किया जा सकता है। इनमें से प्रथम उद्देश्य की सिद्धि तो आजकल किसी हद तक इस कारण हो रही है कि सीमेंट, लोहा और इस्पात, कोयला, कपड़ा, चीनी और नमक आदि कुछ वस्तुओ को रेल द्वारा ढोने के लिए अनावश्यक व्यय से बचकर चलने की एक पद्धति अपना ली गई है। इस पर शायद द्वितीय योजना के समय विद्यमान परिस्थितियों के अनुसार पुर्नविचार करना पड़े। रेलों की कुशलता बढ़ाने के लिए आवश्यक होगा कि प्रतिवर्ष की योजनाओं में सचालन कुशलता के विशिष्ट लक्ष्य पहले से निर्धारित कर दिए जाएं, और वर्ष की समाप्ति पर देखा जाए कि वे लक्ष्य कहां तक पूरे हुए। वार्षिक योजनाओं का बनाना और उनकी पूर्ति करना रेलवे बोर्ड का एक श्रम-साध्य उत्तरदायित्व होगा। विभिन्न कार्यक्रमों का समय निश्चित करके, उसके भीतर ही उन्हें पूरा कर देने के लिए आवश्यक होगा कि उन सबमें समय तथा गति आदि का मेल अति सावधानीपूर्वक बिठाया जाए, जिससे कि व्यय में तो बचत हो जाए और साधनों की बरबादी न हो। इसके लिए इस्पात, सीमेंट, कोयला और अन्य सामग्रियों की उपलब्धि की योजना भी पहले से ही बनाकर चलना होगा।

३३. ये काम बहुत भारी है । इन्हें पूरा करने के लिए सगठन और प्रशासन की व्यवस्थाओं का बहुत ऊंचे स्तर का होना आवश्यक है। सम्भव है कि व्यय की बचत करने और योजना को शीघ्रतापूर्वक क्रियान्वित करने के लिए कार्य प्रणाली में भी कुछ विशेष परिवर्तन करने पड़ जाए । सगठन का कार्य ठीक प्रकार होने पर ही द्वितीय पचवर्षीय योजना में निर्धारित किए गए भारतीय रेलों के लक्ष्यों और कार्यक्रमों को पूरा किया जा सकता है ।

रेल कर्मचारियों का काम

३४ रेले इन कार्यो को कहा तक पूरा कर सकती है, यह अन्ततोगत्वा दस लाख से ऊपर रेल कर्मचारियों के प्रयत्न पर निर्भर करता है । वे इस महान राष्ट्रीय कार्य मे भागीदार है, और द्वितीय पंचवर्षीय योजना में विकास कार्य के भार का एक महत्वपूर्ण भाग उन्हें ही उठाना पड़ेगा । इसलिए ऐसी व्यवस्था की जाएगी कि रेल कारखानों के प्रबन्ध और संचालन में रेल कर्मचारियों का भाग अधिकाधिक बढता जाए ।

३५. इस योजना की पूर्ति में व्यय भारी मात्रा में होगा, इस कारण सब प्रकार के अपव्यय से बचने का प्रयत्न भी सबको मिल-जुलकर करना पड़ेगा । इस प्रयत्न की सफलता रेल कर्मचारियों की ईमानदारी पर ही निर्भर करती है । इसलिए रेलवे बोर्ड पहले से ही रेल भ्रष्टाचार जांच समिति की सिफारिशो पर अमल करने का प्रयत्न कर रहा है ।

२. सड़के

३६ युद्ध के पश्चात सड़को का विकास करने की नागपुर योजना १९४३ मे तैयार की गई थी । उसमें देश की सड़कों का विकास करने के कुछ प्रधान लक्ष्य बतला दिए गए थे । उसमें अब तक २० वर्षों का पर्यावलोकन करके सुझाया गया था कि सुविकसित कृषि के किसी भी क्षेत्र में कोई भी ग्राम मुख्य सड़क से पांच मील से अधिक दूर नही रहना चाहिए । विभाजन के पश्चात देश की राजनीतिक एकता सम्पन्न हो जाने पर सडको के विकास का विचार अधिक व्यापक दृष्टि से करना आवश्यक हो गया--विशेषत: ख और ग भागों के राज्यो तथा विभाजन से प्रभावित राज्यों की आवश्यकताओं की दृष्टि से देश के इन भागों का सम्बन्ध, शेष देश के साथ अधिक निकटता से जोड़ने पर ध्यान देना आवश्यक हो गया । यह कार्य वर्तमान सड़कों को सुधारकर और बीच-बीच में विच्छिन्न मार्ग खण्डों और पुलों को बनाकर पूरा किया गया । यह विशेष कार्य प्राय: पूरा हो चुका है । प्रथम पंचवर्षीय योजना आरम्भ होने के समय भारत मे कोलतार की पक्की सड़कें ९७,००० मील और कच्ची सड़कें लगभग १,४७,००० मील थी । प्रथम योजना के समय लगभग १०,००० मील कोलतार की पक्की सड़कें और लगभग २०,००० मील कच्ची सड़कें नई बन गई होंगी और १०,००० मील पुरानी सड़कों को सुधार दिया गया । विगत पांच वर्षो में सड़कों पर समस्त व्यय कोई १५५ करोड रुपए हो गया होगा । इसमें केन्द्रीय सड़क कोश का अनुदान भी सम्मिलित है । १९४७ से १९५१ तक सड़को पर ४८ करोड़ रुपए व्यय किए गए । इस प्रकार विभाजन के पश्चात सड़कों के विकास पर समस्त पूजी विनियोग लगभग २०० करोड़ रुपए का हुआ ।

३७. द्वितीय योजना में सड़कों के विकास पर, केन्द्र और राज्यों की योजनाओं को मिला कर, समस्त व्यय लगभग २४६ करोड़ रुपए किया जाएगा । इसके अतिरिक्त केन्द्रीय सड़क कोश २५ करोड़ रुपए देगा । अन्दाजा है कि इतना व्यय कर देने पर नागपुर योजना में सड़कों के विकास का जो लक्ष्य रखा गया था वह १९६०-६१ तक प्राय: पूरा हो जाएगा ।

केन्द्रीय सड़कों के कार्यक्रम

३८. प्रथम पंचवर्षीय योजना मे राष्ट्रीय मुख्य सड़कें बनाने के लिए २८ करोड़ रुपए की राशि रखी गई थी। इनमे जम्मू व कश्मीर की बनिहाल सुरंग भी शामिल थी। द्वितीय योजना में काम को किफायत से करने और लगातार जारी रखने की दृष्टि से जो कार्यक्रम हाथ में लिया जा चुका है उस सब पर अन्दाजन ५७ करोड रुपए व्यय होगे। इसमें १,२५० मील के विच्छिन्न मार्ग खण्डों और ७५ बड़े पुलों का निर्माण और ६,००० मील की वर्तमान सड़कों का सुधार भी सम्मिलित है। आशा है कि प्रथम योजना काल मे ६४० मील के विच्छिन्न मार्ग खण्ड तथा ४० बड़े पुल बन चुके होगे और २,५०० मील की पहले से बनी हुई सड़कों का सुधार हो गया होगा। पुलों के सिवाय, ये सब काम बिल्कुल पूरे हो चुके होगे, केवल पुलों में कुछ कमी हो सकती है। सड़कों के सुधार का काम आरम्भ में सोचे गए काम से लगभग दुगुना हो गया होगा। प्रथम योजना की ममाप्ति पर लगभग ६५० मील के विच्छिन्न मार्ग खण्डों और ३५ बड़े पुलों के निर्माण का, पहले से विद्यमान राष्ट्रीय मार्गों के ३,००० मील में सुधार करने तथा अस्फाल्ट बिछाने का, और लगभग ३०० मील में गाड़ियों के आने-जाने के लिए सडकें चौड़ी करने का काम चल रहा होगा। प्रथम योजना की तरह, द्वितीय योजना में भी प्रधान कार्य विच्छिन्न मार्ग खण्डों और बड़े पुलों को बनाने और पहले से विद्यमान सड़कों को सुधारने का रहेगा। द्वितीय योजना में आरम्भ किए गए कामो पर होने वाले व्यय का अन्दाजा ८७·५ करोड़ रुपए है और उसका विवरण निम्न है :

	(करोड़ रुपए)
प्रथम योजना के समय से चालू काम, इसमें बनिहाल सुरंग भी है .	३०·०
विच्छिन्न मार्ग खण्ड और घुमावदार मार्ग (६०० मील) ..	१०·५
बड़े पुल (६०)	२०·०
छोटे पुल	५·०
वर्तमान सड़कों में सुधार (१,७०० मील)	७·०
गाड़ियों के चलने का रास्ता १२ फुट से बढ़ाकर २२ फुट चौड़ा करना (३०० मील)	१५·०
	८७·५

इन कामों पर द्वितीय योजना में वास्तविक व्यय लगभग ५५ करोड़ रुपए होने की आशा है।

३९. केन्द्रीय सरकार ने प्रथम योजना के समय राष्ट्रीय मार्गों के अतिरिक्त, कुछ अन्य महत्वपूर्ण सड़कों का निर्माण भी हाथ में ले लिया था। इनका काम द्वितीय योजन में भी जारी रखा जाएगा। इन पर इस योजना के समय लगभग ९ करोड रुपए व्यय होने की सम्भावना है। इन कामों में, पासी-बदरपुर रोड, पश्चिमी घाट की सड़क और पठानकोट और ऊधमपुर के बीच में एक और सड़क बनाने का काम भी शामिल है। पासी-बदरपुर रोड़ बन तो प्रथम योजना के समय ही गई थी, उस पर मसाला बिछाने और पक्के पुल बनाने का काम द्वितीय योजना के समय किया जाएगा। पठानकोट से ऊधमपुर तक दूसरी सडक भी द्वितीय योजना काल में ही बनाई जाएगी। पश्चिमी घाट की सडक का तीन-चौथाई काम द्वितीय योजना के अन्त तक पूरा हो जाने की आशा है। सब मिलाकर, इस कार्यक्रम में लगभग १५० मील सड़कें तो नई बनाई जाएंगी और ५०० मील से ऊपर सुधारी जाएंगी।

४०. १६५४ मे अन्तर-राज्य और आर्थिक महत्व की सड़को का एक विशेष कार्यक्रम आरम्भ किया गया था, और उसके लिए केन्द्रीय सरकार ने १० करोड़ रुपए का अनुदान स्वीकृत किया था। इसे द्वितीय योजना काल मे जारी रखा जाएगा। इस पर सब मिलाकर १८ करोड रुपए व्यय होने की सम्भावना है। इसमें से लगभग तीन-चौथाई उन कामों पर व्यय होगा जो प्रथम योजना के समय आरम्भ किए गए थे। इस कार्यक्रम में अन्तर-राज्य सड़कें, सीमाओं और पहाड़ो की सड़कें और देश का भ्रमण करने वालों के लिए उपयोगी सड़कें सम्मिलित है। इन सब सडको की लम्बाई मिलकर लगभग १,००० मील हो जाएगी।

राज्यों में सड़कें बनाने के कार्यक्रम

४१. राज्यों मे सड़को का विकास करने के लिए प्रथम योजना मे ६३ करोड़ रुपए रखे गए थे। द्वितीय योजना में सब मिलाकर १६४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की जा रही है। आशा है कि द्वितीय योजना काल में लगभग १८,००० मील बिना कोलतार की पक्की सड़कें तैयार हो जाएंगी। यह काम करते हुए उन पिछड़े हुए इलाकों की आवश्यकताओं का विशेष ध्यान रखा जाएगा जिन पर प्रथम योजना में पर्याप्त ध्यान नही दिया जा सका था। कुछ रकम उन कच्ची या मिट्टी की सड़कों को सुधारने के लिए भी रखी गई है, जो कि प्रथम योजना के समय देहात सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत बनाई गई थीं। आशा है कि द्वितीय योजना में राष्ट्रीय विस्तार के तथा अन्य क्षेत्रों में देहाती सडकों के विकास का कार्य बड़े पैमाने पर किया जाएगा, परन्तु इसके लक्ष्यों को पहले से निर्धारित कर लेना सरल नही है और इसलिए अभी सम्भावित लम्बाई का मीलों में अन्दाजा नही लगाया जा सकता। फिर भी, देहाती सड़कों को बनाने, उनकी मरम्मत करने, और विविध संगठनों द्वारा उनके लिए किए जा रहे कामों में समन्वय रखने पर प्रत्येक राज्य विशेष ध्यान देगा, और उसे अपनी सड़कों के विकास की योजना का अंग समझेगा।

३. सड़क परिवहन

४२. प्रथम योजना में राज्यों के राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन कार्यक्रमों के लिए लगभग १२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी। आशा है कि उसमें से १० करोड़ रुपए योजना की अवधि में व्यय हो गए होंगे। द्वितीय योजना में इस कार्य के लिए १३·५ करोड़ रुपए की राशि स्वीकार कर राज्य सरकारों को सलाह दी गई है कि वे १६५० के सड़क परिवहन निगम अधिनियम के अनुसार निगमो का संगठन कर लें। रेलवे योजना में भी १० करोड़ रुपए इसलिए रखे गए हैं कि रेलें इन निगमो के कार्य में भाग ले सकें। इसके अतिरिक्त ३ करोड़ रुपए परिवहन मंत्रालय की योजना में दिल्ली ट्रान्स्पोर्ट सर्विस के लिए स्वीकृत किए गए है। इस प्रकार अन्दाजा है कि द्वितीय योजना में राष्ट्रीयकृत सड़क परिवहन के लिए सब मिलाकर २७ करोड़ रुपए की पूंजी लग जाएगी। खयाल है कि इस सबका परिणाम यह होगा कि लगभग ५,००० अतिरिक्त गाड़ियां निश्चित रास्तों पर चलने लग जाएंगी और उनकी मरम्मत आदि के लिए आवश्यक कारखाने खुल जाएंगे।

४३. १६५४ की अन्तिम तिमाही में सड़कों पर अन्दाजन ३,५३,००० गाड़ियां चल रही थीं। यह संख्या यद्यपि प्रथम योजना का आरम्भ होने के समय की संख्या, अर्थात २,६४,७२७ की अपेक्षा बड़ी थी, परन्तु देश की विशालता, सड़कों की लम्बाई और आबादी की दृष्टि से बहुत कम थी। हाल के वर्षों में देश में आर्थिक काम-काज बहुत बढ़ गया है और रेलें यातायात की सब आवश्यकताएं पूरी करने में असमर्थ हैं। इसलिए सड़क परिवहन के विस्तार की गुजाइश है। परन्तु यह विस्तार अब तक हुआ नहीं है। इस समय सड़कों द्वारा होने वाली माल की ढुलाई प्रायः

सबकी सब और यात्रियो का यातायात कोई तीन-चौथाई, निजी मोटर चालकों के हाथ मे है। द्वितीय योजना मे सरकार द्वारा सड़क परिवहन का काफी विस्तार कर दिए जाने पर भी, उसका एक बड़ा भाग निजी चालको के ही हाथ मे रहेगा। हाल के वर्षों में सड़क परिवहन का विस्तार अपर्याप्त रहने के अनेक कारण बताए जाते है। इनमे से जिनकी चर्चा बहुधा होती रहती है वे ये हैं: राष्ट्रीयकरण का भय, मोटर परिवहन पर करों की ऊची दरें, अन्तर-राज्य यातायात और दूर की ढुलाई पर 'कोड आफ प्रिन्सिपल्स एण्ड प्रैक्टिस' के अनुसार लगाई गई पाबन्दिया, और कुछ राज्यो मे कानून द्वारा निर्धारित तीन से पाच वर्ष तक की मियाद के स्थान पर परमिटो (अनुमति पत्रों) का थोड़ी मियाद के लिए दिया जाना। ये सभी कारण सड़क परिवहन के विस्तार में थोड़े-बहुत बाधक रहे होंगे, परन्तु साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि अधिकतर मोटर चालक निजी गाड़ियों के अकेले-अकेले मालिक है। उनके पास इतने साधन नही है कि वे अपने काम का विस्तार व्यापारिक ढंग से और विश्वसनीय आधार पर कर सकें।

४४. योजना आयोग ने परिवहन मंत्रालय की सलाह से सड़क परिवहन की समस्याओं पर कुछ विशिष्ट जानकार व्यक्तियो से विचार करवाया था। उसे देखकर आयोग ने सिफारिश की है कि सडकों द्वारा माल की ढुलाई का द्वितीय योजना काल में राष्ट्रीयकरण न किया जाए और निजी मोटर चालकों को टिक सकने लायक बड़ी इकाइयों में संगठित हो जाने में सहायता दी जाए। यात्री परिवहन के सम्बन्ध में आयोग की सिफारिश यह है कि राष्ट्रीयकृत सेवाओ के विस्तार का कार्यक्रम सोच-समझकर बनाया जाए और जहां-जहा राज्य सरकारे सड़क परिवहन का काम स्वयं न करना चाहें वहां निजी चालकों को परमिट उदार शर्तों पर दिए जाएं। अब विशिष्ट जानकारों की सिफारिशों के अनुसार, लाइसेन्स देने की कठोर नीतियों को उदार कर देने और विभिन्न राज्यों के बीच में चलने वाली मोटर गाड़ियो से डबल टैक्स वसूल न करने के लिए आवश्यक कारंवाई की जा रही है। केन्द्रीय सरकार का इरादा है कि वह अन्तर-राज्य सड़क परिवहन को नियन्त्रित करने का अधिकार अपने हाथ में ले ले। आशा है कि इन सब उपायों से द्वितीय योजना के समय सड़क परिवहन का विकास करने में सहायता मिलेगी।

४५. बैलगाड़ियां अभी बहुत समय तक देश की अर्थ-व्यवस्था में महत्वपूर्ण भाग लेती रहेंगी, इसलिए उन्हे सुधारने के उपायों पर विचार किया जा रहा है। कुछ वर्ष हुए, एक ऐसा पहिया बनाया गया था जिसका टायर तो लोहे का था परन्तु वह चौड़ा अधिक था। इसके कारण गाड़ी को खीचने में जोर कम लगता था और सड़कों को भी नुकसान कम पहुंचता था। इस पहिए का चलन बढ़ाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। केन्द्रीय सड़क अनुसन्धान प्रतिष्ठान बैलगाड़ियों के लिए कई ऐसी नाभें बनाकर देख रहा है जिनका आरों के साथ मेल आप-से-आप बैठ जाए। हाल में परिवहन सलाहकार परिषद ने निश्चय किया था कि परीक्षण के लिए एक ऐसी योजना आरम्भ की जाए जिससे कि रबर के टायर लगी हुई बैलगाड़ियों की बोझ ढोने की सामर्थ्य की जांच की जा सके। यदि आवश्यकता होगी तो केन्द्रीय सड़क कोश से भी इस काम को वित्तीय सहायता दे दी जाएगी।

४. पर्यटन

४६. केन्द्र और कई राज्यो की सरकारों की योजनाओ में पर्यटन का विकास करना भी सम्मिलित है। इस कार्यक्रम का मुख्य काम ठहरने के स्थान में परिवहन और महत्वपूर्ण यात्रा केन्द्रों में मनोरंजन की सुविधाओं का प्रबन्ध करना है—विशेषत: उन स्थानों पर जो चलते मार्गों

से दूर हो। मोटी दृष्टि से इसके दो भाग है : (क) ऐसे स्थानों पर सुविधाओ का प्रबन्ध करना जहां विदेशी पर्यटक बहुत जाते है, और (ख) निम्न और मध्य वित्त वर्ग के स्वदेशी यात्रियों के लिए कुछ ऐसे स्थानों पर सुविधाओ की व्यवस्था करना जो स्थानीय और प्रादेशिक महत्व के हों। प्रथम भाग से सम्बद्ध कामो को केन्द्रीय सरकार और द्वितीय से सम्बद्ध को राज्य सरकारें करेंगी। उनकी कुछ सहायता इस काम मे केन्द्रीय सरकार भी कर देगी। इस कार्यक्रम मे पर्यटक संघों और राज्यो अथवा स्थानीय स्वशासन सस्थाओ द्वारा सचालित कार्यालयों को सहायता देना और स्वदेश मे पर्यटन की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने के लिए प्रादेशिक भाषाओ में प्रचार कार्य करना भी सम्मिलित है।

५. जहाजरानी

४७. १९४७ में जहाजरानी नीति निर्धारक समिति ने सिफारिश की थी कि देश को यह लक्ष्य रख लेना चाहिए कि ५–७ वर्ष में उसके पास २० लाख टन के जहाज हो जाएं। १९५० में केन्द्रीय सरकार ने यह नीति अपना ली कि तटवर्ती व्यापार केवल भारतीय जहाजों के लिए सुरक्षित कर दिया जाए और व्यापारिक जहाजो के लिए कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने का उत्तरदायित्व भी सरकार अपने ऊपर ले। भारतीय जहाजों की भारवहन क्षमता मन्द गति से ही बढ़ पाई है और युद्धोत्तर काल में भारवहन क्षमता मे वृद्धि कर लेने के अवसर का भारत ने पूरा-पूरा लाभ नही उठाया है। प्रथम योजना आरम्भ होने के समय रजिस्टर्ड भारतीय जहाजों की कुल भारवहन क्षमता ३,९०,७०७ जी० आर० टी० थी। प्रथम योजना में लक्ष्य यह रखा गया कि उसमे २,१५,००० जी० आर० टी० की वृद्धि कर दी जाए। खयाल था कि यदि इस अवधि में लगभग ६०,००० जी० आर० टी० क्षमता के जहाज पुराने और बेकार हो गए, तो भी रजिस्टर्ड जहाजो की कुल क्षमता ६,००,००० जी० आर० टी० से ऊपर जा पहुंचेगी। इस लक्ष्य के पूरा हो जाने की सँम्भावना है। हां, कुछ नए जहाजों से काम लेने मे समय लगेगा। द्वितीय योजना काल में अनुमानतः ९०,००० जी० आर० टी० क्षमता के जहाज पुराने और बेकार हो जाने की गुंजाइश रखकर, लगभग ३,००,००० जी० आर० टी० क्षमता के नए जहाज बढ़ा दिए जाएं। इस प्रकार, द्वितीय योजना के अन्त मे सब रजिस्टर्ड जहाजो की कुल भारवहन क्षमता ९,००,००० जी० आर० टी० हो जाएगी।

४८. इस योजना के मोटे-मोटे लक्ष्य ये हैं :

(क) तटवर्ती व्यापार की सब आवश्यकताएं पूरी तरह अच्छी कर देना। इस सम्भावना का भी ध्यान रखा जाए कि रेलों का कुछ यातायात तटवर्ती जहाजों के सुपुर्द कर दिया जाएगा,

(ख) भारत के समुद्र-पार के व्यापार का अधिकाधिक भाग भारतीय जहाजों को दिलवाना, और

(ग) तेल ढोने वाले बेड़े की नीव डाल देना।

इस समय भारत के समुद्र-पार के व्यापार का केवल ५ प्रतिशत और अड़ोस-पड़ोस के देशो के साथ ४० प्रतिशत भारतीय जहाजों द्वारा होता है। ऊपर निर्दिष्ट लक्ष्य पूरे हो जाने पर इन दोनों प्रकार के व्यापारों में भारतीय जहाजों का भाग क्रमशः १२ से १५ और ५०

प्रतिशत हो जाने की आशा है। निम्न तालिका में प्रथम और द्वितीय योजनाएं पूरी होने के समय, भारतीय जहाजों की कुल भारवहन क्षमता की तुलना करके दिखाई गई है :—

(सकल रजिस्टर्ड टन)

	प्रथम योजना से पूर्व	प्रथम योजना के अन्त में	द्वितीय योजना के अन्त मे
तटवर्ती और पड़ोसी देशों तक आने-जाने वाले जहाज	२,१७,२०२	३,१२,२०२	४,१२,२००
समुद्र-पार आने-जाने वाले जहाज ..	१,७३,५०५	२,८३,५०५	४,०५,५०५
चाहे जहा बुक हो सकने वाले जहाज	—	—	६०,०००
तेलवाही जहाज	—	५,०००	२३,०००
डूबे हुए जहाजो को खीचकर निकालने वाला टग	—	—	१,०००
योग ..	३,९०,७०७	६,००,७०७	९,०१,७०७

४९. प्रथम योजना में १९·५ करोड़ रुपए की राशि जहाजों के लिए रखी गई थी, जो बाद में बढ़ाकर २६·३ करोड़ रुपए कर दी गई। परन्तु इस योजना की अवधि में वास्तविक व्यय लगभग १८ करोड़ रुपए हुआ होगा। अब जहाजों की उन्नति के लिए ४५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है, परन्तु चूंकि लगभग ८ करोड़ रुपए प्रथम योजना से बचे हुए हैं इसलिए द्वितीय योजना के समय कोई ३७ करोड़ रुपए की व्यवस्था की जाएगी। इसके अतिरिक्त १ ५ करोड़ रुपया इसलिए रखा गया है कि अण्डमान तथा निकोबार द्वीप-समूह की उन्नति के लिए एक जहाज खरीदकर उसे भारत से इन द्वीपों तक चलाया जाए और तीन नए लांच इन द्वीपों के बीच चलाने के लिए खरीदे जाएं। आशा है कि जहाजी कम्पनिया अपने विस्तार के लिए १० करोड़ रुपए का प्रबन्ध स्वयं कर लेंगी। योजना में निर्धारित समस्त राशि में से २० करोड़ रुपए तो सीधे ही ईस्टर्न शिपिंग कार्पोरेशन में और एक अन्य जहाजी निगम में फारस की खाडी और लाल सागर आदि में जहाज चलाने के लिए लग जाएंगे। शेष राशि से निजी कम्पनियो को अपने विस्तार कार्यक्रम पूरे करने में सहायता दी जाएगी। अभी अन्दाजा ऐसा है कि द्वितीय योजना में जो धनराशि रखी गई है वह योजना काल में ही अतिरिक्त ३ लाख टन का लक्ष्य पूरा करने के लिए पर्याप्त नही होगी। कितनी अतिरिक्त राशि की आवश्यकता पड़ेगी, इस प्रश्न का उत्तर अन्य अनेक बातों के अलावा इन बातों पर भी निर्भर करता है कि जहाजों के बाजार में खरीद के समय भाव क्या होंगे, अपने विस्तार कार्यक्रम को पूरा करने के लिए विदेशो में पुराने जहाज कितने मिल सकेंगे, और निजी जहाजी कम्पनियां स्वयं कितनी रकम का प्रबन्ध कर सकेंगी। सारी स्थिति पर निरन्तर नजर रखी जाएगी, जिससे कि अपना कार्यक्रम पूर्णतया पूरा करने के लिए आवश्यकतानुसार अतिरिक्त उपायों का अवलम्बन किया जा सके। यह कार्यक्रम साधारण ही है और निम्नतम लक्ष्य को प्रकट करता है।

५०. इस समय जहाजों के कार्यक्रम सम्बन्धी कई महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया जा रहा है। भारत सरकार सोच रही है कि अब तक जहाजी कम्पनियों को वित्तीय सहायता जिन

शर्तो पर दी जाती है उन्हे उदार कर दिया जाए। कम्पनियों ने ये शर्ते तीन प्रकार से नरम कर देने की प्रार्थना की है : एक तो ब्याज की दर घटा दी जाए, दूसरे अदायगी का समय बढ़ा दिया जाए, और तीसरे जहाज खरीदने के लिए ऋण की मात्रा बढ़ा दी जाए। हिन्दुस्तान शिपयार्ड (जहाजी कारखाने) में बने हुए जहाजों को सस्ता बेचने के लिए सरकार जो सहायता देती है उसके आधार पर भी पुर्नविचार किया जा रहा है। आशा है कि शीघ्र ही यह निश्चय हो जाएगा कि विशाखा-पत्तनम में बने हुए जहाजों का विक्रय-मूल्य किस आधार पर तय किया जाए। भारत के समुद्र-पार के व्यापार मे भारतीय जहाजी कम्पनियो को उचित भाग दिलाने मे भी सहायता दी जाएगी। प्रथम योजना के समय ऐसे उपाय किए गए थे कि जिस माल पर सरकार का नियन्त्रण हो उसे ढोने के लिए यथाशक्ति भारतीय जहाजों का ही प्रयोग किया जाए। अब ऐसे उपाय सोचे जा रहे है कि सरकारी और अर्ध-सरकारी संगठनों द्वारा ढोये जाने वाले माल के लिए एक समन्वित नीति बनाई जाए। तटवर्ती व्यापार केवल भारतीय जहाजों के लिए सुरक्षित किया जा चुका है। अब एक विशेषज्ञ समिति यह विचार कर रही है कि इस व्यापार का भुगतान करने के लिए रेलों और तटवर्ती जहाजों में निकट सहयोग किस प्रकार हो सकता है।

५१. केन्द्रीय सरकार ने सिद्धान्ततः यह स्वीकार कर लिया है कि पाल से चलने वाली नौकाओं के उद्योग की सहायता करनी चाहिए और इन नौकाओ के जो मालिक अपनी नौकाओं को यन्त्र चालित बनाना चाहे उनको ऋण अथवा नकदी की सहायता देनी चाहिए। इसके लिए ४० लाख रुपए की राशि रखी गई है।

५२. व्यापारिक जहाजों के कर्मचारियो को प्रशिक्षित करने के लिए प्रथम योजना मे लगभग १ करोड़ १२ लाख रुपए की व्यवस्था थी। यह राशि कलकत्ता में एक मैरीन इंजीनियरिंग कालेज खोलने और नाविकों को प्रशिक्षित करने की अन्य योजनाओं पर व्यय की जाने वाली थी। सम्भावना है कि प्रथम योजना के समय इन कार्यों पर ६५ लाख रुपए व्यय हो गए होंगे। द्वितीय योजना में इसके लिए ७५ लाख रुपए रखे गए है जिसमे ७० लाख रुपए तो बम्बई के नाटिकल एण्ड इंजीनियरिंग कालेज की नई इमारत के लिए और ५ लाख कलकत्ता कालेज में कुछ इमारतें बढ़ाने के लिए है।

६. बन्दर और बन्दरगाहें

५३. भारत मे समुद्री बन्दर दो प्रकार के है : (१) बड़े बन्दर, जिनका प्रबन्ध केन्द्रीय सरकार करती है, और (२) छोटे बन्दर, जिनका प्रबन्ध राज्य सरकारें करती है। विभाजन के पश्चात भारत में बड़े बन्दर पांच रह गए थे : कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, कोचीन और विशाखा-पत्तनम। प्रथम योजना आरम्भ होने के समय से पाचो बन्दर मिलकर प्रतिवर्ष लगभग दो करोड़ टन के जहाजों को संभाल लेते थे और इनकी सामर्थ्य भी इतनी ही थी। प्रथम योजना मे बड़े-बड़े काम ये थे :—

(क) कडला में एक बड़ा बन्दर बनाना, जो उस जहाजी यातायात को सभाल सके जो पहले कराची से हुआ करता था,

(ख) समुद्री मार्ग से आने वाले तेल का बम्बई में घाट बनाना,

(ग) वर्तमान सब बन्दरों का पुर्ननिर्माण और आधुनिकीकरण,

(घ) कलकत्ता, कोचीन और मद्रास में अतिरिक्त घाट और जहाज खड़े होने के स्थान बनाना, और

(ङ) छोटे बन्दरो मे उपलब्ध सुविधाओं की नाप-जोख करना और उनमें से कुछ चुने हुए बन्दरों को सुधारना, जिससे बड़े बन्दरो का बोझ कुछ हलका हो सके ।

५४. प्रथम योजना में बन्दरों के विकास का जो कार्यक्रम आरम्भ किया गया था उसका व्यय ६२ करोड़ रुपए कूता गया था । इस कार्यक्रम के विवरण को अन्तिम रूप योजना के बाद के वर्षों में दिया गया था, और उसके लिए ४५ करोड़ रुपए की राशि स्वीकृत कर दी गई थी । उसमें से अब तक ३१ करोड़ रुपए व्यय हुए है। कंडला में बन्दर और तेलवाही जहाजों को खड़ा करने के स्थान पर काम होने लगा है । बम्बई में भी तेलवाही जहाजों को खड़ा करने के तीन ऐसे स्थान तैयार किए जा चुके है जहां बडे से बड़ा तेलवाही खड़ा हो सकता है। वहां से मुख्य भूमि तक तेल लाने के लिए समुद्र के भीतर नल भी लगाए जा चुके है । प्रिन्सेज़ और विक्टोरिया डाक (जहाजों के लंगर डालने के स्थान) में माल उतारने-चढ़ाने के बड़े शेडों का पुनर्निर्माण और एलेक्ज़ेण्ड्रा डाक के क्रेन को बिजली से चलाने के लिए उसमें बिजली लगाने का काम करीब-करीब पूरा हो चुका है । कलकत्ता मे हुगली नदी को नियन्त्रित करने के लिए अकरा नामक स्थान पर एक ठोकर बनाई गई और सोनाई नामक यार्ड में खनिज कच्ची धातुएं एकत्र करने के लिए एक केन्द्रीय डिपो और ४,००० कर्मचारियों के रहने के लिए एक बड़ी बस्ती तैयार हो चुकी है । जो काम चल रहे हैं, उनमें खिदिरपुर डाक के रेलवे यार्ड का सुधार, किंग जार्ज डाक में भारी सामान उठाने के लिए २०० टन के क्रेन से युक्त यार्ड का निर्माण, माल-जहाज खड़े करने के दो अतिरिक्त घाट, और एक बड़े ड्रेजर (मिट्टी कीचड़ खोदकर हटाने वाला यन्त्र) का निर्माण भी शामिल है । मद्रास में जो काम चल रहे है उनमें दो मुख्य है : एक तो जहाज खड़े करने के नए स्थान बनाने के लिए एक जलाशय (वेट डाक) का निर्माण, और दूसरा रेत का जमाव रोकने की व्यवस्था । कोचीन में तेलवाही और कोयला-वाही जहाजों से माल उतारने के नए घाट बनकर तैयार हो गए हैं । घाटों पर जहाज खड़े करने के चार नए स्थान बन रहे हैं । इन सब सुधारों का लाभ यह हुआ है कि बड़े बन्दर अब लगभग २·५ करोड़ टन के जहाजों को संभाल सकेंगे ।

५५ द्वितीय योजना का प्रधान लक्ष्य यह है कि जो काम प्रथम योजना में आरम्भ किए गए थे उन्हें पूरा कर लिया जाए और बन्दरों में डाकों को ऐसा आधुनिक और साधन-सम्पन्न बना दिया जाए कि वे देश के आर्थिक तथा औद्योगिक विकास के कारण उत्पन्न हुई नई आवश्यकताओं को पूरा कर सकें । इसलिए द्वितीय योजना में बड़े बन्दरों के सब कार्यक्रम पूरे करने के लिए ४० करोड़ रुपए की व्यवस्था कर दी गई है । जो काम शुरू किए जाएंगे उन पर, प्रथम योजना से बचे हुए कामों को मिलाकर, ७६ करोड़ रुपए व्यय हो जाने की सम्भावना है । योजना में जो ४० करोड़ रुपए रखें गए उनके अतिरिक्त कुछ राशियां बन्दरों के अपने साधनों से भी मिल सकती हैं । जो धनराशि रखी गई है उसका उपयोग सरकार द्वारा कंडला में प्रत्यक्ष विनियोग करने और योजना में पोर्ट ट्रस्टों की प्रबन्धकर्त्री संस्थाओं को सहायता देने के लिए किया जाएगा । इस समय पोर्ट ट्रस्टों को जिन रियायती शर्तों पर ऋण दिए जाते हैं उन्ही शर्तों पर द्वितीय योजना में भी दिए जाते रहेंगे ।

५६. द्वितीय योजना में बड़े बन्दरों के विकास के लिए जो राशियां व्यय की जाएंगी उनमें से कलकत्ता पर १९.९ करोड़ रुपए, बम्बई पर २९·३ करोड़ रुपए, मद्रास पर ९.२ करोड़ रुपए, कोचीन पर ४ करोड रुपए और कान्दला पर १४ करोड़ रुपए व्यय होंगे ।

५७. बम्बई के बन्दरगाह का विकास करने के लिए जो काम किए गए या किए जा रहे है उनमें मुख्य ये है : प्रिन्सेज़ और विक्टोरिया डाक के विकास का 'न्यूनतम कार्यक्रम' (१० करोड़ रुपए), बन्दरगाह की मुख्य धारा को गहरा करना (८ करोड रुपए), प्रिन्सेज और विक्टोरिया डाक में मरम्मत घरों का निर्माण (२·२५ करोड रुपए), एलेक्जेण्ड्रा डाक में क्रेनो को बिजली से चलाने की व्यवस्था करना (१ ६ करोड रुपए), तैरता क्राफ्ट (१ ४ करोड़ रुपए) और कर्मचारियो के मकान (२·२६ करोड रुपए)। प्रिन्सेज़ और विक्टोरिया डाक के विकास के न्यूनतम कार्यक्रम के कुछ काम ये है : जहाजो के भीतर बाहर जाने-आने के लिए एक ऐसे 'लाक' अर्थात प्रवेश द्वार का निर्माण जो डाक में पानी भर और निकाल सके। इस 'लाक' में ऐसे सरकने वाले 'केइसन' (पिजरे) लगे होंगे जिनमे पानी रहने पर भी आदमी काम कर सकें; पानी भरने और निकालने के पम्प लगाना; प्रिन्सेज़ और विक्टोरिया डाक के मध्यवर्ती रास्ते को चौडा करना; और विक्टोरिया डाक की बर्थों (जहाज खडा करने की जगहो) का विस्तार करना। इस कार्यक्रम आदि के विवरण पर विचार किया जा रहा है। इसका उद्देश्य इन डाकों को ऐसा आधुनिक बना देना है कि ज्वार की अवस्था का विचार किए बिना भी जहाज जब चाहें तब आ-जा सकें। बम्बई के बन्दरगाह में बहुत समय से गाद इकट्ठी होती जा रही है, इसलिए उसकी खुदाई करना आवश्यक हो गया है। बम्बई के बन्दर में जहाजों की मरम्मत के लिए भी दो अतिरिक्त 'बर्थ' बनाए जाएंगे।

५८ कलकत्ता के बन्दर का विकास करने के लिए जो काम किए जाएगे उनमे मुख्य-मुख्य ये है—डाकों और बर्थों का सुधार (५·१४ करोड़ रुपए), नदी का नियन्त्रण (२ ६१ करोड रुपए), तैरता क्राफ्ट (६·६४ करोड रुपए), और कर्मचारियो के लिए मकान (१ करोड रुपए)। किदरपुर डाकों में घाट की दीवारों को सुधारा और मजबूत बनाया जाएगा, साथ ही किंग जार्ज और खिदिरपुर डाकों में सब प्रकार का माल लादने-उतारने का एक बर्थ बनेगा और पुराने बर्थों को सुधारा जाएगा। फुल्टा पाइण्ट रीच में नदी को नियन्त्रित करने के लिए जो काम किया जाएगा उसका उद्देश्य हुगली नदी मे जहाजो के यातायात में सुधार करना है।

५९. मद्रास के बन्दर को सुधारने के लिए जो काम किए जाएंगे उनमे एक काम 'वेट डाक' का बनाना भी है। द्वितीय योजना मे इसके निर्माण की पहली मंजिल पूरी की जाएगी, और उस पर ७ करोड़ रुपए व्यय होगे। इसका सम्बन्ध वर्तमान बन्दरगाह के साथ जोड़कर इसमें चार नए बर्थ बना दिए जाएंगे, जिससे इस बन्दर में अधिक माल लादा-उतारा जा सके। इसके अतिरिक्त यहां एक आयल डाक (तेलवाही जहाज खडे करने का जलाशय, लागत ५५ लाख रुपए) और एक फ्लोटिंग क्राफ्ट (तैरता घाट, लागत ६५ लाख रुपए) बनाया जाएगा और बन्दर पर अन्य यन्त्र (लागत २४ लाख रुपए) लगाए जाएंगे।

६०. कोचीन के बन्दर में कोयले का एक बर्थ, फोर्ट-कोचीन मे एक नया बर्थ और एक बर्थ दूसरे टग (खीचने या धकेलने वाले जहाज) के लिए बनाया जाएगा। चार अतिरिक्त व्हार्फ (घाट) जो वहां पहले से बन रहे हैं, पूरे कर दिये जाएंगे : इन सब कामों पर १ करोड़ ५२ लाख रुपए व्यय हो जाने का अन्दाजा है। इस बन्दर के अन्य काम हैं : प्रकाश की सुविधाएं प्रदान करना (३० लाख रुपए), बन्दर के यन्त्रादि का प्रबंध करना (४० लाख रुपए) और कर्मचारियों के मकान बनाना (२४ लाख रुपए)।

६१. कंडला मे माल उतारने की चार जेटिया बनाई जा रही है। दो तो अक्तूबर १९५६ और दो मार्च १९५७ में पूरी हो जाएगी। द्वितीय योजना के समय ३ करोड ४९ लाख रुपए की लागत से दो और जेटियां (खनिज) कच्ची धातुओं के लिए बनाई जाएंगी। ३·१२ करोड रुपए गान्धीधाम नगर का विकास करने के लिए रखे गए है।

६२. **छोटे बन्दर**—भारत में छोटे बन्दरगाह १५० से ऊपर है, परन्तु इनमे से १८ अधिक महत्व के हैं और उनका विकास करने पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। प्रथम योजना मे इनका विकास करने के लिए २·४१ करोड़ रुपए रखे गए थे। इनमे से १ करोड़ रुपया तो केन्द्रीय ऋण से मिलने वाला था और शेष राशि का प्रबन्ध इन बन्दरों के अधिकारी स्वयं करने वाले थे। द्वितीय योजना में छोटे बन्दरों की उन्नति के लिए ५ करोड़ रुपए रखे गए है। इनमें से ३ करोड़ रुपए इन बन्दरों के सुधार पर व्यय किए जाएंगे, और १ करोड रुपए से तीन ड्रेजर (समुद्र में खुदाई करने वाले यन्त्र) मंगवाकर दो को पश्चिमी तट पर और एक को पूर्वी तट पर रखा जाएगा। ये तट उन सब छोटे बन्दरों की जरूरत पूरी किया करेंगे जिन पर अब तक आवश्यक ध्यान नहीं दिया गया। छोटे बन्दरों की नाप-जोख करने की भी आवश्यकता है। केवल इसी काम के लिए जल सेना की एक नौका को सर्वे नौका में बदल दिया जाएगा और उस पर ३६ लाख रुपए व्यय होंगे। शेष राशि परादीप, मंगलौर और मालपे बन्दरो को सब ऋतुओं के योग्य बन्दरगाह बनाने के लिए अनुसन्धान करने, और सेतुसमुद्रम् तथा तूतीकोरिन के विकास के लिए आवश्यक आरम्भिक कार्रवाइयां करने में व्यय किया जाएगा। समुद्र तट-वर्ती राज्यो को अपने छोटे बन्दरों की उन्नति करने के लिए केन्द्रीय सरकार जिस प्रकार प्रथम योजना काल में ऋण देती रही थी, उसी प्रकार द्वितीय योजना काल मे भी देती रहेगी।

६३. **प्रकाश स्तम्भ**—प्रकाश स्तम्भो का विकास करने के लिए द्वितीय योजना मे ४ करोड़ रुपए रखे गए हैं। अन्दाजा है कि ८० लाख रुपए तो लाइटहाउस रिज़र्व फण्ड (प्रकाश स्तम्भ सुरक्षित कोश) से मिल जाएंगे और शेष ३·२ करोड़ रुपए का सरकार से ऋण लिया जाएगा। इस कार्यक्रम में नए प्रकाश स्तम्भो का निर्माण करना और पुरानों को आवश्यक सामग्री से सम्पन्न करके उन्हें उचित स्तर तक ले आना भी सम्मिलित है। प्रथम योजना में सुझाव दिया गया था कि सब प्रकाश स्तम्भों की तालिका एक केन्द्रीय पंजिका में बनाकर, उन्हें धीरे-धीरे केन्द्रीय सरकार अपने अधिकार में ले ले। इस पर कुछ अमल किया गया है, और द्वितीय योजना के समय भी किया जाता रहेगा। १९५३ में एक प्रकाश स्तम्भ अधिनियम बनाकर प्रकाश स्तम्भों की चुंगी २ आना प्रति टन से बढ़ाकर ४ आना प्रति टन कर दी गई थी।

७. आन्तरिक जल मार्ग परिवहन

६४. उन्नीसवी शताब्दी के मध्य तक भारत की परिवहन व्यवस्था मे आन्तरिक जल मार्गों का महत्वपूर्ण भाग हुआ करता था। उसके पश्चात अनेक कारणो से जल मार्गों का निरन्तर ह्रास होता गया। इनमें दो बड़े कारण थे, रेलो का विस्तार और नदियो के ऊपरी भागों में सिंचाई के लिए बड़ी मात्रा में पानी का खींच लिया जाना। परन्तु देश के उत्तर-पूर्वी भागों में जल मार्गों का महत्व अब भी बहुत है। अन्दाजा लगाया गया है कि भारत की नदियों में ५,००० मील के जल मार्ग आधुनिक यन्त्र-चालित नौकाओं के चलने योग्य बनाए जा सकते हैं। इस समय भारतीय नदियों में यन्त्र-चालित देशी नौकाएं १,५५७ मील तक और बड़ी देशी नावें ३,५८७ मील तक चल सकती हैं। नदियों की उथली धाराओं में नौका-चालन के तीन उपाय हैं—धाराओं को गहरा कर देना, उन्हें नियन्त्रित कर देना, नहरें बनाना और खोदकर गहरा कर देना, और विशेष रूप

से उथली धाराओं में चलने योग्य नौकाओं का प्रयोग करना । प्रथम दो उपायों के लिए भारी मात्रा में पूजी लगानी पड़ेगी और खुदाई का काम निरन्तर करते रहना पड़ेगा । इसलिए इस समय लक्ष्य प्रधानतया विशिष्ट प्रकार की नौकाओ पर केन्द्रित किया जा रहा है । प्रथम योजना काल में एक गंगा-ब्रह्मपुत्र बोर्ड बनाया गया था । वह तीन स्थानो पर परीक्षण करके देख रहा है । इनमें से दो परीक्षण तो ऊपरी गंगा और असम की सहायक नदियो मे, और तीसरा असम में ब्रह्मपुत्र नदी पर यात्रियों और माल को उतारने का किया जा रहा है । ऊपरी गंगा में चलने योग्य नौकाओं का प्रयोग द्वितीय योजना के आरम्भ मे होने वाला था । शेष दो स्थानों पर चलने योग्य नौकाओं की विशेषताओं का निर्धारण किया जा रहा है । द्वितीय योजना काल में गंगा-ब्रह्मपुत्र प्रदेश का विकास कार्य पूरा कर लेने का विचार है । इसमे महत्वपूर्ण जल धाराओं को गहरा करना, नौका संचालन मे रेडियो टेलीफोन तथा स्वयं चालित दूर से ज्योतिया आदि लगवाकर सहायता पहुंचाना और चुने हुए स्थानों पर घाट बन्दर आदि बनवाना सम्मिलिति है । इस योजना में बकिंघम नहर को सुधारने तथा उसे मद्रास बन्दरगाह के साथ मिलाने और पश्चिमी तट की नहरों को सुधारने का कार्यक्रम भी रखा गया है ।

६५. आन्तरिक जल परिवहन को सुधारने के लिए द्वितीय योजना मे ३ करोड़ रुपए रखे गए है । इनमे से १ करोड़ १५ लाख रुपए बकिंघम नहर को और ४३ लाख रुपए पश्चिमी तट की नहरों को सुधारने के लिए है । शेष राशि गगा-ब्रह्मपुत्र बोर्ड द्वारा अपने कामों पर व्यय की जाएगी । इसके अतिरिक्त, इस बोर्ड को कुछ सहायता राज्य सरकारें भी दिया करेगी । यह तय किया गया है कि गंगा-ब्रह्मपुत्र प्रदेश के विकास कार्यों के लिए वर्तमान वित्तीय व्यवस्था को बना रहने दिया जाएगा । इस बोर्ड की पूंजी-विनियोग की सारी आवश्यकता तो केन्द्रीय सरकार पूरी करती ही है, साथ ही बोर्ड के चालू खातों मे जितना व्यय होता है उतना ही उसे वह अनुदान के रूप में दे देती है । बकिंघम नहर कई राज्यो मे से गुजरती है, इसलिए यदि अनुसन्धान के पश्चात यह प्रतीत हुआ कि इसके सुधार पर पूजी का व्यय कर देना उचित होगा, तो इस कार्य के लिए जितनी पूंजी की आवश्यकता होगी उतनी दे देने के बारे में केन्द्रीय सरकार विचार करेगी । गंगा और ब्रह्मपुत्र के जल मार्गों की सब योजनाएं गंगा-ब्रह्मपुत्र बोर्ड द्वारा ही क्रियान्वित की जाएंगी । दक्षिण में पृथक बोर्ड न बनाकर सब काम सम्बद्ध राज्य सरकारो द्वारा करवा लिए जाएगे । यदि आवश्यकता हुई तो उनमें समन्वय की व्यवस्था कर दी जाएगी ।

८ नागरिक वायु परिवहन

६६. **नागरिक विमानन**—गत पन्द्रह वर्षों में नागरिक विमानन ने द्रुत गति से प्रगति की है। भारत सरकार ने पहले-पहल १९२० में बम्बई-कलकत्ता और कलकत्ता-रंगून के वायु मार्ग खोलने और आवस्यक हवाई अड्डे बनाने का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेने और उन्हें अन्य सामग्रियों तथा सुविधाओं से सम्पन्न करने का निश्चय किया था परन्तु सरकार ने नागरिक विमानन का आरम्भ १९२४-२५ में किया और द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने तक उनकी प्रगति मन्द ही रही । देश के विभाजन के पश्चात नागरिक विमानन पर व्यय धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है । १९४७ से लेकर प्रथम योजना आरम्भ होने तक इन कामो पर लगभग ६·६ करोड़ रुपए व्यय हो गए होंगे और आशा है कि प्रथम योजना काल मे ८ करोड़ रुपए और भी व्यय किए गए होंगे । द्वितीय योजना काल में आशा है कि १८ करोड़ रुपए के नए काम आरम्भ किए जाएंगे । योजना में उनके लिए लगभग १२·५ करोड़ रुपए रखे गए है । हाल में जो नई प्रौद्योगिक उन्नतियां हुई है, उनके कारण तो नई जरूरतों को पूरा करने की मांग होगी ही; अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक विमानन के समझौते के

अनुसार भी भारत पर अपने हवाई अड्डो में उक्त समझौते द्वारा निर्धारित सुविधाए पहुंचाने का जो उत्तरदायित्व आएगा उसका निर्वाह करने के लिए भी नया व्यय करना पड़ेगा। नागरिक विमानन के कार्यक्रम में ८·३ करोड़ रुपए, दूर-सचार के यन्त्रो के लिए २·८ करोड़ रुपए, वायु मार्गों और हवाई अड्डों के सामान के लिए ७० लाख रुपए, प्रशिक्षण और शिक्षण की सामग्री के लिए ५० लाख रुपए, अनुसन्धान और विकास कार्यो की सामग्री के लिए १६ लाख रुपए, और हवाई निरीक्षण के सामान के लिए ३·८ लाख रुपए रखे गए है।

६७ इस समय नागरिक विमानन विभाग ८१ हवाई अड्डों की देख-भाल और संचालन करता है। प्रथम योजना के समय ९ नए हवाई अड्डे बनाए गए थे, और दो १९५६ के अन्त तक तैयार हो जाएगे। इस विभाग ने कुछ अड्डे प्रतिरक्षा मंत्रालय से भी लिए है। साधारण लक्ष्य यह रखा गया है कि सब राज्यो की राजधानियो और देश के बड़े नगरों में हवाई अड्डों की व्यवस्था रहे। उसकी पूर्ति के लिए आशा है कि द्वितीय योजना काल में ८ नए हवाई अड्डे और ग्लाइडर ड्रोम बना दिए जाएंगे। हवाई अड्डों पर तामीर के जो काम किए जाएगे उनमें हवाई जहाजो के उडने तथा उतरने के मार्ग, मोटरो के मार्ग, हवाई जहाज घर, उनके सामने के पक्के स्थान, किराया घर, कर्मचारियों के निवास गृह और अन्य प्रौद्योगिक भवन आदि शामिल है। इनके अतिरिक्त, कुछ हवाई अड्डों की भूमि पर प्रकाश की भी स्थायी व्यवस्था की जाएगी।

६८. दूर-संचार के यन्त्र और हवाई मार्गों तथा हवाई अड्डो पर अन्य यन्त्र लगाने के कार्यक्रम यह मानकर बनाए जा रहे है कि द्वितीय योजना की समाप्ति पर जितने हवाई अड्डे नागरिक विमानन विभाग के नियन्त्रण में होगे, उनमें से कम से कम ५० पर प्रकाश की और लगभग ७४ पर दूरक्षेपी ज्योतियों की स्थायी व्यवस्था करनी पड़ेगी, जिससे कि रात्रि के समय भी वहा हवाई जहाज उतर सकें। हवाई उड़ान और दूर-संचार के कोई भी यन्त्र लगाते हुए द्रुत प्रौद्योगिक उन्नति के कारण होने वाली अनिश्चितताओ का सामना करना ही पड़ता है।

६९. प्रथम योजना काल में शिक्षण और प्रशिक्षण की प्रगति मन्द रही थी। हवाई सर्विसों की उत्कृष्टता के लिए कर्मचारियों का प्रशिक्षण और प्रयुक्त यन्त्र-सामग्री के मानदंड ऊंचे होने आवश्यक है। सरकार द्वारा नियुक्त एक समिति की सिफारिशों के अनुसार निश्चय किया गया है कि प्रशिक्षण का केन्द्र इलाहाबाद को बना दिया जाए और व्यापारिक वायु चालकों के प्रशिक्षण का स्तर ऊंचा उठाया जाए। 'ग्लाइडिंग' को प्रोत्साहित करने और हवाई क्लबों को ठोस आधार पर संगठित करने के उपाय करने का भी विचार है। द्वितीय योजना काल में १० नए ग्लाइडिंग केन्द्र और ५ नई हवाई क्लबें कायम करने का प्रस्ताव है। द्वितीय योजना में अनुसन्धान की सुविधाओं का विस्तार करने और अतिरिक्त यन्त्र-सामग्री मंगाने की भी व्यवस्था रखी गई है।

७०. **एयर कारपोरेशन**—हवाई सर्विसो का राष्ट्रीयकरण प्रथम योजना काल में पूरा करके, अगस्त १९५३ में एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल का अन्तर्राष्ट्रीय यात्राओं के लिए और इण्डियन एयरलाइन्स कार्पोरेशन का देश क भीतर की यात्राओं के लिए दो एयर कार्पोरेशनों (हवाई कम्पनियों) का संगठन कर दिया गया था। ये कार्पोरेशन अपनी हवाई सर्विसों को सगठित करने और अपने संगठन को बलवान बनाने का यत्न करते रहे है। इन्होने कुछ विस्तार कार्यक्रम भी आरम्भ किए हैं। इण्डियन एयरलाइन्स के पास इस समय ९२ हवाई जहाज हैं—इनमें ६६ डकोटा, १२ वाइकिंग, ६ स्काइमास्टर और ८ हिरोन है जो देश के अधिकतर बड़े नगरों मे चलते हैं, और इनके नियमित मार्गों की लम्बाई १९,९८५ मील है। एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल

के पास ६ वायुयान है, जिनमे ५ सुपर-कानस्टेलेशन, ३ कानस्टेलेशन और १ डकोटा है। ये १५ देशों में आते-जाते है और इनके मार्गों की लम्बाई २३,४८३ मील है। प्रथम योजना मे इन दोनों कार्पोरेशनों के लिए आरम्भ मे ६·५ करोड़ रुपए रखे गए थे, परन्तु सम्भावना है कि इन पर वस्तुतः १५·३ करोड़ रुपए व्यय हो गए होंगे।

७१. द्वितीय योजना में इन दोनो के लिए ३०·५ करोड़ रुपए की राशि रखी गई है—१६ करोड़ रुपए इण्डियन एयरलाइन्स कार्पोरेशन के लिए और १४·५ करोड रुपए एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के लिए। व्यय की मोटी-मोटी मदें ये है :–

	(करोड़ रुपए)
मुआवजे की अदायगी	५·१४
हवाई जहाजों की खरीद	१५·३४
इण्डियन एयरलाइन्स के सचालन मे हानि	७·००
कार्यालय और निवास गृह (इण्डियन एयरलाइन्स)	०·५०
एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के कारखानों का विस्तार	१·६५
इण्डियन एयरलाइन्स के लिए यन्त्रादि की खरीद	०·५१
एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के डिबेंचरों की वापसी	० ०६
योग	३०·५३

७२. इण्डियन एयरलाइन्स के वायुयानों के बेड़े के आधुनिकीकरण की भी व्यवस्था की जा रही है। प्रथम योजना काल में ५ वाइकाउण्ट वायुयानों के लिए आर्डर दिया गया था और उनके १९५७ के मध्य तक आ जाने की आशा थी। द्वितीय योजना काल मे कौन-से वायुयान मंगाए जाएं, इसका विचार किया जा रहा है। एयर इण्डिया इण्टर्नेशनल के लिए कुछ 'टर्बोप्राप' अथवा 'जेट' किस्म के वायुयान खरीदने की बात सोची जा रही है, जिससे वर्तमान सर्विसो की बढ़ती हुई माग पूरी की जा सके और नई सर्विसे जारी की जा सके। 'सर्विसो' का विस्तार करते हुए अनेक बातो का विचार करना पड़ता है, जैसे वायुयान किस प्रकार के खरीदे जाएं, संचालन व्यय क्या पड़ेगा, किराए और भाडे क्या है, संगठन की कुशलता कैसी है, संभावित हानियों को कैसे रोका जाए, सर्विसें सुरक्षित कैसे रहेंगी, और देश के सब भागों को एक-दूसरे के साथ सम्बद्ध किस प्रकार किया जा सकेगा, इत्यादि।

अध्याय २२

संचार और प्रसारण

विषय-प्रवेश

संचार सेवाओं में डाक, तार और टेलीफोन, वैदेशिक सचार और ऋतु विज्ञान आदि सेवाए सम्मिलित ह । संचार सबंधी इस अध्याय मे प्रसारण का भी वर्णन है, जैसा कि प्राय: होता आया है । संचार और प्रसारण की वृद्धि देश की आर्थिक और टेकनोलौजिकल उन्नति का एक परिपूरक तत्व है और औद्योगिक एवं व्यावसायिक गतिविधि का विस्तार, जीवन स्तर की उन्नति, साक्षरता की वृद्धि तथा सामाजिक जीवन के परिवर्तन आदि का असर इन सेवाओं के विकास की गति पर पड़ता है । दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में संचार और प्रसारण के विकास के कार्यक्रम दूसरे क्षेत्रों में परिकल्पित विकास कार्यों को ध्यान में रखकर ही बनाए गए हैं । योजना में इन कार्यक्रमों के लिए ७६ करोड़ रुपए की व्यवस्था है जिसमें से ६३ करोड़ रुपए डाक-तार और टेलीफोन सेवाओं पर, ५० लाख रुपए भारतीय टेलीफोन उद्योग पर, २ करोड़ रुपए वैदेशिक संचार पर, १·५ करोड़ रुपए ऋतु विज्ञान पर और ९ करोड़ रुपए प्रसारण पर खर्च होंगे । इसके अतिरिक्त जैसा प्रायः होता रहा है, डाक-तार विभाग योजना की अवधि में अपने राजस्व का १·७५ करोड़ रुपया लगाकर नये डाकघर खोलेगा । संचार विकास के कार्यक्रम में, दूसरे कार्यों के अतिरिक्त, २०,००० डाकघर, १,४०० तारघर और १,२०० सार्वजनिक टेलीफोन घर और १,८०,००० टेलीफोन लगाए जाएंगे । इस कार्यक्रम का प्रतिवर्ष पर्यालोचन भी होगा, जिससे यह देखा जा सके कि संचार व्यवस्था का विकास इस गति से हो कि उससे उद्योग तथा व्यवसाय और दूसरी पंचवर्षीय योजना के समय हाथ में लिए हुए दूसरे विकास कार्यों की माग पूरी होती है ।

डाक व तार

२. प्रथम योजना में डाक-तार विभाग के लिए ५० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई थी । इस योजना की अवधि में वास्तविक व्यय ४१ करोड़ रुपए होने की आशा है । दूसरी योजना में डाक और तार के लिए ६३ करोड़ रुपए की व्यवस्था है, जिसका वितरण निम्न प्रकार है :

	(करोड रुपए)
स्थानीय टेलीफोन सेवा ..	२९·०
सार्वजनिक टेलीफोन घर .	१·०
खुले तार के ट्रंक तथा उसके प्रेषक तार	३·०
ट्रंक तार और उसके प्रेषक तार ..	८·५
ट्रंक एक्सचेंज	१·४
तार सेवा . . .	२ ०
अन्य प्रशासनिक कार्यों की मांगें .. .	२ १
विविध आवश्यकताएं . . .	६·०
भवन	१०·०
योग ...	६३.०

३. **स्थानीय तार सेवा**—पहली योजना शुरू होने से पहले देश मे १,६८,००० टेलीफोन थे। योजना की अवधि मे लगभग १,००,०००, टेलीफोन और लगाए गए। इस समय १ लाख से अधिक टेलीफोनो की मांग विचाराधीन है और दूसरी योजना की अवधि में इस माग मे काफी अधिक वृद्धि होगी। दूसरी योजना की अवधि मे १,८०,००० नए टेलीफोन लगाने का विचार है। इस विस्तार के लिए १ लाख ६० हजार नई एक्सचेंज लाइने स्थापित करने, बहुत सारे नए एक्सचेज खोलने और कई वर्तमान हस्त-चालित एक्सचेंजो को स्वचालित बनाने की आवश्यकता होगी। विस्तार का यह कार्यक्रम मुख्यत. देश में टेलीफोन के यंत्र और एक्सचेंज लाइनें बनाने और विशेषत· भारतीय टेलीफोन उद्योग के उत्पादन की क्षमता पर निर्भर करता है। विभिन्न स्रोतों की बढती हुई मागो को ध्यान मे रखते हुए यह आवश्यक है कि इस कार्यक्रम की प्रगति का निरन्तर पर्यालोचन होता रहे।

४ **ट्रंक टेलीफोन सेवा**—ट्रक टेलीफोन सेवा सार्वजनिक फोन कार्यालयो और ट्रक एक्सचेंजों से उपलब्ध होती है जो कि फिजिकल सर्किटो और खुले तार मार्गों तथा भूमिगत तारो द्वारा सचालित प्रेषण पद्धतियो के जरिये ट्रंक ताने-बाने से जुड़े होते है। ट्रक टेलीफोन व्यवस्था के विस्तार का उद्देश्य केवल यही नही है कि सब नगरों और प्रशासन इकाइयो को यह सेवा उपलब्ध हो, बल्कि यह है कि देश में किसी भी सुविधाजनक दूरी तक, उदाहरणार्थ पांच मील के भीतर टेलीफोन सेवाए उपलब्ध हों। इस व्यवस्था के स्तर को भी उठाना है, जिससे प्रमुख लाइनो पर नम्बर मिलाया जा सके और शाखा लाइनो पर भी प्रायः अविलम्ब नम्बर मिल सके। दूसरी योजना में देश में सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालयों और ट्रंक एक्सचेंजो की यथेष्ट संख्या बढ़ाने और खुले तार के ट्रंक तथा प्रेषकों के ताने-बाने के विस्तार की व्यवस्था की गई है। लम्बे भूमिगत तार बिछाने की भी इस योजना में उचित व्यवस्था है। यह कार्य पहली योजना की अवधि में शुरू किया गया था।

५. पहली योजना से पूर्व देश मे ३३८ सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय थे। सितम्बर १९५३ तक सरकार की सामान्य नीति यह थी कि ऐसे कार्यालय केवल वहीं चलाए जाएं जहा कि वे आत्म-निर्भर हो सकें। तब यह निर्णय किया गया कि सभी जिलों के सदर मुकामों में सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय खोले जाएं। बाद में यह निर्णय हुआ कि सब-डिवीज़नों के सदर मुकामो में भी सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय खोले जाएं। यह कार्यक्रम दूसरी योजना की अवधि मे पूरा किया जाना है। अब विचार यह है कि तहसीलों के सदर मुकामों, बीस हजार या अधिक जनसंख्या के नगरों, ऐसे केन्द्रों मे जहां कि सार्वजनिक टेलीफोन कार्यालय अपना व्यय उठा सके तथा कुछ दूसरे स्थानों में भी सार्वजनिक टेलीफोन लगाए जाएं। यह आशा की जाती है कि पहली योजना के अन्त तक सार्वजनिक टेलीफोनों की संख्या १,२१८ तक पहुंच जाएगी और दूसरी योजना की अवधि में यह संख्या लगभग दूनी हो जाएगी।

६. पहली योजना में ४०६ ट्रंक एक्सचेज लगाने का कार्यक्रम बनाया गया था। आशा है कि योजना की अवधि में उनमें से ३५० पूरे हो गए होंगे। देश की ट्रंक एक्सचेंज व्यवस्था को पुनर्गठित करने का विचार है। इसके अनुसार देश को ११ प्रादेशिक केन्द्रों, ६५ जिला केन्द्रों और कई छोटे व आश्रित एक्सचेंजों में विभक्त किया जाएगा। दूसरी योजना की अवधि में ६ प्रादेशिक केन्द्र, ६ जिला केन्द्र और उनसे सम्बद्ध छोटे व आश्रित एक्सचेंज खोलने का विचार है। कई टेकनीकल सुधार भी किए जाएंगे।

७. दूसरी योजना के लिए खुले तार मार्गों और भूमिगत तारों के विस्तार का कार्यक्रम भी बनाया गया है। पहली योजना मे जहा खुले तार मार्गों पर ५०,००० चैनल मील प्रेषक तार लगाए गए है, वहां दूसरी योजना में लक्ष्य १ लाख ५० हजार मील पूरा करने का है : इसमें नए मार्गों पर तार बिछाना और वर्तमान मार्गो पर अतिरिक्त तार लगाना दोनो सम्मिलित है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की २२६ खुली तार प्रेषक पद्धतियो की व्यवस्था की गई है। भूमिगत तारो के सम्बन्ध मे बनाई गई योजना में बम्बई-दिल्ली-कलकत्ता, दिल्ली-अमृतसर, अम्बाला-शिमला और थाना-पूना के मध्य लम्बे भूमिगत ट्रक तार बिछाने का कार्यक्रम है। इन भूमिगत तारों मे ऐसी तारवाहक व्यवस्थाएं होगी कि टेलीफोन, संगीत और वी० एफ० टी० चैनल लगाये जा सकें। इस सारी व्यवस्था पर ११ करोड़ रुपए व्यय होंगे।

८. **तार सेवा**—पहली योजना से पूर्व ३,५९२ तारघर थे। पहली योजना की अवधि में १,३२० नए तारघर खोले गए। ट्रंक एक्सचेजों की भाति तारघरो के विकास कार्यक्रम का सामान्य उद्देश्य यही है कि देश के प्रत्येक स्थान से नियत दूरी तक, जैसे कि ५ मील के भीतर, तार सेवा उपलब्ध हो सके। एक साधारण तार को तारघर में लेने और उसको ठिकाने पर पहुंचाने में जो समय लगता है उसको घटाकर कम से कम करना है। इसके लिए यह आवश्यक है कि तारो के बार-बार के आदान-प्रदान से बचने के लिए टेलीप्रिंटर (दूर मुद्रक) और टेप प्रसारण पद्धति का व्यापक प्रयोग किया जाए और मोर्स क्रिया प्रणाली को क्रमशः हटा दिया जाए। दूसरी योजना में कार्यक्रम का लक्ष्य यह है कि तहसील और थानों में, जहां इस समय तारघर नही है, तथा दूसरे प्रशासनिक केन्द्रों मे ७०० तारघर, तथा ५,००० या इससे अधिक जनसंख्या के नगरों मे ४०० नए तारघर खोले जाएं। विकास कार्यक्रम की सुविधा की दृष्टि से हर एक केन्द्र की प्रतिवर्ष औसतन हानि की सीमा को ५०० रुपए से बढ़ाकर १,००० रुपए करना होगा। उन स्थानों पर जहा कि आर्थिक लाभ होने की सम्भावना है तथा कुछ अन्य चुने हुए स्थानों पर भी तारघर खोले जाएंगे। आशा है कि दूसरी योजना की अवधि में लगभग १,४०० तारघर स्थापित हो जाएंगे। तार पद्धति को आधुनिक स्तर पर लाने के लिए कई टेकनीकल सुधार भी किए जाएंगे। इन सुधारों में दूसरे सुधारों के अतिरिक्त ७० हजार से ८० हजार चैनल मील वी० एफ० टी० वाहक पद्धतियां, बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास में टेप प्रसारण पद्धति तथा कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास में टेलीप्रिंटरों का लगाना तथा प्रतिलिपि (फैसिमिली) कार्य पद्धति का आरम्भ भी सम्मिलित हैं।

९. **डाक सुविधाओं का विस्तार**—पहली योजना से पूर्व ३६,००० डाकघर थे और योजना की अवधि में १८,९०० डाकघर नए बनाए गए। पहली योजना का उद्देश्य था कि तहसील, ताल्लुका, थाना आदि सभी प्रशासनिक केन्द्रों के अतिरिक्त चारों ओर दो-दो मील तक के क्षेत्र में २,००० जनसंख्या वाले प्रत्येक ग्राम-समूह में एक डाकखाना हो, बशर्ते कि वार्षिक हानि ७५० रुपए से अधिक न हो और ३ मील तक कोई डाकघर न हो। दूसरी योजना का लक्ष्य यह होगा कि ४ मील के घेरे में स्थित २,००० तक की जनसंख्या के प्रत्येक ग्राम-समूह में डाकघर हो। इसके अतिरिक्त, दूसरी योजना की अवधि में सभी राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों के सदर मुकामों में भी डाकघर खोले जाएंगे, यदि वहां वार्षिक हानि और वर्तमान डाकघर से दूरी की शर्तें पूरी हो जाएं। दूसरी योजना की अवधि में कुल मिलाकर लगभग २० हजार डाकघर खुलने की आशा है।

१०. विस्तार कार्यक्रम के साथ-साथ डाक के शीघ्रतर पहुंचाने के उपाय भी किए जाएंगे। जिन मार्गों पर विमान सेवाएं उपलब्ध है, वहा हवाई डाक का प्रबन्ध करने का विचार है। यह भी सुझाव दिया गया है कि लगभग १८ देशो को, जहा अभी तक हवाई पार्सल भेजने की व्यवस्था नही है, हवाई पार्सल भेजने की व्यवस्था की जाए। कुछ अतिरिक्त रेलवे मेल गाड़ियों और १०० नई मेल मोटरो की भी व्यवस्था की गई है। डाक व्यवस्था मे मशीनों का प्रयोग शुरू करने का कार्यक्रम भी बनाया गया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत बड़े-बड़े डाकघरो मे डाक के थैलो को लाने-ले जाने और उठाने के यत्र, कम्टोमीटर, कार्ड-लिफाफे बेचने की मशीने, टिकट पर मुहर लगाने की मशीने, पार्सल लेबल देने की मशीने आदि लगाई जाएंगी। आशा है कि इन सब उपायो से डाकघरो की कार्यकुशलता काफी कुछ बढ़ जाएगी।

११. **अन्य कार्यक्रम**---डाक-तार विभाग की योजनाओं में टेलीप्रिंटर कारखाने, माईथान की डाक-तार वर्कशाप, वर्तमान तार वर्कशापो के विकास और शोध एवं प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना का उल्लेख किया जा सकता है। इस विभाग के भवन निर्माण कार्यक्रम में कार्यालय भवनों के निर्माण के अतिरिक्त कर्मचारियों के लिए बहुत-से क्वार्टर भी बनाए जाएंगे। योजना में सरकारी विभागो और निजी व्यक्तियों की टेलीफोन सम्बन्धी आवश्यकताओं को भी ध्यान मे रखा गया है।

भारतीय टेलीफोन् उद्योग

१२. टेलीफोन सेवा के द्रुततर विकास के लिए आवश्यक है कि टेलीफोन यत्र देश में ही बनाए जाएं। इस उद्देश्य से ही १६४८ में भारतीय टेलीफोन उद्योग योजना चालू की गई थी। कारखाने के विकास के लिए पहली योजना में १ करोड़ ३० लाख रुपए की व्यवस्था थी। बाद में यह राशि बढ़ाकर ३ करोड़ ४६ लाख कर दी गई। योजना की अवधि में वास्तविक व्यय २ करोड़ ६१ लाख रुपए होने का अनुमान है। कारखाने की क्षमता ३५ हजार एक्सचेंज लाइनें और ५० हजार टेलीफोन यंत्र प्रतिवर्ष तैयार करने की हो गई है। इस कारखाने का आरम्भ विदेशो से आयात किए गए टेलीफोन यंत्रावयवों को एकत्र कर यत्र तैयार करने के काम से किया गया था, परन्तु अब अवयव बनाने का काम भी सन्तोषजनक प्रगति पर है। अब यह कारखाना टेलीफोन के ५३६ अवयवो में से ५२० स्वयं तैयार कर लेता है, शेष १६ में से १७ दूसरे भारतीय कारखानो में तैयार हो जाते है, और केवल २ अवयव विदेश से मगवाए जाते है। एक्सचेज लाइन के यंत्रों के सम्बन्ध में भी भारतीय टेलीफोन उद्योग आत्मनिर्भरता प्राप्त करने की कोशिश में है। आशा है कि दूसरी योजना की अवधि में एक्सचेज लाइन यंत्र के लिए अपेक्षित अवयवों में से ८५ प्रतिशत अवयव इसी कारखाने में ही तैयार होने लगेंगे।

१३. दूसरी योजना की अवधि में ४० हजार एक्सचेंज लाइनों और ६० हजार टेलीफोन यत्रों के प्रतिवर्ष निर्माण किये जाने का अभीष्ट कार्यक्रम है। परन्तु इस स्तर पर यह उत्पादन तभी पहुंचेगा जब कि निर्यात व्यापार के लिए बाजार मिल सकेगा। भारतीय टेलीफोन उद्योग के लिए योजना में ५० लाख रुपए की व्यवस्था है। यदि आवश्यक हुआ तो यह उद्योग अपने विकास के लिए स्वयं कुछ धन दे सकेगा।

समुद्रपार संचार सेवा

१४. विदेशों से अपना सम्पर्क बढाने और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए भारत को एक सुविकसित समुद्रपार संचार पद्धति की अपेक्षा है। समुद्रपार संचार सेवा का उद्देश्य सब महत्व-

पूर्ण देशो के साथ बेतार-तार, टेलीफोन और रेडियो-फोटो सम्बन्ध स्थापित करना है। पहली योजना से पूर्व भारत का ६ देशों—ब्रिटेन, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, चीन, अफगानिस्तान और जापान के साथ सीधा रेडियो सम्बन्ध था। शेष ससार से सम्पर्क स्थापित करने के लिए उसे लन्दन की 'केबल एण्ड वायरलैस लिमिटेड' संचार पद्धति पर निर्भर रहना होता था। दूसरी योजना के शुरू किये जाने के समय तक यह आशा की जाती है कि भारत का १४ देशों से रेडियो-तार सम्बन्ध, १६ देशों से रेडियो-टेलीफोन सम्बन्ध और ५ देशो से रेडियो-फोटो सम्बन्ध स्थापित हो चुकेगा। इसके अतिरिक्त समुद्रपार सचार सेवा विदेशस्थ भारतीय राजदूतावासों और वाणिज्यिक निकायों के लिए संयुक्त प्रसारण व समाचार-पत्रों के लिए समाचार प्रसारण की भी व्यवस्था करती है।

१५. पिछले वर्षों में जनता, समाचार-पत्रो, व्यापार संस्थाओ, सरकारी एजेंसियों और विदेशों से यह माग बढ़ती जा रही है कि द्रुततर सुदूरगामी संचार साधनों की अतिरिक्त सुविधाएं मिलें। कुछ अवस्थाओ में उपलब्ध यत्रों द्वारा अस्थायी व्यवस्था कर दी गई है। दूसरी योजना की अवधि में सबसे पहले उपयुक्त उपकरणों द्वारा विद्यमान सर्किटो को सुदृढ़ किया जाएगा। जहा तक सम्भव होगा, विद्यमान उपकरणों में आधुनिक टेकनीकों का उपयोग कर सन्देश आदान-प्रदान की क्षमता को बढ़ाया जाएगा। योजना के अनुसार कई नए सर्किटो की भी स्थापना होगी। आशा है कि दूसरी योजना की अवधि में २५ और देशो के साथ सीधा रेडियो-तार, रेडियो-फोन और रेडियो-फोटो सम्बन्ध स्थापित हो जाएगा। इसके अतिरिक्त, योजना के अनुसार रेडियो-टेलीफोन मार्गों पर एक उच्च गोपनीयता पद्धति, समाचार-पत्रों मे समाचार प्रसार के लिए विशेष सुविधाएं, विदेश मत्रालय के अधीन समाचार प्रसारण कार्यक्रम का अपेक्षाकृत विस्तृत प्रसारण और उड्डयन कम्पनियों एवं व्यापार संस्थाओं के लाभ के लिए पट्टे पर लिए जा सकने वाले अनेक सर्किटो की भी व्यवस्था की जाएगी। इन सर्किटो की रचना ऐसी होगी कि भारत के समुद्रपार सचार के चारो केन्द्रों से इन्हे काम में लाया जा सके और योजना का लक्ष्य यह है कि सब केन्द्रों मे उपलब्ध सेवाएं परस्पर संगठित हों, जिससे किसी एक केन्द्र के बिगड़ जाने पर भी दूसरे केन्द्र द्वारा बाह्य संसार से सम्पर्क बनाए रखा जा सके। दूसरी योजना की अवधि में इस कार्यक्रम में कुल व्यय २ करोड़ रुपए होने का अनुमान है।

ऋतु विज्ञान

१६. पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में प्रमुख हवाई अड्डों की वेधशालाओं में यंत्रों के आधुनिकीकरण के लिए यत्न किया गया था। शिलांग में स्थित केन्द्रीय सिस्मोलाजिकल (भूचाल दर्शक) वेधशाला और कोडाई-कनाल वेधशाला तथा विभाग की प्रयोगशालाओं के लिए नए यत्रो की व्यवस्था की गई थी। वेधशालाओं के लिए अपेक्षित बहुत-से औजारों के निर्माण से लिए आरम्भिक कार्य शुरू कर दिया गया। कोसी, नर्मदा, ताप्ती आदि कुछ नदियों के जलस्रवण क्षेत्रों में जल मापक संस्थाओं का ढांचा भी बना लिया गया, ताकि जल परिमाण सम्बन्धी तथ्य एकत्र किये जा सकें और बाढ़ नियन्त्रण योजना के लिए इनका अध्ययन किया जा सके। कार्यालयों, वेधशालाओ और कर्मचारियों के क्वार्टरों के लिए भवन निर्माण के कार्य में सन्तोषजनक प्रगति हुई। सुझाव है कि दूसरी योजना की अवधि में महत्वपूर्ण हवाई अड्डा वेधशालाओ के यत्रों का और अधिक आधुनिकीकरण किया जाए, विभागीय कारखानों और प्रयोगशालाओं का विस्तार किया जाय तथा जलवायु विज्ञान और कृषि सम्बन्धी ऋतु विज्ञान के विकास के लिए भी कार्य किया जाए। शिलांग स्थित केन्द्रीय भूचाल दर्शक वेधशाला और अलीबाग स्थित मैग्नेटिक वेधशालाओं के कार्यों का भी विस्तार किया जाएगा। कोडाई-

कनाल वेधशाला को नक्षत्र विज्ञान, रेडियो ज्योतिर्विज्ञान व दूसरी नई दिशाओ मे काम करने के लिए नए यंत्रों से और अधिक विकसित किया जाएगा। इस वेधशाला के विकास कार्यक्रम मे जिन कामों के करने का विचार है उनमे एक चश्मों का कारखाना और दूसरा मशीन कारखाना लगाना सम्मिलित है। योजना की अवधि में केन्द्रीय ज्योतिर्विज्ञान वेधशाला और नौ सेना सम्बन्धी वेधशाला, इन दो नई वेधशालाओ का निर्माण शुरू किया जाएगा। योजना मे कार्यालय, वेधशाला के लिए भवन, कारखाने और प्रयोगशालाओ के विस्तार और कर्मचारियो के लिए क्वार्टर बनाने की भी व्यवस्था है। इन सब कार्यों के लिए योजना में १ करोड़ ५० लाख रुपए की व्यवस्था की गई है।

प्रसारण

१७. पहली योजना में प्रसारण के लिए ३ करोड़ ५२ लाख रुपए की व्यवस्था थी। योजना के चौथे वर्ष में यह राशि बढ़ाकर ४ करोड़ ६४ लाख रुपए कर दी गई। रेडियो के कार्यक्रम कितने क्षेत्र में सुने जाएगे और उन्हे कितनी जनता सुन सकेगी, इस सम्बन्ध मे योजना के मूल रूप में जो लक्ष्य रखे गए थे वे बहुत कुछ पूरे हो गए है। बम्बई, बंगलौर, अहमदाबाद, लखनऊ, जालन्धर और कलकत्ता मे ५० किलोवाट मीडियम वेव के छः सम्प्रेषण यंत्र लगाये जा चुके हैं। इन्दौर, मद्रास और अजमेर में २० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण यंत्र लगा दिये गए है तथा पटना, कटक, विजयवाड़ा, त्रिचूर और दिल्ली में २० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण यत्र लगाने का काम १९५६ के अन्त तक पूरा हो जाएगा। इन अतिरिक्त यंत्रों की व्यवस्था प्रसारण के विस्तार की दृष्टि से की गई है। नागपुर और गोहाटी के रेडियो स्टेशनों में तथा पूना, राजकोट और जयपुर में जो नए स्टेशन बनाए गए है उनमें कम शक्ति के मीडियम वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाने का कार्यक्रम पहली योजना के अन्तर्गत नहीं हुआ है। कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और असम आदि देश के कुछ प्रदेशों में भूमि की बनावट और प्रादेशिक आवश्यकताओ को ध्यान में रखते हुए शार्ट वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाने का कार्य १९५६ के अन्त तक सम्पन्न हो जाएगा। इस प्रकार पहली योजना में प्रत्येक भाषा के क्षेत्र में कम से कम एक सम्प्रेषण केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था की गई है और देश के लगभग सभी क्षेत्रों को प्रसारण क्षेत्र में लाने का प्रयत्न किया गया है। शार्ट वेव पर अन्तर्राष्ट्रीय सेवा सम्बन्धी जो कार्यक्रम रखा गया है उसका बड़ा भाग १९५६ के अन्त तक पूरा हो जाएगा।

१८. दूसरी योजना का प्रधान लक्ष्य नए केन्द्रों की स्थापना करना नही है बल्कि यह है कि सब भाषाओं के लिए उपलब्ध सेवाओं को अधिक से अधिक क्षेत्रों मे विस्तृत किया जाए। इसलिए दूसरी योजना में सम्प्रेषण केन्द्रों के खोलने की व्यवस्था इस प्रकार की गई है जिससे कि उन क्षेत्रो को प्रसारण सुविधाएं दी जा सके जहां इस समय ये सुविधाएं उपलब्ध नहीं है। स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखकर इस लक्ष्य की पूर्ति मीडियम वेव और शार्ट वेव के उचित संयोजन से की जाएगी। तिरुचिरापल्ली में ५० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण यंत्र लगाकर तमिल भाषा भाषी क्षेत्र में प्रसारण का विस्तार किया जाएगा और बम्बई तथा कलकत्ता की प्रसारण सेवा को भी मीडियम वेव पर सशक्त किया जाएगा। दूसरी ओर उन क्षेत्रों में जहां वायुमण्डलीय कोलाहल रहता है या जो विशेष भौगोलिक रचना के प्रदेश हैं अथवा जहा की जनसंख्या बहुत बिखरी हुई और बस्तिया दूर-दूर है अथवा जहां अनेक बोलियां बोली-जाती हैं, वहां प्रसारण की सफलता के लिए शार्ट वेव का प्रयोग किया जाएगा। इसके लिए पहाड़ी प्रदेशों में, शिमला, लखनऊ और गोहाटी में, मध्य प्रदेश और उसके आस-पास की आदिवासी बस्तियों में, राजस्थान और मराठी तथा तेलुगु क्षेत्रों में शार्ट वेव सम्प्रेषण यंत्रों के प्रयोग की व्यवस्था की गई है।

१९. राष्ट्रीय कार्यक्रमो की बढ़ती हुई माग और राष्ट्रीय कार्यक्रमों के देशव्यापी प्रसारण की आवश्यकता को देखते हुए यह विचार है कि दिल्ली मे १०० किलोवाट शार्ट वेव और १०० किलोवाट मीडियम वेव के सम्प्रेषण यत्र लगाए जाएं। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में ५० किलोवाट मीडियम वेव सम्प्रेषण लगाकर इन स्थानो की प्रसारण सेवाए समस्त भारत के लिए उपलब्ध की जाएगी। इन सम्प्रेषण यंत्रो का उपयोग वैदेशिक प्रसारण सेवाओ को अधिक सशक्त बनाने में भी किया जाएगा। भारत के विदेशों से बढ़ते हुए सम्पर्क के कारण वैदेशिक प्रसारण सेवाओं के विस्तार की आवश्यकता बढ़ रही है। दिल्ली में १०० किलोवाट के दो शार्ट वेव सम्प्रेषण यत्र लगाए जाएंगे जिनसे यह आवश्यकता पूरी की जा सकेगी।

२०. टेलीविजन के क्षेत्र मे भी कार्य शुरू करने का प्रस्ताव है।

२१. देहातो मे रेडियो कार्यक्रम सुनने की सुविधाएं बहुत बढ़ाई जाएंगी ताकि गांवो में रहने वाले उस प्रसारण व्यवस्था से लाभ उठा सकें जिसकी व्यवस्था पहली योजना में की गई है और जो दूसरी योजना में बढ़ाई जाएगी। विचार है कि १,००० या इससे अधिक आबादी वाले सब गावों में पंचायती रेडियो लगा दिये जाएं। इस योजना की अवधि में कुल मिलाकर लगभग ७२,००० रेडियो लगाने का प्रस्ताव है।

२२. योजना में रखी गई धनराशि का शेष भाग अदला-बदली करने, कुछ केन्द्रो में स्थायी स्टूडियो की व्यवस्था करने और प्रतिलिपि, शोध एवं प्रशिक्षण की सुविधाओं को सशक्त बनाने के लिए है। विकास कार्यक्रम को पूरा करने के लिए आल इंडिया रेडियो को अधिक कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होगी। इसके लिए भी योजना में व्यवस्था कर दी गई है। इनमें ६७८ रेडियो इंजीनियर भी होंगे।

२३. योजना में प्रसारण के लिए ९ करोड़ रुपए की व्यवस्था है, जिसका वितरण इस प्रकार है :—

(लाख रुपयों में)

१. सम्प्रेषण यंत्र	
अन्तर्देशीय सेवाएं	२१९·९९
वैदेशिक सेवाएं	१२८·०६
२. स्टूडियो की स्थापना और अतिरिक्त कार्यालय	२६७·८१
३. टेलीविजन	४०·००
४. पंचायती रेडियो	७५·००
५. सम्पत्ति की अदला-बदली	३१·२०
६. शोध विभाग	१६·६०
७. प्रतिलिपि सेवा ट्रांसक्रिप्शन सर्विस	१४·००
८. कर्मचारी प्रशिक्षण विद्यालय...	५·००
९. कर्मचारी आवास गृह	५·००
१०. क्षेत्रशक्ति और भूमि परिवहन, पर्यवेक्षण, चलती-फिरती अभिलेखन (रिकार्डिंग) गाड़ियां, प्रोटो-टाइप यूनिट आदि दूसरे कार्यक्रम	६८·३४
११. स्थापना दल	२९·००
जोड़ ...	९००·००

अध्याय २३

शिक्षा

विषय-प्रवेश

आर्थिक प्रगति जिस तेजी से की जा सकती है और उससे जो लाभ उठाए जा सकते हैं, उसका निश्चय करने में शिक्षा पद्धति का विशेष महत्व होता है। आर्थिक विकास स्वाभाविक रूप से मानवीय साधनो की मांग करता है और एक लोकतान्त्रिक व्यवस्था में यह ऐसे मूल्यों तथा मान्यताओं को जगा देता है जिनके निर्माण मे शिक्षा एक महत्वपूर्ण तत्व होती है। समाजवादी ढंग के समाज का अर्थ यह है कि विभिन्न स्तरों पर प्रत्येक कार्य मे जनता का सहयोग और रचनात्मक नेतृत्व हो। परन्तु भरपूर विकास के कार्यकाल मे आर्थिक और सामाजिक विकास की योजनाओ को बनाते हुए जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है उनके अन्तर्गत एक यह भी समस्या है कि शिक्षा और उसके लक्ष्यों को पूरा करने के लिए साधनों का आवंटन कैसे किया जाए। पिछले वर्षों में शिक्षा के ढाचे के सम्बन्ध मे बहुत कुछ विचार-विमर्श हुआ है और बहुत-से विषयों पर परिवर्तन के लिए शिक्षा शास्त्री कुछ विशेष प्रस्तावों पर सहमत हो चुके है, जैसा कि विश्वविद्यालय आयोग, माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा अन्य कई ऐसी समितियों के प्रतिवेदनों से प्रकट है, जिन्होंने शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं पर विचार किया है। केन्द्र और राज्य सरकारो ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रमो के निश्चित करने के लिए शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों मे हुई उन्नति का सिंहावलोकन किया है। जो कार्यक्रम बनाए गए है उनके मुख्य भागों पर इस अध्याय मे प्रकाश डाला गया है।

२. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में बुनियादी शिक्षा, प्रारम्भिक शिक्षा के विस्तार, माध्यमिक शिक्षा के रूप-परिवर्तन, कालेज और विश्वविद्यालय के शिक्षा-स्तर मे सुधार, प्रौद्योगिक तथा व्यावहारिक शिक्षा के लिए सुविधाओ के विस्तार और सामाजिक शिक्षा तथा सांस्कृतिक विकास के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने पर अधिक जोर दिया गया है। पहली पचवर्षीय योजना में शिक्षा के विकास के लिए १६६ करोड़ रुपए—४४ करोड़ रुपए केन्द्रीय सरकार द्वारा और १२५ करोड़ रुपए राज्य सरकारों द्वारा—रखे गये थे। दूसरी योजना में ३०७ करोड़ रुपयो की व्यवस्था है जिसमें से ९५ करोड़ केन्द्रीय सरकार और २१२ करोड़ रुपए राज्य सरकारो द्वारा व्यय होने है। पहली और दूसरी योजना में शिक्षा के विविध क्षेत्रो पर खर्च का जो विभाजन रखा गया है वह इस प्रकार है :

	पहली योजना (करोड़ रुपयों में)	दूसरी योजना
प्रारम्भिक शिक्षा	९३	८९
माध्यमिक शिक्षा	२२	५१
विश्वविद्यालयिक शिक्षा	१५	५७
प्रौद्योगिक और व्यावसायिक शिक्षा	२३	४८
सामाजिक शिक्षा	५	५
प्रशासन और विविध	११	५७
योग ...	१६९	३०७

पहली योजना के लिए रखी गई धनराशि का कुछ भाग शिक्षा के विकास के लिए योजना से पूर्व निर्मित योजनाओं को चालू रखने पर भी खर्च होना था। परन्तु दूसरी योजना मे पहली योजना की अवधि मे स्थापित संस्थाओं पर होने वाले खर्च को तो समाविष्ट खर्च मान लिया गया है और योजना के लिए जो धनराशि रखी गई है वह नई संस्थाओं की स्थापना, वर्तमान सस्थाओं के विस्तार अथवा विकास के लिए ही है। ऊपर जिस व्यवस्था का उल्लेख किया गया है, उसके अतिरिक्त दूसरी योजना की अवधि मे राष्ट्रीय विस्तार सेवा तथा सामुदायिक विकास क्षेत्रो के शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रम मे सामान्य शिक्षा पर १२ करोड़ तथा सामाजिक शिक्षा पर १० करोड़ रुपए की व्यवस्था विद्यमान है। विकास के विभिन्न क्षेत्रों—कृषि, स्वास्थ्य, पिछड़े वर्गो का कल्याण, विस्थापित व अन्य व्यक्तियों का पुनर्वास आदि कार्यक्रमो के अन्तर्गत भी शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओ के विस्तार के लिए काफी धनराशि रखी गई है।

३ नीचे दिये गये विवरण से ज्ञात होगा कि पहली योजना की अवधि में शिक्षा के विविध क्षेत्रो में कितनी उन्नति हो सकी है और दूसरी योजना का क्या लक्ष्य है। प्रत्येक क्षेत्र की पृथक-पृथक प्रगति का सिहावलोकन आगे किया गया है।

	इकाई	१६५०-५१	१६५५-५६	१६६०-६१
१. विभिन्न वय वर्ग के बच्चों के लिए शिक्षा सुविधाएं				
(क) ६–११	छात्र	१,८६,८०,०००	२,४८,१२,०००	३,२५,४०,०००
वय वर्ग का प्रतिशत	सख्या	४२ ०	५१·०	६२·७
(ख) ११–१४	,,	३३,७०,०००	५०,६५,०००	६३,८७,०००
वय वर्ग का प्रतिशत		१३·६	१६·२	२२ ५
(ग) १४–१७	,,	१४,५०,०००	२३,०३,०००	३०,७०,०००
वय वर्ग का प्रतिशत		६ ४	६·४	११ ७
२. संस्थाएं				
(क) प्राथमिक/निम्न बुनियादी	स्कूल संख्या	२,०६,६७१	२,७४,०३८	३,२६,८००
(ख) निम्न बुनियादी	,,	१,४००	८,३६०	३३,८००
(ग) मिडिल/उच्च बुनियादी	,,	१३,५६६	१६,२७०	२२,७२५
(घ) उच्च बुनियादी	,	३५१	१,६४५	४,५७१
(ङ) हाई/हायर सैकण्डरी	,,	७,२८८	१०,६००	१२,१२५
(च) बहूद्देश्यीय स्कूल	,,	—	२५०	१,१८७
(छ) हायर सैकण्डरी स्कूल बना दिये जाने वाले हाई स्कूल		—	४७	१,१६७
(ज) विश्वविद्यालय		२६	३१	३८
३. इंजीनियरी				
(क) सस्थाए—				
(१) डिग्री देने वाली		४१	४५	५४
(२) डिप्लोमा देने वाली		६४	८३	१०४

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
(ख) प्रतिफल—			
(१) डिग्री लेने वाले	१,७००	३,०००	५,४८०
(२) डिप्लोमा लेने वाले	२,१४६	३,५६०	८,०००
४. टेकनोलौजी			
(क) सस्थाएं—			
(१) डिग्री देने वाली	२५	२५	२८
(२) डिप्लोमा देने वाली	३६	३६	३७
(ख) प्रतिफल—			
(१) डिग्री लेने वाले	४९८	७००	८००
(२) डिप्लोमा लेने वाले	३३२	४३०	४५०

४ इस विवरण से ज्ञात होता है कि पहली योजना की अवधि मे किए गए और दूसरी योजना के लिए निर्धारित प्रयत्न किसी भी प्रकार थोड़े नही है। तथापि, सारी समस्या के आकार-प्रकार की दृष्टि से इन्हे देखना होगा। हाल के वर्षो में कई क्षेत्रों में स्पष्ट उन्नति हुई है, फिर भी कुछ भारी काम ऐसे है जो अभी करने बाकी है। उदाहरण के लिए सविधान के एक निदेशक सिद्धान्त के अनुसार राष्ट्र का प्रयत्न होना चाहिए कि संविधान लागू होने से १० वर्ष के भीतर १४ वर्ष तक के प्रत्येक बच्चे के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हो। पहली योजना लागू होने से पूर्व ६–१४ वय वर्ग के बच्चों में से ३२ प्रतिशत के लिए शिक्षा की व्यवस्था थी। यह प्रतिशत पहली योजना की अवधि के अन्त में ४० प्रतिशत और दूसरी योजना की अवधि में केवल ४९ प्रतिशत तक पहुंचने की आशा है।

प्रारम्भिक शिक्षा

५. प्रारम्भिक शिक्षा की मुख्यत: दो समस्याएं है : वर्तमान सुविधाओ का विस्तार और बुनियादी शिक्षा पद्धति के आधार पर शिक्षा पद्धति का नवीकरण। सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए दोनों ही कार्य तात्कालिक एवं आवश्यक है।

६. शिक्षा के विस्तार के क्षेत्र में जो लक्ष्य पूरे किए गए और दूसरी योजना के लिए जो लक्ष्य नियत किए गए है, वे इस प्रकार है :

स्तर	विभिन्न वर्गो के कुल बालकों की प्रतिशत विद्यार्थी सख्या								
	१९५०-५१			१९५५-५६ के अनुमान			१९६०-६१ के लक्ष्य		
	लड़के	लड़किया	कुल	लड़के	लडकियां	कुल	लड़के	लड़कियां	कुल
१. प्राथमिक (६-११)	५९	२५	४२	६६	३३	५१	८६	४०	६३
२. मिडिल (११-१४)	२२	५	१४	३०	८	१९	३६	१०	२३
प्रारम्भिक (६-१४)	४६	१७	३२	५७	२३	४०	७०	२८	४९

इस विवरण से स्पष्ट है कि निःशुल्क, अनिवार्य और सबके लिए शिक्षा का जो लक्ष्य संविधान मे निर्दिष्ट है वह तो अभी बहुत दूर है। इस विवरण में दिए गए अक समूचे भारत के अंक हैं, परन्तु राज्य की शिक्षा सम्बन्धी स्थिति मे बहुत अन्तर है। कई राज्यों में ये आकडे अखिल भारतीय आकड़ों से कही नीचे है, तथापि यह आवश्यक है कि सविधान के निदेश को आगामी दस-पन्द्रह वर्षों में पूरा कर दिया जाए।

७. शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओं के विस्तार की समस्या कुछ जटिल है और इसके विभिन्न पहलुओं पर विचार करना होगा। विवरण से स्पष्ट है कि ६-११ वय वर्ग के लड़कों के सम्बन्ध मे तो प्रगति सन्तोषजनक है परन्तु ११-१४ वय वर्ग के लडकों की प्रगति अपेक्षाकृत बहुत धीमी हुई है। दोनों ही वय वर्गों मे लड़कियों की शिक्षा बहुत ही पिछड़ी हुई है। परिस्थिति का बहुत ही चिन्ताजनक पहलू "क्रमिक ह्रास" है : प्राथमिक स्तर पर यह ५० प्रतिशत से भी अधिक है। स्कूल की पहली कक्षा में प्रविष्ट होने वाले १०० लड़कों में से ५० चौथी कक्षा में पहुच पाते है, शेष लड़के इन चार वर्षों की समाप्ति से पूर्व ही स्कूल छोड़ देते है। लड़कियों के मामले में यह ह्रास और भी अधिक है। ह्रास की समस्या से मिलती-जुलती समस्या गतिरोध की होती है। शिक्षा के विस्तार की समस्याओं का राज्यों में और एक ही राज्य के विभिन्न भागों में विभिन्न होना सम्भव है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक इलाके में अपेक्षित उपायों का निश्चय करने के लिए विस्तृत सर्वेक्षण किया जाए। राज्य सरकारों के साथ मिलकर केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय यह सर्वेक्षण करवा रहा है। तथ्यों पर मोटे तौर पर विचार करने के बाद स्थिति सुधार के हेतु कुछ सामान्य सुझाव दिए जा सकते हैं।

८. ह्रास को रोकने के लिए अनिवार्य शिक्षा का आरम्भ करना जरूरी है। यदि किसानों के अधिक काम के दिन यथासम्भव स्कूलों की छुट्टियों के साथ-साथ पड़ें तो अनिवार्य शिक्षा का पालन कराना अपेक्षाकृत सरल हो जाएगा। फिर, विशेषकर देहातों में शिक्षा को व्यावहारिक रूप देने का यथासम्भव प्रयत्न होना चाहिए। गतिरोध दूर करने का मुख्य उपाय यह है कि अध्यापक योग्य हो एवं अध्यापन विधि में जिसमें मानव सम्बन्धों और व्यक्तित्व की समस्याएं सम्मिलित है, सुधार किया जाए।

९. लडकियो की शिक्षा की समस्या सबसे अधिक आवश्यक है। लड़कियों की शिक्षा के सम्बन्ध में देश के प्रत्येक भाग में जन-मत एक-सा जाग्रत नहीं है। माता-पिताओं को सिखलाने और शिक्षा को कन्याओ की आवश्यकताओं से और अधिक सम्बद्ध करने का विशेष यत्न करने की आवश्यकता है। हर क्षेत्र की परिस्थिति का अलग-अलग अध्ययन करना आवश्यक होगा। जहां सहशिक्षा स्वीकार करने में बाधाएं है, वहां के लिए दूसरे उपायों को खोजना होगा। कुछ क्षेत्रों में पृथक स्कूल ही खोलने पड़ेगे और कुछ में अन्तरिम उपाय के रूप मे पारी पद्धति को अपनाना सम्भव होगा। एक पारी में लड़कों की और दूसरी पारी में लड़कियों की पढ़ाई होगी।

स्त्री शिक्षा की प्रगति मे एक बड़ी बाधा अध्यापिकाओं की कमी भी है। १९५३-५४ में अध्यापिकाओं की संख्या, प्राथमिक और सैकेण्डरी स्कूलों में नियुक्त सब अध्यापकों की सख्या के जोड़ की १७ प्रतिशत थी। अध्यापिकाओं के प्रशिक्षण कार्य को अविलम्ब मानकर चलना होगा, विशेषकर इसलिए कि तीसरी पचवर्षीय योजना में प्राथमिक शिक्षा के विस्तार की समस्या अधिकतर स्त्री शिक्षा से सम्बद्ध होगी। अध्यापिकाओं के लिए गांवों में

आवास सुविधाओ की व्यवस्था करना इस दिशा मे एक महत्वपूर्ण पग बढ़ाना होगा । अध्यापन वृत्ति के अल्पसामयिक होने के कारण विवाहित स्त्रियो का अध्यापन वृत्ति की ओर आकृष्ट होना सम्भव है ।

१०. ११-१४ वय वर्ग के उन बच्चों के लिए जो पारिवारिक आय में अपना भाग दते हैं, निरन्तर खुले रहने वाले स्कूल बहुत-से विद्यार्थियो को स्कूली शिक्षरण देने मे सहायक हो सकते है ।

११. उपलब्ध भवनो तथा अन्य सुविधाओ को अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने की भी काफी जरूरत है । इस सम्बन्ध में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने १९५६ की पिछली बैठक में बुनियादी तथा गैर-बुनियादी दोनों प्रकार के स्कूलो में पारी पद्धति चलाने की सिफारिश की है । इस योजना से पूरा लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा को क्रमश· अनिवार्य किया जाए और इस लक्ष्य से स्कूलों मे प्रवेश सख्या की वृद्धि के लिए पर्याप्त प्रचार का आश्रय लिया जाए । पारी पद्धति का परीक्षण अभी तिरुवाकुर-कोचीन और बम्बई राज्य मे ही किया गया है, शेष देश के लिए यह पद्धति अभी नई है । सुझाव यह है कि आरम्भ मे इसको केवल दो कक्षाओ तक सीमित रखा जाए और इससे प्राप्त अनुभव का बीच-बीच मे सिंहावलोकन होता रहे । पारी पद्धति की सिफारिश आदर्श पद्धति के रूप में नही, अपितु कुछ व्यावहारिक कठिनाइयो को दूर करने के लिए है । पढ़ाई के घण्टों मे कमी हो जाने से पाठ्यक्रम और स्कूल के अन्दर तथा स्कूल से बाहर दोनो समय के कार्य की योजना का पुनर्नवीकरण करना पड़ेगा ।

१२. स्कूल भवनों के सम्बन्ध मे अभी तो मितव्ययिता के मानदण्ड को अपनाना होगा । स्कूल का बहुत-सा काम तो मकान से बाहर किया जा सकता है और न्यूनतम आवश्यक स्थान की व्यवस्था स्थानीय समाज जन-अधिकारियों की थोडी सहायता से कर सकेगा । स्कूल भवनो के लिए सस्ते नक्शों के परीक्षण किए जाने चाहिएं । किसी गाव मे स्कूल खोलने के लिए किसी स्वीकृत मानदण्ड को पूरा करने की शर्त आवश्यक नही होनी चाहिए । किसी स्थान में तत्काल जो भी व्यवस्था सम्भव हो उसी के अधीन स्कूल खोला जा सकता है और गाव का मन्दिर, पंचायत घर आदि सार्वजनिक भवनों का उपयोग इसके लिए किया जा सकता है । एक बार स्कूल काम करना शुरू कर दे तो फिर ज्यों ही परिस्थिति अनुकूल हो और स्थानीय चन्दा एकत्र हो जाए, स्कूल का भवन बनना शुरू हो जाएगा ।

१३. १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों की नि·शुल्क शिक्षा और अनिवार्य शिक्षा के बारे में संविधान के निदेश को पूरा करने के लिए सरकारी साधनों के साथ-साथ स्थानीय समाज को भी काफी प्रयत्न करना होगा । बहुत-से दशों में प्रारम्भिक शिक्षा की मुख्य जिम्मेदारी स्थानीय समाज पर होती है । उचित अनुदान देकर राज्य के अधिकारी स्थानीय प्रयत्न को प्रोत्साहित करते हैं । भारत में भी शताब्दियों तक यही प्रथा रही है कि शिक्षा का अधिकाश व्यय जनसमाज ही करता था । पिछले वर्षों में भी स्थानीय समाज ने स्कूल भवनों के लिए बड़ी उदारता से भूमि, श्रम और धन दिया है । अब इसके साथ-साथ यह भी अपेक्षित है कि स्कूल चलते रहने के लिए धन की व्यवस्था हो । कुछ धन स्थायी रूप मे मिले और कुछ नियमित रूप से बाद में मिलता रहे, केवल एक बार के लिए या प्रासंगिक न हो । इस कार्य में निहित सतत उत्तरदायित्व को किसी सीमा तक कन्धा देने योग्य बनाने के लिए राज्य को चाहिए कि वह

ऐसे अधिनियम बनाए जिनसे कि गाव पचायत आदि के स्थानीय अधिकारी शिक्षा के लिए कर लगा सकें। इस कर को स्थानीय रूप से उगाहने का फल यह होगा कि समुदाय विशेष की जिम्मेदारी ज्यादा अच्छी तरह समझी जाने लगेगी और जनता को बोध हो जाएगा कि जो कुछ भी वे देते है उसका उपयोग उनके लाभ के लिए ही होता है। ऐसा विधेयक काफी लचकीला रहना चाहिए जिससे प्रगतिशील तथा दूरदर्शी समुदायों का उदाहरण ऐसे कार्य मे दूसरे समुदायों का प्रेरक बन सकें। इस शिक्षा कर का मालगुजारी, सम्पत्ति कर आदि उचित राज्य तथा स्थानीय करो मे ऐसा सम्बन्ध हो कि समुदाय के विभिन्न हिस्से अपना भाग देने योग्य रहे।

बुनियादी शिक्षा

१४. शीघ्र विकसित होने के लिए देश मे बुनियादी शिक्षा के महत्व को अब भली-भाति स्वीकार किया जा चुका है। पहले-पहल प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में ही बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रमों पर अमल शुरू हुआ। बुनियादी शिक्षा की प्रगति और दूसरी योजना मे इस के निर्धारित लक्ष्य का विवरण इस प्रकार है :—

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१
स्कूल	१,७५१	१०,०००	३८,४००
भर्ती	१,८५,०००	११,००,०००	४२,२४,०००
प्रशिक्षण स्कूल	११४	४४६	७२६

विभिन्न राज्यों मे स्थिति बहुत भिन्न है। सब मिलाकर प्रगति पर्याप्त द्रुत प्रतीत होती है परन्तु जब देखते हैं कि प्रारम्भिक शिक्षा का बुनियादी पद्धति के आधार पर आमूल नवीकरण किया जाना है, तब प्रक्रिया अभी तक बहुत आगे बढ़ी प्रतीत नहीं होती। १९५०-५१ में बुनियादी स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों की संख्या, प्रारम्भिक अवस्था के सब बच्चों की संख्या के १ प्रतिशत से भी कम थी। पहली योजना की अवधि की समाप्ति तक यह अनुपात लगभग ४ प्रतिशत हो गया। आशा है कि १९६०-६१ के अन्त तक यह अनुपात ११ प्रतिशत हो जाएगा। बुनियादी अध्यापकों को प्रशिक्षण की सुविधाएं देने में अधिक प्रगति हुई है। स्कूलों को बुनियादी पद्धति के लिए तैयार करने के लिए दस्तकारी तथा दूसरे छात्रोपयोगी कार्यों का अधिक मात्रा में समावेश किया जा रहा है।

१५. बुनियादी शिक्षा के फैलाव की दृष्टि से कुछ प्रशासकीय समस्याओं पर विचार करना होगा। प्रशासकीय दृष्टि से यह आवश्यक है कि शिक्षा सम्बन्धी प्रशासन से सम्बद्ध व्यक्ति नए कार्यक्रम और उसकी पूर्ति के लिए अपेक्षित परिस्थितियों से पूर्णतया परिचित हो। विद्यमान कर्मचारी मण्डल को प्रशिक्षित करना होगा। लक्ष्य यह होना चाहिए कि नई शिक्षा सम्बन्धी सेवाओं में नए भर्ती हुए व्यक्ति बुनियादी शिक्षा में प्रशिक्षण ले चुके हों। स्कूल और स्थानीय समाज को अधिकतम प्रेरणा देने के लिए प्रशासकीय रीति-नीतियों को सशोधित करना होगा।

१६ बुनियादी शिक्षको के प्रशिक्षण की व्यवस्था के लिए अध्यापन के मानदण्ड की उच्चता की गारंटी महत्वपूर्ण है। गोष्ठियों, प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रमों और अन्तर्वृत्ति (इन-सर्विस) प्रशिक्षण योजनाओं का संगठन किया जाना चाहिए और स्नातकोत्तर बुनियादी प्रशिक्षण कालेज

विश्वविद्यालयों द्वारा स्वीकृत हों, जिससे इनमे प्रशिक्षित हुए स्नातक उच्चतर व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए ऊपर जाने के अधिकारी हों। इस प्रयोजन से विविध विश्वविद्यालयों से बातचीत करनी होगी। बुनियादी संस्थाओ के लिए साहित्य निर्माण और बुनियादी शिक्षा पर प्रभाव डालने वाली विविध समस्याओं के अनुसन्धान भी अपेक्षित है। पिछले दिनों स्थापित बुनियादी शिक्षा की राष्ट्रीय संस्था इन कार्यों पर ध्यान देगी।

१७. बुनियादी शिक्षा के विस्तार मे एक बड़ी कठिनाई जो प्राय. अनुभव होती है यह है कि दूसरे प्रारम्भिक स्कूलों की शिक्षा की अपेक्षा यह महगी पड़ती है। हाल के वर्षों में हुए अनुभव के आधार पर कुछ सुझाव देना अप्रासंगिक न होगा। किसी भी नए कार्यक्रम में मितव्ययिता की आवश्यकता स्पष्ट है। बुनियादी शिक्षा के उत्पादक पहलू को शिक्षा की आवश्यकताओं के विरुद्ध न होने की सीमा तक मान्यता दी जानी चाहिए और उसे बुनियादी शिक्षा पद्धति के आवश्यक भाग के रूप मे प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जो सीमित अनुभव अभी तक हुआ है उससे प्रकट है कि जहा कही पर्याप्त सन्तोषजनक परिस्थितियो की व्यवस्था कर दी गई वहा बुनियादी शिक्षा के परिणाम उत्साहजनक रहे, तथापि इस बात पर सब सहमत है कि सर्वोत्तम परिणाम तभी प्राप्त होंगे जब कि बहुत-से राज्यों में आजकल चलने वाले पचवर्षीय स्कूलो के स्थान पर सर्वांगपूर्ण अष्टवर्षीय स्कूल अथवा एक केन्द्रीय अष्टवर्षीय स्कूल को भरने वाले अनेक पंचवर्षीय स्कूल स्थापित हों। स्कूलों मे उपस्थिति बढ़ाने के लिए कई उपाय करने आवश्यक है। स्कूल के लिए भूमि और सामान प्राप्त करने के लिए स्थानीय समाज के चन्दे को अधिकतम मात्रा में उगाहना चाहिए। अनेक बार, जब कृषि भूमि की चकबन्दी की जाती है या कृषि सहकारी समितियों का निर्माण होता है अथवा कही से ग्राम समाज के अधिकार मे भूमि का कोई टुकड़ा आता है, तो ग्राम विद्यालय को उसके कार्यों के लिए तथा पूरक आय का एक नियमित साधन प्रदान करने के लिए कुछ भूमि दी जा सकती है। निर्मित वस्तुओ की किस्म पर विशेष बल देना आवश्यक है। इससे उनको खपाने में सुगमता होगी। स्कूल अथवा समाज के उपयोग मे कच्चे माल की खपत मे स्थानीय सहकारी समितियों की सहायता लेनी चाहिए। दस्तकारी के उपकरणों की रचना मे विद्यार्थियो को यथासम्भव हिस्सा लेना चाहिए।

कृषि, ग्राम तथा लघु उद्योग, सहकारिता विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा आदि सम्बद्ध कार्यक्रमों से सम्बन्ध स्थापित करके और इस प्रकार हर एक जिले और ब्लाक की विकास योजना मे बुनियादी शिक्षा देने वाली संस्थाओं का एक सुनिश्चित स्थान बनाकर बुनियादी शिक्षा के व्यावहारिक मान और आर्थिक लाभ को भी बढाया जा सकता है। यह इस बात में भी सहायक होगा कि बुनियादी शिक्षा विकास के अन्य क्षेत्रो की आवश्यकताओ के साथ-साथ चल सके। ऐसे समन्वय के लिए यह आवश्यक है कि बुनियादी शिक्षा की परामर्शदात्री समितियो में विकास कार्य की विविध शाखाओं के प्रतिनिधि सम्मिलित रहे।

१८. सामुदायिक विकास में ग्राम स्कूलों, विशेषत. बुनियादी पद्धति के स्कूलो का प्रमुख हिस्सा है। इस प्रकार स्कूल में जिन विचारों का सूत्रपात होता है वे बच्चों के साथ अध्यापकों के सामान्य सम्पर्क द्वारा समुदाय के जीवन मे प्रविष्ट होते है। जो ग्राम निवासी स्थानीय स्कूल में जाते है और वहां होते हुए कार्य को देखते है, वे नए सुझावो को ग्रहण कर लेते है। एक स्कूल समुदाय की उन्नति में जो कुछ योग दे सकता है, उसके महत्व को बढाने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि सब उच्च बुनियादी स्कूलों के पास एक खेत और उससे सम्बद्ध एक कारखाना हो। साधारणतया लोग उदारतापूर्वक दान देकर ऐसे कार्यों को सहायता देने के लिए तैयार रहते है।

१६. ऊपर के वर्णन से यह स्पष्ट है कि प्रारम्भिक शिक्षा एक मौलिक महत्व का क्षेत्र है, जिसमे पर्याप्त समय तक नए विचारो के परीक्षण, मार्ग-दर्शक अध्ययनों का प्रारम्भ, परिणामों की जाच, और निर्णीत विधियों को बहुसंख्या मे कार्यान्वित करने की त्वरित विधियो का विकास करना आवश्यक होगा। प्रशासकीय रीति-नीति, भर्ती के नियम, पदवृद्धि की विधियों आदि में बड़े-बड़े नए मार्ग निकालने आवश्यक होगे। इन कार्यों और इस अध्याय में वर्णित अन्य कार्यों को करने के लिए शिक्षा मन्त्रालय एक बुनियादी तथा प्रारम्भिक शिक्षा परिषद की स्थापना के प्रस्ताव पर विचार कर रहा है।

माध्यमिक शिक्षा

२०. माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं पर विचार-विमर्श किया और १९५३ मे अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। आयोग ने विद्यमान माध्यमिक स्कूलो की त्रुटियो पर विचार किया और कहा कि तत्कालीन पाठ्यक्रम और अध्यापन की परम्परागत रीति विद्यार्थियों के अपने चारों ओर के संसार का अन्तदर्शन नहीं करा पाती और विद्यार्थियों के समूचे व्यक्तित्व को विकसित करने में असफल रहती है। पहले अंग्रेजी भाषा के अध्ययन पर अधिक बल दिया जाने के कारण बहुत-से दूसरे विषयो की उपेक्षा की जाने लगी थी। कक्षाओ में विद्यार्थियो की संख्या बहुत अधिक हो जाने के कारण अध्यापको और विद्यार्थियों का व्यक्तिगत सम्पर्क कम हो गया और अनुशासन तथा चरित्र-निर्माण पर पर्याप्त बल नही दिया जा सका। जब-तब आशिक सुधार आरम्भ किए गए परन्तु आवश्यकता इस बात की थी कि माध्यमिक शिक्षा पद्धति का आमूल नवीकरण हो। इसलिए माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा सम्बन्धी पाठ्यक्रमो में अपेक्षाकृत अधिक विविधता और व्यापकता लाने और अधिक सर्वांगपूर्ण पाठ्यक्रमों की—जिनमे सामान्य और व्यावसायिक दोनों प्रकार के विषय सम्मिलित हों—व्यवस्था करने के प्रस्ताव रखे। उनका यह विचार नही है कि 'सामान्य' या 'सांस्कृतिक' शिक्षा और 'व्यावहारिक', 'व्यवसायात्मक' अथवा 'टेकनीकल' शिक्षा मे कोई बनावटी विभाग क्रम विद्यमान है। आयोग ने जिस प्रशासन सम्बन्धी आदर्श की सिफारिश की है उसमे यह सुझाव विद्यमान है कि प्रारम्भिक या निम्न बुनियादी शिक्षा के चार-पांच साल के अन्तर के बाद तीन वर्ष की एक मिडिल अथवा उच्च जूनियर अथवा निम्न या माध्यमिक अवस्था और चार वर्ष की उच्च माध्यमिक अवस्था होनी चाहिए। उसके बाद पहला डिग्री पाठ्यक्रम तीन वर्ष का होना चाहिए। आयोग ने बहूद्देश्यीय स्कूलो, पृथक या बहूद्देश्यीय स्कूलों के अंगभूत औद्योगिक स्कूलों की स्थापना और देहातो मे कृषि शिक्षा के लिए विशेष सुविधा देने की सिफारिश की। सब माध्यमिक स्कूलों में भाषा, सामान्य विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, और एक समान अग के रूप मे किसी एक दस्तकारी को पाठ्यक्रमों मे सामान्यतया अपनाने की व्यवस्था का प्रस्ताव किया। इन सिफारिशों के आधार पर ही केन्द्र और राज्य सरकारों ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के लिए कार्यक्रमों का निर्धारण किया है। आधुनिक रीति से आर्थिक विकास के लिए ऐसी निर्दोष माध्यमिक शिक्षा पद्धति को आधार बनाना आवश्यक है जो बहुत-सी विभिन्न दिशाओं मे प्रवेश करा सके। आशिक रूप से इसलिए कि माध्यमिक शिक्षा का रूप पहले ही एक रेखात्मक रहा है, मैट्रिक पास लोगों मे पहले ही बेकारी बहुत बढ़ी हुई है, आर्ट कालेज अतिसकुल होते दिखाई देते है और इस पद्धति से न तो समाज को ही उचित लाभ पहुचा है न व्यक्ति को ही।

२१. दूसरी पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रमो को कार्यान्वित करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में ऐसे विज्ञ कार्यकर्त्ताओ, टेकनीशियनों और विशेषज्ञों की आवश्यकता है जिन्होंने

प्रारम्भिक या माध्यमिक शिक्षा के बाद किसी विशेष व्यवसाय की प्रौद्योगिक और व्यावसायिक शिक्षा ग्रहण की हुई हो। इस प्रकार अध्यापको, राष्ट्रीय विस्तार सामुदायिक योजना क्षेत्रो के कार्यकर्ताओ, सहकारिता कर्मचारियो, राजस्व प्रशासको, उद्योग-धन्धो, कृषि व विकास के दूसरे क्षेत्रों मे प्रौद्योगिक तथा अधीक्षक कर्मचारियो की पूर्ति मुख्यतया १४-१७ वय वर्ग में से करनी है। इस वय वर्ग मे इस समय ह्रास और कुनिर्देश की मात्रा बहुत अधिक है, जैसा कि इस तथ्य से स्पष्ट है कि मैट्रिकुलेशन या इसके समकक्ष दूसरी परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों मे से ५० प्रतिशत से अधिक अनुत्तीर्ण हो जाते हैं। इस बात पर तो सभी सहमत है कि शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रमों की विविधता वर्धमान होती रहनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों को उनकी रुचि और क्षमता के अनुसार विषयों मे प्रशिक्षण लेने के निदेश दिऐ जा सके और उनका पथप्रदर्शन किया जा सके। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रस्ताव यह है कि दस्तकारियों और विविध पाठ्यक्रमों का समावेश हो, विज्ञान के अध्यापन के लिए अपेक्षाकृत उत्तम सुविधाओ की व्यवस्था हो, बहूद्देश्यीय स्कूल और जूनियर टेकनीकल स्कूल खोले जाएं, साथ ही हाई स्कूलों को ऊंचा दर्जा देकर उच्चतर माध्यमिक स्कूल बना दिया जाए।

२२. माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन का जो आदर्श प्रस्तुत किया था उसको कार्यान्वित करने के लिए पिछले दो वर्षों से कार्य हो रहा है। पहली योजना मे इसके लिए २२ करोड़ रुपए की व्यवस्था थी, दूसरी योजना मे ५१ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इससे आशा है कि माध्यमिक शिक्षा के नवीकरण का कार्यक्रम कुछ आगे बढ़ेगा। अन्य कार्यक्रमों के अतिरिक्त वर्तमान हाई स्कूलो में से कुछ को उच्चतर माध्यमिक स्कूलो और बहूद्देश्यीय स्कूलो में परिणत करना है। पहली योजना की अवधि में लगभग २५० बहूद्देश्यीय स्कूलों की स्थापना की गई थी, दूसरी योजना की अवधि में इनकी संख्या बढाकर १,१८७ की जाएगी। हाई और उच्चतर माध्यमिक स्कूलों (जिनमें सामान्यतया मिडिल कक्षाए भी होती हैं) की सख्या १०,६०० से बढकर दूसरी योजना के अन्त तक १२,००० हो जाएगी। दूसरी योजना की अवधि तक आशा है कि १,१५० हाई स्कूल भी उच्चतर माध्यमिक स्कूल बन जाएंगे। इस प्रकार उच्चतर माध्यमिक स्कूलों की संख्या लगभग २,८०० हो जाएगी। देहातो में माध्यमिक स्तर पर कृषि शिक्षा के विकास के लिए विचार यह है कि देहाती माध्यमिक स्कूलों मे २०० अतिरिक्त कृषि पाठ्यक्रमों की व्यवस्था की जाए। दूसरी योजना काल में माध्यमिक स्तर के स्कूलो मे विद्यार्थियो की संख्या २३ लाख से बढ़कर ३१ लाख हो जाएगी।

माध्यमिक शिक्षा की समाप्ति पर विद्यार्थियो को अर्ध-प्रशिक्षित कर्मचारियो के रूप मे किसी धन्धे में लगने अथवा अपना कोई छोटा-मोटा धन्धा शुरू करने योग्य बनाने के लिए दूसरी योजना में ९० जूनियर टेकनीकल स्कूल खोलने का प्रस्ताव है। इन स्कूलो मे १४-१७ वय वर्ग के लड़कों को तीन वर्ष तक सामान्य और टेकनीकल शिक्षा तथा कारखाना सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया जाएगा।

२३. पहली योजना के अन्त में माध्यमिक स्कूलों के कर्मचारी वर्ग मे प्रशिक्षित शिक्षको का अनुपात ६० प्रतिशत था। राज्यों की योजनाओं के अनुसार आगामी पांच वर्षों में प्रशिक्षित शिक्षकों का यह अनुपात बढ़कर ६८ प्रतिशत हो जाने की आशा है। व्यावसायिक पाठ्यक्रम के लिए माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण पर बहुत ध्यान देना होगा। शिक्षा पद्धति के पुनर्निर्माण की दिशा में प्रारम्भिक और माध्यमिक स्कूलों में दस्तकारी की शिक्षा देना एक आवश्यक अंग है,

परन्तु प्रशिक्षित अध्यापको के अभाव मे ऐसे पाठ्यक्रमो की व्यवस्था की प्रगति धीमी है । शिक्षा मन्त्रालय के एक कार्यक्रम के अनुसार ५०० डिग्री वाले और १,००० डिप्लोमा वाले शिक्षको को बहूद्देश्यीय और जूनियर टेकनीकल स्कूलो के लिए प्रशिक्षण देने की योजना है । राज्यो की योजनाओ मे माध्यमिक शिक्षा के नवीकरण के लिए ४६ करोड रुपए की व्यवस्था है । उनकी योजनाओ मे हाई स्कूलो को उच्चतर माध्यमिक स्कूल बनाने, प्रयोगशालाओ और पुस्तकालयो का सुधार करने, शिक्षको को प्रशिक्षण देने तथा शिक्षण के मानदण्ड मे वृद्धि करने, अध्यापको का वेतन बढ़ाने और शिक्षा तथा व्यवसाय सम्बन्धी पथप्रदर्शन करने की आवश्यकता है ।

२४ माध्यमिक स्तर पर लडकियो की शिक्षा बहुत पिछड़ी हुई दशा में है । इस समय १४-१७ वय वर्ग की लड़कियो की कुल १ करोड़ २० लाख संख्या में से लगभग ३ प्रतिशत पढने जाती है। राज्यो की योजनाओं में लड़कियों की शिक्षा के लिए पर्याप्त व्यवस्था नही है, क्योंकि लडकियो के हाई स्कूलो की संख्या १,५०० से बढ़कर दूसरी योजना की समाप्ति तक केवल १,७०० होने की आशा है । जिन क्षेत्रों में अभी प्रवेश खुला है और अधिक हो जाने की आशा है (जैसे ग्राम सेविका, उपचारिका, स्वास्थ्य निरीक्षक, शिक्षक आदि) उन धन्धों को अपनाने योग्य बनाने के लिए लड़कियों के लिए विशेष छात्रवृत्तियों की सिफारिश की गई है । इस दिशा में लडकियो की शिक्षा को विशेष प्रोत्साहन की अपेक्षा है ।

२५. शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर एक सवाल, जिस पर अब केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदात्री परिषद की एक समिति विचार कर रही है, यह है कि बुनियादी शिक्षा और माध्यमिक शिक्षा सुधार की योजना का आपस मे क्या सम्बन्ध है ? प्रारम्भिक स्कूलो को बुनियादी स्कूलों में परिवर्तित करने का कार्यक्रम चालू कर ही दिया गया है । जैसे-जैसे यह कार्यक्रम आगे बढ़ेगा, उच्च बुनियादी और मिडिल स्कूल जो अगले स्तर के प्रतिनिधि है, अपनी पद्धतियो और पहुंच की दृष्टि से एक–दूसरे के निकटतर होते जाएगे । ऐसा सोचा जा रहा है कि उच्च बुनियादी स्तर के बाद एक बुनियादी पश्चात स्तर हो । बुनियादी पश्चात प्रशिक्षण देने वाली संस्थाओं की संख्या अभी बहुत थोड़ी है । इस कारण शिक्षा मन्त्रालय ने बुनियादी पश्चात स्कूलो के विकास की सहायता के लिए आर्थिक व्यवस्था की है । राज्यों में माध्यमिक शिक्षा के नवीकरण का कार्यक्रम ज्यों-ज्यो कार्यान्वित होता जाएगा त्यों-त्यो यह वांछित होता जाएगा कि बुनियादी पश्चात शिक्षा और अब विकसित होने वाले माध्यमिक शिक्षा के ढांचे मे निकट समन्वय स्थापित करने के उपाय सोचे जाएं ।

२६. शिक्षा पद्धति के पुनर्गठन के साथ-साथ, जो अब प्रगति पर है, शिक्षा के माध्यमिक स्तर पर हिन्दी तथा दूसरी प्रादेशिक भाषाओ के अध्ययन का महत्व अधिक बढ जाता है । इस सम्बन्ध में एक समस्या, जिस पर ध्यान गया है, यह है कि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी अध्ययन की सुविधाओं की व्यवस्था हो और हिन्दी भाषी क्षेत्रो में हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के अध्ययन की व्यवस्था हो । इस विषय मे मुख्य कठिनाई विशिष्ट भाषाओं में प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी की है । इस कमी को दूर करने के लिए शिक्षा मन्त्रालय ने अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के माध्यमिक स्कूलों मे हिन्दी अध्यापको और हिन्दी भाषी क्षेत्रो के माध्यमिक स्कूलों मे हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भाषाओ के अध्यापको की व्यवस्था के लिए कोष का प्रबन्ध कर दिया है ।

विश्वविद्यालय शिक्षा

२७ हाल के वर्षों में विश्वविद्यालयो और कालेजों मे विद्यार्थियों की संख्या की द्रुत वृद्धि का शिक्षा के मानदण्ड पर गहरा असर हुआ है । पांच वर्ष पहले विद्यार्थियों की संख्या ४,२०,०००

थी; पहली योजना की अवधि के अन्त में यह लगभग ७,२०,००० हो गई है। कला और विज्ञान में डिग्री तथा उच्च परीक्षाए पास करने वाले विद्यार्थियो की सख्या इस अन्तर में प्रति वर्ष ४१,००० से ५८,००० हो गई है। विश्वविद्यालय और कालेज की शिक्षा को उन्नत करने तथा ह्रास एव उत्तीर्ण होने में असमर्थ विद्यार्थियों के गतिरोध को कम करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग कई उपाय कर रहा है। उदाहरणार्थ, कुछ उपाय इस प्रकार है :– त्रि-वर्षीय डिग्री पाठ्यक्रम की स्थापना, प्रवचनो और गोष्ठियों का सगठन, भवनो, पुस्तकालयो और प्रयोगशालाओ मे सुधार, छात्रावासों की सुविधा की व्यवस्था, गुणी छात्रो के लिए वजीफे और शोध के लिए छात्रवृत्तियो की व्यवस्था और विश्वविद्यालय के अध्यापकों के वेतन मे वृद्धि। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि मे सात नए विश्वविद्यालय स्थापित होगे।

२८. विश्वविद्यालय की शिक्षा पर असर डालने वाली कई महत्वपूर्ण समस्याए विचाराधीन हैं। इनमे से दो का विशेष उल्लेख किया गया है। माध्यमिक स्तर पर विविधतायुक्त पाठ्यक्रम के प्रवर्त्तन से शायद आर्ट कालेजो में छात्रो की भीड़-भाड़ किसी सीमा तक घट जाए। केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त एक समिति इस विषय पर विचार कर रही है कि सार्वजनिक सेवाओ मे भर्ती के लिए डिग्री पर निर्भर किया जाए या नही, यदि किया जाए तो कहा तक। बहुत-से स्वीकृत संयुक्त कालेजो के शिक्षा के वर्तमान मानदण्ड असन्तोषजनक होना एक दूसरी समस्या है, जिस पर ध्यान दिया जा रहा है। यह आवश्यक है कि माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा के सम्बन्ध में की गई कार्रवाई से और सार्वजनिक सेवाओ के लिए की जाने वाली भर्ती की शर्तों और पद्धति में किए गए उचित परिवर्तन से विश्वविद्यालय की शिक्षा को ध्येय और दिशा की दृष्टि से ऊंचा बनाया जाए और इस प्रकार वह आर्थिक तथा सामाजिक विकास की योजनाओ के अधिक अनुकूल हो सके।

२९. दूसरी पंचवर्षीय योजना मे विश्वविद्यालय की शिक्षा के लिए कुल ५७ करोड़ रुपए की व्यवस्था है; इसमें से २२ करोड ५० लाख रुपए की व्यवस्था राज्यों की योजनाओं में और ३४ करोड ४० लाख की व्यवस्था केन्द्रीय सरकार की योजना मे है, जिसमें विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के हिस्से के २७ करोड़ रुपए भी सम्मिलित है। इस व्यय का अधिकांश विश्वविद्यालयो में टेकनीकल तथा वैज्ञानिक शिक्षा की अधिक अच्छी व्यवस्था और संगठन के लिए है। इसके अतिरिक्त टेकनीकल शिक्षा के कार्यक्रम में १३ करोड़ रुपए विश्वविद्यालय की तथा उच्चतर स्तरो पर इंजीनियरी तथा टेकनीकल शिक्षा के लिए सुरक्षित है और १० करोड रुपए छात्रवृत्तियो के लिए रखे गए है। इसके अतिरिक्त विश्वविद्यालय तथा उच्चतर स्तर पर ४ करोड़ ६० लाख रुपए कृषि शिक्षा के लिए और १० करोड़ रुपए स्वास्थ्य शिक्षा के लिए उन क्षेत्रों के कार्यक्रमो के लिए रखे गए हैं। वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसधान परिषद के कार्यक्रम तथा अन्य सम्बद्ध कार्यक्रमों में वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसधान के लिए रखे गए २० करोड़ रुपए इनके अतिरिक्त हैं।

टेकनीकल शिक्षा

३०. विकास के प्रत्येक क्षेत्र में टेकनीकल कर्मचारियो की निरन्तर अधिकाधिक संख्या में आवश्यकता होगी। डाक्टरों, कृषि तथा पशुपालन विशेषज्ञो तथा अन्य लोगों के प्रशिक्षण की सुविधाओं में वृद्धि करने के लिए जो कदम उठाए जा रहे हैं उनका वर्णन उचित अध्यायों में किया गया है। पहली योजना की अवधि में कुछ उन्नति होने पर भी इंजीनियरो तथा टेकनीकल कर्म-

चारियों की आवश्यकता की पूर्ति करना वर्तमान सस्थाओ की क्षमता से बाहर की बात होगी । दूसरी योजना की अवधि मे टेकनीकल शिक्षा के विकास की यह प्रमुख समस्या है ।

३१. टेकनीकल शिक्षा के क्षेत्र में दीर्घकालीन आयोजन करना पडा है । प्रथम योजना की अवधि मे टेकनीकल शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण उन्नति हुई । कुछ वर्ष पहले टेकनीकल शिक्षा की अखिल भारतीय परिषद ने जिन उच्च टेकनीकल सस्थानों की स्थापना की सिफारिश की थी, उनमें से पहले इंडियन इस्टिट्यूट आफ टेकनोलौजी खड़गपुर में स्थापित हो गया । इस इंस्टिट्यूट मे योजना के अनुसार १,२०० छात्रो के लिए प्राक्-स्नातक शिक्षण, और ६०० छात्रों के लिए स्नातकोत्तर एवं शोध की व्यवस्था की जाएगी । यहां विषयों की दृष्टि से बहुत व्यापक विषयों के प्रशिक्षण की सुविधाएं हैं, जैसे जलपोत निर्माण, शिल्प और सामुद्रिक इंजीनियरी, ईंधन और ज्वलन इजीनियरी, उत्पादन टेकनोलौजी, पदार्थों का यान्त्रिक प्रणयन, कृषि इंजीनियरी, भू-भौतिकी, नगर व प्रादेशिक निर्माण योजना और निर्माण शिल्प—ये विषय अपेक्षाकृत नए हैं और टेकनीकल कर्मचारियों की आवयश्कता की दृष्टि से रखे गए है। बंगलौर मे इंडियन इंस्टिट्यूट आफ साइन्स नामक संस्था का विकास वायु एवं जल सेना इंजीनियरी, शक्ति इंजीनियरी, आन्तरिक ज्वलन इजीनियरी, धातु विज्ञान और विद्युत इजीनियरिंग विषयक शोध और टेकनीकल शिक्षा के लिए किया गया है । डिग्री और डिप्लोमा पाठ्यक्रमो के लिए देश भर में कई टेकनीकल संस्थाओं का विकास किया गया है, और विभिन्न राज्यों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए नई संस्थाए स्थापित की गई है । पहली योजना के आरम्भ और अन्त में टेकनीकल शिक्षा की स्थिति का विवरण इस प्रकार है :—

इंजीनियरी और टेकनोलौजी

	१९४९-५०			१९५५-५६		
	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश	प्रतिफल	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश	प्रतिफल
स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम और अनुसन्धान सुविधाए	८	१३६	९१	१८	२७०	१९०
डिग्री अथवा समकक्ष पाठ्यक्रम	५३	४,१२०	२,२००	६०	६,०५०	३,७००
डिप्लोमा पाठ्यक्रम	८१	५,९००	२,४८०	१०८	८,७००	३,९००

३२. इस विवरण से स्पष्ट है कि संस्थाओं मे छात्रों की प्रवेश सख्या और स्नातकों की प्रतिफल सख्या में १९४९-५० की अपेक्षा ५० प्रतिशत वृद्धि हुई है । १९४७ की अपेक्षा तो यह वृद्धि तिगुनी है । वर्तमान प्रवेश सख्या के आधार पर १९५८-५९ में और इसके पश्चात ४,६०० स्नातक और ५,२२० डिप्लोमा लेने वाले इन संस्थाओं से प्राप्त होने लगेंगे । १९५० के अंको से ये अंक दुगने है । संख्या वृद्धि के साथ-साथ प्रशिक्षण के मानदण्ड की उत्कृष्टता में उन्नति का भी ध्यान रखा गया है । शिक्षा में उत्कृष्टता की समस्या की कठिन कोर शिक्षा संस्थाओं में योग्यतर कर्मचारियों, श्रेष्ठतर साज-सामान और अधिक सुविधाजनक आवास स्थान का होना है । टेकनीकल शिक्षा की अखिल भारतीय परिषद और उसकी प्रादेशिक समितियों ने देश की विभिन्न संस्थाओं की स्थिति का, उनकी कमियों, पाठ्यक्रमों, मानदण्डों और आवश्यक सुधारों

का व्यापक अध्ययन किया है। परिषद के प्रतिवेदनों के आधार पर केन्द्रीय सरकार ने संस्थाओं को अलग-अलग पर्याप्त अनुदान दिए हैं।

३३. विशिष्ट क्षेत्रो मे सुविधाओ के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है। प्रबन्ध शिक्षा और प्रशिक्षण की एक योजना को, जिसमे औद्योगिक इजीनियरी, औद्योगिक प्रशासन, और व्यावसायिक प्रबन्ध सम्मिलित है, सात चुने हुए केन्द्रो मे कार्यान्वित किया गया है और उद्योग व व्यापार संस्थाओं के साथ मिलकर इन विषयो के प्रशिक्षण के समन्वित विकास के लिए एक प्रबन्ध प्रशिक्षण बोर्ड की स्थापना की गई है। हैदराबाद में एक प्रशासनिक कर्मचारी कालेज और वैज्ञानिक प्रबन्ध को उन्नत करने के लिए एक संस्था की स्थापना का कार्य पर्याप्त आगे बढ चुका है। मद्रास, कलकत्ता, बम्बई और इलाहाबाद मे मुद्रण कला के लिए चार प्रादेशिक स्कूल खोले जा रहे है; ऐसे पाचवे स्कूल की योजना दिल्ली के लिए है। इंस्टिट्यूट आफ टाउन प्लेनर्स के साथ मिलकर दिल्ली मे नगर व ग्राम आयोजन का एक स्कूल खोला जा रहा है। सस्थाओ को छात्रावासो के निर्माण के लिए ब्याज रहित ऋण देने की योजना भी कार्यान्वित की जा रही है। इस योजना के पूरा हो जाने पर सात हजार छात्रो के लिए आवास की सुविधा हो जाएगी। जो छात्र विज्ञान, इजीनियरी या टेकनोलौजी में अनुसन्धान करना चाहते है, उनके लिए २०० रुपए मासिक की ५०० से अधिक अनुसन्धान छात्रवृत्तियों की स्थापना की गई है। अधिक उन्नत वैज्ञानिक अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने के लिए एक अनुसन्धान वृत्ति योजना बनाई गई है।

३४. प्रथम पंचवर्षीय योजना में किए गए उपायों के अतिरिक्त, भविष्य में टेकनीकल कर्मचारियों की बढ़ती हुई मांग के कारण टेकनीकल शिक्षा का विस्तार करना अब आवश्यक है। पिछले दो-तीन वर्षों मे जनशक्ति के आयोजन की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। सामान्यतया, वर्तमान संस्थाओं मे से अधिकाश की क्षमता से यह बाहर की बात है कि वे प्रशिक्षण के लिए वर्तमान से अधिक सख्या मे छात्रो को प्रवेश दे सके और साथ-साथ उचित मानदण्ड को भी स्थापित रख सकें।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में टेकनीकल शिक्षा के लिए ४८ करोड रुपए की व्यवस्था की गई है। इसका एक भाग प्रथम योजना में आरम्भ की गई योजनाओं के लिए है, शेष नई संस्थाओं और नए पाठ्यक्रमो को जारी रखने के लिए रखा गया है। दूसरी योजना की अवधि में इंडियन इंस्टिट्यूट आफ टेकनोलौजी, खड़गपुर को स्नातक तथा स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए पूरी तरह विकसित कर दिया जाएगा। दूसरे चुने हुए केन्द्रों में भी स्नातकोत्तरकालीन पाठ्यक्रमों और इंजीनियरी तथा टेकनोलौजी में अनुसन्धान की व्यवस्था की जाएगी। वर्तमान संस्थाओं को डिग्री और डिप्लोमा पाठ्यक्रमो के लिए विकसित करने की जो योजना कुछ वर्ष पहले आरम्भ की गई थी उसे पूरा किया जाएगा।

दूसरी योजना की अवधि में जो नए प्रयोग शुरू किए जाएगे, उनमे देश के पश्चिमी, उत्तरी और दक्षिणी प्रदेशो में उच्चतर टेकनीकल सस्थाओं की स्थापना के प्रयोग भी है। इनमें से दो बम्बई और कानपुर मे स्थापित होंगी, तीसरी सस्था का स्थान विचाराधीन है। प्रत्येक संस्था में, जब वह पूरी तरह विकसित हो जाएगी, १,२०० प्राक्-स्नातक और ६०० स्नातकोत्तर विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण कर सकेंगे।

३५ दिल्ली पोलीटेकनीक संस्था मे विषयो की व्यापकता की दृष्टि से प्रशिक्षण की सुविधाओ के विस्तार का प्रस्ताव है। इजीनियरी और टेकनोलौजी के प्रथम डिग्री और डिप्लोमा पाठ्यक्रमों की उचित सुविधा की व्यवस्था के लिए ६ संस्थाए डिग्री स्तर की और २१ संस्थाएं डिप्लोमा स्तर की स्थापित करने का विचार है। फोरमैनो के प्रशिक्षण की योजना को—जिसमें काम करने और प्रशिक्षण के अन्तर पारी-पारी से बदलते हैं—उद्योग संस्थाओ के सहयोग से कार्यान्वित किया जाएगा। ६० जूनियर टेकनीकल स्कूल खोलने की योजना का उल्लेख किया जा चुका है। प्रत्येक स्तर पर टेकनीकल शिक्षा को गुणो की दृष्टि से उन्नत करने के लिए टेकनीकल शिक्षकों के लिए प्रत्यास्मरण तथा अन्य पाठ्यक्रमों के प्रबन्ध किए जाने का प्रस्ताव किया गया है। छात्रवृत्तियों की संख्या ६३३ से बढाकर ८०० कर दी जाएगी और छात्रवृत्तियों तथा टेकनीकल अध्ययन के लिए कुछ नि शुल्क स्थानों की पर्याप्त व्यवस्था रखी गई है। १३,००० टेकनीकल विद्यार्थियों और जूनियर टेकनीकल स्कूलो के ३,३०० छात्रों के लिए अतिरिक्त छात्रावास निर्मित किए जाएंगे। मुद्रण शिल्प विज्ञान के लिए भी एक केन्द्रीय संस्था की योजना बनाई जा चुकी है और धनबाद के इडियन स्कूल आफ माइन्स एण्ड अप्लाइड ज्योलोजी का विस्तार किया जाएगा जिससे खान इजीनियरी तथा उससे सम्बद्ध विषयो म प्रशिक्षण की सुविधाएं प्राप्त हो सकेगी। ऊपर उल्लिखित विकास का परिणाम यह होगा कि विभिन्न स्तरों पर टेकनीकल पाठ्यक्रमों में प्रविष्ट होने वाले विद्यार्थियो की संख्या नीचे लिखे ढंग से बढ जाएगी :—

	१६६०-६१ तक अनुमानित प्रवेश संख्या
स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम और अनुसन्धान कार्य	५७०
प्रथम डिग्री पाठ्यक्रम	७,५५०
डिप्लोमा पाठ्यक्रम (इसमे फोरमैनों के प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम सम्मिलित है)	११,३००
जूनियर टेकनीकल स्कल	५,४००

इन अंकों का अर्थ यह है कि १६६०-६१ तक प्रति वर्ष ५,७०० स्नातक और ६,८०० डिप्लोमाधारी प्राप्त हुआ करेगे, अर्थात् पहली योजना के अन्त में प्राप्त होने वाले स्नातको की संख्या से दुगने स्नातक और तिगुने डिप्लोमाधारी होगे।

३६. योजना आयोग द्वारा नियुक्त इजीनियरिंग कर्मचारी समिति ने इस बात की जाच कर ली है कि उल्लिखित प्रशिक्षण सुविधाए पर्याप्त होंगी या नही। इस समिति की सिफारिशें भी हाल ही मे मिली है। समिति इस परिणाम पर पहुंची है कि दूसरी योजना में इंजीनियरी प्रशिक्षण की प्रस्तावित सुविधाओं के अलावा, कुछ अतिरिक्त इंजीनियर स्नातकों को नागरिक, यांत्रिक, वैद्युतिक तार-संचार सम्बन्धी, धातु विज्ञान सम्बन्धी और खान इजीनियरी सम्बन्धी सेवाओं के प्रशिक्षण की और नागरिक, यांत्रिक तथा विद्युत इंजीनीयरिंग क्षेत्र में ६,२२५ डिप्लोमा धारियों को प्रशिक्षण की और अधिक सुविधाएं प्रदान करनी होंगी। यदि विशेष उपाय न किए गए तो दूसरी योजना की अवधि के बाद वाले वर्षों में और तीसरी योजना में कर्मचारी वर्ग की कमी अधिक बढ जाएगी। समिति की सिफारिश है कि वर्तमान सस्थाओ की क्षमता में स्नातक प्रशिक्षण में २० प्रतिशत और डिप्लोमा प्रशिक्षण में २५ प्रतिशत की वृद्धि की जाए। यह भी सुझाव है कि देश के विभिन्न भागों में १८ इंजीनियरी कालेज तथा ६२ इजीनियरी स्कूल

श्रौर स्थापित किए जाए । इन सुझावों को कार्यान्वित करने के लिए, जिन पर लगभग १० करोड रुपया व्यय होगा, विचार हो रहा है ।

३७. प्रवीण मजदूरों, फोरमैनो तथा अन्य निरीक्षक कर्मचारियों की बढ़ती हुई मांग को भी दूसरी योजना की अवधि में पूरा करना होगा । श्रम मन्त्रालय का एक कार्यक्रम शिल्पियों की सख्या को प्रतिवर्ष २०,००० बढ़ा देने का है, श्रौर दस्तकारी प्रशिक्षको के प्रशिक्षण के लिए दो संस्थाए स्थापित की जा रही हैं । अप्रेटिसों के प्रशिक्षण की सुविधाश्रों को बड़े पैमाने पर विकसित करना पड़ेगा श्रौर इस क्षेत्र में एक अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण कर्तव्य अधिक संगठित निजी धन्धों श्रौर सार्वजनिक उद्योगों के व्यवस्थापकों पर है । लोहा तथा इस्पात मन्त्रालय ने एक प्रशिक्षण निदेशालय की स्थापना की है । इसका काम इस्पात के कारखानो के कर्मचारियों की जरूरत का समन्वय करना श्रौर श्रावश्यक प्रशिक्षण सुविधाश्रो की व्यवस्था करना है । रेलवे मन्त्रालय को भी जो बड़े कार्यक्रम शुरू करने है, उनको दृष्टि में रखते हुए कई नए टेकनीकल स्कूलों की स्थापना करने का विचार किया गया है ।

समाज शिक्षा

३८. १९५१ की जनगणना से ज्ञात हुश्रा था कि श्राबादी के १६·६ प्रतिशत व्यक्ति साक्षर है । यदि इसमें से १० वर्ष से कम बच्चों की सख्या निकाल भी दी जाए तो भी अनुपात २० प्रतिशत तक पहुंचता है । साक्षरता के इस अनुपात के अलावा पुरुषों (२४·९ प्रतिशत) श्रौर स्त्रियों (७·९ प्रतिशत) मे तथा शहरी श्राबादी (३४·६ प्रतिशत) श्रौर देहाती श्राबादी (१२·१ प्रतिशत) की साक्षरता के मध्य बहुत विषमता है । लोकतांत्रिक पद्धति पर द्रुत सामाजिक श्रौर श्रार्थिक प्रगति का मेल व्यापक निरक्षरता के साथ नही बैठता ।

३९. शिक्षा पद्धतियों में प्रस्तावित सुधारो को कार्यान्वित करने के साथ-साथ निरन्तर जारी रहने वाली कक्षाश्रों श्रौर विभिन्न स्तरो पर समाज शिक्षा कक्षाश्रों का विस्तार होता जाएगा । राज्यो की योजनाश्रों में साक्षरता तथा समाज शिक्षा केन्द्रों के उद्घाटन, समाज शिक्षा कार्यकर्ताश्रों तथा सगठनकर्ताश्रों के प्रशिक्षण, पुस्तकालय, साहित्य प्रकाशन, दृश्य-श्रव्य शिक्षा की व्यवस्था श्रौर जनता कालेजों की स्थापना के कार्यक्रम सम्मिलित है । योजना में समाज शिक्षा के हिस्से में कुल रुपया लगभग १५ करोड़ है । इसमें १० करोड़ रुपया वह भी सम्मिलित है जो राष्ट्रीय विस्तार श्रौर सामुदायिक विकास कार्यक्रम में दिखाया गया है । शिक्षा मन्त्रालय समाज शिक्षा के संगठनकर्ताश्रो के प्रशिक्षण श्रौर समाज तथा बुनियादी शिक्षा से सम्बद्ध समस्याश्रों पर शोध एवं अध्ययन जारी रखने के लिए एक प्रधान शिक्षा केन्द्र खोलना चाहता है ।

यद्यपि साक्षरता निस्सन्देह महत्वपूण है, तथापि यह मानना पड़ेगा कि समाज शिक्षा के वृहत्तर विचार क्षेत्र का यह एक अंग है । समाज शिक्षा के अन्तर्गत मुख्यतया समाज की अपनी गति-विधि द्वारा अपनी समस्याश्रों के समाधान का व्यापक मार्ग विद्यमान है । साक्षरता के अलावा इसमें स्वास्थ्य, मनोरंजन तथा पारिवारिक जीवन, श्रार्थिक गतिविधि, श्रौर नागरिकता प्रशिक्षण भी सम्मिलित हैं । समूचा केन्द्रीय विस्तार श्रौर सामुदायिक विकास कार्यक्रम, समाज कल्याण विस्तार योजनाएं, जनता के सहयोग से सरकारी प्रतिनिधि संस्थाश्रों द्वारा संचालित देहाती कार्यक्रम, सर्व सेवा सघ, भारत सेवक समाज श्रादि संस्थाश्रों के कार्यक्रम, सहयोग श्रान्दोलन, ग्राम पंचायतें श्रादि सब देश में इस समय वर्तमान समाज शिक्षा श्रौर देहात सुधार की दिशा

मे राष्ट्रव्यापी प्रयत्न के विभिन्न रूप है। इस दृष्टिकोण से देखे तो समाज शिक्षा के क्षेत्र को विशेषतया केवल इस विवरण मे वर्णित आर्थिक व्यवस्थाओं से ही मापना ठीक नही होगा। तथापि विशिष्ट प्रयोजन से एक संगठित और सुव्यवस्थित गतिविधि के रूप में समाज शिक्षा एक नया कार्यक्षेत्र है। बहुत बड़ी संख्या मे विकास संस्थाए समाज शिक्षा के एक-न-एक कार्य में संलग्न हैं। उचित विशेषज्ञो द्वारा उनके कार्य की पूर्ति कराना अभीष्ट है। इसलिए राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास योजनाओं के क्षेत्रो मे इस ओर जो कदम बढ़ाया गया है उसका बहुत बड़ा महत्व है। कुछ समय तक सावधानी से पर्यवेक्षण करने से यह निश्चय हो जाएगा कि इस क्षेत्र के शहरी और देहाती दोनो इलाकों में कैसी विशेषज्ञ संस्थाओ, पद्धतियों और चातुरी की आवश्यकता है।

उच्चतर ग्राम शिक्षा

४०. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने अपने दो वर्ष पहले के प्रतिवेदन में उच्चतर स्तर पर ग्राम शिक्षा के विकास के सम्बन्ध में कई सुदूरगामी प्रस्ताव रखे थे। हाल ही में उच्चतर ग्राम शिक्षा समिति ने इस समस्या पर नए सिरे से विचार किया है और ग्राम संस्थाओ की स्थापना की सिफारिश की है। इन संस्थाओं का कार्य ग्राम समाज के लिए विभिन्न कार्य करना और विशेषतः इन कार्यों की व्यवस्था करना होगा : (क) बुनियादी-पश्चात अथवा हायर सैकण्डरी अध्ययन पूरा कर लेने वाले छात्रों को उच्चतर अध्ययन की सुविधाएं प्रदान करना, (ख) ग्राम स्वास्थ्य, कृषि और ग्राम इजीनियरी तथा अन्य लघुतर पाठ्यक्रमो के प्रमाण पत्रीय पाठ्यक्रमो की व्यवस्था करना, और (ग) अध्यापन शोध विस्तार के व्यापक कार्यक्रमों की व्यवस्था करना। ऐसा खयाल है कि ग्राम संस्थाएं सांस्कृतिक तथा प्रशिक्षण केन्द्रों और देहात मे विकास योजना के केन्द्रों का काम करेंगी। शिक्षा मन्त्रालय का विचार दूसरी पंचवर्षीय योजना मे १० ग्राम सस्थाएं स्थापित करने का है। इस काम के लिए उसने २ करोड़ रुपया रखा है। इन सस्थाओं के स्थान के लिए पहले से ही ग्राम कार्य में संलग्न केन्द्रों में से प्रमुख केन्द्र चुन लिए गए हैं। कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए केन्द्रीय सरकार ने ग्राम उच्चतर शिक्षा परिषद का निर्माण पहले ही कर दिया है।

अध्यापक

४१. अध्यापक सदा ही शिक्षा प्रणाली के चक्र में धुरी स्थान पर रहे हैं। बुनियादी परिवर्तन और नवीकरण के संक्रमण काल में यह और भी अधिक सच है। इस बात पर सामान्यतया सब सहमत हैं कि आजकल अध्यापन कार्य पर्याप्त संख्या में ऐसे लोगों को अपनी ओर आकर्षित नही करता जो अध्यापन को धन्धे के रूप मे स्वीकार करे और इस रूप में बहुत-से लोग थोड़े काल के लिए अध्यापन कार्य को अपनाते है और बाद में दूसरे धन्धो में लग जाते हैं। इसलिए शिक्षा की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण बात अभीष्ट अध्यापको की स्थिति में सुधार करना है। जो सुधार आवश्यक है वे चाहे प्रशस्ततर प्रशिक्षण के रूप में हों या अधिक वेतन व अच्छी सेवा की शर्तों के रूप मे हों, अध्यापकों की सख्या अति बहुल होने के कारण रुके रह सकते है। पहली योजना से पहले अध्यापकों की संख्या ७ लाख ३० हजार थी, १९५५-५६ में वह बढ़कर १० लाख २४ हजार हो गई है तथा १९६०-६१ तक बढ़कर १३ लाख ५६ हजार हो जाने की सम्भावना है।

४२. पहली योजना के शुरू होने से पहले प्राथमिक स्कूलों के ५९ प्रतिशत अध्यापक और सैकेण्डरी स्कूलों के ५४ प्रतिशत अध्यापक प्रशिक्षित अध्यापक थे। प्रथम योजना के अन्त तक ये

अंक क्रमश: ६४ और ५६ प्रतिशत हो गए है। अध्यापको के लिए प्रशिक्षण सुविधाओ की वृद्धि के लिए दूसरी योजना मे १७ करोड़ रुपए की व्यवस्था है और वर्तमान सस्थाओ को विकसित करने के अतिरिक्त २३१ प्रशिक्षण विद्यालय और ३० प्रशिक्षण कालेज नए स्थापित करने का विचार है। आशय यह है कि योजना की समाप्ति पर प्रशिक्षण अध्यापको का अनुपात, प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलो मे बढकर क्रमश· ७९ और ६८ प्रतिशत हो जाए। बुनियादी प्रशिक्षण कालेजों की सख्या ३३ से ७१ और बुनियादी प्रशिक्षण स्कूलो की संख्या ४४९ से ७२९ पहुच जाएगी। अनुसन्धान केन्द्र के रूप में बुनियादी शिक्षा को एक राष्ट्रीय सस्था स्थापित की जा रही है।

४३. पिछले कुछ समय से अध्यापकों की वेतनवृद्धि का प्रश्न विचाराधीन रहता आया है। यह स्वीकार किया जा चुका है कि शिक्षा पद्धति को प्रभावशाली ढग से पुनर्गठित करने के लिए अध्यापको के लिए सन्तोषजनक वेतन की व्यवस्था एक आवश्यक उपाय है। पिछले कुछ वर्षो में कई राज्यो मे अध्यापकों की वेतनवृद्धि के उपाय किए जा चुके है। स्वाभाविक बात यह है कि अध्यापकों के वेतन स्थानीय वेतन ढाचे के स्तर पर स्थिर करने होंगे ताकि उचित रूप मे प्रशिक्षित व्यक्ति अध्यापन वृत्ति की ओर आकर्षित हो सके और इसमे टिक सके। इसलिए विभिन्न राज्यों में इस समस्या का एक ही रूप नही है। अध्यापकों के वेतन की वृद्धि के प्रश्न के महत्व को स्वीकार करते हुए भी केन्द्रीय सरकार समझतो है कि इस सम्बन्ध मे अतिरिक्त व्यय उठाने की जिम्मेदारी राज्य सरकारो की है। तथापि, आगामी वित्त आयोग के प्रस्तावो के आने तक अस्थायी उपाय के रूप मे केन्द्रीय सरकार ने राज्यो की सहायता के लिए उस अतिरिक्त व्यय का ५० प्रतिशत देना स्वीकार कर लिया है जो प्राथमिक स्कूलों के अध्यापकों का वेतन स्थानीय स्थितियो के अनुसार बढ़ाने में खर्च होगा। यह भी सुझाया गया है कि माध्यमिक स्कूलो के अध्यापकों की वेतनवृद्धि पर होने वाले अतिरिक्त व्यय को पूरा करने के लिए राज्यो को चाहिए कि वे स्कूलों की इमारते बनाने पर किए जाने वाले खर्च मे यथासम्भव कमी करने की सम्भावना को देखे। उन्होने यह भी प्रस्ताव किया है कि विभिन्न राज्य एक विशेष शिक्षा उपकर लगावें जिससे कि वे वेतन क्रम मे वृद्धि करने मे समर्थ हो सके।

४४. यह तथ्य कि अध्यापक राज्य सरकारो, नगरपालिकाओं, जिला बोर्डों और निजी संस्थाओ आदि द्वारा नियुक्त है, एक ही राज्य मे अध्यापको के वेतनो, मानदण्डों, काम करने की अवस्थाओं व उन्नति और संभावनाओं मे विविधता का एक महत्वपूर्ण कारण है। यह सिफारिश की गई है कि प्रत्येक राज्य इस बात पर विचार करे कि वह प्राथमिक स्कूल के अध्यापको को उचित वर्गो में अपनी सेवा में ले आवे। जब अध्यापकों की सेवाएं उनके अपने सम्बद्ध वर्ग मे स्थानीय संस्थाओं या निजी सस्थाओं को सौंप दी जाएंगी, तो उनकी नियुक्ति की शर्ते पूरी की जाती रहेंगी। इस प्रकार राज्य सरकारें अध्यापकों को वे पूरी सहूलियतें देने में समर्थ हो सकेंगी जिनमें सुरक्षा, पेंशन, भविष्य निधि मे अंशदान, तरक्की तथा ऊंचे ग्रेड मे जाने के अवसरों और अन्य उचित सुख-सुविधाओं की व्यवस्था सम्मिलित है।

छात्रवृत्तियां

४५. शिक्षा के क्षेत्र में अपेक्षाकृत अधिक अच्छे अवसर प्रदान करने और योग्य छात्रों को शिक्षा सम्बन्धी सुविधाए देने के लिए पहली योजना की अवधि मे छात्रवृत्तियो के कुछ कार्यक्रम चालू किए गए थे। दूसरी पंचवर्षीय योजना में छात्रवृत्तियों के लिए लगभग १२ करोड़ रुपए रखे गए हैं। यह धनराशि उस राशि के अतिरिक्त है जो उन छात्रवृत्ति योजनाओ के जारी रखने

म व्यय होगी, जो इस योजना की अंग नही है। अन्य छात्रों के अलावा अनुसूचित आदिम जातियों, अनुसूचित जातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के छात्रों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की गई है। इस कार्यक्रम में मैट्रिक के बाद की छात्रवृत्तिया, शोध छात्रवृत्तिया, समुद्रपार की छात्रवृत्तिया तथा भारत में एशियाई, अफ्रीकी आदि विदेशी छात्रों के अध्ययन के लिए सास्कृतिक छात्रवृत्तियां भी सम्मिलित है।

४६. छात्रवृत्तियों के प्रमुख वर्ग इस प्रकार है :—

	छात्रवृत्तियों, वजीफों आदि की संख्या
(क) केन्द्रीय सरकार—पहले से जारी योजनाएं :	
१. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिम जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए	१,५५,०००
२ विदेशों में अध्ययन के लिए	३६१
३. विदेशी छात्रों के भारत मे अध्ययन के लिए	२,५८०
४. अन्य	३५६
(ख) केन्द्रीय सरकार—दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत	
१. अनुसूचित जातियो, अनुसूचित आदिम जातियो व अन्य पिछड़े वर्गों के लिए	७४,५००
२. मानव विज्ञान सम्बन्धी शोध कार्य के लिए	५००
३. विविध क्षेत्रों में नए कलाकारों के लिए	५००
४ विदेशों में अध्ययन के लिए	४६५
५. विदेशी छात्रों के भारत में अध्ययन के लिए	६१०
६ अन्य	१,५६०
(ग) राज्य सरकारें—(पहले से जारी योजनाएं व दूसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत) :	
१. आरम्भिक स्तर पर	२,५००
२ माध्यमिक स्तर पर	१२,०००
३. विश्वविद्यालय स्तर पर (मानव विज्ञान सबधी)	६,६००
४ टेकनीकल शिक्षा	१,२००
५. अन्य	१६,०००

४७. व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा के लिए दिए जाने वाले वजीफों का समावेश राज्यों में श्रम व उद्योग विभागो द्वारा तथा केन्द्र में श्रम मन्त्रालय द्वारा कर लिया गया है। उच्च वज्ञानिक और टेकनोलौजिकल शोध के लिए प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसंधान मन्त्रालय ने, कृषि अनुसन्धान के लिए कृषि मन्त्रालय ने, और मेडिकल शोध के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय ने वृत्तियो की व्यवस्था की है। यह कहना सर्वथा संगत होगा कि

दूसरी योजना के काल में योग्यता और प्रवृत्ति रखने वाले अधिकांश विद्यार्थी, जो उच्च शिक्षा और शोध कार्य मे लगना चाहते है, राज्य से उपयुक्त और व्यावहारिक सहायता लेने में समर्थ हो सकेंगे ।

सांस्कृतिक व अन्य कार्यक्रम

४८. शिक्षा मन्त्रालय ने सांस्कृतिक विकास व अन्य संगठन के लिए कई महत्वपूर्ण कार्यक्रम बनाए है, इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

(क) योजना मे हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओं के विकास की व्यवस्था है। हिन्दी सम्बन्धी कार्यक्रम में हिन्दी विश्वकोष बनाना, प्रामाणिक पाठ्य पुस्तकों और आरम्भिक रीडरों की रचना, हिन्दी भाषा की शिक्षा व विकास में संलग्न संस्थाओं को अनुदान देना और अहिन्दी भाषा भाषी क्षेत्रों के प्राथियों को उच्च हिन्दी शिक्षा के लिए छात्रवृत्तियां देना सम्मिलित है। केन्द्रस्थ व्यवस्थाओं के अतिरिक्त, राज्यीय योजनाओ में प्रादेशिक भाषाओं के विकास के कार्यक्रम सम्मिलित है और हिन्दी भाषा के प्रसार की भी व्यवस्था की गई है। साहित्य अकादेमी ने भी विविध भाषाओं और देश के साहित्य के विकास की योजनाएं बनाई है। सब भाषाओं की अच्छी पुस्तको को कम मूल्य पर भारतीय प्रकाशको के माध्यम से यथासम्भव अधिक से अधिक परिमाण में उपलब्ध बनाने की दृष्टि से प्रकाशित करने के लिए एक राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (नेशनल बुक ट्रस्ट) की स्थापना की जा रही है। दक्षिण भारतीय पुस्तक न्यास की स्थापना द्वारा इस दिशा मे काम आरम्भ कर दिया गया है। कुरुक्षेत्र और वाराणसी में एक सस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना की व्यवस्था भी योजना में विद्यमान है और एक प्रस्ताव यह किया गया है कि देश में संस्कृत शिक्षा की वर्तमान दशा के अनुसन्धान और इसके आगे विकास के सम्बन्ध में निदेश देने के लिए एक आयोग की नियुक्ति की जाए।

(ख) कलाओ के विकास के लिए साहित्य अकादेमी, नृत्य-नाटक और सगीत अकादेमी और ललित कला अकादेमी के कार्यक्रम बनाए गए है और उनके लिए योजना मे व्यवस्था की गई है। योजना में राष्ट्रीय रंगमंच के लिए भवन निर्माण, राष्ट्रीय बाल संग्रहालय और अन्य संग्रहालयो के विकास व पुनर्गठन, आधुनिक कला की राष्ट्रीय वीथिका के विकास, बाल भवन की स्थापना, कलकत्ता स्थित राष्ट्रीय ग्रन्थालय के विकास, दिल्ली में केन्द्रीय उद्धरण पुस्तकालय की स्थापना और राष्ट्रीय केन्द्रीय उद्धरण पुस्तकालय तथा राष्ट्रीय ग्रन्थानुक्रमणिका के प्रकाशन की व्यवस्था की गई है ।

(ग) योजना में पुरातत्व विभाग, भारत के राष्ट्रीय अभिलेख भवन और मानव विज्ञान विभाग के विकास की व्यवस्था है। भारतीय इतिहास विज्ञान का एक केन्द्रीय संस्थान स्थापित किया जाएगा और विविध राज्यों व जिले के गजेटियरों संशोधित किए जाएंगे। स्वतंत्रता आन्दोलन के इतिहास की तैयारी का काम योजना की अवधि मे पूरा किया जाना है।

(घ) औद्योगीकरण के सामाजिक प्रभाव पर दक्षिण एशिया के लिए एक शोध केन्द्र की भी योजना मे व्यवस्था है । इस केन्द्र की स्थापना भारत सरकार के सहयोग से यूनेस्को ने की है ।

४६. दूसरी योजना की अवधि के लिए नियत शिक्षा सम्बन्धी कार्यक्रमो के हमारे इस सर्वेक्षण से स्पष्ट है कि प्रत्येक क्षेत्र मे राष्ट्र के भविष्य के लिए बहुत भारी कार्यों को सम्पन्न किया जाना है । यदि स्थानीय सार्वजनिक अधिकारी और प्रत्येक स्थानीय जनसमुदाय शिक्षा के लिए बड़े-बड़े साधनों को उपलब्ध करा सकें तो अधिक सफलता मिल सकती है और जो लक्ष्य अभी दूरस्थ प्रतीत होते हैं, वे शीघ्रतर सम्पन्न किए जा सकते हैं। आर्थिक विकास को पूरी तरह जनता की भलाई का साधन बनाने के लिए शिक्षा के कार्यक्रमों को आर्थिक योजनाओं से पहले स्थान दिया जाना चाहिए । इसलिए ऐसे उपाय किए जाने चाहिएं जिनसे शिक्षा के क्षेत्र में किए गए प्रयत्नों द्वारा वर्तमान बाधाओं पर विजय प्राप्त की जा सके । शिक्षा पद्धति के पुनर्गठन की समस्या के कई व्यावहारिक तथ्य भी हैं—जैसे, जिनके लिए शिक्षा की सुविधाएं उपलब्ध हैं उनकी संख्या में वृद्धि, लड़कियों और सामान्यतः स्त्रियो के लिए अधिक अवसरो की व्यवस्था, माध्यमिक स्तर पर शिक्षा की विविधता, परम्परागत प्रारम्भिक शिक्षा के स्थान पर बुनियादी शिक्षा पद्धति का प्रचलन, समाज शिक्षा का विकास, टेकनीकल और व्यावसायिक शिक्षा की उचित व्यवस्था और विश्वविद्यालयों की शिक्षा में सुधार । इन कार्यों के पीछे अधिक मूलभूत उद्देश्य विद्यमान है । इस पिछड़ेपन को दूर करके तेजी से आगे बढने के लिए राष्ट्र को एकता, सब क्षेत्रों में सहयोग और तीव्रतम प्रयत्नों की आवश्यकता है । आधुनिक आर्थिक विकास के लिए यह अपेक्षित है कि जनता की मनोदशा अधिक वैज्ञानिक हो, श्रम के प्रति आदर भाव हो, सेवाओ में अनुशासन भावना हो और जनता की आवश्यकता के अनुसार नए टेकनीक और नए ज्ञान सहज ही स्वीकार किए जाएं । दैनिक जीवन में इन मान्यताओं और मानसिक रुख को उतना ही स्वीकार किया जाएगा जितना कि वे शिक्षा सम्बन्धी आदर्शों और व्यवहारों में प्रकट किए जाएंगे ।

अध्याय २४

वैज्ञानिक और टेकनोलौजिकल अनुसन्धान

प्रथम पचवर्षीय योजना मे राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं तथा अन्य शोध संस्थानो के निर्माण की ओर मुख्य रूप से ध्यान दिया गया था। परन्तु दूसरी योजना का प्रमुख उद्देश्य यह है कि वर्तमान सुविधाओं को विकसित किया जाए और राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं मे काम करने वाले वैज्ञानिकों और विश्वविद्यालयो तथा अन्य केन्द्रो मे अनुसन्धान करने वाले व्यक्तियों के कार्य का राष्ट्रीय विकास के विभिन्न क्षेत्रों की समस्याओ के साथ अधिकाधिक सम्बन्ध स्थापित किया जाए। ३३ विश्वविद्यालयों के अनुसन्धान विभागों के अतिरिक्त, भारत में आज वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के अधीन १४ राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं, ८८ अनुसन्धान सस्थाएं एव अनुसन्धान केन्द्र और वैज्ञानिक एव टेकनोलौजिकल अनुसन्धान के क्षेत्र में कार्य करने वाले ५४ संगठन विद्यमान हैं। परमाणु शक्ति विभाग अपने अनुसन्धान कर्मचारियों द्वारा और टाटा के मूलभूत अनुसन्धान संस्थान आदि कई अन्य शोध संस्थाओं द्वारा महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्य कर रहा है। केन्द्रीय सरकार का लक्ष्य वर्तमान अनुसन्धान सस्थाओं को सुदृढ़ करना, अनुसन्धान के लिए सुविधाओ का विस्तार करना और सृजनात्मक वैज्ञानिक कार्य के लिए अधिकाधिक अवसर प्रदान करना रहा है। प्रत्येक क्षेत्र में राष्ट्रीय सस्थानो तथा प्रादेशिक और राज्यो की संस्थाओ के कार्यों में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया जाता है। कृषि, पशु पालन और मछली पालन, वन और भूमि सरक्षण, सिंचाई और बिजली, खनिज साधनो का विकास और स्वास्थ्य सबधी अध्यायों मे उन विभिन्न विभागो के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना के काल मे अभीष्ट खोज और अनुसन्धान कार्यक्रम का विवरण दिया गया है। इस अध्याय का उद्देश्य यह बताना है कि प्रथम पचवर्षीय योजना की अवधि मे वैज्ञानिक और टेकनोलौजिकल अनुसन्धान के क्षेत्र मे कितनी उन्नति हुई है और दूसरी योजना की अवधि मे उसको कितना आगे बढ़ाने का विचार है।

२ देश की औद्योगिक और टेकनोलौजिकल उन्नति मे दूसरी योजना एक महत्वपूर्ण कदम है। विकास के हर क्षेत्र मे बहुत-सी प्रबल समस्याएं है जिनके हल करने के लिए वैज्ञानिक अध्ययन, खोज और अनुसन्धान के परिणामो को कार्यान्वित करने की आवश्यकता है। इसलिए यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, विश्वविद्यालयों और दूसरे संस्थानो में हो रहे अनुसन्धान कार्यक्रमों का समन्वय राष्ट्रीय विकास योजना की आवश्यकताओ के साथ हो। इस कार्य में योजना आयोग की सहायता के लिए एक वैज्ञानिक मडल बनाया गया है।

३. वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान की उन्नति, पथप्रदर्शन तथा समन्वय और वैज्ञानिक अनुसन्धान योजनाओ के लिए धन की व्यवस्था करना, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के प्रमुख कार्यो में से हैं। परिषद की स्थापना १९४२ मे हुई ी परन्तु इसकी गतिविधि का क्षेत्र १९४७ के बाद बहुत बढ गया। परिषद का प्रशासनाधिकार एक प्रबन्ध-कर्त्री सभा को मिला हुआ है। इसके अध्यक्ष प्रधान मंत्री और उपाध्यक्ष प्राकृतिक साधन और वैज्ञानिक अनुसन्धान मंत्रालय के मंत्री हैं। परिषद की दो स्थायी परामर्शदात्री संस्थाएं है —

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान बोर्ड और इजीनियरी अनुसन्धान बोर्ड । वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान बोर्ड परिषद की प्रबन्धक सभा को इन चार विषयों से सम्बद्ध प्रस्तावो पर परामर्श देता है (१) विशिष्ट अनुसन्धान योजनाए, (२) विविध सस्थानो मे पृथक-पृथक उद्योगों की समस्याओ का वैज्ञानिक अध्ययन, (३) स्वदेशी साधनो के सर्वेक्षण और विशिष्ट अध्ययन, और (४) नई अनुसन्धान संस्थाओ की स्थापना । बोर्ड की सहायता के लिए कई अनुसन्धान समितिया है, जैसे रासायनिक अनुसन्धान समिति, भौतिक अनुसन्धान समिति, धातु अनुसन्धान समिति, रेडियो अनुसन्धान समिति, अक-सकलन समिति, प्रतिमान और गुण नियन्त्रण समिति आदि । परिषद के अधीन अनुसन्धान कार्य उसकी अपनी प्रयोगशालाओं तथा विश्वविद्यालयो एव अन्य अनुसन्धान केन्द्रों मे भी किया जाता है । सब राष्ट्रीय प्रयोगशालाए सम्मिलित कार्य और पथप्रदर्शन अथवा परीक्षणात्मक अनुसन्धान की सुविधाए प्रदान करती हैं । परिषद द्वारा दिए गए अनुदानों से देश के विविध केन्द्रों मे काम करने वाले बहुत-से वैज्ञानिकों का कार्य भी समन्वित शोधकार्य की परिकल्पना का अंग बन सका है ।

४. हाल के वर्षो मे ज्यो-ज्यो वैज्ञानिक कार्य विस्तृत हुआ है, वैज्ञानिक जनशक्ति को पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षण देने और उपलब्ध कर्मचारियों को देश के सर्वोत्तम लाभ के लिए प्रयुक्त करने की समस्याएं तात्कालिक हो गई हैं । सात वर्ष पूर्व वैज्ञानिक जनशक्ति समिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था । तब से वैज्ञानिक जनशक्ति सम्बन्धी समस्याओं के विषय मे कोई व्यापक छानबीन नहीं हुई, यद्यपि उसक बाद बहुत-सी महत्वपूर्ण बातें हो चुकी है और दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि मे राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, परमाणु शक्ति विभाग, विश्वविद्यालयो और अनेक अनुसन्धान संस्थाओं द्वारा शुरू किए जाने वाले कार्यक्रमों को दृष्टि मे रखते हुए वैज्ञानिक जनशक्ति का फिर से पर्यवेक्षण करना आवश्यक प्रतीत होगा । भावी कार्यो से सम्बन्धित कई बातो पर विचार करना होगा, जैसे विविध क्षेत्रों की आवश्यकताओ के अनुसार कर्मचारियो की संख्याए समुन्नत करना, विशिष्टीकरण के क्षेत्र जिनमे प्रशिक्षण की व्यवस्था देश अथवा विदेश में करनी होगी, उन क्षेत्रों का निश्चय करना जिनकी ओर आगामी पाच वर्षों में अनुसन्धान कर्मचारियों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करना है और वैज्ञानिक जनशक्ति के विकास से सम्बद्ध अन्य समस्याएं ।

५. प्रथम पचवर्षीय योजना की अवधि मे वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद ने भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, धातु कर्म विज्ञान, ईंधन, काच और मृच्छिल्प (सिरेमिक्स), खाद्य टेकनोलौजी, औषधिया, विद्युत रसायन, सड़क अनुसन्धान, चमडा और भवन निर्माण अनुसन्धान क्षेत्र मे काम करने वाली राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं स्थापित करने का काम पूरा किया । पिलानी मे इलेक्ट्रोनिक्स शोध सस्था स्थापित की जा रही है और लखनऊ में एक राष्ट्रीय वनस्पति वाटिका बनाने की योजना पर काम शुरू कर दिया गया है । राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं मे मूल और व्यावहारिक शोध का काम किया जा रहा है और ये अपने-अपने क्षेत्र के उद्योगों की समस्याओ पर विशेष ध्यान देती हैं। औद्योगिक प्रतिमानीकरण से सम्बद्ध विकास कार्य से इन सब प्रयोगशालाओं का सम्बन्ध जुडा हुआ है । हर एक प्रयोगशाला का अपना अपना विस्तृत कार्यक्रम है, जिसे विशेषज्ञ समितिया बनाती हैं । इस प्रकार राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला में इलैक्ट्रोन के तापीयक्षरण तापायेनोग्दिरण (थरमियोनिक एमीशन आफ इलेक्ट्रोन्स), पर पारस्वानिकी (अल्ट्रासौनिक्स) पर, और अति न्यून तापमान पर पदार्थों के गुणों के सम्बन्ध में मूलभूत अनुसन्धान के साथ-साथ, औद्योगिक प्रतिमानों के अध्ययन, उद्योगों के लिए

और निर्माण का काम भी किया जाता है। ईंधन अनुसधान सस्थान देश मे उपलब्ध कोयले के भौतिक तथा रासायनिक गुणो के विस्तृत पर्यवेक्षण का काम जारी रखेगा और छानबीन के अन्य कामों के अतिरिक्त विविध प्रकार के कोयलो के न्यून तापमान पर कार्बनीकरण, गैर-कोक और कोक कोयले के मिश्रण और लिगनाइट के उपयोग के सम्बन्ध मे परीक्षणात्मक सयत्र कार्य भी करता रहेगा। काच और मृच्छिल्प अनुसन्धान सस्थान, मृच्छिल्प उत्पादो के स्तर के उत्कर्ष, कांचीय बालू तथा मृत्तिका की काच एवं मृच्छिल्प उद्योग सम्बन्धी उपयोगिता के अध्ययन और चीनी मिट्टी, पोर्सिलेन और झाग-काच (ग्लास-फोम) आदि के निर्माण की विधियो पर शोध कार्य जारी रखेगा। छोटे पैमाने पर चश्मो के शीशे भी बनाए जाएगे। चमडा अनुसन्धान सस्थान भारतीय कच्ची खालों और चमड़े के विकृत होने के कारणो और उसके निरोधक उपायों, चमड़े की किस्म की वृद्धि की प्रक्रियाओ और चमड़ा कमाई की नई वानस्पतिक तथा सश्लेषणात्मक वस्तुओ के निर्माण का अध्ययन करेगा। राष्ट्रीय धातुकर्म विज्ञान प्रयोगशाला, धात्वीय खनिजों के अभिशोधन, (बैनीफिकेशन आफ मैटलिक मिनरल्स) नए इस्पातो के विकास, उन दुर्लभ धातुओ के निष्कर्षण (एक्सट्रेक्शन) तथा उपयोग जो कि खनिज रूप मे भारत में पाई जाती है, स्वदेशी संसाधनो के उष्मसह प्रसाधनों के विकास आदि कार्यों को चालू रखेगी। विद्युत रसायन अनुसन्धान संस्थान ने कच्चे मेंगनीज़ से परीक्षण के स्तर पर विद्युदंशिक (इलेक्ट्रोलिटिक) मैंगनीज़ के उत्पादन का विकास कर लिया है। अन्य प्रयोगशालाओ मे भी उद्योगों के विकास पर गहरा असर करने वाले ऐसे ही कार्यक्रम चलाए जा रहे है।

परमाणु शक्ति का विकास

६. परमाणु शक्ति के क्षेत्र मे मुख्य उद्देश्य आणविक शक्ति से विद्युत शक्ति का उत्पादन और आणविक विज्ञान का कृषि, उद्योग, चिकित्सा तथा स्वास्थ्य में प्रयोग करना है। परमाणु शक्ति आयोग का संगठन १९४८ मे भारत में परमाणु शक्ति के विकास की आधार शिला रखने और परमाणु शक्ति से सम्बद्ध विज्ञान के विविध क्षेत्रो के वैज्ञानिकों के दलो के संगठन के लिए किया गया था। इस कार्य मे टाटा के मूलभूत अनुसन्धान संस्थान ने, जो १९४५ मे स्थापना काल से ही आणविक भौतिक विज्ञान तथा सम्बद्ध प्रयोगात्मक विधियो मे वैज्ञानिकों के एक दल को प्रशिक्षित कर चुका था, आयोग को सहायता दी। आयोग की क्रियाशीलता का यह परिणाम है कि अब व्यापक परिमाण में शोध तथा औद्योगिक योजना कार्यो को शुरू किया जा सका है और इस क्षेत्र के विकास कार्य को संभालने के लिए १९५४ मे एक परमाणु शक्ति विभाग की स्थापना की गई। १९५५ में ट्राम्बे मे एक परमाणु शक्ति संस्थान की स्थापना का कार्य शुरू किया गया। इस सस्थान में भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान और इंजीनियरी अनुसन्धान के लिए तीन मुख्य विभाग हैं। अपनी प्रयोगशालाओं और अपने शोध तथा प्रोटोटाइप रिएक्टरों (भट्ठियो) को स्थापित करने के अतिरिक्त संस्थान में परीक्षण के स्तर पर प्रयोगों की भी उचित सुविधाए रहेंगी। १९५५ में इस संस्थान के वैज्ञानिक कर्मचारियों की संख्या २०० थी, १९५९ तक यह सख्या बढ़ाकर ८०० कर देने की योजना है। सस्थान के कर्मचारियो द्वारा ट्राम्बे में आयोजित एवं निर्मित एक स्विमिग पूल रिएक्टर आशा है कि १९५६ के मध्य तक चालू हो जाएगा। यह प्राणि विज्ञान सम्बन्धी, चिकित्सा विज्ञान सम्बन्धी तथा औद्योगिक अनुसन्धान के लिए आइसोटोप (सस्थानी) का उत्पादन करेगा जिसे आगामी योजना कार्यों के लिए इंजीनियरों के प्रशिक्षण में प्रयुक्त किया जाएगा। कोलम्बो योजना के अधीन कैनेडा से प्राप्त एक उच्च शक्ति, उच्च कोटि परिमाणु भट्ठी (हाई पावर हाई फ्लक्स रिएक्टर) आशा है १९५८ में चालू हो जाएगी। यह कैनेडा-भारत

भट्ठी पदार्थ-जाच के लिए तथा उच्च शक्ति भट्ठियो से सम्बद्ध इंजीनियरी अनुसन्धान के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है।

७. भारतीय परमाणु शक्ति कार्यक्रम को सन्तुलित रूप से कार्यान्वित करने के लिए प्रस्ताव यह है कि देश आवश्यक पदार्थों और प्रक्रियात्मक पद्धतियों में आत्मनिर्भर हो। इसलिए इस दिशा मे यह विभाग जो कार्य कर रहा है, उनका संक्षिप्त सकेत यहां किया जा सकता है। परमाणु शक्ति कार्य के लिए आवश्यक पदार्थ यूरेनियम, थोरियम, भारी पानी, ग्रेफाइट, जिरकोनियम और बेराइल है। भूगर्भ और भूभौतिकी सम्बन्धी व्यापक सर्वेक्षण तथा जरूरी खनिज पदार्थों के पता लगाने का काम आगे बढ रहा है। तिरुवांकुर-कोचीन के मोनेज़ाइट निक्षेपो में थोरियम, यूरेनियम तथा जिरकोनियम विद्यमान हैं, और राजस्थान मे प्राप्य पैगामटाइट मे बेराइल तथा विविध रेडियमधर्मी खनिज विद्यमान है। इनके अतिरिक्त बिहार, उदयपुर, जिला नैल्लोर तथा भारत के अन्य भागो मे हाल ही मे ऐसे निक्षेप ढूढे गए है जिनमे कोलम्बाइट, टेन्टालाइट और विविध यूरेनियमवाही खनिज विद्यमान है। इस विभाग के औद्योगिक योजना कार्य इस दृष्टि से विकसित किए जा रहे हैं कि इन पदार्थों में देश की सब आवश्यकताएं शीघ्रातिशीघ्र पूरी की जा सकें। इनमें नीचे लिखे कार्य सम्मिलित हैं :–

(१) अलवाये मे स्थित मोनेज़ाइट विधायन कारखाने ने १९५२ में उत्पादन आरम्भ किया था। १९५६-६१ तक इसकी विधायन क्षमता दुगनी, अर्थात ३,००० टन मोनेजाइट प्रति वर्ष हो जाएगी। यह कारखाना थोरियम यूरेनियम युक्त अवशिष्ट पिंड के अलावा, दुर्लभ मृत्तिका (रेअर अर्थ उत्पादों) और ट्रिसोडियम फास्फेट के उत्पादन का कार्य भी करता है।

(२) ट्राम्बे स्थित थोरियम-यूरेनियम कारखाने ने १९५५ मे उत्पादन आरम्भ कर दिया था, वह अब अलवाये कारखाने में संगृहीत अवशिष्ट थोरियम-यूरेनियम पिड का विधायन और थोरियम नाइट्रेट तथा यूरेनियम का उत्पादन कर रहा है। इसका ईंधन मान प्रति वर्ष लगभग एक अरब टन कोयले के बराबर है।

८. आयोजन अथवा जाच-पड़ताल की उन्नत अवस्था में स्थित अन्य योजना कार्य, जो सम्भवत. १९६१ तक चालू हो जाएंगे, इस प्रकार है :–

(१) भारतीय ताम्र निगम के कारखाने की कतरनों से प्राप्त यूरेनियम कच्ची धातुओ के उद्धार तथा दूसरी निम्न वर्ग की यूरेनियम कच्ची धातु से लाभ उठाने के लिए एक परीक्षणात्मक मार्गदर्शक कारखाना। यह कारखाना घाटशिला में स्थापित होगा और इसकी विधायन क्षमता २०० टन प्रति दिन होगी।

(२) १९५७ तक तैयार हो जाने की आशा से ट्राम्बे मे एक यूरेनियम शुद्धिकरण सयंत्र बनाया जा रहा है जो मोनेज़ाइट से निष्कासित अशुद्ध यूरेनियम को भट्ठी में प्रयुक्त होने योग्य आणविक शुद्धता की यूरेनियम धातु मे परिवर्तित कर देने का कार्य करेगा।

(३) पंजाब स्थित नंगल में अवस्थित नए उर्वरक कारखानो में से एक में भारी जल तथा नाइट्रोजनीय उर्वरक का संयुक्त उत्पादन।

(४) उद्योगो मे प्रयोग के लिए ग्रेफाइट इलेक्ट्रोड के उत्पादन से सम्बद्ध आणविक शुद्ध ग्रेफाइट के उत्पादन का कारखाना ।

(५) खनिज बेराइल के विधायन का एक सयत्र जो बेराइलियम ओक्साइड तैयार करेगा ।

(६) पश्चिमी तट पर खनिज पदार्थो को रेणुका से पृथक करने के उद्योग के सगठन तथा उसके वैज्ञानिकन के लिए एक निगम की स्थापना ।

(७) रूटाइल और इल्मेनाइट रेत से टाइटेनियम स्पज धातु निकालने के लिए परीक्षण स्तर का एक मार्गदर्शक सयत्र; और

(८) ज़िरकोनियम धातु के उत्पादन के लिए एक संयत्र ।

वैज्ञानिक अनुसन्धान का कार्यक्रम

९. १९५३ के अन्त मे भारत सरकार ने राष्ट्रीय शोध विकास निगम की स्थापना की थी । इस निगम का काम अनुसन्धान और विकास के मध्य सम्पर्क स्थापित करना तथा यह प्रयत्न करना था कि अनुसन्धान के परिणामों का उद्योगो मे अधिक से अधिक व्यावहारिक उपयोग होता रहे । उक्त निगम उद्योगो के सहयोग से पूर्ण हुए विधायको के परीक्षणात्मक उत्पादन का काम करता है और अपने एकस्वो और अन्वेषणो की अनुज्ञप्तियां प्रदान करता है । अब तक १७७ अन्वेषणों के विकसित किए जाने का समाचार प्राप्त हुआ है ।

१०. विश्वविद्यालयों के विज्ञान विभागो को शिक्षा मन्त्रालय तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से अपनी-अपनी प्रयोगशालाओं तथा पुस्तकालयो मे उपकरणो की पूर्ति तथा निर्माण कार्यक्रमो मे और वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद से विशिष्ट शोध कार्यक्रमों व योजना कार्यों मे सहायता मिली है । रसायन शास्त्र, रेडियो तथा आणविक भौतिकी विज्ञान, ब्रह्माण्ड रश्मि तथा अन्य कई विशिष्ट क्षेत्रों में कई विश्वविद्यालयो के अनुसन्धान केन्द्रों में बहुमूल्य कार्य किया जा रहा है । योग्य तथा प्रशिक्षित वैज्ञानिक कार्यकर्ताओ की प्राप्ति के लिए विश्वविद्यालयों के अनुसन्धान केन्द्रो के महत्व को भली-भाति माना जा रहा है । दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि मे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को आशा है कि वह विश्वविद्यालय मे अनुसन्धान सुविधाओ को बढ़ाने तथा उच्चतर औद्योगिक शिक्षा के लिए १७ करोड़ की राशि दे सकेगा ।

११ भारतीय विज्ञान संस्थान, बगलौर, टाटा का मूलभूत अनुसन्धान केन्द्र बम्बई, भारतीय आणविक भौतिकी विज्ञान संस्थान, कलकत्ता, बोस अनुसन्धान सस्थान, कलकत्ता, भारतीय विज्ञान संवर्धक संस्थान, कलकत्ता, बीरबल साहनी पुरावनस्पति सस्थान, लखनऊ, और श्रीराम औद्योगिक शोध संस्थान, दिल्ली आदि अनुसन्धान संस्थानों के अपने-अपने महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्यक्रम हैं । इन संस्थाओं में शोध की सुविधाएं बढ़ाने के लिए योजना मे धन की व्यवस्था की गई है ।

१२. वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार के कार्य मे संलग्न संस्थाओ मे से भारतीय विज्ञान काग्रेस एसोसिएशन, राष्ट्रीय विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली और बगलौर स्थित भारतीय विज्ञान अकादमी उल्लेखनीय है । ये संस्थाएं पत्रिकाए प्रकाशित करती है और वैज्ञानिक विचार-विमर्श व वाद-विवाद के लिए गोष्ठियों का आयोजन करती है । आधुनिक विज्ञान की विविध शाखाओं का

भी ऐसे ही कार्य कर रहे है। इन मे से कई संस्थानो को सरकार ने या तो सीधे या बंगलौर स्थित भारतीय वैज्ञानिक सस्थान द्वारा अपनी-अपनी गतिविधि के विकास के लिए अनुदान दिए है।

१३ दूसरी पचवर्षीय योजना मे वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसन्धान परिषद के विद्यमान कार्यक्रमों को चालू करने के लिए धन की व्यवस्था करने के अतिरिक्त, विकास कार्यक्रमो के लिए २० करोड रुपए की व्यवस्था की गई है। परिषद ने हैदराबाद मे स्थित वैज्ञानिक एव औद्योगिक अनुसन्धान की केन्द्रीय प्रयोगशालाओ और कलकत्ता मे स्थित चिकित्सा शोध भारतीय संस्थान को, जिसका नाम अब भारतीय जीव रसायन और परीक्षणात्मक औषध संस्थान रख दिया गया है, अपने हाथ मे ले लिया है। जो नए सस्थान बनाए जाएगे उनमे से कुछ के नाम इस प्रकार है :— धनबाद मे खान अनुसन्धान केन्द्र, कलकत्ता के समीप किसी स्थान पर केन्द्रीय यान्त्रिक इंजीनियरी सस्थान, एक राष्ट्रीय प्राणि विज्ञान प्रयोगशाला, कलकत्ता मे एक वैज्ञानिक और औद्योगिक सग्रहालय तथा असम मे एक प्रादेशिक प्रयोगशाला। साभर (राजस्थान) में उपलब्ध कटु क्षारीय द्रवों को उपयोगी बनाने की दृष्टि से वहा एक नमक अनुसन्धान केन्द्र स्थापित किया जाना है। यह भी प्रस्ताव है कि बंगलौर स्थित वैज्ञानिक संस्थान मे गैस टर्बाइन अनुसन्धान के लिए, नई दिल्ली में वर्षा और बादलो सम्बन्धी भौतिक विज्ञान अनुसन्धान के लिए, पूना, देहरादून, कानपुर और बगलौर मे गंधयुक्त तेलों के अनुसन्धान के लिए, पवन-शक्ति के विकास के लिए, भारतीय जड़ी-बूटियों और जीव-भौतिकीय अनुसन्धान के लिए केन्द्र स्थापित किए जाएं। कोक कोयले के भण्डार को सुरक्षित रखने की दृष्टि से खनिज लोहे को पिघलाकर शुद्ध करने मे कोक कोयले के स्थान पर गैर-कोक कोयले के प्रयोग के लिए परीक्षणात्मक खोज आरम्भ की जाएगी। परिषद की अनुसन्धान समितियो ने वैज्ञानिक और टेकनोलौजिकल क्षेत्रो में इजीनियरी की विविध शाखाओं मे तथा जीवन विज्ञान सम्बन्धी विषयो मे अनुसन्धान करने के विषय मे व्यापक कार्यक्रम तैयार किए हैं।

१४. भारतीय वनस्पति विज्ञान तथा प्राणि विज्ञान सम्बन्धी सर्वेक्षण संस्थाओं ने दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि मे किए जाने वाले अपने विकास कार्यक्रम बनाए हैं तथा राष्ट्रीय एटलस की तैयारी का कार्यक्रम प्रगति पर है।

१५. अहमदाबाद वस्त्रोद्योग अनुसन्धान संस्था, भारतीय जूट उद्योग अनुसन्धान संस्था और रेशम तथा नकली रेशम उद्योग अनुसन्धान संस्था आदि प्रमुख अपवादों को छोड़कर पृथक-पृथक उद्योगों मे विशिष्ट अनुसन्धान संस्थाएं बहुत कम है। इन संस्थाओं के निर्माण और उनको चालू रखने मे वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद ने सहायता की है।

१६. विश्वविद्यालयों तथा अनुसन्धान संस्थाओं में अनुसन्धान सम्बन्धी फैलोशिप तथा छात्रवृत्तियों की एक योजना, वैज्ञानिक जनशक्ति समिति की सिफारिश पर कुछ वर्ष पहले आरम्भ की गई थी। शिक्षा मन्त्रालय और वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान परिषद अनुसन्धान कार्यरत छात्रों को बहुत-सी छात्रवृत्तियां प्रदान करते रहते हैं।

१७. विज्ञान मन्दिर के नाम से तीन देहाती वैज्ञानिक अनुसन्धान केन्द्र खोले गए हैं और इनसे प्राप्त अनुभव के आधार पर ऐसे ६० से १०० तक केन्द्र दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में खोले जाने का विचार है। विज्ञान मन्दिर पद्धति का लक्ष्य ग्रामवासियों की भलाई से

सम्बद्ध आवश्यक विषयो मे उनको सहायता व परामर्श देना और उन्हे वैज्ञानिक रीतिया सिखाना है ताकि वे कृषि, स्वास्थ्य, सफाई आदि के कार्यक्रमो से और अधिक लाभ उठा सकें। विज्ञान मन्दिर सामुदायिक विकास योजना क्षेत्रो में खोले जाएगे और देहाती लोगो मे हितकर वैज्ञानिक सूचनाओ का प्रसार करेंगे । कृषि और सार्वजनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सरल साहित्य उपलब्ध कराया जाएगा, वनस्पति रोगो और कृमियों के प्रदर्शक उदाहरण और उनके नमूने प्रदर्शन के लिए सुरक्षित रखे जाएंगे और कृमि नाशक तथा कवकमार (फंगीसाइड) दवाई छिड़कने के लिए हाथ से चलने वाली मशीनें ग्रामवासियो को दिखाई जाएगी । एक परामर्शदात्री समिति की सहायता से, जिसमे कई मंत्रालयों के प्रतिनिधि सम्मिलित है, इस योजना को कार्यान्वित किया जा रहा ।

मीटरिक प्रणाली

१८. भारत सरकार ने एक महत्वपूर्ण निर्णय किया है और उसे ससद की स्वीकृति मिल चुकी है। वह निर्णय यह है कि देश भर मे मीटरिक प्रणाली के आधार पर नाप-तोल के मानक निश्चित किए जाए। इस समय देश के विभिन्न भागों में प्रयोग में आने वाले नाप-तोल के प्रतिमानों मे बहुत भिन्नता है। केवल विभिन्न क्षेत्रो के ही नाप-तोलों मे भेद नही है, अपितु एक ही क्षेत्र की विभिन्न वस्तुओं के नाप-तोल की इकाइयो में भी अन्तर है, जैसे 'सेर' का नाप विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग है। दैनिक व्यवहार मे प्रयुक्त भार और नाप्त के प्रतिमानो में ऐसी विभिन्नता से भ्रम और कठिनाई उत्पन्न होती है।। इस विषमता के अतिरिक्त यो ही प्रचलन में आए तथा प्राय. अवैज्ञानिक नाप-तोल की इन प्रचलित पद्धतियों मे गणना की जो विषमताएं है वह एक और असुविधा है ।

१९. नाप-तोल की मीटरिक प्रणाली स्वीकार कर लेने से राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रतिमानित पद्धति का विकास होगा और इससे नाना प्रकार की गणनाए सुगम हो जाएंगी । इस प्रकार के सुधार को औद्योगीकरण की आरम्भिक अवस्था में हाथ में लेना सर्वोत्तम होगा। ऐसा करने से इस पर न्यूनतम व्यय और कम से कम गड़बड़ होगी क्योंकि देर करने से कठिनाइया बढ़ती है । इसलिए निश्चय किया गया है कि एक नियत कार्यक्रम के अनुसार इस सुधार को तत्काल आरम्भ किया जाए । इस कार्यक्रम को १०-१२ वर्षो में फैलाया जाएगा और इस अवधि के अन्त मे आशा है कि मीटरिक प्रणाली पर आश्रित नाप-तोल की इकाइया देश भर में सार्वजनिक रूप से प्रचलित हो जाएगी ।

२०. मीटरिक प्रणाली को सुगमता से अपनाने की दृष्टि से निश्चय किया गया है कि दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में दाशमिक मुद्रा पद्धति चालू की जाए। इसके लिए आवश्यक अधिनियम बन चुका है और ज्यों ही टकसालें अपेक्षित संख्या में सिक्के ढालने लगेंगी त्यों ही नए सिक्के चालू कर दिए जाएंगे । उद्योग मंत्री की अध्यक्षता में एक स्थायी मीटरिक समिति का निर्माण किया जा चुका है। केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों, उनके अधीनस्थ कई विभागों और अधिकांश राज्य सरकारों ने अपनी-अपनी मीटरिक समितियां नियुक्त की हैं जो नई पद्धति को अपनाने के लिए कार्यक्रम बनाएंगी और संक्रमण काल में आने वाली समस्याओं की ओर सतत ध्यान देंगी। स्थायी मीटरिक समिति का यह दायित्व है कि वह परिवर्तन की रीति और उसके रूप के सम्बन्ध में परामर्श दे, विभिन्न विभागों के कार्यों को समन्वित करे और सुधार के क्रियान्वित होने की प्रगति की देखभाल करे। आगामी पांच वर्षो के लिए तात्कालिक कार्यक्रम के सम्बन्ध में उठने वाली टेकनीकल कठिनाइयों के समाधान के सम्बन्ध मे मंत्रालयों

और राज्य सरकारो को परामर्श देने के लिए एक टेकनीकल उप-समिति भी नियुक्त कर दी गई है। शिक्षा और प्रचार के लिए एक अन्य उप-समिति है। स्थायी मीटरिक समिति के निर्णय केन्द्रीय सरकार के सब मत्रालयों, राज्य सरकारों और व्यापार उद्योग से सम्बद्ध सब सस्थाओं को भेजे जाते है। एक महत्वपूर्ण निर्णय इस समिति ने यह किया है कि जब कभी किसी नए संयंत्र अथवा नई मशीन का क्रयादेश दिया जाए अथवा उत्पादन की कोई नई शाखा स्थापित की जाए तो यह ध्यान रखा जाए कि जो उपकरण मगाया गया है वह और उत्पादन की जिस नई दिशा को स्थापित किया गया है उसका आधार मीटरिक प्रणाली ही हो, ताकि इनके सम्बन्ध में भविष्य मे कोई सक्रमणकालीन कठिनाई खड़ी न हो।

२१. नाप-तोल की मीटरिक प्रणाली की स्थापना के लिए एक अधिनियम बनाया जा चुका है। आशा है कि इस वर्ष यह संसद के सामने विचारार्थ प्रस्तुत होगा। सुधार को पूरा होने में तो १०-१२ वर्ष लगेंगे पर आशा है कि अगले पांच वर्षों में भी कई दिशाओं में महत्वपूर्ण प्रगति हो सकेगी। वैज्ञानिक और औद्योगिक विकास के लिए यह सुधार मौलिक महत्व रखता है, अतएव इसे शीघ्र गति से कार्यान्वित करना चाहिए। मीटरिक प्रणाली के विषय में तथा जनता को इससे होने वाले लाभों के सम्बन्ध में भरपूर प्रचार होना चाहिए। देहाती और शहरी जनता में मीटरिक प्रणाली को सर्वप्रिय बनाने के कार्य को प्राथमिकता मिलनी चाहिए और इसके विभिन्न साधनों का उपयोग होना चाहिए। राष्ट्रीय विस्तार सेवा, जिसका देहात से घना सम्पर्क रहता है, देहातियों को मीटरिक प्रणाली के लाभ समझाने का बहुत-सा काम कर सकती है, और ऐसा वात-वरण उत्पन्न कर सकती है जिसमें गांव वाले समझ-बूझकर सुधारों को स्वीकार करें।

अध्याय २५

स्वास्थ्य

दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि मे स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रमो का सामान्य उद्देश्य वर्तमान स्वास्थ्य सेवाओ का विस्तार करना तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य के स्तर मे क्रमश सुधार करना है ताकि इनसे सभी लोगो को लाभ मिल सके। विशेष उद्देश्य इस प्रकार है :—

(१) ऐसी सस्थाए स्थापित करना जो स्थानीय लोगो की और आस-पास के इलाको के लोगो की सेवा का आधार बन सके,

(२) उचित प्रशिक्षण द्वारा टेकनीकल कार्यकर्ता तैयार करना और प्रशिक्षित व्यक्तियो को काम पर लगाना,

(३) सार्वजनिक स्वास्थ्य के सुधार की दिशा मे पहले कदम के नाते ऐसी संचारी बीमारियों को रोकने के उपाय करना जो किसी वर्ग में व्यापक रूप से विद्यमान हैं,

(४) रहने की जगहो और वातावरण की सफाई का सक्रिय प्रयत्न करना; और

(५) लोगों के स्वास्थ्य स्तर को ऊचा उठाने के लिए परिवार नियोजन तथा अन्य सहायक कार्यक्रम बनाना।

चिकित्सालय सम्बन्धी सुविधाएं

२. चिकित्सालय सम्बन्धी सुविधाओं का प्रबन्ध करते हुए इन बातो का ध्यान रखा जाएगा—परिमाण, वितरण, समन्वय और किस्म। इसमे प्रभावशाली आचलिक पद्धति के आधार पर मुख्य रूप से चार प्रकार के चिकित्सालय होगे, अर्थात अध्यापन चिकित्सालय, जिला चिकित्सालय, तहसील चिकित्सालय और एक स्वास्थ्य इकाई से सम्बद्ध ग्राम चिकित्सा केन्द्र। इस पद्धति में ये चारों प्रशासनिक दृष्टि से एक-दूसरे से सम्बद्ध होगे। इस तरह की समन्वित चिकित्सा व्यवस्था से, जिसमे चिकित्सा सेवाओं और रोगियों का अबाध प्रवाह रहेगा, शहरी और देहाती दोनो इलाकों मे चिकित्सा की सन्तोषजनक सुविधा रहेगी।

३. चिकित्सालय सम्बन्धी सुविधाओ को बढाने की जरूरत तो है, परन्तु इन सुविधाओं पर होने वाले भारी व्यय को ध्यान मे रखते हुए यह भी उतना ही जरूरी है कि वर्तमान चिकित्सा सस्थाओं को सुधारा जाए और उन्हें कार्यकुशल एवं मितव्ययी बनाया जाए। वर्तमान चिकित्सालयों में कर्मचारी, स्थान, साधन तथा अन्य सामग्रियो की वृद्धि की ओर विशेष ध्यान देना भी आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त निम्न तरीकों से एक सुदूरगामी कार्यक्रम बनाया जाना है :—

(१) चिकित्सालयो की कार्यप्रणाली में समन्वय लाना;

(२) क्लिनिक, पारिवारिक चिकित्सा सस्थाओं तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य सस्थाओं के कार्यों को चिकित्सालयों के कार्यों से मिलाना;

(३) जहा सम्भव हो वहा रोगियों के निवास की औसत अवधि को कम करके चिकित्सा-लयों में प्राप्य स्थानो को शीघ्रातिशीघ्र उपलब्ध कराना,

(४) दारुण संचारी रोगो के रोगियो के लिए पृथक स्थान की व्यवस्था करना, क्योंकि वर्तमान सामान्य चिकित्सालयो मे ऐसे रोगियो को बहुत अधिक स्थान देना पड़ता है;

(५) पुराने रोगों के रोगियों के लिए सस्ती दवाओ, सस्ती सेवा-सुश्रूषा तथा अधिक स्थान देने की व्यवस्था करना; और

(६) रासायनिक चिकित्सा पद्धति और बहुत-सी बीमारियो के निरोधक उपायो मे आधुनिक उन्नति के कारण क्लिनिक तथा पारिवारिक चिकित्सा सेवाएं अधिक प्रभावजनक हो गई है, अतएव चिकित्सालयो में रोगी स्थानों की वृद्धि की अपेक्षा इन सेवाओ के विस्तार पर ध्यान देना ।

४. अनुमान लगाया गया है कि १६५१ में देश में ८,६०० चिकित्सा संस्थाए थीं, जिनमें बीमारों के लिए रोगी शैयाओ की संख्या १,१३,००० थी । १६५५-५६ में चिकित्सा संस्थाएं १०,००० और शैया सख्या १,२५,००० हो गई । इस प्रकार प्रथम योजना की अवधि में चिकित्सा संस्थाओं मे १६ प्रतिशत की और रोगी शैया सख्या में १० प्रतिशत की वृद्धि हुई । द्वितीय योजना की समाप्ति पर संस्थाओं की संख्या १,२६,०० और रोगी शैया संख्या १,५५,००० हो जाने का अनुमान है । इस प्रकार संस्थाओं की संख्या मे २६ प्रतिशत और रोगी शैया संख्या मे २४ प्रतिशत वृद्धि का अनुमान है । योजना में नए चिकित्सालय बनाने और कर्मचारी, स्थान, साधन तथा दूसरे सामान की वृद्धि कर वर्तमान चिकित्सालयो के सुधार के लिए लगभग ४३ करोड़ रुपए की व्यवस्था है ।

स्वास्थ्य इकाइयां

५. दूसरी योजना की अवधि में सबसे अधिक जरूरी काम देहाती आबादी की स्वास्थ्य रक्षा का उचित प्रबन्ध करना है । देश के सारे देहाती इलाके में राष्ट्रीय विस्तार योजना के अधीन काम शुरू करने का जो कार्यक्रम है, उसे ध्यान में रखकर यथासम्भव अधिक विकास खण्डों में प्राथमिक स्वास्थ्य इकाइया बनाना जरूरी है, ताकि देहातों के निवासियो के लिए सम्पूर्ण निरोधात्मक और उपचारात्मक स्वास्थ्य सेवा की व्यवस्था हो सके । स्वास्थ्य इकाई में कर्मचारियों की प्रस्तावित सख्या यद्यपि एक औसत दर्जे के विकास खण्ड की समग्र जनता की सेवा के लिए पर्याप्त न होगी, तथापि इस योजना की अवधि में देश भर में आरंभिक तरह के स्वास्थ्य संगठन तो स्थापित हो ही जाएंगे । आगामी योजनाओं की अवधि में स्वास्थ्य इकाइयो द्वारा परिकल्पित चिकित्सा पद्धति मे क्रमश. सुधार किए जा सकते हैं ।

६. स्वास्थ्य इकाई कार्यक्रम की अन्तिम सफलता इस बात में है कि अपेक्षित सेवाएं कितनी मात्रा मे उपलब्ध होती है । ये सेवाए निम्न है —

(१) संस्थागत और पारिवारिक चिकित्सा व्यवस्था, जिसमे रोग के निरोधात्मक भाग पर समुचित ध्यान दिया जाए और माता तथा बालक का स्वास्थ्य, स्कूल एवं संक्रामक रोग नियन्त्रण आदि विषय सम्मिलित हों,

(२) निवास स्थान तथा आस-पास के वातावरण की स्वच्छता,

(३) स्वास्थ्य शिक्षा,
(४) जीवन और स्वास्थ्य सम्बन्धी आकडो मे सुधार, और
(५) परिवार नियोजन ।

शुरू-शुरू मे मलेरिया, फाईलेरिया, तपेदिक, गुप्तांग रोग और कोढ़ के नियन्त्रण आदि के कार्य भले ही विशेष कर्मचारी करते रहे, परन्तु समुचित नियन्त्रण हो जाने के पश्चात ऐसी सेवाए भी सामान्य स्वास्थ्य इकाई की गतिविधि का एक भाग बना दी जानी चाहिएं । यदि दूसरी योजना की अवधि मे ऐसी विशिष्ट सेवा सस्थाओ और स्वास्थ्य इकाइयो की गतिविधियो में परस्पर पूरा सम्बन्ध हो सके तो इसमे बहुत सुविधा होगी । हर एक स्वास्थ्य इकाई में नियुक्त कर्मचारी ऐसे होने चाहिएं ताकि वह इकाई आधारभूत सेवाओं के साथ-साथ मलेरिया तथा अन्य रोगो से सम्बद्ध विशिष्ट सेवाएं प्रदान करने मे भी समर्थ हो सके । एक स्वास्थ्य इकाई अपने सारे इलाके में इन सेवाओ को पहुचा सके, इसके लिए परिवहन का पर्याप्त व्यावहारिक महत्व है । इससे यह सुविधा भी होगी कि हालत ज्यादा खराब होने पर रोगियो को अविलम्ब चिकित्सालयो मे पहुंचाया जा सकेगा । अच्छा तो यह है कि स्वास्थ्य इकाई की रचना और उसके कार्यो का एक आदर्श रूप ऐसा हो जो कि उदार और देश भर के लिए एक-सा हो । यथासम्भव नए औषधालय पुराने ढंग के न खोले जाए और वर्तमान औषधालयो को स्वास्थ्य इकाइयो में बदल दिया जाए ।

७. देहातों के लिए डाक्टर और दूसरे स्वास्थ्य कर्मचारी न मिलने का कारण प्रशिक्षित कर्मचारी वर्ग की कमी तो है ही, परन्तु डाक्टर तो विशेष रूप से इसलिए वहा जाने को तैयार नही होते कि वहा मकान, बच्चों की शिक्षा व अन्य सुविधाएं सन्तोषजनक नही हैं । स्वास्थ्य कर्मचारियों को देहात की ओर आकृष्ट करने के लिए यह अपेक्षित है कि इन इलाको में सेवा के लिए वातावरण अधिक आकर्षक बना दिया जाए ।

८. पहली योजना की अवधि में ७२५ स्वास्थ्य इकाइया स्थापित की गई थी, दूसरी योजना की अवधि में राष्ट्रीय विस्तार योजना तथा सामुदायिक योजना क्षेत्रो तथा दूसरे इलाको में ३,००० से अधिक स्वास्थ्य इकाइयां बनाने का विचार है । राज्य सरकारों का भी विचार है कि १३१ वर्तमान औषधालयों को प्रारम्भिक स्वास्थ्य इकाइयां और कुछ को माध्यमिक स्वास्थ्य इकाइयां बना दिया जाए । इस काम के लिए योजना में २३ करोड़ रुपए की व्यवस्था कर दी गई है ।

डाक्टरी शिक्षा

९. १९५०-५१ मे ३० चिकित्सा कालेज थे । १९५४-५५ में इनकी सख्या बढ़कर ३४ और १९५५-५६ मे ४२ हो गई । १९५०-५१ में हर वर्ष लगभग २,५०० विद्यार्थी प्रवेश पाते थे, परन्तु १९५५ तक लगभग ३,५०० विद्यार्थियों के प्रवेश की व्यवस्था हो गई । प्रशिक्षण की वर्तमान सुविधाओ के अनुसार दूसरी योजना में हर वर्ष लगभग २,५०० डाक्टर मिल सकेंगे । इस समय देश में ७० हजार डाक्टर हैं । दूसरी योजना की अवधि में इस प्रगति के अनुसार १२,५०० डाक्टर और बन सकेंगे, फिर भी ९०,००० डाक्टरों की जरूरत रहेगी । इस कमी को पूरा करने के लिए यह सोचा गया है कि दूसरी योजना की अवधि में प्रशिक्षण की सुविधाओं को बढाया जाए जिससे डाक्टरों की कमी शीघ्र पूरी हो सके ।

१० नए चिकित्सा कालेजों को पूरी तरह काम करने की अवस्था में लाने मे तो कुछ देरी लगेगी, अतएव वर्तमान कालेजों के विस्तार को प्राथमिकता दी जाएगी । चिकित्सा कालेजो और

उनसे सम्बद्ध चिकित्सालयो के विस्तार के लिए, चिकित्सा कालेजो के निरोधात्मक औषध-विभाग और मनोरोग विभाग खोलने के लिए, अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान सस्थान की पूर्ति के लिए और स्नातकोत्तर प्रशिक्षण व अनुसन्धानार्थ चिकित्सा कालेजो के कुछ विभागों का दर्जा बढ़ाने के लिए योजना मे २० करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इन विस्तार व्यवस्थाओं के कारण वार्षिक प्रवेश की सख्या मे ४०० की वृद्धि होने का अनुमान है परन्तु इस प्रकार डाक्टरों की कमी का एक छोटा-सा अंश ही पूरा होगा। इसलिए दूसरी योजना की अवधि मे कुछ नए कालेजों का खोलना आवश्यक होगा। नए चिकित्सा कालेज खोलने के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय की योजना मे ६·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

११. भारत के चिकित्सा कालेजों के अध्यापकों को इस समय निजी प्रेक्टिस करने की इजाजत है। अध्यापन के स्तर के निम्नकोटि का होने और चिकित्सा सम्बन्धी अनुसन्धान की ओर बहुत कम ध्यान होने का एक विशेष कारण यह भी है। इस परिस्थिति के सुधार के लिए भारतीय चिकित्सा परिषद ने सिफारिश की है कि चिकित्सा कालेज के हर विभाग में पूरे समय काम करने वाले अध्यापक नियुक्त किए जाएं। उपस्नातक और स्नातकोत्तर चिकित्सा शिक्षा के स्तर को उन्नत करने के लिए एव अनुसन्धान कार्य के विकास के लिए यह अपेक्षित है कि पूरे समय काम करने वाले अध्यापक नियुक्त करके चिकित्सा कालेजो को सुदृढ बनाया जाए। इस कार्य के लिए प्रत्येक कालेज को लगभग २ लाख रुपए प्रति वर्ष अधिक खर्च करने पड़ेंगे। अतएव दूसरी योजना की अवधि मे इस काम के लिए ३५ चिकित्सा कालेजो के लिए ३·५ करोड़ रुपए की व्यवस्था आवश्यक है।

दन्त चिकित्सा शिक्षा और सेवाएं

१२. देश मे योग्यताप्राप्त दन्त चिकित्सकों की कुल संख्या केवल ६०० से ७०० तक है। इस प्रकार देश मे जरूरत के लिहाज से बहुत कम दन्त चिकित्सक हैं। अतएव दन्त चिकित्सकों के प्रशिक्षण की सुविधा में पर्याप्त वृद्धि की आवश्यकता स्पष्ट है। इस समय देश में केवल ६ दन्त चिकित्सा कालेज है। इनमे भी कर्मचारी, साधन और भवन की व्यवस्था समुचित नही है। पहला कदम यह होगा कि वर्तमान दन्त चिकित्सा कालेजों की कार्यप्रणाली को अपेक्षित स्तर तक ऊचा उठाया जाए और उनमे प्रवेश संख्या को दुगुना कर दिया जाए। बम्बई राज्य में दो तथा पजाब, उत्तरप्रदेश, पश्चिम बंगाल और मद्रास मे एक-एक दन्त चिकित्सा कालेज है। एक दन्त चिकित्सा कालेज अखिल भारतीय चिकित्सा विज्ञान संस्थान दिल्ली में खोला जाएगा। दूसरी योजना की अवधि मे आध्र, बिहार, मध्यप्रदेश और पेप्सू मे नए दन्त चिकित्सा कालेज खोलने का विचार है और पश्चिम बंगाल तथा पंजाब के वर्तमान कालेजो का विस्तार भी किया जाएगा। दन्त चिकित्सा की शिक्षा के लिए योजना में २ करोड़ रुपए की व्यवस्था है।

१३. दन्त चिकित्सा सेवाओं के विस्तार के लिए यह सुझाव है कि देहाती औषधालयों में नियुक्त चिकित्सकों को चिकित्सा के लिए प्रशिक्षित किया जाए। दन्त चिकित्सको के रजिस्टर 'ब' भाग में अंकित दन्त चिकित्सको की सख्या ६,००० से ७,००० तक है। इनको और अधिक प्रशिक्षण मिलना चाहिए। इस बारे में दन्त स्वास्थ्य निरीक्षकों, दन्त वैज्ञानिको, दात सम्बन्धी मशीनो का ज्ञान तथा दन्त सम्बन्धी टेकनीकल प्रशिक्षण की व्यवस्था करना आवश्यक है। ये लोग इस समय उपलब्ध सीमित दन्त चिकित्सा सेवाओं की कुशलता में वृद्धि कर सकेंगे। दूसरी योजना की अवधि में कई जिला सदर मुकामों के चिकित्सालयों में दन्त चिकित्सक क्लिनिक स्थापित किये जाएगे।

उपचार तथा अन्य प्रशिक्षण कार्यक्रम

१४. डाक्टरो की अपेक्षा अन्य कर्मचारियो की भी बहुत कमी है और ऐसी सम्भावना है कि इन कर्मचारियो की कमी डाक्टरो की अपेक्षा ज्यादा समय तक बनी रहेगी। १९५४ के अन्त मे इस प्रकार के कर्मचारियो की संख्या विभिन्न राज्यों मे इस प्रकार थी—२०,७९३ उपचारिकाएं (नर्सें), २४,२९० प्रसाविकाएं (मिड-वाइफे), ७५६ स्वास्थ्य निरीक्षक, ४,४६८ दाइया और ९४६ उपचारिका-दाइयां। लक्ष्य यह है कि १,००० जनसंख्या के लिए एक चिकित्सालय हो, ५,००० जनसंख्या के लिए एक उपचारिका तथा एक प्रसाविका हो और २०,००० जनसंख्या के लिए एक स्वास्थ्य निरीक्षक और एक सफाई निरीक्षक हो। नीचे दी गई तालिका के अन्तिम कोष्ठक में सहायक कर्मचारियों के सम्बन्ध में दिए गए अक अभी कुछ दूर के ही हैं, तथापि उनसे वर्तमान कमी का आभास मिलता है और बोध होता है कि सभी लोगों के लिए आरम्भिक स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था करने के लिए किस द्रुत गति से और लगातार प्रयत्न करना होगा। तालिका निम्न प्रकार है —

	१९५०-५१	१९५५-५६	१९६०-६१	आवश्यक सख्या
डाक्टर	५९,०००	७०,०००	८२,५००	९०,०००
उपचारिकाएं (सहायक उपचा-रिका दाइयों सहित)	१७,०००	२२,०००	३१,०००	८०,०००
प्रसाविकाए (मिड-वाइफ)	१८,०००	२६,०००	३२,०००	८०,०००
स्वास्थ्य निरीक्षक	६००	८००	२,५००	२०,०००
उपचारिका-दाइया और दाइया	४,०००	६,०००	४१,०००	८०,०००
स्वास्थ्य सहायक और सफाई निरीक्षक	३,५००	४,०००	७,०००	२०,०००

दूसरी योजना की अवधि मे चिकित्सा कालेजों और उन बडे चिकित्सालयों में जहां शिक्षा की व्यवस्था नही है और अधिक संख्या में उपचारिकाओं, प्रसाविकाओं, फार्मेसिस्टों, सफाई निरीक्षकों और अन्य टेकनीकल लोगों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया जा रहा है। प्रशिक्षण के इन कार्यक्रमो के लिए ६ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

१५. **उपचारिकाएं**—इस समय विभिन्न प्रकार की और विभिन्न स्तर पर उपचारिका शिक्षा दी जा रही है। यह आवश्यक है कि शिक्षा एक नियत स्तर की हो, जिससे प्रशिक्षण की वर्तमान और नई सुविधाओं से अधिकतम लाभ उठाया जा सके। उपचारिकाओं के दो वर्तमान कालेज, जो उपचारिकाओं को बी० एस० सी० डिग्री तक की शिक्षा देते है, इसी प्रकार शिक्षा देते रहे और उच्च श्रेणी की उपचारिका बनाने का प्रशिक्षण कार्य करते रहें। आजकल जो ३ वर्ष का आधारभूत उपचारिका पाठ्यक्रम नियत है, जिसमे सामान्यत: ६ मास या १ वर्ष का प्रसाविका प्रशिक्षण भी जोड़ दिया जाता है, उसमें विस्तार की बहुत आवश्यकता है। उपचारिका सेवाओं का विकास भी इसी पर निर्भर है। वर्तमान उपचारिका प्रशिक्षण सस्थाओं में प्रवेश की संख्याओं को बढ़ाना होगा और प्रत्येक बड़े चिकित्सालय का उपयोग प्रशिक्षण केंद्र के रूप में करना होगा। आधारभूत प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम में उपचरण के सार्वजनिक स्वास्थ्य और परिवार नियोजन संबंधी पहलुओं की ओर झुकाव होना चाहिए।

१६. **सहायक उपचारिका-प्रसाविकाएं**—जब देश भर मे बडे-बड़े विकास कार्यक्रम हाथ मे लिए जा रहे है तो सहायक उपचारिका-प्रसाविकाओ की एक बडी सख्या अपेक्षित है। इनका पाठ्यक्रम उपचारिकाओ के पाठ्यक्रम से छोटा होगा। इस प्रकार के प्रशिक्षण की सुविधाओं को बढाना होगा और चिकित्सालय की सुविधाओ का उपयोग करना होगा। सुझाव है कि प्रसाविकाओ के प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त वर्तमान सस्थाओ को बढ़ाकर सहायक उपचारिका-प्रसाविका प्रशिक्षण केंद्र बना दिया जाए और जिले के सदर चिकित्सालयो व उन दूसरे चिकित्सालयो को जहा ५० या ५० से अधिक रोगी-शैयाए है, इस प्रशिक्षण के लिए प्रयुक्त किया जाए।

१७. होना यह चाहिए कि प्रत्येक प्रकार की उपचारिका को अपने से ऊचे प्रकार की उपचारिका का प्रशिक्षण क्रमश. मिले और वह चाहे तो इस प्रकार उपचारिका कार्य में स्नातक बन सके। उपलब्ध उपचारिका कर्मचारियो का अधिक से अधिक उपयोग प्राप्त करने की विधि यह है कि पूरे समय काम करने वाली उपचारिकाओं के अतिरिक्त अल्पकालीन कार्यकर्ताओ को भी नियुक्त किया जाए। यदि पूरे समय काम करने की शर्त लगाई जाए तो विवाह के पश्चात उपचारिकाए प्राय इस धन्धे को छोड देती है। बहुत-सी विवाहिता उपचारिकाएं अल्पकालीन सेवा करने को तैयार हो सकती है, यदि उन्हे अपना स्थान न छोडना पडे। यदि स्थानीय प्रार्थियों को प्रशिक्षण दिया जाए और उन्हे फिर किसी दूर स्थान पर न भेजकर उनके ही इलाको में नियुक्त कर दिया जाए तो उपचारिका कार्य के लिए और भी बहुत-से प्रार्थी मिल सकते है।

१८ **दाइयां**—जिन इलाकों मे दाइयो की अविलम्ब आवश्यकता है, उनमे दाइयों को प्रशिक्षित करना चाहिए। इस सम्बन्ध मे चुनाव करते हुए दाई-वर्ग की स्त्रियो को प्राथमिकता देनी होगी। पाठ्यक्रम ६ मास का होना चाहिए और इनके प्रशिक्षण का कार्य सार्वजनिक स्वास्थ्य उपचारिकाओ अथवा योग्यताप्राप्त प्रसाविका स्वास्थ्य निरीक्षको के सुपुर्द होना चाहिए।

१९. **स्वास्थ्य निरीक्षक**—स्वास्थ्य निरीक्षको के पाठ्यक्रम में प्रार्थियो की इस समय बहुत कमी है। स्वास्थ्य निरीक्षक के पाठ्यक्रम के लिए प्रसाविका प्रशिक्षण अपेक्षित है, परन्तु इसके लिए समुचित व्यवस्था का न होना उपर्युक्त कमी का एक कारण है। इस कमी का दूसरा कारण यह है कि जिन स्वास्थ्य निरीक्षको के पास सामान्य उपचारिका का प्रमाणपत्र नहीं है, उनके लिए आगे बढने का कोई मार्ग नही है। अधीक्षण और अध्यापन के पद इतने कम है कि उच्च योग्यता वाले स्वास्थ्य निरीक्षको को भी अपने क्षेत्र में उन्नति करने का अवसर नहीं है। छोटे शहरों और देहातों मे काम करने के लिए स्वास्थ्य निरीक्षको का मिलना इसलिए कठिन है कि चिकित्सालय से असम्बद्ध स्थानों मे रहने के लिए मकानो की व्यवस्था प्राय. नही होती। एक और बाधा यह है कि सेवा के लाभों म समानता नही है, भोजन, पोशाक और धुलाई के भत्ते स्वास्थ्य निरीक्षको को नही मिलते।

२०. यदि सब प्रकार के कर्मचारी (उपचारिकाएं, प्रसाविकाए और स्वास्थ्य निरीक्षक) एक ही सेवा वर्ग के हों, तो बहुत-से लाभ होगे। इस समय सार्वजनिक स्वास्थ्य उपचारिकाएं, स्वास्थ्य निरीक्षक और घरों में जाकर काम करने वाली प्रसाविकाए सदा एक सुगठित परिचारिका मण्डल के अंग नही मानी जाती। सुगठित संवर्ग बनाने के लिए कुछ सीमा तक सब कर्मचारियों के लिए एक ही आधारभूत प्रशिक्षण का होना आवश्यक है। यह मान्यता लगातार बढ़ रही है कि चिकित्सालयों और सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए परिचर्या सेवा संस्थाओं को एक संवर्ग में गठित

करना चाहिए और सब उपचारिकाओ व प्रसाविकाओ को भी सार्वजनिक स्वास्थ्य का तथा घरो में जाकर कार्य करने का प्रशिक्षण मिलना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि आगे चलकर स्वास्थ्य निरीक्षक के लिए पृथक प्रशिक्षण की आवश्यकता न रहेगी। यद्यपि सुदूरवर्ती उद्देश्य यही होगा कि स्वास्थ्य निरीक्षको का स्थान सार्वजनिक स्वास्थ्य में भी प्रशिक्षित उपचारिकाएं ग्रहण करें और प्रसाविकाओ का स्थान सहायक उपचारिका-दाइया ले, तथापि अभी स्वास्थ्य निरीक्षको की भारी कमी को देखते हुए यह उचित नही है कि स्वास्थ्य निरीक्षक प्रशिक्षण को समाप्त किया जाए। इसलिए यह अपेक्षित है कि इस प्रकार के कर्मचारियो के प्रशिक्षण की वर्तमान सुविधाओ को अधिक सशक्त बनाया जाए और समुचित रूप से विस्तृत किया जाए ताकि वर्तमान जरूरतो को भली-भाति पूरा किया जासके और परिवर्तन सुविधा से हो।

२१. **सहायक कर्मचारी मंडल**—सहायक कर्मचारी मण्डल के प्रशिक्षण कार्यक्रमो मे यह ध्यान रखना होगा कि प्रशिक्षित लोगो को प्रशिक्षण के पश्चात शीघ्रातिशीघ्र काम पर लगाया जा सके। प्रशिक्षण के लिए भर्ती यथासम्भव स्थानीय लोगो से की जाए और कम आय वाले लोगो में से योग्य विद्यार्थी अवसर से लाभ उठा सके, इस हेतु छात्रवृत्तियों की व्यवस्था होनी चाहिए। सहायक स्वास्थ्य कर्मचारियों का काम यह है कि वे डाक्टरो तथा दूसरे उच्च प्रशिक्षित कर्मचारियों के उस काम मे सहायक हों जो वे निरोधात्मक और उपचारात्मक स्वास्थ्य सेवा के सम्बन्ध में करते हों। सहायक कर्मचारियों के प्रशिक्षण और भर्ती का मुख्य उद्देश्य यह है कि जनता को स्वास्थ्य संरक्षण शीघ्रतापूर्वक और अपेक्षाकृत सस्ता प्राप्त हो सके। अधिकतर हालतों में प्रत्येक मुख्य वर्ग के पूर्ण प्रशिक्षित कर्मचारियो के साथ एक सहायक कर्मचारी की अपेक्षा है। इस प्रकार सफाई निरीक्षक सार्वजनिक स्वास्थ्य इंजीनियर का सहायक कर्मचारी है, रेडियोग्राफर रेडियोलोजिस्ट का, और प्रयोगशाला का टेकनीशियन प्रयोगशाला के प्रशिक्षित अनुसन्धान कार्यकर्ता का सहायक है। इसी प्रकार जो डाक्टर निरोधात्मक एवं उपचारात्मक चिकित्सा में संलग्न है, उसके लिए ऐसा सहायक कर्मचारी सचमुच सहायक हो सकता है जो विभिन्न निरोधात्मक कार्रवाइयों को कर सके और साथ ही प्रारम्भिक प्रकार के उपचार कर सके। स्वास्थ्य संरक्षण और चिकित्सा की उत्तम व्यवस्था के लिए यह अपेक्षित है कि सहायक कर्मचारी मण्डल पूर्ण प्रशिक्षित पेशेवर लोगो की देख-रेख मे काम करे। प्रत्येक प्रकार के सहायक कर्मचारी का कार्य विशिष्ट और सुनिरूपित होना चाहिए। ऐसे कर्मचारियों के तैयार करने का मुख्य सिद्धात यह होना चाहिए कि कर्मचारी अपने निश्चित कार्यक्षेत्र मे पूरी योग्यता से काम कर सके। यह अभिप्राय नही है कि सहायक कर्मचारी ऐसा बन जाए कि उसे विभिन्न प्रकार के स्वास्थ्य कार्यो का ऊपरी ज्ञान करा दिया जाए और वह किसी मे भी प्रवीण न हो।

२२. प्रशिक्षण कार्यक्रमो का आधार देश भर मे कुछ न्यूनतम मान प्राप्त करना होगा। भारत की चिकित्सा, दन्त चिकित्सा, उपचारिका और फार्मेसी परिषदे अपने-अपने व्यावसायिक प्रशिक्षण क्षेत्रों में इस मान पर पहुचने का प्रयत्न करती है। सफाई निरीक्षको, स्वास्थ्य सहायकों और कई दूसरे प्रकार के कार्यकर्ताओ, जैसे प्रयोगशाला टेकनीशियनो के लिए ऐसी समन्वय करने वाली संस्थाएं इस समय नहीं हैं, जो एक समान न्यूनतम मान की प्राप्ति के लिए अपेक्षित अधिकार रखती हों। यह भी जरूरी है कि विभिन्न प्रकार के सहायक कर्मचारियों को अपने-अपने विभाग में उच्चतर व्यावसायिक और प्रशासनिक पदो पर पहुचने का अवसर मिले। इसलिए उन्हे आगे, सामान्य एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण लेने का अवसर देना आवश्यक है।

(ङ) हर सस्था मे विशेष निधिया स्थापित करके जूनियर कर्मचारियो को प्रारम्भिक रूप मे अपने विचारो को क्रिया रूप देने का अवसर देना ।

२६. चिकित्सा कालेजो मे अनुसन्धान का वातावरण तैयार करने के बाद नवयुवक और प्रतिभा सम्पन्न स्नातको को अनुसन्धान की रीतियो के प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करना है। चिकित्सा कालेजों के गैर-क्लिनिकल और क्लिनिकल विभागों के जूनियर अध्यापको को अध्यापन और अनुसन्धान की रीतियो का प्रशिक्षण देने का विचार है। चिकित्सा प्रशासन मे एक प्रमुख समस्या ऐसे युवको और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियो को इस ओर आकृष्ट करने और इस बात के लिए तैयार करने की है कि वे अनुसन्धान को अपनी जीविका का साधन बनाने को तैयार हों। अतएव भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान परिषद ने अनुसन्धान सवर्ग बनाने के प्रस्ताव तैयार किए है।

२७. इससे पूर्व कि किसी एक विषय पर एक नया सस्थान खोलने का विचार किया जाए, विश्वविद्यालय के विभागो मे योग्यतम कर्मचारियो के माध्यम द्वारा अनुसन्धान इकाइयो को सहायता देकर देश में उस विषय के प्रति विशाल आधार बनाना आवश्यक है। भारतीय औषधि अनुसन्धान परिषद ने विभिन्न सस्थानो में कुछ विशिष्ट क्षेत्रो के लिए ६ अनुसन्धान इकाइया कायम की हैं। भूतकाल मे कवक विज्ञान (माइकोलौजी), परजीवि (रोग) विज्ञान (पैरासाइटौलौजी), पाएडियाट्रिक आदि रोगो के अध्ययन पर पर्याप्त ध्यान नही दिया गया है, अत: द्वितीय पचवर्षीय योजना में इनके लिए नई अनुसन्धान इकाइयो का विकास किया जाएगा। कुछ क्षेत्रों में नए सस्थानो की भी आवश्यकता है। इसी के अनुसार जीव विज्ञान के लिए एक सस्थान स्थापित करने और व्यावसायिक स्वास्थ्य के लिए एक अनुसन्धान केन्द्र खोलने की भी व्यवस्था की गई है तथा वर्तमान विरस अनुसन्धान केन्द्र को एक पूर्ण विकसित विरस अनुसन्धान सस्थान का रूप भी दिया जाना है। द्वितीय पचवर्षीय योजना की अवधि में कतिपय विशिष्ट योजनाओं के क्रियान्वय की भी व्यवस्था की गई है। इनमे आहार पोषण, औषधि अनुसन्धान, औद्योगिक स्वास्थ्य, माता और शिशु स्वास्थ्य, क्षय और पास-पडोस के वातावरण की सफाई के क्षेत्र आ जाते है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में डाक्टरी अनुसन्धान कार्यक्रम के लिए ४ करोड रुपए से भी अधिक की व्यवस्था की गई है।

२८. स्वास्थ्य प्रबन्ध मे, क्लिनिकल तथा जन स्वास्थ्य प्रयोगशालाओं की सुविधाएं देने का महत्व बढता जा रहा है। जहा कही इनकी आवश्यकता है, वहा इनकी स्थापना के लिए तथा राज्यो में वर्तमान प्रयोगशालाओ को हर दृष्टि से विकसित करने के लिए लगभग २·५ करोड रुपए की व्यवस्था की गई है। ये प्रयोगशालाए रोगो की रोकथाम के साथ-साथ खाद्यान्नों और औषधियों में होने वाली मिलावट को भी रोकेंगी।

२९. स्वास्थ्य के क्षेत्र में इस समय योग्यता प्राप्त अंक-सकलन विशेषज्ञो की बडी भारी कमी है। कुछ डाक्टरी सस्थाओं में स्वास्थ्य अंक-संकलन सम्बन्धी लघु पाठ्यक्रम की व्यवस्था रखी गई है। सिफारिश की गई है कि पढ़ाने वाली सभी डाक्टरी सस्थाओ मे इस तरह का पाठ्यक्रम रखा जाना चाहिए। अंक-संकलन में उच्च प्रशिक्षित लोगों की बहुत अधिक आवश्यकता है, विशेषकर स्वास्थ्य अक-सकलन में। इस बारे में आवश्यक व्यवस्था की जा रही है।

औषधि की देशी प्रणाली

३० देशी औषधियों की प्रणाली के विकास के लिए प्रथम पचवर्षीय योजना मे ३७ ५ लाख रुपए की व्यवस्था की गई थी, जबकि दूसरी पचवर्षीय योजना में इसके लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा १ करोड और राज्य सरकारो द्वारा ५ ५ करोड रुपया खर्च किया जाएगा । जामनगर स्थित स्नातकोत्तर सस्था, अनुसन्धान केन्द्र के विकास, पाच आयुर्वेदिक कालेजो के उद्घाटन, १३ चालू कालेजो के विस्तार, १,१०० आयुर्वेदिक औषधालयो, जडी-बूटी सग्रहालयो और दवाखानो को प्रारम्भ करने तथा २५५ चालू औषधालयो को सुधारने की भी इस योजना मे व्यवस्था की गई है । आशा है यह योजना आयुर्वेदिक सस्थाओ की क्षमता बढा देगी जिससे वे अनुसन्धान का कार्य कर सके ।

संचारी रोगों की रोकथाम

३१ प्रथम पचवर्षीय योजना मे सचारी रोगो की रोकथाम की दिशा मे कुछ प्रगति हुई थी । इन रोगों मे मलेरिया, फाइलेरियासिस, क्षय, कुष्ठ और गुप्ताग सम्बन्धी रोग मुख्य है । इन सभी रोगों से आक्रान्त स्थानो मे इनकी रोकथाम के लिए राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम बनाया जाना आवश्यक है । इन रोगो की रोकथाम के लिए प्रथम पचवर्षीय योजना में २२ करोड रुपए की व्यवस्था की गई थी, जबकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे इनकी रोकथाम के लिए ५८ करोड रुपए की व्यवस्था रखी गई है ।

३२. **मलेरिया नियंत्रण**—पहली पचवर्षीय योजना मे स्वास्थ्य कार्यक्रमो मे मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम प्रमुख था। मलेरिया-ग्रस्त क्षेत्रो में अब तक स्थापित १६२ इकाइयों में से ८४ इकाइया तीन वर्षो से अपना कार्य कर रही है । इन इकाइयों द्वारा जिन मलेरिया-ग्रस्त क्षेत्रो मे रोकथाम की गई थी उनमे ६ करोड़ व्यक्ति मलेरिया से पडित थे, परन्तु पहले वर्ष की रोकथाम के बाद ही मलेरिया-ग्रस्त रोगियों की संख्या मे २ करोड व्यक्तियों की कमी हो गई। द्वितीय पचवर्षीय योजना में मलेरिया निरोधक कार्यक्रम के जो प्रस्ताव हैं, उनकी मूलभूत बातें ये है :—

(१) मूल सक्रिय दौर की तीन वर्ष की अवधि को बढ़ाकर पाच वर्ष कर देना चाहिए ।

(२) देश मे मलेरिया से पीड़ित होने वाली कुल अनुमानित जनसंख्या को लाभ पहुंचाने के लिए इकाइयों की संख्या बढ़ाकर २०० कर दी जानी चाहिए ।

(३) पाच वर्ष बीतने पर जब कि प्रत्येक इकाई मलेरिया नियत्रण के अनुरक्षण दौर में पहुंच जाएगी, कीट़ाणुनाशक पदार्थो की आवश्यकता काफी घट जानी चाहिए ।

सामान्य अनुभव यह रहा है कि सक्रिय कार्यक्रम के पूर्णत. सफल होने में तीन वर्ष का समय लगता है । इसके बाद दो वर्ष तक और निरोधात्मक कार्य इसी प्रकार चलना चाहिए ।

३३. अब सवाल यह उठता है कि मूल सक्रिय कार्यक्रम को कहा पर खतम माना जाए, अनुरक्षण दौर कहा आरम्भ हो और बाद वाले समय में कार्रवाइया किस स्तरपर की जाए । सक्रिय कार्यक्रम की समाप्ति के मापदंड ये माने गए है :—

(१) स्थानीय मलेरिया प्रसार क्षेत्रो मे प्राकृतिक संक्रमण का अभाव,

(२) बच्चों का संक्रमण से छुटकारा, और

(३) स्थानीय मलेरिया पीड़ित लोगों का अभाव ।

जिस हद तक ऊपर दी गई बाते पूरी होगी, उसी हद तक यह स्थिर किया जा सकेगा मलेरिया नियत्रण के अनुरक्षण दौर में क्या कार्रवाइया की जाएगी । यदि उपरोक्त बाते पूरी हुई तो तीन सम्भावनाए हो सकती है :—

(१) छिड़काव को एकदम बन्द कर देना,

(२) कीटनाशक द्रव्य का उपयोग यदि उतनी ही बार करना हो तो उसकी मात्रा घटा देना, अथवा

(३) यदि मात्रा उतनी ही रखनी हो तो उपयोग उतनी बार न करना ।

उपरोक्त बातो मे से एक या अधिक को काफी बड़े इलाके मे परिणाम जानने के लिए लागू किया जा सकता है और यदि कोई दुष्परिणाम दिखाई न दें तो छिडकाव रोक दिया जाना चाहिए ।

३४. इस देश मे अभी तक इस बात का कोई सकेत नही मिला कि एनोफिलीन्स जाति के मच्छर डी० डी० टी० का अवरोध कर पाते हों परन्तु क्यूलिसीन्स जाति के मच्छरो पर उसका कम घातक प्रभाव होने की कुछ खबरे मिली है । तथापि अन्य देशो के अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि कीटनाशक द्रव्यों के प्रति एनोफिलीन्स और क्यूलिसीन्स दोनों जातियो के मच्छरो का अवरोध कुछ बढ़ गया है, लेकिन देखा यह गया है कि मलेरिया नियत्रण में जितना समय लगता है उससे अधिक समय अवरोध के विकास मे लगता है । इसलिए नियंत्रण के पर्याप्त उपाय समूचे राष्ट्र में लागू करने चाहिए और उन्हें जारी रखना चाहिए ताकि एनोफिलीन्स मच्छरों में अवरोध शक्ति उत्पन्न न होने पाए । मच्छरों पर कीटनाशक द्रव्यो के घातक प्रभाव मे कमी का सक्रिय निरीक्षण देश भर की प्रयोगशालाओं और मलेरिया पीड़ित क्षेत्रो में किया जा रहा है । सक्रिय दौर समाप्त करके अनुरक्षण दौर आरम्भ करते समय स्थिति का मूल्यांकन ही आवश्यक नहीं अपितु निरन्तर सतर्कता बनाए रखना भी आवश्यक है और यह सतर्कता समूचे अनुरक्षण दौर मे जारी रहनी चाहिए । प्रत्येक मलेरिया अवरोध इकाई के सदस्यो द्वारा नियमित छान-बीन के अलावा यह भी जरूरी समझा जा रहा है कि समय-समय पर कुछ विशिष्ट योग्य कर्मचारी दल उपर्युक्त कार्यों की परीक्षणात्मक जाच करते रहे । मूल्याकन के परिणाम का आधार बाकायदा एकत्र किए हुए मलेरिया विशेषज्ञों द्वारा स्वीकृत मलेरिया विस्तार सम्बन्धी सूचना ही होनी चाहिए । इनका सग्रह और अध्ययन इकाई और राज्य स्तर पर होना चाहिए और समूचे देश के लिए यह कार्य मलेरिया संस्थान में सम्पन्न होना चाहिए । योजना मे मलेरिया नियत्रण के लिए २८ करोड़ रुपए की व्यवस्था है ।

३५. **फाइलेरिया नियन्त्रण**—उड़ीसा राज्य में फाइलेरियासिस के परीक्षणात्मक अवरोध के लिए (क) औषधि प्रयोग, (ख) मिश्रणों द्वारा मच्छरों का निवारण, और (ग) डिभावस्था में ही कीड़ों के निवारण के उपाय चार वर्ष तक किए गए थे । इन उपायो से जो भी परिणाम निकले हैं उनसे यह स्पष्ट है कि कोई भी एक उपाय इस रोग के पूर्णत: अवरोध मे सफलता प्राप्त नहीं कर सका, यद्यपि कीड़ों को डिंभावस्था मे ही नष्ट करने के उपाय से दूसरे वर्ष के अन्त में रोग के फैलाव में कमी दिखाई देने लगी, जब कि मिश्रण द्वारा मच्छरो के उन्मूलन की प्रक्रिया से रोग के फैलाव में कमी कही बाद को जाकर दृष्टिगोचर हुई । औषधि द्वारा रोग के उपचार में प्रथम दो वर्षों में रोग के फैलाव की मात्रा में पर्याप्त कमी आ गई, किन्तु इसके बाद मात्रा में वृद्धि हो गई । इसलिए आशा है कि इन कार्यक्रमों को मिला देने से थोड़े ही दिनो

मे काफी अच्छा परिणाम निकलेगा। द्वितीय योजना मे इस कार्यक्रम के लिए निम्न योजनाए रखी गई है —

(क) सभी क्षेत्रों मे हेट्राजन का उपचार,

(ख) शहरी क्षेत्रों मे मच्छरों की वृद्धि के अवरोध के लिए मिश्रण का छिडकाव तथा इसी तरह के तीन छिडकाव देहाती क्षेत्रो मे, और

(ग) शहरी क्षेत्रों मे डिभावस्था में ही कीड़ो को रोकने का उपाय।

योजना इस आधार पर बनाई गई है कि देश के ढाई करोड़ व्यक्ति इस रोग के खतरे से बच जाए। इस रोग के खिलाफ जो सक्रिय आन्दोलन किया जाएगा उसके लिए देश के विभिन्न भागो मे जो सर्वेक्षण इकाइया काम कर रही है वे निश्चय ही अधिक पक्की सूचना देंगी। योजना मे इस बात की भी व्यवस्था है कि मलेरिया तथा फाइलेरियासिस बीमारियां जिन देहातों मे अधिकता से फैली हुई है, वहा दोहरे प्रयत्न न किए जाए। भारत मे डब्ल्यू बैनक्राफ्टी साधारणत: अधिक फैलता है और इसका ज्यादातर जोर शहरी इलाकों में होता है। शहरी क्षेत्रो मे जहा फाइलेरियासिस स्वास्थ्य की समस्या बना हुआ है, वहा चूकि सी० फैटिगन्स प्रसारक है और इस प्रसारक को स्थायी तौर से रोकने का एकमात्र उपाय भूमिगत नालियों की व्यवस्था करना होगा, इसलिए इन क्षेत्रो मे भूमिगत नालियो की व्यवस्था को प्राथमिकता देनी चाहिए। यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि ऐसे क्षेत्रों में पानी की सप्लाई की व्यवस्था के साथ-साथ भूमिगत नालियो की व्यवस्था भी की जानी चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना मे स्थापित १३ निरोध इकाइयों के जारी रखने के लिए और ६५ नई निरोध इकाइया कायम करने के लिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ९ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

३६. **क्षय रोग**—क्षय रोग नियंत्रण का कार्यक्रम निम्नलिखित प्राथमिकताओं के आधार पर प्रथम पंचवर्षीय योजना में आरम्भ किया गया था। इस कार्यक्रम मे सर्वाधिक महत्व क्षय निवारण का है।

(१) बी० सी० जी० के टीके,

(२) उपचारालय की दवा देने की और रोगियो को रखने की सेवाए,

(३) प्रशिक्षण और प्रदर्शन केन्द्र,

(४) रोगियों के पृथक्करण के लिए शैयाओ और इलाज की व्यवस्था,

(५) उपचार के बाद रक्षा और पुनर्वास।

द्वितीय पचवर्षीय योजना की अवधि में क्षय निरोध कार्यक्रम को राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम के आधार पर विस्तृत करने की व्यवस्था की गई है।

३७. द्वितीय पचवर्षीय योजना की अवधि मे सर्वसाधारण मे बी० सी० जी० के टीके लगाने के आन्दोलन को कार्यक्रम के अनुसार पूरा करने के लिए राज्यो को अपनी निश्चित योजनाए बनाने की सूचना दे दी गई है, जिसमें जनसख्या के आकार का विचार, इस कार्य के लिए आवश्यक दलों की सख्या और इसमें होने वाला खर्च भी आ जाता है। राज्यों में बी० सी० जी० के टीके लगाने का कार्य जन स्वास्थ्य कार्यक्रम के अन्तर्गत किया जाता है, इसलिए सार्वजनिक

आन्दोलन के समाप्त होने पर भी बी० सी० जी० के कार्य में लगे हुए कुछ व्यक्तियों को राज्य सरकारो के जन स्वास्थ्य विभाग मे स्थायी रूप से रख लेना चाहिए। प्रथम पंचवर्षीय योजना की समाप्ति पर ७ करोड व्यक्तियो का क्षय-परीक्षण हो जाएगा और लगभग २ करोड़ ४५ लाख व्यक्तियों को बी० सी० जी० के टीके लग जाएगे। दूसरी पचवर्षीय योजना का लक्ष्य आन्दोलन की पहली पारी मे २५ वर्ष से कम आयु के सभी सदेहास्पद लोगो की जाच पूरी कर लेना है।

३८ नई रोगाणु नाशक (एन्टीबायटिक्स) औषधि से क्षय के रोगियों का इलाज घर में ही होना सभव हो गया है, इससे उपचारालयो का महत्व भी बढ गया है। साधारणत· उपचारालय नैदानिक परामर्शदाता और निरोध इकाइयों के रूप में कार्य करने वाले समझे जाते है और वे कुछ विशेष इलाज की व्यवस्था के भी योग्य होते है। उपचारालय तब तक अपना उद्देश्य सफलतापूर्वक पूरा नही कर सकते, जब तक उनकी सख्या पर्याप्त न हो और उन में निश्चित न्यूनतम क्षमता न हो। अधिकतर कार्यरत उपचारालयो की क्षमता बहुत कम है; इनमें से कुछ ही निरोध कार्य या वास्तविक स्थानीय सेवाओ को पूरा करने के लिए साधन सम्पन्न अथवा पूरे कर्मचारियों से युक्त है। प्रथम पचवर्षीय योजना मे १६६ उपचारालय खोले गए थे, जबकि द्वितीय योजना मे २०० उपचारालयो की स्थापना और विस्तार की व्यवस्था की गई है। उद्देश्य यह है कि हर जिले के मुख्यालय में कम से कम एक उपचारालय हो। इन उपचारालयो को सफलतापूर्वक चलाने के लिए यह आवश्यक है कि इनमें क्षेत्रो की सख्या और सेवा प्राप्त करने वाली जनता की संख्या के अनुपात से पूरे समय काम करने वाले डाक्टर रखे जाने चाहिएं, जिनके साथ स्वास्थ्य निरीक्षक तथा अन्य कर्मचारी भी हो। जहा तक सम्भव हो इन उपचारालयो मे इन डाक्टरों की व्यवस्था मे या सीधे उनसे सम्बन्धित अथवा समीपस्थ किसी संस्था में रोगियो के पृथक्करण और इलाज के बिस्तरो की भी व्यवस्था हो जहा ऐसे बीमारों को रखा जाए जिनका इलाज भीड-भाड या अस्वास्थ्यकर अवस्थाओं के कारण घरों मे नही किया जा सकता।

३९ ऐसे अनेक आदर्श क्षय केन्द्रो की स्थापना करना बहुत ही महत्वपूर्ण है, जो शिक्षा और प्रदर्शन के लिए उपयोगी होंगे, क्योंकि इस समय क्षय निरोध सम्बन्धी सेवाओ का नियत्रण करने वाले व्यक्तियो का अत्यन्त अभाव है। इन केन्द्रों को मेडिकल कालेजों से सम्बन्धित करना और भी अधिक अच्छा होगा और निम्न चार विभागों से इन्हें सपन्न कर देना चाहिए. जनसाधारण के लिए एक रोगव्यापिकीय (एपीडेमियोलौजिकल) क्रिया को बताने व एक्सरे सर्वेक्षण और बी० सी० जी के टीके लगाने वाला विभाग, एक नैदानिक और इलाज उपचारालय विभाग, एक बैक्टीरियोलौजिकल विभाग और जन स्वास्थ्य परिचारिका के निदेशन में चलने वाला एक स्थानीय सेवा विभाग। इन सभी विभागों का कार्य समन्वयात्मक होना चाहिए और इन सबको क्षय निरोध कार्यो पर अधिक बल देना चाहिए। इस समय ऐसे तीन केन्द्र नई दिल्ली, पटना और त्रिवेन्द्रम में हैं, और निकट भविष्य में शीघ्र ही मद्रास तथा नागपुर में दो और खोले जाने वाले है। ऐसे ही अनेक केन्द्रों के खोले जाने की आवश्यकता है। इसलिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि मे ऐसे दस केन्द्रों के खोले जाने की व्यवस्था की गई है।

४०. संक्रामक रोगियों को अलग रखने के लिए सादगी पूर्ण और सस्ती बनी हुई संस्थाओ की स्थापना पर जोर देना होगा, विशेषत. ऐसे रोगियों के बारे में जिनको घर में अलग रखना या जिनका इलाज करना सम्भव नहीं है। ऐसी संस्थाए बनाने मे उन स्थानो को प्राथमिकता दी जानी चाहिए, जहा घनी आबादी में क्षय फैल रहा हो। जिन क्षय रोगियों को शल्य चिकित्सा की

आवश्यकता हो, उन्हे ऐसी सस्थाओ मे भेज देना चाहिए जहा सभी तरह की सुविधाए हो। द्वितीय ोजनावधि में लगभग ४,००० रोगी शैयाओ की वृद्धि होगी।

४१. क्षय पीड़ित लोगो के उपचार के बाद सेवा के लिए बस्ती बसाना और उनके पुनर्वास केन्द्र खोलने के महत्व पर बल देने की आवश्यकता नहीं है। मदनापल्ली मे ऐसी ही एक बस्ती है ो गत ३० वर्षों से कार्य कर रही है और जिसमें क्षय के ४० पूर्व रोगी कर्मचारियो के रूप मे लगे हुए हैं। पहली पचवर्षीय योजना की अवधि से पूर्व ऐसी सुविधाए शायद ही किसी दूसरे स्थान पर हो। कुछ केन्द्र प्रथम पचवर्षीय योजना के समय में स्थापित किए गए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि मे ऐसे लगभग दस केन्द्रों की स्थापना की व्यवस्था है जिनमें क्षय से मुक्ति पाए हुए लोगों को ऐसी उपयुक्त दस्तकारिया सिखाने की सुविधाएं दी जाएंगी जिन्हे वे अपने घरो मे कुटीर उद्योगों के रूप मे चला सकेंगे।

४२. द्वितीय पचवर्षीय योजना की अवधि में क्षय निरोध कार्यक्रम के लिए कुल १४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

४३. **कुष्ठ**—१९५३ में भारत सरकार द्वारा जो कुष्ठ नियंत्रण समिति नियुक्त की गई थी, उसकी रिपोर्ट के अनुसार १५ लाख व्यक्ति से कम लोग कुष्ठ रोग से पीड़ित नही होंगे। इस रोग का प्रकोप प्रदेश-प्रदेश मे विभिन्न है और २ से ४ प्रतिशत के बीच है, लेकिन किसी-किसी जिले में १० प्रतिशत तक है और कुछ गावों मे इसका प्रतिशत १५ से २० तक पहुंच गया है। इस रोग के उच्चतम प्रकोप के इलाके में सारा पूर्वी किनारा और दक्षिण प्रायद्वीप के साथ पश्चिम बंगाल, दक्षिण बिहार, उड़ीसा, मद्रास, तिरुवाकुर-कोचीन, हैदराबाद और मध्य प्रदेश भी आ जाता है। कुष्ठ रोग की रोकथाम में बुनियादी कदम बच्चों मे संक्रमण को रोकना, इसका इलाज करना और इसे बढ़ने न देना है। इस समय कुष्ठ रोगियों के इलाज के लिए उपचारालयों, औषधालयों और कुष्ठालयों की संख्या अपर्याप्त है। इस क्षेत्र में कार्य करने वाली जितनी विभिन्न एजेंसियां है, उनमें भी समन्वय की कमी है। जहां तक संभव हो घरों और गांवों में इस समय इलाज की सहूलियत देने की समस्या है। कुष्ठ उन्मूलन के राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम के लिए आवाज उठाने की भी आवश्यकता है।

४४. प्रथम पचवर्षीय योजना में इस रोग के प्रतिरोध के लिए दो मुख्य कदम उठाए गए थे। पहला मद्रास के चिंगलपेट मे कुष्ठ कर्मचारियों के प्रशिक्षण और कुष्ठ से सम्बन्धित समस्याओ के अनुसन्धान के लिए एक केन्द्रीय कुष्ठ प्रशिक्षण और अनुसन्धान संस्था खोलना था। दूसरा कदम कुष्ठ नियत्रण कार्यक्रम को प्रारम्भ करना था। कुष्ठ रोगियों को विशेष कुष्ठघरो मे अलग करने की क्रिया की, जो स्थानिक क्षेत्रों मे भूतकाल मे रोकथाम के प्रमुख उपाय के तौर पर की गई थी व्यर्थता अब प्रमाणित हो चुकी है। सल्फोन थेरेपी (शुल्बा द्वारा रोग की आंशिक चिकित्सा) के अनुसंधान से कुष्ठ रोग के निरोध के लिए एक नया उपाय मिल गया है। इस योजना का उद्देश्य यह है कि इस व्याधि से पीड़ित समूचे क्षेत्र में सभी कुष्ठ रोगियों का इलाज किया जाए और बाद में भी उन पर दृष्टि रक्खी जाए। इसके अतिरिक्त इस रोग से पीड़ित लोगों का पता लगाया जाए और रोकथाम तथा शिक्षा संबंधी कार्य किए जाए। उपचार सम्बन्धी सुधार के अलावा सल्फोन थेरेपी रोगियों में सक्रामकता का क्रमिक ह्रास लाती है। सामूहिक स्तर पर एक ही साथ सल्फोन थेरेपी का इलाज देश के सारे कुष्ठ पीड़ित क्षेत्रों मे करना सम्भव नही है, इसलिए प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में दो तरह की निरोध

इकाइयो का सूत्रपात किया गया था, जिनके नाम है, अध्ययन और इलाज केन्द्र जिनमे अनुसन्धान तथा मूल्याकन किया जाएगा और सहायक केन्द्र जिनमे सर्वेक्षण तथा इलाज होगा । पहली पचवर्षीय योजना मे चार इलाज और अध्ययन केन्द्र तथा ३६ सहायक केन्द्र अनुमोदित किए गए थे। इन सभी कार्यरत इलाज और अध्ययन केन्द्रों तथा सहायक केन्द्रों को जारी रखने के साथ-साथ लगभग ८८ नए सहायक केन्द्र खोलने की भी अब व्यवस्था की गई है। विकट कुष्ठ रोगियो के पृथक्करण के लिए शैयाओ की स्थापना करने, कुष्ठ की विरूपताओ को दूर करने और पुनर्वास केन्द्रों की स्थापना करने की भी व्यवस्था की गई है । द्वितीय योजना मे कुष्ठ निरोध कार्यक्रम के लिए लगभग ४ करोड रुपया रखा गया है ।

४५ **गुप्त यौन रोग**—भूतकाल मे देश भर मे गुप्त रोगो की समस्या पर, विशेषत: सिफलिस पर, जनता की माग होने पर भी न तो शासकों ने और न चिकित्सको ने ही ध्यान दिया, यद्यपि उस समय इसके त्वरित निदान और इलाज के लिए प्रभावशाली औजार मौजूद थे। अब सिफलिस के त्वरित इलाज के लिए उपाय है और अन्य प्रमुख गुप्त रोगो को भी सफलतापूर्वक दूर किया जा सकता है, यदि गुप्त रोगों की रोकथाम के कार्यक्रम में जनता को कुछ जन स्वास्थ्य की टेकनीक का उपयोग बताया जाए। गुप्त रोगों पर शैक्षणिक, रोग व्यापिकीय और चिकित्सात्मक, इन तीन मोर्चों से आक्रमण करना है। जनता में इस रोग के फैलने के सम्बन्ध में कोई निश्चित आकड़े नही है। जो सूचना उपलब्ध है वह मद्रास और कलकत्ता आदि कुछ निश्चित स्थानों पर किए गए सर्वेक्षणो से प्राप्त हुई है। मातृ तथा शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों में गर्भिणी माताओ की लासिकी स्क्रीनिंग से यह पता चलता है कि वयस्क जनसंख्या में सिफलिस की बीमारी का अनुपात ५ से ८ प्रतिशत तक है। देहातों की अपेक्षा इसका प्रकोप नगरो में अधिक है। तो भी इसके इलाज केन्द्रों की कार्य रीति निर्धारण करनी है, जो पर्याप्त रोगियों को आकर्षित करेगी'। गुप्त रोगों के सफलतापूर्वक निरोध कार्यक्रम में ऐसे केन्द्रो ने कहां तक सहायता दी, इसका कोई संकेत नहीं है। इसके लिए एक उपयुक्त कार्यक्रम तैयार करना चाहिए, जिसमे रोग व्यापिकीय जांच, रोगियों तथा उनके आश्रितों की शिक्षा और बीमारो को खोजने का कार्य भी सम्मिलित हो। प्रत्येक गर्भिणी स्त्री की लासिकीय स्क्रीनिंग के पश्चात यदि कही पर सिफलिस के चिह्न पाए जाए तो उसके निरोधात्मक इलाज द्वारा वंशानुगत सिफलिस की बीमारी को रोकने पर पूरा बल दिया जाना चाहिए।

४६. देहाती क्षेत्रों मे बसावट दूर-दूर होने और अपर्याप्त स्वास्थ्य कर्मचारियो के कारण गुप्त रोगों के संतोषजनक निरोध आन्दोलन के सगठन में अधिक कठिनाई होती है। यह सिफारिश की गई है कि स्वास्थ्य इकाइयों को अपने कार्यालयों मे गुप्त रोग निरोध कार्यक्रम शुरू कर देना चाहिए और स्वास्थ्य इकाइयों के कार्यक्षेत्र मे जब अधिक धनराशि और प्रशिक्षित कार्यकर्ता सुलभ हो जाए, तब निरोध कार्यक्रम को निश्चित अवधि मे और अधिक बढा दिया जाए। हिमालय की तराई में देहाती क्षेत्र का एक ऐसा घेरा है जिसमें गुप्त रोग विशेषत. सिफलिस, अधिकता से फैलता है। इसलिए इन क्षेत्रों में गुप्त रोगों के शीघ्र उन्मूलन के लिए भरपूर प्रयत्न किए जाने चाहिए ।

जल और स्वच्छता प्रबन्ध

४७. जल से होने वाली बीमारियो तथा इसी तरह की अन्य बीमारियों से समाज मे कितनी ही मौतें होती हैं और अस्वस्थता रहती है। जल प्राप्ति के समुचित प्रबन्ध और मलोत्सर्ग

करने की स्वच्छतापूर्ण विधि द्वारा इस पर नियंत्रण किया जा सकता है। प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राज्यों द्वारा नगरों तथा देहातो मे पानी की सप्लाई और स्वच्छता प्रबन्ध के लिए लगभग २४ करोड़ रुपया रखा गया था। १९५४ के अन्त मे केन्द्रीय सरकार ने पानी की सप्लाई और स्वच्छता प्रबन्ध का एक कार्यक्रम बनाया था, जिसके अनुसार १२ करोड रुपया कर्ज के रूप में नगरों मे पानी की सप्लाई के लिए और ६ करोड़ रुपया देहातो मे पानी की सप्लाई के लिए सहायता के रूप मे देने की व्यवस्था की गई थी। द्वितीय योजना मे नगरो मे पानी की सप्लाई और स्वच्छता प्रबन्ध के लिए ५३ करोड रुपए की अस्थायी व्यवस्था की गई है, और देहातों मे पानी की सप्लाई के लिए २८ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। एक विशेष व्यवस्था १० करोड़ रुपए की उन नगरों के लिए की गई है जहां नगर निगम विद्यमान है।

४८. राज्यों में सामग्री की कमी, परिवहन की अपर्याप्त सुविधा और जन स्वास्थ्य इजीनियरी के ऐसे कर्मचारियो के अभाव में जो योजनाओं के कार्यक्रम बनाकर उन्हे पूरा कर सकते, प्रथम पचवर्षीय योजना मे उपरोक्त कामों की सतोषजनक प्रगति नही हो सकी। इसके देहाती कार्य विभिन्न एजेंसियो द्वारा क्रियान्वित हो चुके है किन्तु वे निर्माण योजना कार्य मात्र होकर रह गए है और स्वच्छता की सुविधाओ की आवश्यकता और उनके उपयोग के विषय मे गाव वालो को किसी प्रकार की शिक्षा नही मिल पाई। तथापि गांवो की बहुत बड़ी सख्या ने अपने लिए जल की समस्या को स्थानीय विकास कार्यों और राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास कार्यक्रमो द्वारा सुधार लिया है।

४९ पानी की सप्लाई के कार्यक्रमों की प्रगति अधिकतर पाइप, पम्प और अन्य साधनो की प्राप्ति पर ही निर्भर है। प्रथम पचवर्षीय योजना के आखिरी वर्ष मे शहरो मे पानी की सप्लाई के लिए जितने कच्चे लोहे तथा जस्ता-मिश्रित लोहे की आवश्यकता थी, उसकी संख्या लगभग १,००,००० टन थी जो द्वितीय योजना में बढ़कर लगभग १,२५,००० टन प्रतिवर्ष हो जाएगी। इसका वर्तमान उत्पादन ६०,००० टन के आसपास है, जिसमें से ५०,००० टन पानी की सप्लाई वाले नलों के लिए है।

५०. पहली योजना की अवधि मे केन्द्र तथा राज्यों में जन स्वास्थ्य इंजीनियरिंग संगठनों की स्थापना की गई थी, परन्तु इनमे से अधिकाश मे कर्मचारी पर्याप्त नही हैं। जन स्वास्थ्य इंजीनियरिंग संगठनों की सभी राज्यों मे आवश्यकता है और इनमें जन स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों में विशिष्ट प्रशिक्षित कर्मचारी होने चाहिएं। जन स्वास्थ्य इंजीनियर, ओवरसीयर, सेनेटरी इस्पैक्टर आदि के लिए प्रशिक्षण सुविधाओ की पूरी तरह वृद्धि कर देनी है। इसीलिए इस हेतु दूसरी योजना मे ५० लाख रुपया रखा गया है।

आहार पोषण

५१. स्वास्थ्य की रक्षा के लिए आहार पोषण अत्यन्त आवश्यक है। पहली योजना मे अनाजों के उत्पादन मे सुधार पर जोर दिया गया था। अब दूध, अंडा, मछली, मांस, फल और हरी साग-भाजी जैसे पोषक भोज्य पदार्थों का उत्पादन बढाने पर अधिक बल दिया जाएगा। चूंकि प्रत्येक व्यक्ति को वांछित आहार पोषण देना सम्भव नहीं है, इसलिए आहार पोषण के सुधार में समाज के निर्बल अंगों, यथा गर्भिणी स्त्रियों और शिशुओं वाली माताओं, शिशुओं, लडखडाते बच्चों, स्कूल न जाने योग्य छोटे बच्चों और स्कूल में जाने वाले बच्चों आदि को ही

प्राथमिकता दी जाएगी । यह सर्वविदित है कि छोटी आयु मे आहार पोषण के अभाव मे या अपर्याप्त आहार से जो शारीरिक वृद्धि रुक जाती है, वह बड़ी आयु मे अधिक आहार पोषण देने के पश्चात भी पूर्णत अच्छी नही बनाई जा सकती । आहार पोषण के और विस्तार के लिए दूध का पाउडर और खाद्य-पूरक पदार्थ, जैसे कि मछली का तेल तथा पोषक तत्व भी वितरण के लिए मिल सकते हैं, इसलिए इनकी ओर भी विशेष ध्यान देना चाहिए । स्कूल जाने वाले बच्चो को दोपहर का भोजन देने के लिए भी प्रयत्न किए जाने चाहिएं । योजना मे आहार पोषण के अनुसन्धान कार्य के लिए योजनाओ की व्यवस्था भी की गई है, जिनमे राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास क्षेत्रो मे आहार पोषण सम्बन्धी सर्वेक्षण, चिकित्सालयो मे आहार के लिए रसोईघर, आहार पोषण सम्बन्धी प्रयोगशालाओ तथा संग्रहालयों की स्थापना सम्मिलित है । भारतीय चिकित्सा गवेषणा परिषद द्वारा कुछ महत्वपूर्ण आहार पोषण सम्बन्धी समस्याओं का अध्ययन शुरू कर दिया गया है । वे ये हैं :—

(१) प्रोटीन के अपर्याप्त पोषण का सर्वेक्षण और निरोधात्मक उपाय,

(२) बच्चों का शारीरिक विकास और उन्नति,

(३) अपर्याप्त पोषक आहार और खुराक से उत्पन्न होने वाली गल गण्ड (गोयटर), त्रिपुट रोग (लेथिरिज्म), फ्लूओरोसिस आदि बीमारियों का निरोध, और

(४) आहार पोषण का अनुसन्धान ।

मातृ और शिशु स्वास्थ्य

५२. मातृ और शिशु स्वास्थ्य के लगभग २,१०० केन्द्रों की स्थापना के लिए राज्यो को लगभग तीन करोड़ रुपया दिया गया है । इन केन्द्रों को प्राथमिक स्वास्थ्य इकाई सेवाओ से सम्पन्न किया जाएगा । मातृ और शिशु स्वास्थ्य सेवाओं में लगाए जाने वाले भैषजिक और स्थानीय कर्मचारियों की उचित प्रशिक्षण आवश्यकता को अब मान लिया गया है और इसलिए योजना में इसकी आवश्यक व्यवस्था की गई है ।

५३. इस समय मातृ और शिशु स्वास्थ्य सेवाओं मे कमजोर कड़ी पियाडिएट्रिक्स है । यह आवश्यक है कि मैडिकल कालेजों के पियाडिएट्रिक्स विभागों में मातृ और शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों के कर्मचारियो के लिए पियाडिएट्रिक्स प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए और उन्हें कर्मचारियो व साधनों से युक्त किया जाए । प्रत्येक पियाडिएट्रिक्स विभाग छः कार्यरत मातृ और शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों को चुन लेगा और प्रत्येक मे पियाडिएट्रिक्स प्रशिक्षित एक डाक्टर, जन स्वास्थ्य परिचारिका और अन्य सहायक कर्मचारियों को लगा देगा । इनका कार्य बच्चों में पियाडिएट्रिक्स की रोकथाम और इलाज करना तथा क्षेत्र के प्राथमिक स्कूलों के बच्चों की स्वास्थ्य सम्बन्धी देखभाल करने के साथ-साथ स्त्रियों के जच्चा बनने से पूर्व की और प्रसाविक सेवाओं को भी देखना होगा । प्रत्येक केन्द्र मे पोषक प्रोटीन भोजन, आवश्यक दवाए और रोग निरोधक टीके लगाने की सुविधा दी जाएगी । आरम्भ में कम से कम ५ पियाडिएट्रिक प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाने की व्यवस्था की गई है । ये केन्द्र मातृ और शिशु स्वास्थ्य कर्मचारियों के नियमित प्रशिक्षण का प्रबन्ध करेंगे और नियतकालिक प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम भी देंगे ।

परिवार नियोजन

५४. राष्ट्रीय कल्याण और नियोजन के लिए भारत की जनसख्या को आकार और गुण दोनों दृष्टिकोणों से नियमित करने की समस्या अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में जो लक्ष्य निर्धारित किए गए थे वे ये है :—

(१) उन बातों की सही जानकारी प्राप्त करना जिनके कारण जनसंख्या की शीघ्र वृद्धि होती है,

(२) मानव की प्रजनन शक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त करना और उसके नियमन के उपाय ढूंढना,

(३) जनता को शीघ्र शिक्षित करने के उपाय निकालना, और

(४) चिकित्सालयों तथा स्वास्थ्य केन्द्रों में परिवार नियोजन की सलाह और सेवाओं को चिकित्सा सेवाओं का आवश्यक अंग बनाना।

परिवार नियोजन कार्यक्रम का मूल उद्देश्य जनता में परिवार नियोजन के पक्ष में सक्रिय सहानुभूति उत्पन्न करना और वर्तमान ज्ञान के आधार पर परिवार नियोजन की सलाह तथा सेवाओं को बढ़ाना था। इसी के साथ जनाकिकी (डेमोग्राफिक), भैषजिक और जीव विज्ञान का अध्ययन भी शुरू कर दिया गया था। जीव विज्ञान और जनाकिकी सम्बन्धी समस्याओं के लिए राज्यों, स्थानीय अधिकारियो, स्वयंसेवी संगठनों और वैज्ञानिक संस्थाओं को लगभग ११५ परिवार नियोजन उपचारालयों तथा १९ अनुसन्धान योजनाओं के निमित्त आर्थिक अनुदान के रूप में सहायता दी गई। द्वितीय योजना मे इन कार्यक्रमों के विकास की व्यवस्था की गई है।

५५. परिवार नियोजन का कार्य इतना आगे बढ़ चुका है कि अब उसके व्यवस्थित विकास की आवश्यकता हो गई है। इस सिलसिले में जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं का निरन्तर अध्ययन होना चाहिए और परिवार नियोजन तथा जनसंख्या सम्बन्धी समस्याओं के लिए एक समुचित केन्द्रीय बोर्ड होना चाहिए। यह बोर्ड अपने कार्य में काफी हद तक स्वायत्त होना चाहिए। केन्द्रीय बोर्ड के कार्यक्रम के मुख्य अंग ये होंगे :—

(१) परिवार नियोजन सम्बन्धी सलाह और सेवाओं का विस्तार करना,

(२) कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिए काफी संख्या में केन्द्रों की स्थापना करना और उन्हें चालू रखना,

(३) पारिवारिक जीवन के विषय में शिक्षा कार्यक्रम को विशाल आधार पर विकसित करना, जिसमें यौन शिक्षा, विवाह संबंधी सलाह-मशविरा और बच्चों का लालन-पालन भी सम्मिलित हो,

(४) प्रजनन और जनसंख्या समस्याओं के जीव विज्ञान सम्बन्धी तथा भैषजिक पहलुओं के सम्बन्ध में अनुसन्धान करना,

(५) जनाकिकी अनुसन्धान करना जिसमें परिवार परिसीमन के प्रयोजन की जांच-पड़ताल के साथ-साथ सांसर्गिक तरीकों का अध्ययन सम्मिलित है,

(६) विभिन्न सरकारी और गैर-सरकारी एजेंसियों द्वारा किए गए कार्य की जांच व परीक्षण करना जिन्हें केन्द्रीय बोर्ड आर्थिक सहायता देता है,

(७) प्रगति का मूल्यांकन और प्रतिवेदन प्रस्तुत करना, और

(८) एक अच्छे साधन सम्पन्न केन्द्रीय संगठन की स्थापना करना।

५६. ५०,००० जनसख्या वाले सभी बड़े नगरो और कस्बों के लिए एक-एक उपचारालय स्थापित्त करने की व्यवस्था की गई है। छोटे कस्बों और देहाती क्षेत्रों के बारे मे यह सोचा गया है कि उनमें धीरे-धीरे प्राथमिक स्वास्थ्य इकाइयों के सहयोग से उपचारालय खोले जाएंगे। आशा की जाती है कि ये उपचारालय परिवार नियोजन की समस्या के प्रति एक आम जागरूकता उत्पन्न करेंगे और सलाह तथा सेवा भी प्रदान करेगे। बंगलौर के समीप एक केन्द्रीय प्रशिक्षण और उपचार सस्था तथा एक ग्राम प्रशिक्षण इकाई स्थापित करना इस समय विचाराधीन है। बम्बई में गर्भरोधक परीक्षण और मूल्याकन का केन्द्र विकसित किया जा रहा है। यह आवश्यक है कि सभी मैडिकल और उपचारण विद्यार्थियों को परिवार नियोजन का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। एक निश्चित अवधि में सभी चिकित्सालयों और बहुसंख्यक औषधालयों में परिवार नियोजन सेवा का विकास हो जाना चाहिए। मैडिकल, जीव वैज्ञानिक और जनांकिकी सम्बन्धी अनुसन्धान को सक्रिय रूप से उन्नत करने की भी व्यवस्था की गई है। परिवार नियोजन कार्यक्रम के लिए लगभग पाच करोड़ रुपयों की व्यवस्था की गई है। आशा की जाती है कि द्वितीय योजना की अवधि में लगभग ३०० उपनगर और २,००० देहाती उपचारालय स्थापित कर दिए जाएगे।

स्वास्थ्य शिक्षा

५७. चिकित्सा और जन स्वास्थ्य संबंधी जो सुविधाएं दी जाती है उनका लक्ष्य उसी सीमा तक पूरा होगा जिस सीमा तक जनता इन सुविधाओं का पूरा फायदा उठाएगी और अपनी आदतों और व्यवहार को बदलेगी। इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि स्वास्थ्य शिक्षा के लिए विशेष प्रयत्न किए जाएं। स्वास्थ्य शिक्षा का मूल उद्देश्य जनता को यह सिखलाना है कि वह अपने ही कार्यों और प्रयत्नों द्वारा स्वास्थ्य प्राप्त करे। इसलिए, अपना जीवन स्तर सुधारने के बारे में जनता की दिलचस्पी से इसकी शुरुआत होती है और इसका उद्देश्य यह रहता है कि व्यक्तिगत रूप से तथा स्थानीय समाज के सदस्य के नाते लोग अपना स्वास्थ्य सुधारने के प्रति अपना उत्तरदायित्व समझे। जनता की दिलचस्पिया, आवश्कताएं और महत्वाकांक्षाए उन्हें प्रारम्भिक सूत्र तथा मुख्य प्रेरक बल प्रदान करते है, जिससे कि वह स्थानीय योजनाओं और कार्यों में अपनी शुभ कामनाएं तथा सहयोग प्रदान करती है। हां, जनता को विशेषज्ञों की देखरेख और सहायता की जरूरत होती है। केन्द्र में और राज्यों के स्वास्थ्य विभागों में जो स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो खोले जा रहे हैं, वे स्वास्थ्य विभाग के कर्मचारियों को नौकरियो में रहते हुए प्रशिक्षण देंगे तथा शिक्षा साधनों में और शिक्षा प्रणाली में सलाहकार सेवा के साथ-साथ स्वास्थ्य सेवाओ की सुन्दरतर व्याख्या प्रस्तुत करेंगे।

अध्याय २६

आवास

राष्ट्रीय आवास कार्यक्रम के सम्बन्ध में सबसे पहले कदम प्रथम पचवर्षीय योजना की अवधि में उठाए गए। आगामी योजनाओं में इस कार्यक्रम को और भी अधिक महत्व प्राप्त होगा। इस कार्यक्रम में एक सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास योजना तथा कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की एक योजना सम्मिलित थी। इस कार्यक्रम के एक अंग के रूप में, बागान श्रमिकों तथा कोयला और अभ्रक की खानों में काम करने वाले मजदूरों के लिए भी मकान बनाने की योजनाएं कार्यान्वित की गई थी। दूसरी पंचवर्षीय योजना की अवधि में इन कार्यक्रमों को काफी बढ़ावा दिया जा रहा है। इस काल में ग्रामीण आवास, गन्दी बस्तियों को हटाने तथा भंगियों के लिए आवास और मध्यम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने के कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने का विचार है। इन कार्यक्रमों के द्वारा जो कार्य किए जाएंगे और दूसरी पंच-वर्षीय योजना की अवधि के लिए जो कार्यक्रम बनाए गए हैं, उनका सक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है। आवास के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना में कुल ३८·५ करोड रुपए की व्यवस्था की गई थी, जबकि दूसरी योजना में १२० करोड रुपए की व्यवस्था की गई है, जिसका विभाजन इस प्रकार किया गया है :–

	(करोड़ रुपए)
सहायता-प्राप्त औद्योगिक आवास ...	४५
कम आय वाले लोगों के लिए आवास . . .	४०
ग्रामीण आवास	१०
गन्दी बस्तियों को हटाने और भंगियों के लिए आवास	२०
मध्यम आय वाले लोगों के लिए आवास	३
बागान श्रमिकों के लिए आवास	२
कुल योग ...	१२०

कोयला उद्योग के श्रमिकों की आवास योजनाओं के लिए कोयला खान श्रम कल्याण निधि से वित्तीय सहायता मिलती है। इस निधि द्वारा पांच साल की अवधि में लगभग ८ करोड़ रुपए की व्यवस्था किए जाने की आशा है। अभ्रक और कोयला खानों के श्रमिकों के लिए आवास योजनाओं की जिम्मेदारी श्रम मंत्रालय पर है, तथा अन्य योजनाओं का भार निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालय के हाथ में है।

२. इन योजनाओं के अलावा, पुनर्वास, प्रतिरक्षा, रेलवे, लोहा और इस्पात, उत्पादन, सचार, निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालयों द्वारा आवास के अनेक कार्यक्रम आरम्भ किए गए हैं। राज्य सरकारों और कुछ स्थानीय अधिकारियों की भी आवास की अपनी-अपनी योजनाएं

है। अनुमान है कि पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि मे पुनर्वास मंत्रालय ने शहरी क्षेत्रो में ३,२३,००० मकान और निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालय को छोड़कर अन्य केन्द्रीय मंत्रालयों तथा राज्य सरकारों ने ३,००,००० मकान बनवाए। उपरोक्त अन्य आवास योजनाओं को मिलाकर, सरकारी अधिकरणो ने पहली योजना मे लगभग ७,४२,००० मकान बनवाए। निजी तौर पर कितने मकान बनवाए गए, इसका अनुमान लगाना कठिन है। कर जाच आयोग के सिलसिले में की गई एक जाच से पता चला कि १९५३-५४ में शहरों में मकान बनाने पर लगभग १२५ करोड़ रुपया व्यय किया गया। यदि इसे पांच साल की अवधि के लिए एक औसत मान लिया जाए और एक मकान की औसत लागत लगभग १०,००० रुपए मान ली जाए तो पता चलेगा कि पहली योजना में निजी क्षेत्र में लगभग ६,००,००० मकान बनाए गए। इस प्रकार पहली योजना मे शहरो मे लगभग १३ लाख मकान बनाए गए। निजी तौर पर कितने मकान बनाए गए, इस बारे मे भिन्न-भिन्न अनुमानों का लगाया जाना स्वाभाविक ही है।

३. दूसरी पचवर्षीय योजना मे कार्यान्वित किए जाने वाले आवास कार्यक्रमों के निम्न लक्ष्य निर्धारित किए गए है :-

	मकानों की संख्या
सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास .	१,२८,०००
कम आय वाले लोगों के लिए आवास .	६८,०००
भंगियों सहित गंदी बस्तियों मे रहने वालों के लिए आवास .	१,१०,०००
मध्यम आय वाले लोगों के लिए आवास	५,०००
बागान श्रमिको के लिए आवास	११,०००
कुल योग .	३,२२,०००

अन्य केन्द्रीय मंत्रालयो, राज्य सरकारो और स्थानीय अधिकरणों द्वारा हाथ में लिए गए तथा कोयला खान श्रमिकों सम्बन्धी कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप ७,५३,००० मकान बनाए जाने की आशा है। इसके अतिरिक्त अनुमान है कि दूसरी योजना की अवधि में निजी तौर पर ८,००,००० मकान बनाए जाएंगे। इस प्रकार दूसरी योजना में लगभग १९ लाख मकान बनाए जाएंगे, जबकि पहली योजना में लगभग १३ लाख मकान बनाए गए थे।

सहायताप्राप्त औद्योगिक आवास योजना

४. सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास योजना पहले उन औद्योगिक श्रमिकों के लिए स्वीकार की गई थी जिन पर फैक्टरीज़ अधिनियम लागू होता है, किन्तु अब इसमें खानों में काम करने वाले श्रमिक भी सम्मिलित है। कोयला और अभ्रक उद्योगों के श्रमिक इसमे सम्मिलित नहीं हैं, क्योंकि उनके लिए पृथक योजनाएं है। औद्योगिक आवास योजना के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य सरकारों और सरकारी अधिकरणों, मालिकों तथा औद्योगिक श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं को ऋण तथा अनुदान दिए जाते हैं। बम्बई और कलकत्ता में कई मंजिलों के मकानों में एक कमरे के मकानों के लिए अधिक से अधिक निर्धारित लागत की रकम ४,५०० रुपए है, और दूसरी जगहों में २,७०० रुपए है। बम्बई और कलकत्ता में दो कमरों के मकानों के लिए लागत

पर एक मंजिल के मकानों के लिए, ३,३४० रुपए और दो मंजिले मकानों के लिए यह रकम ३,४६० रुपए है। राज्य सरकारों को लागत का ५० प्रतिशत ऋण के रूप में और ५० प्रतिशत आर्थिक सहायता के रूप में, सहकारी संस्थाओं को ५० प्रतिशत ऋण के रूप में और २५ प्रतिशत सहायता के रूप में; और मालिकों को ३७½ प्रतिशत ऋण के रूप में तथा २५ प्रतिशत सहायता के तौर पर दिया जाता है। मालिकों के लिए ऋण की अदायगी की अवधि १५ साल है और दूसरों के लिए २५ साल।

५. प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में ७६,६७६ मकान बनाने का कार्यक्रम स्वीकार किया गया था। इसमें से १६,१६५ मकान बम्बई में, २१,७०६ उत्तर प्रदेश में, ५,६२६ हैदराबाद में, ५,१८१ मध्य प्रदेश में, ३,४४४ मध्य भारत में तथा अन्य राज्यों में इनसे कुछ कम संख्या में मकान बनाने की योजना थी। अनुमान है कि पहली पंचवर्षीय योजना की समाप्ति से पूर्व लगभग ४०,००० मकान बनकर तैयार हुए। स्वीकृत मकानों की कुल संख्या में से ६८,२०० या लगभग ८५ प्रतिशत राज्य सरकारों द्वारा, १०,१६१ या लगभग १३ प्रतिशत निजी मालिकों द्वारा, और १,३१८ या १·६ प्रतिशत औद्योगिक श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं द्वारा बनाए जा रहे हैं। जब यह योजना बनाई गई थी, उस समय मालिकों एवं सहकारी संस्थाओं की ओर से पर्याप्त सहयोग की आशा की गई थी। योजना के इस पहलू की जांच की जा रही है तथा मालिकों और औद्योगिक श्रमिकों की सहकारी संस्थाओं का और अधिक सहयोग प्राप्त करने के लिए आवश्यक उपायों का अध्ययन किया जा रहा है।

कम आय वाले लोगों के लिए मकान

६. कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना १९५४ के अन्त में आरम्भ की गई थी। इस योजना के अनुसार, जिन लोगों की वार्षिक आय ६,००० रुपए से अधिक नहीं है, उन्हें सूद की उचित दर पर मकान बनाने के लिए दीर्घकालीन ऋण दिए जाते हैं। व्यक्तियों को तथा उन सहकारी संस्थाओं को, जिनके सदस्य इस शर्त को पूरा करते हों, ऋण दिए जाते हैं। जमीन समेत मकान बनाने की अनुमानित लागत की ८० प्रतिशत तक ही सहायता दी जाती है और यह सहायता अधिक से अधिक ८,००० रुपए तक ही दी जा सकती है। इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारों को ३½ प्रतिशत सूद पर ऋण दिए जाते हैं, जिनकी अदायगी की अवधि ३ साल है। राज्य सरकारों को इसलिए ऋण दिए जाते हैं ताकि स्थानीय अधिकरण मकानों के लिए जमीन प्राप्त कर सकें और उसका विकास कर सकें तथा उसे मकान बनाने वाले लोगों को दे सकें। स्थानीय संस्थाएं, धर्मार्थ संस्थाएं, अस्पताल आदि भी मकान बनाने के लिए इस योजना के अधीन सहायता प्राप्त कर सकते हैं ताकि वे किराए पर अथवा किस्तखरीद की शर्तों पर थोड़ी तनख्वाह पाने वाले अपने कर्मचारियों को मकान दे सकें। पहली योजना के अन्त तक लगभग ४०,००० मकानों के लिए और विभिन्न भूमि विकास योजनाओं के लिए लगभग २१·५ करोड़ रुपए के ऋण स्वीकार किए गए थे। कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना द्वारा व्यापक रूप से अनुभव की जाने वाली आवश्यकता को पूरा करने का प्रयत्न किया गया है और बहुत-से लोगों ने इस योजना से लाभ उठाने का प्रयत्न किया है। किन्तु जमीन की बहुत ऊंची कीमतों के कारण तथा मकानों के लिए उचित रूप से विकसित स्थानों के अभाव के कारण इस योजना के अधीन मकान बनाने के कार्य में वैसी प्रगति नहीं हो सकी है जैसी कि आशा की गई थी।

७. उचित रूप से विकसित तथा उपयुक्त मूल्य पर जमीन की व्यवस्था करना समस्त आवास कार्यक्रमों की सफलता के लिए अत्यावश्यक है, क्योंकि कम आय वाले लोगों के मकानों के अतिरिक्त व्यक्तियों, सहकारी संस्थाओं तथा निजी व्यापारों के लिए भी मकानों के स्थानों की व्यवस्था करनी होगी। निजी तौर पर व्यक्तियों के लिए, विशेषतः कम और मध्यम आय वाले व्यक्तियों के लिए मकान बनाने का कार्य और भी अधिक तेजी से हो सकता है यदि स्थानीय अधिकरणों द्वारा कम दरों पर मकानों के लिए विकसित स्थान उपलब्ध कराए जा सकें, किन्तु उन्हें दुबारा बेचने के लिए इन पर उपयुक्त शर्त लागू होनी चाहिए। हाल के वर्षों में, विशेषतः शहरों में, जहां बड़ी तेजी से आबादी बढ़ी है, जमीन की ऊंची कीमतों और मकानों के स्थानों की सामान्यतः कमी होने के कारण ही मकान बनाने के कार्य में बहुत धीमी प्रगति हुई है। इसलिए यह वांछनीय प्रतीत होता है कि राज्य सरकारों और स्थानीय अधिकरणों को रिहायश की जगहों का विकास करने के लिए सहायता दी जाए और ये स्थान कम आय वाले उन व्यक्तियों को बेचे जाएं जो अपने निजी इस्तेमाल के लिए मकान बनाना चाहते हैं, चाहे वे कम आय वाले लोगों के लिए लागू की जाने वाली विशिष्ट आवास योजना के अन्तर्गत ऋण के लिए प्रार्थी हों या न हो। यह भी सुझाव रखा गया है कि कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना के धन का कुछ भाग आयोजित आधार पर भूमि विकास के लिए इस्तेमाल किया जाए। उन शहरों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा जहां काफी घनी आबादी है तथा जो शहर दूसरी पचवर्षीय योजना में कार्यान्वित किए जाने वाले विकास कार्यक्रमों के कारण और भी अधिक तेजी से विकसित होने वाले है। राज्य सरकारें वैयक्तिक स्थानीय अधिकारियों के साथ इस बारे में जांच करें कि इस दिशा में कहां तक कारंवाई की जा सकती है। बिक्री के अलावा पट्टे पर दी जाने वाली जगहों का भी विकास किया जाएगा।

देहातों के लिए आवास

८. जैसा कि इस अध्याय के अगले हिस्से में दिए गए विवरण से पता चलता है, देहाती क्षेत्रों में मकान सम्बन्धी परिस्थितियो में सुधार करना एक बहुत बड़ा कार्य है। देहाती क्षेत्रो के ५ करोड़ ४० लाख मकानो में से अधिकांश के पुर्ननिर्माण या उनके काफी सुधार की जरूरत है। देर या सबेर, प्रत्येक गांव की अपनी एक योजना होनी चाहिए जिसके अनुसार चौड़ी गलियो व नालियों और मकानों के बीच उचित फासला और पंचायती स्थानों तथा बच्चों के लिए खेलने के मैदानों की व्यवस्था हो। देहाती क्षेत्रों में गृह-सुधार का कार्य ग्राम विकास के सामान्य कार्यक्रम का ही एक पहलू है और देहातों की समृद्धि बढ़ने के साथ-साथ आवास कार्य में भी आशा से अधिक प्रगति होगी, फिर भी कुछ दिशाओं में विशेष कारंवाई करने की जरूरत है। शुरू में ऐसी कारंवाई छोटे पैमाने पर की जा सकती है और बाद में उसे और अधिक बढ़ाया जा सकता है। देहातों में मकान बनाने के लिए जो साज-सामान प्रयुक्त होता है, उसका अधिकांश भाग वहीं पर मिल जाता है और उसका पूरा-पूरा इस्तैमाल किया जा सकता है। देहाती क्षेत्रों में स्वेच्छा से सहकारी आधार पर श्रम करने तथा स्थानीय रूप से सामूहिक कारंवाई करने की काफी गुंजाइश है और यदि शुरू से ही ठीक रवैया अपनाया जाए, तो इस कार्य मे काफी तेजी से प्रगति की जा सकती है। आबादी में वृद्धि होने के कारण घनी आबादी की समस्या और भी अधिक उग्र हो गई है और लगभग सभी जगह मकान बनाने के लिए और अधिक स्थानों की जरूरत है। अनुसूचित जातियों, आदिम जातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों, कारीगरों और सामान्यतः गांवों के भूमिहीन लोगों का जहां तक सम्बन्ध है, घनी आबादी की समस्या सबसे अधिक विकराल है, हालाकि

यह समस्या केवल इन्हीं लोगों तक सीमित नही है। गांवो के अधिकार-हीन लोगों की मकान सम्बन्धी परिस्थितिया बहुत खराब है और उनकी ओर फौरन ध्यान दिया जाना चाहिए। कारीगर लोग ऐसी परिस्थितियों मे रहते और काम करते है कि उनमें कार्य करने के अधिक उन्नत तरीको को अपनाना बहुत मुश्किल है। इसके अतिरिक्त ये परिस्थितियां कारीगरों के स्वास्थ्य के लिए भी बहुत हानिकारक है। देहातो में जिन लोगों की स्थिति कुछ अच्छी भी है, उनके मकानों के नक्शे पुराने ढंग के है और उनमें रोशनी, रोशनदान तथा नालियों आदि की समुचित व्यवस्था नही है। समस्त गांवों में अब निरन्तर इस बात की आवश्यकता को महसूस किया जा रहा है कि उनमें मल-मूत्र की निकासी के अधिक उन्नत तरीको को अपनाया जाए और अब समय आ गया है कि इस दिशा में बड़े पैमाने पर प्रयत्न किया जाए। एक आखिरी बात यह भी है कि नए गांवों और वर्तमान गांवों के विस्तार के लिए गांवों के और अधिक उन्नत नक्शे लागू करने होंगे।

९. ये कुछ मुख्य कार्य है जिन्हें पूरा करके गांवों की मकान सम्बन्धी हालतों को सुधारा जा सकता है और इन कार्यों को पूरा करने के लिए दूसरी योजना की अवधि में बहुत कुछ किया जा सकता है, पर तभी जब कि विभिन्न ग्रामीण कार्यक्रम जिला और ग्राम स्तर पर मिलकर कार्यान्वित किए जाएं और उनमें जनता का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त हो। गांवों की मकान सम्बन्धी स्थिति को सुधारने का कार्य अपने आप में कोई पृथक उद्देश्य नहीं है, बल्कि वह तो गांवों के पुनर्निर्माण की विशालतर योजना का ही एक हिस्सा है, जिसमें ये बातें सम्मिलित है: कृषि की पैदावार में वृद्धि, अधिकाधिक क्षेत्रों में सहकारी आधार पर कार्य, गांवो में पानी की व्यवस्था, गंदे पानी की नालियां, सफाई, गांव की सड़कें, अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए कल्याण कार्यक्रम, तथा गांवों के कारीगरों के लिए अधिक काम दिलाने और उनके रहने की अधिक अच्छी हालतें पैदा करने के कार्यक्रम। दूसरी योजना में इन और अन्य कार्यों के लिए धन की व्यवस्था की गई है। ग्रामीण सामुदायिक कार्यक्रम के सफल होने और गांवो के लोगों द्वारा और अधिक जिम्मेदारी संभाल लेने पर गांवों में मकानों की स्थिति में सुधार होने की आशा है। इस समय जिस बात की आवश्यकता है वह यह है कि प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्र में और अन्यत्र गांवों के लोगों को मकान सम्बन्धी समस्या से पूरी तरह परिचित कराया जाए और जो कदम आवश्यक समझे जाएं उन्हें फौरन उठाया जाए, जैसे गांवों की आबादी का विस्तार, हरिजनों और विभिन्न पिछड़े वर्गों के लिए मकानों के स्थानों तथा अन्य प्रकार की सहायता की व्यवस्था, भविष्य में बनाए जाने वाले मकानों के लिए अधिक अच्छे मानदण्ड निर्धारित करना और वर्तमान मकानों में रोशनी, रोशनदान और गन्दे पानी की नालियों की और अधिक अच्छी व्यवस्था करना।

१०. पहली योजना की अवधि में गांवों में रहन-सहन की स्थिति में सुधार करने के लिए कुछ कदम उठाए गए हैं। सामुदायिक योजना क्षेत्रों में ५८,००० ग्रामीण टट्टियां, १,६०० मील गन्दे पानी की नालियां और २०,००० कुएं बनवाए गए हैं और ३४,००० कुओं की मरम्मत की गई है। इसी प्रकार राष्ट्रीय विस्तार क्षेत्रों में ८०,००० ग्रामीण टट्टियां, २,७०० मील गन्दे पानी की नालियां, और ३०,००० नए कुएं बनवाए गए तथा ५१,००० कुओं की मरम्मत की गई। राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों में लगभग २९,००० मकान बनवाए गए और लगभग इतने ही मकानों की मरम्मत की गई। कई राज्यों के देहाती क्षेत्रों में ईंटों के भट्ठे लगाए जा रहे हैं। कहीं-कहीं ये भट्ठे सहकारी संस्थाओं के द्वारा भी लगाए गए हैं। मिसाल के तौर पर उत्तर प्रदेश में १९५०-५१ में १६ सहकारी भट्ठे लगाए गए, १९५४-५५ तक यह

संख्या बढ़कर ७५२ हो गई । इन भट्ठों के आसपास के गांवो में निरन्तर अधिक अच्छे प्रकार के मकान बनाए जा रहे है। कई राज्यो में हरिजनों को मकान के स्थान देकर और मकान बनाने की सहकारी संस्थाओं का सगठन करके उनकी मकान सम्बन्धी स्थिति को सुधारने के प्रयत्न किए जा रहे है। केन्द्र मे निर्माण, आवास और सम्भरण मंत्रालय ने एक ग्रामीण आवास संगठन स्थापित किया है जो इस क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करेगा और मकान बनाने के अधिक अच्छे नक्शे, ले-आउट और तरीके सुझाएगा और यह भी बताएगा कि स्थानीय साज-सामान का और अधिक अच्छा उपयोग किस प्रकार किया जाए।

११. देहाती क्षेत्रों मे मकान बनाने का कार्य वस्तुतः सहायता प्राप्त स्वावलम्बन का कार्यक्रम ही है, जिसमें शिक्षा और पथ-प्रदर्शन का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। सरकार से जो सहायता मिलेगी, उसका मुख्यतः यह स्वरूप होगा : टेकनीकल परामर्श, आदर्श मकानों तथा आदर्श गांवों का प्रदर्शन, अधिक अच्छे प्रकार के नक्शों की व्यवस्था, स्थानीय साज-सामान के उपयोग के सम्बन्ध में प्रारम्भिक परीक्षण, ऐच्छिक श्रम के आधार पर सहकारी ग्राम कार्यक्रमों का संगठन और विशेषतः हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के लिए अधिक सहायता की व्यवस्था। यह अच्छा होगा कि प्रत्येक राज्य के आवास विभाग मे एक छोटा-सा टेकनीकल दल हो जो स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप मकानों के नक्शे और नमूने तैयार करे और स्थानीय वस्तुओं के सम्भावित प्रयोग का अध्ययन करे। इसके अतिरिक्त, ग्राम विकास के किसी न किसी पहलू से सम्बद्ध विभिन्न सरकारी एजेंसियों को अपने कार्यो में और राष्ट्रीय विस्तार सेवा के कार्यों में समन्वय स्थापित करना चाहिए। जैसा कि अध्याय १६ में सुझाव दिया गया है, हरिजनों और अन्य पिछड़े वर्गों के बारे में विस्तार कार्यकर्ताओं को ऐसे कदम उठाने चाहिए जिनसे गांवों के लोग मुफ्त मकानों के स्थानों की व्यवस्था करे, ताकि भूमि-हीन कृषि मजदूरों द्वारा मकान बनाए जा सकें। मिसाल के तौर पर हरिजनों तथा अन्य पिछड़े वर्गों की मकान सम्बन्धी हालत सुधारने के लिए और ग्रामीण सामुदायिक कारखाने स्थापित करने के लिए जहां-जहां आर्थिक सहायता की व्यवस्था मौजूद है, वहां सहकारी समितियां बनाई जानी चाहिएं और पारस्परिक सहायता दलों का संगठन किया जाना चाहिए। देहातो में मकान बनाने के कार्यक्रम यदि इस प्रकार कार्यान्वित किए जाएं तो उनसे न केवल देहातो का जीवन-स्तर उन्नत होगा, बल्कि उनसे ग्रामीण रोजगार में भी वृद्धि होगी और उपलब्ध जन-शक्ति साधनों का पूरा-पूरा उपयोग हो सकेगा।

गन्दी बस्तियों को हटाना और भंगियों के लिए आवास

१२. प्रत्येक बड़े शहर में गंदी बस्तियों का होना गम्भीर चिन्ता का विषय है। सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास योजना के परिणामस्वरूप पिछले दो या तीन साल में गन्दी बस्तियों मे रहने वाले कुछ लोग अपने घरों से हटाकर दूसरे स्थानों में बसाए गए है किन्तु सामान्यतः गन्दी बस्तियों की समस्या अभी तक पहले जैसी ही बनी हुई है। यदि ऐसे उपाय न किए गये कि नई गन्दी बस्तियों का बसना असम्भव हो जाए तो गन्दी बस्तियों की समस्या और भी गम्भीर हो जाएगी। गन्दी बस्तियों के विस्तार को रोकने के लिए दो तरह के कार्य करने होंगे। पहला तो यह कि नगरपालिका सम्बन्धी उपनियमों को पूरी सख्ती के साथ लागू करना चाहिए। इन उपनियमों को लागू करने में पढ़े-लिखे लोगों की सहायता प्राप्त की जानी चाहिए और जो नई गन्दी बस्तियां बसनी शुरु हो रही हों, उनकी ओर तुरन्त ध्यान देना चाहिए। दूसरे यह कि प्रत्येक शहर के लिए वृहद योजनाएं बनाई जानी चाहिएं और ये योजनाएं पहले उन शहरों के

लिए बननी चाहिएं जो बहुत बड़े हैं या हाल के वर्षों में बहुत बढ़ गए हैं या अगले कुछ वर्षों में उनके तेजी से बढ़ जाने की सम्भावना है। वृहद् योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए स्थानीय अधिकरण के पास आवश्यक अधिकार होने चाहिएं ताकि वे क्षेत्रीय योजनाएं लागू कर सकें, भूमि का उपयोग कर सकें और जहां-तहां होने वाला विकास रोक सकें। जहां आवश्यक हो, वहां नए विभाग स्थापित किए जाने चाहिए। दिल्ली में हाल ही में एक विशेष विकास विभाग स्थापित किया गया है।

१३. भविष्य में और नई गन्दी बस्तिया न बस सकें, जहा इस सम्बन्ध में कार्रवाई की जा रही है, वहां यह भी जरूरी है कि वर्तमान गन्दी बस्तियों की समस्या को भी सुलझाया जाए। बहुत हद तक गन्दी बस्तियों का बिल्कुल सफाया कर देने के अलावा और कोई चारा नहीं है, किन्तु कुछ मामलो मे सुधार कार्य भी किए जा सकते हैं। अभी तक तीन प्रकार की कठिनाइयों के कारण गन्दी बस्तियों को हटाने के प्रस्ताव कार्यान्वित नहीं किए जा सके—गन्दी बस्तियों को अपने अधिकार में करने के लिए बहुत अधिक कीमत की अदायगी, इन बस्तियों में रहने वाले लोगों की दूर जगहो पर जाने की अनिच्छा क्योंकि इससे उन्हें उनके सामाजिक एव आर्थिक जीवन के अस्त-व्यस्त हो जाने की आशंका थी, तथा इन लोगों के लिए मकान बनाने के लिए आर्थिक सहायता की आवश्यकता, ताकि ये मकान उन्हें इतने किराए पर दिए जा सकें जिसे वे अदा कर सकें। गन्दी बस्तियों को हटाने और भंगियों के लिए मकान बनाने की नई योजना तैयार करते हुए केन्द्रीय सरकार ने इन पहलुओं को ध्यान में रखा है और दूसरी पंचवर्षीय योजना में इस कार्यक्रम के लिए कुल २० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

१४. गन्दी बस्तियों को अपने अधिकार में करने की कीमत को जो आजकल विशेषत: बड़े शहरों में बहुत अधिक है कम करने के लिए यह सुझाव दिया गया है कि राज्य सरकारों को संविधान के अनुच्छेद ३१ की व्यवस्थाओं का लाभ उठाना चाहिए। कानून में उचित परिवर्तन करके, भूमि प्राप्त करने की कार्रवाई में जो विलम्ब होता है उसे कम करना चाहिए। गन्दी बस्तियों को हटाने तथा भंगियों के लिए मकान बनाने की उस योजना के अनुसार जो अब लागू की जाएगी राज्य सरकारों से यह कहा गया है कि वे अपने बड़े शहरों में सबसे अधिक गन्दी बस्तियों के क्षेत्रों का सामाजिक एवं आर्थिक सर्वेक्षण कराएं और गन्दी बस्तियों को हटाने के लिए क्रमबद्ध कार्यक्रम तैयार करें। यह योजना दो मुख्य सिद्धान्तों पर आधारित है। पहला सिद्धान्त तो यह है कि गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोगों को कम से कम अस्त-व्यस्त किया जाए और जहां तक हो सके उन्हें गन्दी बस्तियों के आसपास ही दूसरे मकानों में बसाया जाए ताकि वे अपने रोजगार के इलाकों से दूर न जा पड़ें। दूसरा सिद्धान्त यह है कि गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग जितना किराया अदा कर सकें उनसे उतना ही किराया लेने के लिए बड़े-बड़े मकान बनाने की अपेक्षा वातावरण सम्बन्धी सफाई रखने तथा आवश्यक नागरिक सुविधाओं की व्यवस्था करने पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए। योजना में इस कार्य के लिए जो आर्थिक व्यवस्था की गई है उसके अनुसार यह प्रस्ताव है कि केन्द्रीय सरकार को लागत का २५ प्रतिशत आर्थिक सहायता के रूप में और ५० प्रतिशत ऋण के रूप में देना चाहिए जो ३० साल की अवधि में अदा करना होगा। लागत का शेष २५ प्रतिशत राज्य सरकारें अपने ही साधनों से आर्थिक सहायता के रूप में देंगी। यह सुझाव दिया गया है कि जहां सम्भव हो, विशेषत: जहां गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग बहुत कम किराया दे सकते हों, वहां राज्य सरकारों और स्थानीय संस्थाओं को गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोगों को १००० से लेकर १,२०० वर्गफुट तक के विकसित तथा निर्दिष्ट मकान बनाने के

स्थान देने चाहिए और सीमित मात्रा में मकान बनाने का सामान भी देना चाहिए तथा स्व-सहायता एव पारस्परिक सहायता के आधार पर अपने लिए जहां तक हो सके वहां तक निर्दिष्ट नमूने के मकान बनाने का कार्य गन्दी बस्तियो मे रहने वालों पर ही छोड़ देना चाहिए। राज्य सरकारों के पथप्रदर्शन के लिए गन्दी बस्तियों को हटाने और उनमें सुधार करने की योजनाओं की मानक-लागत का हिसाब लगाया गया है। योजना के अनुसार अच्छे मकानों में बसाए जाने की सुविधाएं गन्दी बस्तियों में रहने वाले उन परिवारों को दी जाएंगी जिनकी आय बम्बई और कलकत्ता में २५० रुपए मासिक तथा दूसरी जगहों पर १७५ रुपए मासिक से अधिक नही है। इससे अधिक आय वाले परिवारों को कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने तथा अन्य योजनाओं के अधीन ऋण लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा और यह भी प्रस्ताव है कि भूमि प्राप्त करने में उनकी सहायता की जानी चाहिए और राज्यों द्वारा विकसित कुछ जमीन उनके लिए सुरक्षित रख दी जाए। चूंकि अधिकाश नगरों की गन्दी बस्तियों में रहने वाले लोग ज्यादा-तर मेहतर हैं, इसलिए यह आशा की जाती है कि नए कार्यक्रम के अधीन बहुत-से मेहतर अपने वर्तमान घरों को छोडकर नए घरों में बसाए जा सकेंगे।

मकान बनाने की अन्य योजनाएं

१५. बागान श्रम अधिनियम, १९५१ की व्यवस्थाओं के अनुसार प्रत्येक बागान मालिक के लिए यह अनिवार्य है कि वह बागानो मे रहने वाले श्रमिकों और उनके परिवारों के लिए निर्दिष्ट प्रकार के मकान बनवाए। बड़े-बडे बागान मालिक तो इस शर्त को पूरा कर सकते हैं, किन्तु छोटे बागान मालिकों को ऋण के रूप में सहायता देने की आवश्यकता है। दूसरी योजना में इस कार्य के लिए २ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस योजना के अन्तर्गत लगभग ११,००० मकान बनाए जाने की आशा है।

१६. कई वर्षों से कोयले की खानों में काम करने वाले मजदूरों के लिए अच्छे प्रकार के मकानों की व्यवस्था करने के प्रयत्न किए गए है। कोयला उद्योग के कार्यक्रमों में बहुत अधिक विस्तार हो जाने के कारण दूसरी पंचवर्षीय योजना में खनिकों के लिए मकानों की व्यवस्था करना काफी महत्वपूर्ण है। पहले के प्रस्तावों को कार्यान्वित करने में जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उसके आधार पर हाल ही में एक नई योजना बनाई गई है। कोयले की खानों से रवाना होने वाले प्रत्येक टन कोयले और कोक पर ६ आने का एक उपकर वसूल किया जाता है, जिससे इस योजना का खर्च चलता है। इस प्रकार लगभग १ करोड़ की वार्षिक आय होती है। इस योजना के अन्तर्गत कोयला श्रम कल्याण बोर्ड कोयला खानों के मालिकों से पट्टे पर ४० साल की अवधि के लिए मुफ्त या मामूली किराए पर जमीन प्राप्त करेगा। बोर्ड द्वारा मकान बनाए जाएंगे और कोयला खानों के मालिक बोर्ड को प्रति मकान प्रति मास २ रुपए किराया देंगे और मजदूरों से भी बोर्ड को दी गई रकम से अधिक किराया वसूल नहीं किया जाएगा। इस कार्य के लिए लगभग ८ करोड़ रुपए उपलब्ध किए जाने की आशा है और आशा की जाती है कि योजना की अवधि में लगभग ३०,००० मकान बनाए जाएंगे।

१७. अभ्रक खान श्रम कल्याण निधि अधिनियम, १९४६ के अनुसार भारत से निर्यात किए जाने वाले अभ्रक पर कीमत के हिसाब से ढाई प्रतिशत का उत्पादन शुल्क लगाया गया है। निधि की वार्षिक आय लगभग १५ लाख रुपया है। अभ्रक की खानों में काम करने वाले मजदूरों के लिए एक सहायता प्राप्त आवास योजना १९५३ में स्वीकार की गई थी।

१८. केन्द्रीय सरकार ने अपने कर्मचारियों को मकान बनाने के लिए ऋण देने की योजना, जो कुछ वर्ष पहले रोक दी गई थी, १९५६-५७ से फिर चालू कर दी है। वर्तमान योजना के अनुसार २४ महीनों की तनख्वाह या अधिक से अधिक २५ हजार रुपया नए मकान बनाने के लिए पेशगी दिया जा सकता है और मकानों में विस्तार करने के लिए दस हजार रुपए तक की रकम दी जा सकती है। ये रकमें २० साल की अवधि में साढे चार प्रतिशत वार्षिक सूद की दर से वापिस करनी होंगी।

१९. मध्यम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की एक योजना के निमित्त दूसरी योजना में तीन करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस योजना के अन्तर्गत बीमा कम्पनियों के साथ सहयोग किया जाएगा और आरम्भ से प्रस्तावित शर्तों के अनुसार सरकार और बीमा कम्पनी दोनों मिलकर प्रत्येक ऋण को स्वीकार करेंगी। मकान की लागत के ८० प्रतिशत भाग तक ऋण दिया जा सकता है, जिसमें जमीन की लागत भी सम्मिलित है। जमीन की लागत का २५ प्रतिशत भाग सरकार देगी और शेष ७५ प्रतिशत बीमा कम्पनी देगी। जीवन बीमा का राष्ट्रीयकरण हो जाने के बाद योजना के विस्तृत विवरणों पर इस समय विचार किया जा रहा है।

आवास सम्बन्धी आंकड़े और सर्वेक्षण

२०. ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों में कुछ दशाब्दों से मकानों की समस्या निरन्तर विषम होती गई है। भारत में मकानों की स्थिति के सम्बन्ध में कुछ थोड़े-से ही वैज्ञानिक सर्वेक्षण किए गए हैं। मकानों के बारे में जो आंकड़े हैं, वे सदोष और अपूर्ण हैं और इस प्रकार के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं जिनसे या तो यह मालूम हो सके कि कितने नए मकान बने या मकानों की कितनी कमी है। किसी भी पैमाने पर मकान सम्बन्धी कार्यक्रमों को तैयार करने के लिए यह आवश्यक है कि नियमित समय पर ठीक-ठीक आंकड़े उपलब्ध होते रहें। केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन राज्यीय सांख्यिकी ब्यूरो के सहयोग से सार्वजनिक और निजी दोनों ही क्षेत्रों में मकानों और मकान बनाने के सम्बन्ध में आंकड़े जमा करने के लिए प्रयत्न कर रहा है। अर्थ-व्यवस्था को नियमित करने में निर्माण सम्बन्धी और अधिक कार्रवाई का बड़ा महत्वपूर्ण भाग रहेगा। इसलिए इस क्षेत्र में आंकड़ों सम्बन्धी सूचना का बड़ा महत्व है।

२१. राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण ने अपने सातवें दौर में (अक्तूबर १९५३ से मार्च १९५४) नमूने के तौर पर ९४३ गांवों और ५३ शहरों तथा बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास, इन चार बड़े शहरों में मकान सम्बन्धी परिस्थितियों की जाच की। ५३ शहरों में से १४ शहरों की आबादी १ लाख या इससे अधिक थी, ९ की आबादी ५० हजार से १ लाख तक, १४ की आबादी १५ से ५० हजार तक और १६ की आबादी १५ हजार से कम थी। इस सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप जो आंकड़े उपलब्ध हुए, उन्हें हाल ही में तालिकाबद्ध किया गया है और यद्यपि ये आंकड़े अस्थायी हैं, फिर भी उनसे देश की आवास स्थिति के कुछ पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है। इस जांच से पता चला कि ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग ८५ प्रतिशत मकान मिट्टी की कुरसी पर बने हुए हैं, ८३ प्रतिशत की दीवारें मिट्टी, बांस या सरकण्डे की हैं और लगभग ७० प्रतिशत की छतें घास-फूस, सरकण्डा और मिट्टी आदि की हैं। लगभग ७ प्रतिशत मकान ईंटों की कुरसी पर बने हैं और उनकी दीवारें ईंट, सीमेंट या पत्थर की हैं और उनकी छतें पनालीदार चादरों या खपरैल आदि की हैं। ९५ प्रतिशत से अधिक मकानों में टट्टियां नहीं हैं। जहां तक पीने के पानी के साधनों का सम्बन्ध है, ७०

प्रतिशत मकान कुओं पर, १३ प्रतिशत तालाबों और तलैयों पर, १२ प्रतिशत झीलों, चश्मों और नदियों आदि प्राकृतिक साधनों पर, ३ प्रतिशत नलकूपों पर और १·५ प्रतिशत से कम पानी के नलकों पर तथा १·५ प्रतिशत अन्य साधनों पर निर्भर है। जिन मकानों का सर्वेक्षण किया गया उनमें से लगभग ८१ प्रतिशत मे ३ या ३ से कम कमरे थे, ३४ प्रतिशत मे १ कमरा था और ३२ प्रतिशत मे दो कमरे थे। लगभग ३८·५ घरों मे प्रति व्यक्ति १०० वर्गफुट से कम जगह थी और ३२·५ प्रतिशत मे १०० और २०० वर्गफुट के बीच जगह थी।

२२. जांच के दौरान मे जिन शहरी क्षेत्रो का अध्ययन किया गया, उनमे लगभग चौथाई मिट्टी की कुरसी पर बने है और उनकी दीवारें और छते भी मिट्टी की पाई गईं। इस अध्ययन से इस विचार की पुष्टि हुई कि पिछले बीस वर्षो मे उतने नए मकान नही बने जितनी आबादी शहरी क्षेत्रों में बढ़ गई है। उपलब्ध आकड़ों से पता चलता है कि शहरी आबादी में ३ से ४ प्रतिशत वार्षिक वृद्धि हुई है किन्तु नए बनाए गए मकानों मे २ से २·५ प्रतिशत की ही वृद्धि हुई है। शहरी क्षेत्रों में लगभग ४४ प्रतिशत मकानों मे केवल एक कमरा है, २८ प्रतिशत में २ कमरे, १२ प्रतिशत में ३ कमरे, और १६ प्रतिशत में ४ या अधिक कमरे है। लगभग ४६ प्रतिशत मकानों में प्रति व्यक्ति जगह १०० वर्गफुट से कम है। इन तथ्यों से शहरों की वर्तमान घनी आबादी का पता चलता है और इस समय जो हालत है, उसको देखते हुए शहरों मे और भी अधिक घनी आबादी हो जाने की सम्भावना है।

२३. शहरी क्षेत्रों में मकानों की कितनी कमी है, उसका केवल मोटे तौर पर ही अनुमान लगाया जा सकता है। ६ करोड़ २० लाख शहरी आबादी के लिए १९५१ में लगभग १ करोड़ मकान थे। मोटे तौर पर उस साल लगभग २५ लाख मकानों की कमी थी। १९३१ और १९४१ के बीच शहरों की आबादी में १ करोड़ ६ लाख तथा १९४१ और १९५१ के बीच १ करोड़ ८१ लाख की वृद्धि हुई। इन दोनों दशकों मे शहरी क्षेत्रों में बसे हुए घरों की संख्या मे क्रमश: १८ और १७ लाख की वृद्धि हुई। किस स्तर के मकान बने, इस प्रश्न को छोड़ दें तो भी १९४१-५१ की अवधि में परिमाण की दृष्टि से मकानों की सख्या में बड़ी कमी रही। युद्धोत्तर विकास तथा देश-विभाजन के साथ-साथ शहरी आबादी मे तेजी से वृद्धि हुई है। १९५१ और १९६१ के बीच कुल शहरी आबादी में लगभग ३३ प्रतिशत की वृद्धि हो जाने की आशा है। इसलिए यदि प्रभावशाली उपाय न किए गए तथा शहरी विकास के लिए यदि सावधानीपूर्वक कार्यक्रम न बनाए गए तो १९५१ की तुलना में १९६१ में मकानों की दुगुनी कमी हो सकती है। निजी क्षेत्र मे और सरकारी अधिकरणों द्वारा विभिन्न आवास योजनाओं को कार्यान्वित करने के कुछ वर्षों के व्यावहारिक अनुभव के बाद ही मकान बनाने की व्यापक नीतिया और कार्यक्रम निश्चित किए जा सकते हैं। इस अध्याय में आर्थिक योजना तथा बड़े पैमाने और छोटे पैमाने के उद्योगों के विकास कार्यक्रमों की पृष्ठभूमि में आवास नीति और शहरी विकास के बारे में एक व्यापक दृष्टिकोण बनाने का प्रयत्न किया गया है

[illegible] की समस्याएं

२४. दूसरी पंचवर्षीय योजना में विभिन्न सरकारी अधिकरणो द्वारा और अधिक मकान बनाने के कार्यक्रमों में जो विस्तार किया जाएगा, तथा निजी क्षेत्र में गृह निर्माण कार्य मे जिस [illegible] है, उसका पहले ही वर्णन किया जा चुका है। पिछले दो या तीन वर्षों में

आवास की सुविधाएं बढाने मे जो मुख्य-मुख्य समस्याएं सामने आई है और जिनकी ओर ध्यान देना है वे इस प्रकार है :—

(१) तेजी से विकसित होने वाले नगरों मे मकान बनाने के लिए पर्याप्त विकसित स्थान उपलब्ध नही है;

(२) निजी क्षेत्र मे महगे मकान बनाने की ओर ही अधिक ध्यान दिया जाता है ताकि उनसे ज्यादा किराया वसूल किया जा सके। इस प्रकार निम्न मध्यम वर्ग तथा मध्यम वर्ग की आवश्यकताएं पर्याप्त रूप में पूरी नहीं की जा रही;

(३) सरकारी सहायता के अतिरिक्त मकान बनाने के लिए आर्थिक सहायता देने वाली सस्थाओं की कमी है;

(४) सहकारी आधार पर मकान बनाने के कार्य मे अपेक्षाकृत कम प्रगति हुई है;

(५) मकान बनाने के सामान और तरीकों में अनुसन्धान की काफी आवश्यकता है और स्थानीय सामग्री की उपलब्धि तथा कम मात्रा मे मिलने वाले सामान के उपयुक्त प्रयोग को ध्यान में रखते हुए मकान बनाने का मानदण्ड निश्चित करने की भी आवश्यकता है; और

(६) कुछ अपवादों को छोड़कर राज्य सरकारे व्यापक रूप से मकान बनाने के कार्यक्रमो को सहायता देने और उन्हें स्वय कार्यान्वित करने के लिए पर्याप्त रूप से सगठित नही है।

२५. कम या मध्यम आय वाले लोगों को मकान बनाने के लिए उपयुक्त स्थान या प्लाट देने के प्रश्न की पहले चर्चा की जा चुकी है। यह सुझाव दिया गया है कि कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजना के अन्तर्गत जिस निधि की व्यवस्था की गई है, उसका कुछ भाग एक योजनाबद्ध आधार पर भूमि का विकास करने के लिए प्रयुक्त किया जाए ताकि योजना के अधीन ऋणों की माग करने वाले लोगों को तथा कम आय वाले लोगों को उचित मूल्यो पर मकान बनाने के प्लाट दिए जा सकें। आम तौर पर जमीन के बारे में किए जाने वाले सट्टे को भूमि उपयोग के नियंत्रण और जमीन की अदला-बदली के नियम के द्वारा रोकना चाहिए।

२६. निजी क्षेत्र में अधिकांश मकान किराये के लिए बनाए जाते हैं और सामान्यत: मकानों के किराए अधिकांश लोगों की किराया देने की शक्ति से बाहर होते हैं। निजी क्षेत्र में आवास के विकास में इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि मध्यम आय वाले लोगो को सुविधाएं दी जाएं ताकि वे अपने लिए मकान बना सकें और इस सम्बन्ध में सरकारी अधिकरणों को आवश्यक कार्रवाई करनी चाहिए। वर्तमान स्थिति में केन्द्रीय सरकार द्वारा कम आय वाले लोगों के लिए लागू की गई आवास योजना से कुल मांग का एक भाग ही पूरा हो सकता है। मकान बनाने के लिए आर्थिक सहायता देने के निमित्त कुछ संस्थाओं की आवश्यकता है। १९५५ मे आवास मंत्री सम्मेलन में यह सुझाव दिया गया था कि राज्य सरकारें राज्य आवास वित्त निगम स्थापित करने की संभावना की जाच करें। पिछले वर्षों में बीमा कम्पनियों ने मकान बनाने के लिए सीमित मात्रा म कुछ रकम दी है। बीमा कम्पनियों के राष्ट्रीयकरण तथा अधिकांश शहरी क्षेत्रों और अधिक मकान बनाने की अत्यधिक आवश्यकता के कारण हमारा यह सुझाव है कि केन्द्रीय सरकार ऐसे सगठनों और उपायों का विशेष अध्ययन करे जिन्हें भारत की विशिष्ट परिस्थितियों में पर्याप्त मात्रा में वास्तविक अचल सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए विकसित किया

जा सके। रोजगार के बढ़ते हुए अवसरों तथा पूंजी निर्माण को प्रोत्साहन देने तथा निजी बचत में गृह निर्माण कार्य का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। इस दृष्टि से भी यह जरूरी है कि आर्थिक तथा अन्य प्रकार की सहायता देने के लिए उपयुक्त सस्थाओं का विकास करने के निमित्त शीघ्र ही कारवाई की जाए। इस सम्बन्ध मे विभिन्न शहरी क्षेत्रों मे तथा औद्योगिक कर्मचारियों की आवास सहकारी समितियों के अनुभवों की जांच की जाए ताकि यह निश्चय किया जा सके कि किन दिशाओं में सहकारी आवास योजनाओं से विशेष लाभ उठाया जा सकता है। इस तरह की जांच से सहकारी आवास के विकास के लिए आवश्यक सगठन सम्बन्धी और अन्य सुविधाओं का स्वरूप भी निश्चित किया जा सकेगा।

२७. पहली पचवर्षीय योजना की एक सिफारिश के अनुसार आवास सम्बन्धी अनुसन्धान तथा तरीको के विकास के लिए निर्माण, आवास तथा सम्भरण मत्रालय मे १९५४ मे राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन स्थापित किया गया था। यह संगठन भवन निर्माण के लिए शीघ्र, सस्ते और अधिक अच्छे उपाय सुझाएगा तथा यह भी बताएगा कि कठिनाई से प्राप्त होने वाले सामान तथा जन-शक्ति के प्रयोग मे किस प्रकार की बचत की जाए। यह सगठन भवन निर्माण सम्बन्धी क्रिया-कलाप तथा सामान के बारे मे आवश्यक आंकड़े भी इकट्ठा करने का प्रयत्न कर रहा है तथा भवन विर्माण के नमूनों, सामान तथा निर्माण के सम्बन्ध मे आवश्यक जानकारी भी देगा। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन ने विभिन्न अनुसन्धान प्रयोगशालाओं एवं संस्थाओं के द्वारा अनुसन्धान का एक व्यापक कार्यक्रम तैयार किया है। विकास के सम्बन्ध मे जिन प्रश्नों की जांच की जा रही है, उनमे ये सम्मिलित हैं: ईंटों की किस्म सुधारने के उपाय, बोर्डो का निर्माण, विभाजक दीवारे, खपरैलें, खोखली ईंटें आदि। निर्माण के काम मे सुखाई हुई और तैयार लकड़ी और बासों का प्रयोग, मकानों में दरवाज़े और खिड़किया लगाने के सस्ते तरीके, निर्माण के लिए कम मिलने वाले सामान की चालू प्रयोग विधियां, सीमेंट का प्रयोग कम करने की संभावनाए और जहा सम्भव हो सीमेंट के स्थान पर चूने का प्रयोग, इन सब बातों का भी अध्ययन किया जा रहा है। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन कंकड़, चूने तथा अन्य प्रकार के चूने के उत्पादन के बारे मे भी जाच कर रहा है। मिट्टी के पलस्तर पर सीलन का प्रभाव न हो, इस बारे मे भी कार्य किया जा रहा है। कम मिलने वाले सामान के प्रयोग में बचत करने और मकानों की लागत मे कमी करने की आवश्यकता के कारण मकानों के मानदण्ड विकसित करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं जो महंगे या शानदार हुए बिना भी संतोषजनक होंगे और जिनमे उचित प्रकार से तैयार करने के बाद स्थानीय सामान का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाएगा।

२८. आवास-कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए संगठन के प्रश्न पर १९५५ मे हुए आवास मत्री-सम्मेलन में विचार किया गया था। सम्मेलन ने सुझाव दिया था कि आवास के विभिन्न पहलुओं विशेषत: मकानों की आवश्यकता का निश्चय करना, वृहद् योजनाओं को तैयार करना, भूमि प्राप्त करना और आवास कार्यक्रमों को कार्यान्वित करना आदि बातों में समन्वय स्थापित करने के लिए प्रत्येक राज्य में एक विभाग या एजेंसी होनी चाहिए। चूंकि मकान तथा अन्य निर्माण कार्यक्रम बड़े पैमाने पर किए जाते हैं, इसलिए राजगीरों, ईंट बनाने वालो, बढ़इयों, पानी का नल आदि लगाने वालों और अन्य कर्मचारियों को वैज्ञानिक प्रशिक्षण देने की आवश्यकता अनुभव की गई है। इस दिशा में हाल ही में निर्माण, आवास तथा सम्भरण मंत्रालय और कुछ राज्यों ने कदम उठाए हैं, किन्तु प्रशिक्षण कार्यक्रमों में पर्याप्त विस्तार करने की आवश्यकता है।

शहरी विकास

२६. शहरी क्षेत्रों में मकानों की कमी होने के कारण आवास की सुविधाओं में विस्तार करने के लिए कई प्रकार के उपाय काम में लाने की आवश्यकता है। शहरी विकास के वर्तमान रुख को देखते हुए यदि केवल इन्हीं उपायों पर ध्यान केन्द्रित किया गया तो मकानों की और भी अधिक कमी होती जाएगी। इसलिए यह आवश्यक है कि शहरी आवास को अपने आप में एक अलग समस्या या घटनाओं से पीछे न रहने का एक प्रयत्न मात्र न समझा जाए, बल्कि उसे शहरी इलाकों की योजना की विस्तृत समस्या का और जिन क्षेत्रों मे ये शहर बसे हैं, उनके साथ इनके आर्थिक एवं दूसरे सम्बन्धों का ही भाग समझा जाए।

३० १६२१ और १६५१ के बीच शहरी आबादी लगभग २ करोड ७० लाख से बढ़कर लगभग ६ करोड़ २० लाख हो गई, जिससे शहरी आबादी का कुल आबादी से अनुपात लगभग ११ से बढ़कर १७ प्रतिशत से भी अधिक हो गया। चूंकि राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का और भी अधिक घनिष्ठ रूप से एकीकरण हो गया है, इसलिए शहरों का आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक महत्व बढ़ गया है। गत वर्षों में अधिकांश विकास बिना किसी योजना के हुआ है। बड़े-बड़े शहरों मे नए उद्योग एवं सेवाएं स्थापित हुई है, परिणामतः मकान एव अन्य सुविधाए प्रदान करने की समस्याएं निरन्तर विकट होती गई है। भूमि की कीमतों में वृद्धि, बढ़ते हुए शहरों के आस-पास जमीनों की खरीदारी में सट्टेबाजी, ज्यादा किराए तथा गन्दी बस्तियों के इलाकों का विकास आदि बातें अधिकांश बड़े-बड़े शहरों मे एक जैसी है। इस प्रकार एक साथ मिलकर जो अनेक समस्याएं पैदा हुई है, उनका सामना करने में थोड़ी-सी ही नगरपालिकाएं समर्थ हुई है। शहरी विकास के उन पहलुओं को और अधिक अच्छी तरह से समझने के लिए जिनका ग्रामीण-शहरी प्रव्रजन तथा रोजगार के अवसरो के विकास पर विशेष प्रभाव पड़ा है, योजना आयोग की अनुसन्धान कार्यक्रम समिति ने २१ प्रमुख शहरों तथा नगरों* का सर्वेक्षण आरम्भ किया है। हाल के वर्षों में ग्रामीण योजना के प्रश्न पर काफी ध्यान दिया गया है। इसी प्रकार का ध्यान अब शहरी विकास तथा पुनर्विकास की पेचीदा समस्याओं की ओर देना होगा। भारत इस समय द्रुत औद्योगिक विकास की देहली पर खड़ा है। यदि पहले से ही सावधानीपूर्वक विचार न किया गया और योजना न बनाई गई तो औद्योगिक प्रगति के साथ-साथ शहरी क्षेत्रों में ऐसी गम्भीर सामाजिक एवं दूसरी समस्याएं पैदा हो जाएंगी जिनका सामना करना निरन्तर कठिन होता जाएगा। इसलिए यह आवश्यक है कि अभी से केन्द्र में, राज्यों में और प्रत्येक प्रदेश में सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा शहरी विकास का भावी मार्ग सही रूप में निश्चित किया जाए। यद्यपि शीघ्र ही परिणाम नहीं निकलेंगे, फिर भी शुरू से ही उचित नीतियां निर्धारित की जानी चाहिए और पढ़े-लिखे समझदार लोगों की राय से उन नीतियों का पालन करने के लिए सुदृढ़ प्रयत्न किए जाने चाहिए।

३१. योजनाबद्ध आर्थिक विकास और शीघ्र होने वाले औद्योगीकरण के सन्दर्भ में यदि शहरी विकास, पुनर्विकास तथा आवास सम्बन्धी नीतियों पर विचार किया जाए तो तीन समस्याओं का विशेष रूप से अध्ययन करना होगा, अर्थात (१) शहरी क्षेत्रों में योजनानुसार विकास करने के तरीके, (२) आवास सम्बन्धी सुविधाओं का विस्तार, और (३) सुदृढ़ तथा प्रगतिशील आधार

*आगरा, इलाहाबाद, अलीगढ़, अमृतसर, बड़ौदा, भोपाल, बम्बई, कलकत्ता, कटक, दिल्ली, गोरखपुर, हैदराबाद, हुबली, जयपुर, जमशेदपुर, कानपुर, लखनऊ, मद्रास, पूना, सूरत और विशाखापत्तनम।

पर नागरिक प्रशासनों का विकास । इस अध्याय में दूसरी समस्या पर कुछ विस्तार से विचार किया गया है । तीसरी समस्या के बारे मे यहां यह कह देना काफी है कि उचित आधार पर शहरी विकास होने के लिए कुशल नगरपालिका सम्बन्धी प्रशासनों का होना बड़ा जरूरी है और इन प्रशासनो के पास पर्याप्त अधिकार, साधन तथा प्रशासनिक और टेकनीकल कर्मचारी भी होने चाहिएं। शहरी विकास और पुनर्विकास के कारण नगरपालिकाओं पर निरन्तर अधिकाधिक जिम्मेदारियां पड़ती रहती हैं और इस समय उनमें से थोड़ी-सी ही इन जिम्मेदारियों को निबाह सकती है। कई पश्चिमी देशों में मुख्यतः स्थानीय अधिकरणों के द्वारा ही आवास एवं अन्य नागरिक कार्यक्रम कार्यान्वित किए जाते हैं। भारत मे भी यह जरूरी है कि आर्थिक विकास की आवश्यकतानुसार आवास एवं अन्य नागरिक सुविधाए देने के लिए राज्य के अभिकरणों के रूप में स्थानीय अधिकरणों का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाए।

३२. योजनाबद्ध शहरी विकास के लिए और अगले १० या १५ सालों मे जिस प्रकार से शहरी केन्द्रों का विकास होना है, उसके लिए यह आवश्यक है कि आर्थिक विकास का विशेषत: औद्योगीकरण के स्वरूप का ठीक-ठीक और स्पष्ट ज्ञान हो ताकि उसके अनुसार ही विभिन्न औद्योगिक तथा दूसरे प्रकार के कार्यों का वितरण, स्थापना तथा आकार निश्चित किया जा सके। उपर्युक्त अध्यायों मे इन प्रश्नों पर विचार किया गया है। जिलों और राज्यों जैसे प्रदेशों के आधार पर तथा कृषि, उद्योग, परिवहन आदि विकास के विभिन्न क्षेत्रों के लिए बनाई गई योजनाओं के अनुसार तथा उन्हें और अधिक कुशलता से कार्यान्वित करने के लिए यह भी आवश्यक है कि शहरी-ग्रामीण प्रदेशों के अध्ययन के आधार पर भौतिक तथा आर्थिक योजनाएं तैयार की जाएं और प्रत्येक प्रदेश को स्वीकृत स्थानीय योजना का एक क्षेत्र समझा जाए। विशेषत: बड़े और बढ़ने वाले नगरों, तथा उन नदी घाटी क्षेत्रों के लिए जो कि सिंचाई एवं विद्युत की नई योजनाओं द्वारा विकसित किए जा रहे हैं, प्रादेशिक दृष्टिकोण से योजना बनाना आवश्यक है। संतुलित शहरी-ग्रामीण प्रदेशों का विकास करना ही अन्तिम उद्देश्य होना चाहिए जिससे स्थायी और विभिन्न प्रकार का रोजगार मिल सकेगा तथा उचित सामाजिक और आर्थिक मूल्य पर विकास हो सकेगा।

३३. इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रत्येक राज्य मे निम्नलिखित ५ प्रमुख दिशाओं मे कार्रवाई करनी होगी :—

(१) प्रत्येक राज्य समस्त प्रमुख नगरों के लिए व्यापक योजनाए बनाने और सर्वेक्षण करने का क्रमिक कार्यक्रम तैयार करे। इनमें प्रत्येक नगर या क्षेत्र में भूमि प्रयोग और प्रादेशिक सिद्धान्तों के एकीकरण की व्यवस्था होनी चाहिए ताकि काम करने और रहने की परिस्थितियों में अधिक से अधिक कुशलता और बचत की जा सके। इस सम्बन्ध में दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, अहमदाबाद, हैदराबाद, कानपुर, लखनऊ, पूना आदि नगरों की ओर शीघ्र ही ध्यान देने की जरूरत है।

२) हाल ही में कई नए नगर बस गए है और औद्योगिक प्रगति के साथ-साथ दूसरी तथा बाद की योजनाओं के काल में कई अन्य नगरों के शीघ्र विकसित होने की संभावना है। सिन्दरी, दुर्गापुर, भिलाई, राउरकेला, चित्तरंजन और नेवेली इसी श्रेणी के नगरों में से हैं। ऐसे नगरों के लिए यथाशीघ्र प्रादेशिक योजनाएं बनाने का कार्य आरम्भ होना चाहिए।

(३) नदी घाटी क्षेत्रों का विकास उनके भूतल-रूप, साधनों, विकास सम्भावनाओं एवं विकास की आवश्यकताओं के उचित सर्वेक्षण पर आधारित होना चाहिए। दामोदर घाटी क्षेत्र के प्रादेशिक सर्वेक्षण का परीक्षणात्मक कार्य जल्दी ही किया जाएगा। भाखड़ा-नंगल, हीराकुड, चम्बल, तुगभद्रा, कोयना तथा अन्य महत्वपूर्ण योजना क्षेत्रों में भी इसी प्रकार के सर्वेक्षणों की आवश्यकता है।

(४) अभी तक मद्रास, बम्बई, हैदराबाद और सौराष्ट्र, केवल इन चार राज्यों में ही नगर और ग्राम योजना कानून बनाया गया है। उत्तर प्रदेश मे इस प्रकार के कानून पर विचार किया जा रहा है। यह सुझाव दिया गया है कि सब राज्यों में नगर और ग्राम योजना कानून बनाया जाना चाहिए और उसे कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक व्यवस्था भी की जानी चाहिए। सुयोग्य कर्मचारियों के न मिल सकने के कारण शहरी योजना बनाने का कार्य इस समय प्राय: बीच में ही रुक जाता है। योजना में शहरी योजना बनाने वालों तथा नक्शानवीसों के प्रशिक्षण की वर्तमान सुविधाओं में विस्तार करने की व्यवस्था की गई है।

(५) दूसरी पंचवर्षीय योजना में ऐसे कई कार्यक्रम हैं जिनका शहरी विकास तथा पुनर्विकास पर काफी प्रभाव पड़ेगा। ऐसे कार्यक्रम ये है : विशाल औद्योगिक और अन्य कार्य जिनकी स्थापना का निश्चय सरकार करती है, ग्राम और छोटे उद्योगों तथा औद्योगिक संस्थानों और नगरों का विकास, सिंचाई तथा विद्युत की प्रमुख योजनाएं, छोटे-छोटे नगरों तथा गांवों मे बिजली लगाने की योजनाएं, कृषि की पैदावार के लिए गोदामों तथा हाट केन्द्रों की स्थापना, शहरो में पानी की सप्लाई तथा सफाई की योजनाएं, औद्योगिक और कम आय वाले लोगों के लिए मकान बनाने की योजनाएं, तथा परिवहन की सुविधाओं में विस्तार करना आदि-आदि। इनको और अन्य कार्यक्रमों को संगठित रूप से कार्यान्वित करना चाहिए और शहरी तथा प्रादेशिक विकास पर पड़ने वाले उनके प्रभाव पर भी ध्यान रखना चाहिए। साथ ही प्रत्येक राज्य या क्षेत्र के विभिन्न भागों में योजना की वर्तमान तथा भावी आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। इस प्रकार की समन्वित योजना के परिणामस्वरूप इन कार्यक्रमों में जिन साधनों का प्रयोग किया जाएगा, उनका सन्तोषजनक परिणाम निकलेगा तथा आर्थिक विकास और नागरिक सुविधाएं प्रदान करने का खर्च भी कम हो जाएगा।

अध्याय २७

श्रम नीति और कार्यक्रम

विषय प्रवेश

पहली पंचवर्षीय योजना को तैयार करते समय इस बात का ध्यान रखा गया था कि देश की अर्थ-व्यवस्था मे औद्योगिक श्रम के महत्व को दिनोदिन अधिक मान्यता मिलती जा रही है। स्वतन्त्रता मिलने के पहले मजदूरों के अधिकारों की काफी अरसे से अवहेलना होती आ रही थी, स्वतन्त्रता के पश्चात उनके उन अधिकारों को स्वीकार ही नहीं किया गया, बल्कि इस दिशा मे उन्हें कुछ आश्वासन भी दिए गए। पहली पचवर्षीय योजना मे इन्हीं आश्वासनों को निश्चित रूप देने तथा अर्थ-व्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की आवश्यकताओं को ध्यान मे रखकर मजदूरों के साथ न्याय करने की चेष्टा की गई थी।

२. योजना ने श्रम के क्षेत्र में सफलता पाई है, इस बात के तीन प्रमाण हो सकते है---औद्योगिक सम्बन्धों में सुधार हुआ है जिसका श्रेय मालिकों और मजदूरो दोनों को है, भिन्न-भिन्न स्तरों पर मिल-जुलकर सलाह करने में भी सफलता मिली है, और पिछले पाच वर्षो में मजदूर की असली कमाई में वृद्धि हुई है। मालिकों और मजदूरो मे मिलकर सलाह करने और सरकार द्वारा स्थापित औद्योगिक समितियों में अपने-अपने मामलों को सुलझाने की जो इच्छा दीख रही है, वह कुछ दिनों से श्रम सम्बन्धों का एक आशाजनक चिह्न हो गया है। वास्तव में इन पिछले पाच सालों में जो भी विधान तैयार हुआ है उसके अधिकांश पर त्रिदलीय समितियों के पक्षों की मोटे तौर पर सहमति रही है। बोनस और फायदे के बंटबारे के प्रश्न हालाकि अभी संतोषजनक ढंग से सुलझ नही सके है, फिर भी कतिपय केन्द्रों मे इधर जो करार हुए हैं वे निश्चित रूप से इस दिशा मे प्रगति के ही चिह्न है। कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, १९४८ और कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम, १९५२ के अन्तर्गत दिए गए सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी उपायों को कार्यरूप देने की दिशा में भी प्रगति हुई है। काम से अलग कर दिए जाने पर भी सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से औद्योगिक विवाद (सशोधन) अधिनियम, १९५३ का विधान किया गया है। साथ ही साथ उद्योग न्यायाधिकरण भी भविष्य निधि, उपदान (ग्रेचुइटी) आदि सवालो पर निर्णय देते समय इस सुरक्षा की आवश्यकता को पर्याप्त रूप से ध्यान में रखते है। यह भी धीरे-धीरे स्वीकार किया जाने लगा है कि जिन परिस्थितियो में काम किया जाना हो उनमे भी सुधार होना चाहिए। मजदूरो के स्वास्थ्य और सुरक्षा से सम्बन्ध रखने वाले उत्पादनों की समस्याओं का विधिवत अध्ययन करने के लिए एक केन्द्रीय श्रम संस्थान आयोजित किया गया है तथा कुछ उद्योगों की उत्पादकता का अध्ययन किया जाने लगा है। राज्य सरकारों ने कल्याण केन्द्र खोले है और पिछले पांच वर्षो से औद्योगिक कामगारों के लिए अच्छे मकानों की व्यवस्था करने की दिशा मे काफी बड़े प्रयत्न किए गए हैं। हालांकि वर्तमान मजदूरी को उचित मजदूरी की सीमा तक उठाने और मजदूरों को आवास सुविधाएं प्रदान करने की दिशा में अभी बहुत कुछ करने को बाकी है, तथापि यह प्रगति

धीरे-धीरे ही होगी। बागान श्रम अधिनियम को कार्यरूप दिए जाने से भी बागान मजदूरों की स्थिति में कुछ सुधार अवश्य होगा।

३. पहली पंचवर्षीय योजना मे श्रम नीति पर जो भी कहा गया है उसका अधिकांश भविष्य के लिए अच्छे आधार का काम देगा। लेकिन फिर भी समाज के समाजवादी स्वरूप को ध्यान में रखकर, जिसके अनुसार दूसरी पंचवर्षीय योजना का निर्माण किया गया है, श्रम नीति में कुछ आवश्यक सुधार करने ही पड़ेगे। समाजवादी ढंग के समाज की स्थापना पूर्ण रूप से आर्थिक आधारों पर ही नही होती बल्कि समाज सेवा की भावना तथा समाज द्वारा इस तथ्य को मान्यता देने की आकांक्षा भी काफी महत्व रखती है। इस प्रसंग मे यह आवश्यक है कि कामगार यह अनुभव करे कि वह एक प्रगतिशील राज्य के निर्माण मे सहायता कर रहा है। इस प्रकार समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने के पहले औद्योगिक प्रजातन्त्र की स्थापना आवश्यक हो जाती है।

४. सरकारी क्षेत्र के विस्तार का अर्थ है कि उस क्षेत्र के मजदूर और प्रबन्ध अधिकारी दोनों ही अधिकाधिक बढ़ती हुई जिम्मेदारियां उठाएं और अगर सरकारी क्षेत्र में काम की परिस्थितियां ऐसी हो जाएं कि उसे निजी क्षेत्र में रखना पड़े, तो ऐसे क्षेत्र के प्रशासकों को मजदूरों के हितों के विषय में विशेष रूप से सजग रहना होगा। चाहे सार्वजनिक क्षेत्र हो या निजी, उत्पादन में क्रमिक रूप से वृद्धि करने के लिए अनुशासनहीनता, कामबन्दी और घटिया किस्म के उत्पादन आदि तमाम बातों से बचना होगा और श्रम नीति को इसी दिशा में चालित करना होगा। ऐसी नीति के लिए आवश्यक है कि उसको सिर्फ मालिक और मजदूरों के हितों का ही नहीं बल्कि जनता का भी समर्थन मिले। इसलिए योजना आयोग ने श्रम प्रतिनिधियों का एक मंडल बनाया तथा इस मामले में उसकी सलाह मांगी। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में की गई सिफारिशें मण्डल के सदस्यों के निर्णयों का ही परिणाम हैं।

मजदूर संघ

५. मजदूरों के हितों की रक्षा के लिए और उत्पादन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक मजबूत मजदूर संघ (ट्रेड यूनियन) आन्दोलन का होना जरूरी है। आजकल जितने भी मजदूर संघ हैं, वे मुख्य रूप से अनेक मजदूर सघों के होने, राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता, साधनों की कमी तथा मजदूरों में एकता की कमी की वजह से कमजोर है। अक्सर ऐसा सुझाव दिया जाता है कि मजदूर आन्दोलन में जो यह अनुचित प्रतिद्वंद्विता पाई जाती है उसका कारण यह है कि संघों के कर्ता-धर्ता बाहरी लोग बन जाते है। इस कथन को जहां बिल्कुल आधारहीन नही कहा जा सकता, वहां यह भी मानना पड़ेगा कि इन्ही बाहरी लोगों ने देश के मजदूर आन्दोलन को बढ़ाने में बड़ा काम किया है। उनके बिना यह आन्दोलन न तो इस स्थिति को पहुंच सकता और न इसमें शक्ति ही आ पाती। इन सघों में काम करने वाले ऐसे बाहरी लोगों के बीच भेद करना आवश्यक हो जाता है जो सारे समय मजदूर संघ मे काम करते है अथवा जो और बहुत-से कामों में लगे रहकर थोड़े समय मजदूर सघ का भी काम करते है। मजदूर संघ सगठनो मे पहली श्रेणी के पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं की अब भी आवश्यकता है। इसलिए अगर मजदूर संघ ऐसे व्यक्तियों को अपने कार्यांगों में चुन लते हैं तो उनके इस अधिकार में हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। फिर भी संघों को यह अनुभव करना ही चाहिए कि किसी ऐसे साधन पर जो कि औद्योगिक मजदूरों की श्रेणी के बाहर हो, आवश्यकता से अधिक निर्भर रहने से मजदूरों की संगठन सामर्थ्य पर अवश्य प्रभाव पड़ता है।

यह बात अपने में बड़ी दिलचस्प है कि इधर कुछ दिनों से मजदूर सघों का प्रबन्ध करने वाले बाहरी लोगों की सख्या घटी है। इस प्रवृत्ति को और अधिक प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है।

६. मजदूर सघों मे कर्ता-धर्ताओं के रूप मे अगर बाहरी व्यक्तियों की संख्या घटा दी जाए तो बहुत सम्भव है कि मजदूर सघों को सगठन चलाने वाले व्यक्तियों की कमी का सामना करना पड़े। इस दिशा मे अगर मजदूरों को आत्मनिर्भर बनना है तो उन्हे संघ से सम्बन्धित सिद्धान्तों और प्रणालियों के विषय में प्रशिक्षित करना आवश्यक हो जाता है। श्रम हितकारी कार्यक्रमों में इस विषय के लिए छात्रवृत्ति देने की एक योजना रखी गई है।

७. संघों को मजबूत बनाने के लिए एक अन्य उपाय यह है कि उनको कुछ शर्तों पर प्रतिनिधि संघों के रूप मे मान्यता प्रदान की जाए। कुछ राज्यों मे 'औद्योगिक सम्बन्ध संहिता' के अन्तर्गत ऐसे सघ को मान्यता देने की व्यवस्था रखी गई है जिसमे चन्दा देने वाले सदस्यों की संख्या, उन तमाम मजदूरों की सख्या का काफी बड़ा प्रतिशत हो जिनका प्रतिनिधित्व करने का वह संघ दावा करता हो। यह प्रतिशत मजदूर सघ सगठन के विकास के अनुसार विभिन्न राज्यों मे अलग-अलग हो सकता है। चूंकि मान्यता प्रदान करने की इस नीति से कुछ राज्यों मे मजदूर आन्दोलन सबल हुआ है, इसलिए यह सुझाव दिया जा सकता है कि जिन राज्यों मे इस समय ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है वहां अब कर दी जाए। ऐसा करते समय सघ का किसी उद्योग के लिए क्या महत्व है, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए। साथ ही यह बात भी महत्वपूर्ण है कि जहां सिर्फ संख्या के आधार पर किसी संघ को मान्यता मिल जाएगी, वहां उसके लिए आवश्यक है कि वह प्रभावपूर्ण ढग से काम करने के लिए किसी भी झगड़े को निबटाने में कोई सीधी कार्रवाई करने के पहले जो भी मान्य ढंग और प्रक्रियाएं है उनके अनुसार काम करे।

८. इस अन्दोलन को सबल बनाने का एक अन्य पक्ष यह है कि मजदूर संघ आर्थिक पक्ष को अपने अतिरिक्त स्रोतों द्वारा ही पूर्ण करे। अक्सर होता यहहै कि ये संघ अपनी सदस्यता अधिक से अधिक बढ़ाने की इच्छा से अपना चन्दा बहुत ही कम रखते है और अक्सर उसे भी वे इकट्ठा नही कर पाते। संघो मे सामान्यतः न तो यही होता है कि मजदूर लोग अपना चन्दा नियमित रूप से अदा करें और न यही कि चन्दे की अदायगी न होने के कारण सदस्यता समाप्त कर दी जाए। यह अनुभव किया जाता है कि जब कोई सघ मान्यता प्राप्त संघ के रूप मे अपनी रजिस्ट्री कराना चाहे तो उसकी पहली शर्त यह होनी चाहिए कि वह अपने यहां सदस्यता का चन्दा कम से कम चार आने महीना अवश्य रखे। साथ ही बकाया चन्दे की अदायगी के नियमों का भी सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।

मालिक संगठन

९. किसी क्षेत्र में औद्योगिक संतुलन बनाए रखने के लिए उस क्षेत्र की मालिक संस्थाओ को प्रमाणित करने की भी व्यवस्था होनी चाहिए। ऐसी संस्थाओं के साथ मिलकर किए गए समझौते संस्था के सभी सदस्यों तथा असदस्यों पर लागू होंगे।

औद्योगिक सम्बन्ध

१० किसी उद्योग या व्यापारिक काम के विकास के लिए औद्योगिक शांति का होना आवश्यक है। स्पष्ट है कि यह शांति सबसे अच्छे रूप मे सब दल मिलकर ही स्थापित कर

सकते है। श्रम विधान और उसको लागू करने की व्यवस्था से मालिकों और मजदूरों के मिलकर काम करने के लिए उपयुक्त अवसर प्राप्त होगे, फिर भी इस बात का सबसे अच्छा हल आपसी समझौते द्वारा ही सभव हो सकता है। अभी हाल ही मे इस दिशा मे कुछ स्वस्थ बातें देखने में आई है और कई बड़े उलझे हुए मामले समझौतों द्वारा तय हुए है। बोनस के सवाल को लेकर अहमदाबाद मिल मालिक सघ और कपड़ा मिल श्रम संघ के बीच जून १९५५ मे एक करार हुआ। दोनों संघों ने यह भी तय किया है कि भविष्य में अपने सारे झगडे आपसी समझौतों और बातचीत के द्वारा तथा बिना हड़ताल किए या मुकदमा चलाए तय कर लेंगे। अगर दोनों के बीच कोई समझौता न हो पाए तो उस स्थिति मे पंचनिर्णय की भी व्यवस्था की गई है। १९५६ के प्रारम्भ मे बम्बई मिल मालिक संघ और राष्ट्रीय मिल मजदूर संघ, बम्बई के बीच बोनस सम्बन्धी एक समझौता हुआ। टाटा लोहा और इस्पात कम्पनी लिमिटेड, जमशेदपुर और उसके मजदूरों का प्रतिनिधित्व करने वाले संघ के बीच भी एक महत्वपूर्ण समझौता हुआ। यह समझौता कई कारणों से ध्यान देने योग्य है, जैसे इस प्रकार के समझौते में सबसे पहली बार संघों की सुरक्षा और अधिक उत्पादकता के उपायों में मजदूरों के सहयोग, आधुनिकीकरण और विस्तार तथा काम के मूल्यांकन की योजनाओं की स्वीकृति के लिए व्यवस्था की गई है। मालिकों ने भी इस बात को मान लिया है कि उद्योग के प्रबन्ध में कर्मचारियों का सहयोग अधिक से अधिक मात्रा में वांछनीय है। हालांकि जो समझौते हुए हैं, उनका सम्बन्ध देश के कुल औद्योगिक श्रमिकों के केवल एक भाग से ही है, फिर भी इस बात को कम महत्वपूर्ण नहीं समझना चाहिए कि उनके प्रभाव से ही अच्छे औद्योगिक सम्बन्धों का रास्ता खुला है।

११. किसी भी औद्योगिक दृष्टि से विकसित समस्या मे कामबन्दी का बेजा तौर पर प्रचार किया जाता है तथा औद्योगिक अशाति को भी जनता के सामने बढ़ा-चढ़ाकर पेश किया जाता है। इस प्रकार के प्रचार के परिणामों को विफल करने के लिए यह आवश्यक है कि उन बातों का अध्ययन किया जाए, जिनके कारण उन औद्योगिक प्रतिष्ठानों में शान्तिपूर्ण काम करने की एक लम्बी परम्परा चली आती रही है जहा मालिकों-मजदूरों के मेल-जोल से काम हुआ है। इस सम्बन्ध में देश के कुछ प्रतिष्ठानों में अध्ययन किया जा रहा है। जहां इन अध्येताओं की जिम्मेदारी यह है कि वे श्रम सम्बन्धो के रचनात्मक पक्षों का प्रचार करें, वहां यह भी आवश्यक है कि जिन क्षेत्रों में अक्सर औद्योगिक झगड़े होते हों वे उनका भी अध्ययन प्रस्तुत करें ताकि सम्बद्ध दल विरोधी परिस्थितियों को देखकर अपने-अपने बारे में अनुमान लगा सकें।

१२. औद्योगिक शांति की स्थापना के लिए रोक-थाम के उपायों की भी आवश्यकता होती है। सबसे ज्यादा जोर इस बात पर दिया जाना चाहिए कि किसी भी स्थिति में, यहां तक कि सुलह सम्बन्धी आपसी बातचीत की आखिरी अवस्था में भी झगड़े से बचा जाए। बातचीत द्वारा झगड़े को निपटाने का तरीका जिन देशों में भारत से ज्यादा सफल रहा है, वहां समझौते कराने वाले व्यक्ति झगड़े न होने की स्थिति मे भी मजदूर संघों के नेताओं और मालिकों के साथ सम्पर्क रखते हैं तथा ऐसे मसलों के बारे में बातचीत करते हैं जिन पर भविष्य में झगड़ा होने की आशंका होती है। इस बातचीत का असर ऐसे झगड़े बचाने मे काफी पडता है और हमें अपने देश में इसको आरम्भ करना चाहिए।

१३. झगड़े होने की स्थिति में उन्हे निपटाने के लिए आपसी बातचीत अथवा पंचनिर्णय का सहारा लेना चाहिए। केन्द्र और राज्य सरकारों को चाहिए कि इस प्रकार की व्यवस्थाएं

सुगम बनाने के लिए वे आवश्यक तन्त्र की स्थापना करें। सरकार को ऐसे लोगों की सूची रखनी चाहिए जिन पर मजदूरों का विश्वास हो। आवश्यकता पड़ने पर दलों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे लोग निर्णय कराने के लिए इसी सूची में से पंचों को चुन लें, फिर भी कठिन परिस्थितियों में जहां इन तरीकों से काम न चले, सरकार को अवश्य ही दखल देना चाहिए। झगडे निपटाने के लिए १९५० में जो व्यवस्था थी वह बहुत पेचीदा थी। इस दिशा में औद्योगिक विवाद अधिनियम मे प्रस्तावित सशोधन द्वारा मजदूरों के कानूनी हितों की रक्षा का ध्यान रखते हुए (क) अधिनिर्णयन की प्रक्रिया को सरल बनाने, (ख) श्रम अपील न्यायाधिकरण हटाने, तथा (ग) औद्योगिक विवाद अधिनियम के अनुभाग ३३ को लागू कर विभिन्न दलों द्वारा अनुभव की गई कठिनाइयों को मजदूरों के उचित हितों का ध्यान रखकर दूर करने की कार्रवाई एक उचित कदम है।

१४. श्रमिकों और मालिकों के बीच झगडे का एक कारण पचाटों और समझौतों की बातों का काफी तौर पर पूरा न किया जाना अथवा लागू न किया जाना भी है। कुछ उदाहरण तो ऐसे है जहां सरकार के जोर देने पर भी पंचाटों को कार्यान्वित नही किया गया। पंचाटों में दी गई बातों को लागू करवाने के लिए कोई भी व्यवस्था नहीं है, सिर्फ कर्मचारी को बहाल करने तथा सुविधा देने की व्यवस्था है। इन स्थितियों में मालिक के खिलाफ औद्योगिक विवाद अधिनियम, १९४७ के अधीन मुकदमा चलाना ही एकमात्र उपाय रह जाता है, परन्तु उसमें भी अधिक से अधिक २०० रुपए पहली बार अपराध करने पर और ५०० रुपए बाद मे अपराध करने पर जर्माना किया जाता है। अनुभव से यह ज्ञात हुआ है कि मालिकों से उन व्यवस्थाओं को लागू कराने के लिए जिन पर खर्च बहुत आता हो, यह सजा काफी नहीं है। मजदूरों के लिए भी सजाएं इतनी सख्त होनी चाहिएं कि नियमों को जान-बूझकर तोड़ने की उनकी हिम्मत न हो।

१५. वैसे पंचाट के निर्णयों को लागू करने की जिम्मेदारी तो मालिक (निजी या सरकार) की ही होनी चाहिए, पर साथ ही परिपालन के लिए जिम्मेदार एक न्यायाधिकरण भी होना चाहिए और दलों की पहुंच इस न्यायाधिकरण तक सीधे होनी चाहिए। न्यायाधिकरण को पंचाट के निर्णयों का अर्थ लगाने तथा अधिकार क्षेत्र स्थिर करने का भी अधिकार होना चाहिए। अगर कोई ऐसा निर्णय पाया जाए जो वित्त की दृष्टि से लागू न किया जा सकता हो तो न्यायाधिकरण को अधिकार होना चाहिए कि वह सरकार या किसी निर्दिष्ट कार्यकारी अधिकारी से एक नियत समय के भीतर कोई निश्चित कार्रवाई करा ले।

१६. औद्योगिक झगड़े कम करने का एक और तरीका यह भी है कि एक संयुक्त परामर्शी तन्त्र की स्थापना की जाए। केन्द्र, राज्य अथवा अलग-अलग यूनिटों मे हर स्तर पर इस प्रकार के तन्त्र होने आवश्यक हैं। अगर उच्च स्तर पर कार्य करने वाले द्विदलीय परामर्शी तन्त्र और यूनिट स्तर पर काम करने वाले तन्त्र में सहयोग से काम हो तो इससे मजदूरो और मालिको के बीच सहयोग अधिक कारगर साबित हो सकता है। यूनिटों मे कार्य समितियां इसी हैसियत से काम कर सकती हैं। इन समितियों को उच्च स्तर पर हुए करारों को कार्यरूप देने के अलावा, इन को पूरा करने के सम्बन्ध में उठने वाली व्यावहारिक समस्याओं के हल ढूढ़ने चाहिएं, ताकि ये समस्याएं परामर्शी तन्त्र द्वारा सुलझाई जा सकें। इस क्षेत्र में अनुभव से पता चला है कि कार्य समितियों के काम करने में सबसे बड़ी बाधा उनकी और उस क्षेत्र में क्रियाशील

मजदूर संघों की जिम्मेदारियों का स्पष्ट न होना है। प्रतिनिधि संघों को चाहिए कि वे मजदूरी, भत्ते या नौकरी की शर्तों सम्बन्धी मामलो या ऐसे झगडो के विषय मे जो आपस मे बातचीत करके सुलझाने लायक हों, मालिकों से सीधे व्यवहार करे। कार्य समितिया जहां तक अनुमान है किसी उद्यम सम्बन्धी मानवीय अथवा टेकनीकल सवाल तथा व्यापारिक काम के सामान्य हितों की पूर्ति के लिए उचित उपायों सम्बन्धी सवालों को बड़ी अच्छी तरह निपटा सकती हैं। इससे हो सकता है कि दोनों की कार्य प्रणाली सुधरे। बडी यूनिटों में इस प्रकार की व्यवस्था कारखानों में करना जरूरी होगा। अगर दल सहमत हों तो कार्य समितियों को करारों, पंचाटों और दिए गए आदेशों के उचित रूप से लागू करने तथा उनका अर्थ करने का अधिकार दिया जा सकता है। फिर भी किसी सघ को अधिकार होना चाहिए कि जिन मामलों मे वह उचित समझे वहा उनके विषय मे कार्य समितियों के साथ बातचीत की किसी भी अवस्था मे वह यह मांग कर सकता है कि मामला संघ और मालिक के बीच समझौते के लिए छोड़ दिया जाए।

१७. वर्तमान द्विदलीय संयुक्त परामर्शी तंत्र, अर्थात संयुक्त परामर्शी बोर्ड का इससे भी अधिक अच्छा उपयोग हो सकता है। इस बोर्ड को सीमित सफलता प्राप्त हो भी चुकी है। हालांकि इसकी विशिष्ट उपलब्धियां चमत्कारपूर्ण तो नही हुईं, तथापि इसने आपसी बातचीत और समझौते के लिए अच्छी पृष्ठभूमि तैयार कर दी हैं। अब भविष्य मे इसकी क्षमता की परख यही होगी कि वह जटिल मामलों को आपसी समझौते के आधार पर कहां तक निपटा पाता है। बोर्ड अपने क्रिया-कलाप को और गहन बनाना चाहता है, इसके लिए वह महत्वपूर्ण समस्याओं का अध्ययन करना, अधिक सभाएं करना तथा आपसदारी की भावना से समझौते कराने के उद्देश्य से सवालों पर बातचीत करना चाहता है। आशा है कि इसमे प्रत्येक स्तर पर सहयोग के लिए वातावरण तैयार होगा।

१८. योजना को सफल रूप से कार्यान्वित करने के लिए यह आवश्यक है कि मजदूरों और प्रबन्धकों में अधिक साहचर्य हो। इस उपाय द्वारा (क) उद्योग, कर्मचारियों और समाज सबके सामान्य लाभ के लिए उत्पादकता बढ़ाने, (ख) कर्मचारियों को उद्योग चालन और उत्पादन की प्रक्रिया में उनकी जिम्मेदारी का अधिक से अधिक ज्ञान कराने, (ग) मजदूरों को अपनी बात कहने देने की इच्छा को पूरी करने और इससे औद्योगिक शान्ति, अच्छे सम्बन्ध तथा अधिक सहयोग पैदा करने में सहायता मिलेगी। इस उद्देश्य की प्राप्ति प्रबन्धकों, टेकनीकल व्यक्तियों और कामगारों के प्रतिनिधियों की प्रबन्ध परिषदे बनाने से हो सकती है। इस विषय में प्रबन्धकों की यह जिम्मेदारी होगी कि वह प्रबन्ध परिषद को प्रभावकारी ढंग पर कार्य करने योग्य बनाने में सहायक आवश्यक सूचना के बारे में उचित और सही विवरण प्रदान करें। प्रबन्ध परिषद को यह अधिकार होना चाहिए कि वह प्रतिष्ठान सम्बन्धी मामलों पर विचार करे और उनको अच्छे ढंग पर चलाने के लिए उपाय बताए। जो मामले सामूहिक सौदेबाजी के अन्तर्गत आते है, उन पर परिषद को अवश्य ही विचार न करने दिया जाना चाहिए। शुरू में सगठित उद्योगों के बड़े-बड़े प्रतिष्ठानो मे ऐसे प्रस्तावों पर प्रयोग किया जाना चाहिए। इस दिशा मे उन्नति नियंत्रित रूप से होनी चाहिए और इस योजना में कोई भी विस्तार, प्राप्त होने वाले अनुभव के ही आधार पर किया जाना चाहिए।

१९. भविष्य में सार्वजनिक क्षेत्र का दिनोंदिन विकास होगा, इस तथ्य को देखते हुए इस क्षेत्र के चालू कामों की सफलता और मजदूरों की उमंगों की पूर्ति की दृष्टि से इस क्षेत्र मे औद्योगिक सम्बन्धों के प्रशासन का बडा महत्व है। इसलिए सरकारी क्षेत्र का कोई कर्मचारी

यदि इस बहाने से अपनी जिम्मेदारियो से बचना चाहता है कि वह लाभ के उद्देश्य से काम नही कर रहा, तो उसकी इस प्रवृत्ति को बढ़ावा नही दिया जाना चाहिए। सरकारी कामों के प्रबन्धकों को सामान्यतः श्रम नियमों से न तो छूट मागनी चाहिए और न ऐसी अन्य रियायते ही मांगनी चाहिएं जो निजी क्षेत्र मे न मिलती हों। इसका तात्पर्य ऐसा कोई सुझाव देना नही है कि सरकारी क्षेत्र के उद्योगों के लोग ही सबसे पहले श्रम सम्बन्धी नियमों से छूट मागने के लिए आगे आते है या उनकी काम की हालते सन्तोषजनक नही है। वास्तव मे सभी नए राज्य उद्यमों मे मजदूरों के हित पर गहन रूप से ध्यान दिया गया है। अन्त में सरकारी क्षेत्र के कर्मचारियों को कम से कम निजी क्षेत्र के कर्मचारियों के समकक्ष तो होना ही चाहिए और उन्हे अपने उत्पादन पर तथा सरकारी क्षेत्र के कर्मचारी होने पर न्यायोचित गर्व होना चाहिए।

अनुशासन

२०. समाजवादी ढंग के समाज की सबसे पहली माग यह है कि कामगारों की आर्थिक और सामाजिक स्थिति सुधारने की माग को मान्यता दी जाए। बदले मे कामगारों को भी अपनी जिम्मेदारिया महसूस करनी चाहिएं। वास्तव मे समाज के आगे जो उद्देश्य है उसकी पूर्ति के लिए एक ओर गोग्यतापूर्वक और परिश्रमपूर्वक काम करने की और दूसरी ओर अनुशासनहीनता से बचने की आवश्यकता है। यह सम्भव है कि कभी-कभी मजदूरों के बीच पैदा होने वाली अनुशासन-हीनता के पीछे उपयुक्त कारण हों। पीछे जो सुझाव दिए गए है उनके द्वारा श्रमिकों और प्रबन्धको के बीच संघर्ष का क्षेत्र कम करने में सहायता मिलेगी। यह सही है कि प्रबन्धकों और मजदूरों के बीच कठोर अनुशासन किसी विधान के द्वारा लादना उपयुक्त नही कहा जा सकता और यह अनुशासन मालिकों और मजदूरो के सगठनों को अपने आप ही उपयुक्त नियन्त्रण लगाकर पैदा करना पड़ेगा। परन्तु फिर भी अगर समस्त मजदूरो में अनुशासनहीनता फैल जाए तो उस स्थिति के लिए वैधानिक या उसी प्रकार का कुछ उपाय सोचा ही जाना चाहिए। यह बात सही है कि पिछले सालों में औद्योगिक हडतालों द्वारा उत्पादन में होने वाले नुक्सानों में कुछ कमी हुई है परन्तु यह भी सही है कि गैर-कानूनी हड़तालों या ताला-बन्दियों के लिए दण्ड देने की व्यवस्थाएं भी अपर्याप्त साबित हुई है। "धीरे काम करो", "कलम न उठाओ" और "केवल हाजिरी देते रहो" जैसी हड़तालों के उदाहरण देखने में आए है जो अर्थ-व्यवस्था के व्यापक हित मे अनदेखे न रह जाने चाहिएं। मालिको और कामगारो के दृष्टिकोण से ये परिस्थितियां गम्भीर है। मालिकों के उत्पादन की हानि होती है, परन्तु कामगार के लिए कार्य सामर्थ्य ही उसकी सम्पत्ति है, इसलिए उसे इस सामर्थ्य को घटाने वाली किसी भी प्रवृत्ति से अपने को बचाना चाहिए। पिछले दिनों में कुछ उद्योगों में हिसा और अनुशासनहीनता की शिकायतें आई है। यहा यह आवश्यक है कि औद्योगिक अनुशासन के समस्त प्रश्न को उसके विभिन्न पहलुओं सहित देखा जाए और इस बीच दलो को एक-दूसरे के हित में यह चाहिए कि शासनहीनता पैदा करने वाली सभी प्रवृत्तियों को सख्ती से रोका जाए।

मजदूरी

२१. मजदूरी की एक ऐसी नीति बनाने की आवश्यकता है जिसका उद्देश्य वास्तव में मजदूरी बढ़ाना हो। जहां कामगारों के उचित मजदूरी के अधिकार को मान्यता दी जाती है, वहां उसकी कोई मात्रा निश्चत करना भी मुश्किल रहा है। इस दिशा में औद्योगिक न्यायाधिकरण

अधिक से अधिक प्रयत्नो के बाद भी कोई उपयुक्त उपाय ढूढ पाने मे असमर्थ रहे है। उचित मजदूरी के सिद्धान्त को भली प्रकार कार्यान्वित करने मे एक बड़ी कठिनाई यह रही है कि सीमान्त यूनिटें मजदूरी का ढांचा नियत करने मे ढिलाई से काम लेती रही है। जहा तक उचित मजदूरी की दिशा मे प्रगति करने का सवाल है, किसी केन्द्र की औसत यूनिटों की आर्थिक स्थिति के आधार पर ही मजदूरी नियत की जानी चाहिए, परन्तु आयोजन के सन्दर्भ मे सीमान्त यूनिटो को बन्द कर देने का, जिसका बेरोजगारी पर प्रभाव बहुत महत्व रखता है, अर्थ यह होता है कि सीमान्त यूनिटों के काम मे भी सुधार किए जाने की आवश्यकता है। इन यूनिटो को और अधिक दृढ़ बनाने का एक उपाय यह है कि विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था की आवश्यकताओं को ध्यान मे रखते हुए सम्भव हो तो उनकी इच्छा से और अगर आवश्यक हो तो जबर्दस्ती बड़ी यूनिटों में मिला दिया जाए। सीमान्त यूनिटे किस प्रकार काम करती हैं, इस बारे में कोई सामग्री भी प्राप्त नही है। कोई यूनिट विशेष सीमान्त श्रेणी के अन्तर्गत आती है या नही, यह निश्चय करने के लिए व्यापक रूप से सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। यह निश्चित कर दिए जाने पर भी कि कोई यूनिट विशेष सीमान्त यूनिटों की श्रेणी में आती है उसको बड़ी यूनिटों के साथ मिलाने में बड़ी कठिनाइयां आएंगी, परन्तु उनका सामना तो करना ही पड़ेगा।

२२. उत्पादन में वृद्धि होने से ही मजदूरी मे वृद्धि हो सकती है, लेकिन उत्पादन बढ़ाने का अर्थ आवश्यक रूप से यह नही है कि उसके लिए नई मशीनें आदि लगाई जाएं या मजदूर लोग और अधिक परिश्रम करें। संयंत्रों की अच्छी व्यवस्था से काम करने की परिस्थितियों मे सुधार तथा कामगारों के प्रशिक्षण इत्यादि उपायो से उत्पादन बढ़ेगा, लेकिन साथ मे यह जरूरी न होगा कि कामगारों को उसी हिसाब से अधिक मेहनत भी करनी पडे। कभी-कभी तो ऐसा हो सकता है कि इन उपायों से उत्पादन भी बढ़े और परिश्रम भी कम लगे। दूसरा उपाय यह हो सकता है कि उत्पादन के अनुसार लोगो को अदायगी की जाए। जहां यह नियम लागू न हो वहा इसे लागू किया जा सकता है। परन्तु इसमें कामगारों की सुरक्षा के लिए काफी कदम उठाने पड़ेंगे, जैसे कि कम से कम मजदूरी कितनी हो, थकान के लिए व्यवस्था तथा बेजा तौर पर उत्पादन की गति न बढाने देना आदि बाते तो होनी ही चाहिए, कम से कम मजदूरी से ऊपर जो कुछ दिया जाए वह उत्पादन के अनुसार होना चाहिए। परिणामो के आधार पर अदायगी स्थिर करने की कोई प्रणाली लागू करने मे कामगारों का भी परामर्श लेना चाहिए। साथ ही इस विषय में भी अध्ययन करना चाहिए कि उत्पादन के वर्तमान स्तर पर मजदूरी बढ़ाने की कोई संभावना है या नहीं, खासकर जब यह दावा किया जाता है कि इन दिनों औद्योगिक प्रतिष्ठानो में मजदूरो की संख्या बढाए बिना उत्पादन में वृद्धि हुई है।

२३. मजदूरी नीति के दो पहलू और है। उन पर भी विचार कर लिया जाना चाहिए। पहला है समाज की भावी व्यवस्था में कामगारों की आशाओं के अनुरूप मजदूरी देने के सिद्धांतों का निर्माण, और दूसरा है अन्तरिम काल मे मजदूरी के झगड़ों का निपटारा। पहले के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि एक मजदूरी आयोग बनाया जाए जो तत्सम्बन्धी सामग्री पर विचार करे तथा बताए गए सामाजिक लक्ष्यो का ध्यान रखते हुए मजदूरी, लाभ और मूल्य, इन तीनो के अलग-अलग महत्व निर्धारित करने के लिए उपयुक्त सिद्धान्त स्थिर करे। यहा यह बात स्वीकार करनी होगी कि अगर इस प्रकार का आयोग इसी समय बनाया जाता है तो उसको सामग्री के अभाव में काफी कठिनाई होगी और अपर्याप्त सामग्री के आधार पर वह जो भी निष्कर्ष

निकालेगा, उन पर कोई भी दीर्घकालिक नीति आधारित नही हो सकती। इसलिए मजदूरी का तख्मीना करने के लिए तुरन्त ही प्रयत्न किए जाने चाहिएं।

२४. इन दिनों देश मे मजदूरी के दो भाग है, एक तो है मूल वेतन, और दूसरा है महंगाई भत्ता। महंगाई भत्ते मुख्यतया भिन्न-भिन्न औद्योगिक केन्द्रो के जीवनयापन सम्बन्धी देशनांकों के आधार पर है। इन देशनाकों के भी आधार एक समान नही है। कुछ तो अब से २०-२५ साल पहले इकट्ठे किए गए प्राथमिक आंकड़ों के सहारे निकाले गए थे और आज के कामगारों की व्यय प्रवृत्तियों के सच्चे द्योतक नही है। मजदूरी आयोग को जो एक जरूरी सवाल सुलझाना पड़ेगा वह है मजदूर सघों की यह माग की महंगाई भत्ते का एक भाग मूल वेतन मे मिला दिया जाए। इस प्रकार भत्ता मिलाने के सवाल पर सिर्फ सिफारिशें कर देना ही वैज्ञानिक न होगा जब तक कि भिन्न-भिन्न स्थानो के जीवनयापन के देशनाक किसी एक समान आधार पर नही निश्चित किए जाते। इसलिए मजदूरी का तख्मीना लगाने के साथ ही साथ भिन्न-भिन्न केन्द्रों में जीवन-यापन सम्बन्धी देशनाक को दुहराने के लिए भी जाच कर ली जानी चाहिए।

२५. औद्योगिक झगड़ों को देखा जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि मजदूरी और उससे सम्बन्धित मामले ही मालिक और मजदूरों के बीच झगड़े की मुख्य जड़ रहे है। इन झगड़ों को निपटाने के लिए इन दिनों जो तन्त्र, अर्थात औद्योगिक न्यायाधिकरण है, उनका काम पक्षों को पूरा सन्तोष देने वाला नही रहा है। इस प्रकार के झगड़े निपटाने में केवल वही तन्त्र अधिक ग्राह्य होगा जिसमे सम्बद्ध पक्ष स्वयं ही झगड़ा निपटाने में अधिक से अधिक योग दे। इसके लिए अगर एक त्रिदलीय बोर्ड बनाया जाए जिसमे मालिकों और मजदूरों के बराबर-बराबर प्रतिनिधि हों तथा एक तटस्थ अध्यक्ष हो, तो उसके निर्णय कदाचित अधिक ग्राह्य हो सकेगे। विभिन्न क्षेत्रों में अलग-अलग उद्योगों के लिए इस प्रकार के बोर्डों की स्थापना की जानी चाहिए।

२६. जहां तक बोनस और लाभ के बटवारे का सवाल है, इस बारे में सब दलों के लिए कोई भी स्वीकार्य व्यवस्था करने के लिए पहले इस समस्या का और अधिक अध्ययन किए जाने की जरूरत है। इस बीच औद्योगिक झगड़ों को सुलझाने के लिए वही तन्त्र काम मे लाना चाहिए जो इन दिनों काम मे लाया जा रहा है।

सामाजिक सुरक्षा

२७. पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि मे जो कर्मचारी भविष्य निधि योजना वैधानिक आधार पर लागू की गई थी, अब उसका विस्तार ऐसे उन सभी उद्योगों और वाणिज्य प्रतिष्ठानों तक कर दिया जाना चाहिए जिनके कर्मचारियों की संख्या देश भर मे १०,००० या उससे अधिक हो। उसमें अंशदानों की मात्रा ६¼ प्रतिशत से बढ़ाकर ८⅓ प्रतिशत कर देने के प्रश्न पर और आगे विचार किया जाना चाहिए। आवश्यकता तो इस बारे मे भी विचार करने की है कि भविष्य निधि के रूप में जो कुछ वर्तमान स्थिति में दिया जा रहा है उसको पेन्शन के रूप में बदल दिया जाए। कामगारों के परिवारों को कर्मचारी राज्य बीमा योजना के अन्तर्गत चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं प्रदान करने के बारे मे एक प्रस्ताव पर विचार किया जा रहा है। यह भी विचार किया जा रहा है कि इस योजना को और अधिक बढ़ाया जाए और सम्भावना तो इस बात की भी ढूंढी जा रही है कि इन दिनों अलग-अलग ढंग से जो सुविधाएं दी जा रही हैं उनको एक संगठित सामाजिक सुरक्षा योजना में सम्बद्ध कर दिया जाए। इस दिशा में संगठित

योजना का अर्थ होगा कि प्रति व्यक्ति लागत मे कमी आएगी और इस प्रकार जो बचत होगी उससे अन्य प्रकार की सुविधाएं दी जा सकेगी। इस प्रकार की सगठित योजना के प्रशासन को अगर विकेन्द्रित कर दिया जाएगा तो इससे भी लोगों को फायदा ही होगा। अगर संभव हो तो औद्योगिक दुर्घटनाओं के फलस्वरूप असमर्थ हुए कामगारों को कोई दूसरा काम दे दिया जाए।

वैज्ञानिकन

२८. पहली पचवर्षीय योजना मे वैज्ञानिकन बढ़ाने की सुविधा देने के लिए कई सिद्धान्त दिए गए थे। ये सिद्धान्त मालिकों और मजदूरों के प्रतिनिधियों के बीच मिलकर तय किए गए थे। जहां भी वैज्ञानिकन का प्रश्न हो, इन सिद्धान्तों को अक्षरशः उसी भावना के साथ जिससे ये बनाए गए थे लागू किया जाना चाहिए। इस बात पर जोर देना इसलिए जरूरी है कि अक्सर बातचीत में पाया गया है कि मालिक और मजदूर इन सिद्धान्तों को भूल बैठते हैं। औद्योगिक न्यायाधिकरणों का भी ध्यान सहमत बातों के आधार पर ही अपने निर्णय देने की ओर दिलाया जाना चाहिए। अगर पक्षों के बीच सहमत सिद्धान्तों का उचित ध्यान न रखा जाए तो उनको वैधानिक रूप देने के प्रश्न पर भी विचार किया जा सकता है। बढ़ती हुई बेरोजगारी को देखते हुए कामगारों के दिमाग पर वैज्ञानिकन का उलटा ही असर पड़ता है। इतना होने पर उत्पादन की वर्तमान टेकनीकों को चिरस्थायी बना देना विकासशील अर्थ-व्यवस्था के अधिक व्यापक हितों के विरुद्ध है। इसलिए वैज्ञानिकन की चेष्टा तभी की जानी चाहिए जब बेरोजगारी बढ़ने का डर न हो, मजदूरों की राय भी उसके पक्ष में हो और अगर इसे लागू किया जाए तो पहले कामगारों की कार्य करने की स्थितियों मे सुधार किया जा चुका हो तथा लाभ का एक महत्वपूर्ण अश उनको मिलने की गारंटी दी जा चुकी हो।

२९. वैज्ञानिकन के बारे में एक व्यापक नीति दरअसल दलों के साथ मिलकर सहमत बातों पर ही आधारित होनी चाहिए। परन्तु इसके अलावा वैज्ञानिकन के झगड़ों के निपटाने मे जो कठिनाइयां आई हैं, वे वास्तव में ब्योरों के बारे में असहमति होने से ही पैदा हुई है। कानपुर कपड़ा मिल विवाद मे हाल ही में जो उत्पादन हानि हुई है वह इसी का परिणाम है। वैज्ञानिकन के सिद्धान्त को तो सभी मानते है, लेकिन यूनिटों के स्तर पर अन्य बातों के अतिरिक्त नीचे दिए ब्योरों के बारे मे समझौता होने में ही कठिनाइया उठती है, जैसे (क) काम का भार नियत करना, (ख) काम का भार बढ जाने से मजदूरी कितनी बढ़ाई जाए, (ग) मशीनें आदि किस सीमा तक पुरानी हो गई है और उनकी जगह नई मशीनें लगाना, (घ) नई मशीनें लगाने पर कठोर स्तर का नियन्त्रण करना, और (ङ) छंटनी किए गए कामगारों को रखे रहना और उनके लिए दूसरा काम ढूढना। इन कठिनाइयों को सम्बद्ध पक्ष ही स्वतन्त्र विशेषज्ञों द्वारा टेकनीकल परीक्षा कराने के बाद स्वयं सुलझा सकते है। इनके अलावा वैज्ञानिकन की समस्या से सम्बद्ध कुछ विशेष समस्याएं और रह जाएंगी जिनका असर एक से अधिक राज्यो पर पड़ सकता है। इन्हें सुलझाने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा एक उच्चाधिकार सम्पन्न अधिकारी का नियुक्त किया जाना आवश्यक है।

३०. निर्माण, उद्योग और परिवहन सेवाओं में कार्य करने की स्थितियों के नियमन के लिए विधान बनाया जाना चाहिए। जहां तक कारखानो और वाणिज्य प्रतिष्ठानों का प्रश्न है, राज्य अपने-अपने विधान बनाएंगे। अन्य राज्यों में ऐसे कामगारों की कार्य करने की स्थितियों का नियमन भी किया जाना चाहिए।

३१. मैंगनीज उद्योग के लिए कोयला और अभ्रक कल्याण निधि की तरह एक कल्याण निधि खोली जानी चाहिए। अगर इस निधि के लिए उपकर लगाया जाना हो तो यह उपकर केन्द्रीय सरकार को लगाना चाहिए। लेकिन अगर यह उद्योग सिर्फ एक ही राज्य की सीमा में हो तो वह राज्य इस सम्बन्ध मे आवश्यक कार्रवाई कर सकता है। इस निधि से कल्याण सम्बन्धी और अच्छी सुविधाएं देने तथा किफायतशारी दोनों दृष्टियो से जहा भी सभव हो सके इस निधि के प्रशासन को एकीकृत करना आवश्यक है। कल्याण सम्बन्धी सुविधाए देना मालिक की जिम्मेदारी है और जहां तक हो सके यह कार्य ऐसी स्थानीय समितियो की सहायता से किया जाना चाहिए जिसमे कामगारों को प्रतिनिधित्व मिला हो। छोटे प्रतिष्ठानों की बात और है जहां सुविधाए संयुक्त रूप मे दी जा सकती है। ये कल्याण केन्द्र काफी संख्या मे खोले जाने चाहिएं और साथ ही विभिन्न स्तरों पर कल्याण कार्यकर्ताओ को प्रशिक्षित करने की काफी व्यवस्था भी होनी चाहिए। राज्य सरकारो की योजनाओं में इस हेतु व्यवस्थाएं की गई है।

३२. मजदूरो मे कुछ ऐसे समूह है जिनकी अपनी अजीब समस्याओं की वजह से उनके साथ खास तौर पर व्यवहार करना होगा। इस तरह के तीन समूह है· ठेके के मजदूर, कृषि मजदूर और स्त्री मजदूर। कुछ के बारे में तो काफी ध्यान आकर्षित हो चुका है। इन समूहो को उनके लिए जरूरी सहायता देने के लिए नीचे दिए कदम उठाए जाने जरूरी हैं :

ठेके के मजदूर

३३. ठेके के मजदूरो की प्रमुख समस्याएं है उनके काम की हालतों को सुधारना और उनके लिए बराबर नौकरी का प्रबन्ध करना। इसके लिए जरूरी है कि —

(क) इस बात का अध्ययन किया जाए कि भिन्न-भिन्न उद्योगो मे यह समस्या किस हद तक है।

(ख) देखा जाए कि कहा ठेके की मजदूरी मिटाई जा सकती है। यह काम तुरन्त किया जा सकता है।

(ग) ऐसे मामले निश्चित किए जाए जहा मजदूरी देने, काम करने की उचित हालतें पैदा करने इत्यादि की जिम्मेदारी ठेकेदार के अलावा प्रमुख मालिक पर छोड़ी जा सकती है।

(घ) जहा भी अध्ययन से सम्भव दीखे, धीरे-धीरे ठेके की पद्धति हटाई जाए। सावधानी यह बरती जाए कि हटाए गए श्रमिकों को कोई दूसरा काम मिल जाए।

(ङ) प्रमुख मालिकों के जो कामगार है, उनके जैसी ही काम की हालते और संरक्षण ठेके के मजदूरों को भी प्राप्त हों।

(च) जहां भी सम्भव हो श्रम से आकस्मिकता का अंश हटाने की योजना बनाई जाए।

खेतिहर मजदूर

३४. खेतिहर मजदूरों से सम्बद्ध अध्याय मे कृषि श्रम की समस्याओं पर विचार किया जा चुका है। जैसा कि उस अध्याय में स्पष्ट किया गया है, लोगो के रहन-सहन का दर्जा उठाने के लिए जो भी योजना बनाई जाएगी उसमें इस समूह पर विशेष रूप से तथा तुरन्त ही ध्यान देना पड़ेगा।

को रखना अलाभकर होता है। इसलिए या तो उनको छोटे काम दिए जाते है या फिर वे वही काम करती है जिनको पीढ़ी दर पीढ़ी औरतें ही करती जाती है और जिनकी तनख्वाह भी कम होती है। इस प्रकार इस बात की अवहेलना कर दी जाती है कि अगर औरतों की कार्य सामर्थ्य भिन्न है तो इसके माने यह नही हो जाते कि उनको निम्न कोटि का श्रमिक माना जाए।

३९. औरतो के कुछ विशेष दायित्व और कर्तव्य होने के कारण औद्योगिक कामगारो के रूप में उनको कुछ असुविधा रहती है। इसलिए उनके बचाव के लिए विभिन्न कानूनों मे व्यवस्थाएं कर दी जाती है, लेकिन उनका प्रभावकारी परिपालन आवश्यक है। विशेष रूप से औरतों को हानिकर कामों से अलग रखा जाना चाहिए, उन्हे जच्चा की सुविधाएं मिलनी चाहिएं तथा काम करने की जगह पर बच्चों के रखने के स्थान होने चाहिएं। दूध पिलाने वाली माताओं को बच्चों को दूध पिलाने के लिए सवैतनिक अवकाश मिलना चाहिए। बराबर काम के लिए बराबर वेतन के सिद्धान्त को और अच्छी तरह लागू किया जाना चाहिए तथा औरते जो काम परम्परा से करती आ रही है उनकी वेतन दरें घटाने की प्रवृत्ति रोकनी चाहिए। उनके लिए प्रशिक्षण की सुविधाएं होनी चाहिएं ताकि वे ऊंची नौकरियों में पुरुषों का मुकाबला कर सकें। इसके अलावा उनके लिए अंशकालीन काम देने की व्यवस्थाएं बढ़ाने की ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

विकास कार्यक्रम

४०. दूसरी पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बनाए गए 'श्रम और श्रम कल्याण' के विकास कार्यक्रमों के लिए २९ करोड़ रुपया रखा गया है—१८ करोड केन्द्र तथा ११ करोड़ राज्यों की योजनाओं के लिए है। मुख्य-मुख्य कार्यक्रम नीचे बताए जा रहे है :—

(१) **कारीगरों का प्रशिक्षण**—ऐसा प्रस्ताव है कि प्रशिक्षण देने की १०,३०० जगहों को बढाकर १९,७०० कर दिया जाए। प्रशिक्षण की अवधि तथा उसकी कोटि सुधारने का भी प्रस्ताव है। इस योजना पर राज्य सरकारे, श्रम मन्त्रालय तथा शीघ्र ही स्थापित की जाने वाली एक व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद की सहायता से अमल करेंगी।

(२) **कशल कारीगरों के प्रशिक्षण का कार्यक्रम**—औद्योगिक कामगारों को काम सिखाने के प्रशिक्षण कार्यक्रमों की सुगठित व्यवस्था सरकारी प्रतिष्ठानों तथा कुछ निजी संयंत्रों को छोड़कर और कहीं नही है। दूसरी योजना की एक तजवीज के अनुसार योजना के पहले वर्ष में फैक्टरियों में काम सीखने के लिए ४५० व्यक्ति रखे जाएंगे। यह संख्या प्रति वर्ष बढती जाएगी और योजना के अन्तिम वर्ष मे ५,००० कर दी जाएगी। काम सीखने की अवधि भी काम और वांछित कुशलता के अनुसार दो से लेकर पाच वर्ष तक होगी।

३) **शिक्षकों का प्रशिक्षण**—चूंकि देश में अच्छे शिक्षकों की कमी है, इसलिए मध्य प्रदेश के कोनी संस्थान जैसा एक नया प्रशिक्षण संस्थान खोलने का प्रस्ताव है। यह भी इरादा है कि वर्तमान केन्द्र को हटाकर कहीं ऐसी जगह ले जाया जाए जो उपयुक्त औद्योगिक स्थान हो। उसके साथ शिल्पियों के प्रशिक्षण का एक केन्द्र भी जोड़ दिया जाएगा। ये दोनों सस्थान शिक्षकों और पर्यवेक्षकीय

कर्मचारियों को प्रशिक्षण देंगे तथा साथ ही शिक्षकों, पर्यवेक्षकों और फोरमैनों के लिए प्रत्यास्मरण पाठ्यक्रम की भी व्यवस्था करेंगे।

(४) **रोजगार सेवा संगठन का प्रसार**—दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि मे १२० नए रोजगार दिलाने के नए दफ्तर भी खोले जाएगे। इससे उनकी सख्या १३६ से २५६ हो जाएगी। इसके अलावा भी सगठन अपने कार्य क्षेत्र का प्रसार करना चाहता है। इसके लिए कुछ प्रस्ताव इस प्रकार है :—

(क) जनशक्ति आयोजन मे प्रयोग किए जाने के लिए कितने लोगों को रोजगार मिल सकता है, इस सूचना का इकट्ठा करना।

(ख) एक नवयुवक रोजगार सेवा की स्थापना करना जिसका काम रोजगार चाहने वाले नवयुवकों के विशेष समूहों को रोजगार और प्रशिक्षण की समस्याओं के बारे में विशेषज्ञों की सलाह देना होगा।

(ग) रोजगार दिलाने के दफ्तरों में रोजगार सम्बन्धी सलाह देना—मुख्य उद्देश्य होगा रोजगार ढूढने वालों को उनकी अपनी सामर्थ्य तथा रोजगार की स्थिति के बारे में सूचना देना तथा उनका मार्गदर्शन करना।

(घ) व्यावसायिक अनुसन्धान और विश्लेषण—प्रस्ताव यह है कि भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए वाछित कुशलता सम्बन्धी परिभाषाओं का मानकीकरण करने तथा एक व्यावसायिक कोश तैयार करने के एक प्रणालीबद्ध कार्यक्रम का संगठन तथा विकास किया जाए। योजना की अवधि मे पाच मुख्य उद्योगों का अध्ययन पूरा किया जाएगा।

(ङ) रोजगार दफ्तरों मे व्यावसायिक परीक्षण—इस योजना के अनुसार उद्योग के सहयोग से रोजगार दिलाने के दफ्तरों में ही कार्यकुशलता या काम के बारे में परीक्षण करने का एक कार्यक्रम चालू किया जाएगा।

(५) **केन्द्रीय श्रम संस्थान का प्रसार**—केन्द्रीय श्रम सस्थान के दो अनुभाग और खोले जाएगे—एक औद्योगिक मनोविज्ञान पर और दूसरा औद्योगिक-व्यावसायिक तंत्र पर। ये अनुभाग काम-धन्धों सम्बन्धी मार्गदर्शन, कामगारो के उत्साह और उनकी प्रवृत्तियों, और ताप, शोर, प्रकाश आदि के प्रति कामगारों में शारीरिक प्रतिक्रिया सम्बन्धी विषयों पर खोज तथा अध्ययन करेंगे। इस संस्थान का दूसरा काम होगा उत्पादकता के अध्ययन तथा पर्यवेक्षण सम्बन्धी प्रशिक्षण का काम जारी रखना। उत्तरी और दक्षिणी प्रदेशों मे औद्योगिक सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा श्रम कल्याण सम्बन्धी प्रादेशिक संग्रहालय खोले जाएंगे। ये संग्रहालय केन्द्रीय श्रम संस्थान के बम्बई संग्रहालय को केन्द्र बिन्दु मानकर औद्योगिक प्रदेशों की विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आयोजित सुरक्षा, स्वास्थ्य और श्रम कल्याण के शिक्षा सम्बन्धी समन्वित कार्यक्रम के अग के रूप में काम करेंगे।

(६) **फिल्म यूनिट की स्थापना**—कामगारों की शिक्षा की आवश्यकता सभी लोग मानते हैं। कामगारों मे साक्षरता बहुत कम होने की वजह से शिक्षा और प्रचार के लिए दृश्य-श्रव्य साधनों का प्रयोग सर्वाधिक प्रभावकारी ढंग से किया

जाता है। वास्तव मे पिछले कुछ वर्षो मे फैक्टरी कल्याण विभागों तथा राज्य श्रम कल्याण केन्द्रों ने फिल्मे दिखाने का काफी काम किया है। लेकिन चूंकि श्रम सम्बन्धी विषयो पर भारत मे उपयुक्त फिल्मो का अभाव है, इसलिए अक्सर ऐसी विदेशी फिल्मे दिखाई जाती रही हैं जिनकी भारतीय स्थितियों से किसी तरह की समानता नही होती। यहा उपयुक्त प्रशिक्षण तथा शिक्षाप्रद फिल्मों की आवश्यकता पर जोर दिया जाना अनुचित न होगा। इसलिए प्रस्ताव है कि एक छोटी-सी फिल्म यूनिट स्थापित की जाए जो सुरक्षा, स्वास्थ्य और श्रम कल्याण, पर्यवेक्षकीय प्रशिक्षण, उत्पादकता सम्बन्धी अध्ययन, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा कर्मचारी राज्य बीमा योजना जैसी श्रम और तत्सम्बन्धी समस्याओ पर दूसरी पचवर्षीय योजना की अवधि मे कम से कम १०० फिल्मे बना सके।

(७) **कर्मचारी राज्य बीमा योजना तथा भविष्य निधि योजना**—इन दोनों योजनाओं पर इस अध्याय के पैरा २७ मे बताई गई रीति के अनुसार अमल किया जाएगा

(८) **आवास**—योजना मे औद्योगिक कामगारों तथा मध्य और निम्न आय वर्गो के व्यक्तियों को घर बनाने के लिए काफी धन की व्यवस्था की गई है। औद्योगिक आवास के लिए ५० करोड रुपए की रकम रखी गई है। बागान और खान कामगारों के घरों के लिए अलग व्यवस्था है। सरकारी सहायता प्राप्त आवास योजना के काम मे पहली पंचवर्षीय योजना मे जो अनुभव प्राप्त हुआ है, उसके आधार पर उसमे सुधार किए जाने के लिए अध्ययन किया जा रहा है। यह देखा गया है कि इस योजना के अन्तर्गत प्राप्त होने वाले कर्जो और सरकारी सहायता के प्रति मालिकों और कामगार सहकारी समितियों की ओर से उत्साह की काफी कमी रही है।

(९) **अन्य योजनाएं**—ऊपर बताई गई योजनाओं के अलावा कामगारों की शिक्षा, कल्याण कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण और छानबीन के नए कार्यो के सम्बन्ध में की गई सिफारिशों पर अमल किए जाने का विचार है। प्रस्ताव है कि अगले पांच सालों में इन बातों पर खोजबीन की जाएगी:—

(क) अखिल भारतीय कृषि श्रम सम्बन्धी जाच,

(ख) मजदूरी का पूरा-पूरा तख्मीना,

(ग) मुख्य औद्योगिक केन्द्रों मे कामगार परिवारों के बजटों के बारे मे जाच।

उद्योग की उन्नति किस प्रकार हो रही है, यह जानने के लिए भी एक ऐसी जांच कराने का विचार है जिसके आधार पर चुने हुए उद्योगों की उत्पादकता के देशनाकों का संग्रह किया जाएगा। राज्य सरकारों ने भी अपनी योजनाओं मे कामगारों के लिए कल्याण सुविधाओं की व्यवस्था की है। कुछ राज्यों द्वारा तैयार की गई योजनाओं का एक अच्छा पहलू यह भी है कि इनमें कल्याण केन्द्रों का संगठन कामगारों और मालिकों के सगठनो के द्वारा किया जाएगा, और सरकार सिर्फ खर्च का एक भाग दे दिया करेगी।

अध्याय २८

पिछड़े वर्गों का कल्याण

यो तो देश मे बहुत-से लोग पिछडे हुए है, किन्तु "पिछड़े वर्ग" की परिभाषा के अन्तर्गत जनता के निम्न चार वर्ग आते है—

(१) अनुसूचित आदिम जातिया, जिनकी सख्या लगभग १ करोड़ ९० लाख है,

(२) अनुसूचित जातियां, जिनकी संख्या लगभग ५ करोड़ १० लाख है,

(३) अपराधजीवी कही जाने वाली जातियां, जिनकी संख्या ४० लाख से कुछ ऊपर है, और

(४) सामाजिक दृष्टि से और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हुए ऐसे अन्य वर्ग जिन्हें केन्द्रीय सरकार पिछड़े वर्ग आयोग की सिफारिशों पर पिछडे वर्ग स्वीकार करने का निर्णय करे।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में जनता के इन चारो वर्गों की विशेष आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए कार्यक्रम तैयार किए गए थे। योजना मे इस कार्य के लिए कुल मिलाकर ३९ करोड़ रुपया रखा गया था, जिसमे से २० करोड़ रुपया राज्यों के कार्यक्रमो के लिए और शेष केन्द्रीय सरकार के कार्यक्रमों के लिए था। अनुसूचित आदिम जातियो तथा अनुसूचित क्षेत्रों के लिए लगभग २५ करोड़ रुपया रखा गया था, जिसमे से ७ करोड रुपया अनुसूचित जातियों के लिए, साढे तीन करोड़ रुपया भूतपूर्व अपराधजीवी लोगो के लिए और साढे तीन करोड़ रुपया पिछडे वर्गो के लिए था।

२. प्रत्येक वर्ग की अपनी विशेष समस्याएं हैं। प्रथम पचवर्षीय योजना में सम्पन्न हुए कार्यक्रमो और द्वितीय योजना के लिए प्रस्तावित कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए इन पर नीचे विचार किया जा रहा है। द्वितीय योजना मे पिछडे वर्गों के कल्याण के लिए लगभग ९१ करोड रुपया रखा गया है, जिसमे से ४७ करोड़ रुपया अनुसूचित आदिम जातियो और अनुसूचित क्षेत्रों के लिए, साढ़े २७ करोड रुपया अनुसूचित जातियों के लिए, लगभग ४ करोड़ रुपया भूतपूर्व अपराधजीवी लोगों के लिए, ९·७ करोड़ रुपया अन्य अनुसूचित वर्गो और २.९ करोड़ रुपया प्रशासन के लिए होगा। ये रकमें पिछड़ी जातियो की सहायता के लिए विशेष रूप से तैयार किए गए कार्यक्रमो के लिए है। इस प्रकार ये उपाय राज्यों में समूची जनता के लाभ के विकास कार्य-क्रमों के सहायक अंग के रूप में है। अर्थ-व्यवस्था का विकास जिस सीमा तक होता है उस सीमा तक पिछडे वर्गों को भी लाभ होता है। विकास कार्यक्रमों के प्रशासन में योजनाए इस प्रकार बनाने की सावधानी बरतनी चाहिए कि जनता के निर्बल अंगों को अधिकतम लाभ हो। इस पहलू की ओर सब से ज्यादा ध्यान रखा जाएगा किन्तु विकास के केवल थोड़े-से ही क्षेत्रों में यह दिखा सकना सम्भव होगा कि पिछड़े वर्गों के सीधे लाभ के लिए व्यय का कितना प्रतिशत रखा गया है। पिछड़े वर्गो के लिए जो विशेष व्यवस्थाएं की गई है, उनका उपयोग इस ढंग से होना चाहिए कि उन्हे

M26MofI&B—35

सामान्य विकास कार्यक्रमों से अधिकतम लाभ हो ताकि उनकी पिछली कमी शीघ्र पूरी हो सके। राज्यों मे पिछडे वर्गों से सम्बद्ध विभागो को प्रयत्न करना चाहिए कि राज्य के विकास सम्बन्धी अन्य विभाग ऐसे कार्यक्रम बनाएं जिनसे पिछड़े वर्गों का व्यापक हित हो और सामान्य तथा विशेष कार्यक्रमों की पूर्ति के लिए साधनो का वे इस प्रकार उपयोग करे कि दोनो कार्यक्रम एक-दूसरे के पूरक बन जाएं। पिछडी जातियो के प्रत्येक वर्ग के लिए प्राथमिकताए विचार-पूर्वक स्थिर होनी चाहिए। साथ ही यह बात भी अच्छी तरह स्पष्ट कर देनी चाहिए कि जिस अनुपात में कार्यक्रमो का परिपालन किया जाएगा और जितनी ईमानदारी, कुशलता और मनोयोग से कर्मचारी काम करेंगे, उसी अनुपात मे पिछडे वर्गों को लाभ होगा।

आदिम जातियों के लिए कल्याण कार्यक्रम

३. आदिम जातियो के कल्याण के लिए जो भी कार्यक्रम बनाए जाए, वे उनकी संस्कृति एवं रीति-रिवाजों के प्रति आदर-भाव, और उनकी सामाजिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं की पूरी-पूरी जानकारी पर आधारित होने चाहिएं। कल्याण और विकास के निमित्त जो भी कार्यक्रम अपनाए जाएंगे, वे अनिवार्यत. उनके परम्परागत विश्वासों और आचार-व्यवहार में विघ्न उत्पन्न करेंगे। ऐसी अवस्था में यह अत्यावश्यक है कि इन कार्यक्रमो को कार्यान्वित करते समय उस क्षेत्र के निवासियों का समर्थन प्राप्त कर लिया जाए। इस सम्बन्ध में आदिम जातियों, विशेषकर उनके मुखियो की सद्भावना प्राप्त करने का अपना एक विशिष्ट महत्व है। यह आवश्यक है कि कल्याण कार्यक्रमों के सभी प्रकार के कार्यकर्ता यथासम्भव आदिम जातियो के पढ़े-लिखे नवयुवको मे से ही लिए जाए। नई कार्यविधियों को अपनाते समय यह ध्यान रखा जाए कि उनमें आदिम जातियों का ही नेतृत्व प्रधान रहे तथा उन्हे तनिक भी यह अनुभव न होने पाए कि उन पर बाहर से जबर्दस्ती कुछ थोपा जा रहा ह। हर नया कदम उठाने से पहले उसके लिए भली प्रकार तैयारी कर लेनी चाहिए। आदिम जातियो की समस्याओं को सुलझाने के लिए मानव शास्त्र-वेत्ता, प्रशासक, विशेषज्ञ एवं समाज कार्यकर्ता को सहानुभूति व उनकी सामाजिक मनोदशा सबं ी आवश्यकताओ को भली प्रकार समझकर सहयोग की भावना से कार्य करना चाहिए। जहां तक सम्भव हो, आदिम जातियों की सहायता उनकी अपनी ही संस्थाओं के माध्यम से की जानी चाहिए। विकास कार्यो की तफसीलों को परामर्शदात्री परिषदों, आदिम जातियों के प्रमुख नेताओं और उनकी समस्याओं का अध्ययन करने वाली संस्थाओं के परामर्श और सहयोग से बनाना चाहिए। आदिम जातियों को यह महसूस होना चाहिए कि योजनाएं उन पर थोपी नहीं जा रही है बल्कि उनके अपने जीवन-स्तर को उन्नत करने और सांस्कृतिक विकास करने की उनकी इच्छा ही इन कार्यक्रमो के रूप मे प्रस्फुटित हो रही है। यदि ये कार्यक्रम स्थानीय जनता के सहयोग व समर्थन द्वारा सम्पन्न होंगे तो देश के सभी भागों में बसी हुई आदिम जातियों में अपने को समूचे राष्ट्र का अभिन्न अंग समझने की भावना जागृत होगी।

४. आदिम जातियों के प्रति इस प्रकार के दृष्टिकोण को प्रशिक्षित कार्यकर्ताओ तथा उनकी समस्याओं और आवश्यकताओं की सूक्ष्म जानकारी द्वारा ही सुलझाया जा सकता है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में आठ राज्यों में आदिवासी शिक्षणालय खोले गए हैं। क्षेत्र कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए मध्य प्रदेश और बिहार में प्रशिक्षणालय खोले गए हैं। कुछ राज्यों में आदिम जातियों की आवश्यकताओं के विशेष सर्वेक्षण का कार्य संगठित किया जा रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में आदिम जाति क्षेत्रो मे

कार्य करते हुए व्यक्तियो को स्वैच्छिक संस्थाओं का सहयोग प्राप्त कराने का प्रयत्न किया गया। केन्द्रीय सरकार ने दस अखिल भारतीय संस्थाओ को अनुदान तथा राज्य सरकारो ने लगभग २०० स्थानीय सस्थाओं को सहायता प्रदान की है।

५. आदिम क्षेत्रों का विकास कार्यक्रम स्थूल रूप से चार भागो में बांटा जा सकता है: (क) संचार, (ख) शिक्षा और संस्कृति, (ग) आदिम क्षेत्रों की अर्थ-व्यवस्था का विकास, तथा (घ) स्वास्थ्य, आवास और पानी का प्रबन्ध। प्रथम पंचवर्षीय योजना काल मे असम और दूसरे राज्यों के आदिम जाति क्षेत्रों में सड़कों के विकास में ६ करोड़ रुपया व्यय हुआ। अनेक राज्यों मे, जिनमे असम, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, आन्ध्र और विन्ध्य प्रदेश भी शामिल हैं, लगभग २,३४० मील लम्बे पहाड़ी रास्ते बनाए गए।

६. आदिम जातियों की शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। हैदराबाद तथा अन्य स्थानों में उन्हें अध्यापक बनाने के लिए प्रशिक्षण देने का महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। आदिवासियों को उनकी ही बोली में शिक्षण देने के कार्य को सुगम बनाने के अभिप्राय से हैदराबाद, असम, उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी (नेफ़ा) और बिहार राज्यों में विशेष प्रकार की पाठ्य-पुस्तकें तैयार की गई हैं। इस प्रकार अब तक आठ आदिम बोलियां इस कार्य के लिए चुनी गई हैं। आदिम जातियो के विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां, पुस्तकों के लिए अनुदान, छात्रावास का शुल्क और अन्य प्रकार की सहायता दी गई है। ४, ५०,००० से अधिक विद्यार्थियों ने इस सहायता से लाभ उठाया था। प्रथम पंचवर्षीय योजना के समाप्त होते-होते आदिम जाति क्षेत्रों में लगभग ४,००० पाठशालाए खुली। इनमे १,००० से अधिक आश्रम और सेवाश्रम पाठशालाए भी सम्मिलित है जो आदिम जाति क्षेत्रों, विशेषकर बम्बई, बिहार, उड़ीसा तथा मध्य प्रदेश राज्यों में खोली गई है और लगभग ६५० सस्कार केन्द्र, बालवाड़ियां और सामुदायिक केन्द्र भी बम्बई, बिहार, मध्य भारत और राजस्थान राज्यों में खोले गए हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सब राज्यो के आदिम जाति क्षेत्रों में जो शिक्षा कार्यक्रम अपनाया जाएगा, उसमें आश्रम पाठशालाओ को विशेष महत्व दिया जाएगा।

७ आदिम जातियो की अर्थ-व्यवस्था के पुनर्गठन में पर्याप्त कठिनाइयां है। अतएव यह आवश्यक है कि इन कठिनाइयो का समाधान उन क्षेत्रों की आर्थिक, सामाजिक और टेकनीकल पहलुओं की पूरी जानकारी के आधार पर किया जाए। इनमें सबसे मुख्य समस्या स्थान-परिवर्ती खेती की जगह एक-स्थानी खेती की प्रथा को जन्म देना है। बम्बई, हैदराबाद, बिहार और मध्य भारत मे आदिवासियों की काफी बड़ी संख्या एक ही स्थान पर रहकर खेती-बारी कर रही है। अब मुख्य प्रश्न उनके खेती करने के तरीकों में सुधार करने और उत्पादन बढाने में उनकी सहायता करने का है। इसके विरुद्ध असम, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और आन्ध्र में आदिम जातियों की अधिक संख्या स्थान-परिवर्ती खेती करती है। इस प्रकार की कृषि बहुधा जीवन के निम्नतर रहन-सहन की परिचायक होती है। स्थान-परिवर्ती खेती के स्थान पर एक-स्थानी खेती करने मे रीति-रिवाजों की बाधाओ के अतिरिक्त कृषि योग्य भूमि का सुगमतापूर्वक उपलब्ध न होना, या फिर उपलब्ध होने पर उसके विकास के लिए और वहां बसने में होने वाले व्यय का न जुटा सकना आदि कठिनाइयां भी है।

८. स्थान-परिवर्ती खेती में सुधार करने और कृषि बस्तिया बसाने के विचार से कई राज्यो में छोटे पैमाने पर कुछ प्रयोग किए गए हैं। १९५४ से अब तक असम में ९ प्रदर्शन केन्द्र

खोले गए है—३ गारो पहाडी जिलो मे, ३ मिकिर पहाडियों में, २ मिजो जिले मे और एक उत्तरी काचर पहाडी जिले मे। इन केन्द्रो मे आदिवासियों को उन्नत कृषि के प्रयोग दिखलाए जाते है। ये प्रयोग पहाडियो की चोटियों और ढलानो पर वैटल वृक्ष लगाने और काफी, काजू आदि की खेती के सम्बन्ध में होते है। आंध्र, पूर्वी और पश्चिमी गोदावरी जिलों मे आदिम जातियो की बस्तिया बसाने की योजनाए चालू की गई है। मध्य प्रदेश में बस्तर तथा दूसरे जिलो में मार्गदर्शक योजनाए भी आरम्भ की गई है। उडीसा मे अब तक जो ६९ कृषि बस्तिया बसी है, उनमे २,००० स ऊपर आदिवासी परिवारो को बसाया गया है।

९ यद्यपि स्थान-परिवर्ती खेती की समस्या का और अधिक अध्ययन होना चाहिए, फिर भी जो कुछ कार्य इस दिशा मे हुआ है उससे कुछ निष्कर्ष निकलते है। यदि अनुकूल अवस्थाए उत्पन्न की जा सके तो आदिवासी स्थान-परिवर्ती खेती प्रथा को त्यागने मे विशेष आनाकानी नहीं करेंगे। ये अवस्थाएं है (१) उपजाऊ और, जहा कही सम्भव हो, सिंचित भूमि की व्यवस्था, (२) बैल, खेती के औजार, बीज, धन आदि की सहायता, और (३) इस बात का विशेष प्रबन्ध कि सूद पर रुपया देने वाले महाजन और व्यापारी आदिवासियों का शोषण न कर सकें। इस दिशा मे किए गए प्रयोग यह दर्शाते हैं कि ढलानो और पहाड़ियों के ऊपरी भागो मे स्थायी रूप से जंगल लगा दिए जाने चाहिए। यदि भूमि की उत्पादन शक्ति को सुरक्षित रखा जा सके तो निचली ढलानो में कटान बिना कोई नुक्सान पहुचाए किया जा सकता है। नीची जमीनों और साधारण ढलानों की चौरस भूमि पर खेती की जा सकती है। स्थान-परिवर्ती और एक-स्थानी कृषि उन क्षेत्रो की भूमि की किस्म और आदिम जातियो को उपलब्ध साधनो पर निर्भर है। जिन क्षेत्रों मे कटान किया जाए, वहा यह सावधानी अवश्य बरती जाए कि वनों को अंधाधुध न काट दिया जाए। साथ ही उस भूमि में की जाने वाली खेती के बीच-बीच में समय का इतना अन्तर अवश्य होना चाहिए कि भूमि कुछ समय तक खाली रह सके। आदिम क्षेत्रों में कृषि के तरीको में सुधार करने के लिए टेकनीकल और आर्थिक सहायता तथा अन्य सुविधाओं के अतिरिक्त शिक्षा का अत्यधिक महत्व है। कृषि के आधुनिक तरीकों से यकायक ही कोई महत्वपूर्ण परिणाम निकलने की आशा नही है, किन्तु यह आवश्यक है कि प्रत्येक आदिम क्षेत्र के लिए जो कार्यक्रम निश्चित किया जाए वह स्थानीय अवस्थाओं के अनुकूल हो तथा उसे आदिवासियो के सहयोग से कार्यान्वित किया जाए।

१०. आदिम जातियों की काफी बडी संख्या जगली क्षेत्रों मे रहती है, अत: वन्य साधनों का अपने निर्वाह के लिए वे किस प्रकार उपयोग करते है इसका ज्ञान होना आवश्यक है। यह सावधानी भी रखनी होगी कि वन्य उत्पादों के एकत्रीकरण, चराई तथा लकडी आदि की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के विषय में जो नियम हों, वे अनावश्यक रूप से कड़े और परेशान करने वाले न हों। जंगलों के ठेकेदारों का आदिम जाति क्षेत्रों में प्रवेश वहां की अर्थ-व्यवस्था के लिए हानिकर सिद्ध हुआ है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में वनों में काम करने वालों की ६५३ समितियां बनाई गई थीं। जहां-जहां उन्हें आवश्यक सहायता मिली और सही-सही निर्देशन हुआ, वहां वे साधारणत: सफल रहीं है। आदिम क्षेत्रों में जंगलो के ठेके, अधिकाश सहकारी समितियों को ही दिए जाने चाहिएं तथा जगलों के साधनों से लाभ उठाने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करते रहना चाहिए। जहां सहकारी समितिया स्थापित हो गई हों वहां प्रशासक ईमानदारी से कार्य करें, इस बात का विशेष ध्यान रखा जाए।

११ आदिम जाति क्षेत्रो मे ऋण की समस्या अति चिन्तनीय है। कभी-कभी साहूकार जो अधिकतर सूद पर रुपया देने वाले महाजन, व्यापारी या ठेकेदार लोग होते है, आदिम जातियो को बुरी तरह अपने शिकजे मे जकड़ लेते है और उनके उत्पादन का अधिकाश उन लोगो के पास चला जाता है। हमारा सुझाव है कि समस्या का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया जाए जिससे यह बुराई किस सीमा तक फैली हुई है, इस तथ्य का ठीक-ठीक अनुमान हो सके और उन्हे पिछले ऋण से मुक्त किया जा सके तथा भविष्य मे उनके लिए ब्याज की सस्ती दर पर ऋण की व्यवस्था हो सके। यहा यह उल्लेख कर देना उचित प्रतीत होता है कि कई राज्यो में आदिवासियो के ऋण मे कमी करके उन्हें सहायता पहुंचाई गई है और कानून द्वारा उनके भूमि सम्बन्धी अधिकारो की रक्षा की गई है। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत आदिम जाति क्षेत्रो मे ३१२ बहूद्देशीय सहकारी समितियों की स्थापना की गई थी और मध्य प्रदेश, बिहार एवं उडीसा मे सरकार द्वारा ३५० अनाज गोदाम बनाए गए थे, जो अब अनाज बैक के रूप मे कार्य कर रहे है। आदिम जातियों का आर्थिक जीवन व रीति-रिवाज सहकारी और सामुदायिक सगठन के लिए विशेष रूप से अनुकूल है। आदिम जाति क्षेत्रो में सचालित सहकारी समितिया यथासम्भव बहूद्देशीय ढंग की होनी चाहिएं। उनका कार्य ऋण देना, दैनिक उपयोग की वस्तुओं का प्रबन्ध करना और साथ ही उनकी वस्तुओं के विक्रय का प्रबन्ध करना होना चाहिए। सहकारिता का सिद्धान्त आर्थिक जीवन के प्रायः सभी क्षेत्रो मे बरता जा सकता है।

१२. प्रथम पचवर्षीय योजना में आदिम जाति क्षेत्रो मे १११ कुटीर उद्योग केन्द्र स्थापित किए गए। आदिवासी लोग परम्परागत कार्यों मे स्वभावत कुशल है, अत उनकी दस्तकारियो को बढावा देना आवश्यक है। उन्हे व्यावसायिक धधो के प्रशिक्षण की सब सुविधाएं दी जानी चाहिए। मधुमक्खी पालन, टोकरी बुनाई, रेशम कीट पालन, कताई-बुनाई, फल सरक्षण और ताड़ का गुड़ बनाने जैसे बहुत-से सहायक उद्योग-धंधे है जिनका विकास किया जाना चाहिए। स्थान-स्थान पर जाकर प्रयोगों के प्रदर्शन करने और प्रशिक्षण देने वाले दल बम्बई और अन्य स्थानो मे उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

१३. आदिम जातिया यद्यपि प्रकृति के निकट सम्पर्क में रहती है, फिर भी वे स्वास्थ्य और शारीरिक दृष्टि से दुर्बल ही रहती है। वे मलेरिया, न्युपदश, तपेदिक, चेचक, गुप्त रोग, त्वचा तथा नेत्र रोग जैसी अनेक बीमारियों से पीडित रहते हैं। इसका मुख्य कारण पीने के स्वच्छ पानी का अभाव, भोजन मे पोषक तत्वों की कमी तथा ऋतुओ के हानिकर प्रभाव से अपनी रक्षा कर सकने की उनकी असमर्थता है। प्रथम पचवर्षीय योजना के समाप्त होते-होते आदिम जाति क्षेत्रो मे ३,१४४ औषधालय व चलते-फिरते चिकित्सालय स्थापित हो चुके है। पीने के पानी के लिए कुए खुदवाने मे भी पर्याप्त सहायता दी गई है। आदिम जातियो के स्वास्थ्य की सामान्य स्थिति और बीमार होने पर स्वास्थ्य लाभ करने के उनके साधनो और विधियों की जानकारी के लिए कई राज्यों मे सर्वेक्षण किए जा रहे है। इस कार्य में मुख्य कठिनाई यह सामने आ रही है कि आदिम जातिया प्राय. ऐसे सुदूर वनों मे रहती है जहां तक पहुंचना कठिन है। जहां तक यातायात की सुगमता का प्रश्न है, अनुभव के आधार पर यह प्रतीत होता है कि इन क्षेत्रों के लिए चलते-फिरते चिकित्सालय अधिक उपयुक्त होगे, क्योंकि बहुत ही कम क्षेत्र ऐसे हैं जहा एक स्थान पर आदिम जातियां अधिक संख्या में रहती है। अतः ऐसी स्थिति मे कही तो स्थायी ढंग के औषधालय और कही चिकित्सा के अन्य साधन जुटाने होंगे।

१४ सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्य वाले अध्याय मे यह कहा जा चुका है कि आदिम जाति क्षेत्रों में राष्ट्रीय विस्तार सेवा के कार्य किस प्रकार किए जाए, जिससे इस अध्याय में उल्लिखित कल्याण कार्यों के साथ उनका पूरा समन्वय हो सके। आदिम जाति क्षेत्रों मे राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों का सीमा-निर्धारण अन्य क्षेत्रों के समान ६६,००० की जन संख्या पर न होकर २५,००० जन सख्या के आधार पर होगा। अत्यधिक पिछड़े क्षेत्रों मे ४० बहूद्देशीय प्रारम्भिक योजना कार्यों को हाथ मे लेने का विचार किया गया है। इन योजनाओ मे राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यों के साथ अन्य कार्यक्रमो को भी सम्मिलित किया जाएगा। इन कार्यक्रमो को राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्र मे कार्यान्वित करने का एक लाभ यह होगा कि इनसे प्रशिक्षण-प्राप्त कार्यकर्ताओ की सेवाओं का सर्वोत्तम उपयोग हो सकेगा। इन प्रारम्भिक योजना कार्यों मे आदिम जातियो के जीवन के सभी पहलुओ को एक साथ लिया जा सकेगा—जैसे स्थान-परिवर्ती खेती के बजाय एक-स्थानी खेती को प्रोत्साहन, कृषि सुधार, औषधि एवं जन स्वास्थ्य का प्रबन्ध, संचार व्यवस्था का सुधार, कलाओ और उद्योगो का विकास, सहकारी समितियों का संगठन और सामुदायिक कल्याण केन्द्रो की स्थापना। अभी तक आदिम जाति क्षेत्रों में काफी बड़े पैमाने पर इस प्रकार के सामुदायिक कल्याण केन्द्रों की स्थापना नहीं हुई है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस कार्य पर अन्य कार्यों की अपेक्षा अधिक बल देने की आवश्यकता है। इस प्रकार स्थापित केन्द्र बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे, क्योंकि स्थानीय लोग इन केन्द्रो द्वारा सुधार कार्यों मे भाग लेना सीखेंगे तथा इनसे ऐसे कार्यकर्ता निकलेगे जो शेष लोगो का नेतृत्व करने योग्य होंगे। साथ ही ये केन्द्र स्थानीय और अधिक विकसित क्षेत्रो के सर्वोत्तम कार्यकर्ताओ मे परस्पर सम्पर्क का अवसर प्रदान करेगे।

१५. द्वितीय पचवर्षीय योजना मे आदिम जाति क्षेत्रों की कल्याण योजनाओ के लिए ४७ करोड़ रुपए की धनराशि रखी गई है, जबकि प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस कार्य के लिए केवल २५ करोड रुपया ही था। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे भी प्रस्तावित कार्यक्रमों का क्षेत्र काफी विस्तृत है, अत: दोनो योजनाओं के कार्यक्रमों से आदिम जाति क्षेत्रों मे सुधार कार्य को काफी प्रोत्साहन मिलना चाहिए। स्थूल रूप से, द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम पहली योजना के कार्यक्रमों का अनुसरण करते है। प्रथम पचवर्षीय योजना को कार्यान्वित करते हुए अनेक उपयोगी अनुभव प्राप्त हुए है तथा इन क्षेत्रों में कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं को वहा की अवस्थाओं और समस्याओं का समुचित ज्ञान हो गया है। ४७ करोड़ की निर्धारित धनराशि मे से २७ करोड़ रुपए से कुछ अधिक राज्य सरकारों की योजनाओं के लिए सुरक्षित है (इसमे केन्द्रीय सहायता भी शामिल है), शेष २० करोड़ रुपया केन्द्रीय सरकार की ओर से प्रस्तावित योजनाओं पर गृह मंत्रालय द्वारा व्यय किया जाएगा। आदिम जातियों की कल्याण योजनाओ के कुल व्यय का विवरण निम्न प्रकार है :—

	(करोड रुपया)
१. संचार	११
२. आदिम जाति क्षेत्रों की अर्थ-व्यवस्था का विकास	१२
३. शिक्षा और संस्कृति	८
४. जन स्वास्थ्य, चिकित्सा और पानी का प्रबन्ध	८
५. आवास और पुनर्वास कार्य	५
६. अन्य	३
	४७

१६. **राज्यों के कार्यक्रम** — राज्यों की योजनाम्रो में परिवहन व्यवस्था के विकास को प्राथमिकता दी गई है। इसके लिए ६ ५ करोड़ रुपया निर्धारित है। १०,२०० मील लम्बे पहाड़ी रास्ते और ४५० पुल बनाने का निश्चय किया गया है। राज्यों ने लगभग ३६,६०० एकड़ भूमि को विकसित करने, ६,५७० एकड जंगली भूमि साफ करने और कृषि योग्य बनाने, कृषि के औजार बाटने, अच्छी नसल के सांड देने, ४,००० व्यक्तियों को विभिन्न उद्योगों में प्रशिक्षण देने और ८२५ कुटीर उद्योग केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था की है। असम राज्य ने अपनी योजना मे आदिम जातियो के विद्यार्थियों को व्यावसायिक धधों की शिक्षा देने के लिए ६७० वजीफे देने की व्यवस्था की है। उडीसा की द्वितीय योजना में ४५ प्रशिक्षण-उत्पादन केन्द्र स्थापित करने की व्यवस्था है और आदिम जाति विद्यार्थियों के लिए औद्योगिक तथा टेकनीकल प्रशिक्षण केन्द्र अन्य राज्यों में खोलें जाएंगे। एक-स्थानी कृषि के विकास के लिए १२,००० से अधिक परिवारो की १८६ बस्तियां बसाई जाएंगी। प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत स्थापित ३५० अन्न गोदामों को पूर्णरूपेण सहकारी समितियों में परिवर्तित कर दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त ८०० बहूद्देशीय वन्य सहकारी समितियां स्थापित की जाएगी। आंध्र की राज्य सरकार नें इन पर्वतीय लोगों को ऋण की सुविधाएं देने के निमित्त एक विशेष संस्था स्थापित की है। इसके माध्यम से वे लोग अपनी पैदावार उचित मूल्यों पर बेच सकेंगे तथा अपनी दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुए बाजार भाव पर खरीद सकेंगे।

१७. आदिम जाति क्षेत्रो मे शिक्षा की सुविधाओं को शीघ्रातिशीघ्र फैलाया जाएगा। शिक्षा मत्रालय ने अनुसूचित आदिम जातियों और पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों के लिए मैट्रिक से ऊपर की शिक्षा के लिए ११.३८ करोड़ रुपया निर्धारित किया है। इस धनराशि में से ३३,००० छात्रवृत्तियां केवल अनुसूचित आदिम जातियों के विद्यार्थियों के लिए है। आदिम जाति विद्यार्थियों के लिए ३,१८७ पाठशालाए और ३६८ छात्रावास खोले जाएंगे तथा ३,००,००० विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियां और अन्य सुविधाओं की व्यवस्था की जाएगी। योजना में २०० सामुदायिक और सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना करने का विचार है। आदिम जाति बोलियों में पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन, स्कूलों के वर्तमान पाठ्यक्रम में सुधार तथा आदिम जाति क्षेत्रों की गतिविधियों के अनुसन्धान पर विशेष बल दिया जाएगा। केन्द्रीय सरकार प्रथम पंचवर्षीय योजना के दौरान में स्थापित आदिम जाति अनुसन्धान संस्थाओं की सहायता करेगी। बम्बई में एनथ्रोपोलौजिकल सोसाइटी आफ बाम्बे, दी गुजरात रिसर्च सोसाइटी तथा बम्बई विश्वविद्यालय आदिम जातियो के सम्बन्ध में अनुसन्धान कार्य कर रहे है। असम में गोहाटी विश्वविद्यालय के लोकगीत और आदिम सस्कृति विभाग ने पूर्वी प्रदेशो में बसी हुई आदिम जातियो के सामाजिक जीवन सम्बन्धी तथ्य एकत्र करने की एक योजना बनाई है।

१८. स्वास्थ्य सेवा कार्यक्रम के अन्तर्गत आदिम जाति क्षेत्रों में ६०० स्थायी और चलते-फिरते दवाखानों की स्थापना होगी। पीने के पानी के १५,००० कुएं खोदे जाएंगे तथा आदिवासियों में से ही नर्सों और दाइयों के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था करनी होगी। आदिवासियों की आवास सम्बन्धी अवस्थाएं बहुत ही असन्तोषजनक है, अतः राज्य सरकारों ने ६० लाख रुपए के व्यय से १८,८०० मकान बनवाने की व्यवस्था की है तथा इस निर्माण कार्य के लिए ५६ आवास समितियां बनाने का निश्चय किया है।

१९. **केन्द्र द्वारा प्रस्तावित योजनाएं**.—उपर्युक्त योजनाओं के अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार भी बहुत-सी योजनाओं को सहायता देगी जिससे अनुसूचित जातियो और उनके क्षेत्रों की

विशेष समस्याएं पहले से अधिक तत्परता के साथ सुलझाई जा सके। इन योजनाओ मे बहूद्देशीय सहकारी समितियों के कार्यक्रम भी शामिल हैं। इनके अलावा नई बस्तिया बसाने की योजना, गृह निर्माण, नई सड़कों का निर्माण और वर्तमान संचार साधनों मे सुधार, कोढ, गुप्त रोग आदि को दूर करने के लिए चिकित्सा और आरोग्य संस्थाएं खोलना, कुएं खुदवाना, कुटीर उद्योग धंधों का विकास, व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण एवं कल्याण कार्यकर्ताओ के प्रशिक्षण कार्यक्रम भी अपनाए जाएगे। साधारणतः ये सब कार्यक्रम राज्यो के सबसे पिछडे क्षेत्रो से आरम्भ किए जाएगे, जिससे कि इनके तात्कालिक परिणाम सामने आ सके।

२०. एक सामुदायिक विकास खण्ड स्थापित करने का अनुमानित व्यय १२ लाख रुपया है, किन्तु इस अध्याय में पहले उल्लिखित कुछ अतिरिक्त कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए १५ लाख रुपया प्रति खण्ड के हिसाब से और अधिक व्यय करने का विचार किया गया है। सब मिलाकर द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे ४० बहूद्देशीय प्रारम्भिक योजना कार्यों पर ६.५ करोड रुपया व्यय किया जाएगा। इसके अतिरिक्त १·३ करोड रुपए असम, मनीपुर, त्रिपुरा, उड़ीसा, बिहार, मध्य प्रदेश, और आध्र आदि राज्यों में स्थान-परिवर्ती खेती की समस्या को हल करने पर व्यय किए जाएगे।

२१. आदिवासी क्षेत्रो में परिवहन साधनो के सुधार पर ४ करोड रुपया व्यय होगा। इस धनराशि से मोटर गाडियां चल सकने योग्य ४५० मील लम्बी सड़के तथा ७,२०० मील लम्बे पहाडी मार्ग बनाये या सुधारे जाएंगे।

२२. आवास पर व्यय करने के लिए लगभग १ ७७ करोड़ रुपया रखा गया है। हमारा लक्ष्य २७,००० घरों का निर्माण करना है। इस कार्यक्रम से लाभ उठाने वाले व्यक्तियो को शारीरिक परिश्रम के रूप मे योग देना होगा। निर्माण कार्य मे काम आने वाले सामान की व्यवस्था सरकार की ओर से होगी। आदिम जाति क्षेत्रों मे पीने के शुद्ध पानी के प्रबन्ध पर ०.५३ करोड़ रुपया व्यय किया जाएगा। इस धन से २६,००० कुएं तथा असम और मनीपुर मे २ जलाशय बनाये जाएंगे। इसके अतिरिक्त कोढ, क्षय, गुप्त रोगादि के निवारण के लिए विशेष प्रकार के ३३ चिकित्सा केन्द्र या चलते-फिरते दवाखाने स्थापित किए जाएंगे, तथा ४०० दाइयों के प्रशिक्षण के लिए ५ केन्द्र खोले जाएगे। इस कार्य पर ०·५० करोड रुपया खर्च होगा।

२३. अनुसूचित आदिम जातियो क उत्थान के लिए ३.५२ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इस आर्थिक कार्यक्रम मे ये योजनाएं कार्यान्वित करने का निश्चय किया गया है. बहूद्देशीय सहकारी समितिया और वन्य सहकारी समितियों की स्थापना तथा घरेलू उद्योग-धंधों के प्रशिक्षण व उत्पादन केन्द्रो की स्थापना एवं प्रशिक्षण-प्राप्त व्यक्तियो को छोटे-मोटे उद्योग-धंधों में लगाने के लिए आर्थिक सहायता देना। सर्टिफिकेट कोर्स के लिए, मिकेनिकल और सिविल इंजीनियरिंग में प्रशिक्षण देने के वास्ते टेकनीकल केन्द्र खोलने, आदिवासियों को कृषि शिक्षा देने तथा अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए ०·७५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इम्फाल में एक टेकनीकल संस्था स्थापित करने की बात को स्वीकार कर लिया गया है और असम, बिहार, उड़ीसा और मध्य प्रदेश मे भी ऐसी ही संस्थाएं स्थापित करने का प्रस्ताव है जिससे आदिवासी नवयुवक दूर जगहों पर न जाकर अपने समीप के क्षेत्र मे ही प्रशिक्षण की सुविधाएं प्राप्त कर सकें। ऐसी प्रत्येक सस्था पर १५ लाख रुपया व्यय होगा।

२४. अन्य आदिम जाति क्षेत्रो की अपेक्षा पूर्वी प्रदेशो, अर्थात असम, त्रिपुरा, मनीपुर तथा उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी की कुछ अपनी विशेषताएं तथा समस्याएं है। इन क्षेत्रो मे आबादी छिटकी हुई है, सघन वनो से ये प्रात ढके हैं, वर्षा अधिक होती है; यातायात के साधन सीमित एव दुर्गम है। इसी कारण इन लोगों तक जीवनोपयोगी सुविधाएं बहुत ही कम पहुच पाई है। इन क्षेत्रो की मुख्य समस्याए संचार साधनो की कठिनाइयां और स्थान-परिवर्ती कृषि है। द्वितीय पचवर्षीय योजना में इन समस्याओ पर विशेष ध्यान दिया गया है। असम, मनीपुर और त्रिपुरा मे आदिवासियो के कल्याण कार्यक्रमो पर १५ करोड़ रुपए से अधिक व्यय करने की व्यवस्था है। उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी के लिए कुल धन ६·५ करोड़ रुपया रखा गया है, जबकि प्रथम पचवर्षीय योजना में केवल ४.२ करोड़ रुपए की व्यवस्था थी। इन क्षेत्रों में कल्याण कार्यक्रमो और योजनाओं को कार्यान्वित करने में अपर्याप्त संचार साधन विशेष रूप से बाधक है। खास तौर पर इसी कठिनाई के कारण प्रथम पंचवर्षीय योजना में प्रस्तावित पासीघाट और ट्वेनसांग में चिकित्सालय आदि बनाने जैसे कार्यों को पूरा नही किया जा सका। अब जन सहयोग द्वारा नए मार्ग और सड़कें बनाने के प्रयत्न किए जाएंगे। डिवीज़नल हैडक्वार्टर्स को बारहों मास चालू रहने वाली सड़कों से मिलाने के लिए प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में आरम्भ किए गए कार्यक्रमों को पूरा किया जाएगा। ट्वेनसांग, लोहित और स्याग के सीमावर्ती डिवीज़नों में सम्पर्क स्थापित करने के लिए मुख्य सडको का निर्माण किया जाएगा। ३,१५२ मील लम्बे रास्ते, जो ६ फुट से १० फुट तक चौड़े होगे, खच्चरों के लिए बनाए जाएगे। उन सुदूर प्रदेशों में, जो अब तक पहुंच से बाहर रहे है, सचार सम्पर्क स्थापित किया जाएगा। कुछ ऐसे भी स्थान है जहां वायुयान द्वारा ही पहुचा जा सकता है, अत. ऐसे स्थानो मे हवाई पटरिया तथा हवाई अड्डे बनाने का निश्चय किया गया है।

२५. प्रथम योजना काल मे आदिवासियों और आदिम जाति क्षेत्रों के कल्याण और विकास सम्बन्धी कार्यक्रमो की प्रगति आंकने में बहुत-सी कठिनाइयों का सामना करना पडा था। अब इस विषय में प्रगति का विवरण प्राप्त करने की प्रणाली में सुधार किया जा रहा है। गृह मत्रालय अनुसूचित जातियों एव अन्य पिछड़ी जातियों के निमित्त किए गए कार्यों को आंकने के लिए एक संस्था बनाने का विचार कर रहा है। सब मिलाकर 'प्रशासन' मद में २ ६ करोड़ रुपया व्यय किया जाएगा। यह धनराशि कल्याण कार्यक्रमों को व्यवस्थित करके उनके निरीक्षण, परस्पर सम्पर्क स्थापित करने तथा उन्हें नियन्त्रित करने पर खर्च की जाएगी। पूर्वी प्रदेशों मे इस कार्य मे प्रशिक्षण-प्राप्त टेकनीकल कर्मचारियो का अभाव सबसे मुख्य बाधा रही है। अतएव, इस कठिनाई को हल करने के लिए भारत सरकार ने 'भारतीय सीमावर्ती प्रशासन सेवा' नामक एक नए संवर्ग की स्थापना की है जिससे उत्तर-पूर्वी सीमान्त एजेन्सी, मनीपुर और त्रिपुरा में प्रथम वर्ग और द्वितीय वर्ग की प्रशासनिक जगहो के लिए प्रशिक्षित अधिकारी प्राप्त हो सकेंगे। इस नई सेवा में इस समय ४३ स्थान प्रथम श्रेणी के है, जिनमे से २३ प्रथम ग्रेड के और २० द्वितीय ग्रेड के है। इन क्षेत्रों मे अधीनस्थ कर्मचारियो की व्यवस्था का भी प्रबन्ध किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त ऐसे समाज सेवकों की आवश्यकता है जो आदिम जाति क्षेत्रों में वहा के निवासियों के साथ घुल-मिलकर, उनके बीच में रहकर सेवा कार्य कर सकें। आदिम जाति क्षेत्रों के लिए प्रशासको को अधिकाधिक सख्या मे उपलब्ध करने एवं उनके प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया गया है जिससे वे अपने ही क्षेत्रों में कार्य कर सकें। पिछड़े वर्गों के निमित्त बनाए गए

विकास कार्यक्रमो को कार्यान्वित करने मे परामर्श देने के लिए गृह मत्रालय एक केन्द्रीय परामर्शदात्री बोर्ड बनाने के विषय मे विचार कर रहा है। इसी प्रकार का एक अन्य बोर्ड अनुसूचित जातियों के लिए बनाने का भी विचार किया जा रहा है।

हरिजन

२६ हरिजनों के कल्याण का दायित्व मुख्यतः राज्य सरकारो पर है। हरिजनो के हितो की रक्षा के लिए सविधान मे अनेक सरक्षण हैं। अनुसूचित जातियो के लिए विकास कार्यक्रम इस ध्येय को सम्मुख रखकर बनाए गए है कि उनका सामाजिक स्तर ऊंचा हो और उन्हे शिक्षा तथा आर्थिक क्षेत्र मे उन्नति के पूर्ण अवसर प्राप्त हों। प्रथम पंचवर्षीय योजना से पूर्व राज्यो मे हरिजनो की स्थिति में सुधार के लिए कुछ कार्य किए गए थे। अस्पृश्यता निवारण सबंधी एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम भी आरम्भ किया गया था। प्रथम योजना मे अनुसूचित जातियो के कल्याण के लिए ७ करोड रुपया रखा गया था।

२७. भारत के सविधान मे अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया गया है। छुआछूत के व्यवहार को प्रत्येक रूप मे निषिद्ध घोषित कर दिया गया है। जनता मे छुआछूत के विरुद्ध भावना जागृत करने के लिए राज्य सरकारों और अखिल भारतीय गैर-सरकारी संगठनों ने केन्द्रीय सरकार की सहायता से वृहत् प्रचार कार्य आरम्भ किया है। तो भी अभी छुआछूत किसी न किसी रूप मे विद्यमान हैं, यद्यपि कम मात्रा में है। जून १९५५ से अस्पृश्यता अपराध अधिनियम के अन्तर्गत छुआछूत को कानून द्वारा दण्डनीय अपराध करार दिया गया है।

२८ द्वितीय पंचवर्षीय योजना में अनुसूचित जातियो के कल्याण कार्यों के लिए २१·२८ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रस्तावित योजनाओ के लिए ६·२५ करोड़ रुपया रखा गया है। इन योजनाओ मे (१) आवास, (२) पीने के पानी की व्यवस्था, (३) आर्थिक उन्नति, और (४) अस्पृश्यता निवारण के लिए प्रचार कार्य एवं गैर-सरकारी संस्थाओ को सहायता देना सम्मिलित है। हर राज्य मे हरिजनों के लिए जो विशेष कार्यक्रम अपनाए जाएंगे, वे उनके सामान्य विकास कार्यक्रमो के ही पूरक कार्यक्रम होंगे।

२९. प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि मे ४,५०० कुएं खोदे गए थे। द्वितीय योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारों की योजनाओ मे १५,२०० कुएं खुदवाने की व्यवस्था है। इनके अतिरिक्त केन्द्र द्वारा प्रस्तावित एक योजना के अन्तर्गत ८,२०० कुए और खुदवाने का निश्चय किया गया है। साथ ही ९३,३०० मकान या मकानों के लिए स्थानो का प्रबन्ध किया जाएगा। इस कार्य पर लगभग ३·४८ करोड़ रुपया व्यय होगा। इसके अतिरिक्त केन्द्र द्वारा प्रस्तावित एक योजना के अन्तर्गत १.७७ करोड रुपए की लागत से ३६,००० मकानों का निर्माण करने की व्यवस्था की गई है। इन योजनाओं को कार्यान्वित करने में किसी प्रकार की पृथक्करण नीति को प्रश्रय नही दिया जाएगा। यह भी ध्यान रखा जाएगा कि मकानो के विषय में सबसे पिछड़े लोगों को प्राथमिकता दी जाए क्योकि मल-मूत्र साफ करने के कारण जनसंख्या के एक महत्वपूर्ण भाग को अछूत कहलाना पड़ता है, अतः यह निश्चय किया गया है कि नए बनने वाले मकानों में आधुनिक ढंग के शौचालय हो। मौजूदा मकानो में, जिनमे पुराने ढग के शौचालय हैं, उनके स्थान पर आधुनिक ढंग के शौचालय बनाए जाएं, जिससे मल-मूत्र साफ करने वालों की

आवश्यकता न रहे। राज्य सरकारो की योजनाओ मे भी ८० आवास सहकारी समितियों की स्थापना की व्यवस्था है।

३० राज्य सरकारो की योजनाओं के अन्तर्गत लगभग ७,००० हरिजन विद्यार्थी विशेष दस्तकारी प्रशिक्षण केन्द्रो मे प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे। केन्द्रीय सरकार की योजनाओं में अनुसूचित जातियों के लिए १६६ प्रशिक्षण-उत्पादन केन्द्र खोले जाएगे, जो योजना की अवधि मे ३३,४४४ व्यक्तियों को विभिन्न दस्तकारियों और धंधों में प्रशिक्षित करेंगे। प्रशिक्षित व्यक्तियो को व्यवसाय चलाने के लिए आर्थिक सहायता भी दी जाएगी। जिन व्यक्तियों को भूमि मिलेगी, उन्हें कृषि के लिए सहायता दी जाएगी। केन्द्र द्वारा आरम्भ की जाने वाली अनुसूचित जातियो के आर्थिक उत्थान की योजनाओ के लिए कुल मिलाकर २३१.५ लाख रुपए की व्यवस्था की गई है।

३१. बढ़ती हुई जनसख्या के साथ रोजगारो के न बढ़ने के कारण हरिजनों को इसका दुखद परिणाम भुगतना पडा है। अतएव उनके लिए केवल रोजगार जुटाने ही आवश्यक नही है, वरन उनमे बड़े पैमाने पर शिक्षा का प्रचार करने की भी आवश्यकता है जिससे वे केन्द्र और राज्य सरकारो द्वारा प्रदान की हुई प्रशासनिक सुविधाओं तथा सरक्षणो का लाभ उठा सकें। द्वितीय योजना में ३० लाख से ऊपर फीस माफियां और छात्रवृत्तियां दी जाएगी तथा ६,००० पाठशालाओं और छात्रावासो की स्थापना होगी। शिक्षा मन्त्रालय की ओर से भी १,०७,००० छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की गई है।

३२ सरकार ने अस्पृश्यता निवारण के लिए जो कानून बनाया है, उसे सफल बनाने के लिए जनता में सतर्कता तथा जागरूकता की भावना उत्पन्न करना आवश्यक है। इस कार्यक्रम को पूरा करने के लिए प्रशिक्षित प्रचारकों की आवश्यकता है। इस क्षेत्र मे गैर-सरकारी सस्थाओ को कार्य करने का पर्याप्त अवसर है। गृह मन्त्रालय ने अनुसूचित जातियो के लिए सुधार कार्य करने वाली स्वयंसेवी संस्थाओ की सहायतार्थ ५० लाख रुपया तथा फिल्मों और पोस्टरो आदि द्वारा प्रचार कार्य के लिए २५ लाख रुपया निर्धारित किया है।

भूतपूर्व अपराधजीवी जातियां

३३. प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ३.५ करोड रुपए की धनराशि से भूतपूर्व अपराध-जीवी जातियो को बसाने और उनमे सामुदायिक जीवन व्यतीत करने की भावना जागृत करने के लिए कार्य आरम्भ किया गया था। यद्यपि इस दिशा में प्रगति अधिक नही हो पाई, किन्तु उनके जीवन-स्तर को ऊंचा उठाने के सतत प्रयास किए जा रहे है। उन्हें आर्थिक रूप से उन्नति करने तथा नई पीढी को पुरानी समाज-विरोधी प्रथाओ से अलग रखने पर विशेष बल दिया जा रहा है। प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ४२,०५६ विद्यार्थियो को छात्रवृत्तिया, छात्रावास तथा पुस्तकों की सहायता दी गई। बालवाडियो, आश्रम पाठशालाए और संस्कार केन्द्र समेत कुल मिलाकर २६१ पाठशालाए खोली गईं। कुछ विद्यार्थियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण और छात्रावास की सुविधाए प्रदान की गईं। ३,६२६ परिवारो को कृषि कार्य मे सहायता दी गई, ११३ सहकारी समितिया सगठित हुई तथा ३३ घरेलू उद्योग-धंधो के केन्द्र स्थापित किए गए। बहुत-से परिवारो के पुनर्वास में उनकी आर्थिक सहायता की गई। इस समय भूतपूर्व अपराधजीवी जातियों के कल्याण के लिए १७ छोटी तथा ३० बड़ी बस्तिया है। बम्बई मे नरोदा और उत्तर प्रदेश में भाटपुरवा में बस्तियां बसाने के अच्छे परिणाम निकले है। इन स्थानों मे बसे हुए लोगों ने जातीय पचायत की प्राचीन प्रथा को त्यागकर अपना नया संगठन बना लिया है।

३४. द्वितीय पचवर्षीय योजना मे भूतपूर्व अपराधजीवी जातियो के कार्यक्रम के लिए २ ६४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। इस कार्यक्रम मे १५,२४६ परिवारो को—जिनमे अधिकाश अभी भी खानाबदोशो जैसा जीवन व्यतीत कर रहे है— बस्तियों मे बसाने और उनके पुनर्वास की योजनाए भी सम्मिलित है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ८,१५७ मकान बनेगे तथा ३६४ कुए खुदवाए जाएगे। ६७ सस्कार केन्द्रो व बालवाडियो तथा ५२ आश्रम पाठशालाओ द्वारा बच्चो को अपराध करने की प्रवृत्तियो से बचाए रखने का विशेष प्रयत्न किया जाएगा। प्रौढों को सामुदायिक केन्द्रों द्वारा अच्छे रहन-सहन का ढग सिखाया जाएगा। कुल मिलाकर १,१६,४३२ छात्रवृत्तियो और अन्य शिक्षा सम्बन्धी सुविधाओ की व्यवस्था की गई है। साथ ही, गृह मन्त्रालय ने अपनी योजना मे भूतपूर्व अपराधजीवी जातियों को बसाने के लिए १ ११ करोड रुपए की व्यवस्था की है। अनुमान लगाया गया है कि यदि राज्य सरकार भूमि का प्रबन्ध कर दे तो मोटे तौर पर एक परिवार को बसाने मे १,६०० रुपया व्यय होगा। इस हिसाब से द्वितीय योजना काल में भूतपूर्व अपराधजीवी जातियो के ७,१०० परिवारो को बसाने का विचार किया गया है।

अध्याय २६

समाज कल्याण सेवाएं

समाज सेवाओ का विकास स्वभावत: ही धीमा होता है। इसकी कुछ प्रमुख कठिनाइया इस प्रकार है—प्राप्त आर्थिक साधनो तथा समाज सेवाओं के लिए उपलब्ध किए जा सकने वाले साधनों की कमी, प्रशिक्षित कर्मचारियो तथा समाज कल्याण सगठनो का अभाव और सामाजिक समस्याओ के विषय मे पर्याप्त जानकारी की कमी। फलस्वरूप, जिन वर्गो को विशेष सहायता की आवश्यकता है या जो असह्य स्थिति मे है, उनके लिए समाज कल्याण के उद्देश्य उपर्युक्त कारणो से सीमित हो जाते है। किन्तु समाज कल्याण के उद्देश्यों का क्षेत्र व्यापक है। समाज कल्याण सेवा का उद्देश्य केवल समाज के किसी असुविधाग्रस्त वर्ग विशेष की सहायता करना ही नही, वरन समूचे समाज के हित में कार्य करना है। निस्सन्देह, जो समस्याएं हमारे सम्मुख उपस्थित है, उनका समाधान होना चाहिए, किन्तु नई समस्याओ को उत्पन्न होने से रोकने के उपाय करना भी अत्यावश्यक है।

२. समाज सेवा के क्षेत्र मे सरकार ने अथवा सार्वजनिक अधिकरण ने जो कार्यकर्ता जुटाए है, वे तो केवल उन केन्द्र-बिन्दुओं के समान होंगे जिनके चारों ओर जन साधारण मे से ही लोगों को स्वेच्छापूर्वक सेवा कार्य में जुटाना होगा। पहले स्वयसेवी संस्थाए व्यक्तिगत दान पर आश्रित रहती थी, किन्तु अब इन सस्थाओ को राष्ट्र के व्यापक हित के लिए कार्य करने की प्रेरणा देकर, अपने कार्यक्षेत्र की परिधि को विस्तृत करने के लिए उत्साहित करना चाहिए। इसलिए केन्द्र और राज्य सरकारें तथा स्थानीय अधिकारियों को इस क्षेत्र में व्यक्तियों के निजी प्रयत्नो में निस्संकोच भाव से सहायक होना चाहिए। अन्तत समाज सेवाओं के कार्य-सचालन का भार मुख्यत: स्थानीय अधिकारियों पर ही पड़ेगा, किन्तु आरम्भिक अवस्था में ऐसी विशेष सस्थाओं की आवश्यकता है जो समाज सेवा के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करें और जहा तक सम्भव हो सरकारी अधिकरणों और स्वयसेवी संस्थाओं के कार्य में समन्वय स्थापित करें।

३ समाज कल्याण के इस व्यापक कार्यक्रम में उदाहरणार्थ ये कार्य सम्मिलित होंगे—सामाजिक कानूनो की रचना, स्त्रियो और बालकों, परिवार एवं युवकों के कल्याण कार्य, शारीरिक और मानसिक आरोग्यता, अपराधो की रोकथाम और अपराधियों के लिए सुधार कार्य। साथ ही शारीरिक और मानसिक रूप से विकृत व्यक्तियो के लिए कल्याण योजनाए भी इस व्यापक कार्यक्रम का अंग होंगी। भारत की विशेष परिस्थितियों और पृष्ठभूमि को देखते हुए मद्य निषेध का कार्यक्रम भी इसमें सम्मिलित होगा। इस अध्याय में मद्य निषेध और समाज सेवा के क्षेत्र में प्रथम पंचवर्षीय योजना की अवधि में हुए काम और द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रस्तावित कार्यक्रम पर संक्षेप में प्रकाश डाला जाएगा।

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की योजनाएं

४. केन्द्रीय सरकार ने प्रथम पंचवर्षीय योजना के ही एक अग के रूप में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना की है। बोर्ड का मुख्य उद्देश्य स्त्रियों, बच्चों और विकलांगो के सहायता

कार्यों मे सलग्न स्वयसेवी सस्थाओ को उनके कल्याण कार्यक्रमो के संगठन मे सहायता देना है। फलत. बोर्ड ने राज्य सरकारो के सहयोग से समूचे देश मे राज्य कल्याण बोर्ड की स्थापना की है। देश भर मे इनका जाल बिछ जाने से द्वितीय पचवर्षीय योजना के विस्तृत और व्यापक कार्यक्रमो को कार्यान्वित करना सम्भव होगा। पिछले तीन वर्षो मे इन कार्यक्रमो की बुनियाद डाली ही जा चुकी है। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने २,१२८ सस्थाओ को सहायता दी है। इनमे ६६० महिला कल्याण सस्थाए, ५६१ बाल कल्याण सस्थाए, विकलागो की सेवा और अपराधियो का सुधार करने के लिए १५१ सस्थाएं और कल्याण कार्यों मे सलग्न ७२६ संस्थाएं हैं। बोर्ड द्वारा दिए जाने वाले अनुदानो का उद्देश्य वर्तमान स्वयंसेवी सस्थाओ को उनके कार्य को सुचारु रूप से संगठित करने मे सहायता देना है। नव निर्मित स्वयसेवी सस्थाओ को इस उद्देश्य से अनुदान दिया जाता है कि वे अपना कार्य सही ढंग से आरम्भ कर सके। साधारणत बोर्ड का उद्देश्य देश के सब भागों मे स्वयसेवी संस्थाओ की स्थापना करने मे सहायता देना है। इसके अलावा केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने कल्याण विस्तार योजना का कार्य भी अपनाया है। देश भर के प्रत्येक जिले मे एक कल्याण केन्द्र होगा। प्रत्येक केन्द्र लगभग २५ ग्रामो की सेवा कर सकेगा। बोर्ड ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि मे हर जिले में ३ अतिरिक्त कल्याण विस्तार केन्द्र स्थापित करने का कार्यक्रम बनाया है। १९५६ के आरम्भ में बोर्ड २९१ कल्याण विस्तार केन्द्र स्थापित कर चुका था। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे बोर्ड का कार्यक्रम १,३२० केन्द्र स्थापित करने का है जिससे हर जिले मे ४ केन्द्र स्थापित करने का उसका कार्यक्रम पूरा हो सके। इस कार्यक्रम के पूर्ण हो जाने पर महिलाओ और बच्चो के लिए विशेष रूप से संगठित इन कल्याण सेवाओ से कुल मिलाकर ५०,००० गाव लाभान्वित होंगे। द्वितीय योजना के प्रथम तीन वर्षो मे प्रस्तावित केन्द्रो मे से एक-तिहाई केन्द्र स्थापित कर देने का निश्चय किया गया है। हर जिले में यह केन्द्र एक परिपालन समिति के अधीन रहेगा। इस सीमति में बहुसंख्या स्थानीय महिला समाज सेविकाओं की ही रहेगी। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने कल्याण विस्तार केन्द्रों की आवश्यकताए पूरी करने के लिए ग्राम सेविकाओ और दाइयो के प्रशिक्षण का बृहत कार्यक्रम अपनाया है। बोर्ड ने दिल्ली, पूना, हैदराबाद और विजयवाड़ा में स्त्रियो को उनके घरो में ही काम देने जैसे कठिन कार्य का भी श्रीगणेश कर दिया है। दियासलाई बनाने की तीन फैक्टरिया स्थापित की गई है। वाणिज्य और उद्योग मन्त्रालय की सहायता से और फैक्टरियां खोलने पर विचार हो रहा है।

५. कल्याण बोर्ड द्वारा निर्मित दो परामर्शदात्री समितियो ने भी वेश्यावृत्ति की रोकथाम और उद्धार सेवाओ के प्रस्ताव रखे है। प्रस्तावित सेवाओ में काफी बड़ी सख्या मे आश्रयगृहो की स्थापना करने पर विचार किया गया है। साधारणत. हर राज्य में पाच प्रकार के आश्रयगृह बनाए जाने की योजना है। एक आश्रयगृह ऐसी स्त्रियों के लिए होगा जिनका उद्धार किया गया है और जिन्हें पर्याप्त समय तक एक विशेष वातावरण में रखने की आवश्यकता है। दो आश्रयगृह ऐसे होगे जिनमें उन व्यक्तियों को रखा जाएगा जो सुधार संस्थाओ की अवधि समाप्त कर चुके है किन्तु फिर भी उन्हें कुछ समय तक देख-रेख की आवश्यकता है। इन आश्रयगृहों में से एक स्त्रियों के लिए और दूसरा पुरुषों के लिए होगा। शेष दो अन्य सेवा संस्थाओं से आए हुए व्यक्तियों के लिए होंगे, जिन्हें पुन बसाने के लिए अल्पकालीन सहायता दी जाएगी। हर जिले में एक ऐसे आश्रयगृह की भी व्यवस्था होगी जहां ऊपर उल्लिखित प्रकार के व्यक्तियों को राजकीय आश्रयगृहों में भेजे जाने से पूर्व उनकी डाक्टरी परीक्षा और स्क्रीनिंग की जाएगी।

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के इन कार्यक्रमो के लिए १४ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। उद्धारोपरांत सेवाओं के लिए और स्वस्थ नैतिक तथा सामाजिक आचार के लिए राज्य सरकार की योजनाओं मे ३ करोड़ रुपए की व्यवस्था है तथा तत्सम्बन्धी कार्यों पर गृह मन्त्रालय भी ३ करोड़ रुपए व्यय करेगा।

शारीरिक और मानसिक विकलांग व्यक्तियों के लिए कल्याण योजनाएं

६. विकलांगों की शिक्षा के लिए शिक्षा मन्त्रालय ने सितम्बर १९५५ में एक राष्ट्रीय परामर्शदात्री परिषद बनाई थी। इस परिषद का कार्य शारीरिक और मानसिक विकलागों की शिक्षा, प्रशिक्षण तथा रोजगार विषयक समस्याओं पर केन्द्रीय सरकार को परामर्श देना है। साथ ही उनके लिए सामाजिक और सास्कृतिक सुविधाओं की व्यवस्था करना, नई योजनाएं तैयार करना एवं इस क्षेत्र मे कार्यरत स्वयसेवी सस्थाओं के साथ सम्पर्क स्थापित करने का काम भी करना है। अब शारीरिक और मानसिक दृष्टि से विकलांग व्यक्तियों की समस्याओं का सर्वेक्षण करने का निश्चय किया गया है। इस समय लगभग ६० अंध-विद्यालय हैं, ४४ पाठशालाए बहरे-गूगों के लिए, ९ अपागों और रुग्णों के लिए तथा ५ मानसिक विकृति वालों के लिए हैं। इन पाठशालाओं में बहु संख्या गैर-सरकारी सस्थाओं की है, जिन्हें सरकार सहायता देती है। दूसरी पचवर्षीय योजना में अतिरिक्त सुविधाएं देने की भी व्यवस्था है, उदाहरणार्थ, अंधे और बहरे बच्चों के लिए आदर्श पाठशालाए खोलना और प्रौढ अंधो के प्रशिक्षणालय में एक महिला विभाग की स्थापना करना तथा छात्रवृत्तियो की व्यवस्था करना आदि। कई राज्य सरकारो की योजनाओ में भी विकलागों की शिक्षा और कल्याण कार्यों के लिए व्यवस्था की गई है। स्वास्थ्य मन्त्रालय के कार्यक्रम में असाध्य रोगो से पीड़ित व्यक्तियों के पुनर्वास की व्यवस्था भी की गई है।

युवक कल्याण

७. प्रथम पंचवर्षीय योजना में अनेक युवक संस्थाओं और युवक कल्याण कार्यक्रमों को सक्रिय सहायता प्रदान की गई थी। योजना में युवक शिविरों और विद्यार्थियों के लिए श्रमदान के व्यापक कार्यक्रम को सगठित करने के लिए १ करोड रुपए की व्यवस्था की गई थी। इस कार्यक्रम का प्रयोजन रचनात्मक कार्यों मे हाथ बंटाने के लिए युवकों को प्रोत्साहित करना था। इस धनराशि में से तीन-चौथाई भाग श्रम और सामाजिक सेवा शिविरों के लिए और एक-चौथाई भाग तैरने के लिए तालाब तथा खुले रगमंच आदि की योजनाओ के लिए निर्धारित किया गया था। इस प्रकार की योजनाओं को विद्यार्थी स्वय अपनी शिक्षा संस्थाओं के समीपवर्ती स्थानों में कार्यान्वित करेंगे।

१९५५ के अन्त तक ९०० शिविर संगठित किए जा चुके थे, जिनमे लगभग १,००,००० युवकों ने भाग लिया। इन शिविरों में युवकों ने नहरों व सडकों, इमारतों और तालाबों की मरम्मत, गन्दी बस्तियों की सफाई एव स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों में भाग लिया। भारत सेवक समाज की युवक शाखाओं ने भी लगभग ५०० युवक व विद्यार्थी शिविर सगठित किए, जिनमें लगभग ४०,००० नवयुवक सम्मिलित हुए। प्रथम योजना काल में भारत स्काउटो और गाइडों का आन्दोलन भी पहले की अपेक्षा लगभग ५० प्रतिशत आगे बढ़ा है। इस संगठन में इस समय ४,३८,४०५ स्काउट तथा ६८,११८ गाइड हैं। राष्ट्रीय केडेट कोर तथा सहायक केडेट कोर का भी योजना काल में पर्याप्त विकास हुआ है। राष्ट्रीय केडेट कोर की कुल संख्या इस समय १,१८,००० है, जिसमें से ४६,००० सीनियर डिवीजन, ६४,०००

जूनियर डिवीजन, ८,००० गर्ल्स डिवीजन तथा ३,००० अध्यापक और नेता शिक्षा संस्थाओं मे आए है। सहायक केडेट कोर ने, जिसकी सख्या (लडके और लडकिया मिलाकर) ७,५०,००० है, द्वितीय योजना के समाप्त होने तक अपने को द्विगुणित करने का कार्यक्रम बनाया है। शिक्षा मन्त्रालय ने अपनी योजना मे व्यायाम शिक्षा का एक राष्ट्रीय विद्यालय स्थापित करने की व्यवस्था की है। इसका उद्देश्य होगा विभिन्न खेलो का विकास करना और युवक नेतृत्व, प्रशिक्षण शिविर तथा युवक छात्रावास आदि युवक कल्याण के अनेक कार्यो मे सहायता करना। श्रम शिविरों तथा समाज सेवा शिविरो एव अन्य कार्यो का आयोजन करने तथा भारत स्काउट्स एंड गाइड्स के कार्यो मे सहायता देने की भी व्यवस्था की गई हैं।

अन्य कल्याण कार्यक्रम

८. गृह मन्त्रालय ने द्वितीय योजना के लिए बाल अपराध, वेश्यावृत्ति, निठल्लेपन या भिक्षावृत्ति के सम्बन्ध मे कुछ प्रस्ताव तैयार किए है। इन प्रस्तावों का मुख्य उद्देश्य ऐसी आवश्यक संस्थाओ की स्थापना करना है जो उपर्युक्त समस्याओ से सम्बन्धित समाज कल्याण कार्यो को आगे बढाएं। गृह मन्त्रालय ने ऐसे राज्यो की, जिनमे सरकार द्वारा या स्वयसेवी सगठनो द्वारा इस प्रकार की सस्थाए नही बनाई गई है, सहायतार्थ अपनी योजना मे २ करोड रुपए की व्यवस्था की है।

९. बडे नगरो मे बाल अपराध बढते जा रहे है और इनमे आम अपराध चोरी है। बाल अपराध सम्बन्धी कानून १५ राज्यो मे लागू है और अन्य राज्यो मे उन्हे लागू करने की सिफारिश की गई है, किन्तु बहुधा ये कानून पर्याप्त रूप से कार्यान्वित नही किए जाते। बाल न्यायालय केवल कुछ ही राज्यों मे है। अन्य राज्यों मे साधारण न्यायालय ही बाल अपराधियो के मामलो की सुनवाई करते है। बाल अपराधियो की सस्थाएं भी अपेक्षाकृत कम है—६७ रिमाड गृह है, ४९ सर्टीफाइड स्कूल है, ७ सुधार गृह है, ५ बाल कारागृह है और ८ किशोरबन्दी (बोर्सटल) सस्थाएं है। केन्द्रीय सरकार ने राज्य सरकारो को परामर्श दिया है कि हर मुख्य नगर में एक रिमांड गृह होना चाहिए, जहां हवालाती बालको को छानबीन या मुकदमे के दिनो मे रखा जा सके। साथ ही यह सुझाव भी दिया है कि प्रत्येक राज्य मे एक सर्टीफाइड स्कूल और बच्चो के लिए एक निवास गृह हो जिसमें उन बालकों को जो परीक्षणात्मक रूप में मुक्त किए गए है रखा जा सके। यह तभी होना चाहिए, जब उनका किसी परिवार मे रखे जाने का प्रबन्ध न हो सका हो। हर राज्य में १५ से २१ वर्ष तक की आयु के अपराधियो के लिए एक किशोरबन्दी स्कूल होना चाहिए। बाल चिकित्सालय और स्कूलो के सामाजिक कार्यकर्ता इन विकृत आचरण विषयक समस्याओं को प्रारम्भिक अवस्था में ही हल करने एव बाल अपराधो के अवसरो को कम करने मे सहायक हो सकते हैं।

१०. केन्द्रीय सरकार ने यह भी सुझाव रखा है कि जिन राज्यो मे अभी तक यह प्रथा नही है कि अपराधियों को परीक्षणात्मक रूप मे कुछ समय के लिए मुक्त करके यह देखा जाए कि पुन वे उन्हीं अपराधों को तो नहीं दोहरा रहे है, उन राज्यो मे भी अब यह प्रथा आरम्भ कर देनी चाहिए। साथ ही यह प्रस्ताव भी रखा गया है कि मुख्य-मुख्य कारागृहों में कल्याण प्रशासक नियुक्त किए जाएं जिनका कार्य कारावास की अवधि मे कैदियों से मिलते-जुलते रहना एवं मुक्त होने के पश्चात उनके और उनके परिवारो के साथ सम्पर्क बनाए रखना होगा।

११. भिखारियों की समस्या पर काफी समय से विचार किया जा रहा है, किन्तु इसके अत्यधिक व्यापक होने के कारण कोई सन्तोषप्रद समाधान नही निकाला जा सका। योजना आयोग की खोजबीन समिति ने इस समस्या के अध्ययन के लिए एक योजना आरम्भ की है। अब यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि भिखमगों की समस्या को समूल नष्ट करने का कार्यक्रम बनाया जाए। बहुत शोचनीय अवस्था वाले भिखमंगों के लिए केन्द्रीय सरकार ने यह सुझाव दिया है कि हर राज्य में एक ऐसा केन्द्र होना चाहिए जिसमें १०० अशक्त, रुग्ण या अपांग भिखारियों को रखने का प्रबन्ध हो।

समाज कल्याण के लिए साधन

१२. द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सामाज कल्याण क्षेत्र में किए जाने वाले कार्यक्रमों का जो संक्षिप्त परिचय ऊपर दिया गया है, उससे पता चलता है कि गत ३ या ४ वर्षों में जो कार्य हुए हैं, उसके परिणामस्वरूप अब समाज कल्याण के कार्यक्रम आयोजित विकास के अभिन्न अंग के रूप में क्रियान्वित हो रहे हैं। योजना में समाज कल्याण कार्यों के निमित्त लगभग २९ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इसमें से १९ करोड़ रुपया केन्द्र की योजनाओं पर तथा लगभग १० करोड़ रुपया राज्य की योजनाओं पर व्यय होगा। शिक्षा मन्त्रालय की योजना में युवक कल्याण और समाज कल्याण के कार्यक्रमों के लिए लगभग ११ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इसके साथ ही योजना में स्थानीय विकास कार्यों के लिए १५ करोड़ रुपया और जन सहयोग सम्बन्धी सामाजिक कार्यों के लिए ५ करोड़ रुपया निश्चित किया गया है। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि योजना में पिछड़ी जातियों के कल्याण कार्यो और ग्राम सुधार के कार्यक्रमों के लिए ९१ करोड़ रुपए की व्यवस्था है। इस कार्यक्रम में राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजनाएं तथा ग्राम्य उद्योग-धंधे भी शामिल हैं। जहां सामाजिक और आर्थिक स्थितियों में एक-दूसरे से अत्यन्त निकट का सम्बन्ध है, वहां यह निश्चय करना कठिन है कि कौन-से कार्य आर्थिक अवस्था में सुधार करेंगे और कौन-से सामाजिक अवस्था में। वास्तव में दोनों एक ही उद्देश्य के पूरक अंग हैं।

१३. प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस आशय का सुझाव पेश किया गया था कि धार्मिक संस्थाओं और न्यासों से प्राप्त धन राज्य सरकारों और गैर-सरकारी संस्थाओं के कार्यक्रमों के लिए आय के महत्वपूर्ण साधन हो सकते हैं। अतः इस विषय की जांच-पड़ताल की सिफारिश की गई थी जिससे प्राप्त जानकारी के आधार पर कोई ऐसा कानून बनाया जा सकें कि इन संस्थानों और न्यासों की सम्पत्ति उचित कार्यों के लिए सुलभ हो सके। समाज कल्याण के कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए पहले इन साधनों से पर्याप्त आर्थिक सहायता मिलती रही है। बहुधा ऐसा देखा गया है कि ये न्यास बनने के कुछ समय पश्चात निष्क्रिय हो जाते हैं, फलतः उनकी आय मूल प्रयोजनों के लिए व्यय न होकर अर्थहीन उद्देश्यों में खर्च होने लगती हैं। समाज कल्याण कार्यों के पक्ष में लोकमत संगठित करते समय इसका ध्यान भी रखना चाहिए कि ये न्यास ऐसे कार्यों में विशेषतः स्वयंसेवी संस्थाओं के कार्यों में क्या योगदान दे सकते हैं। इन सम्भावनाओं की छानबीन की जा रही है।

१४. अन्त में यह कहना आवश्यक है कि समाज कल्याण के हर क्षेत्र में जरूरतमन्दों और असमर्थ लोगों की सहायता का मुख्य उत्तरदायित्व स्थानीय जनता को ही अपने ऊपर लेना होगा। राज्य सरकारें और उनके द्वारा निर्मित संगठन एक सीमा विशेष तक ही कार्य कर

सकते है, फिर भी प्रथम पंचवर्षीय योजना के अनुभव ने बतलाया है कि सरकारी प्रशासकों ने धन एवं कार्यकर्ताओं द्वारा जो सहायता दी है वह सामुदायिक प्रयत्नो और सेवा संगठनों में सेवाभाव जागृत करने में काफी सफल सिद्ध हुई है। इसी तथ्य को आधार मानकर द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए वृहत कार्यक्रम निर्धारित किए गए है।

मद्यनिषेध

१५. गत कई वर्षों से अधिकांश जनमत इस बात पर जोर दे रहा है कि मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर भेषज (ड्रग्स) औषधों के प्रयोग का निषेध सरकार की सामाजिक नीति का आवश्यक अग बना दिया जाए। सविधान के ४७वे अनुच्छेद मे मद्यनिषेध को निदेशात्मक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किया गया है। अब तक इस दिशा में जो प्रगति हुई है वह नगण्य है। अतः योजना आयोग ने एक विशेष समिति नियुक्त की है जिसका कार्य यह होगा कि वह राज्य सरकारों द्वारा मद्यनिषेध के निमित्त अपनाए गए साधनों का अध्ययन करे और प्राप्त अनुभव के आधार पर केन्द्रीय सरकार को राष्ट्रीय स्तर पर मद्यनिषेध का व्यापक कार्यक्रम बनाने के लिए सुझाव दे। साथ ही उन साधनों और अवस्थाओं तथा व्यवस्था का भी उल्लेख करे जिनके द्वारा कार्यक्रम कार्यान्वित किया जाएगा। हाल ही मे इस समिति के प्रतिवेदन पर राज्य सरकारों और केन्द्रीय मंत्रालय के सहयोग से विचार किया गया था। राष्ट्रीय विकास परिषद ने सामान्यतः निम्न लिखित सुझावों को स्वीकार कर लिया है।

१६. किसी भी मूल सामाजिक नीति पर विचार करते समय केवल आर्थिक कारणों को, व्यावहारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हुए भी, निर्णायक नही समझना चाहिए। आवश्यक बात यह है कि जो भी कार्यक्रम बनाए जाएं वे एक निश्चित अवधि में पूरे हो सकें। मद्यनिषेध के लिए समूचे देश में एक समान दृष्टिकोण की आवश्यकता है, किन्तु विस्तृत कार्यक्रम स्वयं राज्यों को ही बनाने होंगे, क्योकि कुछ राज्य ऐसे भी हो सकते है जो दूसरों की अपेक्षा अधिक गतिशील हों। ऐसी अवस्था में उनकी यह प्रगति शेष राज्यों के लिए मार्गदर्शक का काम देगी। वे इन राज्यों के अनुभवों के आधार पर अपने विस्तृत कार्यक्रम बना सकेंगे।

१७. मद्यनिषेध जैसी राष्ट्रीय नीति को सफल बनाने के लिए विभिन्न साधन अपनान पड़ेंगे, यथा कानूनी प्रतिबन्ध लगाना, लोकमत को मद्यनिषेध के पक्ष में करना, समाज सेवी संस्थाओं एवं कार्यकर्ताओ का स्वेच्छा से इस नीति के पक्ष में क्रियाशील होना, और मादक द्रव्यों के स्थान पर अन्य विकल्प एवं आमोद-प्रमोद के साधनों की व्यवस्था करना। इस नीति को सफल बनाने के निमित्त जो साधन अपनाए जाएगे उनके लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की दिशा यद्यपि समान ही होगी, तथापि लक्ष्य प्राप्ति के साधनों में स्थानीय अवस्थाओं और परिस्थितियों के अनुकूल हेर-फेर की गुजाइश रहेगी। हर राज्य उपर्युक्त दिशाओं में अग्रसर होने के लिए अपनी विशेष योजनाएं बना सकता है। मद्यनिषेध समिति ने सुझाव रखा है कि अप्रल १९५८ में मद्यनिषेध समूचे देश में लागू हो जाना चाहिए। हमारा विचार है कि इस दिशा में सामाजिक और प्रशासनिक कार्यक्षेत्र में प्रस्तावित कारंवाइयो को ध्यान मे रखते हुए विभिन्न राज्य क्रमश: मद्यनिषेध के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपने-अपने लक्ष्य निर्धारित कर लें तो व्यावहारिक दृष्टि से अधिक सुगमता होगी। यद्यपि मद्यनिषेध के कार्यक्रम की मुख्य दिशाओं में, कार्य की निरन्तर समीक्षा और मूल्यांकन की व्यवस्था के साथ सहमति

होनी चाहिए, तथापि यह आवश्यक नही होगा कि संघ के सभी राज्य एक जैसे साधन अपनाएं या एक ही तिथि निर्धारित करें। मद्यनिषेध के उद्देश्य की ओर प्रगति करने का हमें यही सर्वोत्तम उपाय प्रतीत होता है।

१८. मद्यनिषेध जांच समिति ने एक केन्द्रीय समिति स्थापित करने की सिफारिश की है। इस समिति का कार्य मद्यनिषेध के कार्यक्रमों की समीक्षा करना और विभिन्न राज्यों की गतिविधियों में सम्पर्क स्थापित करना एवं उनकी व्यावहारिक कठिनाइयों से अवगत रहना होगा। यह भी सुझाव दिया गया है कि केन्द्रीय समिति वर्ष में एक बार राष्ट्रीय विकास परिषद को अपना प्रतिवेदन दिया करे। हम इन सिफारिशों से सहमत हैं। हमारे विचार में भी समिति का यह प्रस्ताव लाभकर होगा कि राज्यों में मद्यनिषेध मण्डल और मद्यनिषेध समितियां स्थापित की जाएं तथा इस कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए मद्यनिषेध प्रशासक नियुक्त किये जाएं।

१९. समिति ने जो प्रस्ताव रखे हैं, उनमें से कितने ही प्रस्तावों की मंत्रालयों और राज्यों द्वारा विस्तृत जांच कराने की आवश्यकता होगी। हमारा सुझाव है कि कार्य आरम्भ करने के लिए राज्य सरकारें निम्न दिशाओं में क्रियाशील हों :–

(१) मद्य सेवन से सम्बन्धित विज्ञापनों और मद्य सेवन के लिए प्रेरणा देने वाले प्रलोभनों को बन्द किया जाए।

(२) सार्वजनिक स्थानों (होटलों, निवास गृहों, जलपान गृहों और क्लबों) और सार्वजनिक स्वागत अवसरों पर मद्यपान निषिद्ध हो।

उपर्युक्त नियमों को लागू करते समय यह ध्यान अवश्य रखा जाए कि उनसे वैदेशिक प्रतिनिधियों के अधिकारों पर किसी तरह का आघात न पहुंचे तथा विदेशी दर्शकों एवं पर्यटकों को असुविधा या परेशानी न हो।

(३) टेकनीकल समितिया स्थापित की जाएं जो अवस्थाओं में विभाजित एक ऐसा कार्यक्रम बनाएं जिसका उद्देश्य यह हो कि—

(क) यथाशीघ्र शहरों और गांवों में शराब की दुकानों में कमी की जाए;

(ख) सप्ताह में अधिकाधिक दिन शराब की दुकानें बन्द रहा करें;

(ग) दुकानों को कम परिमाण में शराब दी जाए;

(घ) डिस्टिलरियों द्वारा तैयार की जाने वाली शराब की मादक शक्ति में धीरे-धीरे कमी की जाए;

(ङ) कुछ औद्योगिक क्षेत्रों तथा सामुदायिक विकास क्षेत्रों के निकट स्थित दुकानें बन्द की जाएं; और

(च) शहर या गांव के मुख्य रास्तों से दुकानों को उठाकर दूर जगहों पर ले जाया जाए।

(४) सस्ते और स्वास्थ्यवर्धक हल्के पेय पदार्थ तैयार करने के लिए बढ़ावा और सक्रिय सहायता दी जाए।

(५) स्वयंसेवी संस्थाओं को मनोरंजन केन्द्र संगठित करने मे सहायता दी जाए।

(६) राष्ट्रीय विस्तार खण्डो और सामुदायिक योजना क्षेत्रों तथा समाज विस्तार कार्यक्रमों में मद्यनिषेध को भी रचनात्मक कार्य मानकर सम्मिलित किया जाए।

२०. उपर्युक्त सुझावों का अनुसरण करते हुए राज्य सरकारों से अनुरोध किया गया है कि वे अवस्थाओं में विभाजित कार्यक्रम तैयार करें और यह भी ध्यान रखे कि मद्यनिषेध का कार्यक्रम इस प्रकार स्थिर किया जाए कि वह उचित समय के भीतर पूरा हो जाए। जिन राज्यों मे मद्यनिषेध लागू कर दिया गया है, उन राज्यों को चाहिए कि वे निषेध सम्बन्धी नियमों का तत्परता से पालन करें तथा जनता के सहयोग को काफी महत्वपूर्ण समझें। जिन राज्यों में आंशिक मद्यनिषेध लागू किया गया है, उनसे अनुरोध किया गया है कि वे अपने क्षेत्रों में अब तक के कार्य को संगठित और स्थायी बनाएं। लोकसभा मे मद्यनिषेध के गैर-सरकारी प्रस्ताव पर विचार-विमर्श हुआ और ३१ मार्च, १९५६ को उसने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया :

"इस सदन की राय है कि मद्यनिषेध द्वितीय पंचवर्षीय योजना का अभिन्न अंग माना जाए, और वह यह सिफारिश करता है कि योजना आयोग मद्यनिषेध को देशव्यापी स्तर पर यथाशीघ्र और प्रभावकारी ढंग से लागू करने के लिए आवश्यक कार्यक्रम तैयार करे।"

यह प्रस्ताव भारत सरकार की ओर से स्वीकार कर लिया गया।

अध्याय ३०

विस्थापितों का पुनर्वास

विभाजन के पश्चात पश्चिम और पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों का पुनर्वास तथा उन्हें सहायता देना एक प्रमुख राष्ट्रीय कार्य था। प्रथम पंचवर्षीय योजना में ८५ लाख ३० हजार विस्थापितों के पुनर्वास कार्य को प्राथमिकता दी गई थी। इस कार्य के लिए १३६ करोड़ रुपया रखा गया था, जिसका विवरण इस प्रकार है:

	(करोड़ रु०)
शहरी ऋण	१२.६०
ग्राम्य ऋण	१८.६०
पुनर्वास वित्त प्रशासन ऋण	१२.१०
औद्योगिक ऋण	३.००
आवास	६६.६०
शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण	२१.७०
	१३५.७०

पश्चिम पाकिस्तान के विस्थापित

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक पश्चिम पाकिस्तान से आए २३ लाख विस्थापित व्यक्तियों को भूमि देकर बसाया जा चुका है तथा सरकार द्वारा उन्हें ऋण व अनुदान देकर उनके पुनर्वास में सहायता की गई है। शहरी क्षेत्रों में १२ लाख व्यक्तियों को निष्क्रान्तों के मकानों में स्थान दिया गया है तथा अन्य दस लाख व्यक्तियों को २,००,००० नए बनाए गए मकानों में बसाया गया है। शहरी क्षेत्रों में विस्थापितों को छोटे व्यवसायों, उद्योगों व दूसरे धंधों में लगाने के लिए राज्य सरकारों ने ५,००० रुपए प्रति परिवार के हिसाब से ऋण दिया है। बड़े व्यवसायों के लिए पुनर्वास वित्त प्रशासन की ओर से ऋण दिए गए हैं। कुछ व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र भी स्थापित किए गए हैं, जिनमे लगभग ७५,००० व्यक्तियों को विभिन्न व्यवसायों में प्रशिक्षण दिया जा चुका है तथा ६,००० के लगभग अब प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा विषयक आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए गैर-सरकारी शिक्षा संस्थाओं को सहायता दी गई है। विस्थापित विद्यार्थियों को वजीफे, अनुदान, छात्रवृत्तियां और निःशुल्क शिक्षा दी गई है। उनके लिए रोजगार और निवास के प्रबन्ध के लिए १४ छोटे नगर बसाए गए हैं। इनमें ऐसी व्यवस्था की गई है कि पानी, बिजली, नालियां आदि नगरों जैसी सुविधाएं प्राप्त हो सकें। इन छोटे नगरों में रोजगार में वृद्धि करने के अभिप्राय से उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए कुछ योजनाएं स्वीकृत की गई है। इन उद्योगो की स्थापना में कुछ सहायता सरकार की ओर से भी दी जाएगी। अभी तक जो उद्योग-धंधे स्थापित हुए है उनसे अनुमान है कि पूर्व और पश्चिम पाकिस्तान से विस्थापित ११,००० व्यक्तियों को रोजगार मिल सकेगा। पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के लिए मुआवजे की जो योजना बनाई गई थी, उसे अब

कार्यान्वित किया जा रहा है। जब तक यह योजना पूर्ण रूप से कार्यान्वित नहीं हो जाएगी, तब तक विस्थापितों के पुनर्वास की समस्या बनी ही रहेगी।

पूर्व पाकिस्तान के विस्थापित

३. पश्चिम बंगाल और दूसरे निकटवर्ती राज्यों में पाकिस्तान से आए विस्थापितों का तांता-सा बंध गया है। ३८ लाख ३० हजार व्यक्तियों मे से लगभग ३,८८,००० परिवारों को कृषि या अन्य सहायक धंधो में लगा दिया गया है। यद्यपि विस्थापितों की अधिकांश संख्या पश्चिम बंगाल में ही बसी है, फिर भी काफी बड़ी संख्या को त्रिपुरा, बिहार, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और असम में बसाया गया है। लगभग ३,५०,००० घर मुख्यतः विस्थापितों ने सरकारी ऋण की सहायता से बनाए है। लगभग २२,००० विस्थापितों को व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण दिया गया है तथा ८,००० अभी प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। लगभग ८८,००० परिवारों को व्यापार ऋण दिए गए है। विस्थापितों के लगातार आते रहने के कारण पूर्वी राज्यों में उनके पुनर्वास की समस्या विशेष कठिन हो गई हैं। अनुमान लगाया गया है कि अभी भी लगभग १,७०,००० परिवारों को बसाना बाकी हैं।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यक्रम

४. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पुनर्वास वित्त प्रशासन द्वारा दिए जाने वाले ४.५ करोड़ रुपए के ऋणों के अतिरिक्त, पुनर्वास के लिए ८५.५ करोड़ रुपए की धनराशि निर्धारित की गई हैं। मुख्य कार्यक्रम इस प्रकार है :—

(करोड़ रुपया)

योजना	पश्चिम पाकिस्तान के विस्थापित	पूर्व पाकिस्तान के विस्थापित	योग
१. शहरी ऋण	१.४७	४.२५	५.७२
२. (क) ग्राम ऋण	०.१६	१४.४४	१४.६०
(ख) कृषि भूमि का विकास	—	४.८०	४.८०
३. आवास	५.७८	१८.६८	२४.४६
४. (क) औद्योगिक ऋण	४.६८	५.६०	११.२२
(ख) कुटीर उद्योग	०.९४		
५. शिक्षा	३.७५	१०.९६	१४.७१
६. व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण	१.९२	५.२५	७.१७
७. चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं	—	२.८२	२.८२
योग	१८.७०	६६.८०	८५.५०

५. पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के पुनर्वास कार्य का अधिकतर भाग प्रथम पंचवर्षीय योजना के समाप्त होने से पूर्व ही पूरा किया जा चुका था। फिर भी पहले से स्वीकृत आवास योजना को पूरा करने और विस्थापितों की बस्तियों में फैली हुई बेकारी को उद्योग-धंधों द्वारा दूर करने की व्यवस्था द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ही आरंभ की गई है। पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण योजनाओं को भी चालू रखना आवश्यक था।

६. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ६६.८ करोड़ रुपया पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों की पुनर्वास योजनाओं के लिए रखा गया है। निश्चय किया गया है कि इन विस्थापितों के पुनर्वास के लिए वित्तीय व्यवस्था करने के बारे में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के तीसरे वर्ष में उस समय की अवस्थाओं को देखते हुए समीक्षा की जाए। उस समय यदि आवश्यक हुआ तो उसके लिए अतिरिक्त धन की व्यवस्था की जाएगी।

७. **शहरी ऋण**—पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों को अल्प ऋणों द्वारा सहायता देने के लिए ४.२५ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक परिवार को २,२५० रुपए के औसत से धन प्राप्त होगा। इस योजना से सहायता प्राप्त करने वाले लगभग १९,००० परिवार होंगे।

पश्चिम क्षेत्र में अल्प शहरी ऋण योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारें १९५५-५६ के अन्त तक १४.५८ करोड़ रुपया दे देंगी। अनुभव किया जा रहा है कि पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों को ऋण के रूप में सहायता देने की आवश्यकता रहेगी, यद्यपि ऐसे व्यक्तियों की संख्या कम ही होगी। अतः द्वितीय पंचवर्षीय योजना में विस्थापितों के लिए १.४७ करोड़ रुपए के अल्प ऋण देने की व्यवस्था की गई है। यह ऋणराशि प्रति वर्ष कम होती जाएगी।

८. **देहाती ऋण**—द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पूर्वी पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों को कृषि तथा दूसरे सहायक धंधों में लगाने के लिए १४.४४ करोड़ रुपए के ऋण देने की व्यवस्था है। एक कृषि परिवार को औसतन २,४५० रुपए तथा कृषि-इतर परिवारों को १,५२५ से २,२७५ रुपए तक के ऋण दिए जाएंगे। इस योजना के अन्तर्गत लगभग ७०,००० परिवारों को सहायता मिलेगी।

पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए उक्त श्रेणी के विस्थापितों को बसाने का कार्य प्रायः समाप्त हो चुका है, अतः द्वितीय योजना के प्रथम दो वर्षों में केवल १६.४ लाख रुपए की अल्प व्यवस्था की गई है। औसत ऋण १,१५० रुपया प्रति परिवार होगा और इससे लगभग १,४०० परिवारों को लाभ पहुंचेगा।

९. **कृषि भूमि का विकास**—पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए विस्थापित किसानों के लिए निष्क्रांतों की भूमि मिल जाने से पजाब और पेप्सू में कृषि पुनर्वास का कार्य अपेक्षाकृत अधिक सुचारु रूप से चला, यद्यपि इस प्रकार उपलब्ध भूमि पाकिस्तान में छूटी भूमि की अपेक्षा बहुत कम थी।

पूर्व पाकिस्तान से आए विस्थापित कृषक परिवारों के पुनर्वास कार्य में कुछ अधिक समय लगा। इस विलम्ब का कारण पश्चिम बंगाल में कृषि योग्य भूमि का अभाव और आरम्भ में विस्थापितों की पश्चिम बगाल के अलावा दूसरे राज्यों में बसने की अनिच्छा रही है। चूंकि

पश्चिम बगाल में अब और अधिक परिवारों को नहीं बसाया जा सकता है, अत. उनके लिए दूसरे राज्यों में भूमि प्राप्त करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। मई १९५५ मे राष्ट्रीय विकास परिषद ने सब राज्यों से अनुरोध किया था कि वे अपने-अपने राज्य में कृषि योग्य भूमि का प्रबन्ध कर के विस्थापितों के पुनर्वास मे सहायता दे।

१०. पुनर्वास कार्य के लिए आंध्र, बिहार, उडीसा, हैदराबाद, मध्य प्रदेश, मैसूर, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और विन्ध्य प्रदेश ने कुल मिलाकर २,८९,३०० एकड़ भूमि दी है। टेकनीकल दलो ने अभी तक हैदराबाद, मैसूर, राजस्थान तथा विन्ध्य प्रदेश का दौरा किया है और २३,९५० एकड़ क्षेत्र चुने है। पुनर्वास मंत्रालय ने बिहार राज्य द्वारा दी हुई १४,००० एकड़ भूमि का चुनाव किया है। केन्द्रीय ट्रैक्टर संगठन के आरम्भिक प्रतिवेदनों के अनुसार त्रिपुरा में ८०,००० एकड़ भूमि और कछार में ६,००० एकड़ भूमि को सुधार कर कृषि योग्य बना सकने की सम्भावना है। कलकत्ते में १९५६ के आरम्भ में पूर्वी प्रदेशों के पुनर्वास मंत्रियों तथा उन राज्यों के जिन्होंने पुनर्वास के लिए भूमि देना स्वीकार किया है पुनर्वास मंत्रियों का एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन का अभिप्राय इस प्रश्न पर विचार-विमर्श करना था कि इस भूमि का सर्वोत्तम उपयोग क्या हो सकता है तथा इस कार्य के लिए और कौन से उपाय अपनाने चाहिएं। अनुभव किया गया है कि कृषक विस्थापितों की आय छोटे उद्योग-धंधों और कुटीर उद्योगो का विकास करके बढ़ाई जाए और जहां तक सम्भव हो पुनर्वास योजनाओं को हर राज्य की विकास योजनाओं से सम्बन्धित किया जाए। विभिन्न राज्यों से लगभग १,००,००० एकड़ भूमि उपलब्ध करने और उसका सुधार करने के निमित्त द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे ४.८० करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

११. **आवास**—पश्चिम पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितों के लिए द्वितीय योजना में ५.७८ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है। आवास की उन योजनाओ के लिए धन की व्यवस्था की गई है जो १९५५-५६ से आरम्भ हुई थीं और अभी तक चालू है। शरणार्थी बस्तियों और उपनगरों का समीपवर्ती नगर के स्तर पर विकास करने के लिए भी धन की व्यवस्था की गई है, क्योंकि इन बस्तियों के पिछड़े होने के कारण स्थानीय संस्थाए इन्हे अपने स्थायी प्रशासन और प्रबन्ध के अंतर्गत लेने में हिचकती है।

पूर्वी भाग में आवास योजनाओं के लिए १८.६८ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है। इस धनराशि में से ९.२५ करोड़ रुपया आवास कार्य में व्यय होगा। यह विचार किया गया है कि १३,००० विस्थापित परिवारों को आवास के लिए औसतन ऋण २,५०० रुपया प्रति परिवार के हिसाब से दिया जाए और १२,००० मकान स्वयं सरकार बनाए जिनकी औसत लागत ५,००० रुपया प्रति मकान हो। शेष ९.४३ करोड़ रुपया वर्तमान बस्तियों के विकास कार्य पर, नगरपालिका और स्थानीय सस्थाओ को सहायता देने तथा इन संस्थाओं के क्षेत्रो में बसे हुए विस्थापितों को सुविधाएं देने आदि के कार्यों पर व्यय होगा। पश्चिम बगाल में नियुक्त की गई विशेषज्ञों की एक समिति की सिफारिशों के अनुसार विकास योजनाएं तैयार की जा रही है।

१२. **मध्यम, छोटे और कुटीर उद्योग**—१९५४-५५ और १९५५-५६ में १.७५ करोड़ रुपया विस्थापितों की बस्तियों और छोटे नगरों में उद्योग खोलने के लिए निर्धारित किया गया था। यह निश्चय हुआ था कि मध्यम उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए निजी उद्योगपतियों को कुछ सुविधाएं दी जाएं, यथा (१) कारखानों के लिए भूमि और इमारतें ७ से १० वर्ष तक

की अवधि के लिए किराए पर दी जाएं और यह व्यवस्था रहे कि यदि वे चाहें तो ठेके की अवधि में उन्हें खरीद सकेंगे, (२) फैक्टरियों में लगाई गई मशीनों के मूल्य का ५० प्रतिशत ऋण के रूप में दिया जाए, और (३) पानी तथा बिजली, आस-पास के उद्योग क्षेत्रों को मिलने वाली दरों पर दी जाए। दिसम्बर १९५५ के अन्त तक पूर्वी और पश्चिमी भागों के लिए ३६ योजनाएं स्वीकृत हो चुकी थी। इन योजनाओ पर सरकार की ओर से २.६५ करोड़ रुपए व्यय करने की व्यवस्था थी। आशा है कि ये योजनाएं ११,००० विस्थापितों को रोजगार दे सकेंगी।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में ११.२२ करोड़ रुपया मध्यम, छोटे और कुटीर उद्योगों की उन्नति के लिए निर्धारित किया गया है। उपर्युक्त उद्योग-धंधे पूर्वी और पश्चिमी भागों में विस्थापितों की बस्तियों, छोटे नगरों या उन स्थानों में जहां विस्थापित लोग अधिक संख्या में बसे हुए हैं स्थित होंगे। अनुमान है कि इनसे अन्य ५०,००० विस्थापितों को रोजगार मिलेगा। इन उद्योग-धंधों की योजनाओं को औद्योगिक विकास के अन्य कार्यक्रमों के साथ भली प्रकार समन्वित करने का प्रबन्ध हो गया है।

१३. शिक्षा—इस कार्यक्रम के अन्तर्गत विस्थापित विद्यार्थियों को छात्रवृत्तियां, वजीफे, अनुदान तथा फीस माफी के द्वारा विद्याध्ययन में सहायता दी जाती है। विस्थापित विद्यार्थियों के विशेष लाभ के लिए सरकार कई स्कूल चला रही है। गैर-सरकारी स्कूलों को भी विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए सहायता दी जा रही है। पूर्वी पाकिस्तान में विस्थापित विद्यार्थियों के शिक्षा कार्यक्रम पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना में १०.९६ करोड़ रुपया व्यय करने की व्यवस्था है।

पश्चिमी भाग मे फीस माफी, पुस्तकों के लिए अनुदान तथा वजीफे देने की सहायता के अतिरिक्त स्कूल की इमारतो के निर्माण तथा विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकता को पूरा करने वाली गैर-सरकारी शिक्षा संस्थाओं को सामान आदि खरीदने के लिए सहायता देने की व्यवस्था की गई है। यह सहायता विभाजन के समय अस्त-व्यस्त हुए स्कूलों व अन्य स्कूलों को भी प्राप्त होगी। प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्त तक इन संस्थाओं को लगभग ७० लाख रुपए की सहायता प्रदान की गई थी। निश्चय हुआ है कि पंजाब विश्वविद्यालय समेत इन संस्थाओं को द्वितीय योजना में भी यह आर्थिक सहायता देना जारी रखा जाए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में पश्चिम पाकिस्तान से विस्थापित विद्यार्थियों की शिक्षा के लिए ३.७४ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

व्यायाम और अनुशासन प्रशिक्षण की एक योजना विशेषतः विस्थापित बच्चों के लाभ के निमित्त व्यापक स्तर पर कार्यान्वित करने के अभिप्राय से प्रारम्भिक योजना के रूप में जुलाई १९५४ को चालू की गई थी। निश्चय किया गया है कि इस योजना को द्वितीय योजना काल में पश्चिमी और पूर्वी प्रदेशों की अधिकाधिक संस्थाओं में लागू किया जाए।

१४. व्यावसायिक और टेकनीकल प्रशिक्षण—शहरी भागों से आए हुए विस्थापितों की बहुसंख्या व्यापारियों और दुकानदारों आदि की थी। किन्तु अपने देश में उन्हें उन्हीं कार्यों में लगाना जिन्हे वे पहले से करते आए थे कठिन था अतः विस्थापितों को, विशेषकर नवयुवकों को विभिन्न व्यवसायों और दस्तकारियो का प्रशिक्षण देकर उन्हें अपनी आजीविका कमाने के योग्य बनाने के लिए एक व्यापक कार्यक्रम अपनाया गया था।

वर्तमान प्रशिक्षण केन्द्रों, कार्य केन्द्रों, उत्पादन केन्द्रों तथा पुनर्वास और रोजगार निदोलय के अधीनस्थ केन्द्रों व पूर्वी क्षेत्र के अन्य केन्द्रों की कार्य व्यवस्था की जांच करने और न केन्द्रों का पुनर्गठन करने के लिए सिफारिश करने और साथ ही विस्थापितों को रोजगार ने के निमित्त नई योजनाएं बनाने के उद्देश्य से एक टेकनीकल प्रशिक्षण समिति नियुक्त की ई थी। समिति ने अपना प्रतिवेदन दे दिया है और अब वह विचाराधीन है।

द्वितीय योजना के अन्तर्गत लगभग ८०,००० विस्थापितों को प्रशिक्षण देने का निश्चय किया गया है—लगभग ३०,००० को पश्चिमी क्षेत्र में और ५०,००० को पूर्वी क्षेत्र में। द्वितीय योजना में पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के प्रशिक्षण पर १.९२ करोड़ रुपए और पूर्वी पाकिस्तान से आए विस्थापितों के प्रशिक्षण पर ५.२५ करोड़ रुपए व्यय करने की व्यवस्था की गई है।

१५. **चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं**—अब तक चिकित्सा सम्बन्धी व्यय की अधिकांश सुविधाएं क्षय पीड़ित विस्थापितों तक ही सीमित थी। विस्थापितों में क्षय रोग की अधिकता को देखते हुए पूर्वी क्षेत्र के राज्यों में आरोग्यालयों और चिकित्सालयों में उनके लिए सुरक्षित पलंगों की संख्या बढाकर ५०० कर दी गई है। यह भी निश्चय हुआ है कि विस्थापितों के चिकित्सालय में दाखिल होने से वहां से छुट्टी मिलने के ३ मास बाद तक उन्हें निर्वाह भत्ता और निःशुल्क औषधियां दी जाएंगी। निर्वाह भत्ता ५० रुपए से बढ़ाकर ६५ रुपए महीना कर दिया गया है। राज्य सरकारों से क्षय रोग से पीड़ित विस्थापितों के लिए पृथक वार्डों की संख्या बढ़ाने, घरेलू इलाज और एक्स-रे आदि की अतिरिक्त सुविधाएं देने एवं चिकित्सालयों से मुक्त हुए विस्थापित तपेदिक रोगियों की बस्तिया बसाने के सम्बन्ध में सुझाव मांगे गए है।

पूर्वी क्षेत्र के विभिन्न छोटे नगरों या बस्तियों में जो विस्थापित बस गए है या बसेंगे, उन्हें पर्याप्त रूप से चिकित्सा की सुविधाएं देने का निश्चय किया गया है। चूंकि वर्तमान सुविधाएं अपर्याप्त हैं, अतः शहरी क्षेत्रों में नए चिकित्सालय खोले जाएँगे। देहाती इलाकों में भी औषधालय व प्रसूति केन्द्रों की स्थापना मुख्यतः विस्थापितों के लाभ के लिए की जाएगी। क्षय चिकित्सालयों और आरोग्यालयों में क्षय पीड़ित विस्थापितों के लिए और अधिक स्थान बढ़ाना निश्चित हुआ है। अब उनके लिए पलंग संख्या बढ़ाकर १,००० कर दी गई है। चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं के लिए द्वितीय पचवर्षीय योजना में २.८२ करोड़ रुपए की व्यवस्था की गई है।

१६. द्वितीय पंचवर्षीय योजना की अवधि में कार्यान्वित होने वाले पुनर्वास कार्यक्रमों की मोटी रूपरेखा ऊपर दी गई है। इन पुनर्वास कार्यक्रमों को आर्थिक व सामाजिक विकास के सामान्य कार्यक्रमों के साथ अधिकाधिक सम्बन्धित किया जा रहा है। पश्चिम पाकिस्तान से आए विस्थापितों के पुनर्वास की समस्याएं पृथक समस्याएं न रहकर, जिन राज्यों में वे अधिक संख्या में बसे हुए हैं उन राज्यों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास की समूची समस्या का ही एक अंग बन गई हैं। पूर्व पाकिस्तान से आए हुए विस्थापितो की स्थिति अभी ऐसी है कि उनके लिए बनाए गए कार्यक्रमों की समीक्षा समय-समय पर होती रहनी चाहिए, जिससे परिस्थितियों के अनुसार उनमें परिवर्तन व परिवर्द्धन किया जा सके।

उपसंहार

भूमिका में हमने योजना के विभिन्न चरणों का उल्लेख किया है जिसे अब हम सरकार के सम्मुख प्रस्तुत कर रहे हैं। यह योजना केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों तथा राष्ट्रीय जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के नेताओं के, जिनसे हम समय-समय पर निस्संकोच भाव से परामर्श लेते रहे है, पारस्परिक सहयोग का परिणाम है। कई दिशाओं में योजना के परिपालन के लिए नए सिरे से और पहले की अपेक्षा कहीं अधिक प्रयत्नों की आवश्यकता है। हमारा विश्वास है कि भारतीय जनता द्वितीय पंचवर्षीय योजना को सफल बनाने की चुनौती स्वीकार करेगी।

विस्तृत कार्यक्षेत्र की ऐसी व्यापक योजना में किसी कार्य विशेष पर अधिक और किसी पर कम बल देने के प्रश्न पर मतभेद होना स्वाभाविक ही है और यह उचित भी है। श्री के० सी० नियोगी ने इस बात पर विशेष बल दिया है कि योजना के आकार को देखते हुए, इसे पांच वर्ष की अवधि में पूरा करना कठिन होगा तथा अत्यधिक बड़े पैमाने पर घाटे का वित्त प्रबन्ध करते जाना अर्थ-व्यवस्था के लिए खतरनाक सिद्ध होगा और इससे शायद जनसंख्या के कुछ वर्गों को कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ेगा। उन्होंने परिवहन और उत्पादन के संतुलित विकास की आवश्यकता की ओर विशेष ध्यान दिलाया है। हम इस बात पर सहमत हैं कि ये प्रश्न महत्वपूर्ण हैं और योजना के परिपालन के समय उन्हें बराबर ध्यान में रखना चाहिए। योजना में यथास्थान इन बातों पर भली-भांति विचार किया गया है।

जवाहरलाल नेहरू,
अध्यक्ष।
वी० टी० कृष्णमाचारी,
उपाध्यक्ष।
गुलजारीलाल नन्दा,
सदस्य।
चिन्तामन डी० देशमुख,
सदस्य।
के० सी० नियोगी,
सदस्य।
जे० सी० घोष,
सदस्य।

वाई० एन० सुकथंकर,
सचिव।
तरलोक सिंह,
संयुक्त सचिव।

मई १४, १९५६

परिशिष्ट

द्वितीय पंचवर्षीय योजना
व्यय और आवंटन

व्याख्यात्मक टिप्पणी

राज्यों की योजना में विकास के विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत दिखाए गए अलग-अलग आवंटन अधिकांश राज्य सरकारों से प्राप्त सूचनाओं पर आधारित हैं, परन्तु कुछ ऐसे आवंटन भी हैं जो अस्थायी है और जो, आशा है कि सम्बन्धित राज्यों से परामर्श करने के बाद निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत समायोजित कर दिए जाएंगे।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	कुल (२)	कन्द्र (३)	राज्य (४)	आन्ध्र (५)	असम (६)	बिहार (७)	बम्बई (८)
१. कृषि और सामुदायिक विकास							
(अ) कृषि कार्यक्रम—							
कृषि उत्पादन	८,१६०.०६	९७०.००	७,१९०.०६	३९२.२०	२०४.११	८२१.०३	३८६.३१
छोटी सिंचाई	६,५९८.२४	२८०.००	६,३१८.२४	२४२.८०	१९३.८०	४१३.३५	५८२.४१
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	२,२०३.०५	५००.००	१,७०३.०५	३०.००	४२.७५	१८५.२५	३२२.१८
कृषि	१६,९६१.३८	१,७५०.००	१५,२११.३८	६६५.००	४४०.६६	१,४१९.६३	१,२९०.९०
पशुपालन	३,८२३.३७	४००.००	३,४२३.३७	२४९.२९	११३.४०	५२६.४१	१०८.६६
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	१,७७९.१९	१८०.००	१,५९९.१९	८२.२०	१७.७०	५५.००	३८८.१२
पशुपालन	५,६०२.५६	५८०.००	५,०२२.५६	३३१.४९	१३१.१०	५८१.४१	४९६.८१
वन	२,७१२.५५	२४०.००	२,४७२.५५	६६.४७	९२.९१	४३६.५६	२१८.८१
भूमि संरक्षण	१,९५८.३८	४००.००	१,५५८.३८	७२.९६	८.०७	५७.००	३३१.०३
वन और भूमि संरक्षण	४,६७०.९३	६४०.००	४,०३०.९३	१४२.४३	१००.९८	४९३.५६	५४९.८४
मछली पालन	१,१७७.५८	३८०.००	७९७.५८	७६.०६	३८.९५	५७.००	७३.०३
गोदाम और हाट-व्यवस्था	१,९५६.७१	३९०.००	१,५६६.७१	१९३.३४	३१.५४	९.५०	२९७.३७
सहकारिता	२,७५६.९४	—	२,७५६.९४	९१.९०	१०६.४०	३७७.१५	३९३.२५
जन सहयोग	४,७१३.६५	३९०.००	४,३२३.६५	२८५.२४	१३७.९४	३८६.६५	६९०.६२
विविध	९३५.९८	६०.००	८७५.९८	१९.००	२०.१३	—	१०८.५९
	३४,०६२.०८	३,८००.००	३०,२६२.०८	१,५१९.२२	८६९.७६	२,९३८.२५	३,२०९.७९

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य*	२०,०००.००	१,२००.००	१८,८००.००**	१,०४५.००	५५१.००	१,८०५.००	२,५६५.००
(स) ग्राम्य कार्यक्रम	१,२०५.०२	—	१,२०५.०२	—	६७.४५	—	३८२.९०
ग्राम पंचायतें	१,५००.००	१,५००.००	—	—	—	—	—
स्थानीय विकास कार्यक्रम	२,७०५.०२	१,५००.००	१,२०५.०२	—	६७.४५	—	३८२.९०
	५६,७६७.१०	६,५००.००	५०,२६७.१०**	२,५६४.२२	१,४८८.२१	४,७४३.२५	६,१५७.६९
२. सिंचाई और बिजली							
सिंचाई	३८,०९७.३४	—	३८,०९७.३४	३,२३०.९०	६३.६५	३,३५३.५०	६,७९०.००
बिजली	४२,६८७.०८	—	४२,६८७.०८†	२,०९९.५०	३८०.००	२,७००.८५	४,१००.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	९,५००.००	९,५००.००	—	—	—	—	—
खोज और अनुसंधान	९००.००	९००.००	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	१००.००	१००.००	—	—	—	—	—
	९१,२८४.४२	१०,५००.००	८०,७८४.४२†	५,३३०.४०	४४३.६५	६,०५४.३५	१०,८९०.००

*राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना क्षेत्रों के आवंटन आरज़ी है और उन पर पुनः विचार किया जाएगा।

**इसमें राष्ट्रीय विस्तार सेवा और सामुदायिक योजना कार्यों के लिए ७०.३६ लाख रुपए की अतिरिक्त राशि सम्मिलित है।

†इसमें दामोदर घाटी निगम के लिए केन्द्रीय सरकार का १२.२ करोड़ रुपया सम्मिलित है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	मध्य प्रदेश (९)	मद्रास (१०)	उड़ीसा (११)	पंजाब (१२)	उत्तर प्रदेश (१३)	पश्चिम बंगाल (१४)
१. कृषि और सामुदायिक विकास						
(अ) कृषि कार्यक्रम—						
कृषि उत्पादन	५१५.२१	२९९.२०	२१४.०३	३०६.८४	१,१७८.३०	४४८.७२
छोटी सिंचाई	४३८.९६	४०३.८०	८९.९४	२९९.००	१,१३४.८८	२८५.००
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	३१४.२६	४७.५०	२१.४०	४७.५०	१००.३७	३०.४०
कृषि	१,२६८.४३	७५०.५०	३२५.३७	६५३.३४	२,४१३.५५	७६४.१२
पशुपालन	२०२.६१	२३६.००	१७०.४०	१३६.१३	४३७.८६	१७०.८३
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	७१.६०	१४२.६०	११.०५	५३.८७	११२.६९	४६६.४५
पशुपालन	२७४.२१	३७८.६०	१८१.४५	१९०.००	५५०.५५	६३७.२८
वन	१६४.५७	१४९.२०	४७.७४	११३.४२	२२९.४०	११५.८९
भूमि संरक्षण	६२.९२	११५.७०	४८.७६	—	१८३.४९	७३.६२
वन और भूमि संरक्षण	२२७.४९	२६४.९०	९६.५०	११३.४२	४१२.८९	१८९.५१
मछली पालन	५.२१	१२४.४०	५२.२५	५.००	७०.००	७४.१०
गोदाम और हाट-व्यवस्था	४५.८०	१९०.००	३६.१६	—	२६१.४०	९७.०५
सहकारिता	२१५.४५	१०२.९०	११८.७५	१६१.५०	२८१.५४	१३३.१४
सहकारिता	२६१.२५	२९२.९०	१५४.९१	१६१.५०	५४२.९४	२३०.१९
विविध	४५.३३	१४.२०	—	१.९३	११४.००	१६.१५
	२,०८१.९२	१,८२५.५०	८१०.४८	१,१२५.१९	४,१०३.९३	१,९११.३५

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक कार्यक्रम	१,३६८.००	१,७१०.००	५९८.५०	६३१.००	२,६६०.००	१,४२५.००
(स) अन्य कार्यक्रम—						
ग्राम पंचायतें	१९५.६२	—	८५.५०	१००.००	—	—
स्थानीय विकास कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—
	१९५.६२	—	८५.५०	१००.००	—	—
	३,६४५.८४	३,५३५.५०	१,४६४.४८	२,१५६.१९	६,७६३.६३	३,३३६.३५
२. सिंचाई और बिजली						
सिंचाई	१,१८७.५०	१,३६५.२०	२,६५४.३०	२,९९४.०५	२,५८०.००	१,७७१.००
बिजली	२,३९३.१६	५,७५९.८०	२,५५२.६५	२,७४३.६०	५,४६२.५०	१,२६९.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—	—
	३,५८०.६६	७,१२५.००	५,२०६.९५	५,७३७.६५	८,०४२.५०	३,०४०.००

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	'क' भाग के राज्य (१५)	हैदराबाद (१६)	मध्य भारत (१७)	मैसूर (१८)	पेप्सू (१९)
१. कृषि और सामुदायिक विकास					
(अ) कृषि कार्यक्रम—					
कृषि उत्पादन	४,७६५.९५	४०६.६०	१५८.९१	४२१.३४	१५०.१०
छोटी सिंचाई	४,०८३.९४	२४९.८५	२८२.८२	१५६.७५	१९९.५०
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	१,१४१.६१	३८.००	८५.५०	——	६६.५०
कृषि	९,९९१.५०	६९४.४५	५२७.२३	५७८.०९	४१६.१०
पशुपालन	२,३५१.६२	१४६.३०	११२.७२	८७.४८	५१.३०
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	१,४०१.२८	२८.५०	२२.२८	३९.९०	२९.४५
पशुपालन	३,७५२.९०	१७४.८०	१३५.००	१२७.३८	८०.७५
वन	१,६३४.९७	५८.९०	५९.४०	४६.०३	३८.००
भूमि संरक्षण	९५६.५५	१०३.५५	७५.६०	८०.७५	३५.८०
वन और भूमि संरक्षण	२,५९१.५२	१६२.४५	१३५.००	१२६.७८	७३.८०
मछली पालन	५७६.००	३८.९५	९.००	१४.२५	६.००
गोदाम और हाट-व्यवस्था	१,१६२.१६	९५.००	४५.२७	४०.३८	३९.३२
सहकारिता	१,९८१.९८	१००.७०	८९.७३	१२६.६३	४६.१८
सहकारिता	३,१४४.१४	१९५.७०	१३५.००	१६७.०१	८५.५०
विविध	३३९.३३	४१४.२०	३८.८७	——	१५.२०
	२०,३९५.३९	१,६८०.५५	९८०.१०	१,०१३.५१	६७७.३५

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	१४,६५८.५०	६०२.५०	३०६.०१	३८०.००	१६६.१०
(स) अन्य कार्यक्रम—					
ग्रामपंचायतें	८३१.७७	—	१५०.००	—	—
स्थानीय विकास कार्य	—	—	—	—	—
	८३१.७७	—	१५०.००	—	—
	३५,८८५.६६	२,५८३.०५	१,४३६.१०	१,३६३.५१	८४६.४५
२. सिंचाई और बिजली					
सिंचाई	२५,६६०.१०	३,०३१.४५	१,७६६.६६	१,६५३.७५	५६३.००
बिजली	२६,४६१.०६	१,२५८.७५	१,१५५.३४	२,१३७.५०	८८६.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—
	५५,४५१.१६	४,२९०.२०	२,९५२.००	३,७९१.२५	१,४८२.००

द्वितीय पंचवर्षीय योजना——व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	राजस्थान (२०)	सौराष्ट्र (२१)	तिरुवाकुर-कोचीन (२२)	जम्मू और कश्मीर (२३)	'ख' भाग के राज्य (२४)
१. कृषि और सामुदायिक विकास					
(अ) कृषि कार्यक्रम—					
कृषि उत्पादन	३६९.६०	२१६ ३७	११९ ९०	८८.६७	१,९३१.४९
छोटी सिचाई	२३०.००	१९०.००	२०८ ८०	२१२.८७	१,७३०.५९
भूमि विकास (भूमि सरक्षण के अतिरिक्त)	३० ००	—	—	—	२२०.००
कृषि	६२९.६०	४०६.३७	३२८.७०	३०१.५४	३,८८२.०८
पशुपालन	१६२.००	८५.९७	८२.२९	६४.९६	७९३.०२
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	—	२२.९४	१९.३६	९.६१	१७२.०४
पशुपालन	१६२.००	१०८.९१	१०१.६५	७४.५७	९६५.०६
वन	१२०.००	६८.४४	८९.३५	५८.९०	५३९.०२
भूमि सरक्षण	५४.००	१३०.२३	३०.८८	३६.१०	५४६.९१
वन और भूमि सरक्षण	१७४.००	१९८.६७	१२०.२३	९५.००	१,०८५.९३
मछली पालन	९.००	४३.५१	५०.२६	९ ५०	१८०.४७
गोदाम और हाट-व्यवस्था	५.५०	४२.८१	५०.६३	१६ २२	३३५.१३
सहकारिता	१५०.००	३१.५०	४६.२७	१५.९१	६०६.९२
सहकारिता	१५५.५०	७४ ३१	९६.९०	३२.१३	९४२.०५
विविध	५.००	—	३९.८५	—	५१३.१२
	१,१३५.१०	८३१.७७	७३७.५९	५१२.७४	७,५६८.७१

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	६४६.००	३२३.००	३३२.५०	१९६.६५	३,२५५.७५
स) अन्य कार्यक्रम—					
ग्राम पंचायतें	—	२१८.२५	—	—	३६८.२५
स्थानीय विकास कार्य	—	—	—	—	—
	—	२१८.२५	—	—	३६८.२५
	१,७८१.१०	१,३७३.०२	१,०७०.०९	७०९.३९	११,१९२.७१
. सिंचाई और बिजली					
सिंचाई	२,४५०.००	९१८.६०	६१७.४०	२८२.६७	११,३४३.५३
बिजली	१,९००.००	४७५.००	२,१८५.००	३२९.१५	१०,३२९.७४
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—
	४,३५०.००	१,३९३.६०	२,८०२.४०	६११.८२	२१,६७३.२७

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आबंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक	अजमेर	भोपाल	कुर्ग	दिल्ली	हिमाचल प्रदेश	कच्छ	मणिपुर
(१)	(२५)	(२६)	(२७)	(२८)	(२९)	(३०)	(३१)
१. **कृषि और सामुदायिक विकास**							
(अ) कृषि कार्यक्रम—							
कृषि उत्पादन	४९.२८	५४.२०	२९.७१	१०.७३	७०.७१	१४.१७	१०.६५
छोटी सिंचाई	३८.००	१०२.१२	१४.२५	३६.४६	४७.५०	१४०.६०	—
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	२.५०	१०७.०२	—	२.८५	—	११.९९	०.२८
कृषि	८९.७८	२६३.३४	४३.९६	५०.०४	११८.२१	१६६.७६	१०.९३
पशुपालन	२२.००	४६.७९	८.०५	३२.३०	३३.२५	१४.०५	४.२८
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	—	६.४५	४.७५	—	—	—	—
पशुपालन	२२.००	५३.२४	१२.८०	३२.३०	३३.२५	१४.०५	४.२८
वन	५.००	३७.१८	६.८४	११.४०	३४.६७	७.४०	३.२२
भूमि संरक्षण	३.००	१०.६५	४.७५	—	१९.९५	—	०.४०
वन और भूमि संरक्षण	८.००	४७.८३	११.५९	११.४०	५४.६२	७.४०	३.६२
मछली पालन	—	३.७१	०.९५	७.४३	२.००	५.२०	१.४२
गोदाम और हाट-व्यवस्था	—	२.८५	३.३३	१५.२०	१३.३०	२.५०	१.३८
सहकारिता	१४.००	२७.६५	९.५३	१९.९५	३४.२०	१०.८४	४.३२
सहकारिता	१४.००	३०.५०	१२.८६	३५.१५	४७.५०	१३.३४	५.७०
विविध	—	—	०.४८	२.३८	१०.४५	—	०.६७
	१३३.७८	३९८.६२	८२.६४	१३८.७०	२६६.०३	२०६.७५	२६.६२

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	२८.५०	८५.५०	१६.६३	५१.३०	११८.७५	५५.१५	८२.७६
(स) अन्य कार्यक्रम—	—	—	—	—	—	५.००	—
ग्राम पंचायतें	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय विकास कार्य	—	—	—	—	—	५.००	—
	१६२.२८	४८४.१२	९९.२७	१९०.००	३८४.७८	२६६.९०	१०९.३८
२. सिंचाई और बिजली							
सिंचाई	९५.२८	२८०.२५	२३.७५	१६.६३	—	९२.३०	९.५०
बिजली	९९.५१	१९८.०७	३८.९५	४०३.७५	२१३.७५	१७४.१०	९५.००
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—	—	—
खोज और अनुसन्धान	—	—	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
	१९४.७९	४७८.३२	६२.७०	४२०.३८	२१३.७५	२६६.४०	१०४.५०

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	त्रिपुरा (३२)	विन्ध्य प्रदेश (३३)	'ग' भाग के राज्य (३४)	अडमान और निकोबार (३५)	उत्तर-पूर्व सीमान्त एजेंसी (३६)	पांडिचेरी (३७)	अन्य राज्य (३५—३७) (३८)
१. कृषि और सामुदायिक विकास							
(अ) कृषि कार्यक्रम—							
कृषि उत्पादन	३१.००	११२.४८	३८२.९३	२०.००	७६.३०	१३.४२	१०९.७२
छोटी सिंचाई	४.६०	८३.२०	४६६.७३	१६.५०	२.१०	१८.३८	३६.९८
भूमि विकास (भूमि संरक्षण के अतिरिक्त)	—	६७.४०	१९२.०४	१३०.००	१८.४०	१.००	१४९.४०
कृषि	३५.६०	२६३.०८	१,०४१.७०	१६६.५०	९६.८०	३२.८०	२९६.१०
पशुपालन	९.९०	८०.९९	२५१.६१	३.८०	१६.७०	६.६२	२७.१२
डेरी और दुग्ध-पूर्ति	१.९०	२.६२	१५.७२	५.००	—	५.१५	१०.१५
पशुपालन	११.८०	८३.६१	२६७.३३	८.८०	१६.७०	११.७७	३७.२७
वन	११.२०	५९.८५	१७६.७६	८०.००	४१.८०	—	१२१.८०
भूमि संरक्षण	०.९०	१४.२५	५३.९०	०.६०	—	०.४२	१.०२
वन और भूमि संरक्षण	१२.१०	७४.१०	२३०.६६	८०.६०	४१.८०	०.४२	१२२.८२
मछली पालन	४.६०	८.५५	३३.८६	१.७५	२.५०	३.००	७.२५
गोदाम और हाट-व्यवस्था	५.७०	२२.५७	६६.८३	०.३९	—	२.२०	२.५९
सहकारिता	६.२०	३७.२८	१६३.९७	०.३६	—	३.७१	४.०७
सहकारिता	११.९०	५९.८५	२३०.८०	०.७५	—	५.९१	६.६६
विविध	—	६.६५	२०.६३	—	२.२०	०.७०	२.९०
	७६.००	४९५.८४	१,८२४.९८	२५८.४०	१६०.००	५४.६०	४७३.००

(ब) राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक योजना कार्य	५५.८०	१६०.००	६८४.३६	१.५०	११७.००	१२.५०	१३१.०
(स) अन्य कार्यक्रम—	—	—	५ ००	—	—	—	—
ग्राम पंचायतें	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय विकास कार्य	—	—	५.००	—	—	—	—
	१३१.८०	६८५.८४	२,५१४.३७	२५६.६०	२७७.००	६७.१०	६०४.००
२. सिंचाई और बिजली							
सिंचाई	—	२२३.५०	७४१.२१	—	—	२२.५०	२२.५०
बिजली	४२.८०	३२८.८५	१,५६४.७८	२.५०	१६.००	६०.००	८१.५०
बाढ़ नियंत्रण और सीमा योजना कार्य	—	—	—	—	—	—	—
खोज और अनुसंधान	—	—	—	—	—	—	—
सिंचाई योजनाओं में जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
	४२.८०	५५२.३५	२,३३५.६६	२.५०	१६.००	८२.५०	१०४.००

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन (लाख रुपयों में)

शीर्षक	कुल	केन्द्र	राज्य	आन्ध्र	असम	बिहार	बम्बई
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	(८)
३. उद्योग और खान							
बड़े और मध्यम उद्योग	६१,७२९.२४	५६,६२०.००	२,१०९.२४	२६६.५०	१३३.००	१४०.००	८३.०७
खनिज विकास	७,२४६.४३	७,०८०.००	१६६.४३	—	—	—	१.०४
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	२०,०००.००	८,०३१.८१	११,९६८.१९	६८१.३०	३८०.००	१,१४०.००	८१६.०३
	८८,९७५.६७	७४,७३१.८१	१४,२४३.८६	९५०.८०	५१३.००	१,२८०.००	९००.१४
४. परिवहन और संचार							
रेल*	९०,०००.००	९०,०००.००	—	—	—	—	—
सड़कें	२४,६१२.३४	८,२००.००	१६,४१२.३४	५४६.७१	६६५.००	१,७५०.२७	१,६८०.००
सड़क परिवहन	१,६५४.३८	३००.००	१,३५४.३८	—	१०४.५०	१२१.१५	३७५.००
बन्दर और बन्दरगाह	४,५३३.४२	४,३५०.००†	१८३.४२	—	—	—	८३.००
जहाजरानी	४,७५४.००	४,६००.००	१५४.००	—	—	—	—
अन्तर्देशीय नौकानयन	३००.००	३००.००†	—	—	—	—	—
नागरिक विमानन	४,३००.००	४,३००.००	—	—	—	—	—
अन्य परिवहन	७३८.७५	६००.००†	१३८.७५	—	—	—	—
डाक और तार	६,३००.००	६,३००.००	—	—	—	—	—
अन्य संचार साधन	४००.००	४००.००	—	—	—	—	—
प्रसारण	९००.००	९००.००	—	—	—	—	—
	१,३८,४९२.८९	१,२०,२५०.००	१८,२४२.८९	५४६.७१	७६९.५०	१,८७१.४२	२,१३८.००

५. समाज सेवाएं							
शिक्षा	३०,६९५.६०	९,५००.००	२१,१९५.६०	७६०.००	७१२.५९	२,३७५.००	१,१७४.४९
स्वास्थ्य	२७,३८२.२२	९,०००.००	१८,३८२.२२	७८३.२०	४९५.८६	१,६६१.७८	२,३६३.४३
आवास	१२,०००.००	४,६७५.७२	७,३२४.२८	१९०.२४	१२३.५०	४७५.००	१,४४४.२५
पिछड़े वर्गों का कल्याण	९,०४७.७८	३,२००.००	५,८४७.७८	३३३.३८	९५०.००	५७०.००	३१९.२०
समाज कल्याण	२,९०२.७९	१,९००.००	१,००२.७९	६७.४०	५०.७२	६५.५०	१००.००
श्रम और श्रम कल्याण	२,९१६.६९	१,८००.००	१,११६.६९	४७.५४	३८.००	७६.००	१६३.५१
पुनर्वास	९,०००.००	९,०००.००	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	५००.००	५००.००	—	—	—	—	—
	९४,४४५.०८	३९,५७५.७२	५४,८६९.३६	२,१८१.७६	२,३७०.६७	५,२२३.२८	५,५६४.८८
६. विविध							
आंकड़े	३३७.१९	—	३३७.१९	१९.००	१९.६१	५४.१५	६.००
प्रचार	१,२८६.८७	७००.००	५८६.८७	२८.५३	२३.७५	४४.८४	३७.५०
क्षेत्र विकास योजना	८४५.४३	—	८४५.४३	—	—	—	—
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	१,४२९.६८	—	१,४२९.६८	४७.५४	७०.३०	—	३६१.७५
भवन निर्माण	१,८९१.७७	—	१,८९१.७७	२२८.००	९५.००	१३८.७०	५५३.००
सांस्कृतिक कार्यक्रम	१२५.१७	—	१२५.१७	—	—	—	१२.४०
जन सहयोग	४००.००	४००.००	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	६००.००	६००.००	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और संभरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	२,४००.००	२,४००.००	—	—	—	—	—
अन्य	७१८.७३	२५४.९२	४६३.८१	—	—	१२.००	३.४४
	१०,०३४.८४	४,३५४.९२	५,६७९.९२	३२३.०७	२०८.६६	२४९.६९	९७४.०९
जोड़	४,८०,०००.००	२,५५,९१२.४५	२,२४,०८७.५५**	११,८९६.९६	५,७९३.६९	१९,४२१.९९	२६,६२४.८०

* रेलों के लिए ९०० करोड़ रुपए की राशि, रेल मूल्यह्रास निधि के अंशदान के अतिरिक्त है जो अनुमानतः २२५ करोड़ रुपए है ।

† छोटे बन्दरगाहों, अन्तर्देशीय नौकानयन और अन्य परिवहन की कुछ योजनाएं अस्थायी तौर पर केन्द्रीय योजनाओं के रूप में दिखाई गई है ।

**इसमें दामोदर घाटी निगम के लिए १२.२ करोड़ रुपए केन्द्रीय सरकार का भाग है और राष्ट्रीय विस्तार सेवा तथा सामुदायिक कार्यक्रमों के लिए ७०.३६ लाख रुपए की अतिरिक्त व्यवस्था है ।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	मध्य प्रदेश (९)	मद्रास (१०)	उड़ीसा (११)	पंजाब (१२)	उत्तर प्रदेश (१३)	पश्चिम बंगाल (१४)
३. उद्योग और खान						
बड़े और मध्यम उद्योग	१८.००	९५.००	४७.५०	१४०.००	४९५.९५	१९०.००
खनिज विकास	८.६०	—	९५.००	—	३.००	—
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	६३६.७०	१,४२५.००	६२८.९०	५७२.५०	१,१४४.४२	७५७.९९
	६६३.३०	१,५२०.००	७७१.४०	७१२.५०	१,६४३.३७	९४७.९९
४. परिवहन और संचार						
रेल	—	—	—	—	—	—
सड़कें	७५१.००	८०७.५०	५६२.४०	७३७.००	१,६१४.००	१७१०.००
सड़क परिवहन	—	—	९५.००	९५.००	८५.५०	१९३.३३
बन्दर और बन्दरगाह	—	—	—	—	—	—
जहाजरानी	—	—	—	—	—	—
अन्तर्देशीय नौकानयन	—	—	—	—	—	—
नागरिक विमानन	—	—	—	—	—	—
अन्य परिवहन	—	—	—	—	—	—
डाक और तार	—	—	—	—	२३.७५	—
अन्य संचार साधन	—	—	—	—	—	—
प्रसारण	—	—	—	—	—	—
	७५१.००	८०७.५०	६५७.४०	८३२.००	१७२३.२५	१९०३.३३

५. समाज सेवाएं					
शिक्षा	१४,६४४.९६	८५५.००	४९५.००	७१५.३५	२९७.३३
स्वास्थ्य	१३,१३७.९४	६१८.४५	५५५.८०	४२७.५०	२९८.५०
आवास	५,३५९.४३	४५६.००	१११.६०	२८५.००	८५.५०
पिछड़े वर्गों का कल्याण	४,५२५.२१	९५ ००	१४४.००	१९०.००	५१.३०
समाज कल्याण	७०३.६२	३७.१६	२७.८७	३५.६५	१७.२२
श्रम और श्रम कल्याण	८६७.३६	३३.२५	२४.३०	१२.५५	२८.५०
पुनर्वास	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—
	३९,२३८.५२	२,०९४.८६	१,३५८.५७	१,६६६.०५	७७८.३५
६. विविध					
आंकड़े	२३१.८०	१०.४५	९.००	७.३५	५.७०
प्रचार	३७१.२०	२६.६०	२४.३०	१६.८५	१३.३०
क्षेत्र विकास योजनाएं	६९५.००	—	—	—	५.७०
स्थानीय सस्थाए और शहरी विकास	८४१.५४	—	१५९.००	—	—
भवन निर्माण	१,८४४.१५	—	—	—	—
सांस्कृतिक कार्यक्रम	८७.०३	—	—	२६.७४	६.६५
जन सहयोग	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और संभरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—
अन्य	१७३.०३	—	—	—	—
	४,२४३.७५	३७.०५	१९२.३०	५०.९४	३१.३५
जोड़	१,५६,७२१.७०	१०,०२१.६६	६,७२७.१८	८,०६१.२५	३,६३३.१०

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	राजस्थान (२०)	सौराष्ट्र (२१)	तिरुवांकुर-कोचीन (२२)	जम्मू और कश्मीर (२३)	'ख' भाग के राज्य (२४)
३. उद्योग और खान					
बड़े और मध्यम उद्योग	३५.१५	—	४२.२८	५४.१५	४७४.३९
खनिज विकास	१९.२५	—	१२.८२	—	५६.६५
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	५००.००	२३२.५५	५७०.००	२८७.०९	३,१५३.६६
	५५४.४०	२३२.५५	६२५.१०	३४१.२४	३,६८४.७०
४. परिवहन और संचार					
रेल	—	—	—	—	—
सड़कें	८९९.००	५५०.००	२५६.५०	५३४.८५	३,६८१.००
सड़क परिवहन	—	४३.००	६०.८०	३५.१५	२२६.०५
बन्दर और बन्दरगाह	—	७१.४२	—	—	७१.४२
जहाजरानी	—	—	—	—	—
अन्तर्देशीय नौकानयन	—	—	—	—	—
नागरिक विमानन	—	—	—	—	—
अन्य परिवहन	—	—	—	९५.००	९५.००
डाक और तार	—	—	—	—	—
अन्य संचार साधन	—	—	—	—	—
प्रसारण	—	—	—	—	—
	८९९.००	६६४.४२	३१७.३०	६६५.००	४,०७३.४७

५. समाज सेवाएं					
शिक्षा	९००.००	५००.७५	८५५.६६	२८५.००	४,६०४.०६
स्वास्थ्य	६४०.००	३०० ६५	७२०.०३	२८५.००	३,८४६.२३
आवास	२३५.००	१०४.५०	१९५ ८०	९५.००	१,५९८.४०
पिछड़े वर्गों का कल्याण	२००.००	८५.३६	१४६.७९	३८.९५	९५१.४०
समाज कल्याण	३९ ७४	२९ ३०	२५.१४	२१.४७	२३३.५५
श्रम और श्रम कल्याण	४४.७०	३८.१७	२३.७५	६.६५	२११.८७
पुनर्वास	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाए	—	—	—	—	—
	२,०५९.४४	१,०५९.०३	१,९६७.१७	७३२.०७	११,७१५.५४
६. विविध					
आंकड़े	१०.००	१५ २०	११.८८	९.५०	७९.०८
प्रचार	३६ ००	१२.२१	९.०२	१५.२०	१५३ ४८
क्षेत्र विकास योजना	५०.००	—	—	६४.७३	१५० ४३
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	—	—	१०२.६०	२१३ १२	४७४ ७२
भवन निर्माण	—	२३.५०	—	—	२३.५०
सांस्कृतिक कार्यक्रम	—	—	४.७५	—	३८ १४
जन सहयोग	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और सम्भरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—
अन्य	०.३०	—	२८५.००	—	२८५.३०
	९६.३०	५०.९१	४१३.२५	३३२.५५	१,२०४.६५
	९,७४०.२४	४,७७३.५३	७,१९५ ३१	३,३९२ ०७	५३,५४४ ३४

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक	अजमेर	भोपाल	कुर्ग	दिल्ली	हिमाचल प्रदेश	कच्छ	मणिपुर
(१)	(२५)	(२६)	(२७)	(२८)	(२९)	(३०)	(३१)
३. उद्योग और खान							
बड़े और मध्यम उद्योग	—	—	८.०८	—	—	०.५०	—
खनिज विकास	—	—	—	—	—	—	—
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	५०.००	३८.०९	१७.५७	१८१.४५	४७ ५०	१३.८५	२३.७५
	५०.००	३८.०९	२५.६५	१८१.४५	४७.५०	१४.३५	२३.७५
४. परिवहन और संचार							
रेल	—	—	—	—	—	—	—
सड़कें	४२.५०	८५.५०	५३.२०	३८.००	४२७.५०	७८.२६	१९०.००
सड़क परिवहन	—	—	—	—	३१.३५	७.५०	१९.००
बन्दर और बन्दरगाह	—	—	—	—	—	—	—
जहाजरानी	—	—	—	—	—	—	—
अन्तर्देशीय नौकानयन	—	—	—	—	—	—	—
नागरिक विमानन	—	—	—	—	—	—	—
अन्य परिवहन	—	—	—	—	—	—	—
डाक और तार	—	—	—	—	—	—	—
अन्य संचार साधन	—	—	—	—	—	—	—
प्रसारण	—	—	—	—	—	—	—
	४२.५०	८५.५०	५३.२०	३८.००	४५८.८५	८५.७६	२०९.००

. समाज सेवाएं							
शिक्षा	१६६.२५	१६७.६७	५२.२५	३८०.००	११४.००	३७.३३	५७.००
स्वास्थ्य	९९.४२	९०.७०	३०.८८	२६०.३०	१६९.१०	७४.८७	३३.२५
आवास	२८.५०	४७.५०	१०.४५	१९०.००	७.६०	८.५०	७.६०
पिछड़े वर्गों का कल्याण	२८.५०	२१.१६	२३.७५	१४.९३	४१.२८	१७.३३	६९.२५
समाज कल्याण	२.७९	६.७१	३.३८	०.२२	४.७५	५.७१	२.००
श्रम और श्रम कल्याण	७.००	१.३६	—	९.५०	४.३२	—	—
पुनर्वास	—	—	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
	३३२.४६	३३५.१०	१२०.७१	८५४.९५	३४१.०५	१४३.७४	१६९.१०
६. विविध							
आंकड़े	—	४.७५	—	४.७५	४.७५	०.५१	१.९०
प्रचार	४.९९	६.२६	—	२.५९	११.४०	०.५०	२.८५
क्षेत्र विकास योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	—	—	१०.४५	—	१०.४५	५.००	४.७५
भवन निर्माण	—	—	३.८०	—	—	२.०२	—
सांस्कृतिक कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और सम्भरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
अन्य	—	—	—	५.२३	—	०.२२	—
	४.९९	११.०१	१४.२५	१२.५७	२६.६०	८.२५	९.५०
योग	७८७.०२	१,४३२.१४	३७५.७८	१,६९७.३५	१,४७२.५३	७८५.४०	६२५.२३

द्वितीय पंचवर्षीय योजना—व्यय और आवंटन

(लाख रुपयों में)

शीर्षक (१)	त्रिपुरा (३२)	विन्ध्य प्रदेश (३३)	'ग' भाग के राज्य (३४)	अंडमान और निकोबार (३५)	उत्तर-पूर्व सीमान्त एजेंसी (३६)	पांडिचेरी (३७)	अन्य क्षेत्र (३५-३७) (३८)
३. उद्योग और खान							
बड़े और मध्यम उद्योग	—	१४.२५	२२.८३	—	—	—	—
खनिज विकास	—	२.१४	२.१४	—	—	—	—
ग्रामोद्योग और छोटे उद्योग	४७.५०	१४२.५०	५६२.२१	५.००	४४.४८	२०.००	६९.४८
	४७.५०	१५८.८९	५८७.१८	५.००	४४.४८	२०.००	६९.४८
४. परिवहन और संचार							
रेल	—	—	—	—	—	—	—
सड़कें	३०४.००	३१३.५०	१,५३२.४६	१००.००	२३५.००	४०.००	३७५.००
सड़क परिवहन	—	—	५७.८५	१.००	—	—	१.००
बन्दर और बन्दरगाह	—	—	—	—	—	२९.००	२९.००
जहाजरानी	—	—	—	१५४.००	—	—	१५४.००
अन्तर्देशीय नौकानयन	—	—	—	—	—	—	—
नागरिक विमानन	—	—	—	—	—	—	—
अन्य परिवहन	—	—	—	—	२०.००	—	२०.००
डाक और तार	—	—	—	—	—	—	—
अन्य संचार साधन	—	—	—	—	—	—	—
प्रसारण	—	—	—	—	—	—	—
	३०४.००	३१३.५०	१,५९०.३१	२५५.००	२५५.००	६९.००	५७९.००

५. समाज सेवाएं							
शिक्षा	१२३.५०	३३२.५०	१,४३०.५०	२७.४०	१३०.००	५८.६५	११६.०५
स्वास्थ्य	७५.००	२३७.५०	१,०७१.०२	२५.३०	२००.२३	१०१.५०	३२७.०३
आवास	३.८०	४७.५०	३५१.४५	—	—	४५.००	४५.००
पिछड़े वर्गों का कल्याण	७७.९०	७०.२२	३६४.३२	१.००	—	५.८५	६.८५
समाज कल्याण	१.७०	१९.३६	४६.६२	—	१५.००	४.००	१९.००
श्रम और श्रम कल्याण	२.३०	११.६८	३६.१६	—	—	१.३०	१.३०
पुनर्वास	—	—	—	—	—	—	—
शिक्षित बेकारों के लिए विशेष योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
	२८४.२०	७१८.७६	३,३००.०७	५३.७०	३४५.२३	२१६.३०	६१५.२३
६. विविध							
आंकड़े	०.९०	४.७५	२२.३१	—	२.००	२.००	४.००
प्रचार	२.६०	१८.४३	४९.६२	०.६०	७.७९	४.१८	१२.५७
क्षेत्र विकास योजना	—	—	—	—	—	—	—
स्थानीय संस्थाएं और शहरी विकास	३२.८०	३७.०५	१०६.५०	२.००	—	१०.९२	१२.९२
भवन निर्माण	—	—	५.८२	१३.८०	—	४.५०	१८.३०
सांस्कृतिक कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
जन सहयोग	—	—	—	—	—	—	—
वित्त मंत्रालय की योजनाएं	—	—	—	—	—	—	—
निर्माण, आवास और संभरण मन्त्रालय के भवन निर्माण कार्यक्रम	—	—	—	—	—	—	—
अन्य	—	०.०३	५.४८	—	—	—	—
	३६.३०	६०.२६	१८३.७३	१६.४०	९.७९	२१.६०	४७.७९
जोड़	८४६.६०	२,४८९.६०	१०,५११.६५	५९२.५०	९५०.५०	४७६.५०	२,०१९.५०

426MofI&B—1,500—(Sec. I)—7-2-59—GIPF.